श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

ŚRĪVIDYĀRṆAVATANTRAM

भाषाभाष्योपेतम्

भाषाभाष्यकार:

श्रीकपिलदेवनारायण

'स्वरूपावस्थित'

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
496

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

उत्तरार्द्धम् * द्वितीयो भागः

(पञ्चविंशतित्रिंशश्वासात्मकः)

भाषाभाष्यकारः

श्री कपिलदेव नारायण

'स्वरूपावस्थित'

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

ISBN { 978-93-80326-46-7 (Set)
978-93-80326-50-4 (Vol. II, Pt. 2)

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के 37/117 गोपाल मंदिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129
वाराणसी-221001
दूरभाष : (0542) 2335263

संस्करण : 2012
मूल्य : 7500.00 (1-5 भाग सम्पूर्ण)

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली न. 21-ए, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002
दूरभाषः (011) 32996391, टेलीफैक्सः (011) 23286537

*

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर,
पोस्ट बॉक्स न. 2113, दिल्ली-10007

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पोस्ट बॉक्स न. 1069, वाराणसी-221001

मुद्रक

डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

THE
CHAUKHAMBA SURBHARATI GRANTHMALA
496

ŚRĪVIDYĀRṆAVATANTRAM

of

ŚRĪ VIDYĀRAṆYAYATI

Sanskrit Text with Hindi Commentary

Uttarārdha ❋ Part Two

(25-30 Śvāsas)

Commented by

Sri Kapildev Narayan

Svarūpāvasthita

Chaukhamba Surbharati Prakashan
Varanasi (India)

Publishers :

CHAUKHAMBA SURBHARATI PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Distributors)
K. 37/117, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1129
Varanasi 221001
Tel. : 0542 2335263
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in

Also can be had from :

CHAUKHAMBA PUBLISHING HOUSE
4697/2, Ground Floor
Gali No. 21-A, Ansari Road
Daryaganj, New Delhi 110002
Tel. : 011 23286537
e-mail : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
38 U.A. Bungalow Road, Jawahar Nagar
Post Box No. 2113
Delhi 110007

CHOWKHAMBA VIDYABHAWAN
Chowk (Behind to Bank of Baroda Building)
Post Box No. 1069
Varanasi 221001

किञ्चिन्निवेदनम्

देवीभागवत में विवेचित मणिद्वीप की अधिष्ठात्री देवी, हृल्लेखा मन्त्र की स्वरूपा शक्ति एवं सृष्टिक्रम में महालक्ष्मीस्वरूपा आदिशक्ति भगवती भुवनेश्वरी भगवान् शिव के समस्त लीला-विलास की सहचरी हैं। सौम्य स्वरूप एवं अरुण अंगकान्ति वाली देवी भुवनेश्वरी का स्वाभाविक गुण अपने भक्तों को अभय एवं समस्त सिद्धियाँ प्रदान करना है। दश महाविद्याओं में पञ्चम स्थान पर अवस्थित भुवनेश्वरी मूल प्रकृति का ही अपर नाम है। ईश्वररात्रि में ईश्वर के जगत् रूप-व्यवहार का जब लोप हो जाता है तो उस समय अपनी अव्यक्त प्रकृति के साथ ब्रह्ममात्र ही शेष रहता है; उस ईश्वररात्रि की अधिष्ठात्री देवी ही भुवनेश्वरी नाम से अभिधेय होती है। इनके मुख्य आयुध अंकुश एवं पाश होते हैं। इसमें से अंकुश नियन्त्रण का एवं पाश राग अथवा आसक्ति का प्रतीक है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सर्वस्वरूपा मूल प्रकृति ही भुवनेश्वरी नाम से ख्यात हैं, जो विश्व को वमन कराने के कारण वामा, शिवमयी होने के कारण ज्येष्ठा एवं कर्म-नियन्त्रण, फलप्रदातृ तथा जीवों को दण्डित करने के कारण रौद्री कहलाती हैं। भगवती भुवनेश्वरी की उपासना पुत्रप्राप्ति की कामनापूर्ति हेतु विशेष फलदायिका कही गई है।

क्षीयमान विश्व के अधिष्ठान दक्षिणामूर्ति कालभैरव की शक्ति त्रिपुरभैरवी ललिता या महात्रिपुरसुन्दरी की रथवाहिनी हैं। ब्रह्माण्डपुराण में गुप्त योगिनियों की अधिष्ठात्री देवी के रूप में इनका चित्रण किया गया है। मत्स्यपुराण में इनके त्रिपुरभैरवी, कौलेशभैरवी, रुद्रभैरवी, चैतन्यभैरवी, नित्याभैरवी आदि विविध रूपों का वर्णन प्राप्त होता है। दश महाविद्याओं में षष्ठ स्थान पर अवस्थित त्रिपुरभैरवी की उपासना इन्द्रियों पर विजय एवं सर्वत्र उत्कर्ष की प्राप्ति हेतु करने का उल्लेख शास्त्रों में किया गया है। मुख्य रूप से घोर कर्माचरण में इनकी उपासना की जाती है।

प्रकृत ग्रन्थ श्रीविद्यार्णव के पच्चीसवें श्वास में सर्वप्रथम देवी भुवनेश्वरी के मन्त्र एवं उसके अनुष्ठान की विधि का सांगोपांग विवेचन किया गया है। तदनन्तर भुवनेश्वरी यन्त्र-निर्माण की विधि प्रदर्शित करने के पश्चात् त्र्यक्षर मन्त्र एवं उनके प्रयोग तथा घटार्गल यन्त्र की विधि स्पष्ट करते हुये भुवनेश्वरी की स्तुति गुम्फित है। तत्पश्चात् त्रिपुरभैरवी का यन्त्र एवं उसकी पूजा-विधि निरूपित की गई है। साथ ही साथ त्रिपुरभैरवी के यन्त्र-निर्माण की विधि प्रदर्शित करते हुये सम्पत्प्रदा भैरवी, सकलसिद्धिप्रदा भैरवी, कौलेशभैरवी के मन्त्र-यन्त्र एवं पूजाविधियाँ भी निरूपित की गई हैं। तदनन्तर कामेश्वरी भैरवी, षट्कूटा भैरवी, भोगमोक्षदा नित्या भैरवी, रुद्रभैरवी एवं भुवनेश्वरी भैरवी के मन्त्रों सहित उनकी पूजा एवं प्रयोग बताये गये हैं। इसके पश्चात् बाला त्रिपुरा के विविध मन्त्रों को स्पष्ट किया गया है। बाला त्रिपुरा की दीपिनी विद्या का उद्धार करते हुये अन्नपूर्णेश्वरी भैरवी का प्रयोग एवं उसके पूजा से सम्बन्धित यन्त्र-निर्माण की प्रक्रिया का निरूपण भी इसी श्वास में दृष्टिगत होता है।

तदनन्तर प्रचण्डचण्डिका के मन्त्र-मन्त्रान्तर एवं उनके प्रयोग की विधि को स्पष्ट करते हुये षोडशी विद्या की प्रशंसा बताई गई है। इसके पश्चात् धूमावती का प्रयोग बताने के बाद भद्रकाली मन्त्र, महाकाली मन्त्र एवं उनके भेद, भद्रकाली के प्रयोग की विशेष विधियाँ, श्मशान काली का मन्त्र एवं उनकी पूजा तथा प्रयोग, आर्द्रपटी-घर्मटिका-श्मशानभैरवी-ज्वालामालिनी के मन्त्र, निगड़बन्ध-मोक्षण मन्त्र, चिटिमन्त्र आदि का उद्धार करते हुये उनके प्रयोग की विधि स्पष्ट की गई है। अनन्तर आकर्षण के विविध विधान, उच्चाटन विधि, सुखपूर्वक प्रसव कराने का मन्त्र स्पष्ट करते हुये स्वयं को अदृश्य करने वाले प्रयोग विवेचित किये गये हैं। तदनन्तर योगिनी-साधन की प्रक्रिया स्पष्ट करते हुये छत्तीस

यक्षिणियों के साधन की विधि प्रदर्शित की गई है; साथ ही धनदा यक्षिणी का प्रयोग भी बताया गया है। श्वासान्त में मधुमती यक्षिणी के भेदों का निरूपण किया गया है।

छब्बीसवें श्वास के प्रारम्भ में वटयक्षिणी आदि के भेद प्रदर्शित किये गये हैं। तदनन्तर राजमातङ्गिनी मन्त्र का उद्धार, उसके प्रयोग एवं काम्य होम का कथन किया गया है। इसके पश्चात् मातङ्गी मन्त्र की विधि एवं उसके प्रयोग बताये गये हैं। जीवाकर्षण-विधि, मातंगी यन्त्र को धारण करने की विधि, मातङ्गी के मन्त्रान्तर एवं उनके प्रयोग-विधान भी बताये गये हैं। तत्पश्चात् उच्छिष्ट मन्त्र को स्पष्ट करते हुये सुमुखी-साधन की विधि, परिमल मन्त्र एवं उनके प्रयोग, परिमल मन्त्र के विनियोग, उच्छिष्ट के अन्य मन्त्र एवं उनके प्रयोग, लघुमातंगिनी एवं वाराही मन्त्र, वाराही यन्त्र एवं उसके प्रयोग, निग्रह होम, निग्रह यन्त्र, निग्रह वाराही मन्त्र एवं उसके प्रयोग, धूम्रवाराही के मन्त्र-यन्त्र एवं उनके प्रयोग, स्वप्नवाराही-प्रयोग, शवरी यन्त्र, कर्णपिशाचिनी मन्त्र एवं उसके प्रयोग तथा सिद्धि के लक्षण स्पष्टतः बताये गये हैं।

अनन्तर स्वप्नेश्वरी एवं शीतला के मन्त्र उद्घाटित किये गये हैं। तत्पश्चात् कालरात्रि-विधान एवं उसके प्रयोग को स्पष्ट करते हुये जलौका पकड़ने का मन्त्र, काजल को अभिमन्त्रित करने का मन्त्र, स्तम्भन का यन्त्र एवं मन्त्र, मोहन का यन्त्र एवं मन्त्र बताया गया है। इसके पश्चात् आकर्षण के विधान को निरूपित करते हुये उसके मन्त्र स्पष्ट किये गये हैं। तदनन्तर उच्चाटन, विद्वेषण, मारण आदि की प्रक्रिया स्पष्ट करते हुये शारदा मन्त्र का उद्धार कर उसकी विधि एवं आठ प्रकार के उसके प्रयोगों को स्पष्ट करते हुये इस श्वास का समापन किया गया है।

इसके पश्चात् सत्ताईसवें से लेकर उन्तीसवें श्वास तक वैष्णव मन्त्रों का विवेचन किया गया है। वैखानस आदि मतों में दीक्षित व्यक्ति वैष्णव नाम से अभिहित किये जाते हैं अथवा सभी वस्तुओं को व्याप्त कर जो विद्यमान रहता है, उसे वैष्णव कहते हैं। वैष्णव शब्द की यह व्युत्पत्ति शक्तिसंगम तन्त्र के आगमसन्दोह प्रकरण में निरूपित की गई हैं। इनके दश भेद बताये गये हैं। वैष्णवमन्त्रों को मन्त्रमहार्णव में सभी मनोरथों को सिद्ध करने वाला एवं स्मरणमात्र से संसाररूपी सागर से पार उतारने वाला कहा गया है।

सत्ताईसवें श्वास में वैष्णव मन्त्रों के विवेचन-क्रम में सर्वप्रथम नारायण मन्त्र का निर्णय करने के पश्चात् दशविध न्यासों का परिगणन करते हुये न्यासों में अंगुलियों का प्रयोग बताया गया है। तदनन्तर मूर्तिपञ्जर न्यास की विधि बताने के बाद किरीटादि मन्त्रों को स्पष्ट करते हुये तत्त्वन्यास को निर्णीत किया गया है। तत्पश्चात् केशव एवं नारायण की मूर्तियों के लक्षण स्पष्ट किये गये हैं। पीठपूजा की विधि स्पष्ट करते हुये उसके प्रयोग भी बताये गये हैं। तदनन्तर नारायण के यजन हेतु द्रव्यों का निर्णय किया गया है। इसके पश्चात् मन्त्रवर्ण का ध्यान, यन्त्र रचना का प्रकार, अष्टाक्षर मन्त्र के ऋषि-छन्द-देवता-वर्ण-स्वर में पार्थक्य का वर्णन करते हुये सविधि लक्ष्मीनारायण मन्त्र का प्रकाशन किया गया है। लक्ष्मीनारायण यन्त्र बनाने की प्रक्रिया को प्रयोग-सहित निबद्ध करने के पश्चात् उनके द्वादशाक्षर एवं चतुर्दशाक्षर मन्त्रों को प्रयोग-सहित बताया गया है।

तदनन्तर सप्रयोग हरिहर मन्त्र तथा अर्चन एवं प्रयोग-सहित दधिवामन मन्त्र को प्रकाशित किया गया है। साथ ही दधिवामन के होम में प्रयुक्त द्रव्यों को स्पष्ट करते हुये दधिवामन यन्त्र बनाने की विधि भी स्पष्ट की गई है। इसके पश्चात् सप्रयोग यज्ञवामन मन्त्र, भोगवामन मन्त्र, माया बालक वामन मन्त्र एवं इन मन्त्रों के उपासकों के लिये नियम निर्दिष्ट किये गये हैं। तत्पश्चात् सप्रयोग हयग्रीव मन्त्र एवं यन्त्र, वराह मन्त्र-यन्त्र का विवेचन करते हुये वराहबीज को उद्घाटित किया गया है। इसके अनन्तर सुदर्शन मन्त्र, उसका अर्चन एवं प्रयोग, उसके यन्त्र का निर्माण एवं उसके पूजन तथा विनियोग का विधान बताया गया है। तदनन्तर हृषीकेश के मन्त्र एवं यन्त्र का विवेचन करने के पश्चात् श्रीकर मन्त्र का न्याससहित प्रयोग बताया गया है। इसके बाद श्रीमत् चरण मन्त्र, षडङ्ग द्वादशांग सहित पुरुषोत्तम मन्त्र, शंख-चक्र आदि आयुधमन्त्र, गरुड़ मन्त्र आदि का प्रयोग-सहित अर्चन विधान निरूपित किया गया है।

अट्ठाईसवें श्वास में भी वैष्णव मन्त्रों के ही विवेचन क्रम में प्रयोग-सहित हृषीकेश का अष्टाक्षर मन्त्र, श्रीधर मन्त्र, अच्युत मन्त्र एवं नृसिंह मन्त्र का उद्धार किया गया है। न्यास, यजन विधि, काम्य प्रयोगों में कामनानुसार ध्यान, होम द्रव्यों का विनियोग, यन्त्रनिर्माण की प्रक्रिया, एकाक्षर-षडक्षर मन्त्र विधान एवं उनका प्रयोग प्रतिपादित किया गया है। तदनन्तर प्रयोग-सहित लक्ष्मीनृसिंह मन्त्र का विधान, वीरनृसिंह मन्त्र का विधान, सुदर्शननृसिंह मन्त्र का विधान उनके यन्त्रों के साथ बताया गया है। इसके पश्चात् राममन्त्रों का प्रकरण आरम्भ होता है। इसके क्रम में सर्वप्रथम प्रभावसहित षडक्षर राममन्त्र का विवेचन करने के बाद एकाक्षर मन्त्र से लेकर मालामन्त्र तक का विधान निरूपित करते हुये पूजाविधि-सहित सीतालक्ष्मण मन्त्र का विवेचन किया गया है। इन मन्त्रों के काम्य प्रयोगों को निरूपित करने के अनन्तर यन्त्रोद्धार को विवेचित करने के उपरान्त हनुमान् के मन्त्रों का प्रभाव बताते हुये उनके छोटे मन्त्रों के साथ-साथ मालामन्त्र का भी विवेचन किया गया है।

इसके पश्चात् हनुमत् यन्त्र-निर्माण की विधि प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर गोपाल मन्त्र, उसके अर्थ, न्यास, ध्यान आदि का निरूपण करते हुये पूजा का प्रयोग बताया गया है। इसके पश्चात् श्रीकृष्ण मन्त्र का सविधि सांगोपांग विवेचन करने के पश्चात् श्रीकृष्ण की रासगोष्ठी का लक्षण एवं अर्चन की विधि स्पष्ट करने के पश्चात् तर्पण-विधि निरूपित की गई है। तदनन्तर गोपाल यन्त्र, गोपाल गायत्री, गोपाल श्लोक मन्त्र, मुकुन्द मन्त्र, बाल कृष्ण मन्त्र एवं अन्नप्रद मन्त्र को स्पष्ट करते हुये श्वास की समाप्ति की गई है।

उन्तीसवें श्वास में श्रीकान्त के मन्त्र, अंगसहित ध्यान, पूजाप्रकार का विवेचन करते हुये सविधि कामदेव के मालामन्त्र को उद्घाटित किया गया है। कामदेव मन्त्र के पूजा की विधि एवं पूजा यन्त्र के निर्माण की विधि भी निरूपित की गई है। तदनन्तर सविधि वसुपुत्रद कृष्ण मन्त्र, वागैश्वर्यप्रद मन्त्र, नन्दपुत्र मन्त्र, रुक्मिणीवल्लभ मन्त्र, लीलादण्ड महाविष्णु मन्त्र, गोवल्लभ हरिमन्त्र, गोविन्द मन्त्र, पञ्चवर्षीय बाल कृष्ण मन्त्र, सिद्धगोपाल मन्त्र, बालगोपाल मन्त्र एवं अन्य मन्त्रों का विवेचन प्रयोग-सहित किया गया है; साथ ही उनके पूजन हेतु यन्त्र भी बताये गये हैं। तदनन्तर सम्मोहन गोपाल मन्त्र का सांगोपांग विवेचन करते हुये प्रयोगसहित सन्तान गोपाल मन्त्र की विधि, उसके पूजन यन्त्र-निर्माण की प्रक्रिया-सहित प्रदर्शित की गई है। तत्पश्चात् निगड़च्छेदन मन्त्र, सम्मोहन कृष्णैकाक्षर मन्त्र, अर्चन-प्रयोगसहित काममन्त्र एवं प्रयोगविधिसहित प्रणव मन्त्र को बताया गया है।

मन्त्रोद्धार क्रम में ही आगे सविधि कार्तवीर्य मन्त्र को बताकर उसके यन्त्र-निर्माण की प्रक्रिया दर्शायी गई है। इसी प्रसंग में कार्तवीर्य के दश प्रकार के मन्त्रों को स्पष्ट करते हुये उसके षट्कर्म प्रयोग का विवेचन भी किया गया है। साथ ही कार्तवीर्य यन्त्र का स्वरूप भी निरूपित किया गया है। इसके पश्चात् सविधि महावीर्य मन्त्र एवं उसके यन्त्र का उद्धार बताया गया है। आगे सौर मन्त्र की महत्ता प्रदर्शित करते हुये अर्चा-विधान, पूजा-प्रयोग, अर्घ्यदान विधि-सहित अष्टाक्षर सौर मन्त्र को बताते हुये उसके यन्त्र का उद्धार बतलाया गया है। तदनन्तर प्रयोगसहित भुवनाधीश मन्त्र, त्र्यक्षर मन्त्र, पुत्रेष्टि विधि, संग्रामविजय मन्त्र, अजपा मन्त्र एवं मार्तण्डभैरव मन्त्र के स्फुटीकरण के साथ-साथ मार्तण्ड भैरव का यन्त्र भी उद्घाटित किया गया है। तत्पश्चात् महासौर मन्त्र, चन्द्रमन्त्र, विद्यामन्त्र-यन्त्र रचना-प्रकार, भौमादि ग्रहों के मन्त्र एवं अग्निमन्त्र को सप्रयोग बतलाते हुये उनके काम्य प्रयोगों को भी निरूपित करते हुये श्वास का समापन किया गया है।

तीसवें श्वास में शैव मन्त्रों को मुख्य रूप से उद्घाटित किया गया है। इसमें सर्वप्रथम शिव के पञ्चाक्षर मन्त्र का उद्धार, उसका पूजन-विधान, मण्डप-पूजा, मन्त्र-हेतु विनियोग विधि का पूर्ण विवेचन करते हुये पञ्चाक्षर मन्त्र के प्रत्येक अक्षरों के स्थान-वर्ण-स्वर आदि का विवेचन किया गया है। इसके पश्चात् पूजा-प्रयोगसहित उमापति मन्त्र का विधान बताया गया है। पूजन-प्रयोगसहित प्रासाद मन्त्र की विधि स्पष्ट करने के साथ-साथ अष्टाक्षर मन्त्र की विधि भी प्रदर्शित की गई है। तदनन्तर सांगोपांग दक्षिणामूर्ति मन्त्र का विवेचन करते हुये उसके द्वारा किये जाने वाले काम्य प्रयोगों

को भी कहा गया है। साथ ही दक्षिणामूर्ति यन्त्र का भी उद्धाटन किया गया है। इसके पश्चात् दक्षिणामूर्ति का नवाक्षर मन्त्र एवं मृत्युञ्जय यन्त्र का वर्णन है। तत्पश्चात् प्रयोगसहित अघोरास्त्र मन्त्र स्पष्ट करते हुये उसका यन्त्र भी उद्धाटित किया गया है। आगे प्रयोग विधि-सति पाशुपतास्त्र मन्त्र, नीलकण्ठ मन्त्र, चिन्तामणि मन्त्र, तुम्बुरु रुद्रमन्त्र का निरूपण करते हुये उनके काम्य साधन एवं यन्त्ररचना की विधि प्रकाशित की गई है। तदनन्तर क्षेत्रपाल मन्त्र, वटुकभैरव मन्त्र का सप्रयोग विवेचन करते हुये ग्यारह प्रकार के न्यासों का विवेचन किया गया है।

बीजों के प्रकटीकरण के क्रम में सिंहबीज, क्वाण बीज, मन्याबीज, महाश्रीबीज, प्राणबीज, घण्टाबीज, ख्यातिबीज, मूलबीज, भ्रामरीबीज, आकूतबीज, कालबीज एवं विद्याबीजों का उद्धाटन किया गया है। इसके साथ ही शृंखला न्यास की प्रक्रिया प्रदर्शित करते हुये महापरा बीज का उद्धाटन करके पूजा-प्रयोग-ध्यान-अर्चनसहित महासरस्वती बीज को बताया गया है। इसके पश्चात् वीरसाधन की विधि विवेचित करते हुये उसके प्रयोग एवं काम्य साधनों को भी कहा गया है। राजस, तामस ध्यान को बताते हुये मृत्युञ्जय विधि प्रदर्शित कर राजस बलि का विधान बताया गया है। साथ ही हाथी, घोड़े आदि की रक्षा हेतु विविध प्रयोग भी कहे गये हैं। अन्त में वटुक यन्त्र-निर्माण, उसके मन्त्रान्तर एवं पूजा-प्रयोग आदि को स्पष्ट करते हुये सप्रयोग चण्डेश्वर मन्त्र की विधि एवं उसके काम्य प्रयोगों को कहते हुये श्वास की समाप्ति की गई है।

इस प्रकार महनीय ग्रन्थ श्रीविद्यार्णव के इस चतुर्थ भाग में मुख्यत: वैष्णव एवं शैव मन्त्रों को विवेचन का विषय बनाया गया है।

स्वरूपावस्थित कपिलदेव नारायण

विषयानुक्रमणी

षड्विंश श्वासः

एकोनविंश श्वास:

त्रिंशविंश श्वास:

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

(श्रीविद्या का सम्पूर्ण ग्रन्थ)

उत्तरार्द्धम् : द्वितीयो भागः

(२५-३० श्वासात्मकः)

॥ श्रीः ॥

श्रीविद्यारण्ययतिप्रणीतं

श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्

भाषाभाष्योपेतम्

* उत्तरार्द्धम् : द्वितीयो भागः *

अथ पञ्चविंशः श्वासः

मन्त्रोद्धारपूर्वं भुवनेश्वरीपदव्युत्पत्तिः

अथ भुवनेश्वरीमन्त्राः। तत्र दक्षिणामूर्तिसंहितायाम् (१८ प०)—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि भुवनानन्दमन्दिरम्। यस्य विज्ञानमात्रेण पलायन्ते महापदः ॥१॥
शिवं वह्निसमारूढं वामाक्षिपरिभूषितम्। बिन्दुनादकलाक्रान्तं विद्येयं भुवनेश्वरी ॥२॥

शिवं ह, वह्निः र, वामाक्षि ईकारः, बिन्दुरनुस्वारः, नादकला अर्धचन्द्रः। अस्य बीजस्य माहात्म्यं भुवनेश्वरीपारिजाते—

मत्समः पुरुषो नास्ति त्वत्समा नास्ति चाङ्गना। मायाबीजसमो मन्त्रो न भूतो न भविष्यति ॥१॥ इति।

शारदायाम् (९ प० १ श्लो०)—

अथ वक्ष्ये जगद्धात्रीमधुना भुवनेश्वरीम्। ब्रह्मादयोऽपि यां ज्ञात्वा लेभिरे श्रियमूर्जिताम् ॥१॥
नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्धचन्द्रवान्। बीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ॥२॥

नकुलीशो हकारः, अग्नी रेफः, वामनेत्र ईकारः, अर्धचन्द्रोऽनुसारः।

भुवनेश्वरीपदव्युत्पत्तिमाह दक्षिणामूर्तिसंहितायाम् (१९ प० ४४ श्लो०)—

व्योमबीजे महेशानि कैलासादि प्रतिष्ठितम्। बह्निबीजात् सुवर्णादि निष्पन्नं बहुधा प्रिये ॥१॥
तेनायं वर्तते लोको भूमिमण्डलसंस्थितः। तुर्यस्वरेण पाताले शेषरूपेण धार्यते ॥२॥
महाभूमण्डलं तस्मात्पातालस्यापि नायिका। अत एव महेशानि भुवनाधीश्वरी प्रिये ॥३॥
हकारे व्योम तुर्येण स्वरेणानिलसम्भवः। वि(ह)कारे सति रेफेण साक्षाद्वह्निस्वरूपिणी ॥४॥
वह्निबीजं वसुधेयं तस्माद्रेफे वसुन्धरा। अत एव महेशानि सवायोः समता भवेत् ॥५॥
बिन्दुचक्रामृताद्देवि प्लावयन्ती जगत्त्रयम्। द्रवरूपी भवेत्तस्मात् प्लवन्ती चार्धमात्रया ॥६॥
अत एव महेशानि भुवनेशीति कथ्यते। इति।

भुवनेश्वरी मन्त्र—दक्षिणामूर्ति संहिता में भगवान् शंकर ने पार्वती से कहा है कि हे देवि! सुनो, अब मैं भुवनानन्द मन्दिर को कहता हूँ, जिसे जानने मात्र से ही भयंकर आपदायें भी भाग जाती हैं। शिव 'ह' वह्नि 'र' वामाक्षि 'ई' बिन्दु अनुस्वार नाद कला अर्द्ध चन्द्र मिलकर भुवनेश्वरी विद्या 'ह्रीं' निष्पन्न होती है। भुवनेश्वरीपारिजात में इस बीज का माहात्म्य इस प्रकार बताया गया है—शिव जी कहते हैं कि मेरे समान दूसरा कोई पुरुष नहीं है और तुम्हारे समान दूसरी कोई स्त्री नहीं है। साथ

ही मायाबीज 'ह्रीं' के समान न कोई मन्त्र हुआ है और न ही भविष्य में होगा।

शारदातिलक में भी कहा गया है कि अत्र में जगद्धात्री भुवनेश्वरी को कहता हूँ। ब्रह्मा आदि देवता भी जिसे जानकर श्री और तेज का लाभ प्राप्त करते हैं। नकुलीश 'ह' अग्नि रेफ वामनेत्र ईकार अर्धचन्द्र अनुस्वार से 'ह्रीं' बीज बनता है। सिद्धि की इच्छा वाले इसकी सेवा करते हैं।

दक्षिणामूर्ति संहिता में भुवनेश्वरी पद की व्युत्पत्ति इस प्रकार कही गई है—व्योमबीज 'ह' में कैलासादि प्रतिष्ठित हैं। वह्नि बीज 'र' से बहुधा सोना आदि निकलते हैं। इसीलिये यह संसार भूमि मण्डल पर संस्थित है। तुर्यस्वर 'ई' पाताल को शेष रूप से धारण करता है। इससे यह पाताल की भी नायिका है। अतएव यह भुवनाधीश्वरी है। हकाररूप आकाश में ईकार से वायु उत्पन्न होता है। रेफ साक्षात् अग्नि स्वरूप है। वह्निबीज यह पृथ्वी है, इसलिये रेफ से वसुन्धरा है। इसीलिये वायु के साथ इसकी समता होती है। बिन्दु चक्रामृत से यह तीनों लोकों को प्लावित करती है। द्रवरूपी होकर अर्धमात्रा से यह प्लावन करती है; इसीलिये इसे भुवनेशी कहते हैं।

मन्त्रानुष्ठानविधिः

तथा (१८.३)—

ऋषिः शक्तिर्वशिष्ठस्य सुतश्छन्दोऽस्य कथ्यते। गायत्रं देवता बोधवाचां संवित्कला परा॥१॥
शिवतुर्ये बीजशक्ती कीलकं रेफ उच्यते। ददाति भुवनेशानी पुरुषार्थचतुष्टयम्॥२॥ इति।

सारसंग्रहे—

युग्माब्धिषट्सूर्यमनुविकृतिस्वरवह्निभिः। बिन्दुनादयुजा व्योम्ना षडङ्गानि सजातिभिः॥१॥
संहारमातृकां सृष्टिमातृकां विन्यसेत्ततः। देव्येकतापादनाय मनुन्यासं समाचरेत्॥२॥
त्रयोदशैकादशेषुवह्निसोमस्वरादिकाः। हल्लेखाद्या भूतनिभा न्यस्तव्या मन्त्रिणा तनौ॥३॥

त्रयोदश ओ, एकादश ए, इषु उ, वह्निः इ, सोमः अ, इति पञ्चस्वराद्या हल्लेखाद्याः शक्तयो न्यस्तव्या इत्युक्तम्। केचित्तु—

सद्योऽष्ठश्रुतिनेत्राद्यैर्विद्यां संभेद्य मन्त्रवित्। हल्लेखाद्याः प्रविन्यसेद्यथास्थानं विचक्षणः॥१॥

इति दशपटलीवचनात्। ह्रोंहैंह्रींह्रांहः इति पञ्चबीजादिकास्ताः शक्तय इत्याहुः। तत्र यथोपदेशं कार्यमिति।

मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि गुह्ये पादयोश्च यथाक्रमम्। ऊर्ध्वेन्द्रसौम्ययाम्याशाप्रत्यग्वक्त्रेषु च न्यसेत्॥४॥
हल्लेखा गगना रक्ता चतुर्थी च करालिका। पञ्चमी च महोच्छुष्मा पुनरङ्गानि विन्यसेत्॥५॥
कण्ठे न्यसेच्च गायत्रीं सावित्री वामगे कुचे। सरस्वतीं दक्षकुचे ब्रह्माणं वामगेंऽसके॥६॥
हृदि विष्णुं महेशं च दक्षिणेंऽसे प्रविन्यसेत्। वामे धनपतिं युक्तं श्रिया श्रोत्राग्रके न्यसेत्॥७॥
स्मरं रत्या युतं वक्त्रे गणं पुष्ट्या युतं न्यसेत्। दक्षश्रोत्राग्रके मन्त्री निधी शक्तियुतौ न्यसेत्॥८॥
ब्रह्माणं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सहितं सुधीः। विष्णुं कपोले सावित्र्या युतं दक्षे प्रविन्यसेत्॥९॥
महेशं वामगण्डे च वागीश्वर्या युतं न्यसेत्। अधः कपोलान्तरयोर्मूलं वक्त्रे न्यसेत् ततः॥१०॥
गलमूले कुचयुगे वामांसे हृदि दक्षिणे। अंसे पार्श्वयुगे चैतान् न्यसेन्मन्त्री समाहितः॥११॥
अष्ट मातॄर्न्यसेद्भाले ह्यंसे पार्श्वे तथोदरे। पार्श्वे चांसे च मन्त्रज्ञस्तथा परगले हृदि॥१२॥
व्यापय्य मूलमनुना तनुं देवीं ततः स्मरेत्। उद्यदादित्यरुचिरां शीतांशुकृतशेखराम्॥१३॥
पद्मासनां त्रिनेत्रां च पाशाङ्कुशवराभयैः। अलंकृतचतुर्बाहुं मन्दस्मितलसन्मुखीम्॥१४॥
कुचभारविनम्राङ्गलतां देवीं हृदि स्मरेत्।

वामोर्ध्वकरादिवामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। दशपटल्यां तु—'दक्षेऽङ्कुशाभये प्रोक्ते वामे पाशमथेष्टदम्' इत्युक्तम्। अत्र यथोपदेशं यथेष्टं वा ध्यानम्।

इसके ऋषि वशिष्ठपुत्र शक्ति हैं, छन्द गायत्री है, देवता बोधवाचा संवित्कला परा है। बीज ह, शक्ति ई, कीलक रेफ है। चारो पुरुषार्थ भुवनेशानी प्रदान करती हैं।

मूलोक्त सारसंग्रह के श्लोक १ से ३ तक का उद्धार करने पर स्पष्ट होता है कि षडङ्ग न्यास ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः से करना चाहिये। इसके बाद संहारमातृका एवं सृष्टिमातृका न्यास करे। तदनन्तर देवी से एकता के लिये मन्त्रवर्ण न्यास करे। मूर्धा मुख हृदय गुह्य पैरों में न्यास करे। मुख के ऊपर पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर में न्यास करे। अंगों में हृल्लेखा गगना रक्ता. करालिका महोच्छुष्मा का न्यास करे। कण्ठ में गायत्री का न्यास करे। सावित्री का बाँयें स्तन में, सरस्वती दाँयें स्तन मे, ब्रह्मा का बाँयें कन्धे में, हृदय में विष्णु का एवं दाँयें कन्धे में महेश का न्यास करे। धनपतियुक्त श्री का न्यास वाम कान के आगे करे। कामदेवरति का मुख में एवं गणेश-पुष्टि .का न्यास दाँयें कान के आगे करे। शक्तिसहित निधी का न्यास करे। गायत्री सहित ब्रह्मा का न्यास भाल में करे। सावित्री युक्त विष्णु का न्यास दाँयें गाल में करे। वागीश्वरीयुक्त महेश का न्यास बाँये गाल में करे। कपोल मुख के अन्तराल के नीचे मूल मन्त्र का न्यास करे। गला के मूल भाग दोनों स्तनों, वाम-दक्षिण कन्धों, पार्श्वों गला तथा हृदय में न्यास करे। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। तदनन्तर देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यदादित्यरुचिरां शीतांशुकृतशेखराम्। पद्मासनां त्रिनेत्रां च पाशांकुशवराभयैः।।
अलंकृतचतुर्बाहुं मन्दस्मितलसन्मुखीम्। कुचभारविनम्रांगलतां देवीं हृदि स्मरेत्।।

देवी के ऊपर वाले बाँयें हाथ से नीचे वाले बाँयें हाथ तक आयुधों का ध्यान करे।

यथा—

आदौ कृत्वा तु षट्कोणं तद्बाह्येऽष्टदलाम्बुजम्। तद्बाह्ये षोडशदलं चतुरस्रत्रयं बहिः ।।१५।।
चतुर्द्वारसमोपेतं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम्। तत्र पीठं यजेत् पूर्वं नवशक्तिसमन्वितम् ।।१६।।
जया च विजया चैवाजिताख्या चापराजिता। नित्या विलासिनी दोग्ध्री ह्यघोरा मङ्गला ततः ।।१७।।
एतास्तु शक्तयः पूज्याः केसरेषु च मध्यके। दद्यान्मूलेनासनं तु मूर्तिं तेनैव कल्पयेत् ।।१८।।
देवीमावाहयेत् तस्यामङ्गावरणसंयुताम्। पाशाङ्कुशवराभीतिकरा भूतनिभाश्च ताः ।।१९।।
हृल्लेखाद्याः समभ्यर्च्य विविधाभरणोज्ज्वलाः। मध्येऽग्रयाम्योदक्प्रत्यक्स्थानेषु क्रमतस्ततः ।।२०।।
अग्नीशासुरवायव्यकोणेष्वग्रे हृदादिकान्। यजेदस्त्रं तथाशासु कोणाग्रे मिथुनानि च ।।२१।।
गायत्रीमरुणाभासामरुणाकल्पभूषिताम्। चतुर्मुखीं करैर्दण्डं कुण्डिकामक्षमालिकाम् ।।२२।।
अभीतिं बिभ्रतीं तद्वद् ब्रह्माणं पुरतो यजेत्। सावित्रीं हस्तकमलैररिशङ्खौ गदाम्बुजे ।।२३।।
विभ्राणां पीतवसनां केयूराङ्गदभूषणाम्। किरीटहाररशनानूपुरैरुपशोभिताम् ।।२४।।
तादृग्रूपं महाविष्णुं रक्षः कोणाग्रके यजेत्। शुभ्रां त्रिनेत्रामत्यन्तशुभ्रवस्त्रविराजिताम् ।।२५।।
टङ्काक्षसूत्राभयदवरयुक्तचतुर्भुजाम्। सरस्वतीं यजेद्वायौ कोणे चेशं च तादृशम् ।।२६।।
लक्ष्मीं प्रियाङ्कसंस्थां च दक्षेणालिङ्ग्य बाहुना। पतिं वामेन कमलं धनदं च पृथूदरम् ।।२७।।
पीतं रत्नघटं रत्नकरण्डं बिभ्रतीं यजेत्। आग्नेये रमणाङ्कस्थां रतिं सव्येन पाणिना ।।२८।।
आलिङ्ग्य रमणं पद्ममन्येन दधतीं स्मरेत्। बन्धूकाभं बाणगुणसृणिचापधरं जले ।।२९।।

जले पश्चिमे।

ऐशाने पूजयेत् सम्यक् विघ्नराजं प्रियान्वितम्। सृणिपाशधरं कान्तावराङ्गस्पृक्कराङ्गुलिम् ।।३०।।
माध्वीपूर्णकपालाढ्यं विघ्नराजं दिगम्बरम्। पुष्करे विलसद्रत्नस्फुरच्चषकधारिणम् ।।३१।।
सिन्दूरसदृशाकारामुद्दाममदविभ्रमाम्। धृतरक्तोत्पलामन्यपाणिना तद्ध्वजस्पृशम् ।।३२।।
आश्लिष्टकान्तामरुणां पुष्टिमर्चेद् दिगम्बराम्। कर्णिकायां निधी पूज्यौ षट्कोणस्याथ पार्श्वयोः ।।३३।।
आद्या त्वनङ्गकुसुमा त्वनङ्गकुसुमातुरा। पश्चादनङ्गमदना त्वनङ्गमदनातुरा ।।३४।।

भुवनाद्या पालिनी स्यात्तथा च गगनादिका। वेगा स्याच्छशिरेखान्या रेखा गगनपूर्विका ॥३५॥
इत्यष्ट शक्तयः पूज्याः पत्रेषु परितः स्थिताः। पाशाङ्कुशवराभीतिकरा रक्ताः सुभूषिताः ॥३६॥
ततः षोडशपत्रेषु कराली विकराल्युमा। सरस्वती श्रीर्दुर्गोषा लक्ष्मीः श्रुतिः स्मृतिर्धृतिः ॥३७॥
श्रद्धा मेधा मतिः कान्तिरर्या षोडशः शक्तयः। खड्गखेटकधारिण्यः श्यामाः पूज्याः प्रदक्षिणम् ॥३८॥
ब्राह्म्याद्यास्तद्बहिः पूज्या पत्रसन्धिषु दिक्क्रमात्। पद्माद्बहिः समभ्यर्च्याः शक्तयः परिचारिकाः ॥३९॥
प्रथमानङ्गरूपा स्यादनङ्गमदना ततः। मदनातुरा भुवनवेगा भुवनपालिका ॥४०॥
स्यात् सर्वशिशिरानङ्गमदनानङ्गमेखला। चषकं तालवृन्तं च ताम्बूलं छत्रमुज्ज्वलम् ॥४१॥
चामरे चांशुकं पुष्पं बिभ्राणाः करपङ्कजैः।

एता द्विभुजा वामेन रक्तोत्पलं दक्षिणेनैकैकशश्चषकादिकं च दधाना ध्येयाः। प्रयोगसारे—
रक्ता रक्तोत्पलाकरा रक्ताम्बरविलेपनाः। रक्तोत्पलकरा ध्येयाः सुन्दर्याः परिचारिकाः ॥ इति।

तथा—
सर्वाभरणसंदीप्तांल्लोकपालान् बहिर्यजेत्। वज्रादीन्यपि तद्बाह्ये देवीमित्थं प्रपूजयेत् ॥
पूज्यते सकलैर्देवैः किं पुनर्मनुजोत्तमैः। इति।

पहले षट्कोण बनावे, तब उसके बाहर अष्टदल पद्म, उसके बाहर षोडश दल, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र भूपुर बनावे। वहाँ पर पीठ के नव शक्तियों की पूजा करे। केसर में जया, विजया, अजिता, अपराजिता, नित्या, विलासिनी, दोग्ध्री, अघोरा की पूजा करे। मध्य में मंगला की पूजा करे। मूल मन्त्र से आसन देकर उसी से मूर्ति कल्पित करे। उसमें अंगावरण सहित देवी का आवाहन करे। ये सभी पाश अंकुश वर अभय से युक्त रहते हैं। विविध आभरणों से शोभित हल्लेखा आदि का अर्चन करे। मध्य के आगे दक्षिण, उत्तर, पश्चिम में क्रम से पूजा करे। अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य और आगे षडङ्ग पूजन करे। चारो दिशाओं में अस्त्र की पूजा करे। कोणाग्र में मिथुन की पूजा करे। जैसे—लाल प्रकाश, लाल आभूषण, चार मुख, हाथों में दण्ड-कुण्डिका-अक्षमालिका-अभय धारण की हुई गायत्री का ब्रह्मा के आगे यजन करे। हाथों में अरि-शंख-गदा-कमल धारण की हुई, पीत वस्त्र वाली, केयूर और अंगद से भूषित, किरीट-हार-करधनी-नूपुर से सुशोभित सावित्री का यजन विष्णु के साथ नैर्ऋत्य कोण के अग्रभाग में करे। अत्यन्त शुभ्र, तीन नेत्रों वाली शुभ्र वस्त्रों से सुशोभित, चार हाथों में टंक-अक्षसूत्र-अभय-वर धारण करने वाली सरस्वती का यजन ईश्वर के साथ वायुकोण में करे। अग्निकोण में लक्ष्मी और कुबेर की पूजा करे। पश्चिम में रतिसहित कामदेव की पूजा करे। ईशान में प्रियासहित विघ्नराज की पूजा करे।

कर्णिका में निधि की पूजा षट्कोण के पार्श्व में करे। हाथों में पाश अंकुश वर अभय धारण करने वाली, लाल वर्ण से विभूषित आठ शक्तियों की पूजा अष्टपत्र में करे। ये शक्तियाँ हैं—अनंगकुसुमा, अनंगमेखला, अनंगमदना, अनंगमदनातुरा, अनंगरेखा, अनंगवेगिनी, अनंगांकुशा और अनंगमालिनी।

षोडश दल में कराली, विकराली, उमा, सरस्वती, श्री, दुर्गा, उषा, लक्ष्मी, श्रुति, स्मृति, धृति, श्रद्धा, मेधा, मति, कान्ति, अर्या—इन सोलह शक्तियों की पूजा करे। खड्ग-खेटकधारिणी श्यामा प्रदक्षिण क्रम से पूज्य हैं। ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों की पूजा दलों की सन्धियों में करे। उसके बाहर परिचारिका शक्तियों की पूजा करे। इनमें अनंगरूपा, अनंगमदना, मदनातुरा, भुवनवेगा, भुवनपालिका, सर्वशिशिरा, अनंगमदना, अनंगमेखला हैं। सभी चषक, तालवृन्त, ताम्बूल और छत्रयुक्त हैं। सबों के हाथों में चामर एवं अंशुकफूल हैं। ये सभी द्विभुजा हैं। इनके बाँयें हाथों में लाल कमल और दाँयें में चषक आदि हैं।

प्रयोगसार में कहा गया है कि ये सभी लाल वर्ण की, लाल कमल के आकार की, लाल वस्त्र धारण की हुई एवं लाल कमल हाथों में ली हुई हैं। सुन्दरी की इन परिचारिकाओं का ध्यान इसी प्रकार किया जाता है। सभी आभरणों से युक्त लोकपालों की पूजा बाहर करे। उसके बाहर इनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। इनकी पूजा सभी देवता करते हैं तब मनुष्यों की तो बात ही क्या है।

अथ प्रयोगः—पीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि शक्तिऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे

नमः। हृदि श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः। गुह्ये हं बीजाय नमः। पादयोः ईं शक्तये नमः। नाभौ रं कीलकाय नमः, इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ह्रांह्रीं इत्यादिना करन्यासं विधाय हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। मूर्ध्नि ॐ हल्लेखायै नमः। एवं वक्त्रे एं गगनायै नमः, हृदि ईं रक्तायै नमः, गुह्ये आं करालिकायै नमः, पादयोः अं महोच्छुष्मायै नमः, कण्ठे गायत्र्यै नमः, वामकुचे सावित्र्यै नमः, दक्षे सरस्वत्यै नमः, वामांसे ब्रह्मणे नमः, हृदि विष्णवे नमः, दक्षांसे महेशाय नमः, वामश्रोत्रे धनपतये नमः, मुखे रत्यै कामाय नमः, दक्षकर्णे पुष्ट्यै गणपतये नमः, दक्षकर्णकपोलयोर्मध्ये वसुधारायै शङ्खनिधये नमः, वामे वसुमत्यै पद्मनिधये नमः, ललाटे गायत्र्यै ब्रह्मणे नमः, दक्षकपोले सावित्र्यै विष्णवे नमः, वामे वागीश्वर्यै महेशाय नमः, मुखे ह्रीं नमः, इति विन्यस्य, गलमूले वामदक्षकुचयोर्वामांसहृदयदक्षिणांसेषु दक्षवामपार्श्वयोश्च प्रोक्तमिथुनाष्टकं विन्यस्य, ललाटे आं ब्राह्म्यै नमः। वामांसे ईं माहेश्वर्य्यै नमः। इत्यादिक्रमेण वामपार्श्वोदरदक्षपार्श्वदक्षांसककुत्सु कौमार्यादिमहालक्ष्म्यन्तं विन्यसेत्। ततो मूलमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा ध्यानमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिनाष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां षट्कोणं विधाय, तद्बाह्येऽष्टदलपद्मं विधाय, पद्माद्बहिः षोडशदलं पद्मं विरच्य, तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं, कुर्यादिति पूजाचक्रं निर्माय पुरतः संस्थाप्यार्घ्याद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिज्ञानात्मान्तं पीठमभ्यर्च्य, केसरेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन, जयायै नमः। एवं विजयायै०, अजितायै०, अपराजितायै०, नित्यायै०, विलासिन्यै०, दोग्ध्र्यै०, अघोरायै०, मङ्गलायै नमः, इति मध्यमान्तं संपूज्य, कर्णिकायां ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इति समस्तं पीठं संपूज्य, मूर्तिकल्पनादिपुष्पोपचारान्ते लयाङ्गमभ्यर्च्य, षट्कोणाभ्यन्तरे मध्ये देव्यग्रे देव्या दक्षिणोत्तरपृष्ठेषु च हल्लेखाद्याः, पञ्चशक्तीः संपूज्य, प्राग्वत् षडङ्गान्यभ्यर्च्य, षट्कोणस्य देव्यग्रकोणपत्रे गायत्रीयुताय ब्रह्मणे नमः। निर्ऋतिकोणे सावित्रीयुताय विष्णवे नमः। वायव्ये सरस्वतीयुताय रुद्राय नमः। वह्निकोणे लक्ष्मीयुताय धनदाय नमः। पश्चिमे रतियुताय कन्दर्पाय नमः। ईशाने पुष्टियुताय गणपतये नमः इति मिथुनषट्कं संपूज्य, षट्कोणस्य दक्षवामपार्श्वयोः शं शङ्खनिधिवसुधाराभ्यां नमः। पं पद्मनिधिवसुमतीभ्यां नमः इति संपूज्य, अष्टदलेषु देव्यग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन अनङ्गकुसुमायै नमः। अनङ्गकुसुमातुरायै नमः। अनङ्गमदनायै नमः। अनङ्गमदनातुरायै नमः। भुवनपालिन्यै नमः। गगनवेगायै नमः। शशिरेखायै नमः। गगनरेखायै नमः इति संपूज्य, षोडशदलेषु कराल्यै नमः। एवं विकराल्यै०, उमायै०, सरस्वत्यै०, श्रियै०, दुर्गायै०, उषायै०, लक्ष्म्यै०, श्रुत्यै०, स्मृत्यै०, धृत्यै०, श्रद्धायै०, मेधायै०, मत्यै०, कान्त्यै०, आर्यायै नमः। इति प्रादक्षिण्येनाभ्यर्च्य, तद्बहिर्दलसंधिषु अष्टदिक्षु ब्राह्म्याद्यष्टकं संपूज्य, षोडशदलचतुरस्रान्तरालेऽष्टदिक्षु देव्यग्रमारभ्य अनङ्गरूपायै नमः, अनङ्गमदनायै, अनङ्गमदनातुरायै, भुवनवेगायै, भुवनपालिकायै, सर्वशिशिरायै, अनङ्गवेदनायै, अनङ्गमेखलायै नमः इति संपूज्य प्राग्वल्लोकपालार्चादिसर्वं समापयेदिति।

पूजा प्रयोग—पीठन्यास करने के पश्चात् मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर शक्तिऋषये नमः, मुख में गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में श्रीभुवनेश्वरीदेवतायै नमः, गुह्य में हं बीजाय नमः, पैरों में ईं शक्तये नमः, नाभि में रं कीलकाय नमः। इस प्रकार न्यास करके चतुर्विध पुरुषार्थ-सिद्धि हेतु विनियोग बोलकर ह्रां ह्रीं ह्रैं ह्रौं ह्रं ह्रः से करन्यास एवं हृदयादि षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार न्यास करे—मूर्धा में ॐ हल्लेखायै नमः, इसी प्रकार मुख में एं गगनायै नमः, हृदय में ईं रक्तायै नमः, गुह्य में आं करालिकायै नमः, पैरों में अं महोच्छुष्मायै नमः, कण्ठ में गायत्र्यै नमः, वाम स्तन में सावित्र्यै नमः, दक्ष स्तन में सरस्वत्यै नमः, बाँयें कन्धे पर ब्रह्मणे नमः, हृदय में विष्णवे नमः, दाहिने कन्धे पर महेशाय नमः, बाँयें कान में धनपतये नमः, मुख में रत्यै कामाय नमः, दाहिने कान में पुष्ट्यै गणपतये नमः, दाहिने कान तथा गाल के मध्य में वसुधारायै शङ्खनिधये नमः, बाँयें कान तथा गाल के मध्य में वसुमत्यै पद्मनिधये नमः, ललाट में गायत्र्यै ब्रह्मणे नमः, दाहिने गाल पर सावित्र्यै विष्णवे नमः, बाँयें गाल पर वागीश्वर्यै महेशाय नमः, मुख में ह्रीं नमः, इस प्रकार न्यास करके वाम दक्ष स्तनों के मध्य, वामांस, हृदय, दक्षिणांस, दक्ष-वाम पार्श्व में भी उक्त अष्ट युगल का न्यास करके ललाट में आं ब्राह्म्यै नमः, बाँयें कन्धे पर ईं माहेश्वर्य्यै नमः, इत्यादि क्रम से वाम पार्श्व, उदर, दक्षांस, ककुत् में कौमारी से महालक्ष्मी तक

का न्यास करे। तदनन्तर मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके ध्यान-मानस पूजन करके स्वर्णपत्र पर कुंकुम आदि से अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में षट्कोण बनाकर, उसके बाहर पुनः षोडश दल कमल बनाकर उसके बाहर चार द्वार बनाकर उसे सामने स्थापित कर आत्मपूजा तक करके पीठपूजा कर उसके केसरों में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजन करे—जयायै नमः, विजयायै नमः, अजितायै नमः, अपराजितायै नमः, नित्यायै नमः, विलासिन्यै नमः, दोग्ध्र्यै नमः, अघोरायै नमः, मङ्गलायै नमः इस प्रकार पूजन कर कर्णिका में ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः से समस्त पीठ की पूजा कर मूर्तिकल्पना से पुष्पोपचार तक लयाङ्ग पूजन कर षट्कोण के भीतर, मध्य, देवी के आगे देवी के दक्षिण, उत्तर एवं पीछे हृल्लेखा आदि पञ्च शक्तियों की पूजा कर पूर्ववत् षडङ्ग पूजन कर षट्कोण में इस प्रकार पूजन करे—अग्रकोण में गायत्रीयुताय ब्रह्मणे नमः। नैर्ऋत्य कोण में सावित्रीयुताय विष्णवे नमः। वायव्य कोण में सरस्वतीयुताय रुद्राय नमः। अग्निकोण में लक्ष्मीयुताय धनदाय नमः। पश्चिम कोण में रतियुताय कन्दर्पाय नमः। ईशान कोण में पुष्टियुताय गणपतये नमः। इस प्रकार छः युगल की पूजा कर षट्कोण के दक्षिण-वाम पार्श्व में शं शङ्खनिधिवसुधाराभ्यां नमः, पं पद्मनिधिवसुमतीभ्यां नमः से पूजन कर अष्टदल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से अनङ्गकुसुमायै नमः, अनङ्गकुसुमातुरायै नमः, अनङ्गमदनायै नमः, अनङ्गमदनातुरायै नमः, भुवनपालिन्यै नमः, गगनवेगायै नमः, शशिरेखायै नमः, गगनरेखायै नमः से पूजन कर षोडश करात्यै नमः, विकरात्यै नमः, उमायै नमः, सरस्वत्यै नमः, श्रियै नमः, दुर्गायै नमः, उषायै नमः, लक्ष्म्यै नमः, श्रुत्यै नमः, स्मृत्यै नमः, धृत्यै नमः, श्रद्धायै नमः, मेधायै नमः, मत्यै नमः, कान्त्यै नमः, आर्यायै नमः से प्रदक्षिण क्रम से पूजन कर उसके बाहर अष्टदल-सन्धियों में आठों दिशाओं में ब्राह्मी आदि अष्टमातृकाओं कापूजन कर षोडश दल एवं चतुरस्र के अन्तराल में आठों दिशाओं में देवी के आगे से आरम्भ कर अनङ्गरूपायै नमः, अनङ्गमदनायै नमः, अनङ्गमदनातुरायै नमः, भुवनवेगायै नमः, भुवनपालिकायै नमः, सर्वशिशिरायै नमः, अनङ्गवेदनायै नमः, अनङ्गमेखलायै नमः से पूजन कर पूर्ववत् लोकपाल आदि की पूजा कर पूजन का समापन करे।

संक्षेपपूजाप्रकाराः

अत्रैव विस्तारपूजाशक्तौ संक्षेपमाह महासंमोहनतन्त्रे—

चतुर्भिर्वा त्रिभिर्वापि द्वयेनैकेन वा पुनः। सर्वैर्वावरणैरेव भोगार्थी विस्तरं त्यजेत्॥१॥

चतुर्भिः हृल्लेखादिषडङ्गलोकपालतदायुधैः। त्रिभिः, अङ्गलोकेशतदस्त्रैः। द्वयेन अङ्गलोकपालाभ्याम्। एकेन अङ्गाह्वयेनैव। इति संक्षेपप्रकाराश्चत्वारः। तथा—

द्वात्रिंशल्लक्षमानेन जपेन्मन्त्रं समाहितः। तद्दशांशं हुनेदष्टद्रव्यैस्त्रिस्वादुसंयुतैः॥१॥
तर्पणादि ततः कुर्यान्मन्त्री शास्त्रोक्तवर्त्मना। अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षन्यग्रोधसमिधस्तथा॥२॥
तिलसर्षपदुग्धाज्यं द्रव्याण्यष्टौ मतानि च।

प्रतिद्रव्येण पृथगयुतचतुष्टयं होतव्यम्।

महासम्मोहन तन्त्र में संक्षिप्त पूजा इस प्रकार कही गई है—चार-चार, तीन-तीन, दो-दो अथवा एक-एक सभी आवरणों में भोगार्थी विस्तार का त्याग करे। चार में हृल्लेखादि षडङ्ग लोकपाल और उनके आयुध आते हैं। तीन में अंग लोकेश और अस्त्र आते हैं। दो में अंग एवं लोकपाल हैं। एक में अंगपूजा है। ये ही संक्षिप्त पूजा के चार संक्षिप्त प्रकार कहे गये हैं।

इसके पुरश्चरण हेतु समाहित चित्त होकर बत्तीस लाख मन्त्र-जप करे। उसका दशांश हवन त्रिमधुर मिश्रित आठ द्रव्यों से करे। तब शास्त्रोक्त विधि से तर्पणादि करे। आठ द्रव्यों में पीपल, गूलर, पाँकड, वट की समिधा, तिल, सरसों, दूध, गोघृत आते हैं। प्रत्येक द्रव्य से अलग-अलग चार-चार हजार हवन करे।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते। एकलिङ्गे शिवागारे दक्षिणामूर्तिमाश्रितः॥१॥
बद्धपद्मासनो भस्मस्नायी च कुलविष्टरः। कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् कृष्णचतुर्दशी॥२॥
नित्यं विष्णुं शिवं शक्तिं जपेन्मत्रं सहस्रकम्। दधिक्षौद्रघृताभ्यक्ता व्याघातसमिधो हुनेत्॥३॥

ततः साग्रं सहस्त्रं च ध्यायेत् सर्वेश्वरीमुमाम् । ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रो नात्र कार्या विचारणा ।।४।।
व्याघात आरग्वधः।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री सर्वान् कामान् प्रसाधयेत् । नित्यं सौभाग्यदं पञ्चविंशज्जप्त्वाभिषेचनम् ।।५।।
मेधावी च भवेद्वाग्मी तावज्जप्ताम्बुपानतः । जिह्वाग्रे न्यस्य संजप्तं वाक्सिद्धिकविताकरम् ।।६।।
तज्जप्तमञ्जनं वश्यं कर्पूरागरुमिश्रितम् । सासृग्भस्मारुणालेपैर्वश्याय तिलकक्रिया ।।७।।
जानुमात्रे जले स्थित्वा निश्चलोन्मीलितेक्षणः । जपेत् सहस्त्रं तद्रात्राविष्टामाकर्षयेत् स्त्रियम् ।।८।।
लाजैः कन्यामवाप्नोति तिलैरारोग्यमश्नुते । पुष्टिमान् दधिहोमेन तण्डुलैश्च तथा भवेत् ।।९।।
ब्राह्मीरसयुताँल्लाजान् वचया य समन्वितान् । त्रिसहस्त्रेणाभिमन्त्र्य मासमेकं च भक्षयेत् ।।१०।।
बृहस्पतिसमो मन्त्री सर्वविद्याधिपो भवेत् । अश्वत्थसमिधः स्वाद्वभ्यक्ता हुत्वा द्विजानसौ ।।११।।
वशयेत् पद्महोमेन राज्ञस्तन्मत्रिणस्तथा । कुमुदै राजपत्नीश्च ब्रह्मवृक्षप्रसूनकैः ।।१२।।
तण्डुलानां पिष्टकृतां प्रतिमां स्वादुसंप्लुताम् । कृतप्राणप्रतिष्ठां तां संजप्तां मनुनामुना ।।१३।।
भक्षयेत् तामर्कवारे ततः कुर्याद्वशं नरम् । राजानं प्रमदां वापि यं च वाञ्छत्यनुत्तमम् ।।१४।।
फलके भूतिना शक्तिं ससाध्यां विलिखेत् सुधीः । गर्भिण्यै दर्शयेदाशु सा सुखप्रसवा भवेत् ।।१५।।

अन्य प्रकार का पुरश्चरण—अन्य प्रकार का पुरश्चरण कहता हूँ। एकलिङ्ग शिवालय में दक्षिणामूर्ति के आश्रित होकर पद्मासन में बैठकर भस्म लगाकर कुलविष्टर पर कृष्णाष्टमी से प्रारम्भ करके कृष्ण चतुर्दशी तक नित्य विष्णु, शिव, शक्ति के मन्त्र का जप एक हजार करे। दही, दूध, घी से अभ्यक्त आरग्वध की समिधा से हवन करे। तब उनके आगे सर्वेश्वरी उमा का ध्यान करके एक हजार जप करे। तब मन्त्र सिद्ध होता है। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से सभी कामनाओं की साधना करे। इसके पच्चीस जप से नित्य अभिषेक सौभाग्यप्रद होता है।

इस मन्त्र से मन्त्रित जल को पीने से साधक मेधावी और वाग्मी होता है। जीभ के अग्रभाग में न्यस्त करके जप करने से कविता करने वाली वाक्सिद्धि मिलती है। कपूर-अगर मिश्रित मन्त्रित अंजन से वशीकरण होता है। रक्तसहित भस्म लेप के तिलक करने से वशीकरण होता है। घुटने तक जल में खड़े होकर निश्चल उन्मीलित नेत्रों वाला होकर एक हजार जप करने से इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है। लावा के हवन से कन्या मिलती है। तिल के हवन से आरोग्य और दही के हवन से पुष्टि होती है। चावल के हवन से भी यही होता है। ब्राह्मी रस के साथ लावा और वचा मिलाकर उसे तीन हजार जप से मन्त्रित कर एक महीना तक खाने से साधक बृहस्पति के समान सभी विद्याओं का स्वामी होता है। मधुरमिश्रित पीपल की समिधा से हवन करने से द्विज भोगों को प्राप्त करता है। कमल के हवन से राजा और उसके मन्त्री वश में होते हैं। कुमुद के हवन से रानी वश में होती है। पलाश के फूल और चावल पिष्ट में मीठा मिलाकर प्रतिमा बनाकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करके इस मन्त्र के जप से मन्त्रित करके रविवार को खाने से मनुष्य, राजा अथवा वांछित प्रमदा वश में होती है। फलक पर भस्म से शक्ति के साथ साध्य स्त्री का नाम लिखकर गर्भिणी स्त्री को दिखाने से उसका सुखपूर्वक प्रसव होता है।

अभिषेकविधानम्

अभिषेकविधानं तु वक्ष्यते वाञ्छितार्थदम् । मण्डपे मण्डलं कुर्याद् देवीपीठान्वितं शुभम् ।।१६।।
यथावत् पीठमभ्यर्च्य कलशान् विन्यसेत् सुधीः । कर्णिकायां दलाग्रेषु स्वर्णरौप्यसुताम्रजान् ।।१७।।
मार्तिकान्वा न्यसेत् कुम्भान् पञ्चैकं वापि मन्त्रवित् । महता वाद्यघोषेण मधुना पूरयेद् घटम् ।।१८।।
कला आवाह्य परितो वस्त्राभ्यां वेष्टयेत् ततः । सर्पिषा पूर्वदिक्संस्थं दध्ना दक्षिणदिग्गतम् ।।१९।।
क्षीरेण पश्चिमाशास्थं तैलेनेवोत्तरस्थितम् । पुष्पक्षीरमहीरुट्त्वग्दशमूलोद्भवैः शुभैः ।।२०।।
दशमूलानि वैद्यकशास्त्रोक्तानि ज्ञेयानि ।

क्वाथैर्विदिक्स्थितान् कुम्भान् पूरयेन्मन्त्रवित्तमः । यदि पञ्चात्र कलशास्तदा तान् पूरयेत् क्रमात् ।।२१।।

गोमूत्रेणैव पूर्वस्थं गोमयेनापि याम्यगम्। दुग्धेन वारुणं कुम्भं दध्ना चोत्तरदिक्स्थितम् ॥२२॥

गोमयेन गोमयोदकेन। 'गोमूत्रगोमयोदकपयोदधिघृतांशका:' इति आचार्यचरणोक्तेः।

आज्येन कलशं मध्यं पूरयेत् क्रमशः सुधीः। ऋग्भिश्च प्रणवोत्थाभिः पञ्चगव्यानि योजयेत् ॥२३॥

प्रणवस्य पञ्च ऋचः प्रागेव दीक्षाप्रकरणोक्ता बोद्धव्याः।

आत्माष्टाक्षरमन्त्रैर्वा पञ्चभिस्तानि योजयेत्। एकार्धसप्तत्रितयभूमितानि समानि वा ॥२४॥

एकार्धेत्यादिपञ्चभागकथनं तूत्तरे चैककलशपक्षे पञ्चगव्यपूरणे ज्ञेयम्।

पञ्चाशदोषधिक्क्वथैर्यद्येकः कलशस्तदा। अथवा पञ्चगव्यैश्च मन्त्रवित् तं प्रपूरयेत् ॥२५॥
अत्रोत्तरस्यामाशायां स्थापयेत् पङ्कजे घटम्। संपूरणीयो ब्रह्मद्रुक्क्वाथाम्भोभिरनुत्तमः ॥२६॥

अत्रोत्तरस्यामितिश्लोकेन यो घट उक्तः स तु मण्डलाद्बहिरष्टदलकमले स्थाप्यः।

सुवर्णवस्त्रादियुतः शुद्धः स कलशो मतः। द्वारेषु मण्डपस्यास्य कुम्भौ द्वौ जलपूर्णकौ ॥२७॥
संस्थाप्योत्तमवस्त्राद्यैर्वेष्टयित्वाभिपूजयेत्। पूर्ववद् देवतां तत्र समावाह्य प्रपूजयेत् ॥२८॥
पूर्वोक्तैरुपचारैस्तु निजेष्टाप्त्यै च मन्त्रवित्।

पूर्ववद् देवतामित्यनेन मण्डलमध्यस्थापितकुम्भे देवतावाहनादिकमुक्तमिति ज्ञयेम्।

घटेष्वन्येषु संपूज्या मातरो दिक्क्रमाद् बुधैः। यदि स्युः पञ्च कलशा मध्यादिषु यजेत् क्रमात् ॥२९॥
हृल्लेखाद्याः पञ्च सुधीरभिषिञ्चेत् ततोऽन्तरम्। प्रथमं घृतकुम्भेन कषायेण ततः परम् ॥३०॥
दध्ना पश्चाच्च पयसा कषायेण ततः परम्।

दध्ना चेति चकारात् कषायेणाभिषिच्य पश्चात् पयसा।

तैलेन च कषायेण मधुना च ततः परम्। द्विजवृक्षत्वचः क्वाथैरभिषिच्य ततः सुधीः ॥३१॥
द्वारकुम्भजलैः पश्चादन्तरासेकमाचरेत्। वक्त्रहस्तपदक्षालाचमान्यपि च मन्त्रवित् ॥३२॥

वक्त्रहस्तेत्यादिना अभिषेकसमये एकैककलशाभिषेकानन्तरं द्वारकुम्भजलैर्मुखकरचरणक्षालनमाचमनं च कार्यमित्युक्तम्।

कारयेत् तेन नीरेण त्वेवं सिक्तो नरोत्तमः। ब्राह्मणान् भोजयेन्नानाविधैर्भक्ष्यैश्च तोषयेत् ॥३३॥
आप्नोति महतीं लक्ष्मीं सर्वदा विजयी भवेत्। वैप्रब्रह्मद्रुबिल्वानां पलं ग्राह्यं पलार्धकम् ॥३४॥

वैप्रद्रुरश्वत्थः। ब्रह्मद्रुः पलाशः।

अग्निमन्थप्लक्षसेव्यकानां कर्षं विदुस्तथा। प्रसारिणीकाश्मरिकारोहिणीनां तदर्धकम् ॥३५॥
उटुम्बरी पाटली टुण्टुकभागाः समीरिताः।

अग्निमन्थः अगथ इति मध्यदेशभाषया प्रसिद्धः। प्रसारिणी गन्धप्रसारिणीति प्रसिद्धः। रोहिणी वृक्षविशेषो विन्ध्यपार्श्वेषु प्रसिद्धः। काश्मरी खंभारीति प्रसिद्धा। टुण्टुको वृक्षविशेषः।

एतत् क्वाथोदकेनासौ(मुं) पूरयेत् कलशं ततः। अमुना प्रतिवर्षं च सेकाद् दीर्घायुरुत्तमः ॥३६॥
इन्दिरावानामयैश्च रहितस्तेजसा रविः। कमला किङ्करी तस्य यं दृष्ट्वा विविधामयाः ॥३७॥
नश्यन्ति वर्धते तत्र धनधान्यादिकं महत्। सर्वे देवा नमस्तस्मै कुर्वन्ति फणिनश्च तम् ॥३८॥
न दंशन्ति च तत्पुत्राः संपन्नाः पौत्रसंयुताः। देहान्ते परमां मुक्तिं मन्त्री याति न संशयः ॥३९॥

अभिषेक—अब वांछित फलदायक अभिषेक को कहता हूँ। कर्णिका के दलाग्रों में सोना, चाँदी, ताम्बा या मिट्टी के पाँच कलश स्थापित करे। महान् वाद्य घोष से उनमें मधु भरे। उनके आगे कला का आवाहन करके उन्हें वस्त्रों से लपेट दे। पूरब में स्थित कलश में गोघृत, दक्षिण दिशा के कलश में दही, पश्चिम के कलश में दूध एवं उत्तर के कलश में तेल

डाले। मध्य-स्थित कलश में स्थित दशमूल का क्वाथ पाँचों कलशों में क्रम से डाले। पूर्वस्थ कलश में गोमूत्र, दक्षिणस्थ में गोबर जल, पश्चिम में दूध, उत्तर में दही और मध्य कलश में गोघृत डाले। प्रणव की पाँच ऋचाओं से पञ्चगव्य डाले। अथवा आत्मा के अष्टाक्षर मन्त्र से पञ्चगव्य को मिलाये। पञ्चगव्य में सबों को एक आधा सात तीन भाग या बराबर मिलाये। पचास औषधियों के क्वाथ से भरे। एक कलश अथवा पञ्चगव्य का एक कलश स्थापित करे। मंडल के बाहर अष्टदल कमल पर पलाश के क्वाथ भरे कलश रखे। कलश को सोना एवं वस्त्र से युक्त करे। मण्डप के द्वार पर दो जलपूर्ण कलश स्थापित करके वस्त्रादि से उन्हें वेष्टित करे। पूर्ववत् उनमें देवता का आवाहन करके पूर्वोक्त उपचारों से इष्टप्राप्ति के लिये पूजा करे। अन्य कलशों में दिशाक्रम से मातृकाओं की पूजा करे। यदि पाँच कलश हों तो पहले मध्य कलश में पूजा करे, तब दूसरों में पूजा करे। हल्लेखा के बाद मन्त्र जोड़कर पहले घृतकुम्भ से, तब काषाय से, तब दही से, तब दूध से अभिषेक करे। तदनन्तर तेल, कषाय और मधु से, तब पलाश क्वाथ से अभिषेक करे। द्वारों के कुम्भ जल से अभिषेक करने के बाद सेचन करे। हाथ, पैर, मुख, धोकर आचमन करे। प्रत्येक कलश से अभिषेक के बाद द्वारकुम्भ जल से आचमन करे। तब द्वार कलश जल से सिक्त होकर ब्राह्मणों को विविध प्रकार के भोजन कराकर सन्तुष्ट करे। इससे साधक महती लक्ष्मी प्राप्त करता है एवं सर्वदा विजयी होता है। पीपल, पलार्ध; बेल का एक-एक पलाश अग्निमन्थ, पाकड़ का एक-एक कर्ष; प्रसारिणी, केसर, आरोहिणी का आधा कर्ष, गूलर, पाटली, टुण्टुक एक-एक भाग लेकर इनके क्वाथ से कलश को भरे। इस क्वाथ से प्रति वर्ष अभिषेक करने से दीर्घ आयु प्राप्त होती है, लक्ष्मीवान होता है, सूर्य के समान तेजस्वी होता है। कमला विविध रूप से उसकी किंकरी होती है। उसे देखकर विविध रोग नष्ट होते हैं। धन-धान्यादि की वृद्धि होती है। सभी देवता उसे नमस्कार करते हैं। साँप उसे नहीं काटते। वह पुत्र-पौत्र से सम्पन्न होता है और देहान्त होने पर उसे परम मुक्ति मिलती है।

यन्त्रोद्धार: तत्प्रयोगा:

शारदायां (९ प० ५२ श्लो०)—

शक्त्यन्त:स्थितसाध्यकर्मभवने वह्नेर्वृतं शक्तिभि र्बाह्ये कोणगतेपुतं हरिहरैर्वर्णैः कपोलार्पितैः।
पश्चात् तैः पुनरींयुतैर्लिपिभिरप्यावीतमिष्टार्थदं यन्त्रं भूपुरमध्यगं त्रिगुणितं सौभाग्यसंपत्प्रदम् ॥४०॥
दीर्घायुष्यप्रदं वश्यकरं सर्वार्थसिद्धिदम्।

कोणगतेयुतमिति कोणगतेन इकारेण युतमित्यर्थः। सबिन्दुना इति संप्रदायः। अस्यार्थः—इन्द्ररक्षोवायुदिग्गतकोणत्रयं त्र्यस्रमग्निमण्डलं विधाय तन्मध्ये भुवनेश्वरीबीजं विलिख्य, तस्य रेफस्थाने साध्यनाम इकारस्थाने साधकनाम तयोर्मध्ये कर्म च विलिख्य, तद्भुवनेश्वरीबीजैरावेष्ट्य त्रिकोणस्य कोणत्रयाभ्यन्तरे सबिन्दुकमीकारं विलिख्य त्रिकोणाग्रेषु भुवनेश्वरीबीजं प्रतिकोणं विलिख्य, तेषां त्रयाणामेकैकस्य बीजस्य रेफेण तत्तद्बीजं प्रदक्षिणीकृत्यान्योन्यस्येकाराग्रे परस्परं बध्नीयात्। ततः कोणत्रयपार्श्वयोर्हरिहर इति वर्णचतुष्टयं विलिख्य बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा तन्मध्यगतवीथीद्वये प्रथमवीथ्यां स्वाग्रादि प्रादक्षिण्येन हरिहरवर्णैः पुनः पुनर्लिखितैरावेष्ट्य, द्वितीयवीथ्यामकारादिक्षकारान्तैः सबिन्दुकैर्मातृकाक्षरैः स्वाग्रादि प्रादक्षिण्येन वेष्टयित्वा, सर्वबाह्ये चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—

अत्रापि संपदे देवीं पूजयेत् साधको यदि। तद्बाह्यस्योपरि प्राज्ञो विदध्यादष्टपत्रकम् ॥४१॥
तस्योपरि च राश्यादिविकृतं चापिमण्डलम्। तत्रावाह्य यजेद् देवीं यथाविधि समाहितः ॥४२॥
हल्लेखाद्याः समभ्यर्च्य पूर्ववत् साधकः स्वयम्। अङ्गानि पूजयेत् पश्चाद् गायत्र्याद्याः प्रपूजयेत् ॥४३॥
प्रागग्रबीजे गायत्रीं सावित्रीं दक्षिणास्रगे। सरस्वतीं मारुतस्थे ब्रह्माणं वह्निगे तथा ॥४४॥
वारुणे विष्णुमीशं च यजेदीशे ततो बहिः। ब्रह्माण्याद्या लोकपालास्तद्बाह्ये कुलिशादयः ॥४५॥
एवं त्रिगुणिते देवीं पूजयेत् साधकोत्तमः। इति।

शारदातिलक में कहा गया है कि पूर्व नैर्ऋत्य वायव्यगत त्रिकोण मण्डल बनाये। उसके बीच में भुवनेश्वरी बीज ह्रीं लिखे। उसके रेफ स्थान में साध्य नाम लिखे। ईकार स्थान में साधक का नाम लिखे। मध्य में कर्म लिखे। उसे भुवनेश्वरी बीज से वेष्टित करे। त्रिकोण के तीनों कोणों में 'ह्रीं' लिखे। प्रत्येक कोण में ह्रीं लिखे। उन तीनों को रेफ से त्रिकोण के आगे परस्पर

बाँधे। तब तीनों कोणों के पार्श्वों में 'हरिहर' लिखे। बाहर तीन वृत्त बनावे। उनकी दो वीथियों में से प्रथम वीथि में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से हरिहर वर्णों को बार-बार लिखे। दूसरी वीथि में अं से क्षं तक की मातृकाओं को अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से वेष्टित करे। सबों के बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र सौभाग्य एवं सम्पत्ति प्रदान करता है।

यहाँ पर यदि साधक पूजा करता है तो उसके बाहर अष्टपत्र बनावे। उसके ऊपर राशि आदि से युक्त मण्डल बनावे। उसमें देवी का आवाहन करके यथाविधि पूजा करे। पहले हृल्लेखा की पूजा करे। तब अंगों की पूजा करे। इसके बाद गायत्री आदि की पूजा करे। पूर्व में गायत्री, दक्षिण में सावित्री, वायव्य में सरस्वती, अग्नि में ब्रह्मा, पश्चिम में विष्णु, ईशान में शिव की पूजा करे। उसके बाहर ब्राह्मी आदि शक्तियों की, उसके बाहर लोकपालों की, उसके बाहर वज्रादि आयुधों की पूजा साधकोत्तम करे।

शारदातिलके (९प० ५३ श्लो०)—

बीजान्तःस्थितसाध्यनाम शरशो मायारमामन्मथै र्वीतं वह्निपुरद्वये रसपुटेष्वालिख्य बीजत्रयम्।
सात्मानात्मकमीँशिखं हरिहरैराबद्धगण्डं बहिः षड्बीजैरनुबद्धसंधिलिपिभिर्वीतं गृहाभ्यां भुवः ॥४६॥
चिन्तामणिनृसिंहाभ्यां लसत्कोणमिदं लिखेत्। बहिः षोडशशूलाङ्कमतीव च मनोहरम् ॥४७॥
एतत् षड्गुणितं यन्त्रं सर्वसिद्धिकरं परम्।

अस्यार्थः—तत्र स्वेष्टमानभ्रमेण वृत्तं कृत्वा तत्र प्राक्प्रत्यक् ब्रह्मसूत्रमास्फाल्य तदग्रयोः सन्धिमवष्टभ्य, वृत्तार्धपरिमाणेन सूत्रेण वृत्तसन्दष्टं मत्स्यद्वयं दक्षिणोत्तरयोः कुर्यात्। एवं कृते मत्स्यचतुष्टयं संपन्नं भवति। ततः पूर्वमत्स्यद्वये पश्चिममत्स्यद्वये च दक्षिणोत्तरं तिर्यक्सूत्रद्वयमास्फाल्य ब्रह्मसूत्रस्य प्रागग्रे निधाय, पश्चिममत्स्यद्वयोदर-योर्स्तिर्यक्सूत्रद्वयमास्फालनेन ब्रह्मसूत्रपश्चिमाग्रे निधाय, पूर्वदिङ्मत्स्योदरयोः सूत्रद्वयमास्फालयेत्। एवं कृते वह्निमण्डलद्वयं जायते। ततो वृत्तं प्राचीसूत्रं च मार्जयेत्, इत्येवं षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये शक्तिबीजं विलिख्य, तस्य रेफभागे साध्य-नामालिख्य, तस्येकारस्वरभागे साधकनामालिख्य रेफेकारयोरन्तराले साधकांशे कर्म लिखेदित्येवं स्वाभिमतं विलिख्य, मध्यस्थबीजपरितो वेष्टनप्रकारेण पञ्चधा शक्तिबीजं विलिख्य, तद्बहिः पञ्चधा श्रीबीजं पुनस्तद्बहिः पञ्चधा कामबीजं विलिख्य, षट्कोणस्य ऊर्ध्वगतत्रिकोणत्रये तान्येव बीजानि विसर्गयुक्तानि ससाध्यनामानि दक्षिणमध्योत्तरक्रमेण विलिख्य, षट्स्वपि त्रिकोणोदरेषु (सबिन्दुचतुर्थस्वरमालिख्य, षट्कोणस्य प्रतिकोणपार्श्वयोर्हरिहर इति द्वादशधा विलिख्य षट्सु त्रिकोणाग्रेषु) प्रतित्रिकोणाग्रमेकमेकं शक्तिबीजं विलिख्य पूर्ववदेकैकान्तरितं बध्नीयात्। उक्तं चाचार्यचरणैः 'एकैकान्तरितांस्तांस्तु संबध्युरितरेतरम्' (१० प० ५३ श्लो०)**। ततो बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा वीथीद्वयं निष्पाद्य, तत्राभ्यन्तरवीथ्यां स्वाग्रादि प्रादक्षिण्येन (सबिन्दूनकारादिक्षकारान्तान् मातृकावर्णानालिख्य, बहिर्वीथ्यां तानेव क्षकाराद्यकारान्तक्रमेण प्रादक्षिण्येन) लिखेत्। उक्तं चाचार्यचरणैः—'बाह्यरेखामन्तरा स्युर्वर्णाः क्रमगताः शुभाः। तद्बहिः प्रति लोमाश्च ते स्युर्लेखकपाटवात्'** (१० प० ५३ श्लो०) **इति। ततो बहिरष्टकोणं विधाय तस्य दिग्गतकोणस्थरेखाष्टकं प्रान्तषोडशके षोडश त्रिशूलानि कुर्यात्। उक्तं चाचार्यचरणैः—'बहिः षोडशशूलाङ्कं शोभनं व्यक्तवर्णवत्'। एतत् षड्गुणितं यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—**

अत्र देवं यजेन्मन्त्री पद्मस्योपरिशोभनम्। पद्मं द्वादशपत्रं च षट्त्रिंशत्केसरान्वितम् ॥१॥
बहिश्च राश्यादिकेन युक्तं कुर्यान्मनोहरम्। नवशक्तियुतं पीठं संपूज्यावाह्य देवताम् ॥२॥
संपूजयेच्चन्दनाद्यैरुपचारैश्च पूर्ववत्। प्रोक्तवच्च षडङ्गानि मिथुनानि च संयजेत् ॥३॥
बहिर्द्वादशशक्तीश्च रक्ताद्यास्तु यजेत् क्रमात्। रक्ता चानङ्गकुसुमा नित्या च कुसुमातुरा ॥४॥
अनङ्गमदना तद्वद्द्रवेच्च मदनातुरा। गौरी च गगना तद्वद्रेखान्तं गगनं पदम् ॥५॥
पद्मा भवप्रमथिनी द्वादशी शशिशेखरा। बाह्ये मातृश्च लोकेशान् कुलिशादीनि तद्बहिः ॥६॥

तद्वद्द्रवेच्च मदनातुरेति, अनङ्गमदनातुरेत्यर्थः। रेखान्तं गगनं पदमिति गगनरेखेत्यर्थः।

अनेन विधिना मन्त्री योऽर्चयेद्भुवनेश्वरीम्। स लक्ष्मीनिलयो भूत्वा त्रिदशैश्चाभिवन्दितः ॥७॥
देहान्ते शिवसायुज्यं संप्राप्नोति सुनिश्चितम्। इति।

शारदातिलक में कहा गया है कि स्वेष्ट मान से घुमाकर वृत्त बनावे। उसे पूर्व-पश्चिम में ब्रह्मसूत्र का स्फालित करे। उसकी सन्धि को जोड़कर वृत्तार्ध परिमाण में सूत्र से वृत्त को छूते हुए दो मत्स्य दक्षिण-उत्तर में बनावे। ऐसा करने से चार मत्स्य बनते हैं। तब पूर्व मत्स्यद्वय और दक्षिणोत्तर मत्स्यद्वय से दो सूत्र स्फालित करके ब्रह्मसूत्र पूर्वाग्र में रखे। पश्चिम मत्स्यद्वय के उदर से तिर्यक सूत्र स्फालित करके ब्रह्मसूत्र पश्चिमाग्र में रखे। पूर्वादि मत्स्य उदर से दो सूत्र स्फालित करे। ऐसा करने से दो वह्निमण्डल बनते हैं। तब प्राची सूत्र को मार्जित करे। इस प्रकार अष्टकोण बनाकर उसके मध्य में 'ह्रीं' लिखे। उसके रेफ भाग में साध्य नाम लिखे। उसके इकार स्वर भाग में साधक नाम लिखे। रेफ और इकार के अन्तराल में साधकांश में कर्म लिखे। मध्य बीज के बाहर वेष्टन प्रकार से पाँच बार 'ह्रीं' लिखे। उसके बाहर पाँच बार 'श्रीं' लिखे। उसके बाहर पाँच 'क्लीं' लिखे। षट्कोण के ऊर्ध्वगत त्रिकोण में विसर्गयुक्त बीजों में साध्य नाम दक्षिणोत्तर क्रम से लिखे। छहों कोणों के उदर में सबिन्दु चतुर्थ स्वर ईं लिखे। षट्कोण के प्रत्येक कोण के पार्श्वों में बारह बार 'हरि-हर' लिखे। षट्कोण के कोणों के प्रत्येक कोण के आगे ह्रीं लिखे। पूर्ववत् प्रत्येक को बाँधे। उसके बाहर तीन वृत्त बनाकर दो वीथि बनावे। उसके आभ्यन्तर वीथि में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से अं से क्षं तक मातृकाओं को लिखे। उसके बाद वाली वीथि में क्षं से अं तक प्रदक्षिण क्रम से लिखे। तब बाहर अष्टकोण बनाकर उसके दिग्गत कोणों में आठ रेखा खींचे। उनके अग्रभाग में सोलह त्रिशूल बनावे। इस प्रकार यह षड्गुणित यन्त्र सभी सिद्धियों को देने वाला होता है।

यहाँ पर मन्त्री कमल पर सुशोभित देवता का पूजन करे। इसके बाहर द्वादश दल कमल बनावे। उसके बाहर छत्तीस केसरों से युक्त पद्म बनावे। उसमें राशि का नाम लिखे। नव शक्तियुक्त पीठ में देवता का आवाहन करके चन्दनादि उपचारों से पूजा करे। पूर्ववत् षडङ्ग में मिथुनों की पूजा करे। उसके बाहर रक्ता आदि बारह शक्तियों की पूजा करे। शक्तियों में रक्ता, अनंगकुसमा, नित्या, कुसुमातुरा, अनंगमदना, मदनातुरा, गौरी, गगना, गगनरेखा, पद्मा, भवप्रमथिनी और बारहवीं शशिशेखरा हैं। बाहर अष्टमातृका, लोकेशों और उनके कुलिशादि आयुधों की पूजा करे। इस विधि से जो भुवनेश्वरी की पूजा करता है, वह लक्ष्मीधर होकर देवताओं से वन्दित होता है एवं देहान्त होने पर शिवसायुज्य प्राप्त करता है।

शारदायाम् (९.५५)—

बीजं व्याहृतिभिर्वृतं गृहयुगद्वन्द्वं वसोः कोणगं दौर्गं बीजमनन्तरं लिपियुगैराबद्धगण्डं लिखेत्।
गायत्र्या रविशक्तिबद्धविवरं त्रिष्टुब्वृतं तत्ततो वीतं मातृकया धरापुरयुगे सत्सिंहचिन्तामणिम् ॥१॥
यन्त्रं दिनेशगुणितं प्रोक्तं रक्षासमृद्धिदम्। सर्वसौभाग्यजननं सर्वशत्रुनिवारकम् ॥२॥ इति।

अस्यार्थः—तत्र प्राग्वत् षट्कोणमालिख्य तस्य सन्धिषट्के त्रिकोणषट्कं यथा व्यक्तं भवति तथा गुरूक्तयुक्त्या षट्कोणान्तरं विलिख्य, तन्मध्ये प्राग्वत् साध्यसाधककर्मयुक्तं शक्तिबीजमालिख्य तत् प्रतिलोमेन व्याहृतिभिर्वेष्टयेत्। तदुक्तमाचार्यैः—'शक्तिं प्रवेष्टयेच्च प्रतिलोमव्याहृतिभिरन्तःस्थाम्' इति। ततो द्वादशत्रिकोणोदरेषु दुमिति दुर्गाबीजं विलिख्य तदुपरि च सानुस्वारं चतुर्थस्वरं लिखेत्। उक्तं चाचार्यचरणैः (११.८)—**'गायत्रीं प्रतिलोमतः प्रविलिखेदग्नेः कपोलम्' इति। ततः पूर्वद्वादशत्रिकोणाग्रेषु शक्तिबीजानि विलिख्य तानि परस्परं पूर्ववदेकान्तरं बध्नीयात्। तद्बहिर्वृत्तद्वयं विधाय तयोरन्तरालगतवीथ्यां 'जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः' इति त्रैष्टुभमन्त्रस्य सबिन्दुभिर्वर्णैः प्रतिलोमेन वेष्टयेत्। तदुक्तमाचार्यचरणैः—'बहिश्च रचयेद्भूयस्तथा त्रैष्टुभम्'** (११.८) **इति तत्र श्रीपद्मपादाचार्यव्याख्या—तथा त्रिष्टुभमिति प्रतिलोमेनेत्यर्थः। ततः प्राग्वदनुलोममातृकया विलोममातृकया च संवेष्ट्य, तद्बहिरष्टकोणं कृत्वा प्राग्वत् तत् कोणेषु नृसिंहबीजं चिन्तामणिबीजं च विलिख्य, तथैव षोडशशूलयुक्तं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—**

भुवनेशीमत्र यजेद्यन्त्रे साधकसत्तमः। तदास्य विलिखेद् बाह्ये पद्मं षोडशपत्रकम् ॥१॥
बहिश्च राशिवीथ्यादियुतं नेत्रमनोहरम्। तत्र मध्ये यजेद् देवीमङ्गानि तदनन्तरम् ॥२॥

हृल्लेखाद्याश्चतस्रोऽपि ब्राह्म्याद्याश्च ततो यजेत् । करालाद्याः षोडश च पूजयेच्च ततो बहिः ॥३॥
द्वात्रिंशच्चैव विद्याद्या चतुःषष्टिस्ततो बहिः । पिङ्गलाक्ष्यादिका बाह्ये लोकपालास्तथायुधैः ॥४॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या पूर्वोक्तं द्विगुणं फलम् । लभते साधकः शीघ्रं देवानामपि दुर्लभम् ॥५॥
विद्याह्रीपुष्टयः प्रज्ञा सिनीवाली कुहूस्तथा । रुद्रवीर्या प्रभानन्दा पोषिणी सिद्धिदा शुभा ॥६॥
कालरात्रिर्भद्रकाली महारात्रिः कपालिनी । विकृतिर्दण्डिमुण्डिन्यौ सेन्दुखण्डा शिखण्डिनी ॥७॥
निशुम्भशुम्भमथनी महिषासुरमर्दिनी । इन्द्राणी चैव रुद्राणी शङ्करार्धशरीरिणी ॥८॥
नारी नारायणी चैव त्रिशूलिन्यपि पालिनी । अम्बिकाह्लादिनी चैव द्वात्रिंशच्छक्तयो मताः ॥९॥
पिङ्गलाक्षी विशालाक्षी समृद्धिर्बुद्धिरेव वा । श्रद्धा स्वाहा स्वधाख्या च मायाभिख्या वसुन्धरा ॥१०॥
त्रिलोकधात्री गायत्री सावित्री त्रिदशेश्वरी । सुरूपा बहुरूपा च स्कन्दमाताऽच्युतप्रिया ॥११॥
विमला सामला चैव अरुणा आरुणी तथा । प्रकृतिर्विकृतिः सृष्टिः स्थितिः संहृतिरेव च ॥१२॥
संध्या माता सती हंसी मर्दिका वज्रिका परा । देवमाता भगवती देवकी कमलासना ॥१३॥
त्रिमुखीसप्तमुख्यौ च सुरासुरविमर्दिनी । सलम्बोष्ठ्यूर्ध्वकेश्यौ च बहुशिश्ना वृकोदरी ॥१४॥
रथरेखाह्वया चैव शशिरेखा तथापरा । पुनर्गगनवेगाख्या वेगा च पवनादिका ॥१५॥
भूयो भुवनपालाख्या तथैव मदनातुरा । अनङ्गानङ्गमदना भूयश्चानङ्गमेखला ॥१६॥
अनङ्गकुसुमा विश्वरूपाऽसुरभयङ्करी । अक्षोभ्यासत्यवादिन्यौ वज्ररूपा शुचिव्रता ॥१७॥
वरदा चैव वागीशी चतुष्षष्टिः प्रकीर्तिताः । इति।

शारदातिलक में ही कहा गया है कि पूर्ववत् षट्कोण बनाकर उसकी छः सन्धियों में छः त्रिकोण जिस प्रकार स्पष्ट हो, उस प्रकार गुरु द्वारा उपदिष्ट विधि से बनाये। उनमें साध्य-साधक से संयुक्त ह्रीं लिखे। उसे प्रतिलोम व्याहृतियों से वेष्टित करे। तब द्वादश त्रिकोणों के उदर में दुर्गा बीज 'दुं' लिखे। उसके ऊपर 'ईं' लिखे। तब पूर्वादि द्वादश त्रिकोणों के आगे ह्रीं लिखे। उन्हें परस्पर पूर्ववत् एकान्तर से बाँधे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल की वीथि मे 'जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः' इस त्रिष्टुप् मन्त्र के सानुस्वार वर्णों से प्रतिलोम क्रम से वेष्टित करे। तब पूर्ववत् अनुलोम मातृका से एवं विलोम मातृका से वेष्टित करे। उसके बाहर अष्टकोण बनाकर पूर्ववत् उन कोणों में नृसिंह बीज एवं चिन्तामणि बीज लिखे। उसे सोलह त्रिशूलों से युक्त करे। यह यन्त्र रक्षा, समृद्धि, समस्त सौभाग्य देता एवं सभी शत्रुओं का निवारण करता है।

इस यन्त्र में साधक भुवनेशी की पूजा करे। उसके बाहर सोलह दल कमल बनावे। उसके बाहर राशि वीथि से युक्त मनोहर वीथि बनावे। उसमें देवी के अंगों की पूजा करे। उसके बाद हृल्लेखा आदि चार की एवं ब्राह्मी आदि की पूजा करे। उसके बाहर कराला आदि सोलह की पूजा करे। इसके बाद बत्तीस विद्याओं की पूजा करे। उसके बाहर चौसठ पिंगला आदि की पूजा करे। उसके बाहर दश दिक्पालों और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार जो भक्ति से पूजा करता है, उसे दुगुना फल मिलता है एवं साधक देवों को भी दुर्लभ फल प्राप्त करता है। बत्तीस शक्तियों के नाम हैं—विद्या, ह्री, पुष्टि, प्रज्ञा, सिनीवाली, कुहू, रुद्रवीर्या, प्रभानन्दा, पोषिणी, सिद्धिदा, शुभा, कालरात्रि, भद्रकाली, महारात्रि, कपालिनी, विकृति, दण्डिनी, मुण्डिनी, इन्दुखण्डा, शिखण्डिनी, निशुम्भमथनी, शुम्भमथनी, महिषासुरमर्दिनी, इन्द्राणी, रुद्राणी, शंकरार्धशरीरिणी, नारी, नारायणी, त्रिशूलिनी, पालिनी, अम्बिका और ह्लादिनी। चौसठ शक्तियों के नाम हैं—पिङ्गलाक्षी, विशालाक्षी, समृद्धि, बुद्धि, श्रद्धा, स्वाहा, स्वधा, माया, वसुन्धरा, त्रिलोकधात्री, गायत्री, सावित्री, त्रिदशेश्वरी, सुरूपा, बहुरूपा, स्कन्दमाता, अच्युतप्रिया, विमला, सामला, अरुणा, आरुणी, प्रकृति, विकृति, सृष्टि, स्थिति, संहति, संध्या, सती, हंसी, मर्दिका, वज्रिका, परा, देवमाता, भगवती, देवकी, कमलासना, त्रिमुखी, सप्तमुखी, सुरासुरविमर्दिनी, लम्बोष्ठी, ऊर्ध्वकेशी, बहुशिश्ना, वृकोदरी, रथरेखा, शशिरेखा, गगनवेगा, पवनवेगा, भुवनपाला, मदनातुरा, अनंगा, अनंगमदना, अनंगमेखला, अनंगकुसुमा, विश्वरूपा, असुरभयंकरी, अक्षोभ्या, सत्यवादिनी, वज्ररूपा, शुचिव्रता, वरदा एवं वागीशी।

तथा शारदातिलके (९ प० ५७ श्लो०)—

लिखेत् सरोजं रसपत्रयुक्तं मध्ये दलेष्वप्यभिलिख्य मायाम्।
स्वरावृतं यन्त्रमिदं वधूनां पुत्रप्रदं भूमिगृहान्तरस्थम्॥१॥

अस्यार्थ:—भूर्जादौ षड्दलकमलं विधाय तन्मध्ये ससाध्यं शक्तिबीजमालिख्य, षट्सु दलेष्वपि शक्तिबीजमेवालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं विधाय, तयोरन्तराले सबिन्दुभि: षोडशस्वरैरावेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। (तथा—षट्कोणमध्ये प्रविलिख्य शक्तिं कोणेषु तामेव विलिख्य भूय:। ससाध्यगर्भं वसुधापुरस्थं यन्त्रं भवेद्वश्यकरं नराणाम्। अस्यार्थ:—प्राग्वत् षट्कोणं विधाय तन्मध्ये तत्कोणेष्वेव ससाध्यं शक्तिबीजमालिख्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यादितद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।)

शारदातिलक मे कहा गया है कि भोजपत्रादि पर षड्दल कमल बनाकर उसके बीच में साध्य के साथ शक्तिबीज लिखे। छहों दलों में भी शक्तिबीज 'ह्रीं' लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर उसके अन्तराल में सानुस्वार सोलह स्वरों से वेष्टित करके उसके वाहर चतुरस्र वनावे। यह यन्त्र स्त्रियों को पुत्र प्रदान करने वाला होता है।

तथाच सारसंग्रहे—

ज्ञानामृता दण्डियुक्ता याष्टमो वह्निपुष्टियुक्। सबिन्दुर्मृत्युरूष्मायुक् शान्तिबिन्दुविभूषिता॥१॥
त्र्यक्षरात्मा मनु: प्रोक्तश्चतुर्वर्गफलप्रद:।

ज्ञानामृता ऐ, दण्डी अनुस्वार:, तद्युक्तस्तेन ऐं। याष्टमो ह वह्निपुष्टियुक् रेफतुर्यस्वर (युक्त: तेन ह्रीं। मृत्यु: श ऊष्मायुक् रेफयुत: शान्तिरीकार:) एभि: श्रीं इति। तथा—

पूर्वोदिताश्च मुन्याद्या मन्त्रिभि: संप्रकीर्तिता:। आद्याद्येन च मध्येन दीर्घभाजाङ्गकल्पनम्॥२॥

तेन ऐं ह्रां हृदयाय नम:, ऐं ह्रीं शिरसे० इत्यादिषडङ्गमन्त्रा उक्ता:। तथा—'पुरोक्तमन्त्रवन्न्यासानत्रापि परिकल्पयेत्।' इति। ध्यानम्—

बन्धूकाभां त्रिनयनयुतां बद्धचन्द्रार्धमौलिं दोर्भ्यां पूर्णं विविधमणिभी रत्नपात्रं वहन्तीम्।
पद्मं सौम्यामुरुकुचयुगां स्मेरवक्त्रेन्दुबिम्बां ध्यायेद् देवीं धृतमणिघटप्रोल्लसत्सव्यपादाम्॥१॥

वामे रत्नपात्रं, दक्षिणे पद्ममित्यायुधध्यानम्। ('पीठे पुरोदिते देवीं यजेत् पूर्वोक्तवत्मर्ना'। अथ प्रयोग:—तत्र प्राग्वत् योगपीठन्यासान्ते एकाक्षरोक्तऋष्यादिन्यासान्विधाय ऐं ह्रां हृदयाय० ऐं ह्रीं शिरसे० इत्यादिकरषडङ्गन्यासान्विधाय एकाक्षरोक्तानन्यांश्च न्यासान् कृत्वा, अत्र प्रमाणोक्तध्यानादिमानसपूजान्ते एकाक्षरोक्तवत्सर्वं कुर्यात्।) तथा—

जपेद् द्वादशलक्षं च जुहुयात् तद् दशांशत:। त्रिस्वादुयुक्तहविषा तर्पणादि ततश्चरेत्॥३॥
तत: प्रयोगान् कुर्वीत मन्त्री स्वेष्टफलाप्तये। ब्रह्मवृक्षप्रसूनैश्च होमो लक्ष्मीप्रदो मत:॥४॥
संवत्सराज्जप्तब्राह्मीसर्पि:पानात् कवित्वभाक्। गौरसर्षपयुग्लोणहोमात् तु वशयेत् स्त्रियम्॥५॥
नरान् नरपतिं वान्यान् वशयेन्नात्र संशय:। आरग्वधोत्थै: कुसुमै: संसिक्तैश्चन्दनाम्भसा॥६॥
त्रैलोक्यं च वशीकर्तुं होमोऽयं मन्त्रिणो मत:। त्रिस्वादुयुक्तै रक्ताब्जै राज्यलक्ष्मीं च विन्दति॥७॥
तैलैस्तण्डुलसंमिश्रैर्होमात् पूर्वोदितं फलम्। पुरोदितान् प्रयोगांश्च कुर्यादत्रापि साधक:॥८॥ इति।

तथा—

पूर्वाण्वादिकमाद्यन्ते मध्यस्थं मध्यमीरितम्। त्र्यक्षरोऽयं मनु: प्रोक्त: सर्वसिद्धिप्रदायक:॥१॥

पूर्वाण्वादिकं वाग्भवं तदाद्यन्तयो:, मध्यस्थं भुवनेश्वरीबीजं, मध्ये, तेन ऐंह्रींऐं इति। तथा—

ऋष्याद्यास्त्वस्य मन्त्रस्य पूर्वोक्ता एव संमता:। आद्यन्तपुटितेनैव दीर्घयुग्मध्यमेन च॥२॥

जातिभाजा षडङ्गानि विदध्यान्मन्त्रवित्तमः । एकाक्षरोदितान् न्यासान् कुर्यान्मन्त्री समाहितः ॥३॥

अम्भोदोद्द्योतिमूर्तिं त्रिनयनलसितां पीनवक्षोजनम्रां
हस्ताम्भोजैर्वहन्तीं वरदसरसिजे रत्नपात्राभये च ।
नित्यं रक्ताम्बुजस्थां शशिशकललसच्छेखरां हारभूषां
विश्वाधीशार्चिताङ्घ्रिं निजहृदि कलये भास्वरामम्बिकां ताम् ॥४॥

दक्षाधःकारमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्। तथा—

एकाक्षरोदिते पीठे पूजयेद्भुवनेश्वरीम् । पूर्वोक्ताः पूर्ववत् पूज्या हृल्लेखाद्याश्च मन्त्रिणा ॥५॥
संपूजयेत कोणषट्के पूर्ववन्मिथुनानि च । किञ्जल्केषु षडङ्गानि पूजयेच्च दलेषु ताः ॥६॥
ब्राह्म्याद्या निजनाथाङ्कस्थिताः स्मेराननालसाः । असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोधोन्मत्तौ कलाल्यथ ॥७॥
भीषणश्चैव संहारः प्रोक्तास्तत्पतयस्त्विमे । शूलं कपालं प्रेतं च क्षुद्रदुन्दुभिरेव च ॥८॥
बिभ्राणाः पाणिभिर्हस्तित्वग्वस्त्रा भीमविग्रहाः । (स्मर्तव्या वक्रकेशाश्च पूजाकाले च मन्त्रिणा ॥९॥
दीर्घाद्या मातरः प्रोक्ता ह्रस्वाद्या भैरवाः स्मृताः । पूज्याः षोडशपत्रेषु करालाद्याः पुरोदिताः ॥१०॥
तद्बाह्येऽनङ्गरूपाद्याः लोकेशास्त्राणि तद्बहिः।)

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा एकाक्षरोक्तान् ऋष्यादीन् विन्यस्य ऐंह्रांऐं हृत्, ऐंह्रींऐं शिरः, ऐंह्रूंऐं शिखा, इत्यादिकरषडङ्गन्यासान् विधाय, एकाक्षरोक्तन्यासान् विधाय, एकाक्षरोक्तानन्यांश्च न्यासान् कृत्वा, अत्रोक्तरूपां भगवतीं ध्यात्वा, मानसपूजादिपुष्पोपचारान्ते एकाक्षरोक्तवत् हृल्लेखाद्या मिथुनानि संपूज्याष्टदलकेसरेषु षडङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु—आं ब्राह्म्यै नमः, अं असिताङ्गभैरवाय नमः, ईं माहेश्वर्यै० इं रुरुभैरवाय०, ऊं कौमार्यै० उं चण्डभैरवाय०, ॠं वैष्णव्यै, ऋं क्रोधराजभैरवाय०, ॣं वाराह्यै०, ऌं उन्मत्तभैरवाय०, ऐं इन्द्राण्यै०, एं कपालिभैरवाय०, औं चामुण्डायै०, ओं भीषणभैरवाय०, अः महालक्ष्म्यै०, अं संहारभैवाय०, इति भैरवाङ्कस्था ब्राह्म्याद्याः प्रादक्षिण्येन संपूज्य, तद्बहिः षोडशपत्रेषु प्रागुक्ताः करालाद्याः संपूज्य, तद्बहिः प्राग्वदनङ्गरूपाद्यास्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च संपूज्य शेषं प्राग्वत् समापयेत् इति। तथा—

मनुं जपेत् तत्त्वलक्षं ब्रह्मवृक्षप्रसूनकैः । त्रिमध्वक्तै राजवृक्षपुष्पैर्वा तद्दशांशतः ॥११॥
जुहुयात् तर्पणादीनि कुर्यान्मन्त्रस्य सिद्धये । एवमुक्तविधानेन यो भजेद्भुवनेश्वरीम् ॥१२॥
मदविह्वलयोषाश्च राज्ञश्च वशयेत् सुधीः । एकाक्षरोदितान् सर्वान् प्रयोगानत्र चाचरेत् ॥१३॥
तेन सिद्ध्यन्ति कर्माणि तन्त्रोक्तान्यखिलान्यपि । इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि ऐं ह्रीं श्रीं से धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। ऐं ह्रां हृदयाय नमः ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा इत्यादि षडङ्ग मन्त्र से इसका न्यास किया जाता है। इसके मुनि आदि पूर्ववत् हैं। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

बन्धूकाभां त्रिनयनयुतां बद्धचन्द्रार्धमौलिं दोर्भ्यां पूर्णं विविधमणिभी रत्नपात्रं वहन्तीम्।
पद्मं सौम्यामुरुकुचयुगां स्मेरवक्त्रेन्दुबिम्बां ध्यायेद् देवीं धृतमणिघटप्रोल्लसत्सव्यपादाम्।।

इसके बाँयें हाथ में रत्नपात्र एवं दाँयें हाथ में कमल है—इस प्रकार आयुधध्यान किया जाता है।

ध्यान के पश्चात् मन्त्र का बारह लाख जप करे। दशांश हवन त्रिमधुर मिश्रित हविष्य से करे। तब तर्पणादि करे। इस सिद्ध मन्त्र का मन्त्री अभीष्ट सिद्धि के लिये प्रयोग करे। पलाश के फूलों से हवन करने पर लक्ष्मी प्राप्त होती है। एक वर्ष तक जप करके ब्राह्मी रस और घी मिलाकर पीने से कविता करने की शक्ति मिलती है। पीला सरसों और नमक के हवन से स्त्रियाँ वश में होती हैं। इससे मनुष्य, राजा और अन्य भी वश में होते हैं। आरग्वध फूलों को चन्दनजल से मिश्रित करके

हवन करने से तीनों लोक वश में होते हैं। त्रिमधुर युक्त लाल कमल के हवन से राज्यलक्ष्मी प्राप्त होती है। तेल, तण्डुल मिलाकर हवन करने से भी पूर्वोक्त फल मिलता है। पूर्वोक्त प्रयोगों को भी इससे किया जा सकता है।

ऐं ह्रीं ऐं मन्त्र सर्वार्थसिद्धिदायक है। पूर्वोक्त मन्त्र के समान ही इसके ऋष्यादि हैं। ऐं ह्रीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास किया जाता है। एकाक्षर मन्त्र के समान इसका न्यास किया जाता है। तदनन्तर ध्यान करे—

अम्भोदोद्द्योतिमूर्तिं त्रिनयनलसितां पीनवक्षोजनम्रां हस्ताम्भोजैर्वहन्तीं वरदसरसिजे रत्नपात्राभये च।
निन्यं रक्ताम्वुजस्थां शशिशकलसच्छेखरां हारभूषां विश्वाधीशार्चिताङ्घ्रिं निजहृदि कलये भास्वरामम्बिकां ताम्।।

निचले दाँयें हाथ से प्रारम्भ करके निचले बाँयें हाथ तक आयुध क्रम हैं।

प्रयोग—पूर्ववत् प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक की क्रिया करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। एकाक्षरोक्त ऋष्यादि न्यास के बाद ऐं ह्रीं ऐं हृदि, ऐं ह्रूं ऐं शिखायां इत्यादि रूप से षडङ्ग न्यास करे। एकाक्षरोक्त न्यास करे। अन्य न्यासों को करे। पूर्ववत् भगवती का ध्यान करके मानस-पूजादि पुष्पोपचार तक पूजा करे। एकाक्षरोक्त हृल्लेखा आदि मिथुनों की पूजा करे। अष्टदल के केसर में षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल में—आं ब्राह्म्यै नम:। अं असितांगभैरवाय नम:। ईं माहेश्वर्यै नम:। इं रुरुभैरवाय नम:। अं कौमार्यै नम:। उं चण्डभैरवाय नम:। ॠं वैष्णव्यै नम:। ऋं क्रोधराजभैरवाय नम:। ॡं बाराह्यै नम:। ऌं उन्मत्तभैरवाय नम:। ऐं इन्द्राण्यै नम:। एं कपालिभैरवाय नम:। औं चामुण्डायै नम:। ओं भीषणभैरवाय नम:। अ: महालक्ष्मै नम:। अं संहारभैरवाय नम:। भैरवों के गोद में बैठी ब्राह्मी आदि की पूजा प्रदक्षिण क्रम से करे। उसके बाहर पूर्ववत् अनंगरूपा आदि की पूजा करे। उसके बाहर इन्द्रादि एवं वज्रादि की पूजा करके शेष कृत्य पूर्ववत् करके पूजा समाप्त करे।

इस मन्त्र का जप तीन लाख करे। त्रिमध्वक्त पलाश के फूलों या राजवृक्ष के फूलों से दशांश हवन करे। मन्त्र-सिद्धि के लिये तर्पणादि करे। इस उक्त विधान से जो भुवनेश्वरी का भजन करता है, उसके वश में मदविह्वल योषिताएँ और राजा होते हैं। एकाक्षरोक्त सभी प्रयोगों को भी इससे अनुष्ठित किया जाता है। इससे तन्त्रोक्त सभी कर्म सिद्ध होते हैं।

त्र्यक्षरमनुस्तत्प्रयोग:

तथा सारसंग्रहे—

सदण्डि मुखवृत्तं स्याद् द्वितीयं भुवनेश्वरी। दक्षदोर्मूलकं साग्नि सद्यार्धेन्दुयुतं मनु: ।।१।।
त्र्यर्ण: प्रोक्तश्च पाशादिस्त्रैलोक्यवशदायक:। एकाक्षरोक्तमृष्यादि माययाङ्गानि कल्पयेत् ।।२।।

सदण्डि मुखवृत्तं आं, भुवनेश्वरी ह्रीं, दक्षदोर्मूलकं क, साग्नि सरेफ:, सद्य ओ, अर्धेन्दुरनुस्वार:, तेन, क्रों।

अङ्कुशं वरगुणाभयं करैर्बिभ्रतीं कमलसंस्थितां पराम्।
प्रोद्यदर्कणकान्तिसत्तनुं संस्मरेच्च भुवनेश्वरीं हृदि ।।१।।

दक्षोर्ध्वाध:करयोराद्ये, तथा वामकरयोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्।

इति ध्यात्वा यजेत् पीठे पूर्वोक्ते भुवनेश्वरीम्। वक्ष्यमाणेन मार्गेण हृल्लेखाद्या यथा पुरा ।।४।।
किञ्जल्केषु षडङ्गानि ब्राह्म्याद्या दलमध्यत:। तत: शक्रादयो बाह्ये हेति: पूज्या च तद्बहि: ।।५।।
एवं य: पूजयेद्भक्त्या स भवेच्च कुबेरवत्। अनुरक्ता: सर्वलोका भवेयुस्तस्य मन्त्रिण: ।।६।।

अथ प्रयोग:—तत: प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते एकाक्षरोक्तमृष्यादिकं विन्यस्य, षड्दीर्घयुक्तमायाबीजेन षडङ्गानि विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्तेऽष्टदलकर्णिकायां प्राग्वद् हृल्लेखाद्यास्तत्केसरेषु षडङ्गानि, तद् दलेषु ब्राह्म्यादी:, तद्बहिश्चतुरस्रे लोकपालांस्तदायुधानि च संपूज्य शेषं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

मनुं जपेत् तत्त्वलक्षं जुहुयात् तत्सहस्रकम्। त्रिस्वादुयुग्दुग्धवृक्षसमिद्भि: प्रोक्तसंख्यया ।।७।।
शुद्धैस्तिलै: पयोयुक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत्।

तत्त्वलक्षं चतुर्विंशतिलक्षम्। तत्सहस्रं चतुर्विंशतिसहस्रम्। दुग्धवृक्षा अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षवटा:। एकैकेन षट्सहस्रम्। प्रोक्तसंख्ययेत्यस्य तिलैरिति संबन्ध:। तेन तावत्तिलैरपि जुहुयादित्यर्थ:। 'तिलैश्च तावज्जुहुयात् पयोक्तै:'

(११ प० ४३ श्लो०) **इति प्रपञ्चसारवचनात्।**

महसा सूर्यसदृशस्तेनाधिष्ठितमन्दिरम्। रजन्यां निष्प्रदीपं च प्रदीपशतसंकुलम् ॥८॥
विलोक्यते सर्वजनैरेतन्मन्त्रप्रसादतः। लवणोन्मिश्रसिद्धार्थैः रजन्यां घृतसुप्लुतैः ॥९॥
जुहुयाच्चैव राजानं राजपत्नीं वशं नयेत्। अन्नहोमेन मन्त्रज्ञः समृद्धान्नगृहो भवेत् ॥१०॥
विकसत्पद्महोमेन लक्ष्मीरेनं न संत्यजेत्। चतुरङ्गुलपुष्पैश्च होमः स्यात् कविताप्रदः ॥११॥
तिलहोमेनामयानां नाशो मन्त्रिण एव हि। आयुष्कामो घृतेनैव जुहुयान्मन्त्रवित्तमः ॥१२॥
पूर्वोदितान् प्रयोगांश्च कुर्यादत्रापि मन्त्रवित्। इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि आं ह्रीं क्रों—यह त्र्यक्षर मन्त्र त्रैलोक्य के लिये वश्यकारक है। एकाक्षरोक्त इसके ऋष्यादि हैं। ह्रां ह्रीं इत्यादि से इसका षडङ्ग न्यास किया जाता है। न्यास के पश्चात् इस प्रकार इसका ध्यान किया जाता है—

अङ्कुशं वरगुणाभयं करैर्बिभ्रतीं कमलसंस्थितां पराम्। प्रोद्यदर्कणकान्तिसत्तनुं संस्मरेच्च भुवनेश्वरीं हृदि।।

एकाक्षरोक्त ऋष्यादि न्यास के बाद ह्रां ह्रीं ह्रूं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करके ध्यानादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। अष्टदल कर्णिका में पूर्ववत् षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि की पूजा करे। उसके बाहर इन्द्रादि और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार जो देवी का पूजन करता है, वह कुबेर के समान हो जाता है। मन्त्री के अनुरक्त सभी लोक हो जाते हैं।

चौबीस लाख मन्त्र-जप करे। चौबीस हजार हवन पीपल गूलर पाकड़ एवं वटवृक्ष की समिधा से करे। प्रत्येक से छः हजार हवन करे। तदनन्तर प्रपञ्चसार के अनुसार तिल से हवन करे।

इस मन्त्र की कृपा से सभी मनुष्य महान् सूर्य से अधिष्ठित घर को रात में बिना दीपक के भी दीपक से आलोकित देखते हैं। नमक मिश्रित सरसों, घृतप्लुत हल्दी के हवन से राजा-रानी का वशीकरण होता है। अन्न के हवन से मन्त्रज्ञ का घर अन्न से भरा रहता है। विकसित कमल के हवन से लक्ष्मी कभी त्याग नहीं करती। चतुरंगुल पुष्पों के हवन से कवित्व शक्ति मिलती है। तिल के हवन से रोगों का नाश होता है। मन्त्रज्ञ आयु की कामना से घी से हवन करे। यहाँ भी पूर्वोक्त प्रयोगों को किया जा सकता है।

घटार्गलादियन्त्ररचना

प्रपञ्चसारे (प० ११ श्लो० २८)—

अष्टाशात्तार्गलाविर्हलयवरयुतापूर्वपाश्चात्यषट्कं
कोणोद्यत्स्वाङ्गसाष्टाक्षरयुगयुगलाष्टाक्षराख्यं बहिश्च।
मायोपेतात्मयुग्मस्वरमिलितलसत्केसरं साष्टपत्रं
पद्मं तन्मध्यपङ्क्तित्रितयपरिलसत्पाशशक्त्यङ्कुशार्णम् ॥१॥
पाशाङ्कुशावृतमनुप्रतिलोमगैश्च वर्णैः सरोजपुटितेन घटेन चापि।
आवीतमिष्टफलभद्रफटं तदेतद्यन्त्रोत्तमं त्विति घटार्गलनामधेयम् ॥२॥
प्राक्प्रत्यगर्गले हलमथ पुनराग्नेयमारुते च हयम्।
दक्षोत्तरे हरार्णं नैर्ऋतशैवे हरं द्विपङ्क्तिशो विलिखेत् ॥३॥

विलिखेच्च कर्णिकायां पाशाङ्कुशसाध्यसंयुतां शक्तिम्। अभ्यन्तराष्टकोष्ठेष्वङ्गान्यवशेषितेषु चाष्टार्णौ ॥४॥
कोष्ठेषु षोडशस्वथ षोडशवर्णं मनुं तथा मन्त्री। पद्मस्य केसरेषु च युगस्वरात्मान्वितां तथा मायाम् ॥५॥
एकैकेषु दलेषु त्रिशस्त्रिशः कर्णिकागतान् मन्त्रान्। पाशाङ्कुशबीजाभ्यां प्रवेष्टयेद्बाह्यतश्च नलिनस्य ॥६॥
अनुलोमविलोमगतैः प्रवेष्टयेदक्षरैश्च तद्बाह्ये। तदनु घटेन सरोजस्थितेन तद्वक्त्रकेऽम्बुजञ्च विलिखेत् ॥७॥ इति।

सारसंग्रहे—'घटार्गलाभिधं यन्त्रं सर्वसंपत्करं परम्' इति।

अथैतद्यन्त्ररचनाप्रकार:—तत्र समचतुरस्रद्वयसंपुटितमष्टकोणं विधाय, तस्य कोणाष्टगतरेखाग्रकाणि ऋज्वाकाराणि स्वाभिमतमानेन प्रसार्य, तद्रेखाग्रषोडशकस्पृष्टं वृत्तं कृत्वा पद्माद्बहिरप्येकाङ्गुलान्तराले तद्बहिस्त्र्यङ्गुलान्तराले च वृत्तद्वयं कृत्वाभ्यन्तरवीथ्यां समान्तरालाभि: षोडशरेखाभि: केसराणि परिकल्प्य, बहिर्वीथ्यामपि समान्यष्टदलानि कृत्वा, पद्माद्बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा, तद्बाह्ये घटमालिख्य घटस्य पृष्ठे ऊर्ध्वमुखं घटस्य मुखेऽधोमुखं चेति पद्मद्वयं विरच्य, चतुरस्रद्वयगतरेखाष्टकसन्धिस्थानभेदितं बाह्याभ्यन्तररूपेण वृत्तद्वयं कुर्यात् इति यन्त्रशरीरं निष्पाद्य, ततस्तन्मध्ये पाशादित्र्यक्षरमन्त्रमालिख्य, तन्मध्यगतशक्तिबीजमध्ये प्राग्वत् साध्यसाधककर्माण्यालिख्य, अष्टकोणस्य प्रथमसन्धिभेदिवृत्तस्याभ्यन्तरगतकोष्ठाष्टके अग्नीशासुरवायव्यस्वाग्रगत(कोष्ठपञ्चके हृदयादिनेत्रान्तान् पञ्च मन्त्रानालिख्य प्रागादिचतुर्दिग्गत)कोष्ठचतुष्केऽस्त्रमन्त्रं प्रतिकोष्ठमालिखेदिति षडङ्गमन्त्रानालिख्य, प्रथमवृत्तबाह्यगतचतुरस्रद्वयस्याष्टसु कोणेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन 'आंश्रींह्रींक्लींक्लींह्रींश्रींक्रों' इत्यष्टाक्षराणि प्रतिकोणमेकमेकं (विलिख्य कोणाष्टकान्तर्गतवर्तुलगतकोष्ठाष्टके च स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन 'कामिनि रञ्जिनि स्वाहा' इति वर्णाष्टकं प्रतिकोष्ठमेकैकं) विलिख्य, तद्बहिर्गतषोडशकोष्ठेषु 'ह्लींगौरि रुद्रदयिते योगेश्वरि हुं फट् स्वाहा' इति षोडशाक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, अर्गलासु प्रस्तारितरेखाद्वयपार्श्वयो: पूर्वार्गलायां बहिर्वृत्तमारभ्योत्तररेखापार्श्वे 'ह्लंह्लांह्लिं' इति विलिख्यान्यरेखापार्श्वेऽभ्यन्तरवृत्तमारभ्य 'ह्लींह्लुंह्लूं इति विलिख्य, पश्चिमार्गलायां तथैव बहिर्वृत्तमारभ्य रेखापार्श्वयो: 'ह्लेंह्लैंह्लों' इति एकपार्श्वे द्वितीये 'ह्लौंह्लंह्ल:' इति बहिर्वृत्तपर्यन्तं प्रवेशनिर्गमनरीत्या विलिख्य, आग्नेयार्गलायां तथैव 'ह्यंह्यांह्यिंह्यींह्युंह्यूं' इति प्रादक्षिण्येन प्रवेशनिर्गमरीत्या विलिख्य, मारुतार्गलायां 'ह्येंह्यैंह्योंह्यौंह्यंह्य:' इति षट्कं विलिख्य, तत: दक्षिणोत्तरार्गलयो: प्रागुक्तयुक्त्या 'ह्वंह्वांह्विंह्वींह्वुंह्वूंह्वेंह्वैंह्वोंह्वौंह्वंह्व:' इति विलिख्य ईशाननैर्ऋत्यार्गलयो: 'ह्रंह्रांह्रिंह्रींह्रुंह्रूंह्रेंह्रैंह्रोंह्रौंह्रंह्र:' इति पूर्वोक्तयुक्त्या विलिख्य, तद्बहिरष्टदलमूलस्थकेसरेषु प्रथमे अंहंईंस:आं, द्वितीये इंहंईंस:ईं, तृतीये उंहंईंस:ऊं, चतुर्थे ऋंहंइंस:ॠं, पञ्चमे ऌंहंईंस:ॡं, षष्ठे एंहंईंस:ऐं, सप्तमे ओंहंईंस:औं, अष्टमे अंहंईंस:अ:, इति लिखेत्। अत्र केचित्—'अथात: संप्रवक्ष्यामि बहिरस्यैव वेष्टनम्। हंस: पदं वामनेत्रं बिन्दिन्दुपरिभूषितम्। हंस: पदं चैव पश्चात्पञ्चार्णं मनुमालिखेत्' इति दक्षिणामूर्तिसंहितावचनात् अंहंस:ईंहंस:आमित्यादि प्रतिकेसरं सप्ताक्षराणि लेख्यानीति वदन्ति। अन्ये तु—'मायोपेतात्मयुग्मस्वरमिलितलसत्केसरं' (११.२८) इति श्रीशङ्कराचार्यवचनस्य श्रीपद्मपादाचार्यव्याख्या—माया ईकार:, आत्मा हंस:, मायोपेतेनात्मना युग्मस्वरेणेत्यर्थ:। इति पदव्याख्यानं कृत्वा, तत्र युग्मस्वरा दलमूलग्रन्थिषु लेखनीया ग्रन्थ्योर्मध्ये हकारसकारयोर्मध्ये माया लेख्येति लेखनप्रकार:, इति लिखितत्वात् पञ्चाक्षराण्येवेति वदन्ति। तत्र यथोपदेशं लेख्यम्। ततोऽष्टदलोदरेषु तिर्यक्पङ्क्त्याकारेण बाह्याभ्यन्तरक्रमेण पाशादित्र्यक्षरं त्रिशस्त्रिश: प्रतिदलं विलिख्य, पद्मबाह्यगतवी(थीत्रये आभ्यन्तरवीथ्यां स्वाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन आंक्रों इति पाशाङ्कुशबीजाभ्यां पुन: पुनर्निरन्तरलिखिताभ्यां वेष्टयित्वा, तद्बहिर्वीथ्याम)कारादिक्षकारान्तै: सबिन्दुभिर्मातृकाक्षरै: प्रदक्षिणं संवेष्ट्य तद्बहिर्वीथ्यां क्षकाराद्यकारान्तै: सबिन्दुभिर्वेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

घटार्गल यन्त्र—प्रपञ्चसार के अनुसार घटार्गल नामक यन्त्र समस्त सम्पत्तियों को देने वाला श्रेष्ठ यन्त्र है। षट्कोण बनाकर उसके बाहर दो चतुरस्र बनावे। उसके आठों कोणों के रेखाग्रों को स्वामिमत मान से आगे बढ़ावे। उन सोलह रेखाओं को स्पर्श करते हुए एक वृत्त बनावे। इसके बाहर एक अंगुल के अन्तराल में और उसके बाहर तीन अंगुल के अन्तराल में दो वृत्त बनावे। आभ्यन्तर वीथि में समान दूरी पर सोलह रेखाओं से केसर बनावे। वाह्य वीथि में भी समान आठ दल बनावे। तब इसके बाहर तीन वृत्त बनावे। उसके बाहर घट बनावे। घड़े का पीठ ऊपर और मुख नीचे बनावे। दो पद्म बनाकर चतुरस्र द्वयगत आठ रेखाओं का सन्धिभेदन करते हुए बाह्याभ्यन्तर रूप में दो वृत्त बनावे। इस प्रकार यन्त्र का शरीर बनाकर उनमें आं ह्रीं क्रों लिखे। शक्ति बीज 'ह्रीं' के मध्य में पूर्ववत् साध्य-साधक कर्म लिखे।

अष्टकोण के प्रथम सन्धिभेदित वृत्त के अन्दर आठ कोष्ठों में अग्निकोण-वायुकोण-नैर्ऋत्य कोण-स्वाग्रगत पाँच कोष्ठों में षडङ्ग मन्त्र के हृदयादि से नेत्रमन्त्र तक पाँच मन्त्रों को लिखे। चार कोष्ठों में अस्त्र मन्त्र लिखे। प्रथम वृत्त के बाहर

दो चतुरस्रों के आठ कोणों में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से आं श्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं ह्रीं श्रीं क्रों—इन आठ अक्षरों को लिखे। आठ कोणों के अन्तर्गत वर्तुलगत आठ कोष्ठों में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से 'कामिनि रंजिनि स्वाहा'— इन आठ वर्णों को लिखे। उसके बाहर के सोलह कोष्ठों में 'ह्रीं गौरि रुद्रदयिते योगेश्वरि हुं फट् स्वाहा' के सोलह वर्णों को प्रत्येक कोष्ठ मे लिखे। अर्गला के प्रसरित दो रेखाओं के पार्श्वों में पूर्व अर्गला के बाहरी वृत्त से आरम्भ करके उत्तर रेखा के पार्श्वों में ह्लां ह्लां ह्लिं लिखे। रेखा पार्श्व के आभ्यन्तर वृत्त से आरम्भ करके ह्लीं ह्लौं ह्लूं लिखे। पश्चिम अर्गला में उसी प्रकार बाहरी वृत्त से आरम्भ करके रेखा के पार्श्वों में ह्लें ह्लैं ह्लों एक पार्श्व में एवं दूसरे पार्श्व में ह्लौं ह्लं ह्लः बाहरी वृत्त तक प्रवेश निर्गम रीति से लिखे। आग्नेय अर्गला में उसी प्रकार ह्यं ह्यां ह्यिं ह्यीं ह्युं ह्यूं प्रदक्षिण क्रम से लिखे। वायव्य अर्गला में ह्यें ह्यैं ह्यों ह्यौं ह्यं ह्यः—इन छः को लिखे। तब दक्षिणोत्तर अर्गला में पूर्वोक्त युक्ति से ह्वं ह्वां ह्विं ह्वुं ह्वूं ह्वें ह्वैं ह्वौं ह्वं ह्वः लिखे। ईशान-नैर्ऋत्य अर्गला में ह्लं ह्लां ह्लिं ह्लीं ह्लुं ह्लें ह्लैं हैं ह्लों हौं ह्लं हः लिखे। उसके बाहर अष्टदल मूलस्थ केसर में पहले में अं हं ईं सः आं, दूसरे इं हं ईं सः ईं, तीसरे में उं हं इं सः ऊं, चौथे में ऋं हं ईं सः ॠं, पाँचवें में ऌं हं ईं सं: ॡं, छठे में एं हं ईं सः ऐं, सातवें में ओं हं ईं सः औं एवं आठवें में एवं अं हं ईं सः अः लिखे।

किसी के मत से अं हं सः ईं हं सः—ये पाँच वर्ण लिखे। इसके बाद मन्त्र के पाँच वर्ण लिखे। दक्षिणमूर्ति- संहिता के अनुसार अं हंसः ईं हंसः आं इत्यादि सात अक्षर प्रतिकेसर में लिखे। अष्टदल के उदर में तिर्यक् पंक्ति आकार में बाह्याभ्यन्तर क्रम से आं ह्रीं क्रों तीन-तीन अक्षरों को लिखे। पद्म के बाहरी तीन वीथियों में से आभ्यन्तर वीथि में अपने आगे से आरम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से आं क्रों—इस पाश-अंकुश बीज को बार-बार लिखकर वेष्टित करे। उसके बाद वाली वीथि में कं से क्षं तक के मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर की वीथि में क्षं से अं तक की मातृकाओं को लिखे। इस प्रकार से निर्मित यन्त्र समस्त सम्पत्तियों को देने वाला होता है।

सारसंग्रहे—

बिन्द्वनन्तौ रमा माया मारौ चैव सशक्तिकौ। रमाङ्कुशोऽष्टवर्णोऽयं द्वितीयोऽष्टार्ण उच्यते ॥१॥
कामिन्यन्ते रञ्जिनि स्याद्वह्निजायावधिर्मनुः। मायां वदेद्गौरि रुद्रदयिते यो-पदं वदेत् ॥२॥
गेश्वर्यन्तं च वर्मास्त्रद्विठान्तः षोडशार्णकः।

एते मन्त्राः प्रागेव व्याख्यातत्वान्न व्याख्यायन्ते। तथा—

इदं यन्त्रं भूर्जदले लिखितं रोचनादिभिः। दक्षभुजेतरे कण्ठे स्वशीर्षे वापि धारयेत् ॥३॥
तस्य भूपतयः सर्वे वशगा मनुजा अपि। रोचनेभमदोपेतैः काश्मीरमृगसंमदैः ॥४॥
अलक्तकरसाक्तैश्च लिखेद्यन्त्राणि मन्त्रवित्। नीलपट्टे विधानेन यन्त्रमालिख्य तत्पुनः ॥५॥
गुलिकीकृत्य साध्यस्य प्रतिमां सिक्थसंभवाम्। कृत्वा (वक्षसि विन्यस्य पात्रे संस्थापयेत् सुधीः ॥६॥
त्रिस्वादुपरिपूर्णे च पूजयेच्च विधानवित्। गन्धपुष्पादिकैः सम्यग् बलिं रात्रौ निवेदयेत्)॥७॥
तत् स्पृष्ट्वा प्रत्यहं मन्त्री शतमष्टाधिकं जपेत्। ततो मन्त्री सप्तदिनादिष्टां योषां च कर्षयेत् ॥८॥
पुनरेतल्लिखेद्भूर्जे गुलिकीकृतमुक्तवत्। जतुना शुद्धताम्रेण रजतेनापि मन्त्रवित् ॥९॥
वेष्टयेत् तत् सुवर्णेन कलशे तत् प्रविन्यसेत्। भुवनेशीं तत्र यजेच्चन्दनादिभिरुक्तवत् ॥१०॥
सहस्रद्वादशमितं तत् स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मनुम्। तेनोदकेन शिष्यं वा प्रियं साध्यमथो सुतम् ॥११॥
राजानं वाभिषिच्याथ तद्भाले यन्त्रमुत्तमम्। आबध्नीयात् स्वयं मन्त्री वेदाशीर्वचनैः सह ॥१२॥
गत्वाभयत्वमारोग्यं धनं कान्तिं यशांसि च। पुष्टिं च लभते सद्यो नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥
यन्त्रं कुड्ये समालिख्य ह्यर्चयेच्च पुरोक्तवत्। तं द्रष्टुं नैव शक्ताः स्युर्भूतप्रेतपिशाचकाः ॥१४॥
समालिख्य च तद्यन्त्रं सम्यक्पूजादिसाधितम्। धृतं भटेन मुकुटे कुरुते रिपुसंकटे ॥१५॥
रिपून् महाभटान् हत्वा जयलक्ष्मीयुतो भवेत्। इति।

सारसंग्रह के अनुसार आं श्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं ह्रीं श्रीं क्रों यह अष्टाक्षर मन्त्र है। कामिनि रंजिनि स्वाहा—यह दूसरा अष्टाक्षर मन्त्र है। ह्रीं गौरि रुद्रदयिते योगेश्वरि हुं फट् स्वाहा—यह षोडशाक्षर मन्त्र है। इस यन्त्र को गोरोचन से भोजपत्र पर बनावे। इसे दाहिनी भुजा या कण्ठ या शिर पर धारण करे। ऐसा करने से उसके वश में सभी राजा और मनुष्य होते हैं। रोचन एवं इभमद से युक्त केसर और कस्तूरी को आलता मिलाकर नीले कपड़े पर विधानपूर्वक यन्त्र लिखकर गोली बनावे। साध्य की प्रतिमा मोम की बनाकर उसके वक्ष में गोली को रख दे। प्रतिमा को त्रिमधुर पूर्ण पात्र में स्थापित करे। विधिवत् पूजा गन्ध-पुष्पादि से करके रात में सम्यक् बलि प्रदान करे। उस प्रतिमा को स्पर्श करके प्रतिदिन एक सौ आठ जप करे। तब सात दिनों में मनचाही योषिता को वह आकर्षित करता है। पुन: यन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर गोली बनावे। उस गोली को शुद्ध ताम्बे, चाँदी या सोने के ताबीज में भरकर कलश में रखे। उसमें भुवनेशी की पूजा चन्दनादि से पूर्व- कथित रूप से करे। उसे स्पर्श करके बारह हजार मन्त्र का जप करे। उस जल से शिष्य, प्रिय साध्य या पुत्र या राजा का अभिपिञ्चन करे। उसके ललाट में वह यन्त्र स्वयं मन्त्री वेदाशीर्वाद वचनों के साथ बाँधे। इससे भय और रोग का नाश होता है। धन-कांति-यश-पुष्टि का लाभ तुरन्त होता है। यन्त्र को दिवाल पर लिखकर पूर्वोक्त प्रकार से पूजा करे तब उसे देखकर भूत-प्रेत-पिशाच भाग जाते हैं। यन्त्र को लिखकर सम्यक् पूजादि से साधित करके योद्धा मुकुट में धारण करे तो शत्रु को संकट होता है। वह महाबलवान शत्रु को मारकर जयलक्ष्मी से युक्त होता है।

तथा—

शिखिगेहयुग्ममथ वज्रचिह्नितं सह साध्यकेन लिख मूलमत्र च।
मन्त्रं तदेव विलिखेत् तदस्रिषु प्रवेष्ट्य तेनैव बहिश्च वृत्तके ॥१॥
भूर्जादिषूक्तघुसृणेन्दुरोचनालिखितं सवश्यविजयाद्यरोगदम्।

अस्यार्थ:—षट्कोणं विलिख्य तत्कोणेषु वज्राणि कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं मूलमन्त्रं विलिख्य, षट्सु कोणेष्वपि पुनस्तदेव विलिख्य बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा तदन्तर्गतवीथीद्वये मूलमन्त्रेणैव वेष्टयेदेतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

स्वरकेसरे वसुदलदले वर्गाष्टकशोभिते धरणिगेहगते।
गुणशश्च पाशलसदङ्कुशबद्धां विलिखेत् सशक्तिमथ साध्यसंयुताम् ॥२॥
अखिलोत्तमं त्वरितवाञ्छितदं रणसंकटे विजयदं च तत:।
सकलामयान् सपदि नाशयति सुभगत्वदं ह्यविरतं खलु नृणाम् ॥३॥

अस्यार्थ:—अष्टदलपद्मं विलिख्य तन्मध्ये पाशाङ्कुशाभ्यां बद्धां शक्तिं त्रिशो विलिख्य, तत्केसरेषु स्वरान् विलिख्य, तत्पत्रेषु अष्टवर्गान् विलिख्य बहिश्चतुरस्त्रं कुर्यात्, एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। दशपटल्यां—

सर्वान्ते मोहिनी ङेन्ता विद्महे तदनन्तरम्। विश्वशब्दं जनन्यै च धीमहीति ततो वदेत् ॥१॥
तन्न: शक्ति: प्रशब्दान्ते चोदयादिति चोच्चरेत्। गायत्र्येषा समाख्याता भुवनेश्या: समृद्धिदा ॥२॥ इति।

षट्कोण बनाकर उसके कोणों में वज्र बनावे। उसमें साध्य सहित मूल मन्त्र लिखे। छहों कोणों में भी उसी प्रकार लिखे। उसके बाहर तीन वृत्त बनावे। उनमें निर्मित दो वीथियों को मूल मन्त्र से वेष्टित करे। यन्त्र को भोजपत्र पर केसर, कपूर, गोरोचन से लिखने से वश्य, विजय एवं आरोग्य की प्राप्ति होती है।

अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में साध्यसहित आं ह्रीं क्रों लिखे। उसके केसर में स्वरों को लिखे। पत्रों में अष्ट वर्गों को लिखे। बाहर चतुरस्र बनावे। इस यन्त्र से सभी उत्तम वांछित फल प्राप्त होते हैं। युद्ध में विजय मिलती है। सभी रोग तुरन्त नष्ट होते हैं। मनुष्यों को अविरत सुभगत्व प्राप्त होता है। दशपटली में भुवनेश्वरी गायत्री इस प्रकार कही गई है—सर्वमोहिन्यै विद्महे विश्वजनन्यै धीमहि तन्न: शक्ति: प्रचोदयात्। यह भुवनेश्वरी गायत्री समृद्धि प्रदान करने वाली है।

भुवनेश्वरीस्तुतिः

प्रपञ्चसारे (११ प० ४७)—

एभिर्विधानैर्भुवनेश्वरीं तां समर्चयित्वाथ जपेच्च मन्त्री।
स्तुत्यानया स्तौतु सदा समग्रप्राप्त्यै समस्तार्तिविभञ्जिकायाः॥१॥
प्रसीद प्रपञ्चस्वरूपे प्रधाने प्रकृत्यात्मिके प्राणिनां प्राणसंज्ञे।
प्रणोतुं प्रभो प्रारभे प्राञ्जलिस्त्वां प्रकृत्याप्रतर्क्यप्रकामप्रवृत्ते॥२॥
स्तुतिर्वाक्यबद्धा पदात्मैव वाक्यं पदं त्वक्षरात्माक्षरं त्वं महेशि।
ध्रुवं त्वां त्वमेवाक्षरैस्त्वन्मयैः स्तौष्यतस्त्वन्मयी वाक्प्रवृत्तिर्यतः स्यात्॥३॥
अजाधोक्षजत्रीक्षणाश्चापि रूपं परं नाभिजानन्ति मायामयं ते।
स्तुवन्तीशि तां त्वाममी स्थूलरूपां तदेतावदम्बेह युक्तं ममापि॥४॥
नमस्ते समस्तेशि बिन्दुस्वरूपे नमस्ते परत्वेन तत्त्वाभिधाने।
नमस्ते महत्त्वं प्रपन्ने प्रधाने नमस्ते त्वहङ्कारतत्त्वस्वरूपे॥५॥
नमः शब्दरूपे नमो व्योमरूपे नमः स्पर्शरूपे नमो वायुरूपे।
नमो रूपतेजेरसाम्भःस्वरूपे नमस्तेऽस्तु गन्धात्मिके भूस्वरूपे॥६॥
नमः श्रोत्रचर्माक्षिजिह्वाख्यनासास्यवाक्पाणिपत्पायुसोपस्थरूपे।
मनो बुद्ध्यहङ्कारचित्तस्वरूपे विरूपे नमस्ते विभो विश्वरूपे॥७॥
रवित्वेन भूत्वान्तरात्मा दधासि प्रजाश्चेन्द्रमस्त्वेन पुष्णासि भूयः॥
दहस्यग्निमूर्तिं दधत्याहुतिं वा महादेवि तेजस्त्रयं त्वत्त एव॥८॥
चतुर्वक्त्रयुक्ता लसद्धंसवाहा रजःसंश्रिता ब्रह्मसंज्ञां दधाना।
जगत्सृष्टिकार्या जगन्मातृरूपे वरं त्वत्पदं ध्यायसीशि त्वमेव॥९॥
विराजत्किरीटा लसच्छङ्खचक्रा वहन्ती च नारायणाख्यां जगत्सु।
गुणं सत्त्वमास्थाय विश्वस्थितिं यः करोतीह सोंऽशोऽपि देवि त्वमेव॥१०॥
जटाबद्धचन्द्राहिगङ्गां त्रिनेत्रां जगत् संहरन्तीं च कल्पावसाने।
तमःसंश्रिता रुद्रसंज्ञां दधाना वहन्ती परश्वक्षमाले विभासि॥११॥
सचिन्ताक्षमाला सुधाकुम्भलेखाधरा त्रीक्षणार्धेन्दुराजत्कपर्दा।
सुशुक्लांशुकाकल्पदेहा सरस्वत्यपि त्वन्मयैवेशि वाचामधीशा॥१२॥
लसच्छङ्खचक्रा चलद्खड्गभीमा नदत्सिंहवाहा ज्वलत्तुङ्गमौलिः।
द्रवद् दैत्यवर्गा स्तुवत्सिद्धवर्गा त्वमम्बेशि दुर्गापि सर्गादिहीने॥१३॥
पुरारातिदेहार्धभागा भवानी गिरीन्द्रात्मजात्वेन यैषा विभासि।
महायोगिवन्द्या महेशा सुनाथा महेश्यम्बिका तत्वतस्त्वन्मयैव॥१४॥
लसत्कौस्तुभोद्भासिते व्योमनीले वसन्तीं च वक्षःस्थले कैटभारेः।
जगद्वल्लभां सर्वलोकैकनाथां श्रियं त्वां महादेव्यहं तामवैमि॥१५॥
अजाद्रीड्गुहाब्जाक्षपोत्रीन्द्रकाणां महाभैरवस्यापि चिह्नं वहन्त्यः।
विभो मातराः सप्त तद्रूपरूपाः स्फुरन्त्यस्त्वदंशा महादेवि ताश्च॥१६॥
समुद्यद् दिवाकृत्सहस्राभभासा सदा सन्तताशेषविश्वावकाशे।
लसन्मौलिबद्धेन्दुलेखे सपाशाङ्कुशाभीत्यभीष्टात्तहस्ते नमस्ते॥१७॥
प्रभा कीर्तिकान्ती दिवारात्रिसन्ध्याः क्रियाशा तमिस्रा क्षुधाबुद्धिमेधाः।
धृतिर्वाङ्मतिः सन्मतिः श्रीश्च कान्तिस्त्वमेवेशि येऽन्ये च शक्तिप्रभेदाः॥१८॥

हरे बिन्दुनादैः सशक्त्याख्यशान्तैर्नमस्तेऽस्तु भेदप्रभिन्नैरभिन्ने।
सदा सप्तपाताललोकाचलाब्धिग्रहद्वीपधातुस्वरादिस्वरूपे ॥१९॥
नमस्ते नमस्ते समस्तस्वरूपे समस्तेषु वस्तुष्वनुस्यूतरूपे।
अतिस्थूलसूक्ष्मस्वरूपे महेशि स्मृते बोधरूपेऽप्यबोधस्वरूपे ॥२०॥
मनोवृत्तिरस्तु स्मृतिस्ते समस्ता तथा वाक्प्रवृत्तिः स्तुतिः स्यान्महेशि।
शरीरप्रवृत्तिः प्रणामक्रिया स्यात् प्रसीद क्षमस्व प्रभो सन्ततं मे ॥२१॥
हृल्लेखाजपविधिमर्चनाविशेषानेतांस्तां स्तुतिमपि नित्यमादरेण।
योऽभ्यसेत्स खलु परां श्रियं च गत्वा शुद्धं तद् व्रजति पदं परस्य धाम्नः ॥२२॥

प्रपञ्चसार में भुवनेश्वरी स्तुति को कहा गया है। उपर्युक्त विधानसहित भुवनेश्वरी का अर्चन करके मन्त्रजप करके इस स्तुति का पाठ करने से समस्त दुःखों का नाश होता है एवं इच्छित समग्र वस्तुओं की प्राप्ति होती है। मूल में श्लोक २ से २१ तक भुवनेश्वरी की स्तुति का यथावत् पाठ करना चाहिये। हल्लेखा जप एवं विधिपूर्वक अर्चन एवं उपर्युक्त स्तुति नित्य करने से साधक अतिशय श्री से सम्पन्न होता है एवं शरीरान्त के बाद भुवनेश्वरी के धाम को प्राप्त करता है।

त्रिपुरभैरवीमन्त्रस्तत्पूजाप्रकारश्च

अथ भैरवीप्रकरणं शारदायाम् (१२.१)—

अथ वक्ष्ये महाविद्यां त्रिपुरामतिगोपिताम्। यां ज्ञात्वा सिद्धिसङ्घानामधिपो जायते नरः ॥१॥
वियद् भृगुहुताशस्थो भौतिको बिन्दुशेखरः। वियत्तदादिकेन्द्राग्निस्थितं वामाक्षिबिन्दुमत् ॥२॥
आकाशभृगुवह्निस्थो मनुः सर्गेन्दुखण्डवान्। पञ्चकूटात्मिका विद्या वेद्या त्रिपुरभैरवी ॥३॥
प्रथमं वाग्भवं बीजं द्वितीयं कामबीजकम्। तृतीयं शक्तिबीजाख्यं त्रिभिर्बीजैरुदाहृतम् ॥४॥ इति।

अस्यार्थः—शिवचन्द्रवह्निवाग्भवम्, शिवचन्द्रकामपृथिवीवह्निचतुर्थस्वरबिन्दुमत्, शिवचन्द्ररेफयुक्तचतुर्दश-स्वरबिन्दुविसर्गः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं कर्म विधाय पीठन्यासं कुर्यात्। पूर्वोक्तक्रमेणाधारशक्त्यादि 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' इत्यन्तं विन्यस्य, हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेसरेषु ॐ इच्छायै नमः। एवं ज्ञानायै०, क्रियायै०, कामिन्यै०, कामदायिन्यै०, रत्यै०, रतिप्रियायै०, नन्दायै०, मध्ये मनोन्मन्यै नमः। तदुपरि ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः, इति विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि त्रिपुरभैरव्यै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्भवाय बीजाय नमः। पादयोः तार्तीयाय शक्तये नमः। सर्वाङ्गे कामराजाय कीलकाय नमः। दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्—

ऋषिश्च दक्षिणामूर्तिरहं शिरसि विन्यसेत्। छन्दः पंक्तिस्तु विज्ञेयं मुखे विन्यस्य देवताम् ॥१॥
हृदये त्रिपुरेशानीं वाग्भवं बीजमुच्यते। शक्तिबीजं शक्तिरेव कीलकं कामराजकम् ॥२॥

नाभ्यादिचरणपर्यन्तं हस्रैं नमः। हृदयान्नाभिपर्यन्तं हसकलरीं नमः। शिरसो हृदयान्तं हस्रौः नमः। एवं आद्यबीजं दक्षिणकरे। द्वितीयबीजं वामकरे। तृतीयबीजमुभयकरयोः। ततो मूर्ध्नि मूलाधारे हृदि यथासंख्येन त्रीणि बीजानि विन्यसेत्। तथाच निबन्धे—

नाभेराचरणं न्यसेद्वाग्भवं मन्त्रवित्तमः। हृदयान्नाभिपर्यन्तं कामबीजं प्रविन्यसेत् ॥१॥
शिरसो हृत्प्रदेशान्तं तार्तीयं विन्यसेत् ततः। आद्यं द्वितीयं करयोस्तार्तीयमुभयोर्न्यसेत् ॥२॥
मूर्ध्न्याधारे हृदि न्यसेद्भूयो बीजत्रयं क्रमात्। इति।

ततो नवयोनिन्यासः—आद्यं बीजं दक्षकर्णे। द्वितीयं बीजं वामकर्णे। तृतीयबीजं चिबुके। एवं शङ्खयोर्वदने,

नेत्रयोर्नसि, अंसयोर्जठरे, कूर्परयोः कुक्षौ, जानुनोर्लिङ्गे, पादयोर्गुह्ये, पार्श्वयोर्हृदि, स्तनयोः कण्ठे इति। तथाच निबन्धे—

नवयोन्यात्मकं न्यासं कुर्याद्बीजैस्त्रिभिः क्रमात्। कर्णयोश्चिबुके भूयो शङ्खयोर्वदने पुनः ॥३॥
नेत्रयोर्नसि विन्यसेदंसयोर्जठरे पुनः। ततः कूर्परयोः कुक्षौ जानुनोर्ध्वजमूर्धनि ॥४॥
पादयोर्गुह्यदेशे च पार्श्वयोर्हृदयाम्बुजे। स्तनयोः कण्ठदेशे च रत्यादिमथ विन्यसेत् ॥५॥ इति।

अथ रत्यादिन्यासः—मूलाधारे ऐं रत्यै नमः। हृदि क्लीं प्रीत्यै नमः। भ्रूमध्ये सौः मनोभवायै नमः। पुनर्भ्रूमध्ये सौः अमृतेश्यै नमः। हृदि क्लीं योगेश्यै नमः। मूलाधारे ऐं विश्वयोन्यै नमः इति। तथाच निबन्धे—

मूले रतिं हृदि प्रीतिं भ्रुवोर्मध्ये मनोभवाम्। बालाबीजैस्त्रिभिर्न्यसेत् स्थानेष्वेषु विलोमतः ॥६॥
अमृतेशीं च योगेशीं विश्वयोनिं क्रमादिमाः। विलोमबीजैर्विन्यस्य मूर्तिन्यासमथाचरेत् ॥७॥ इति।

अथ मूर्तिन्यासः—मूर्ध्नि स्ह्रों ईशानमनोभवाय नमः। वक्त्रे स्ह्रें तत्पुरुषमकरध्वजाय नमः। हृदि स्ह्रुं अघोरकन्दर्पकुमाराय नमः। गुह्ये स्ह्रिं वामदेवमन्मथाय नमः। पादयोः स्ह्रं सद्योजातकामदेवाय नमः। एवमूर्ध्वप्राग्-दक्षिणोत्तरपश्चिमेषु मुखेषु ईशानमनोभवादिपञ्चमूर्तीस्तत्तद्बीजपूर्विका विन्यसेत्। तथाच निबन्धे (शारदायां)—

स्वस्वबीजादिकं पूर्वं मूर्ध्नीशानमनोभवम्। न्यसेद्वक्त्रे तत्पुरुषमकरध्वजमात्मवित् ॥८॥
हृद्यघोरकुमाराख्यं कन्दर्पं तदनन्तरम्। गुह्यदेशे प्रविन्यसेद्वामदेवादिमन्मथम् ॥९॥
सद्योजातं कामदेवं पादयोर्विन्यसेत्ततः। ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु तान् ॥१०॥
प्रविन्यसेद्यथापूर्वं भृगुव्योमाग्निसंस्थितान्। सद्यादिपञ्चह्रस्वाढ्यं बीजमेषां प्रकीर्तितम् ॥११॥

ततो बाणन्यासः यथा—द्रां द्राविण्यै नमः, अङ्गुष्ठयोः। द्रीं क्षोभिण्यै नमस्तर्जन्योः। क्लीं वशीकरिण्यै नमो मध्यमयोः। ब्लूं आकर्षिण्यै नमोऽनामिकयोः। सः उन्मादिन्यै नमः कनिष्ठिकयोः। ह्रीं कामाय नमः। क्लीं मन्मथाय नमः। ऐं कन्दर्पाय नमः। ब्लूं मकरध्वजाय नमः। स्त्रीं मीनकेतवे नमः। तथाच ज्ञानार्णवे—

पञ्चबाणान् क्रमेणैव कराङ्गुलिषु विन्यसेत्। अङ्गुष्ठादिकानिष्ठान्तं क्रमेण परमेश्वरि ॥१॥
थान्तद्वयं समालिख्य वह्निसंस्थं क्रमेण तु। मुखवृत्तेन नेत्रेण वामेन परिमण्डितम् ॥२॥
बाणद्वयमिदं प्रोक्तं मदनं भूमिसंस्थितम्। चतुर्थस्वरबिन्द्वाढ्यं नादरूपं वरानने ॥३॥
फान्तं शक्रेण संयुक्तं वामकर्णविभूषितम्। बिन्दुनादसमायुक्तं सर्गवांश्चन्द्रमाः प्रिये ॥४॥
पञ्चबाणान् महेशानि नामानि शृणु पार्वति। द्रावणः क्षोभणो वश्यस्तथाकर्षणसंज्ञकः ॥५॥
उन्मादश्च क्रमेणैव नामानि परमेश्वरि।

न्यासे तु सर्वत्र स्त्रीलिङ्गेन प्रयोगः। तथा निबन्धे—

द्रामाद्यां द्राविणीं मूर्ध्नि द्रीमाद्यां क्षोभिणीं पदे। क्लीं वशीकरिणीं वक्त्रे गुह्ये ब्लूंबीजपूर्विकाम् ॥१॥
आकर्षिणीं हृदि पुनः सर्गान्तभृगुसंयुताम्। संमोहिनीं क्रमादेवं बाणन्यासोऽयमीरितः ॥२॥

अत्रोन्मादनसंमोहनयोरेकपयार्यत्वम्।

कामास्तत्रैव विज्ञेयास्तेषां बीजानि संशृणु। पराबीजं मध्यबाणं वाग्भवं परमेश्वरि ॥३॥
तुर्यबाणं ततश्चैव स्त्रीबीजं च क्रमात् प्रिये। पञ्चकामा इमे देवि नामानि शृणु वल्लभे ॥४॥
काममन्मथकन्दर्पमकरध्वजसंज्ञकाः। मीनकेतुर्महेशानि पञ्चमः परिकीर्तितः ॥५॥ इति।

भैरवी प्रकरण—अति गोपित त्रिपुरा महाविद्या को कहता हूँ, जिसे जानकर मनुष्य सिद्धिसंघों का अधिपति हो जाता है। श्लोक २-४ के उद्धार करने पर मन्त्र होता है—ह्सैं हस्क्लीं ह्स्रौः। इसमें प्रथम वाग्भव बीज, द्वितीय काम बीज और तृतीय शक्ति बीज कहलाता है।

इसकी पूजा में प्रातःकृत्यादि से प्राणायाम तक के कर्मों को करने के बाद पीठन्यास करे। पूर्वोक्त क्रम से आधार शक्ति आदि से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः तक विन्यास करे। हृत्पद्मस्थ पूर्वादि केसरों में ॐ इच्छायै नमः, ज्ञानायै नमः, क्रियायै नमः, कामिन्यै नमः, कामदायिन्यै नमः, रत्यै नमः, रतिप्रियायै नमः, नन्दायै नमः, मध्य में मनोमन्यै नमः। उसके ऊपर ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः—इस प्रकार विन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर दक्षिणामूर्तये नमः। मुख में पंक्तिछन्दसे नमः। हृदय में त्रिपुरभैरव्यै देवतायै नमः। गुह्य में वाग्भवाय बीजाय नमः। पैरों में तार्तीयाय शक्तये नमः। सर्वांग में कामराजाय कीलकाय नमः। न्यास के इसी क्रम को दक्षिणामूर्ति संहिता के मूलोक्त श्लोकों द्वारा भी कहा गया है।

नाभि से पैरों तक ह्स्रैं नमः। हृदय से नाभि तक हसकलरीं नमः। शिर से हृदय तक ह्स्रौः नमः। इसी प्रकार ह्स्रैं नमः दक्षिण हस्त में, हसकलरीं नमः बाँयें हाथ में, ह्स्रौः नमः दोनों हाथों में, मूर्धा में ह्स्रैं नमः, मूलाधार में हसकलरीं नमः, हृदय में ह्स्रौः नमः का विन्यास करे। जैसा कि निबन्ध में भी कहा गया है कि मन्त्रज्ञ नाभि से चरण तक वाग्भव का न्यास करे। हृदय से नाभि तक कामराज का न्यास करे। शिर से हृदय तक शक्ति बीज का न्यास करे। प्रथम द्वितीय बीज का दाँयें-बाँयें हाथों में तथा तीसरे बीज का न्यास दोनों हाथों में करे। मूर्धा मूलाधार और हृदय में तीनों बीजों का न्यास करे।

नवयोनि न्यास—प्रथम बीज दाँयें कान में, द्वितीय बीज बाँयें कान में, तृतीय बीज चिबुक में न्यस्त करे। इसी प्रकार शंखों में, मुख में, नेत्रों में, नासिकाछिद्रों में, कन्धों में, उदर में, केहुनियों में, कुक्षियों में, जानुओं में, लिङ्ग में, पैरों में, गुह्य में, पार्श्वों में, हृदय में, स्तनों में, कण्ठ में न्यास करे। जैसा कि निबन्ध में वर्णित किया गया है।

निबन्ध के अनुसार रत्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है—मूलाधार में ऐं रत्यै नमः। हृदय में क्लीं प्रीत्यै नमः। भ्रूमध्य में सौः मनोभवायै नमः। भ्रूमध्य में ही सौः अमृतेश्यै नमः। हृदय में क्लीं योगेश्यै नमः। मूलाधार में ऐं विश्वयोन्यै नमः।

मूर्तिन्यास—मूर्धा में स्हौं ईशानमनोभवाय नमः। मुख में स्हें तत्पुरुषमकरध्वजाय नमः। हृदय में स्हुं अघोर कन्दर्प कुमाराय नमः। गुह्य में स्हिं वामदेवमन्मथाय नमः। पैरों में स्हं सद्योजातकामदेवाय नमः। इसी प्रकार ऊपर, पूर्व, दक्षिण, उत्तर, पश्चिम मुखों में ईशान-मनोभवादि पञ्चमूर्तियों का उनके बीजों के साथ न्यास करे। जैसा कि निबन्ध में कहा भी गया है।

बाणन्यास—ज्ञानार्णव में कहा गया है कि द्रां द्राविण्यै नमः से दोनों अंगुष्ठों में। द्रीं क्षोभिण्यै नमः से तर्जनियों में। क्लीं वशीकरिण्यै नमः से मध्यमा अंगुलियों में। ब्लूं आकर्षिण्यै नमः में अनामिकाओं में। सः उन्मादिन्यै नमः से। कनिष्ठा अंगुलियों में। ह्रीं कामाय नमः। क्लीं मन्मथाय नमः ऐं कन्दर्पाय नमः। ब्लूं मकरध्वजाय नमः। स्त्रीं मीनकतवे नमः। न्यास में सर्वत्र स्त्रीलिङ्ग का प्रयोग होता है।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्स्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्स्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ह्स्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ह्स्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ह्स्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ह्स्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एवं हृदयादिषु। तथाच निबन्धे—'षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन बीजेनाङ्गक्रिया मनोः' इति।

ततो बाणन्यासः—मूर्ध्नि द्रां द्राविण्यै नमः। पादे द्रीं क्षोभिण्यै नमः। वक्त्रे क्लीं वशीकरिण्यै नमः। गुह्ये ब्लूं आकर्षिण्यै नमः। हृदि सः संमोहिन्यै नमः। एषु स्थानेषु कामान् विन्यसेत्। तथाच श्रीक्रमे—

ललाटे वदने देवि हृदि नाभौ च गुह्यके । एषु कामांस्तु विन्यस्य ताराद्याः सुभगादिकाः ।।१।।

इति न्यसेदिति शेषः। तथा सुभगादिन्यासः—भाले ऐंक्लींब्लूंस्त्रींसः सुभगायै नमः। भ्रूमध्ये ५ँ भगायै नमः। वदने ५ँ भगसर्पिण्यै नमः। लम्बिकायां ५ँ भगमालिन्यै नमः। कण्ठे ५ँ अनङ्गायै नमः। हृदि ५ँ अनङ्गकुसुमायै नमः। नाभौ ५ँ अनङ्गमेखलायै नमः। लिङ्गमूले ५ँ अनङ्गमदनायै नमः। तथाच निबन्धे—

भालभ्रूमध्यवदनलम्बिकाकण्ठहृत्सु च । नाभ्याधिष्ठानयोः पञ्च ताराद्याः सुभगादिकाः ।।१।।
(न्यस्तव्या विधिना देव्यो मन्त्रिणा सुभगा भगा । भगसर्पिण्यथ परा भगमालिन्यनन्तरम् ।।२।।

अनङ्गा)नङ्गकुसुमा भूयश्चानङ्गमेखला । अनङ्गमदना सर्वा मदविह्वलमन्थराः ॥३॥
(प्रधानदेवता वर्णभूषणाद्यैरलंकृताः । अक्षस्रक्पुस्तकाभीतिवरदाढ्यकराम्बुजाः ॥४॥)
वाक्कामबीजं ब्लूंस्त्रींसस्ताराः पञ्चोदितास्त्वमी । न्यासं कुर्याद्भूषणाख्यं ततः साधकसत्तमः ॥५॥ इति।

अथ भूषणन्यासः—शिरसि अं नमः। भाले आं नमः। भ्रुवो इं नमः, ईं नमः। एवं कर्णयोः उं नमः, ऊं नमः। नेत्रयोः ऋं नमः, ॠं नमः। नसि लृं नमः। गण्डयोः लॄं नमः, एं नमः। ओष्ठयोः ऐं नमः, ओं नमः। दन्तपंक्त्योः औं नमः, अं नमः। मुखे अः नमः। चिबुके कं नमः। गले खं नमः। कण्ठे गं नमः। पार्श्वयोः घं नमः, ङं नमः। स्तनद्वये चं नमः, छं नमः। दोर्मूलयोः जं नमः, झं नमः। कूर्परयोः ञं नमः, टं नमः। पाण्योः ठं नमः, डं नमः। करपृष्ठयोः ढं नमः, णं नमः। नाभौ, तं नमः। गुह्ये थं नमः। ऊर्वोः दं नमः, धं नमः। जानुनोः नं नमः, पं नमः। जङ्घयोः फं नमः, बं नमः। स्फिचोः भं नमः, मं नमः। पत्तलयोः यं नमः। चरणाङ्गुष्ठयोः रं नमः। काञ्च्यां वं नमः। ग्रीवायां लं नमः। कटके ळं नमः। हृदि षं नमः। गुह्ये क्षं नमः। कर्णकुण्डलयोः सं नमः, शं नमः। मौलौ हं नमः। सर्वत्र नमोऽन्तं न्यसेत्। तथाच निबन्धे—

न्यसेच्छिरसि भालभ्रूकर्णाक्षियुगले नसि । गण्डयोरोष्ठयोर्दन्तपंक्त्योरास्ये न्यसेत् स्वरान् ॥१॥
चिबुकेऽथ गले कण्ठे पार्श्वयोः स्तनयुग्मके । दोर्मूलयोः कूर्परयोः पाण्योस्तत्पृष्ठदेशतः ॥२॥
नाभौ गुह्ये पुनश्चोर्वोर्जानुनोर्जङ्घयोस्ततः । स्फिचोः पत्तलयोः पश्चाच्चरणाङ्गुष्ठयोर्द्वयोः ॥३॥
कादिरान्तान् न्यसेद्वर्णान् स्थानेष्वेषु समाहितः । काञ्च्यां ग्रैवेयके पश्चात् कटके हृदि गुह्यके ॥४॥
कर्णकुण्डलयोर्मौलौ वलळान् षक्षसान् शहौ । अष्टस्वेतान् प्रविन्यसेदेवं देशिकङसत्तमः ॥५॥ इति।

ततस्त्रिखण्डां मुद्रां बद्ध्वा ध्यायेत्—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारबिन्दश्रियं देवीमर्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे सुमन्दस्मिताम् ॥१॥

एवं ध्यात्वा, मानसोपचारैः संपूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा, आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं संपूज्य पूर्वादिकेसरेषु मध्ये च, शारदायां—'इच्छा ज्ञाना क्रिया पश्चात् कामिनी कामदायिनी। रती रतिप्रिया नन्दा नवमी च मनोन्मनी' एताः प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततः—ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। प्राग्योनिमध्ययोन्योरन्तराले श्रीविद्योक्तगुरुपङ्क्तिं पूजयेत्। तथाच निबन्धे—

वाग्भवं लोहितोरायै श्रीकण्ठं लोहितोऽनलः । दीर्घवान्यै परापश्चादपरायै हसौः पुनः ॥१॥
सदाशिवमहाप्रेतङेऽन्तं पद्मासनं नमः । अनेन मनुना दद्यादासनं श्रीगुरुक्रमम् ॥२॥
प्राङ्मध्ययोन्यन्तराले पूजयेत् कल्पयेत् पुनः ।

तदशक्तौ ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ गुरुपादुकाभ्यो नमः। एवं परमगुरुभ्यो नमः। पदमगुरुपादुकाभ्यो नमः। परापरगुरुभ्यो नमः। परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः। परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः। आचार्येभ्यो नमः। आचार्यपादुकाभ्यो नमः।

कराङ्गन्यास—ह्स्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्स्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ह्स्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ह्स्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ह्स्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ह्स्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करें।

बाणन्यास—मूर्धा में द्रां द्राविण्यै नमः, पैर में द्रीं क्षोभिण्यै नमः, मुख में क्लीं वशीकरिण्यै नमः, गुह्य में ब्लूं आकर्षिण्यै नमः। हृदय में सः सम्मोहिन्यै नमः। इन्हीं स्थानों में पञ्च कामदेवों—काम, मन्मथ, कन्दर्प, मकरध्वज एवं मीनकेतु का भी न्यास करें। श्रीक्रम में भी इसी का विवेचन किया गया है।

सुभगादि न्यास—भाल में ऐं क्लीं ब्लूं स्त्री सः सुभगायै नमः। भ्रूमध्य में ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः। जयायै नमः। मुख में ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै नमः। जिह्वा में ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै नमः। कण्ठ में ऐं क्ली ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गायै नमः। हृदय में ऐं क्ली ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्ग कुसुमायै नमः। नाभि ऐं क्ली ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै नमः। लिङ्गमूल में ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै नमः। निबन्ध में भी यही प्रकार प्रदर्शित किया गया है।

इसके बाद भूषण न्यास करें; जैसा कि—निबन्ध में कहा गया है। भूषण न्यास इस प्रकार किया जाता है—शिरसि अं नमः। भाले आं नमः। भ्रुवो ईं नमः, ईं नमः। एवं कर्णयोः उं नमः, ऊं नमः। नेत्रयोः ॠं नमः, ॠं नमः। नसि लृं नमः। गण्डयोः लॄं नमः, एं नमः। ओष्ठयोः ऐं नमः, ओं नमः। दन्तपंक्त्योः औं नमः, अं नमः। मुखे अः नमः। चिबुके कं नमः। गले खं नमः। कण्ठे गं नमः। पार्श्वयोः घं नमः, ङं नमः। स्तनद्वये चं नमः, छं नमः। दोर्मूलयोः जं नमः, झं नमः। कूर्परयोः ञं नमः, टं नमः। पाण्योः ठं नमः, डं नमः। करपृष्ठयोः ढं नमः, णं नमः। नाभौ, तं नमः। गुह्ये थं नमः। ऊर्वोः दं नमः, धं नमः। जानुनोः नं नमः, पं नमः। जङ्घयोः फं नमः, बं नमः। स्फिचोः भं नमः, मं नमः। पत्तलयोः यं नमः। चरणाङ्गुष्ठयोः रं नमः। काञ्च्यां वं नमः। ग्रीवायां लं नमः। कटके ळं नमः। हृदि षं नमः। गुह्ये क्षं नमः। कर्णकुण्डलयोः सं नमः, शं नमः। मौलौ हं नमः।

तदनन्तर त्रिखण्डा मुद्रा बनाकर इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारबिन्दश्रियं देवीमर्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे सुमन्दस्मिताम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके मानसोपचार पूजा करे। शङ्ख स्थापन करके आधारशक्त्यादि से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः तक पूजा करे। केसर में पूर्वादि क्रम से और मध्य में इच्छा, ज्ञाना, क्रिया, कामिनी, कामदायिनी, रती, रीतिप्रिया, नन्दा एवं मनोन्मनी की आदि में प्रणव एवं अन्त में नमः लगाकर पूजा करे। तब ऐं परायै अपरायै परापरायै हस्त्रौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः से पूजा करे। प्राग्योनि और मध्य योनि के अन्तराल में श्रीविद्योक्त गुरुपंक्ति की पूजा करे। अशक्त होने पर—ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ गुरुपादुकाभ्यो नमः, परमगुरुभ्यो नमः। परमगुरुपादुकाभ्यो नमः, परापरगुरुभ्यो नमः, परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः, परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः, आचार्येभ्यो नमः एवं आचार्यपादुकाभ्यो नमः कहते हुये पूजन करे।

पूजायन्त्रम्

अस्याः पूजाया यन्त्रं, निबन्धे—

पद्मं वसुदलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम्। चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत् ततः ।।१।। इति।

'ऐंह्रींश्रींहसखफ्रें हसौः' इति मन्त्रेण बिन्दुचक्रे मूर्तिं संकल्प्य त्रिखण्डामुद्रया पूर्ववद् देवीं ध्यात्वावाहयेत्। 'देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते। यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावत् त्वं सुस्थिरा भव' इत्यादिनावाहयेत्। तथाच निबन्धे—

पञ्चभिः प्रणवैर्मूर्तिं तस्यामावाह्य देवताम्। पूजयेदागमोक्तेन विधानेन समाहितः ।।१।।
तारावाक्शक्तिकमला हसखफ्रें हसौः पुनः।

तत आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा देव्या वामकोणे ॐरत्यै नमः। एवं दक्षिणकोणे क्लीं प्रीत्यै नमः। अग्रे मनोभवायै नमः। ततः केसरेष्वग्नीशासुरवायुमध्ये दिक्षु च पूर्वोक्ताङ्गमन्त्रैः पूजयेत्। तथाच ज्ञानार्णवे—'अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्ष्वङ्गपूजनम्'। तत उत्तरे द्रां द्राविण्यै नमः, द्रीं क्षोभिण्यै, दक्षिणे क्लीं वशीकरिण्यै, ब्लूं आकर्षिण्यै, अग्रे सः संमोहिन्यै। एवमुत्तरे ह्रीं कामाय, क्लीं मन्मथाय, दक्षिणे ऐं कन्दर्पाय, ब्लूं मकरध्वजाय, अग्रे स्त्रीं मेनकेतवे नमः। तथाच ज्ञानार्णवे—

उत्तरस्यां द्वयं देवि दक्षिणस्यां द्वयं दिशि। अग्र चैकं क्रमेणैव पञ्चबाणान् क्रमाद्यजेत् ।।१।।
पञ्चकामांस्तथा देवि बाणवत् परिपूजयेत्।

ततोऽष्टयोनिषु पूर्वादि ऐंक्लींब्लूंस्त्रींसः सुभगायै नमः, एवं ५ँ भगायै०, ५ँ भगसर्पिण्यै०, ५ँ भगमालिन्यै०, ५ँ अनङ्गायै०, ५ँ अनङ्गकुसुमायै०, ५ँ अनङ्गमेखलायै०, ५ँ अनङ्गमदनायै०। ततोऽष्टपत्रेषु पूर्वादि असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः। एवं रुरुमहेश्वरीभ्यां०, चण्डकौमारीभ्यां०, क्रोधवैष्णवीभ्यां०, उन्मत्तवाराहीभ्यां०, कपालीन्द्राणीभ्यां०, भीषणचामुण्डाभ्यां०, संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः। तथाच निबन्धे—

अष्टयोनिष्वष्टशक्तीः पूजयेत् सुभगादिकाः। मातरो भैरवाङ्कस्था मदविभ्रमविह्वलाः ॥१॥
अष्टपत्रेषु संपूज्य यथावत् कुसुमादिभिः ।

ततस्तद्बहिः पूर्ववदिन्द्रवज्रादीन् संपूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। किन्तु नैवेद्यानन्तरं श्रीविद्योक्तबलि-चतुष्टयमत्र देयमिति। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। होमस्तु (पलाशपुष्पैः) द्वादशसहस्रम्। तथाच निबन्धे—

दीक्षां प्राप्य जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः। पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद् ब्राह्मवृक्षकैः ॥१॥

इति त्रिपुरभैरवी।

पूजायन्त्र—निबन्ध में कहा गया है कि अष्टदल कमल बनाकर उसमें नव त्रिकोण बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र भूपुर बनावे। ऐं ह्रीं श्रीं हसख्फ्रें ह्सौः मन्त्र से बिन्दु चक्र में मूर्ति कल्पित करके त्रिखण्डा मुद्रा से पूर्ववत् देवी का ध्यान करके इस प्रकार आवाहन करे—

देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते। यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव।।

निबन्ध में भी कहा गया है कि पाँच प्रणवों से देवता का आवाहन करके आगमोक्त मार्ग से समाहित होकर विधिवत् पूजा करे। ये पाँच प्रणव हैं—ऐं ह्रीं श्रीं हसख्फ्रें ह्सौः।

तदनन्तर आवाहन से पाँच पुष्पाञ्जलि तक की क्रिया के बाद आवरण पूजा करे। जैसे देवी के वाम कोण में ॐ रत्यै नमः, दक्षिण कोण में क्लीं प्रीत्यै नमः। आगे मनोभवायै नमः। तदनन्तर केशरों एवं ईशान, अग्नि, नैर्ऋत्य, वामव्य कोण एवं मध्य में तथा दिशाओं में पूर्वोक्त अंगमन्त्रों से षडङ्ग पूजा करे। ज्ञानार्णव में भी इसी का विधान किया गया है। तब उत्तर में—द्रां द्राविण्यै नमः, द्रीं क्षोभिण्यै नमः। दक्षिण में—क्लीं वशीकरिण्यै नमः, ब्लूं आकर्षिण्यै नमः। आगे सः सम्मोहिन्यै नमः। इसी प्रकार उत्तर में ह्रीं कामाय नमः क्लीं मन्मथाय नमः। दक्षिण में ऐं कन्दर्पाय नमः, ब्लूं मकरध्वजाय नमः। आगे—स्त्रीं मीनकेतवे नमः कहते हुये पूजन करे। ज्ञानार्णव में भी कहा है कि उत्तर में दो, दक्षिण में दो, आगे एक के क्रम से पाँच बाणों की पूजा करे। पञ्च कामों की पूजा भी बाणवत् करे।

तब आठ त्रिकोणों में पूर्वादि क्रम से ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः, ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगायै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गायै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गकुसुमायै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै नमः। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै नमः से पूजा करे। अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः, रुरुमाहेश्वरीभ्यां नमः, चण्डकौमारीभ्यां नमः, क्रोधवैष्णवीभ्यां नमः। उन्मत्तवाराहीभ्यां नमः, कपालीन्द्राणीभ्यां नमः, भीषणचामुण्डाभ्यां नमः, संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः कहते हुये पूजन करे। निबन्ध में भी ऐसा ही विवेचन किया गया है। तदनन्तर उसके बाहर चतुरस्र में पूर्वादि क्रम से इन्द्रादि लोकपालों एवं वज्रादि आयुधों की पूजा करे। तब धूप, दीपादि विसर्जन तक की क्रिया करके पूजा समाप्त करे। नैवेद्य के बाद चार बलि प्रदान करे। इसके पुरश्चरण में दश लाख मन्त्रजप होता है। पलाश के फूलों से बारह हजार हवन करे। निबन्ध में भी कहा है कि दीक्षा प्राप्त करके जितेन्द्रिय रहकर तत्त्व लक्ष मन्त्र जप करे एवं बारह हजार हवन पलाश के फूलों से करे।

सम्पत्प्रदा भैरवी

अथ संपत्प्रदाभैरवी ज्ञानार्णवे (६.३)—

यथासौ त्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी। संपत्प्रदा नाम तस्याः शृणु निर्मलमानसे ॥१॥

शिवचन्द्रौ बह्निसंस्थौ वाग्भवं तदनन्तरम्। कामराजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं ततः ॥२॥
पृथ्वीबीजान्तवह्न्याढ्यं तार्तीयं शृणु वल्लभे। शक्तिबीजे महेशानि शिववह्नी नियोजयेत् ॥३॥
कुमार्याः परमेशानि हित्वा सर्गं च बैन्दवम्। त्रिपुराभैरवी देवी महासंपत्प्रदा प्रिये ॥४॥ इति।

अस्यार्थः—त्रिपुरभैरवी विसर्गरहिता चेत्संपत्प्रदा भवति। अस्या ध्यानम्—
आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम्। किरीटरत्नविलसिच्चत्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥५॥
स्रवद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालाविराजिताम् । नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥६॥
मुक्ताहारलताराजत्पीनोन्नतघटस्तनीम् । रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥७॥
पुस्कतं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम्। वरदानरतां नित्यां महासंपत्प्रदां स्मरेत् ॥८॥ इति।

न्यासपूजादिकं च पूर्ववत्। अङ्गमन्त्रे तु विशेषः। 'द्विरुक्तैश्च त्रिभिर्बीजैः कराङ्गन्यासकल्पना'। अस्या पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। ज्ञानार्णवे—'बालावदस्याः पूजादि कुर्यात् साधकसत्तमः। गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः' इत्युक्तत्वात्। तथाच 'न्यासपूजादिकं सर्वं कुमार्या इव सुव्रते। एकलक्षं जपेन्मन्त्रं सिद्धये साधकोत्तमः' इति वचनात् एकलक्षं पुरश्चरणमिति केचित्, सिद्धविद्यात्वात्।

सम्पत्प्रदा भैरवी—ज्ञानार्णव में कहा गया है कि जैसी त्रिपुरा बाला है, वैसी ही त्रिपुरभैरवी है और उसका ही नाम सम्पत्प्रदा भी है। श्लोक २-४ के उद्धार करने पर सम्पत्प्रदा का मन्त्र होता है—हस्रैं हस्क्लरीं हस्रौं। विसर्गरहित त्रिपुरभैरवी ही सम्पत्प्रदा भैरवी हो जाती है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम्। किरीटरत्नविलसिच्चत्रचित्रितमौक्तिकाम्।।
स्रवद्रुधिरपङ्काढ्यमुण्डमालाविराजिताम्। नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम्।।
मुक्ताहारलताराजत्पीनोन्नतघटस्तनीम्। रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम्।।
पुस्कतं चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम्। वरदानरतां नित्यां महासंपत्प्रदां स्मरेत्।।

इसका न्यास पूजादि त्रिपुरभैरवी के ही समान होता है। कर एवं षडङ्ग न्यास तीनों बीजों की दो आवृत्ति से होती है। इसका पुरश्चरण तीन लाख जप से होता है। कुछ लोग सिद्ध विद्या होने के कारण एक लाख जप से भी इसका पुरश्चरण कहते हैं।

कौलेशभैरवी

अथ कौलेशभैरवी ज्ञानार्णवे—
संपत्प्रदाभैरवीवद् विद्धि कौलेशभैरवीम्। हसाद्या सैव देवेशि त्रिषु बीजेषु पार्वति ॥१॥
इयं तु सहराद्या स्याद् ध्यानपूजादिकं तथा। इति।

अस्यार्थः—त्रिकूटे सकारादिश्चेत् तदा कौलेशभैरवी भवति, दक्षिणामूर्तौ तथा दर्शनात्। पूजादिकं तु संपत्प्रदाभैरवीवद् बोद्धव्यम्। संपत्प्रदाभैरवी आद्यन्ते रेफवर्जिता चेद्भयविध्वंसिनी भवति, दक्षिणामूर्तौ तथा दर्शनात्।

कौलेशभैरवी—ज्ञानार्णव के श्लोक १ का उद्धार करने पर कौलेशभैरवी का मन्त्र होता है—स्हैं स्हक्लरीं स्हैं। इसके ऋष्यादि सभी सम्पत्प्रदा भैरवी के समान होते हैं। रेफरहित सम्पत्प्रदा भयविध्वंसिनी कही जाती है। इसके पूजा आदि सभी सम्पत्प्रदा भैरवी के समान ही होते हैं।

सकलसिद्धिप्रदा भैरवी

पूजादिकं तु संपत्प्रदाभैरवीवत्।
अथ सकलसिद्धिदाभैरवी ज्ञानार्णवे—
एतस्या एव विद्याया आद्यन्ते रेफवर्जिते। तदेयं परमेशानि नाम्ना सकलसिद्धिदा ॥

सकलसिद्धिदा भैरवी—मूलोक्त श्लोक के उद्धार करने पर सकलसिद्धिदा का मन्त्र होता है—स्हैं स्हक्लीं स्हौं।

कौलेशभैरवी के मन्त्र में से रेफ हटाने पर यह मन्त्र स्फुटित होता है। इसके ध्यान-पूजादि सम्पत्प्रदा भैरवी के समान होते हैं।

चैतन्यभैरवी

ध्यानपूजादिकं तु संपत्प्रदावत्।

अथ चैतन्यभैरवी ज्ञानार्णवे (६.१८)—

वाग्भवं बीजमुच्चार्य जीवप्राणसमन्वितम्। सकला भुवनेशानी द्वितीयं बीजमुद्धरेत् ॥१॥
जीवप्राणं वह्निसंस्थं शक्रस्वरविभूषितम्। विसर्गाढ्यं महेशानि विद्या त्रैलोक्यमातृका ॥२॥ इति।

अस्यार्थः—चन्द्रशिवद्वादशस्वरयुक्तं बिन्दुनादकलाढ्यं, चन्द्रकामपृथिवीमाया, चन्द्रशिववह्निबीजं चतुर्दशस्वरयुक्तं सर्गाढ्यं च।

चैतन्य भैरवी—मूलोक्त ज्ञानार्णव के श्लोकों का उद्धार करने पर मन्त्रस्वरूप स्पष्ट होता है—स्हैं स्कल्हीं स्हौं।

चैतन्यभैरवीयन्त्रपूजाविधिः

अस्याः पूजायन्त्रं तत्रैव—

त्रिकोणं चैव षट्कोणं वसुपत्रं वरानने। चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥१॥

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादिकं विधाय आधारशक्त्यादि 'ह्रीं ज्ञानात्मने नमः' इत्यन्तं विन्यस्य हृत्पद्मस्य केसरेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ वामायै नमः; एवं ज्येष्ठायै० रौद्र्यै० अम्बिकायै० इच्छायै० ज्ञानायै० क्रियायै० कुब्जिकायै० चित्रायै० विषघ्निकायै० दूतयैं० नन्दायै० मध्ये—ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। संपत्प्रदाबाला-कौलेशीसकलेष्टदाविद्यानां एता एव पीठशक्तयो ज्ञानार्णवे उक्तत्वात्। तत्र ऋष्यादिन्यासः—शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये: नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदि चैतन्यभैरव्यै देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—पूर्वबीजमुच्चार्य अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। द्वितीयबीजं तर्जनीभ्यां नमः। तृतीयबीजं मध्यमाभ्यां नमः। पूर्वबीजं अनामिकाभ्यां नमः। द्वितीयबीजं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। तृतीयबीजं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एवं हृदयादिषु। तथाच तत्रैव—'द्विरावृत्त्या षडङ्गानि न्यासं सर्वाङ्गरक्षणम्' इति।

ततो ध्यानम्—

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम्। मुकुटाग्रलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बरान्विताम् ॥१॥
पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्ते कपालिनीम्। वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघटस्तनीम् ॥२॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूज्य, शङ्खस्थापनं कृत्वा आधारशक्त्यादिपीठपूजां कुर्यात्। वामाज्येष्ठादि-पीठशक्तीः पीठमनुं च पूजयेत्। ततो भैरव्युक्तगुरुपङ्क्ती संपूज्य, पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। यथा—प्रथमं षडङ्गपूजा, अग्निकोणे प्रथमबीजमुच्चार्य हृदयाय नमः। ईशाने द्वितीयबीजमुच्चार्य शिरसे स्वाहा। नैर्ऋते तृतीयबीजमुच्चार्य शिखायै वषट्। वायव्ये प्रथमबीजमुच्चार्य कवचाय हुं। मध्ये द्वितीयबीजमुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषट्। चतुर्दिक्षु तृतीयबीजमुच्चार्य अस्त्राय फट्। ततः पूर्ववद्रत्यादिकं संपूज्य, अग्रे ॐ वसन्ताय नमः। वामे ॐ कामदेवाय नमः। दक्षिणे ॐ चापाय नमः। ततः पूर्ववद् बाणान् संपूज्य, षट्कोणे पूर्वादि ॐ डाकिन्यै नमः। एवं राकिण्यै०, लाकिन्यै०, काकिन्यै०, शाकिन्यै०, हाकिन्यै नमः, इति प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत्। ततोऽष्ट-दलेषु पूर्वादि पूर्वोक्तानङ्गकुसुमाद्याः पूज्याः। पत्राग्रेषु पूर्वादि ॐ परभृताय नमः। एवं सारसाय०, शुकाय०, मेघ-च्छायाय०, (मेघायेति वा) अपाङ्गाय०, भ्रूविलासाय०, हावाह्वाय०, भावाय नमः। तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च संपूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः 'ज्ञानार्णवे एकलक्षं जपेन्मन्त्रम्' इत्यादिवचनात्।

पूजा यन्त्र—इसके पूजा यन्त्र में त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल एवं चार द्वारों से युक्त भूपुर होते हैं। इसकी पूजा में प्रातःकृत्यादि के बाद आधारशक्ति से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः तक का न्यास करे। हृदय कमल के केसर में पूर्वादि क्रम से पूजा करे—ॐ वामायै नमः, ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्रयै नमः। ॐ अम्बिकायै नमः। ॐ इच्छायै नमः। ॐ ज्ञानायै नमः। ॐ क्रियायै नमः। ॐ कुब्जिकायै नमः। ॐ चित्रायै नमः। ॐ विषघ्निकायै नमः। ॐ दूतर्यै नमः। ॐ नन्दायै नमः। मध्य में ह्सौः सदाशिवमहप्रेतपद्मासनाय नमः। ज्ञानार्णव के अनुसार सम्पत्प्रदा बाला, कौलेशी, सकलेष्टदा विद्या पीठशक्तियाँ हैं।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि चैतन्यभैरव्यै देवतायै नमः।

कर-अंग न्यास—स्हैं अंगुष्ठाभ्यां नमः। स्कल्ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। स्ह्रौः मध्यमाभ्यां नमः। स्हैं अनामिकाभ्यां नमः। स्कल्ह्रीं कनिष्ठाभ्यां नमः। स्कल्ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे। तदनन्तर निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम्। मुकुटाग्रलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बरान्विताम्।।
पाशाङ्कुशधरां नित्यां वामहस्ते कपालिनीम्। वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघटस्तनीम्।।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करे। शङ्ख स्थापन करके आधारशक्ति आदि पर पीठ पूजा करे। वामा ज्येष्ठादि पीठशक्तियों की पूजा पीठमन्त्रों से करे। तव भैरवी में कथित गुरुपंक्ति की पूजा करे। पुनः ध्यान करके आवाहनादि से पाँच पुष्पाञ्जलि तक की क्रिया के बाद आवरण पूजा प्रारम्भ करे।

षडङ्ग पूजन—आग्नेय में स्हैं हृदयाय नमः। ईशान में स्कल्ह्रीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋत्य में स्ह्रौः शिखायै वषट्। वायव्य में स्हैं कवचाय हुं। मध्य में स्कल्ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो दिशाओं में स्ह्रौः अस्त्राय फट्। तव पूर्ववत् रति आदि की पूजा करके आगे ॐ वसन्ताय नमः। बाँयें भाग में ॐ कामदेवाय नमः। दाँयें भाग में चापाय नमः से पूजन करे तब पूर्ववत् बाणों की पूजा करके षट्कोण में—ॐ डाकिन्यै नमः, ॐ राकिण्यै नमः। ॐ लाकिन्यै नमः। ॐ काकिन्यै नमः। ॐ शाकिन्यै नमः। ॐ हाकिन्यै नमः कहकर पूजन करे। अष्टदल में पूर्वादि क्रम से अनङ्गकुसुमादि की पूजा करे। पत्राग्रों में पूर्वादि क्रम से ॐ परभृताय नमः। ॐ सारसाय नमः। ॐ शुकाय नमः। ॐ मेघच्छायाय नमः। ॐ अपाङ्गाय नमः। ॐ भ्रूविलासाय नमः। ॐ हावाह्वाय नमः। ॐ भावाय नमः से पूजन करे। भूपुर में इन्द्रादि दिक्पालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक करके पूजा समाप्त करे। ज्ञानार्णव के अनुसार एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है।

कामेश्वरीभैरवी

अथ कामेश्वरीभैरवी ज्ञानार्णवे (६.३२)—

कामेश्वरी च रुद्राणी पूर्वसिंहासने स्थिता। एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम् ।।१।।
तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे। एतस्या एव तार्तीयं रुद्राणी परमेश्वरी ।।२।।
ध्यानपूजादिकं देवि चैतस्याश्चैव पूर्ववत्। त्रिकोणे तु विशेषोऽस्ति कथयामि वरानने ।।३।।
अग्रकोणे क्रमेणैव नित्यक्लिन्नां मदद्रवाम्। षडङ्गावरणं पश्चात् पूजयेत् सर्वसिद्धये ।।४।। इति।

कामेश्वरी भैरवी—ज्ञानार्णव के श्लोकों का उद्धार करने पर कामेश्वरी भैरवी का एकादशाक्षरी मन्त्र बनता है—स्हैं स्क्लह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्ह्रौः। इसके ध्यान-पूजा आदि चैतन्य भैरवी के ही समान होते हैं। त्रिकोण में विशेष यह है कि अग्रकोण में नित्यक्लिन्ना मदद्रवा से षडङ्ग पूजन करने के पश्चात् तब सभी सिद्धियों के लिये पूजा करे।

षट्कूटा भैरवी

अथ षट् कूटाभैरवी। ज्ञानार्णवे (८.१)—

डाकिनीराकिणीबीजे लाकिनीकाकिनीयुगम्। साकिनीहाकिनीबीजे आवृत्य सुरसुन्दरि ।।१।।
आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदीकारसंयुतम् । शक्रस्वरान्वितं देवि तार्तीयं बीजमालिखेत् ।।२।।
बिन्दुनादकलाक्रान्तं द्वितीयं शैलसंभवे।

तृतीयबीजं सविसर्गमिति। तन्त्रान्तरे—

डरौ क्ष्मा मादनं वान्तं शिवमत्र त्रिधा लिखेत्। अर्केण मायाशक्राभ्यां क्रमात् तन्मण्डितं कुरु ॥१॥
बिन्दुनादान्वितं चाद्ययुग्ममन्त्यं विसर्गवत्। ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि सर्वभूतनिकृन्तनम् ॥२॥
बालसूर्यप्रभां देवीं जपाकुसुमसंनिभाम्। मुण्डमालाबलीरम्यां बालसूर्यसमांशुकाम् ॥३॥
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम्। पाशाङ्कुशौ पुस्तकं च तथा च जपमालिकाम् ॥४॥

दधतीमिति शेषः।

एवं ध्यात्वा यजेद् देवीं मानसैरुपचारकैः। द्विरावृत्त्या षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ॥५॥
यन्त्रमस्या वरारोहे त्रिकोणं तत्पुटं लिखेत्। बहिरष्टदलं पद्मं रविपत्रं ततो लिखेत् ॥६॥
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत्। षडङ्गावरणं देवि पूर्ववत् पूजयेच्छिवे ॥७॥
रत्यादित्रितयं देवि त्रिकोणे परिपूजयेत्। डाकिन्याद्यास्तु षट्कोणे वसुपत्रे ततः परम् ॥८॥
ब्राह्म्यादियुगलं पश्चाद्रविपत्रे ततः परम्। बालायाः पीठशक्तिस्तु वामाद्याः पूजयेत् क्रमात् ॥९॥
चतुरस्रे लोकपालान् सायुधान् परमेश्वरि। अनेन विधिना चैव नित्याख्यां भैरवीं यजेत् ॥१०॥ इति।

षट्कूटा भैरवी—मूलोक्त ज्ञानार्णव के श्लोक १-२ का उद्धार करने पर मन्त्र बनता है—ड्ल्क्स्हैं ड्ल्क्स्हीं ड्ल्क्स्हौः। षट्कूटा भैरवी के इस मन्त्र में डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, साकिनी, हाकिनी—इन छः के क्रमशः डरलकसह—इन छः बीजों का समावेश होने से इसे षट्कूटा कहते हैं। तन्त्रान्तर में यही मन्त्र स्पष्ट किया गया है। समस्त भूतों का शमन करने वाला इसका ध्यान इस प्रकार है—

बालसूर्यप्रभां देवीं जपाकुसुमसंनिभाम्। मुण्डमालाबलीरम्यां बालसूर्यसमांशुकाम्।।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम्। पाशाङ्कुशौ पुस्तकं च तथा च जपमालिकाम्।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद देवी की पूजा मानसोपचारों से करे। इसकी दो आवृति से षडङ्ग न्यास करे। इसके पूजा यन्त्र में त्रिकोण के बाहर अष्टदल पद्म, इसके बाहर द्वादश दल पद्म और इसके बाहर चार द्वारों से युक्त भूपुर से मण्डल बनावे। पहले आवरण में षडङ्ग पूजा करे। त्रिकोण में रति आदि तीन की पूजा करे। षट्कोण में डाकिनी आदि की पूजा करे। अष्टपत्र में भैरवों के साथ ब्राह्मी आदि की पूजा करे। द्वादश दल में बालादि पीठशक्तियों की और वामादि शक्तियों की पूजा करे। चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके दश आयुधों की पूजा करे।

भोगमोक्षदा नित्याभैरवी

अथ भोगमोक्षदा नित्याभैरवी। ज्ञानार्णवे (८.१७)—

एतस्या एव विद्यायाः षड्वर्णान् क्रमतः स्थितात्। विपरीतात् वदेत् प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा ॥१॥
नित्याख्याभैरवी देवि रिपुभारनिकृन्तनी। न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ॥२॥ इति।

भोगमोक्षदा नित्या भैरवी—ज्ञानार्णव के श्लोक १-२ के उद्धार करने पर इसका मन्त्र बनता है—हस्क्ल्डैं हस्क्ल्डीं हस्क्ल्डौं। यह मन्त्र शत्रुनिकृन्तन है। इसका न्यास-पूजन आदि सभी कुछ पूर्ववत् होता है।

रुद्रभैरवी तत्पूजाप्रयोगश्च

अथ रुद्रभैरवी। ज्ञानार्णवे (७.५)—

शिवचन्द्रौ मादनान्तं पान्तं वह्निसमन्वितम्। शक्तिभिन्नं बिन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ॥१॥
संपत्प्रदाया भैरव्याः कामराजं तथैव हि। सदाशिवस्य बीजं तु महासिंहासनस्य च ॥२॥
एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते। इति।

अस्यार्थः—शिवचन्द्रकान्तपान्तवह्नियुक्तमेकादशस्वरविशिष्टं बिन्दुनादकलाक्रान्तं वाग्भवबीजं, शिवचन्द्र-

कामपृथिवीवह्निचतुर्थस्वरविशिष्टं नादबिन्दुकलाक्रान्तं कामराजबीजं, प्रेतबीजं शक्तिकूटं तृतीयम्। अस्या: पूजायन्त्रं— 'त्रिकोणं चैव वृत्तं च वृत्ताष्टदलनीरजम्। वृत्तं भूमण्डले च' इत्यादि। अस्या पूजा—प्रात:कृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय (चैतन्यभैरवीवत्) पीठन्यासं कुर्यात्। यथा आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नम:, इत्यन्तं विन्यस्य, पूर्वादिक्रमेण ॐ वामायै नम:। एवं ज्येष्ठायै, रौद्र्यै, काल्यै, कलविकरण्यै, बलविकरण्यै, बलप्रमथिन्यै, सर्वभूतदमन्यै, मध्ये मनोन्मन्यै, इति पीठशक्तिर्विन्यस्य, मध्ये पीठमनु न्यसेत्। अत्र पीठमन्त्रस्तु—'अघोरे ऐं थघोरे ह्रीं घोरघोरतरे क्लीं सर्वत: सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्य: ऐंह्रीं'। तत: ऋष्यादिन्यास:। शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नम:। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नम:। हृदि रुद्रभैरव्यै देवतायै नम:। तत: कराङ्गन्यासौ। प्रथमबीजमुच्चार्य अङ्गुष्ठाभ्यां नम:। द्वितीयबीजमुच्चार्य तर्जनीभ्यां स्वाहा। तृतीयबीजमुच्चार्य मध्यमाभ्यां वषट्। प्रथमबीजमुच्चार्य अनामिकाभ्यां हुं। द्वितीयबीजमुच्चार्य कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। तृतीयबीजमुच्चार्य करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम्। नानालङ्कारसुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम्॥१॥
वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससम्। त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च॥२॥
पिनाकं च शरान् देवि पाशाङ्कुशयुगं क्रमात्। पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासनस्थिताम्॥३॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारै: संपूज्य, शङ्खस्थापनं कृत्वा पीठन्यासक्रमेण चैतन्यभैरव्युक्तपीठपूजां विधाय, एतन्मन्त्रोक्तपीठमन्त्रेण पीठं संपूज्य, पूर्ववद् ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा— अग्निकोणे प्रथमबीजमुच्चार्य हृदयाय नम:। ईशाने द्वितीयबीजमुच्चार्य शिरसे स्वाहा। नैर्ऋते तृतीयबीजमुच्चार्य शिखायै वषट्। वायव्ये पुन: प्रथमबीजमुच्चार्य कवचाय हुं। मध्ये द्वितीयबीजमुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषट्। दिक्षु तृतीयबीजमुच्चार्यास्त्राय फट्। ततस्त्रिकोणे रत्यादिकमभ्यर्च्य, पत्रमूले अनङ्गकुसुमादिका: पूजयेत्। पत्रेषु पूर्वादि असिताङ्गब्राह्म्यादीन् संपूज्य, भूगृहे इन्द्रादीन् वज्रादींश्च संपूज्य धूपदीपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्या: पुरश्चरणं लक्षजप:, 'लक्षमात्रं जपेन्मन्त्रम्' इति वचनात्।

रुद्रभैरवी—ज्ञानार्णव के श्लोक १-२ का उद्धार करने पर इसका मन्त्र बनता है—हस्ख्फ्रें हस्क्लीं हसौ:। इसके पूजायन्त्र में त्रिकोण वृत्त अष्टदल वृत्त भूपुर होता है। प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक की क्रिया के बाद चैतन्यभैरवी के समान इसका पीठन्यास करे। जैसे—आधारशक्ति इत्यादि से ह्री ज्ञानात्मने नम: तक न्यास करके पूर्वादि क्रम से—ॐ वामायै नम:, ॐ ज्येष्ठायै नम:, ॐ रौद्र्यै नम:, ॐ काल्यै नम:, ॐ कलविकरण्यै नम:, ॐ बलविकरण्यै नम:, ॐ बलप्रमथिन्यै नम:, ॐ सर्वभूतदमन्यै नम:, मध्य में ॐ मनोन्मन्यै नम:—इन पीठ शक्तियों का विन्यास करे। मध्य में इस पीठमन्त्र का न्यास करे अघोरे ऐं, अघोरे ह्रीं, घोरघोरतरे क्लीं सर्वत: सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते रुद्ररूपेभ्य: ऐं ह्रीं।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नम:। मुखे पंक्तिछन्दसे नम:। हृदि रुद्रभैरव्यै देवतायै नम:।

कराङ्ग न्यास—हस्ख्फ्रें अंगुष्ठाभ्यां नम:। हस्क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। हसौ: मध्यमाभ्यां वषट्। हस्ख्फ्रें अनामिकाभ्यां हुं। हस्क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। हसौ: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम्। नानालङ्कारसुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम्।।
वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससम्। त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च।।
पिनाकं च शरान् देवि पाशाङ्कुशयुगं क्रमात्। पुस्तकं चाक्षमालां च शिवसिंहासनस्थिताम्।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद मानसोपचार से पूजा करे। शङ्खस्थापन करके पीठन्यास क्रम से चैतन्य भैरवी के समान पीठ पूजा करे। इस मन्त्र में उक्त पीठमन्त्रों से पीठपूजा करे। पूर्ववत् ध्यान करे। आवाहन से लेकर पाँच पुष्पाञ्जलि तक की क्रिया करे। तब आवरण पूजा करे।

षडङ्ग पूजा—अग्निकोण में हस्ख्फ्रें हृदयाय नम:। ईशान में हस्क्लीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋत्य में हसौ: शिखायै वषट्।

वायव्य में हस्ख्फ्रें कवचाय हुं। मध्य में हस्ख्फ्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो दिशाओं में हसौः अस्त्राय फट्। त्रिकोण में रति आदि की पूजा करे। अष्टदल में दलों के मूल में अनङ्गकुसुमादि की पूजा करे। पत्रों में पूर्वादि क्रम से असितांग ब्राह्मी आदि की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके दश आयुधों की पूजा करे। तब धूप-दीपादि से विसर्जन तक के कर्मों के बाद पूजा समाप्त करे। एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है।

भुवनेश्वरी भैरवी

अथ भुवनेश्वरीभैरवी। ज्ञानार्णवे (९.२)—

हसाद्यं वाग्भवमाद्यं हसकान्ते सुरेश्वरि। भूबीजं भुवनेशानी द्वितीयं बीजमुद्धृतम् ॥१॥
शिवचन्द्रौ महेशानि भुवनेशी च भैरवी।

तथा च त्रिपुरार्णवे—

हंसास्त्रयो दन्त्यसकाररूढा वस्वब्धिपङ्क्तिस्वरसंविभिन्नाः।
आद्यौ सबिन्दू परतो विसर्गी मध्यं विरञ्चीन्द्रहराग्नियुक्तम् ॥१॥ इति।

अस्यार्थः—शिवचन्द्रवाग्भवा इति प्रथमं बीजं, शिवचन्द्रकामपृथिवीमहामाया इति द्वितीयबीजं, शिवचन्द्रचतुर्दशस्वरविसर्गास्तृतीयं बीजम्। अस्याः पूजायन्त्रं चैतन्यभैरवीवद् बोद्धव्यम्। अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि-प्राणायामान्तं कृत्वा चैतन्यभैरव्युक्तपीठन्यासं कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदि भुवनेश्वरीभैरव्यै देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासः—'मध्यबीजेन देवेशि षड्दीर्घस्वरभेदिना। षडङ्गानि च विन्यसेदित्यादि'। मध्यबीजेन षड्दीर्घयुक्तेनाङ्गन्यासः। यथा—हसकलह्रां अङ्गुष्ठकाभ्यां नमः। हसकलह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम्। चन्द्ररेखाजटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम् ॥१॥
नानालङ्कारसुभगां पीनोन्नतघटस्तनीम्। पाशाङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां श्रये ॥२॥

अन्यत्सर्वं चैतन्यभैरवीवत् कर्तव्यम्।

भुवनेश्याश्च भैरव्या भेदान्तरमथोच्यते। सहाद्या सैव देवेशि तदा सा सकलेश्वरी ॥१॥
ध्यानपूजादिकं सर्वमेतस्या एव पूर्ववत्।

इयं सहाद्या चेत्सकलेश्वरी, ध्यानपूजादिकं तु पूर्ववत्।

भुवनेश्वरी भैरवी—ज्ञानार्णव के श्लोक १ का उद्धार करने पर मन्त्र बनता है—हसैं ह्स्क्ल्ह्रीं ह्सौः। इसका पूजायन्त्र चैतन्य भैरवी के समान होता है। इसकी पूजा में प्रातःकृत्यादि से प्राणायाम तक की क्रिया के बाद चैतन्य भैरवी के समान पीठ न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे। शिरसि दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि भुवनेश्वरीभैरव्यै देवतायै नमः।

तब कराङ्ग न्यास करे—हसकलह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, हसकलह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

जपाकुसुमसंकाशां दाडिमीकुसुमोपमाम्। चन्द्ररेखाजटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससम्।।
नानालङ्कारसुभगां पीनोन्नतघटस्तनीम्। पाशाङ्कुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां श्रये।।

अन्य सभी कर्म चैतन्यभैरवी के समान कर्त्तव्य हैं। भुवनेश्वरी भैरवी के मन्त्र में 'हसैं' के स्थान पर 'स्हैं' करने से सकलेश्वरी का मन्त्र बनता है—स्हैं स्हक्ल्ह्रीं स्हौः। इसे सकलेश्वरी कहते हैं। इसका ध्यान पूजादि पूर्ववत् होता है।

बालात्रिपुरामन्त्रस्तद्भेदाः

अथ बालात्रिपुरामन्त्रस्तत्र शारदायाम्—

अधरो बिन्दुमानाद्यं ब्रह्मेन्द्रस्थः शशीयुतः। द्वितीयं भृगुसर्गाढ्यो मनुस्तार्तीयमीरितम् ॥१॥
एषा बालेति विख्याता त्रैलोक्यवशकारिणी।

अस्यार्थः—वाग्भवं, कामबीजं, चन्द्रबीजं सविसर्गकचतुर्दशस्वरसंयुक्तम्। अस्याः पूजादिकं तु त्रिपुराभैरवीवच्छारदायामुक्तत्वात्। ज्ञानार्णवे तु विशेषः। न्यासादिकं त्वेतद्बीजेन कुर्यात्। कराङ्गन्यासस्तु द्विरुक्त्या 'षडङ्गमाचरेद्देवि द्विरावृत्त्या क्रमेण तु' इति वचनात्। अस्याः पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथाच ज्ञानार्णवे—
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं हवनं भवेत्। तर्पणं च तथा कुर्यात् सर्वसौभाग्यभाग्भवेत् ॥१॥

इतरेषां लक्षजपः श्रीविद्यायामुक्तत्वात्। मन्त्रान्तरं श्रीक्रमे—
सूर्यस्वरं समुच्चार्य बिन्दुनादकलान्वितम्। स्वरान्तं पृथिवीसंस्थं तुर्यस्वरसमन्वितम् ॥१॥
बिन्दुनादकलाक्रान्तं सर्गवान् भृगुरव्ययः। शक्रस्वरसमोपेता विद्येयं त्र्यक्षरी मता ॥२॥

अव्ययो बिन्दुः। दक्षिणामूर्तिसंहितायामप्येवं, तथा विसर्गबिन्द्वन्ता शप्ता। एतां विद्यामुद्धृत्य सारसमुच्चयादौ शापबोधनात्। तद्यथा त्रिपुरासारे (२ प० १८ श्लो०)—
विद्यामूलोत्पत्तिरेषा मयोक्ता ज्ञातव्येयं सर्वथा सिद्धिकामैः।
देव्या शप्ता येन विद्येयमाद्या पूर्वं तेन प्राणहीना भवेत् सा ॥१॥ इति।

मुण्डमालातन्त्रेऽपि—
कुमारी या च विद्येयं त्वया शप्ता पतिव्रते। तथाद्येन तु शप्ता सा मध्यमेन तु कीलिता ॥१॥
अन्तिमेन तु संभिन्ना तेन विद्या न सिध्यति।

न चैवं शारदादौ उक्तविद्यापि शप्ता स्यादिति वाच्यं, तस्या ज्ञानार्णवोक्तबिन्दुघटितत्वात्। शापोद्धारमाह मुण्डमालातन्त्रे—'केवलं शिवरूपेण शक्तिरूपेण केवलम्। मया प्रतिष्ठिता विद्या' इति। हकारसकारौ वाग्भवे कामराजे च। तृतीयबीजे तु हकारः, वक्ष्यमाणसारसमुच्चये तथा दर्शनात्। (त्रिपुरासारेऽपि (२-२०) शिवशक्तिबीजमत एव शंभुना निहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः। अकुलं कुलोपरि च मध्यमाधरे दहनं ततः प्रभृति सोर्जिताभवत्।) रुद्रयामलेऽपि—
वाग्भवं प्रथमं देवि कामकाजं द्वितीयकम्। तृतीयं शक्तिबीजं तु शिवयुक्तं सदा भवेत् ॥१॥
एषा बाला समाख्याता सर्वदोषविवर्जिता। (आद्यबीजं भवेन्मध्ये मध्यं चादौ नियोजयेत् ॥२॥
एवं यो जपते मन्त्रं त्रैलोक्यैश्वर्यभाग्भवेत्। आद्यमन्त्येऽन्तिमं मध्ये मध्यं चादौ नियोजयेत् ॥३॥
एवं कृत्वा जपेन्मन्त्रं सर्वसिद्धिमवाप्नुयात्। इति।

तथा मन्त्रान्तरं श्रीक्रमे—
वाग्भवं क्लेदिनीबीजमीकारान्तं ततः पठेत्। शक्तिमौकारसंयुक्तं विसर्गं तदधः पठेत् ॥१॥
बिन्दुनादकलाक्रान्तं बीजं परमदुर्लभम्। एतद्बीजत्रयं देवि ह्सौः क्लीं च ततः परम् ॥२॥
इयं पञ्चाक्षरी विद्या कथिता भुवि दुर्लभा। इति।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—
बालाबीजत्रयं देवि हंसाद्यं वा जपेत् सुधीः। हंसान्तं वा महादेवि शापादिदोषशान्तये ॥१॥ इति।

तत्रैव—
पाशबीजं महेशानि शक्तिं शिवं सवह्निकम्। द्वादशस्वरसंयुक्तं नादबिन्दुविभूषितम् ॥१॥
कामराजं प्रवक्ष्यामि ह्रींकारं शक्तिशैवकम्। मादनं चेन्द्रबीजं च वह्निवामाक्षिबिन्दुमत् ॥२॥
शक्तिकूटं महादेवि क्रोंकारं शक्तिशैवकम्। वह्निबीजं मनुयुक्तं नादबिन्दुससर्गकम् ॥३॥

चतुर्दशाक्षरी विद्या कथिता भुवि दुर्लभा। हंसबीजं ततः पश्चात् षोडशी कथिता मया ॥४॥ इति।

अथ नवकूटा तत्रैव—

बालाबीजत्रयं देवि कूटत्रयं नवाक्षरी। वियत्कूटत्रयं देवि भैरव्या नवकूटकम् ॥१॥ इति।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—

शिवः शक्तिश्च वाग्बीजं नादबिन्दुसमन्वितम्। वाग्भवं कथितं देवि कामराजं शृणु प्रिये ॥१॥
शिवशक्तिमादनेन्द्रवह्निमायासमन्वितम् । नादबिन्दुकलाक्रान्तं कूटं परमदुर्लभम् ॥२॥
शिवश्चन्द्रश्च सद्योन्तः सर्गबिन्दुसमन्वितः। एषा नवाक्षरी बाला सर्वदोषविवर्जिता ॥३॥ इति।

अस्यार्थः—शिवचन्द्रवाग्भवं प्रथमम्। शिवचन्द्रकामभूवह्नितुर्यस्वरबिन्दुयुक्तं द्वितीयम्। शिवचन्द्रचतुर्दशस्वर-विसर्गयुक्तं तृतीयम्। अपरं सकारादिमन्त्रान्तरम्। तथाच त्रिपुरासारे (२ प० २० श्लो०)—

शिवशक्तिबीजमत एव शम्भुना विहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः।
अकुलं कुलोपरि च मध्यमाधरे दहनं ततः प्रभृति सोर्जिता भवेत् ॥१॥
भैरवीयमुदिताऽकुलपूर्वा देशिकैर्यदि भवेत् कुलपूर्वा।
सैव शीघ्रफलदा भुवि विद्येत्युच्यते पशुजनेष्वतिगोप्या ॥२॥ इति।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—

शिवाष्टमं केवलमादिबीजं भगस्य पूर्वाष्टमबीजमन्यत्।
परं शिरोन्तं गदिता त्रिवर्णा संकेतविद्या गुरुवक्त्रगम्या ॥१॥ इति।

मन्त्रान्तरं श्रीक्रमे—

शक्तिः शिवो वह्निबीजं द्वादशस्वरबिन्दुकम्। शक्तिर्महेशः कामश्च इन्द्रो वह्नीन्दुमायया ॥१॥
शक्तिः शिवश्च वह्निश्च मनुस्वरविसर्गकः। नादबिन्दुकलायुक्तं बीजमेतत् प्रकीर्तितम् ॥२॥ इति।

एतासां पूजायन्त्रं ध्यानं पूजादिकं च भैरवीवत्। पुरश्चरणं लक्षजपः श्रीक्रमोक्तत्वात्।

बाला त्रिपुरा मन्त्र—शारदा तिलक के श्लोक १ का उद्धार करने पर बाला त्रिपुरा का मन्त्र बनता है—ऐं क्लीं सौः। शारदातिलक के अनुसार इसके ध्यान पूजादि त्रिपुराभैरवी के समान होते हैं न्यासादि इसके बीजों से करे। करन्यास एवं अंग न्यास इसके बीजों की दो आवृत्ति से करे। तीन लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। ज्ञानार्णव में कहा गया है कि वर्णलक्ष जप करे और उसका दशांश हवन करे एवं उसका दशांश तर्पण करे। इससे साधक सर्व-सौभाग्यवान होता है।

बाला त्रिपुरा का मन्त्रान्तर—बाला त्रिपुरा का एक अन्य मन्त्र है—ऐं क्लीं सौः। यह त्र्यक्षरी विद्या है।

दक्षिणामूर्तिसंहिता में भी इस विद्या का उल्लेख किया गया है। सारसमुच्चय आदि में इस विद्या को शापित कहा गया है। त्रिपुरासार में ईश्वर ने कहा है कि विद्या मूल की यह उत्पत्ति मेरे द्वारा कथित है। सिद्धिकमियों को यह जाननी चाहिये। पहले देवी के द्वारा शापित होने के कारण यह विद्या प्राणहीन है।

मुण्डमाला में भी शिवजी पार्वती से कहते हैं कि हे पतिव्रते! कुमारी विद्या तुम्हारे द्वारा शापित है। आद्य बीज से यह शप्त है, मध्यबीज से कीलित है और अन्तिम से सम्भिन्न है। इसलिये यह विद्या सिद्ध नहीं होती। मुण्डमाला तन्त्र में इसका शापोद्धार इस प्रकार कहा गया है—केवल शिव रूप से एवं केवल शक्ति रूप से यह विद्या मेरे द्वारा प्रतिष्ठित है।

रुद्रयामल में भी कहा गया है कि ऐ क्लीं सौः सदैव शिवयुक्त होता है। यह बाला मन्त्र सभी दोषों से रहित है। क्लीं ऐं सौः का जो जप करते हैं, वे तीनों लोकों के ऐश्वर्य को भोगते हैं। क्ली सौः ऐं के जप से सभी सिद्धियाँ मिलती हैं।

श्रीक्रम के अनुसार मन्त्रान्तर है—ऐं क्लीं सौः ह्सौः क्लीं यह पञ्चाक्षरी विद्या पृथिवी पर दुर्लभ है।

श्रीक्रम में ही एक अन्य मन्त्र कहा गया है—हंस: ऐंक्लींसौ: अथवा ऐं क्लीं सौ: हंस: के जप से शापादि दोषों की शान्ति होती है।

वही पर यह भी कहा गया है कि पाशबीज सवह्निक शक्ति शिव, द्वादशस्वर संयुक्त नाद-बिन्दुविभूषित. शक्ति-शिवमय कामराज ह्रींकार, मादन चन्द्रबीज वह्नि वामाक्षि बिन्दुमत शक्तिकूट क्रींकार, वह्नि बीज मनुयुक्त नाद बिन्दु ससर्गक चतुर्दशाक्षरी विद्या संसार में दुर्लभ है। इसमें हंस बीज जोड़ने से यह षोडशाक्षरी हो जाती है।

नवकूटा—एक अन्य मन्त्र है—ऐंक्लींसौ: हसैं हस्क्लीं हसौ: हसैं हस्क्लीं हसौ:।

एक अन्य मन्त्र है—श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं क्लीं सौं ह्रीं क्लीं श्रीं। यह मन्त्र सभी दोषों से विवर्जित है।

श्रीक्रम के अनुसार एक अन्य मन्त्र है—ऐं क्लीं सौ: स्हैं स्हक्लीं स्हौं:। इसके पूजा-यन्त्र-ध्यान-पूजनादि भैरवी के समान होते हैं। एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है।

बालामन्त्राणां दीपिनीविद्या

एतासां दीपिनीविद्या श्रीक्रमे—

वदयुग्मं महेशानि वाग्वादिनि तत: परम्। एषा त्वष्टाक्षरी विद्या वाग्भवाद्ये नियोजयेत्॥१॥
क्लिन्ने क्लेदिनि देवेशि महाक्षोभं तत: कुरु। कामबीजं समुच्चार्य प्रणवं तदनन्तरम्॥२॥
महामोक्षं कुरु पश्चाच्छक्तिकूटं तथोच्चरेत्। जपेदादौ जपेत् पश्चात् सप्तवारमनुक्रमात्॥३॥ इति।

इन सबकी दीपिनी विद्या है—ऐं वद वद वाग्वादिनि क्लिन्ने क्लेदिनि महामोक्षं कुरु क्लीं ॐ महामोक्षं कुरु सौ:। इसका मन्त्र के पहले और बाद में सात-सात बार जप करना चाहिये।

अन्नपूर्णेश्वरीभैरवीप्रयोग:

अथ अन्नपूर्णेश्वरीभैरवी ज्ञानार्णवे—

तारं च भुवनेशानीं श्रीबीजं कामबीजकम्। हृदन्ते भगवत्यर्णान् माहेश्वरिपदं लिखेत्॥१॥
अन्नपूर्णे ठयुगलं विद्येयं विंशदक्षरा।

तथाच कल्पे—

कामबीजं विना देवि श्रीबीजपूर्विका यदा। ऊनविंशाक्षरी देवी धनधान्यसमृद्धिदा॥१॥ इति।

अस्या: पूजा—प्रात:कृत्यादिसामान्यपूजापद्धत्युक्तपीठन्यासान्तं विधाय केसरेषु, पूर्वादि ॐ वामायै नम:, एवं ज्येष्ठायै०, रौद्र्यै०, काल्यै०, कलविकरिण्यै०, बलविकरण्यै०, बलप्रमथिन्यै०, सर्वभूतदमिन्यै०, मध्ये मनोन्मन्यै०, तत्समीपे तु जयायै नम:, विजयायै०, अजितायै०, अपराजितायै०, नित्यायै०, विलासिन्यै०, दोग्ध्र्यै०, अघोरायै०, मध्ये मङ्गलायै नम:। तदुपरि ह्सौ: सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम:। तत: ऋष्यादिन्यास:। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नम:। हृदि अन्नपूर्णेश्वरीभैरव्यै देवतायै नम:। गुह्ये ह्रींबीजाय नम:। पादयो: श्रींशक्तये नम:। सर्वाङ्गे क्लींकीलकाय नम:। तथाच ज्ञानार्णवे—'बीजं च भुवनेशानी श्रीबीजं शक्तिरुच्यते। कीलकं कामबीजं स्यात्' इति। तत: कराङ्गन्यासौ, ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नम:। ह्रां हृदयाय नम:, इत्यादि च। तथाच ज्ञानार्णवे—'भुवनेश्या महेशानि षड्दीर्घस्वरभिन्नया। षडङ्गानि' इति। तत: पदन्यास:—मूर्ध्नि ॐ नम:। चक्षुषो: ह्रीं नम:, श्रीं नम:। कर्णयो: क्लीं नम:, नमो नम:। नसो: भगवति नम:, माहेश्वरि नम:। मुखे अन्नपूर्णे नम:। गुह्ये स्वाहा नम:। पुनर्गुह्यादिमूर्धान्तं न्यसेत्। तत्रैव—

एकमेकं ततश्चैकं पुनरेकं द्वयं चतु:। चतुश्चतुस्तथा द्वाभ्यां पदान्येतानि पार्वति॥१॥
पदानि देवदेवेशि नवद्वारेषु विन्यसेत्। मूर्धादिगुह्यपर्यन्तं पुनस्तेषु वरानने॥२॥
गुह्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तं पदानां नवकं न्यसेत्।

ततो ब्रह्मरन्ध्रमुखहृदयमूलाधारेषु चतुर्बीजानि विन्यसेत्। ततः शेषम्।

भ्रूमध्यनासिकाकण्ठनाभिलिङ्गेषु पञ्चसु। पूर्ववत् क्रमतो देवि नमःप्रभृतिकं न्यसेत् ।।१।। इति।

ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्—

तप्तकाञ्चनवर्णाभां बालेन्दुकृतशेखराम्। नवरत्नप्रभायुक्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम् ।।२।।
चित्रवस्त्रपरीधानां शफराक्षीं त्रिलोचनाम्। सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ।।३।।
गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम्। प्रसन्नवदनं शम्भुं नीलकण्ठविराजितम् ।।४।।
कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं कुन्दसन्निभम्। नृत्यन्तमनिशं हृष्टं दृष्ट्वानन्दमयीं पराम् ।।५।।
सानन्दमुग्धलोलाक्षीं मेखलाढ्यां नितम्बिनीम्। अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यामलंकृताम् ।।६।।

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्।

अन्नपूर्णेश्वरी भैरवी—ज्ञानार्णव मूलोक्त श्लोक का उद्धार करने पर मन्त्र अन्नपूर्णेश्वरी भैरवी का अक्षरों का मन्त्र होता है—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा। कल्प के अनुसार उन्नीस अक्षरो का मन्त्र है—ॐ ह्रीं श्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा।

पूजा—प्रातःकृत्यादि से लेकर सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार पीठन्यास तक करने के बाद केसर में पूर्वादि क्रम से पीठशक्तियों की पूजा करे। ॐ वामायै नमः। ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्र्यै नमः, ॐ काल्यै नमः, ॐ कल- विकरिण्यै नमः, ॐ बलविकरण्यै नमः, ॐ बलप्रमथिन्यै नमः, ॐ सर्वभूतदमिन्यै नमः, मध्य में वनोन्मन्यै नमः। उन्हीं के समीप जयायै नमः, विजयायै नमः, अजितायै नमः, अपराजितायै नमः, नित्यायै नमः, विलासिन्यै नमः, दोग्ध्र्यै नमः, अघोराय नमः, मध्य में मङ्गलायै नमः। उसके ऊपर हसौः सदाशिवमहाप्रेत पद्मासनाय नमः से पूजन करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे पंक्ति छन्दसे नमः। हृदि अन्नपूर्णेश्वरीभैरव्यै देवतायै नमः। गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः। पादयोः श्रीं शक्तये नमः। सर्वांगे क्लीं कीलकाय नमः। कराङ्ग न्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि। पद न्यास—मूर्ध्नि ॐ नमः। चक्षुषोः ह्रीं नमः, श्रीं नमः। कर्णयोः क्लीं नमः, नमो नमः। नसोः भगवति नमः, माहेश्वरि नमः। मुखे अन्नपूर्णे नमः। गुह्ये स्वाहा नमः। फिर गुह्य से मूर्धा तक न्यास करे।

वहीं कहा गया है कि १,१,१,१,२,४,४,४,२ पदों से न्यास करे। इन पदों का न्यास नव द्वारों में करे। मूर्धा से गुह्य तक पुनः न्यास करे। तब गुह्य से मूर्धा तक नव पदों का न्यास करे। तब ब्रह्मरन्ध्र मुख हृदय मूलाधार में चारो बीजों का न्यास करे। तब भ्रूमध्य नासिका कण्ठ नाभि लिङ्ग में पूर्ववत् क्रम से नमः कहते हुये न्यास करे। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे।

तप्तकाञ्चनवर्णाभां बालेन्दुकृतशेखराम्। नवरत्नप्रभायुक्तमुकुटां कुङ्कुमारुणाम्।।
चित्रवस्त्रपरीधानां शफराक्षीं त्रिलोचनाम्। सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम्।।
गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम्। प्रसन्नवदनं शम्भुं नीलकण्ठविराजितम्।।
कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं कुन्दसन्निभम्। नृत्यन्तमनिशं हृष्टं दृष्ट्वानन्दमयीं पराम्।।
सानन्दमुग्धलोलाक्षीं मेखलाढ्यां नितम्बिनीम्। अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यामलंकृताम्।।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजन करे। तब शङ्खस्थापन करे।

अन्नपूर्णेश्वरीभैरवीपूजायन्त्रम्

अस्याः पूजायन्त्रं तु—

त्रिकोणं च चतुष्पत्रं वसुपत्रं ततः परम्। कलापत्रं च भूबिम्बं चतुर्द्वारं समालिखेत् ।।७।। इति।

ततः पीठपूजां विधाय, पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। कर्णिकायां— अग्न्यादि मध्ये दिक्षु च ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। त्रिकोणाग्रे ॐ हौं नमः शिवाय (नमः) इति शिवं पूजयेत्। वामकोणे 'ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतये भूमिपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा' इति वराहं पूजयेत्। दक्षिणकोणे 'नमो नारायणाय' इति नारायणं पूजयेत्। ततो वामे दक्षिणे च 'ग्लौंश्रीं अन्नं देहि अन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रींग्लौं' इत्यनेन भूमिश्रियौ पूजयेत्। ततश्चतुर्दलेषु पुरत आरभ्य ॐ परविद्यायै नमः, ह्रीं भुवनेशान्यै नमः, श्रीं कमलायै नमः, क्लीं सुभगायै नमः। तथाच ज्ञानार्णवे—'तारेण परविद्यां च भुवनेशीं तदात्मना। कमलां रमया भद्रे कामेन सुभगां यजेत्' इति। अष्टपत्रेषु पश्चिमादितः ब्राह्म्यादिमातृः पूजयेत्। षोडशपत्रेषु पूर्वादि नं अमृतायै अन्नपूर्णायै नमः, मों मानदायै०, भं तुष्ट्यै०, गं पुष्ट्यै०, वं प्रीत्यै०, तिं रत्यै०, मां ह्रियै०, हें श्रियै०, श्वं सुधायै०, रिं रात्र्यै०, अं ज्योत्स्नायै०, त्रं हैमवत्यै०, पूं छायायै०, र्णे पूर्णिमायै०, स्वां नित्यायै०, हां अमावास्यायै नमः। एता अन्नपूर्णाशब्दान्ता नमोन्ताश्च पूजयेत्। तथाच ज्ञानार्णवे—'शेषैर्वर्णैः प्रपूज्याश्च अन्नपूर्णान्तिशब्दिताः'। ततश्चतुरस्रे लोकपालान् पूजयेत्। तत्रैव—'चतुरस्रे लोकपालान् क्रमेण परिपूजयेत्' इति। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्याः पुरश्चरणं लक्षजपः। तथाच कल्पे—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षसंख्यमनन्यधीः। साज्येनान्नेन जुहुयात् तद्दशांशमनन्यधीः ॥१॥

इति भैरवीप्रकरणम्।

अन्नपूर्णेश्वरी पूजन-यन्त्र—इसका पूजा यन्त्र त्रिकोण, चतुर्दल पद्म, अष्टदल, षोडशदल और चार द्वारों से युक्त भूपुर के माध्यम से बनावें। तब पीठपूजा करे। फिर ध्यान करके आवाहनादि से पाँच पुष्पाञ्जलि तक का कर्म करके आवरण पूजा आरम्भ करे।

कर्णिका के—अग्न्यादि कोणों में, मध्य में दिशाओं में एवं ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि षडङ्ग पूजन करे। त्रिकोणाग्र में ॐ हौं नमः शिवाय से शिव की पूजा करे। वाम कोण में ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवःस्वःपतये भूमिपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा से वराह की पूजा करे। दक्षिण कोण में नमो नारायणाय से नारायण की पूजा करे। तब बाँयें-दाँयें ग्लौं श्रीं अन्नं देहि अन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ग्लौं से भूमि एवं श्री की पूजा करे। तब चतुर्दल में आगे से आरम्भ करके ॐ परविद्यायै नमः, ह्रीं भुवनेशान्यै नमः, श्रीं कमलायै नमः, क्लीं सुभगायै नमः से पूजन करे।

अष्टदल में पश्चिमादि से ब्राह्मी आदि मातृकाओं की पूजा करे। षोड़श दल में पूर्वादि क्रम से नं अमृतायै अन्नपूर्णायै नमः, मों मानदायै अन्नपूर्णायै नमः, भं तुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः, गं पुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः, वं प्रीत्यै अन्नपूर्णायै नमः, तिं रत्यै अन्नपूर्णायै नमः, मां ह्रियै अन्नपूर्णायै नमः, हें श्रियै अन्नपूर्णायै नमः, श्वं सुधायै अन्नपूर्णायै नमः, रिं रात्र्यै अन्नपूर्णायै नमः, अं ज्योत्स्नायै अन्नपूर्णायै नमः, त्रं हैमवत्यै अन्नपूर्णायै नमः, पूं छायायै अन्नपूर्णायै नमः। र्णे पूर्णिमायै अन्नपूर्णायै नमः, स्वां नित्यायै अन्नपूर्णायै नमः, हां अमावास्यायै अन्नपूर्णायै नमः। चतुरस्र में लोकपालों की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके पूजा समाप्त करे। एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। जैसा कि कल्प में कहा भी है कि इस प्रकार ध्यान करके अनन्य चित्त होकर एक लाख जप करे। उसके बाद घीमिश्रित अन्न से उसका दशांश हवन करे।

प्रचण्डचण्डिकामन्त्रप्रयोगः

अथ प्रचण्डचण्डिकामन्त्राः—

प्रचण्डचण्डिकां वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम्। यस्याः प्रसादमात्रेण सदाशिवो भवेन्नरः ॥१॥
पुत्रो लभते पुत्रं दरिद्रो धनमाप्नुयात्। कवित्वं च सुपाण्डित्यं लभते नात्र संशयः ॥२॥ इति।

विश्वसारे यामले च—

लक्ष्मीं लज्जां ततो मायां मात्रां द्वादशिकामपि। वज्रवैरोचनीये द्वे माये फट् स्वाहया युतम् ॥१॥
लक्ष्मीबीजं यदाद्यं स्यात् तदा श्रीः सर्वतोमुखी। लज्जाबीजेन चाद्येन वश्यतां यान्ति योषितः ॥२॥
मायाबीजेन चाद्येन माहपातकनाशनम्। मात्राद्वादशिकाबीजमाद्यं स्यान्मुक्तिदायकम् ॥३॥

अत्र लज्जापदं कामबीजपरम्। तथाच—

अत्र लज्जापदे देवि कामबीजं वितन्यते। महाकालमतं प्रोक्तं मन्त्रोद्धारं शुभावहम्॥१॥

पूर्वमायापदे देवीति पाठे मायायाः पूर्वं लज्जाबीजं तस्मिन्नित्यर्थः। तथाच पूर्वमायापदेन लज्जाबीजमुच्यते अन्यथा तापिन्यादिविरोधः स्यात्। तथाच—

कामाद्यां वाग्भवाद्यां वा मायाद्यां वा जपेत् सुधीः। लक्ष्म्याद्यां वा जपेद्विद्यां चतुर्वर्गफलप्रदाम्॥१॥

अन्येषां मुनीनां च मते सर्वत्र मायापदं कूर्चपरम्। तत्रैव—

वान्तं वह्निसमारूढं रतिबिन्दुसमन्वितम्। लक्ष्मीबीजमिदं प्रोक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम्॥१॥
वामाक्षिवह्निसंयुक्तं नादबिन्दुविभूषितम्। शिवबीजं महेशानि लज्जाबीजमुदाहृतम्॥२॥
ईशानमुद्धृत्य पुरारिबीजं सबिन्दुकं नादविभूषितं च।
सवामकर्णं परितः प्रकल्प्य मायां वदन्तीह मनीषिणस्ताम्॥३॥
द्वादशस्वरवर्णं स्यान्नादबिन्दुविभूषितम्। वाग्भवं बीजमित्युक्तं सर्ववाक्यविशुद्धये॥४॥

इति मन्त्रचतुर्थबीजव्याख्यानात् सर्वत्र मायापदं कूर्चपरम्। अयं तु पक्षः समीचीनः। अस्य पूजाप्रयोगः— प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा मन्त्राचमनं कुर्यात्। यथा—

लक्ष्मीमायाकूर्चबीजैस्त्रिभिः पीत्वाम्बु साधकः। वाग्भवेनौष्ठौ संमृज्य मायाभ्यां च द्विरुन्मृजेत्॥१॥
कूर्चेन क्षालयेत् पाणी एभिर्मन्त्रैश्च विन्यसेत्। श्रीमायाकूर्चवाक्कामत्रिपुटाभगवर्णकैः ॥२॥
कामकलाङ्कुशाभ्यां च वक्त्रनासाक्षिश्रोत्रयोः। नाभिहृन्मस्तकं चांसौ स्पृष्ट्वा शंभुर्भवेत् क्षणात्॥३॥
आचम्यैवं छिन्नमस्तां वत्सरान्तां प्रपश्यति।

ततः प्राणायामान्तं कर्म कृत्वा षोढान्यासं कुर्यात्।

मन्त्रषोढां ततः कुर्यात् त्रैलोक्यवशकारिणीम्। श्रीबालात्रिपुटायोनिप्रासादप्रणवैस्तथा ॥४॥
कालीवध्वङ्कुशैः कामकलाकूर्चास्त्रकैः क्रमात्। षोडशीसमवर्णैश्च पृथगष्टादशाक्षरैः॥५॥
एभिर्बीजैर्मातृकार्णान् स्वेषु स्थानेषु विन्यसेत्। एषा ब्रह्मस्वरूपा हि बीजषोढा प्रकीर्तिता॥६॥
अस्याश्च न्यसनात् सर्वे वज्रदेहा भवन्ति हि। सर्वैश्वर्ययुतास्ते हि जीवन्मुक्ता दशाब्दतः॥७॥

ततः ऋष्यादिन्यासः—यथा शिरसि क्रोधभूपतिभैरवऋषये नमः। मुखे सम्राट्छन्दसे नमः। हृदि प्रचण्डचण्डिकायै (छिन्नमस्तायै) देवतायै नमः। गुह्ये ह्रींबीजाय नमः। पादयोः स्वाहाशक्तये नमः। तथाच—

अस्या ऋषिर्भैरवो वा नाम्ना च क्रोधभूपतिः। सम्राट् छन्दो देवता च च्छिन्नमस्ता प्रकीर्तिता॥१॥
माया बीजं स्वाहा शक्तिः कथिता ब्रह्मयोनिना।

ततः कराङ्गन्यासौ। आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा, कनीयस्योः। ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा, पवित्राङ्गुल्योः। ॐ सुवज्राय शिखायै स्वाहा, मध्यमयोः। ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा, तर्जन्योः। औं अङ्कुशाय नेत्रत्रयाय स्वाहा, अङ्गुष्ठयोः। अः सुरक्षासुरक्षाय अस्त्राय फट्, करतलपृष्ठयोः। एवं हृदयादिषु। तदुक्तं भैरवीतन्त्रे—

उच्चरेत् पूर्वमाकारं बिन्दुलाञ्छितमस्तकम्। खड्गाय हृदयायेति स्वाहायुक्तं कनीयसि॥१॥
ईकारं च ततो देवि चन्द्रकोटिसमप्रभम्। सुखड्गाय ततो वाच्यं शिरसे तदनन्तरम्॥२॥
स्वाहायुक्तं ततो वाच्यं पवित्राङ्गुलिसंयुतम्। ऊकारं च ततो वाच्यं बिन्दुलाञ्छितमस्तकम्॥३॥
सुवज्राय ततो वाच्यं शिखायै तदनन्तरम्। स्वाहान्तं मध्यमायां च विन्यसेत् तदनन्तरम्॥४॥
मात्रां द्वादशिकां देवीं विन्यसेच्च ततः परम्। पाशायेति समुच्चार्य प्रवदेत् कवचाय च॥५॥

स्वाहान्तं विन्यसेन्मन्त्रं तर्जन्यां तदनन्तरम्। ओंकारं च ततो देवि चाङ्कुशं तदनन्तरम् ॥६॥
नेत्रत्रयाय स्वाहान्तमङ्गुष्ठे करयोर्द्वयो:। अकारं च विसर्गान्तं सुरक्षाक्षरसंयुतम् ॥७॥
असुरक्षाय-संयुक्तमस्त्रायेति तत: परम्। फडक्षरसमायुक्तं विन्यसेत् करयोर्द्वयो: ॥८॥
हृदि मूर्ध्नि शिखायां तु कवचे नेत्रमण्डले। यावदस्त्रं चतुर्दिक्षु विदिक्षु च यथाक्रमम् ॥९॥

ततो मूलेन मस्तकादिपादपर्यन्तं पादादिमस्तकान्तं वारत्रयं व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्। यथा—
स्वनाभौ नीरजं ध्यायेदूर्ध्वं विकसितं सितम्। तत्पद्मकोशमध्ये तु मण्डलं चण्डरोचिष: ॥१॥
जपाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम्। रज:सत्त्वतमोलेखायोनिमण्डलमण्डितम् ॥२॥
मध्ये तु तां महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम्। छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम् ॥३॥
प्रसारितमुखां भीमां लेलिहानाग्रजिह्विकाम्। पिबन्तीं रौधिरीं धारां निजकण्ठविनिर्गताम् ॥४॥
विकीर्णकेशपाशां च नानापुष्पसमन्विताम्। दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम् ॥५॥
दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढपदस्थिताम्। अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥६॥
रतिकामोपविष्टां च सदा ध्यायन्ति मन्त्रिण:। सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधगम् ॥७॥
विपरीतरतस्थौ तु ध्यायेद्रतिमनोभवौ। डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगत: ॥८॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम्। वर्णिनीं लोहितां सौम्यां मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ॥९॥
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगत:। नागयज्ञोपवीताढ्यां ज्वलत्तेजोमयीमिव ॥१०॥
प्रत्यालीढपदां दिव्यां नानालंकारभूषिताम्। सदा द्वादशवर्षीयामस्थिमालाविभूषिताम् ॥११॥
डाकिनीं वामपार्श्वे तु कल्पसूर्यानलोपमाम्। विद्युज्जटां त्रिनयनां दन्तपङ्क्तिबलाकिनीम् ॥१२॥
दंष्ट्राकरालवदनां पीनोन्नतपयोधराम्। महोदरीं महाघोरां मुक्तकेशीं दिगम्बराम् ॥१३॥
लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगत: ॥१४॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम्। करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम् ॥१५॥
आभ्यां निषेव्यमानां तां ध्यायेद् देवीं विचचण:।

पिबन्तीमिति तेन मुखेनेति शेष:। तथाच—
स्वमस्तकं सखर्परं रक्तधाराभि: पूरितम्। ललज्जिह्वं महाभीमं धृत्वा वामभुजे तथा ॥१॥
इति भैरवतन्त्रपाठात्। एवं ध्यात्वा मानसोपचारै: संपूज्य तारिणीवच्छङ्खस्थापनं कुर्यात्।

प्रचण्डचण्डिका अर्थात् छिन्नमस्तिका मन्त्र—अब सर्वकामफलप्रद प्रचण्डचण्डिका को कहता हूँ, जिसकी कृपा से मनुष्य सदाशिव के समान हो जाता है। इससे अपुत्र को पुत्र, दरिद्र को धन, कवित्व और सुपाण्डित्य प्राप्त होता है। विश्वसार और यामल के अनुसार इसके मन्त्र इस प्रकार है—

१. श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा। इससे सर्वतोमुखी श्री प्राप्त होती है।
२. क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा/इस मन्त्र से स्त्रियाँ वश में होती हैं।
३. ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा। यह मन्त्र महापातक-नाशक है।
४. ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा। यह मन्त्र मोक्षप्रदायक है।

इन उपर्युक्त मन्त्रों के आदि में कामबीज, वाग्भवबीज, माया या लक्ष्मी के प्रयोग पूर्वक जप से चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है। वहीं पर कहा भी है कि श्रीं—यह लक्ष्मीबीज सर्वकामार्थ-सिद्धिदायक है। क्लीं को लज्जाबीज कहते हैं। ह्रीं को माया बीज कहते हैं। ऐं को वाग्भव बीज कहते हैं। इससे वाणी विशुद्ध होती है।

पूजाप्रयोग—प्रात:कृत्यादि के बाद आचमन करे। एतदर्थ श्रीं ह्रीं क्लीं से साधक जलपान करे। ऐं से ओठों का

मार्जन करे। ह्रीं से दोनों होठों का मार्जन करे। क्लीं से हाथ धोये। श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं क्लीं त्रिपुटा भगवर्ण, कामकला, अंकुश से मुख, नाक, आँखों, कानों, नाभि, हृदय, मस्तक, कंधों में न्यास करने से क्षण भर में ही साधक शम्भु के समान हो जाता है। इस प्रकार के आचमन से एक वर्ष में छिन्नमस्ता का दर्शन होता है।

तब प्राणायाम करके षोढ़ा न्यास करे। कहा भी है कि तब तीनों लोकों को वश में करने वाला मन्त्रषोढा न्यास करे। 'श्रीं ऐं क्लीं सौः श्रीं ह्रीं क्लीं हौं ॐ ह्रीं क्रों ईं हुं फट्' षोडशाक्षरी और अष्टदशाक्षरी मन्त्र के प्रत्येक बीज से अं से क्षं तक के पचास वर्णों को पृथक्-पृथक् पुटित करके मातृका न्यास के स्थानों में न्यास करे। जैसे ललाट में श्रीं अं श्रीं, मुख मे श्रीं आं श्रीं इत्यादि। ललाट में ऐं अं ऐं नमः, मुख में ऐं आं ऐं नमः आदि प्रकार से न्यास करना चाहिये। इसी को बीज षोढ़ान्यास कहते हैं। यह न्यास ब्रह्मस्वरूप है। इस न्यास के करने पर साधक का शरीर वज्र के समान दृढ़ हो जाता है। दस वर्ष तक इस प्रकार का न्यास करने से साधक सभी ऐश्वर्यों से युक्त होकर जीवनमुक्त हो जाता है।

विनियोग—अस्य मन्त्रस्य ऋषिः क्रोधभट्टारक भैरवः, सम्राट् छन्दः, छिन्नमस्ता देवता, ह्रीं बीजं, स्वाहा शक्तिः अभीष्टसिद्धये विनियोगः।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि क्रोधभैरवऋषये नमः। मुखे सम्राट् छन्दसे नमः। हृदि छिन्नमस्ता देवतायै नमः। गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।

कराङ्ग न्यास—आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां नमः। ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः। ऊं सुवज्राय शिखायै स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः। ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा तर्जनीभ्यां नमः। औं अंकुशाय नेत्रत्रयाय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। अः सुरक्षासुरक्षाय अस्त्राय फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। भैरवीतन्त्र के मूलोक्त श्लोक १-९ में भी इसी न्यास का वर्णन है। तब मूल मन्त्र से मस्तक से पैरों तक और पैरों से मस्तक तक तीन बार व्यापक न्यास करे। इसके बाद इस प्रकार ध्यान करे—

जपाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम्। रजःसत्त्वतमोलेखायोनिमण्डलमण्डितम्।।
मध्ये तु तां महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम्। छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम्।।
प्रसारितमुखां भीमां लेलिहानाग्रजिह्विकाम्। पिबन्तीं रौधिरीं धारां निजकण्ठविनिर्गताम्।।
विकीर्णकेशपाशां च नानापुष्पसमन्विताम्। दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम्।।
दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढपदस्थिताम्। अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम्।।
रतिकामोपविष्टां च सदा ध्यायन्ति मन्त्रिणः। सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम्।।
विपरीतरतस्थौ तु ध्यायेद्रतिमनोभवौ। डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगतः।।
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम्। वर्णिनीं लोहितां सौम्यां मुक्तकेशीं दिगम्बराम्।।
कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः। नागयज्ञोपवीताढ्यां ज्वलत्तेजोमयीमिव।।
प्रत्यालीढपदां दिव्यां नानालंकारभूषिताम्। सदा द्वादशवर्षीयामस्थिमालाविभूषिताम्।।
डाकिनीं वामपार्श्वे तु कल्पसूर्यानलोपमाम्। विद्युज्जटां त्रिनयनां दन्तपङ्क्तिबलाकिनीम्।।
दंष्ट्राकरालवदनां पीनोन्नतपयोधराम्। महोदरीं महाघोरां मुक्तकेशीं दिगम्बराम्।।
लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः।।
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम्। करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके मानसोपचार से पूजन करके तारा के समान शङ्ख-स्थापन करे।

प्रचण्डचण्डिकापूजायन्त्रम्

अस्याः पूजायन्त्रम्—

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम्। तन्मध्ये विलिखेद्योनिं द्वारत्रयसमन्वितम्।।१।।
बहिरष्टदलं पद्मं भूबिम्बत्रितयं ततः। कूर्चबीजं लिखेन्मध्ये त्रिकोणे फट्समन्वितम्।।२।।

यद्वा एतद् ध्यानोक्तयन्त्रम्। ततः पीठपूजा—ॐ आधारशक्तये नमः, एवं प्रकृतये०, कूर्माय०, अनन्ताय०, पृथिव्यै०, क्षीरसमुद्राय०, रत्नद्वीपाय०, कल्पवृक्षाय०, तदधः स्वर्णसिंहासनाय०, आनन्दकन्दाय०, संविन्नालाय०, सर्वतत्त्वात्मकपद्माय०, सं सत्त्वाय०, रं रजसे०, तं तमसे०, आं आत्मने०, अं अन्तरात्मने०, पं परमात्मने०, ह्रीं ज्ञानात्मने०, पद्ममध्ये—रतिकामाभ्यां नमः। रतिकामोपरि 'वज्रवैरोचनीये देहि २ एहि २ गृह्ण २ मम सिद्धिं देहि २ मम शत्रून् मारय २ करालिके हुं फट् स्वाहा' इति पीठमन्त्रः। ततः पूर्ववद् ध्यात्वावाहयेत्। यथा—ॐ सर्वसिद्धिवर्णिनीये सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इहावह २'। पुनस्तन्मन्त्रमुच्चार्य, 'इह तिष्ठ २ इह सन्निधेहि २ इह सन्निरुध्यस्व २' इत्यनेनावाह्य 'आंह्रींक्रोंहंसः' इत्यनेन प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा, 'आं खड्गाय स्वाहा हृदयाय नमः' इत्यादिना षडङ्गानि विन्यस्य, यथाशक्ति पूजां कृत्वा बलिं दद्यात्। यथा—वज्रवैरोचनीये देहि २ एहि २ गृह्ण २ इमं बलिं गृह्ण २ मम सिद्धिं देहि २ मम शत्रून् करालिके हुं फट् स्वाहा' इति मन्त्रेण। ततो देव्या दक्षिणे ॐ वर्णिन्यै नमः। वामे ॐ डाकिन्यै नमः। ततो देव्यङ्गे षडङ्गानि संपूज्य, दक्षिणे ॐ शङ्खनिधये नमः। वामे ॐ पद्मनिधये नमः। पूर्वादिदिक्षु लक्ष्मीं लज्जां मायां वाणीं च पूजयेत्। विदिक्षु ब्रह्मविष्णुरुद्रेश्वरान्। मध्ये सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः, इति प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत्। पुष्पाञ्जलिं दत्त्वावरणपूजामारभेत् । ततोऽग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च, आं खड्गाय नमः हृदयाय स्वाहा, इति षडङ्गानि पूजयेत्। अष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ काल्यै स्वाहा। एवं वर्णिन्यै०, डाकिन्यै०, भैरव्यै०, महाभैरव्यै०, इन्द्राक्ष्यै०, पिङ्गाक्ष्यै०, संहारिण्यै स्वाहा। सर्वत्र प्रणवादिस्वाहान्तेन पूजयेत् । यथा—

एकां नामाभिधां कालीं योगिनीं (वर्णिनी) डाकिनीं तथा ।
भैरवीं च महापूर्वां भैरवीं तदनन्तरम् ॥१॥
इन्द्राक्षीं च सपिङ्गाक्षीं ततः संहारकारिणीम् । पूर्वादिके दले पूज्याः शक्तयश्च यथाक्रमम् ॥२॥

प्रणवादिस्वाहान्तेन। लज्जाबीजं समुच्चरन्, पद्ममध्ये हुंहुं फट् नमः। देव्या दक्षिणे सम्राट्छन्दसे नमः। देव्या उत्तरे ॐ सर्ववर्णेभ्यो नमः। पुनर्दक्षिणे ॐ बीजशक्तिभ्यां ममः। पत्राग्रेषु पूर्वादिक्रमेण ब्राह्मी माहेश्वरी कौमारी वैष्णवी वाराही इन्द्राणी चामुण्डा महालक्ष्मीः प्रणवादि नमोन्तेन पूजयेत्। ततश्चतुर्दिक्षु हूं करालाय नमः। हूं विकरालाय नमः। हूं अतिकरालाय नमः। हूं महाकरालाय नमः। यथा—

पूर्वद्वारे करालं च विकरालं च दक्षिणे । पश्चिमेऽतिकरालं च च महाकरालमुत्तरे ॥१॥

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। विसर्जने त्वयं विशेषः, संहारमुद्रां प्रदर्श्याञ्जलावारोप्य वामनासापुटेन योनिमुद्रां दीपकलिकाकारां कृष्णप्रतिपच्चन्द्रकलामिव क्रमेण सूक्ष्मतां गतां चण्डरश्मौ निवेदयेत्। मन्त्रस्तु 'उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्रह्मणा च समुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम्' इति।

भैरवीये—

योनिमुद्रां समारूढां प्रदीपकलिकोज्ज्वलाम् । कृष्णपक्षे विधुमिव क्रमेण क्षीणतां गताम् ॥१॥
इमं मनुं समुच्चार्य चण्डरश्मौ निवेदयेत् ।

इमं मनुं, 'उत्तरे शिखरे' इति। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः, सिद्धविद्यात्वात्।

पूजायन्त्र—पहले त्रिकोण बनावे। उसमें तीन वृत्त बनावे। उसमें पुनः त्रिकोण बनावे, जो तीन द्वारों से युक्त हो। इसके बाहर अष्टदल बनाकर उसके बाहर तीन भूपुर बनावे। मध्य त्रिकोण में हूं फट् लिखे। तब इस प्रकार पीठपूजा करे—ॐ आधार शक्तये नमः, प्रकृतये नमः, कूर्माय नमः, अनन्ताय नमः, पृथिव्यै नमः, क्षीरसमुद्राय नमः, रत्नद्वीपाय नमः, कल्पवृक्षाय नमः। कल्पवृक्ष के नीचे स्वर्णसिंहासनाय नमः, आनन्दकन्दाय नमः, संविन्नालाय नमः, सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नमः, सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः। पद्ममध्य में रतिकामाभ्यां नमः। रति-

क्राम के ऊपर वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा— इस पीठमन्त्र से पूजन करे।

तदनन्तर पूर्ववत् ध्यान करके आवाहन करे—ॐ सर्वसिद्धिवर्णिनीये, सर्वसिद्धिडाकिनीये, वज्रवैरोचनीये इहावह इहावह। पुन: इसी मन्त्र को कहकर 'इह तिष्ठ इह तिष्ठ सन्निधेहि सन्निधेहि इह सन्निरुध्यस्व सन्निरुध्यस्व' इससे आवाहन करके 'आं ह्रीं क्रों हंस:' से प्राणप्रतिष्ठा करके षडङ्ग पूजन से करे आं खड्गाय स्वाहा हृदयाय नम: इत्यादि तदनन्तर यथाशक्ति पूजा करके बलिदान प्रदान करे। वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण इमं बलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा—यह बलि प्रदान करने का मन्त्र है।

तब देवी के दक्षिण भाग में ॐ वर्णिन्यै नम: एवं वाम भाग में ॐ डाकिन्यै नम: से पूजन करे। तब देवी के अङ्ग में षडङ्ग पूजा करके देवी के दाँयें भाग में ॐ शङ्खनिधये नम:, बाँयें भाग में ॐ पद्मनिधये नम: से पूजन कर पूर्वादि दिशाओं में लक्ष्मी लज्जा माया वाणी की पूजा करे। कोणों में—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर की तथा मध्य में सदाशिव- महाप्रेतपद्मासनाय नम: से इन सबके पहले ॐ और अन्त में नम: लगाकर पूजा करे। पुष्पाञ्जलि देकर आवरण पूजा करे। आग्नेय ईशान नैर्ऋत्य वायव्य कोण, मध्य एवं दिशाओं में आं खड्गाय नम: हृदयाय स्वाहा इत्यादि से षडङ्ग: पूजन करे। अष्टपत्र में पूर्वादि क्रम से—ॐ काल्यै स्वाहा। वर्णिन्यै स्वाहा। डाकिन्यै स्वाहा। भैरव्यै स्वाहा। महाभैरव्यै स्वाहा। इन्द्राक्ष्यै स्वाहा। पिङ्गाक्ष्यै स्वाहा। संहारिण्यै स्वाहा से पूजा करे सबों के साथ पहले प्रणव का प्रयोग करे। पद्म मध्य में क्लीं हुं हुं फट् नम: से पूजन करे। देवी के दक्षिण में सम्राट् छन्दसे नम:, उत्तर भाग में ॐ सर्वतर्णेभ्यो नम:। पुन: दक्षिण में ॐ बीजशक्तिभ्यां नम:। पत्राग्रों में पूर्वादि क्रम से ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा, महालक्ष्मी की पूजा सबके आदि में ॐ और अन्त में नम: लगाकर करे। तब पूर्वादि दिशाओं में—हूं करालाय नम:, हूं विकरालाय नम:, हूं अतिकरालाय नम: और हूं महाकरालाय नम: से पूजन करे। कहा भी है कि पूर्व द्वार में कराल, दक्षिण में विकराल, पश्चिम में अतिकराल और उत्तर में महाकराल की पूजा करनी चाहिये। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके पूजा का समापन करे। विसर्जन में यहाँ विशेष यह है कि संहार मुद्रा दिखाकर अञ्जलि बाँधकर वाम नासापुट से योनिमुद्रा दीपकलिकाकार कृष्ण प्रतिपदा के चन्द्रकला के समान क्रमश: सूक्ष्मता को प्राप्त चण्डरश्मि का निवेदन करे। इसका मन्त्र इस प्रकार है—

उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्रह्मणा च समुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम्।।

भैरवी में भी कहा गया है कि योनिमुद्रा पर आरूढ़, दीपशिखा के समान, कृष्ण पक्ष-प्रतिपदा के चन्द्रमा के समान क्रमश: सूक्ष्मता को प्राप्त चण्डरश्मि का उपर्युक्त मन्त्र कहते हुये निवेदन करे।

एक लाख जप से इस मन्त्र का पुरश्चरण होता है; क्योंकि यह सिद्ध विद्या है।

प्रचण्डचण्डिकामन्त्रान्तराणि

मन्त्रान्तरम्—

भुवनेशीं कामबीजं कूर्चबीजं च वाग्भवम्। भुवनेशीं कूर्चबीजं वाग्भवं तदनन्तरम्।।१।।
वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा तदनन्तरम्।

अस्या अङ्गन्यासपूजादिकं सर्वं षोडशीवद्बोद्धव्यम्।

हृल्लेखा मादनं कूर्चं वाग्भवं कूर्चमेव च। अस्त्रान्ता च्छिन्नमस्ताया महाविद्या प्रकीर्तिता।।१।।
अस्या हि सदृशी विद्या जगत्स्वपि न विद्यते। षड्वर्णोऽयं मनुः साक्षान्मोक्षदो नात्र संशयः।।२।।
अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने।

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिर: कर्त्रिकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिवन्तीं मुदा।
नागाबद्धशिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां
रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम्।।३।।

दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्रीं तथा खर्परं
हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नापि सा वर्णिनी।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्ती मुदा
नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः ॥४॥
वामे कृष्णतनुं तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं
प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी
शक्तिः सापि सदा परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ॥५॥

इति ध्यानम्। अस्याः पूजादिकं सर्वं षोडशीवत् कार्यम्।

तारं लज्जाद्वयं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा। ध्यानपूजादिकं सर्वं षोडशीवदुपाचरेत् ॥६॥
वियत् सूत्रयुतं बिन्दुनादयुक्तं ततः प्रिये। एकाक्षरी महाविद्या त्रैलोक्यमोक्षकारिणी ॥७॥

सूत्रं दीर्घ ऊकारः।

ठठान्तैषा महाविद्या त्रैलोक्यमोहकारिणी। ताराद्यन्ता भवत्येषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥८॥
वज्रवैरोचनीये च कूर्चयुग्मं सफट् ठठः। ताराद्येषा महाविद्या सर्वतेजोपहारिणी ॥९॥
वाग्भवाद्या यदा विद्या वागीशत्वप्रदायिनी। त्रैलोक्याकर्षिणी विद्या चतुर्वर्गफलप्रदा ॥१०॥
ध्यानपूजादिकं सर्वं षोडशीवत् समाचरेत्। इति।

मन्त्रान्तर—ह्रीं क्लीं हूं ऐं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा। इसका अंगन्यास-पूजादि षोडशी के समान होता है।

अन्य मन्त्र—ह्रीं क्लीं हूं ऐं हूं फट्। इसको महाविद्या कहते हैं; संसार में इसके समान अन्य कोई विद्या नहीं है। यह षडक्षर मन्त्र साक्षात् मोक्षप्रद है। इसका ध्यान इस प्रकार है—

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिवन्तीं मुदा।
नागाबद्धशिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जपासन्निभाम्।।
दक्षे चातिसिता विमुक्तचिकुरा कर्त्रीं तथा खर्परं हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नापि सा वर्णिनी।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्ती मुदा नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः।।
वामे कृष्णतनुं तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी शक्तिः सापि सदा परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी।।

इसके पूजादि सभी कर्म षोडशी के समान होते हैं।

अन्य मन्त्र—ॐ ह्रीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा। इसके भी ध्यान-पूजादि षोडशी के समान होते हैं।

अन्य मन्त्र—'हूं' यह एकाक्षरी महाविद्या तीनों लोकों में क्षोभ उत्पन्न करने वाली है।

अन्य मन्त्र—हूं स्वाहा यह महाविद्या तीनों लोकों को मोहित करने वाली है।

ॐ हूं ॐ—यह मन्त्र चतुर्वर्ग फलप्रदायक है।

ॐ वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा। यह महाविद्या सबों का तेज हरण करने वाली है।

ऐं वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा—यह विद्या वागीशत प्रदान करने वाली, त्रैलोक्य को आकर्षित करने वाली चतुर्वर्ग फलप्रदायक है। इन सबों का ध्यान एवं पूजन षोडशी के समान होते हैं।

षोडशीविद्याप्रशंसा

इदानीं षोडशीविद्याप्रशंसामाह—

तथा सर्वप्रयत्नेन सर्वोपास्या च षोडशी। लक्ष्मीबीजादिका सैव सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ॥१॥
लज्जाद्या स्वर्गभूनागयोषिदाकर्षिणी परा। कूर्चाद्या सर्वजन्तूनां महापातकनाशिनी ॥२॥
वाग्भवाद्या यदा देवी वागीशत्वप्रदायिनी। एषा तु षोडशीविद्या वेद्या सप्तदशाक्षरी ॥३॥
श्रीबीजपुटिता सा च लक्ष्मीवृद्धिकरी सदा। लज्जया पुटिता विद्या त्रैलोक्याकर्षिणी परा ॥४॥
कूर्चेन पुटिता सर्वपापिनां पापहारिणी। वाग्बीजपुटिता चैषा कवित्वादिप्रदायिनी ॥५॥
चतुर्विधेति विद्यैषा प्रिये सप्तदशाक्षरी। ताराद्या षोडशी चान्या भवेत् सप्तदशाक्षरी ॥६॥
एषा विद्या महाविद्या भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी। कमला भुवनेशानी कूर्चबीजं सरस्वती ॥७॥
वज्रवैरोचनीये च पूर्वबीजानि चोच्चरेत्। फट् स्वाहा च महाविद्या वसुचन्द्राक्षरी परा ॥८॥
ताराद्यैकोनविंशार्णा ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी। एते विद्योत्तमे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदे शुभे ॥९॥
लक्ष्म्यादिपुटिता पूर्वा रन्ध्रचन्द्राक्षरी भवेत्। चतुर्धा च महाविद्या चतुर्वर्गफलप्रदा ॥१०॥
प्रणवाद्या यदा चैषा भोगमोक्षकरी सदा। विद्यान्तरं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ॥११॥
हृल्लेखा कूर्चवाग्बीजवज्रवैरोचनीये हुम्। अस्त्रं स्वाहा महाविद्या चतुर्दशाक्षरी मता ॥१२॥
सर्वैश्वर्यप्रदा चैषा सर्वमोहनकारिणी। भुवनेशी त्रितत्त्वं च वाग्बीजं प्रणवं ततः ॥१३॥
वज्रवैरोचनीये च फट् स्वाहा च ततः परा। चतुर्दशाक्षरी चैषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥१४॥
एषा विद्या महादेवि जन्ममृत्युविनाशिनी। रमा कामस्तथा लज्जा वाग्भवं वज्रवैपदम् ॥१५॥
रोचनीये लज्जाद्वन्द्वमस्त्रं स्वाहासमन्वितम्। इयं सा षोडशी प्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ॥१६॥
कथिताः सकलाः विद्याःसारात्सारतराः पराः। आसां ऋषिर्भैरवोऽहं नाम्ना च क्रोधभूपतिः ॥१७॥
सम्राट् छन्दो देवता च च्छिन्नमस्ता प्रकीर्तिता। षड्दीर्घभाक्स्वरेणैव प्रणवाद्येन सुन्दरि ॥१८॥
खड्गाद्येन ठठान्तानि षडङ्गानि प्रकल्पयेत्। नारिदोषादिकं चासां ताः सुसिद्धाः सुरासुरैः ॥१९॥
सकलेषु च वर्णेषु सकलेष्वाश्रमेषु च। अन्तिमेषु च वर्णेषु भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी ॥२०॥
प्रणवाद्या च या विद्या शूद्रादौ न समीरिता। अस्यां चैव विशेषोऽयं योषित् चेत् समुपासयेत् ॥२१॥
डाकिनी सा भवत्येव डाकिनीभिः प्रजायते। पतिहीना पुत्रहीना यथा स्यात् सिद्धयोगिनी ॥२२॥
इति ते कथितं तत्त्वं रहस्यमखिलं प्रिये। अतिस्नेहरतङ्गेण भक्त्या दासोऽस्मि ते प्रिये ॥२३॥ इति।

एतासां ध्यानपूजादिकं सर्वं षोडशीवद् बोद्धव्यम्। इति च्छिन्नमस्ताप्रकरणम्।

षोडशी विद्या की प्रशंसा—सभी प्रयत्नों से सबों को षोडशी की उपासना करनी चाहिये। श्रीं से प्रारम्भ होने वाली यह विद्या सभी ऐश्वर्यो को देने वाली है। ह्रीं से आरम्भ होने वाली यह विद्या स्वर्ग, पृथ्वी एवं नागनारियों की आकर्षित करने वाली है। हूं से आरम्भ होने वाली विद्या सभी जन्तुओं के पापों की विनाशिका है एवं ऐं से प्रारम्भ होने वाली विद्या वागीशत्व-प्रदायिनी है। श्रीं से पुटित सप्तदशाक्षरी विद्या लक्ष्मी की वृद्धि करने वाली है। ह्रीं से पुटित सप्तदशाक्षरी विद्या त्रैलोक्याकर्षिणी है। हूं से पुटित विद्या सभी पापियों के पापों का नाश करती है। ऐं से पुटित विद्या कवित्व-प्रदायिनी है। इस प्रकार ये चार सप्तदशाक्षरी विद्यायें होती हैं। ॐ से प्रारम्भ होने वाली अन्य सप्तदशाक्षरी महाविद्या भोग-मोक्ष-प्रदायिनी है। श्रीं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूं ऐं फट् स्वाहा—यह अट्ठारह अक्षरों की परा महाविद्या है। ॐ श्रीं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूं ऐं फट् स्वाहा—उन्नीस अक्षरों की विद्या ब्रह्मस्वरूपिणी है। ये सभी उत्तम विद्यायें भोग-मोक्ष देने वाली हैं।

१. श्रीं वज्रवैरोचनीये स्वाहा, २. ह्रीं वज्रवैरोचनीये स्वाहा, ३. हूं वज्रवैरोचनीये स्वाहा, ४. ऐं वज्रवैरोचनीये स्वाहा,

५. ॐ वज्रवैरोचनीय स्वाहा। इनमें से प्रथमत: पठित चार महाविद्यायें चतुवर्ग-फलप्रदा हैं एवं पाँचवीं विद्या भोग एवं मोक्ष प्रदान करने वाली है।

ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा—यह चतुर्दशाक्षरी महाविद्या सभी ऐश्वर्यों को देने वाली एवं सबों को मोहित करने वाली है।

ह्रीं हूं ऐं ॐ वज्रवैरोचनीये फट् स्वाहा—यह चतुर्दशाक्षरी महाविद्या चतुर्वर्ग फलप्रदायिनी है। यह जन्म-मृत्यु-विनाशिनी होने के साथ-साथ मोक्षप्रदा भी है।

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा—यह षोडशी महाविद्या सर्वकामफलप्रदा है। सारों के सार इन सभी विद्याओं के ऋषि क्रोधभट्टारक भैरव हैं। इसके सम्राट् छन्द और छिन्नमस्ता देवता हैं।

करन्यास और षडङ्ग न्यास—ॐ के बाद छ: दीर्घ स्वरों को लगा कर इनका कर एवं षडङ्ग न्यास किया जाता है। जैसे—ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा, ॐ आं सुखड्गाय कनिष्ठाभ्यां स्वाहा इत्यादि। इसमें न्यास कनिष्ठा से शुरु होता है। इनमें अरि दोषादि विचारणीय नहीं हैं। ये सभी सुरासुरों के लिये सुसिद्ध हैं। सभी वर्णाश्रमों एवं शूद्रों को भी ये भोग-मोक्ष देने वाली हैं। शूद्रों को केवल प्रणवाद्य विद्या में अधिकार नहीं है। इसमें विशेषता यह है कि इनकी उपासना यदि नारियाँ करती हैं तो वे डाकिनी हो जाती हैं और डाकिनी के समान ही पतिहीना एवं पुत्रहीना होकर सिद्ध योगिनी हो जाती हैं। इन सबों के ध्यान-पूजनादि षोडशी के समान होते हैं।

धूमावतीप्रयोग:

अथ धूमावतीप्रकरणम्। तत्र फेत्कारिणीतन्त्रे—

धूमावतीप्रयोगोऽयमधुना कथ्यते मया। दान्तावर्घीशबिन्द्वन्तौ बीजे धूमावती द्विठः ॥१॥
धूमावतीमनुः प्रोक्तः शत्रुनिग्रहकारकः। पिप्पलादौ मुनिश्छन्दो निचृज्ज्येष्टा च देवता ॥२॥
चतुर्थेन च वर्णेन बिन्दुनादयुतेन च। षड्दीर्घजातियुक्तेन कुर्यादङ्गानि मन्त्रवित् ॥३॥

दान्तौ, धकारद्वयं, अर्घीशबिन्द्वन्तौ पृथगूकारसंयुक्तौ बिन्दुयुक्तौ च धूमावती स्वरूपं, ठद्वयं स्वाहाकारः। धां हृदयाय नमः। धीं शिरसे स्वाहा, इत्यादिकरषडङ्गन्यासः। तथा ध्यानम्—

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा। विमुक्तकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा ॥४॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा। शूर्पहस्ता विरूपाक्षी ध्वजहस्ता वरान्विता ॥५॥
प्रवृद्धलोमा तु भृशं कुटिला चाकुलेक्षणा। क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं सदा कलहतत्परा ॥६॥
एवंविधां सदा ध्यायेत्ततः कर्म समाचरेत्। पूर्वोक्ते पूजयेत् पीठे जयादिनवशक्तिके ॥७॥
केसरेषु षडङ्गानि पूजयेत् प्रोक्तवर्त्मना। अष्टपत्रेषु संपूज्याः शक्तयोऽष्टौ क्रमेण हि ॥८॥
क्षुधा तृष्णा रतिर्निद्रा निर्ऋतिर्दुर्गती रुषा। अक्षमेति च भूबिम्बे इन्द्राद्या हेतयो बहिः ॥९॥ इति।

धूमावती प्रकरण—फेत्कारिणी तन्त्र में कहा गया है कि अब मैं धूमावती प्रयोग को कहता हूँ। धूं धूमावती स्वाहा—यह सप्ताक्षर मन्त्र शत्रु-निग्रहकारक है। इस मन्त्र के ऋषि पिप्पलाद, छन्द निचृद एवं ज्येष्ठा धूमावती देवता हैं। षडङ्ग न्यास धां हृदयाय नम: धीं शिरसे स्वाहा इत्यादि के रूप में होता है। इसी प्रकार करन्यास भी किया जाता है। ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

विवर्णा चञ्चला कृष्णा दीर्घा च मलिनाम्बरा। विमुक्तकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा।।
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा। शूर्पहस्ता विरूपाक्षी ध्वजहस्ता वरान्विता।।
प्रवृद्धलोमा तु भृशं कुटिला चाकुलेक्षणा। क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं सदा कलहतत्परा।।

इसी प्रकार का ध्यान करके सभी कर्मों को करे। पूर्वोक्त पीठ पूजा जपादि नव शक्तियों के साथ करे। केसर में षडङ्ग पूजा करे। अष्टपत्र में क्रम से आठों शक्तियाँ पूज्य हैं; जैसे—क्षुधा, तृष्णा, रति, निद्रा, निर्ऋति, दुर्गति, रुषा और अक्षमा।

भूपुर में इन्द्रादि दिक्पालों और उनके आयुध पूज्य हैं।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा शिरसि पिप्पलादाय ऋषये नम:। मुखे निचृच्छन्दसे नम:। हृदये धूमावत्यै देवतायै नम:। इति विन्यस्य यथाविधिविनियोगमुक्त्वा, धां हृदयाय नम:। धीं शिरसे स्वाहा। धूं शिखायै वषट्। धैं कवचाय हुं। धौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ध: अस्त्राय फट्, इति विन्यस्य ध्यानादिमानसपूजान्ते कुङ्कुमादिना अष्टदलकमलं विरच्य, तद्बहिर्वृत्तं तद्बहिश्चतुरस्रं चतुर्द्वारयुक्तं लिखेत्, इति पूजायन्त्रं निर्माय पुरत: संस्थाप्याभ्यर्च्य अर्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपरतत्त्वान्तं भुवनेश्वरीपीठमभ्यर्च्यासनादिपुष्पोपचारान्ते केसरेष्वग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च षडङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु देव्यग्रादिप्रादक्षिण्येन क्षुधायै नम:। तृष्णायै०, अरत्यै०, निद्रायै०, निर्ऋत्यै०, दुर्गत्यै०, रुषायै०, अक्षमायै नम:। इति संपूज्य, चतुरस्रे लोकपालान् तद्बहिर्वज्राद्यायुधानि च संपूज्य धूपदीपादिकं सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति।

प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—शिरसि पिप्पलादाय ऋषये नम:। मुखे निचृच्छन्दसे नम:। हृदये धूमावती देवतायै नम:। यथा विधि विनियोग करके षडङ्ग न्यास करे—धां हृदयाय नम:, धीं शिरसे स्वाहा, धूं शिखायै वषट्। धैं कवचाय हुं। धौं नेत्रत्रयाय वौषाट्। ध: अस्त्राय फट्। फिर ध्यान करके मानसोपचार पूजा करे। तब कुङ्कुमादि से अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर वृत्त, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र से पूजा यन्त्र बनाकर अपने आगे स्थापित करके अर्चन करे। अर्घ्यादि स्थापन से आत्मपूजा तक करे। मण्डूकादि परतत्त्वान्त तक भुवनेश्वरी पीठ में आसन से पुष्पोपचार के बाद केसर में अग्नीशासुरवायव्य दिशाओं में षडङ्गों की पूजा करे। अष्टदल में देवी के आगे से प्रदक्षिणक्रम से इनकी पूजा करे—अष्टदल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से इनकी पूजा करे—क्षुधायै नम:। तृष्णायै नम:, अरत्यै नम:, निद्रायै नम:, निर्ऋत्यै नम:, दुर्गत्यै नम:, रुषायै नम:, अक्षमायै नम:। चतुरस्र में लोकपालों और उसके बाहर उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करके धूप-दीपादि समर्पित कर पूजा का समापन करे।

तथा—

जपेत् कृष्णचतुर्दश्यां पुरश्चरणसिद्धये। उपवासपरो मन्त्री शून्यागारे दिवानिशम् ॥१०॥

अयं जप: पूर्वसेवार्थं, लक्षजप: पुरश्चरणम्।

श्मशाने विपिने चैव जपेल्लक्षं तु वाग्यत:। सोष्णीष: सार्द्रवासाश्च पुरश्चरणकर्मणि ॥११॥

अत्र होमोऽपि घृतेनैव तर्पणादिकं च प्राग्वदिति।

आख्यापर्यन्तमालिख्य तस्मिन् स्थाप्य शिवं जपेत्। अवष्टभ्य शिवं शत्रुनाम्नाथ प्रजपेन्मनुम् ॥१२॥
सहस्रादूर्ध्वत: शत्रुर्ज्वरेण परिगृह्यते। पञ्चगव्येन शान्ति: स्याज्ज्वरस्य पयसापि वा ॥१३॥
मन्त्राद्यक्षरमालिख्य शत्रुनाम तत: परम्। द्वितीयान्तं मनो: शत्रोर्नामैवं मनुना लिखेत् ॥१४॥
रणेऽयुतजपाच्छत्रोर्निश्चितं मरणं भवेत्। कृत्वा यन्त्रे रिपोराख्यामरण्ये यामिनीदले ॥१५॥
उत्सादो जायते शत्रोर्मनोरयुतजापत:। दग्ध्वा काकं श्मशानाग्नौ तद्भस्मादाय मन्त्रितम् ॥१६॥
विरोधिनाम्नाष्टाशासु सद्य उच्चाटनं रिपो:। श्मशानभस्मना कृत्वा शिवं तस्योपरि न्यसेत् ॥१७॥
विरोधिनामसंरुद्धं कृष्णपक्षे समर्चयेत्। महिषीक्षीरधूपं च दद्यात् शत्रुविपत्करम् ॥१८॥
महिषीरूपमासाद्य स्वप्ने शत्रुं निपातयेत्। मन्त्रेणानेन निखनेत् तद्भस्म रिपुमन्दिरे ॥१९॥
शत्रुमुच्चाटयेत् तूर्णं नात्र कार्या विचारणा। न्यस्य पाणितले शत्रोरात्मानं चितिभस्मना ॥२०॥
वह्नावधोमुखं रुद्ध्वा स्थापयेदयुतं जपन्। धूमावतीमनुं मन्त्री शत्रुं यमपुरं नयेत् ॥२१॥
प्राग्वत् करतले नामार्णद्वयोर्ध्वे रिपोर्न्यसेत्। जलस्थ: पूजेन्मन्त्री हुंकारान्नाशयेदरीन् ॥२२॥
श्मशानभस्मना लिङ्गं कृत्वा पुष्पादिनार्चयेत्। भगवन्निति संभाष्य मनसा कर्म चिन्तयन् ॥२३॥

निम्बकाकच्छदावेकीकृत्य चाष्टशतं जपेत्। दद्याद्धूपं साध्यनाम्ना सद्यो विद्वेषयेदरीन्॥२४॥
(चिताकाष्ठानले क्षीरहोमाच्छान्तिः प्रजायते। रजोधूमप्रधानेन गृध्ररूपेण कालिका॥२५॥
मारयत्यरिमागत्य शान्तिर्निर्माल्यधूपतः।) वराहबालधूपेन हन्यात् सकूररूपिणी॥२६॥
अश्वत्थपत्रधूपेन शान्तिर्भवति नान्यथा। शान्तिः सर्वाभिचारस्य पञ्चगव्येन जायते॥२७॥
क्षीरेण वापि देवेशि मधुरत्रितयेन वा। कीले क्ष्वेडतरोर्देवि शत्रोर्नाम समालिखेत्॥२८॥
विदर्भ्य मूलमन्त्रेण साध्यनामाक्षराणि वै। जप्त्वा पदद्वये मन्त्री खनेदुच्चाटनं रिपोः॥२९॥
(कीले क्षीरतरोर्विदर्भ्य विलिखेन्मन्त्रेण नामाक्षरं जप्त्वालिख्य पदद्वयेन निखनेदुच्चाटनं विद्विषाम्।
तत्पादद्वयधूलिकीर्णहविषा दत्त्वा द्विजेभ्यो बलिं तज्जप्त्वा चितिभस्मकीर्णितमरेर्गेहे तदुच्चाटनम्॥)

कृष्ण चतुर्दशी में पुरश्चरण की सिद्धि के लिये उपवास रहकर शून्य गृह में रात-दिन जप करे। एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। श्मशान और जंगल में एक लाख वाचिक जप करे। शिर में पगड़ी बाँधकर भीगे कपड़ों में पुरश्चरण कर्म करे। घी से हवन करे। पूर्ववत् तर्पणादि करे। नाम तक लिखकर उसमें खूँटा स्थापित करके जप करे। खम्भे का सहारा लेकर शत्रुनाम के साथ मन्त्र का जप करे। एक हजार से अधिक जप होने पर शत्रु को बुखार लग जाता है। पञ्चगव्य से उस ज्वर की शान्ति होती है अथवा पायस से भी बुखार छूट जाता है। मन्त्र के पहले अक्षर धूं के साथ शत्रुनाम लिखे। दूसरे अक्षर के बाद शत्रु नाम लिखकर मन्त्र लिखे। इसका दश हजार जप करके युद्ध में जाय तो शत्रु मारा जाता है। यन्त्र बनाकर अष्टदल के दक्षिण दिशा में बेलपत्र पर शत्रु का नाम लिखे। दश हजार जप करने से शत्रु का उच्चाटन होता है। कौए को श्मशान की अग्नि में जलाकर भस्म लेकर उसे मन्त्रित करे। उसपर विरोधी के नामों को कहने से आठों दिशाओं से उसका तुरन्त उच्चाटन होता है। श्मशानभस्म लेकर उस पर खूँटा रखे। विरोधी के नाम को संरुद्ध करके कृष्ण पक्ष में पूजा करे। भैंस का दूध और धूप देने से शत्रु को विपत्तियाँ घेर लेती हैं। स्वप्न में भैंस का रूप घर कर शत्रु को मार दे। इस मन्त्र से उस भस्म को शत्रु के घर में गाड़ दे तो शत्रु का उच्चाटन तुरन्त होता है। अपनी हथेली पर शत्रु की आत्मा को चिति भस्म से लिखकर उसे अधोमुख करके आग्नि को रुद्ध करे। दश हजार जप धूमावती मन्त्र का करे तो मन्त्री का शत्रु यमलोक चला जाता है। पूर्ववत् उस पर शत्रु के नाम वर्णों को लिखे। मन्त्री जल में पूजा करे तो हुंकार से ही वह शत्रुओं को नष्टकर देता है। श्मशान भस्म से लिङ्ग बनाकर फूल आदि से पूजा करे। 'भगवन् कहकर मन में कर्म का चिन्तन करे। नीम और कौए के पंख को मिलाकर आठ सौ जप करे। साध्य के नाम से धूप देवे तो शत्रुओं में तुरन्त विद्वेष हो जाता है। चिताकाष्ठ की अग्नि में दूध से हवन करने पर इसकी शान्ति होती है। धूल और धुआँ से गृद्ध रूप काली की प्रतिमा बनावे तो वह कालिका शत्रुओं को मार देती है। निर्माल्य के धूप से इसकी शान्ति होती है। सूकर के बाल के धूप से सूकररूपिणी देवी शत्रु को मार देती है, पीपलपत्र के धूप से इसकी शान्ति होती है, अन्यथा नहीं। सभी अभिचारों की शान्ति पञ्चगव्य से होती है। दूध से अथवा त्रिमधुर से क्ष्वेड वृक्ष के कील में शत्रु का नाम लिखे। मूल मन्त्र से विदर्भित करके साध्य नाम के अक्षरों को लिखे। दो पदों से मन्त्रित करके उसे भूमि में गाड़ दे तो शत्रु का उच्चाटन हो जाता है। दूध वाले वृक्ष जैसे पीपल वट आदि के कील में शत्रु नामाक्षरों को मन्त्र से विदर्भित करके लिखे। मन्त्र के दो पदों को लिखकर जप करे। उसे गाड़ने से विरोधियों का उच्चाटन होता है। मन्त्र के उन पदों से धूल को मन्त्रित करके खीर पर छिड़क कर द्विजों को बलि प्रदान करे। उसे मन्त्रित करके शत्रु के घर में बिखेर देने से शत्रु का उच्चाटन होता है।

ज्येष्ठागारे श्मशाने वा निर्माल्ये पादगोचरे। गर्दभावासभूमौ वा प्रेतस्थाने चतुष्पथे॥३०॥
ऊषरे मेहनोद्भूमौ पुष्पितावासके स्वयम्। आनीय शर्करा मन्त्री दिग्वासा दक्षिणामुखः॥३१॥
श्मशानलोष्टे निक्षिप्य चिताग्नौ भर्जयेत् तथा। चूर्णं तत्तु जपेल्लक्षं निक्षिपेच्छत्रुवेश्मनि॥३२॥
सेनामध्ये तु सर्वेषां क्षणादुच्चाटनं भवेत्। गर्ते पिपीलिकानां तु पादधूलियुतान् कणान्॥३३॥
सघृतान् सप्तवारं तु जुहुयान्मन्त्रविन्निशि। भ्रमते काकवत् सर्वां महीमाचरणादिषु॥३४॥

कृत्वा प्रतिकृतिं शत्रोर्जन्मवृक्षेण मन्त्रवित्। कृतप्रतिष्ठितप्राणा विद्ध्वा मर्मसु कण्टकैः ॥३५॥
आयसैर्मन्त्रमावर्त्य वक्ष्यमाणैः प्रवेष्टयेत्। पूर्वोक्तशर्कराभिस्तु जप्त्वा नित्यं प्रतापयेत् ॥३६॥
सप्तरात्रेण तस्याशु रिपोरुच्चाटनं भवेत्। मुखे च शिल्यया लेख्यौ सारमेयवराहयोः ॥३७॥
मन्त्रेण दर्भितौ साध्यौ भौमवारे द्वयाद्दिवा। धत्तूररससंयुक्तचिताङ्गारेण मन्त्रिणा ॥३८॥
वृषस्य पृष्ठतो बद्ध्वा केशपाशेन तं जपेत्। श्मशाने शत्रुमार्गे वा तद्गृहे निखनेन्निशि ॥३९॥
विद्वेषणं भवेत् सद्यो गौरीशङ्करयोरपि। अश्वत्थत्वचि मन्त्रार्णैर्दर्भितं साध्यमालिखेत् ॥४०॥
अन्यद्विषतरोस्तद्वज्जप्त्वा उद्धृतया न्यसेत्। पूर्वोक्तकण्टकैर्विद्ध्वा जपेत् स्पृष्ट्वा शतं शतम् ॥४१॥
विद्विष्टौ भवतस्तौ तु नाम्नामपि च तत्क्षणात्।

वर्णांस्तान् विलिखेद् विदर्भ्यमभितः कोणेषु मन्त्राक्षरैः
संरुद्धान् परितः प्रभञ्जनगृहे मध्ये च साध्यं पृथक्।
अङ्गारैः कनकोत्तरैरपि पदैर्मन्त्रं जपंस्ताडयेत्
कार्पासेन रणे कुजार्कदिवसे भूलोकविद्वेष्यताम् ॥४२॥

आपाद्य पूर्वमूर्तिं च शत्रोरालेख्य शोषयेत्। तापयेन्निशि तां जप्त्वा त्र्यह्निरूपे बलिं पचेत् ॥४३॥
एवं सप्तदिनं रात्रावाजप्यालिप्य शोधयेत्। व्योषाग्निलशुनोन्मत्तहिङ्गुसिद्धार्थसूरणैः ॥४४॥
पिण्डैर्लवणसंभूतैरुन्मत्तद्रवसंयुतैः। पेषयित्वा तेन सम्यग् लिखेन्मन्त्री मनुं जपेत् ॥४५॥
बलिमध्ये खनेत् कीलं शुक्लरूपं तथोपरि। वह्निं प्रज्वाल्य तत्काष्ठैर्द्रव्ययुक्तैर्हुनेज्जपेत् ॥४६॥
निक्षिप्य प्रतिमां तत्र ज्वरे नित्यं जपेन्मनुम्। सप्तरात्रं ततः कुण्डे ऽत्यागारेऽथवा हुनेत् ॥४७॥
त्रिकोणशूलदीप्ताग्रमेरकायतनान्वितम्। तत्रापि निखनेत् कीलं वह्निं प्रज्वाल्य पूर्ववत् ॥४८॥
ततः प्रतिकृतिं मन्त्री वह्नेरुपरि लम्बयेत्। उक्तद्रव्येण संलिप्तामूर्ध्वपादामधोमुखीम् ॥४९॥
रक्तद्रव्यैः समाराध्य प्रज्वाल्य विषवृक्षजैः। इन्धनैः प्रतिमां यावत् समित्पुञ्जनिभां हुनेत् ॥५०॥
अनिलादिभिरामृत्योर्वशं याति न संशयः। इति।

ज्येष्ठागार से, श्मशान से या गर्दभ वासभूमि से धू लेकर या प्रेतस्थान से, चौराहे से या ऊषर भूमि में वर्षा से रजस्वला भूमि की मिट्टी लेकर शक्कर मिलाकर दक्षिणमुख नंगे होकर श्मशान भूमि में रखकर चिता को अग्नि में उसे भूँजे। चीटियों के बिल से पादधूलि लेकर उसमें घी मिलाकर रात में सात बार हवन करे तो शत्रु कौए के समान घूमने लगता है। शत्रु नक्षत्रवृक्ष से शत्रु की प्रतिकृति बनाकर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करे। उसके मर्म को काँटे से विद्ध करे। लोहे को मन्त्रित करके वक्ष्यमाण रीति से प्रविष्ट करे। पूर्वोक्त शक्कर को भी मन्त्रित करके नित्य तपावे। इससे सात रातों में शत्रु का उच्चाटन होता है। कुत्ते या सूअर के मुख में नीचले चौखट की लकड़ी से साध्य नाम को मन्त्र से विदर्भित करके मङ्गलवार में लिखे। चिता के कोयले में धत्तूररस मिलाकर बैल के पीठ पर केशपाश से बाँधे और मन्त्र का जप करे। श्मशान में, शत्रुमार्ग में या उसके घर में रात में गाड़ दे तो गौरी-शङ्कर के समान होने पर भी परस्पर विद्वेषण होता है। पीपल की छाल पर मन्त्रवर्णों से विदर्भित साध्य नाम लिखे। अन्य विषवृक्ष के नीचे उसका जप करे। उसे लेकर काँटे से विद्ध करे। उसे स्पर्श करके एक सौ जप करे, तब शत्रुओं में विद्वेष हो जाता है। शत्रु के नामाक्षरों को मन्त्राक्षरों से विदर्भित करके कोणों में लिखे। उसे वायव्य कोण में संरुद्ध करे। मध्य में मन्त्र जप करते हुए अंगारों से कपास में मंगल या रविवार को ताड़ित करे तो उससे सम्पूर्ण पृथ्वी में विद्वेषण हो जाता है।

पूर्व मूर्ति में शिर से पैरों तक यन्त्र को लिखकर सूखाये। रात में उसे मन्त्र जपते हुए आग में बलि रूप में पकावे। इस प्रकार सात दिन और सात रात में जप करके लेप लगावे। व्योषाग्नि, लहसुन, धतूर, हिंग, सरसो, सूरण, नमकपिण्ड में धत्तूर रस मिलाकर पीसे। उस घोल से लिखे मन्त्र का जप करे और बलि में कील गाड़े। उस पर उस लकड़ी से आग जलाकर

द्रव्यों से हवन मन्त्र जपते हुए करे। प्रतिमा को निक्षिप्त करके ज्वर में सात रात तक नित्य जप करे। तब कुण्ड में हवन करे। त्रिकोण शूल, दीप्ताग्र, आयतन में कील गाड़कर उस पर पूर्ववत् आग जलावे। प्रतिकृति को आग पर उलटा लटकावे। लाल द्रव्य से पूजा करके विषवृक्ष की लकड़ी से आग जलावे और उसमें प्रतिमा का हवन करे। इससे वायु आदि मृत्युपर्यन्त मनुष्य के वश में होते हैं।

भद्रकालीमन्त्रः

अथ भद्रकालीमन्त्राः। फेत्कारिणीतन्त्रे—

प्रासादबीजमृद्धृत्य कालीति पदमुच्चरेत्। महाकालीपदं चोक्त्वा किणियुग्ममतः परम् ॥१॥
अस्त्रमग्निप्रियान्तोऽयं भद्रकालीमहामनुः। पदैः षड्भिः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥२॥

प्रासादबीजं वक्ष्यते। अन्यत्पदत्रयं स्वरूपम्। युग्ममिति द्विरुच्चरेदित्यर्थः। अस्त्रं फट्। अग्निप्रिया स्वाहाकारः। हौं हृत्, कालि शिरः, महाकालि शिखा, किणिकिणि कवचम्, फट् नेत्रं, स्वाहा अस्त्रम्।

ध्यातव्येयं महादेवी भद्रकाली भयापहा। आराध्य प्रजपेन्नित्यमष्टाधिकशतेन तु ॥३॥

क्षुत्क्षामा कोटराक्षी मषिमलिनमुखी मुक्तकेशी हसन्ती
नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रासमेकं करोमि।
हस्ताभ्यां धारयन्ती ज्वलदलनशिखासन्निभं पाशमुग्रं
दन्तैर्जम्बूफलाभैः परिहरतु भयं पातु मां भद्रकाली ॥४॥

आराध्य प्रजपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम्। रिष्टमाला विधातव्या शतेनाष्टोत्तरेण च ॥५॥
प्रयोगश्चात्र कर्तव्यः सामान्यपटलोदितः। अशेषं कालिकातन्त्रे कथितं कार्यसिद्धये ॥६॥

सामान्यपटलोदितः फेत्कारिणीतन्त्रे सामान्यपटले प्रोक्तः। कालिकातन्त्रे कथितं श्मशानकालिकातन्त्रे कथितम्।

इयं देवी महादेवी शत्रुनिग्रहकारिणी। यथेष्टचेष्टया चिन्त्या धर्मकामार्थसिद्धिदा ॥७॥ इति।

भद्रकाली मन्त्र—फेत्कारिणी तन्त्र के मूलोक्त—श्लोक १-२ का उद्धार करने पर भद्रकाली का मन्त्र बनता है—हौं कालि महाकालि किणि किणि फट् स्वाहा। इसमें चौदह अक्षर होते हैं। इसका षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—हौं हृदयाय नमः। कालि शिरसे स्वाहा। महाकालि शिखायै वषट्। किणि किणि कवचाय हुम्। फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

भय को दूर करने वाली महादेवी भद्रकाली का ध्यान करके पूजा करे और नित्य एक सौ आठ बार मन्त्र का जप करे। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

क्षुत्क्षामा कोटराक्षी मषिमलिनमुखी मुक्तकेशी हसन्ती नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रासमेकं करोमि।
हस्ताभ्यां धारयन्ती ज्वलदलनशिखासन्निभं पाशमुग्रं दन्तैर्जम्बूफलाभैः परिहरतु भयं पातु मां भद्रकाली।।

आराधना करके नित्य एक सौ आठ जप करे। एक सौ आठ मनकों की रिष्ट माला बनावे। सामान्य पटल में कथित प्रयोग करे। कार्यसिद्धि के लिये पूर्ण विवेचन कालिका तन्त्र में किया गया है। यह महादेवी शत्रुओं की निग्रह करने वाली है। यथेष्ट चेष्टा से चिन्तन करने पर धर्म-अर्थ-काम की यह सिद्धि देती है।

महाकालीमन्त्रस्तद्भेदश्च

फेत्कारिणीतन्त्रे—

अथातः संप्रवक्ष्यामि महाकालीमहामनुम्। यस्य विज्ञानमात्रेण नासाध्यं विद्यते भुवि ॥१॥
प्रलयाग्नी रक्तगतावूर्ध्वकेशीसमन्वितौ। नादबिन्दुसमायुक्तावेवं क्रोधिद्वयं पुनः ॥२॥
पशुं गृहाणपदतो वर्मास्त्रानलवल्लभा। चतुर्दशाक्षरी प्रोक्ता महाकाली ध्रुवादिका ॥३॥

प्रलयाग्नी क्षकारद्वयं, रक्तो रेफः, ऊर्ध्वकेशी एकारः, नादबिन्दु प्राग्वत्। तेन क्षें क्षें इति, क्रोधी ककारद्वयं, एवमित्यनेन रेफगतमेकारनादबिन्दुयुक्तं चेत्यवगन्तव्यम्। तेन क्रेंक्रें, वर्म हुं, अस्त्रं फट्, अनलवल्लभा स्वाहा। तथा—

न्यासशुद्धी न ऋष्यादि नात्र किञ्चिद्विचारणा। कृष्णतोयेन संपूर्णे कुम्भे चैवाथ कालिकाम् ॥४॥
ब्राह्म्यादिभिश्च दूतीभिर्युक्ता संपूज्य भक्तितः। पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम् ॥५॥
शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान् । दक्षादक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम् ॥६॥
ध्यात्वैवं साधकः साध्यं साधयेन्मनसि स्थितम्। ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी तथा ॥७॥
वाराही चैव माहेन्द्री चामुण्डा चण्डिकाष्टमी। पूर्वादीशानपर्यन्तं कुम्भाङ्कुशस्थिता इमाः ॥८॥
कर्त्रिकायां ततो देवीं महाकालीं भयापहाम्। नामोच्चारणसंरब्धं वह्नौ प्रज्वलिते खरे ॥९॥
जुहुयाद्वैरिणं क्रुद्धो देवीमन्त्रं जपंस्था। समिधः पिचुमन्दस्य विभीतचितिकाष्ठकाः ॥१०॥
हरं विषं राजिकां च कण्टजालरसान्विताः। गृहधूमश्मशानास्थिविभीताङ्गारहोमतः ॥११॥
सप्ताहाद्वैरिणं हन्ति कालीमन्त्रप्रयोगतः। उच्चाटनं चापराह्णे सन्ध्यायां मारणं तथा ॥१२॥
दक्षिणास्यां दिशि स्थित्वा ग्रामादेर्दक्षिणामुखः। इति।

मन्त्रान्तरं फेत्कारिणीतन्त्रे—

गृध्रकर्णिपदं प्रोक्त्वा विरूपाक्षिपदं ततः। लम्बस्तनिपदं पश्चान्महोदरिपदं वदेत् ॥१॥
उत्पाटय पदं भूयस्तथैव मारयेति (?) च। पदान्येतानि वीप्स्याथ वदेद्वर्मास्त्रमेव च ॥२॥
वह्निजायापदं चोक्त्वा..................। इति।

वीप्स्येति द्विरुच्चार्य, वर्म हुं, अस्त्रं फट्, वह्निजाया स्वाहाकारः। तथा—

पिप्पलादौ मुनिः प्रोक्तो निचृच्छन्द उदाहृतम्। भद्रकाली देवता स्यात् पञ्चाङ्गं स्वयमेव तु ॥३॥

स्वयमेव मूलमन्त्रेणैव। यथा—वीप्सितेनाद्यपदद्वयेन हृत्। तदूर्ध्वपदद्वयेन शिरः। तदूर्ध्वपदद्वयेन शिखा। वर्मास्त्राभ्यां कवचम्। स्वाहयास्त्रमिति। तथा—

अतिरौद्रा महादंष्ट्रा भृशं दीर्घा कृशोदरी। सुवृत्तनयनारूढा दीर्घघोणा मदातुरा ॥४॥
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषा नीलजीमूतसन्निभा। भ्रुकुट्यट्टाट्टसंदीप्ता महारदनभीषणा ॥५॥
दंष्ट्रोग्रकोपताम्राक्षी रक्तदीर्घशिरोरुहा। त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डा नरकीटपलाशिनी ॥६॥
अतिरक्ताम्बरा देवी रक्तमांसासवप्रिया। शिरोमालाविचित्राङ्गी पिबन्ती शोणितासवम् ॥७॥
नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाचगणसेविता। पिशाचस्कन्धमारुह्य भ्रमन्ती वसुधातले ॥८॥
शङ्करस्य मुखोत्पन्ना योगिनीयोगिवल्लभा। इत्थंभूतां भद्रकालीं मातृभिः परिवारिताम् ॥९॥
ध्यात्वा सम्यक् समाराध्य ततो मन्त्रं जपेद्बुधः। अयुतं जपसिद्ध्यर्थं मातृकान्यासतत्परः ॥१०॥

ततो होमादिकमपि कार्यम्। होमस्तु घृतेनैव प्रागुक्तवचनादिति।

महाकाली मन्त्र—फेत्कारिणी तन्त्र में कहा गया है कि अब मैं महाकाली के महामन्त्र को कहता हूँ, जिसे जानने से संसार में कुछ भी असाध्य नहीं रहता। मूलोक्त श्लोक २-३ के उद्धार करने पर महाकाली का चतुर्दशाक्षरी मन्त्र इस प्रकार होता है—ॐ क्षें क्षें क्रें क्रें पशुं गृहाण हुं फट् स्वाहा। इसमें न्यास शुद्धि ऋष्यादि का विचार नहीं है। जलपूर्ण काले घड़े में कालिका की पूजा ब्राह्मी आदि दूतीयुक्त शक्तियों के सहित करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

पञ्चवक्त्रां महारौद्रीं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनाम्। शक्तिशूलधनुर्बाणखेटखड्गवराभयान्।।
दक्षादक्षभुजैर्देवीं बिभ्राणां भोगिभूषणाम्।

ऐसा ध्यान करके साधक मन में स्थित साध्य का साधन करे। ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, माहेन्द्री, चामुण्डा, चण्डिका की पूजा पूर्व से ईशान तक कुम्भ में करे। भयापहा देवी महाकाली का नामोच्चारण करके कैंची को दबाकर प्रज्वलित अग्नि में वैरी को मन्त्र जपते हुए हवन करे। पिचुमन्द, विभीतक, चितिकाष्ठ की समिधा की आग जलाये। हर, विष, राई, कण्टजालरस, गृहधूम, श्मशान की हड्डी, लिसोड़ा और अंगारमिश्रण के हवन एक सप्ताह तक करने से शत्रु का मारण काली मन्त्र के प्रयोग से होता है। अपराह्न में उच्चाटन एवं सन्ध्या में मारण क्रिया दक्षिण दिशा में मुख करके ग्रामादि की दक्षिण दिशा में स्थित होकर करे।

मन्त्रान्तर—फेत्कारिणी तन्त्र के मूलोक्त श्लोक १-२ का उद्धार करने पर अन्य मन्त्र होता है—गृध्रकर्णी विरूपाक्षी लम्बस्तनी महोदरी उत्पाटय उत्पाटय मारय मारय हुं फट् स्वाहा।

इसके ऋषि पिप्पलाद, छन्द निचृद् एवं देवता भद्रकाली हैं, पञ्चाग न्यास उत्पाटय उत्पाटय हृदयाय नमः, मारय मारय शिरसे स्वाहा, हुं शिखायै वौषट्, फट् कवचाय हुं एवं स्वाहा अस्त्राय फट् से करके निम्नवत् ध्यान करे—

अतिरौद्रा महादंष्ट्रा भृशं दीर्घा कृशोदरी। सुवृत्तनयनारूढा दीर्घघोणा मदातुरा।।
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषा नीलजीमूतसन्निभा। भ्रुकुट्यट्टाट्टसंदीप्ता महारदनभीषणा।।
दंष्ट्रोग्रकोपताम्राक्षी रक्तदीर्घशिरोरुहा। त्रिशूलव्यग्रदोर्दण्डा नरकीटपलाशिनी।।
अतिरक्ताम्बरा देवी रक्तमांसासवप्रिया। शिरोमालाविचित्राङ्गी पिबन्ती शोणितासवम्।।
नृत्यन्ती च हसन्ती च पिशाचगणसेविता। पिशाचस्कन्धमारुह्य भ्रमन्ती वसुधातले।।
शङ्करस्य मुखोत्पन्ना योगिनीयोगिवल्लभा।

मातृकाओ से घिरी भद्रकाली का इस प्रकार सम्यक् ध्यान के बाद पूजा करे। तब मन्त्र जप दश हजार मातृका न्यास में तत्पर होकर करे। तब हवनादि घी से करे।

भद्रकालीप्रयोगविशेषविधिः

तथा—

धूमावत्यां च यत् प्रोक्तमनयापि तदाचरेत्। उक्तः प्रयोग एवात्र विशेषविधिरुच्यते ।।११।।
ऋज्वायतं तु निर्दोषमर्कमूलं वनान्तरात्। विषवृक्षं समादाय ततो होमं समाचरेत् ।।१२।।
शून्यागारे तथा कुण्डं कृत्वा तत्र त्रिकोणकम्। विषवृक्षेन्धनेनाग्निं प्रज्वाल्यादाय तत् सुधीः ।।१३।।
ततो दण्डं जपन्मन्त्री विषवृक्षस्य साधकः। अष्टोत्तरशतं वह्नौ तं दण्डं निक्षिपेद्बुधः ।।१४।।
सुविनीतं द्विजं वीरं कृत्वा चोत्तरसाधकम्। दिक्षु सर्वासु संस्थाप्य स्वभटान् खड्गहस्तकान् ।।१५।।
कृतरक्षः समाराध्य वह्निं क्रोधसमन्वितः। अष्टोत्तरशतं जप्त्वा दण्डाग्रं जातवेदसि ।।१६।।
दत्त्वा सिद्धार्थकं मन्त्री जुहुयात् सवनद्वयम्।
यष्ट्यग्रमग्नौ विनिवेश्य पश्चात् सिद्धार्थकैस्तैलसमुक्षितैश्च।
हुनेत् सहस्रद्वयमत्र धीमान् विसृज्य वह्निं बलिदानपूर्वम् ।।१७।।
ध्यायेद् देव्याः स्वरूपं प्रलयघननिभं रक्तवर्णोग्रनेत्रं
शूलाग्रप्रोतसिंहं तरुणनरशिरःस्रग्धरं तीक्ष्णदंष्ट्रम्।
उल्काव्यग्रोर्ध्वहस्तं रुधिरमधुमदभ्रान्तचित्तं सुघोरं
शत्रूणां शङ्कमुच्चैः करविधृतशिलादण्डनिर्घातघोरम् ।।१८।।
भावयित्वा करेणोल्कां दक्षिणेन रिपोर्मुखम्। गत्वा दूरेण विसृजेत् तद्वत् क्रुद्धा नभःस्थिता ।।१९।।
ससहायस्ततस्तीर्थं गच्छेत् पश्चात्तु वाग्यतः। स्नात्वावश्यं शुचिर्भूत्वा कण्ठमात्रोदके स्थितः ।।२०।।
जपेत् सुदर्शनं दुर्गां सावित्रीं च समाहितः। अष्टोत्तरसहस्रं तु जपेदन्यच्छतं शतम् ।।२१।।

उष्णीषवासा आच्छाद्य ससहायः सुरालयम्। गत्वा तु महतीं पूजां कृत्वा देवस्य चक्रिणः ॥२२॥
पादयुग्मं समालम्ब्य वर्णलक्षं जपेद् बुधः। तावज्जप्त्वा घटे सद्भिरभिषिञ्चेत् स्वकं वपुः ॥२३॥
दक्षिणां विधिवद् दत्त्वा शान्तिहोमं च कारयेत्। यद्वा दुर्गां जपेल्लक्षं सावित्रीं च तथैव च ॥२४॥
कृत्वाभिषेकं ताभ्यां तु शक्तितो भोजयेद्द्विजान्। दक्षिणाः शक्तितो दत्त्वा सिद्धो भवति साधकः ॥२५॥
रुद्रदण्डप्रयोगोऽयं दारुणो रणसूदनः। पुरा देवासुरे युद्धे हरेण किल निर्मितः ॥२६॥
तत्प्रयोगमहं वक्तुं न शक्नोभि तथापि चेत्। प्रयोगमात्रं तद्वक्ष्ये विद्वेषोच्चाटनादिकम् ॥२७॥
विभीतफलके शत्रोर्लिखेन्नामविदर्भितम्। मन्त्रं जप्त्वा सरोषं तत् खनेत् पितृवने बुधः ॥२८॥
उच्चाटनं भवेत् क्षिप्रमचलस्यापि किं पुनः। मानवानां द्विजश्रेष्ठे न कर्तव्यं मनीषिभिः ॥२९॥
तथैव किल तस्यैव त्रिकोणेऽधोमुखं खनेत्। धत्तूरबीजचूर्णेन जप्त्वा वालिप्य तत् त्यजेत् ॥३०॥
खनेदुच्चाटयेच्छत्रून् वाताहतरजो यथा। इति।

तदनन्तर धूमावती मन्त्र के समान कर्म करे। उक्त प्रयोग की विशेष विधि यहाँ कही जाती हैं। जंगल से निर्दोष अकवन की जड़ और धत्तूर की लकड़ी लकड़ी लाकर हवन करे। सूने घर में त्रिकोण कुण्ड बनाकर विषवृक्ष की लकड़ी से आग जलाकर वृष वृक्ष के डंडे को एक सौ आठ जप से मन्त्रित कर उसे अग्नि में डाल दे। तब सुविनित द्विजवीर को साधक सभी दिशाओं में तलवार लिये हुए अपने घरों को रक्षा के लिये खड़ा करके अग्नि की पूजा करे। क्रुद्ध होकर एक सौ आठ जप करके दण्डाग्र का अग्नि में हवन करे। पहले डण्डे के अग्रभाग को अग्नि में रखकर तेल मिश्रित सरसों से दो हजार हवन करे। बलिदान देकर अग्नि का विसर्जन करे। तदनन्तर देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

ध्यायेद् देव्याः स्वरूपं प्रलयघननिभं रक्तवर्णोग्रनेत्रं शूलाग्रप्रोतसिंहं तरुणनरशिरःस्रग्धरं तीक्ष्णदंष्ट्रम्।
उल्काव्यग्रोर्ध्वहस्तं रुधिरमधुमदभ्रान्तचित्तं सुघोरं शत्रूणां शङ्कमुच्चैः करविधृतशिलादण्डनिर्घातघोरम्।।

दाहिने हाथ से उल्का को शत्रु मुख में डालने की भावना करे, तब वहाँ से दूर जाकर क्रुद्ध होकर उस उल्का को आकाश में फेंक दे। सहायकों के साथ जलाशय में जाकर स्नान करे। पवित्र होकर कण्ठ तक जल में खड़े होकर सुदर्शन दुर्गा सावित्री के निकट एक हजार आठ और अन्य जगहों पर सौ-सौ बार करे। पगड़ी एवं वस्त्र ओढ़कर सहायकों के साथ देवालय में जाकर महती पूजा करे। चक्री देव के दोनों पैर का अवलम्बन लेकर वर्णलक्ष जप करे। जप समाप्त होने पर कलश जल से स्नान करे। विधिवत् दक्षिणा देकर शान्ति हवन करे। दुर्गा का एक लाख जप करे और सावित्री का जप करे। तब अभिषेक करे। यथाशक्ति द्विजों को भोजन कराये। यथाशक्ति दक्षिणा देकर साधक सिद्ध हो जाता है।

रुद्रदण्ड का यह प्रयोग दारुण युद्ध में विजयप्रद है। देवासुर युद्ध में शिव ने इसे निर्मित किया था। उस प्रयोग को मैं नहीं कह सकता, तथापि विद्वेषण उच्चाटन आदि प्रयोग मात्र को कहता हूँ। लिसोढ़े के पटरे पर शत्रु का नामाक्षर मन्त्र विदर्भित लिखे। सरोष मन्त्र जप करके उसे पितृ वन में गाड़ दे। इससे पर्वत का भी उच्चाटन होता है, तब मनुष्यों की क्या बात हो सकती है। इस प्रयोग को द्विजश्रेष्ठ को नहीं करना चाहिये। उसी प्रकार त्रिकोण में किल को अधोमुख जोड़ दे। धत्तूरबीज को मन्त्रित करके उस पर छोड़े। इससे हवा में धूल के समान शत्रु उच्चाटित होकर उड़ जाता है।

श्मशानकालीमन्त्रस्तत्पूजाप्रयोगश्च

अथ श्मशानकाली—

वाणीं मायां ततो लक्ष्मीं कामराजमतः परम्। कालिकेसंपुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत् ॥१॥
एकादशार्णा देवेशि चतुर्वर्गप्रदायिनी। इति।

अस्याः पूजायन्त्रम्—

पद्ममष्टदलं वृत्तं तद्बाह्ये धरणीतलम्। चतुर्द्वारसमायुक्तं मध्ये मूलं समालिखेत् ॥२॥
दलेष्वष्टसु विलिखेत् कवर्गाद्यष्टवर्गकम्। धरण्या विलिखेदाद्यं चतुष्के.......... ॥३॥

पूर्वादिचतुरन्ते च मध्ये देवीं प्रपूजयेत्।

अस्याः पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं कर्म समाप्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि भृगुऋषये नमः। मुखे निचृच्छन्दसे नमः। हृदि श्मशानकालिकायै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्बीजाय नमः। पादयोः मायाशक्तये नमः। सर्वाङ्गे कामराजकीलकाय नमः। इति विन्यस्य, ऐं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। क्लीं कवचाय हुम्। कालिके नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐंह्रींश्रींक्लीं अस्त्राय फट्।

अथ ध्यानम्—

अञ्जनादिप्रभां देवीं श्मशानालयवासिनीम्। रक्तनेत्रां मुक्तकेशीं शुष्कमांसातिभीषणाम्॥१॥
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णां समांसकम्। सद्यः कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम्॥२॥
स्मितवक्त्रां सदाप्याममांसचर्वणतत्पराम्। नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदासवैः॥३॥
एवं ध्यात्वा जपेद् देवीं श्मशाने तु विशेषतः। गृहे वापि सहस्रं च मत्स्यमांसैः सुभोजनैः॥४॥
नग्नो भूत्वा महापूजां कुर्याद्रात्रौ समाहितः।

पूजनान्ते ध्यात्वा मानसैरुपचारैः संपूज्यार्घ्यस्थापनं कृत्वा, पुनर्ध्यात्वा पञ्चोपचारैः संपूज्य पत्रेषु ब्राह्म्यादिका यजेत्। तद्बहिरसिताङ्गादिकान्। अस्य पुरश्चरणमेकादशलक्षजपः। तथाच—'वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद् दशांशेन होमयेत्'। मन्त्रान्तरं तथा—

कामबीजं समालिख्य कालिकायै समालिखेत्। नमोन्तेन च देवेशि सप्तार्णो मनुरुत्तमः॥१॥
षडङ्गं कालिकादेव्या अन्यत् सर्वं तु पूर्ववत्। इति।

श्मशान काली—मूलोक्त श्लोक का उद्धार करने पर श्मशान काली का एकादशाक्षर मन्त्र होता है—ऐं श्री ह्रीं क्रीं कालिके ऐं श्रीं ह्रीं क्रीं।

पूजायन्त्र—अष्टदल कमल, उसके बाहर वृत्त, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त भूपुर के मध्य में मूलमन्त्र लिखे। आठों दलों में कवर्गादि आठ वर्गों को लिखे। भूपुर की चारो दिशाओं में पूर्वादि क्रम से ऐं श्रीं ह्रीं क्रीं लिखे। मध्य में देवी की पूजा करे।

प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से प्राणायाम तक करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भृगु ऋषये नमः। मुखे निचृच्छन्दसे नमः। हृदि श्मशानकालिकायै देवतायै नमः। गुह्ये ऐं वाग्बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं मायाशक्तये नमः। सर्वांगे क्रीं कीलकाय नमः। इसके बाद षडंग न्यास करे—ऐं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। क्रीं कवचाय हुं। कालिके नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं श्रीं ह्रीं क्रीं अस्त्राय फट्। तदनन्तर ध्यान करे—

अञ्जनादिप्रभां देवीं श्मशानालयवासिनीम्। रक्तनेत्रां मुक्तकेशीं शुष्कमांसातिभीषणाम्॥
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णां समांसकम्। सद्यः कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम्॥
स्मितवक्त्रां सदाप्याममांसचर्वणतत्पराम्। नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदासवैः॥

इस प्रकार का ध्यान करके रात्रि में समाहित चित्त होकर श्मशान में मत्स्य-मांसादि सुभोजन करके नग्न होकर महापूजा करे। तब एक हजार जप करे। पूजन के बाद ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करे। अर्घ्य-स्थापन करे। पुनः ध्यान के बाद पंचोपचार पूजा करे। पत्रों में ब्राह्मी आदि की पूजा करे। उसके बाहर असितांगादि भैरवों की पूजा करे। इसके पुरश्चरण ग्यारह लाख जप से होता है। कहा भी है कि मन्त्रवर्ण की जितनी संख्या हो, उतने लाख जप करे एवं उसका दशांश होम करे।

एक अन्य मन्त्र है—क्रीं कालिकायै नमः। यह सप्ताक्षर उत्तम मन्त्र है। कालिका देवी के समान इसका षडङ्ग न्यास करे और सभी क्रियायें पूर्ववत् होती हैं।

आर्द्रपटी-घर्मटिका-श्मशानभैरवी-ज्वालामालिनीमन्त्राः

अथार्द्रपटी—'प्रणवो हृदयं ततो भगवति चामुण्डे रक्तवाससी अप्रतिहतरूपपराक्रमेऽमुकवधाय विचेतसे

वह्निवल्लभा'। आर्द्रपटेनालक्तकपटेनावृत्तः समुद्रगामिनीनदीतीरे ऊषरभूमौ वा दक्षिणाभिमुख ऊर्ध्वबाहुर्जपेत्, यावत्पटः शुष्यति तावत्प्राणाः शुष्यन्ति शत्रोः।

अथ घर्मटिका—

पूर्वं घर्मटिके युग्मं ततो मर्कटिके युगम्। घोरे विद्वेषकारिणि विद्वेषो द्वेषकारिणि ॥१॥
अथ घोराघोरयोः स्यादमुकामुकयोस्ततः। विद्वेषयद्वयं हुं फट् विद्या घर्मटिकेरिता ॥२॥

अत्रापि प्रयोगः प्राग्वत्। परन्तु फलं विद्वेषणम्। अथ श्मशानभैरवी—'श्मशानभैरवि नररुधिरान्त्रवसाभक्षिणि सिद्धिं मे देहि मम मनोरथान् पूरय हुं फट् स्वाहा'। अथ ज्वालामालिनी—'ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि गृध्रगणपरिवृते हुं फट् स्वाहा'। एतैर्मन्त्रैर्यावन्ति क्रूरकर्माणि तावन्ति कुर्यात्। महाकालीमन्त्रप्रयोगे तु न्यासादिकं न कर्तव्यम्। 'न्यासशुद्ध्यादिकं किंचिन्नात्र कार्या विचारणा' इत्युक्तत्वात्। प्रयोगः प्रागेवोक्तः। ज्वालामालिनीप्रयोगस्तु—

ॐनमो हृदयं प्रोक्तं भगवतीति शिरः स्मृतम्। ज्वालामालिनि च शिखा गृध्रगणपरिवृते ततः ॥१॥
वर्म स्वाहास्त्रमित्युक्तं जातियुक्तं न्यसेत् तनौ।

प्रयोगस्तु—ॐ हृदयाय नमः इत्यादि।

अभुक्त्वा नियतं चैव जपेन्मन्त्रं जपाज्जयी। जपेदष्टसहस्रं तु त्रयोविंशतिवासरान् ॥२॥
प्रत्यहं साधनं सिद्धिं ददाति च न संशयः। स्मृतिमात्रेण वै मन्त्री रिपून् सर्वान् विनाशयेत् ॥३॥ इति।

तथा फेत्कारीये—'ॐ ठंठांठिंठींठुंठूंठेंठैंठोंठौंठंठः' इति मन्त्रेण सृगालास्थिमयं कीलकं पञ्चाङ्गुलं सहस्रेणाभिमन्त्रितं यस्य गृहे निखनेत् यस्य नाम्ना श्मशाने वा निखनेत् स उन्मत्तो भवति। 'ॐडंडांडिंडींडुंडूंडेंडैंडोंडौंडंडः अमुकं गृह्ण२ हूं ठःठः' अनेन मन्त्रेण मनुष्यास्थिमयं कीलकं वितस्तिप्रमाणं सहस्राभिमन्त्रितं यस्य गृहे श्मशाने वा निखनेत् तस्य समस्तपरिवारो नश्यति। उद्धृते खलु शान्तिः। यथा—'ॐ हंसः संसंहः अमुकस्य शान्तिर्भवतु स्वाहा' अनेन मन्त्रेण घृतमधुसिक्तं क्षीरं हुनेत् तेन शान्तिर्भवति। तथा—ॐ ढंढांढिंढींढुंढूंढेंढैंढोंढौंढंढः अमुकं मारय२ हूंठंठः' अनेन मन्त्रेण गर्दभास्थिमयं कीलकं त्रयोदशाङ्गुलं सहस्रेणाभिमन्त्रितं चितामध्ये निखनेत् स ज्वरेण विनश्यति। 'ॐ णंणांणिंणींणुंणूंणेंणैंणोंणौंणंणः' अनेन मन्त्रेण खदिरकाष्ठमयं कीलकं षडङ्गुलं सहस्रेणाभिमन्त्रितं यस्य गृहे निखनेत् तस्य यस्य नाम्ना श्मशाने वा निखनेत् सर्वं नाशयति।

आर्द्रपटी मन्त्र—ॐ नमो भगवति चामुण्डे रक्तवाससी अप्रतिहतरूपपराक्रमे अमुकवधाय विचेतसे स्वाहा। आई पट अर्थात् अलक्तक पट से अपने को ढँककर समुद्रगामिनी नदी तट पर या ऊषर भूमि में दक्षिण तरफ मुख करके बाँह ऊपर उठाकर मन्त्र का जप करे। जब तक कपड़ा सूखता है तप तक शत्रु के प्राण भी सूख जाते हैं।

घर्मटिका मन्त्र—घर्मटिके घर्मटिके मर्कटिके मर्कटिके घोरे विद्वेषकारिणि विद्वेषो द्वेषकारिणि घोराघोरयो: अमुकामुकयो: विद्वेषय विद्वेषय हुं फट्—इसे घर्मटिका विद्या कहते हैं। यहाँ भी प्रयोग पूर्ववत् होता है। परन्तु इसका फल विद्वेषण होता है।

श्मशानभैरवी मन्त्र—श्मशानभैरवि नररुधिरान्त्रवसाभक्षिणि सिद्धिं मे देहि मम मनोरथान् पूरय हुं फट् स्वाहा।

ज्वालामालिनी मन्त्र—ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि गृध्रगणपरिवृते हुं फट् स्वाहा—यह ज्वालामालिनी का मन्त्र है। इन मन्त्रों से सभी क्रूर कर्मों का अनुष्ठान किया जाता है। महाकाली मन्त्र के प्रयोग में न्यासादि नहीं होते। इसके प्रयोग पूर्व में ही कह दिये गये हैं।

प्रयोग—ज्वालामालिनी का षडङ्ग न्यास इस प्रकार करे—ॐ नमो हृदयाय नम: भगवति शिरसे स्वाहा, ज्वालामालिनि शिखायै वषट्, गृध्रगणपरिवृते कवचाय हुं, स्वाहा अस्त्राय फट्। उपवास रहकर मन्त्र साधक जप करे। जप से जयी होता है। तेईस दिनों तक प्रतिदिन आठ हजार जप करे। प्रतिदिन साधन करने से सिद्धि मिलती है, इसमें संशय नहीं है। इसके स्मरणमात्र से ही साधक सभी शत्रुओं का विनाश कर देता है।

फेत्कारी तन्त्र मे कहा गया है कि ॐ टं टां टिं टीं टुं टूं टें टैं टों टौं टं टः—इस मन्त्र से पाँच अंगुल लम्बी सियार की हड्डी को हजार जप मे मन्त्रित करके जिसके घर में गाड़ दे या जिसके नाम से श्मशान में गाड़ दे, वह उन्मत्त हो जाता है। ॐ डं डां डिं डीं डुं डूं डें डैं डों डौं डं डः अमुकं गृह्ण गृह्ण हूं ठः ठः—इस मन्त्र से मनुष्य की हड्डी के एक वित्ता लम्बे कील को एक हजार जप से मन्त्रित करके जिसके घर में या श्मशान में गाड़ दिया जाता है, उसके सभी परिवार का नाश हो जाता है। इसकी शान्ति का उपाय यह है कि 'ॐ हंसः सं संहः अमुकस्य शान्तिः भवतु स्वाहा'—इस मन्त्र से घी मधु में दूध मिलाकर हवन करने से शान्ति होती है। ॐ ढं ढां ढिं ढीं ढुं ढूं ढें ढैं ढों ढौं ढं ढः अमुकं मारय मारय हूं ठः ठः—इस मन्त्र से गदहे की हड्डी के तेरह अंगुल लम्बे कीलक को हजार जप से मन्त्रित करके जिसके नाम से चिता के बीच में गाड़ दे, वह बुखार से मर जाता है। ॐ णं णां णिं णीं णुं णूं णें णैं णों णौं णं णः—इस मन्त्र से खैर लकड़ी के छः अंगुल लम्बे कीलक को एक हजार जप से मन्त्रित करके जिसके घर में गाड़ दे या जिसके नाम से श्मशान में गाड़ दे, उसका सर्वनाश हो जाता है।

अथ निगडबन्धमोक्षणम्—' ॐ नमो निर्ऋते २ तिग्मतेजो यन्मयं विव्रेताबन्धमेतं यमेन दत्तं तस्या-संविदानोत्तमेनाके अघोरेहवैरं'। अस्य निगडभञ्जनमन्त्रस्य प्रजापतिर्ऋषिः, निर्ऋतिर्देवता, त्रिष्टुप् छन्दः, बन्धादिव्यसनपरिहारे विनियोगः। एवमृष्यादिकं विन्यस्यायुतं जपेत् ततो बन्धव्यसनान्मुक्तो भवति नान्यथा।

निगड़ बन्धन मोचन—ॐ नमो निर्ऋते निर्ऋते तिग्मतेजो यन्मयं विव्रेताबन्धमेतं यमेन दत्तं तस्यासंविदानोत्तमेनाके अघोरेहवैरं—यह निगड़बन्ध-मोचक मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि प्रजापति, देवता निर्ऋति और छन्द त्रिष्टुप् है तथा बन्धादि व्यसन के परिहार-हेतु इसका विनियोग किया जाता है। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करके दश हजार जप करे तो बन्धन से मुक्ति प्राप्त होती है; अन्यथा नहीं।

चिटिमन्त्रविधिः

अथ चिटिमन्त्रः—

तारं चिटिद्वयं पश्चाच्चण्डालि तदनन्तरम्। महत्पदाद्यां तां ब्रूयादमुकं मे ततः परम्॥१॥
वशमानय ठद्वन्द्वं चिटिमन्त्र उदाहृतः। सप्तभिर्वशयेद्भूपान् दिवसैर्विधिनामुना॥२॥

विधिमाह—

विलिख्य तालपत्रे तं साध्यनाम्ना विदर्भितम्। निक्षिप्य क्षीरसंमिश्रे जले च क्वाथयेन्निशि॥३॥
वश्यो भवति साध्योऽस्य नात्र कार्या विचारणा। तालपत्रे लिखित्वैनं भद्रकालीगृहे खनेत्॥४॥
वश्याय सर्वजन्तूनां प्रयोगोऽयमुदाहृतः। इति।

चिटिमन्त्र—ॐ चिटि चिटि चण्डालि महाचण्डालि अमुकं मे वशमानय स्वाहा—यह चिटिमन्त्र है। इसकी विधिवत् साधना करने पर सात दिनों में राजा को वश में किया जा सकता है।

प्रयोग-विधि—ताड़पत्र पर मन्त्र को साध्य नाम से विदर्भित करके दूध एवं जल के मिश्रण में डालकर रात्रि में क्वाथ बनावे। इससे साध्य वश में होता है। ताड़पत्र पर लिखकर भद्रकाली के मन्दिर में इसे गाड़ दे तो सभी जन्तु वश में होते हैं।

आकर्षणविधानानि

अथाकर्षणम्—

अथाकर्षविधानानि कथयामि समासतः। यद् दृष्टं त्रैपुरे तन्त्रे यद् दृष्टं भूतडामरे॥१॥
श्रीबीजं मान्मथं बीजं लज्जाबीजं समुद्धरेत्। प्रथमं प्रणवं दत्त्वा त्रिपुरादेविपदं ततः॥२॥
अमुकीतिपदद्वन्द्वमाकर्षय द्विधा पदम्। स्वाहान्तमन्त्रमुद्धृत्य जपेद् दशसहस्रकम्॥३॥

षट्कोणं च समालिख्य रक्तचन्दनकुङ्कुमैः। षडङ्गं कारयेन्मन्त्री लज्जाबीजसमन्वितम् ॥४॥
षड्दीर्घभाक्स्वरेणैव नादबिन्दुविभूषितम्। रक्तपुष्पाक्षतधूपनैवेद्यैः परिपूज्य ताम् ॥५॥
भावयंश्चेतसा देवीं त्रिनेत्रां चन्द्रशेखराम्। बालार्ककिरणप्रख्यां सिन्दूरारुणविग्रहाम् ॥६॥
पद्मं च दक्षिणे पाणौ जपमालां च वामके। मन्त्रस्यास्य प्रभावेण रम्भामपि तथोर्वशीम् ॥७॥
आकर्षयेन्न सन्देहः किंपुनर्मानुषीमिह। भूर्जपत्रे समालिख्य कुङ्कुमालक्तवारिणा ॥८॥
काश्मीरागरुकस्तूरीरोचनामिलितेन च। अनामारक्तमिश्रेण कामलाक्षीमनुं जपेत् ॥९॥
'ॐश्रींकमलाक्षि अमुकीं आकर्षय२ हुं फट्'।

इमं मन्त्रं जपेदादौ सहस्रैकं ततः पुनः। भूजपत्रे समाधाय गुलिकां कारयेत् सुधीः ॥१०॥
तेनैव साध्यपादोत्थमृत्तिकापङ्कवेष्टितम्। शोषितं तेजसा भानोर्वेष्टयेत् त्रिकुटं पुनः ॥११॥
प्रतिमां स्त्रीनिभां कृत्वा तस्यास्तथोदरे क्षिपेत्। गुलिकां पातयेत् पात्रे प्रतिमां साध्यरूपिणीम् ॥१२॥
तदाशाभिमुखो भूत्वा निर्जने निशि साधकः। यावद्गच्छति चित्तं च तावद्रूपं जपेन्मनुम् ॥१३॥
यावदायाति संत्रस्ता मदनालसविग्रहा। इति।

आकर्षण—अब मैं सम्पूर्ण रूप से आकर्षण विधानों को कहता हूँ एवं जिसका वर्णन भूतडामर त्रिपुरा तन्त्र में किया गया है। श्रीं क्लीं ह्रीं ॐ त्रिपुरा देवि अमुकी अमुकी आकर्षय आकर्षय स्वाहा'—यह आकर्षण मन्त्र है। इस मन्त्र का जप दश हजार करे। लाल चन्दन और कुङ्कुम से षट्कोण बनाकर ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः से षडङ्ग न्यास करे। लाल फूल अक्षत धूप नैवेद्य से उसकी पूजा करे। तदनन्तर तीन नेत्रों वाली, चन्द्रशेखरा देवी का ध्यान निम्नवत् करे—

बालार्ककिरणप्रख्यां सिन्दूरारुणविग्रहाम्। पद्मं च दक्षिणे पाणौ जपमालां च वामके।।

इस मन्त्र के प्रभाव से रम्भा और उर्वशी का भी आकर्षण होता है तब मानुषी स्त्रियों की तो क्या बात ही क्या है।

अन्य मन्त्र—भोजपत्र पर कुङ्कुम आलता केसर अगर कस्तूरी गोरोचन के घोल में अनामिका का खून मिलाकर कमलाक्षी मन्त्र लिखे। यह मन्त्र है—ॐ श्रीं कमलाक्षि अमुकीं आकर्षय आकर्षय हुं फट्। कमलाक्षी के इस मन्त्र का जप पहले एक हजार करे। भोजपत्र पर मन्त्र लिखकर गोली बनावे। उसे साध्य के पैरों की धूलि एवं मिट्टी के पंक से वेष्टित करे। उसे सूर्य के धूप में सुखावे। उसे फिर त्रिकुट से वेष्टित करे। साध्य स्त्री की प्रतिमा बनाकर उसके पेट में उसे घुसा दे। साध्यरूपिणी प्रतिमा को पात्र में रखे। तब साधक उसकी ओर मुख करके रात में निर्जन स्थान में उसके रूप में चित्त लगाकर तब तक मन्त्र का जप करे जब तक वह संत्रस्त कामविह्वल होकर नहीं आ जाय।

विद्वेषणविधानम्

अथ विद्वेषणम्—

अन्योन्यसमरारम्भाद्रोषितौ समरे युतौ। तदीयनखरोड्डीनधूलिमादाय साधकः ॥१॥
धूलिना तेन विद्वेषस्ताडनादभिजायते। परस्परं रिपोर्वैरं मित्रेण सह निश्चितम् ॥२॥
महिषाश्वपुरीषाभ्यां गोमूत्रेण समालिखेत्। ययोर्नाम तयोः शीघ्रं विद्वेषं च परस्परम् ॥३॥
रक्तेन माहिषाश्वेन श्मशानवस्त्रके लिखेत्। यस्य नाम भवेत्तस्य विद्वेषं च परस्परम् ॥४॥
षट्कोणचक्रमध्ये तु रिपोर्नामसमन्वितम्। मन्त्रं च संप्रवक्ष्यामि महाभैरवसंज्ञकम् ॥५॥
'ॐ नमो महाभैरवाय श्मशानवासिने अमुकामुकयोर्विद्वेषं कुरु कुरु मुरु मुरु स्वाहा'।

एतन्मन्त्रं लिखेत्तत्र विद्वेषो जायते ध्रुवम्। अन्ययोगमहं वक्ष्ये दुर्लभं वसुधातले ॥६॥
ज्ञानमात्रेण शत्रूणां विद्वेषो जायते ध्रुवम्।
'ॐ नमो भगवति श्मशानकालिके अमुकं विद्वेषय २ हनहन पचपच मथमथ हुं फट् स्वाहा'।

अमुना मन्त्रराजेन साधयेत् प्रयतः सुधीः। वह्निकुण्डे निम्बपत्रेण कटुतैलान्वितेन च ॥७॥
प्रज्वाल्य खादिरं वह्निं श्मशानोत्थं ततः पुनः। दशसाहस्रसंयुक्तं तिलयवाक्षतान्वितम् ॥८॥
भावयन् कुपितां देवीमिन्द्रनीलमणिप्रभाम्। व्योमनीलां महाचण्डां सुरासुरविमर्दिनीम् ॥९॥
त्रिलोचनां महारौद्रीं सर्वाभरणभूषिताम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां सूर्यचन्द्रोपरि स्थिताम् ॥१०॥
शवयानगतां चैव प्रेतभैरववेष्टिताम्। वसन्तीं पितृकान्तारे सर्वसिद्धिप्रदायिकाम् ॥११॥
होमयेद्विविधैः पुष्पैर्बलिच्छागोपहारकैः। पूजयित्वा महेशानीं भक्तियुक्तेन चेतसा ॥१२॥
तद्भस्म च समादाय धारयेदभिमन्त्रितम्। भस्मना तेन यं हन्याद्विद्वेषस्तद्भवेन्नृणाम् ॥१३॥
वह्निः शीतलतां याति पतेद्भूमौ तथा रविः। यदा शुष्यति पाथोधिश्चन्द्रमाः पतितो यदि ॥१४॥
तदा मिथ्या भवेद् देवि योगराजः सुदुर्लभः। षट्कोणं चक्रराजं तु शत्रूणां नामटङ्कितम् ॥१५॥
पूर्वद्रव्येण विद्वेषं कारयेदथ साधकः।

'ॐ द्रां विद्वेषिणि अमुकामुकयोर्विद्वेषं कुरु२ स्वाहा।'

यन्त्रबाह्ये लिखेन्मन्त्रमिमं पूर्वोक्तवस्तुभिः। परस्परं भवेद् द्वेषो योगोऽयं कुब्जिकामते ॥१६॥ इति।

विद्वेषण—एक-दूसरे से लड़ते हुए मनुष्यों के पैरों से उड़ती धूलि को लाकर उससे ताड़न करने पर विद्वेष होता है। इससे मित्रों मे परस्पर वैर हो जाता है। घोड़े की लीद और गोमूत्र मिलाकर जिनका नाम लिखा जाता है, उनमे परस्पर विद्वेष हो जाता है। भैंसे और घोड़े के खून से श्मशान के वस्त्र पर जिनका नाम लिखा जाता है, उनमें परस्पर विद्वेष हो जाता है। षट्कोण चक्र में शत्रु का नाम और महाभैरव मन्त्र 'ॐ नमो महाभैरवाय श्मशानवासिने अमुकामुकयोः विद्वेषं कुरु कुरु मुरु मुरु स्वाहा' को लिखने से निश्चित रूप से विद्वेषण होता है।

मन्त्रान्तर—पृथ्वी पर दुर्लभ एक अन्य योग को कहता हूँ, जिसके जानने मात्र से ही शत्रुओं में वैर हो जाता है। मन्त्र है—ॐ नमो भगवति श्मशानकालिके अमुकं विद्वेषय विद्वेषय हन हन पच पच मथ मथ हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्र से साधक सावधान होकर साधन करे। अग्नि-कुण्ड में खैर और श्मशान में जली लकड़ी एवं नीम के पत्तों और कड़ुआ तेल मिलाकर आग जलावे। उसमें तिल चावल यव से दश हजार हवन करे। हवन के समय इन्द्रनीलमणि की प्रभा वाली कुपित देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

व्योमनीलां महाचण्डां सुरासुरविमर्दिनीम्।
त्रिलोचनां महारौद्रीं सर्वाभरणभूषिताम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां सूर्यचन्द्रोपरि स्थिताम्।।
शवयानगतां चैव प्रेतभैरववेष्टिताम्। वसन्तीं पितृकान्तारे सर्वसिद्धिप्रदायिकाम्।।

विविध फूलों से हवन करके बकरे की बलि प्रदान करे। देवी की पूजा भक्तिपूर्वक करे। हवन का भस्म अभिमन्त्रित करके धारण करे। उस भस्म को जिसपर डाला जायेगा उनमें परस्पर वैर हो जायेगा। आग शीतल हो जाय, सूर्य पृथ्वी पर गिर पड़े, समुद्र सूख जाय, चन्द्रमा गिर जाय—यह सभी कथन जब सत्य हो जायँ तभी यह योगराज मिथ्या हो सकता है।

चक्रराज षट्कोण में पूर्वोक्त द्रव्यों से शत्रु नाम के साथ 'ॐ द्रां विद्वेषिणि अमुकामुकयोः विद्वेषं कुरु कुरु स्वाहा' लिखकर साधक विद्वेषण करे। यन्त्र के वाहर पूर्वोक्त द्रव्यों से यह लिखे तो परस्पर वैर हो जाता है। यह कुब्जिका मन में कहा गया है।

उच्चाटनविधिः

अथोच्चाटनम्—

अथोच्चाटविधिं वक्ष्ये यथोक्तं श्रीमतोत्तरे। निम्बपट्टे लिखेन्नाम महिषाश्वपुरीषकैः ॥१७॥
काकपक्षस्य लेखिन्या लेखनीयमनन्तरम्।

'ॐ नमः काकतुण्डि धवलामुखि अमुकमुच्चाटय उच्चाटय हुं फट्।'

एतन्मन्त्रं समभ्यर्च्य लिखित्वा पूर्ववस्तुभिः। निम्बवृक्षस्थितं सर्वं काकालयं हुनेदथ॥१८॥
श्मशानवह्निमानीय धत्तूरकाष्ठदीपितम्। वह्निं कृत्वा महातैलैरथवा कटुवस्तुभिः॥१९॥
पूर्वोक्तमनुना तस्य पत्रं राजीकटुप्लुतम्। संपूज्य धवलामुखीं पञ्चोपचारपूजया॥२०॥
तद्भस्म प्रक्षिपेच्छत्रोर्मन्दिरोपरि मन्त्रवित्। ध्यानयुक्तेन मनसा शत्रोरुच्चाटनं भवेत्॥२१॥
धूम्रवर्णां महादेवीं त्रिनेत्रां शशिशेखराम्। जटाजूटसमायुक्तां व्याघ्रचर्मपरिच्छदाम्॥२२॥
कृशाङ्गीमस्थिमालाढ्यकर्त्रिकाढ्यकराम्बुजाम्। कोटराक्षीं सुदंष्ट्रां च पातालसंनिभोदराम्॥२३॥
एवंविधां धिया भाव्य कार्यमुच्चाटनं रिपोः। एष योगविधिः प्रोक्तो वीरतन्त्रे महेश्वरि॥२४॥
गोपनीयं प्रयत्नेन न प्रकाश्यं कदाचन। इति।

तथा—

सौरारयोर्दिने ग्राह्यं नरास्थि चतुरङ्गुलम्। निशारसेन संलिप्य प्रधानभवने क्षिपेत्॥२५॥
सप्ताहाभ्यन्तरे शत्रोरुच्चाटनकरं भवेत्।

मन्त्रस्तु—हुं अमुकस्योच्चाटनं कुरु२ स्वाहा। (हुं अमुकं) हन हन स्वाहा।

उच्चाटन—श्रीमतोत्तर में कथित उच्चाटन विधि कहता हूँ। नीम के पटरे पर भैंसे और घोड़े के मल से कौए के पंख की कलम से साध्य नाम के साथ यह मन्त्र लिखे—ॐ नमः काकतुण्डि धवलामुखि अमुकमुच्चाटय उच्चाटय हुं फट्। यह मन्त्र लिखकर पूर्वोक्त वस्तुओं से पूजा नीम वृक्ष के नीचे करे। कौए के घोसले से हवन करे। श्मशान से अग्नि लाकर धतूरकाष्ठ से जलावे। महा तैल या कड़ुए वस्तुओं से अग्नि को तेज करे। पूर्वोक्त मन्त्र से कटु-मिश्रित नीम के पत्तों से हवन करे। धवलामुखी की पूजा पञ्चोपचार से करे। मनसाध्यान करके मन्त्रज्ञ उस भस्म को शत्रु के घर पर बिखेरे तो शत्रु का उच्चाटन होता है। देवी का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

धूम्रवर्णां महादेवीं त्रिनेत्रां शशिशेखराम्। जटाजूटसमायुक्तां व्याघ्रचर्मपरिच्छदाम्॥
कृशाङ्गीमस्थिमालाढ्यकर्त्रिकाढ्यकराम्बुजाम्। कोटराक्षीं सुदंष्ट्रां च पातालसंनिभोदराम्॥

इस प्रकार का ध्यान करके शत्रु का उच्चाटन कर्म करे। यह योग विधि वीरतन्त्र में कही गई है। यह प्रयत्न से गोपनीय है। कभी भी इसे प्रकाशित न करे।

रविवार में चार अंगुल की नरास्थि लाकर उसमें हल्दी लगावे और शत्रु के प्रधान भवन में फेंक दे। इससे एक सप्ताह में शत्रु का उच्चाटन हो जाता है। मन्त्र है—हुं अमुकस्योच्चाटनं कुरु कुरु स्वाहा। हुं अमुकं हन हन स्वाहा।

सुखप्रसवमन्त्रः

अथ सुखप्रसवमन्त्रः—ॐ मन्मथ मन्मथ वाहि वाहि लम्बोदर मुञ्च मुञ्च स्वाहा। ॐ मुक्ताः पाशा विपाशाश्च मुक्ताः सूर्येण रश्मयः। मुक्तः सर्वभयाद्गर्भ एह्येहि मा विर (चिर) स्वाहा'। एतदन्यतरेणाष्टवारं जलमभिमन्त्र्य पेयं ततः सुखप्रसवो भवति।

सुखप्रसव मन्त्र—ॐ मन्मथ मन्मथ वाहि वाहि लम्बोदर मुंच मुंच स्वाहा। ॐ मुक्ताः प्राणाः विपाशाश्च मुक्ताः सूर्येण रश्मयः। मुक्तः सर्वभयाद्गर्भ एह्येहि मा चिर स्वाहा—यह सुखप्रसव मन्त्र है। पहले प्रथम मन्त्र के आठ जप से जल को मन्त्रित करके तव दूसरे मन्त्र के आठ जप से मन्त्रित जल को पीने से सुखपूर्वक प्रसव होता है।

अदर्शनप्रयोगः

अथादर्शनप्रयोगः—

अर्कशाल्मलिकार्पासपट्टपङ्कजतन्तुभिः। पञ्चभिर्वर्तिकाभिस्तु नृकपालेषु पञ्चसु॥१॥

नरतैलेन दीपाः स्युः कज्जलं नृकपालके। ग्राहयेत् पञ्चभिर्यत्नात् पूर्ववच्च शिवालये ॥२॥
पञ्चस्थानीयजातं तु एकीकुर्याच्च तं पुनः। लेपयित्वाञ्जनं नेत्रे देवैरपि न दृश्यते ॥३॥

मन्त्रस्तु—'ॐ हुंफट् कालि २ महाकालि मांसशोणितं खादय २ देवि मा पश्यतु मानुषेति हुंफट् स्वाहा' इति मन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्राभिमन्त्रितं कृत्वा तत्कज्जलं नेत्रे दत्त्वा त्रैलोक्यादृश्यो भवति।

अदर्शन प्रयोग—अकवन, सेमर, कपास, रेशम, कमलतन्तु—इन पाँच से पाँच बत्ती बनावे। बत्ती को मनुष्य की खोपड़ी में डालकर उसमें नरतेल भरकर दीपक जलावे। नरकपाल में अलग-अलग काजल पारे। यत्न से उस काजल को ग्रहण करे। पूर्ववत् शिवालय में उन पाँचों काजलों को मिलाकर आँखों में काजल लगावे। तब उसे देवता भी नहीं देख सकते। काजल को मन्त्रित करने का मन्त्र है—ॐ हूं फट् कालि कालि महाकालि मांसशोणितं खादय खादय देवि मा पश्यतु मानुषेति हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्र के एक हजार आठ जप से काजल को मन्त्रित करके आँखों में लगाने से साधक तीनों लोकों में अदृश्य हो जाता है।

योगिनीसाधनम्

अथ योगिनीसाधनम्। भूतडामरे—

अथातः सँप्रवक्ष्यामि योगिनीसाधनोत्तमम्। सर्वार्थसाधनं नाम देहिनां सर्वसिद्धिदम् ॥१॥
अतिगुह्या महाविद्या देवानामपि दुर्लभा। यासामभ्यर्चनं कृत्वा यक्षेशोऽभूद् धनाधिपः ॥२॥

योगिनी साधन—भूतडामर में भगवान् ने कहा है कि हे प्रिये! अब मैं योगिनी का उत्तम साधन कहता हूँ। यह मनुष्यों का सर्वार्थसाधक और सर्वसिद्धिप्रद है। यह महाविद्या अति गुह्य है और देवताओं को भी दुर्लभ है। इसका साधन करके ही कुबेर धनाधिप हो गये हैं।

१. सुरसुन्दरीसाधनम्

तासामाद्यां प्रवक्ष्यामि सुराणां सुन्दरीं प्रिये। अस्या अभ्यर्चनेनैव राजत्वं लभते नरः ॥३॥
अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम्। प्रासादं च समासाद्य कुर्यादाचमनं ततः ॥४॥
प्रणवान्ते सहस्रार हुंफट् दिग्बन्धनं चरेत्। प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥५॥
षडङ्गं मायया कुर्यात् पद्ममष्टदलं लिखेत्। तस्मिन् पद्मे तथा मन्त्रं जीवन्यासं समाचरेत् ॥६॥
पीठे देवीं समभ्यर्च्य ध्यायेद् देवीं जगत्प्रियाम्। पूर्णचन्द्राननां गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ॥७॥
पीनोत्तुङ्गकुचां वामां सर्वज्ञामभयप्रदाम्। इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ॥८॥
पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः। गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम् ॥९॥
प्रणवान्ते भुवनेशीमागच्छ सुरसुन्दरि। वह्नेर्जायां जपेन्मन्त्रं त्रिसन्ध्यं च दिने दिने ॥१०॥
सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः। मासान्ते व्याप्य दिवसं बलिं पूजां सुशोभनाम् ॥११॥
कृत्वा तु प्रजपेन्मन्त्रं निशीथे याति सुन्दरि। सुदृढं साधकं दृष्ट्वा याति सा साधकालये ॥१२॥
सुप्रसन्ना साधकाग्रे सदा स्मेरमुखी ततः। दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ॥१३॥
सुचन्दनं सुमनसा ज्ञात्वाभिलषितं वदेत्। मातरं भगिनीं चाथ भार्यां वा भक्तिभावतः ॥१४॥
यदि माता तदा वित्तं द्रव्यं च सुमनोहरम्। भूपतित्वं प्रार्थितं यत् तद् ददाति दिने दिने ॥१५॥
पुत्रवत् पातितं लोके सत्यं सत्यं सुनिश्चितम्। यद्यद्भवति भूतं च भविष्यतीति यत् पुनः ॥१६॥
तत्सर्वं साधकेन्द्राय वदतीति सुनिश्चितम्। स्वसा ददाति द्रव्यं च दिव्यवस्त्रं तथैव च ॥१७॥
दिव्यकन्यां समानीय नागकन्यां दिने दिने। यद्यत् प्रार्थयते सर्वं ददाति सा दिने दिने ॥१८॥
भ्रातृवत् पातितं लोके कामनाभिर्मनोगतैः। भार्या सा स्याद्यदा देवी साधकस्य मनोहरा ॥१९॥

राजेन्द्रः सर्वराजानां संसारे साधकोत्तमः। स्वर्गे मर्त्ये च पाताले गतिः सर्वत्र निश्चितम् ॥२०॥
यद्यद् ददाति सा देवी कथितुं नैव शक्यते। तया सार्धं च संभोगं करोति साधकोत्तमः ॥२१॥
अन्यस्त्रीगमनं त्यक्त्वा अन्यथा नश्यति ध्रुवम्।

१. सुरसुन्दरी—उन योगिनियों में प्रथम सुरसुन्दरी के अर्चन से मनुष्य राजत्व प्राप्त करता है। प्रातःकाल उठकर स्नानादि करे। प्रासाद मन्त्र से आचमन करे। 'ॐ सहस्रार हुं फट्' से दिग्बन्ध करे। तब मन्त्रज्ञ मूल मन्त्र से प्राणायाम करे। षडङ्ग न्यास ह्रां ह्रीं आदि से करके अष्टदल कमल बनावे। उस पद्म में मन्त्र जीव न्यास करे। पीठ में देवी की पूजा करके जगत्प्रिया देवी का ध्यान इस प्रकार करे—

पूर्णचन्द्राननां गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम्। पीनोत्तुंगकुचां वामां सर्वज्ञामभयप्रदाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके मूल मन्त्र से अर्घ्यादि प्रदान करे। पुनः धूप देकर मूल मन्त्र से गन्ध चन्दन नैवेद्य कपूरसहित पान निवेदित करे। 'ॐ भुवनेशीमागच्छ सुरसुन्दरि स्वाहा' मन्त्र का जप प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओं में देवी का ध्यान करके एक हजार करे। एक महीने के अन्तिम दिन में बलि पूजा करे। पूजा के बाद रात में मन्त्र-जप करे। इससे आधी रात में सुन्दरी आती है। साधक को सुदृढ़ देखकर साधक के घर में जाती है और साधक के आगे सदा मुस्कुराती रहती है। देवी को देखकर साधक पाद्यादि निवेदित करे, चन्दनादि प्रदान करे और प्रसन्न जानकर अपना अभिलषित माता या भगिनी या भार्या होने के लिये कहे। योगिनी यदि माता होना स्वीकार करती है तब भूपतित्व के साथ-साथ माँगने पर प्रतिदिन सब कुछ देती है और संसार में पुत्रवत् पालन करती है; यह सत्य है। साधक को भूत-भविष्य की सभी बातों को बतलाती है। भगिनी होने पर द्रव्य और दिव्य वस्त्र देती है, प्रतिदिन देवकन्या और नागकन्या लाकर देती है तथा साधक जो-जो माँगता है वह प्रतिदिन देती है। भाई के समान उसका पालन करती है एवं उसके मनोरथों को पूरा करती है। यदि भार्या होना स्वीकार करती है तब साधक राजाओं का राजा होता है। स्वर्ग, पाताल और भूलोक में सर्वत्र उसकी गति होती है। देवी जो-जो देती है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। साधक उसके साथ सम्भोग भी करता है; अन्य स्त्री का साथ साधक को छोड़ देना चाहिये, नहीं तो वह उसका वध कर देती है।

२. मनोहरासाधनम्

ततोऽन्यत् साधनं वक्ष्ये निर्मितं ब्रह्मणा पुरा ॥२२॥
नदीतीरं समासाद्य कुर्यात् स्नानादिकं ततः। पूर्ववत् सकलं कार्यं चन्दनैर्मण्डलं लिखेत् ॥२३॥
स्वमन्त्रं तत्र संलिख्यावाह्य ध्यायेन्मनोहराम्।
कुरङ्गनेत्रां शरदिन्दुवक्त्रां बिम्बाधरां चन्दनगन्धलिप्ताम्।
चीनांशुकां पीनकुचां मनोज्ञां श्यामां सदा कामदुघां विचित्राम् ॥२४॥
एवं ध्यात्वा पूजयेच्च देवीमगुरुधूपकैः। गन्धं पुष्परसं चैव ताम्बूलादींश्च मध्यतः ॥२५॥
तारं मायागच्छ मनोहरे पावकवल्लभा। कृत्वायुतं प्रतिदिनं जपेन्मन्त्रं प्रसन्नधीः ॥२६॥
मासान्ते व्याप्य दिवसं कुर्याच्च जपमुत्तमम्। आनिशीथं जपेन्मन्त्रं ज्ञात्वा च साधकं दृढम् ॥२७॥
गत्वा च साधकाभ्याशे सुप्रसन्ना मनोहरा। वरं वरय शीघ्रं त्वं यत्ते मनसि वर्तते ॥२८॥
साधकेन्द्रोऽपि तां भक्त्या पाद्याद्यैरर्चयेन्मुदा। चन्दनोदकपुष्पेण हस्तेन च मनोहराम् ॥२९॥
ततोऽर्चिता प्रसन्ना सा पुष्णाति प्रार्थितं च यत्। स्वर्णं शतं साधकाय ददाति सा दिने दिने ॥३०॥
सावशेषं व्ययं कुर्यात् स्थिते तत्र न दास्यति। अन्यस्त्रीगमनं तस्य न भवेत् सत्यमीरितम् ॥३१॥
अव्याहतगतिस्तस्य भवतीति न संशयः। इयं ते कथिता विद्या सुगोप्या च सुरासुरैः ॥३२॥
तव स्नेहेन भक्त्या च बद्धोऽहं परमेश्वरि।

२. मनोहरा—ब्रह्मा के द्वारा निर्मित दूसरा साधन कहता हूँ। नदी के तट पर जाकर स्नानादि सभी कार्य पूर्ववत्

करे। पूर्ववत् चन्दन से मण्डल बनावे। उसमे अपना मन्त्र लिखे और मनोहरा का निम्नवत् ध्यान करे—
कुरङ्गनेत्रां शरदिन्दुवक्त्रां बिम्बाधरां चन्दनगन्धलिप्ताम्। चीनांशुकां पीनकुचां मनोज्ञां श्यामां सदा कामदुघां विचित्राम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके देवी की पूजा अगर, धूप, गन्ध, पुष्परस एवं ताम्बूलादि से करे। 'ॐ ह्रीं आगच्छ मनोहरे स्वाहा' मन्त्र का जप दश हजार प्रतिदिन प्रसन्न मन से करे। महीने के अन्तिम दिन में इस उत्तम जप को रात भर करे। साधक को दृढ़ जानकर मनोहरा साधक के पास जाकर कहती है कि वर माँगो। जो मन में हो, उसे माँगो। साधक भी उसकी पूजा भक्तिपूर्वक पाद्यादि से करे। मनोहरा के हाथ में चन्दन एवं जल देवे। अर्चित होकर प्रसन्न होकर देवी प्रार्थित वस्तु देती है। प्रतिदिन सौ स्वर्ण मुद्रा देती है। उन सबों को साधक को खर्च कर देना चाहिये। शेष बचाने पर कुछ नहीं देती है। अन्य स्त्री के साथ गमन साधक यदि छोड़ दे तब साधक की गति अव्याहत होती है। देवता-दैत्यों के लिये भी सुगोप्य इस विद्या को मैंने कहा।

३. कनकावतीसाधनम्

ततो वक्ष्ये महाविद्यां शृणुष्वैकमनाः प्रिये ।।३३।।

गत्वा वटतलं देवीं पूजयेत् साधकोत्तमः। प्राणायामं षडङ्गं च माययाथ समाचरेत् ।।३४।।
सद्यो मांसबलिं दत्त्वा पूजयेत् तां समाहितः। अर्घ्यमुच्छिष्टरक्तेन तस्यै दद्याद् दिने दिने ।।३५।।
प्रचण्डवदनां गौरीं पद्मपत्रायतेक्षणाम्। पक्वबिम्बाधरां बालां सर्वकामप्रदां शुभाम् ।।३६।।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमयुतं साधकोत्तमः। सप्तदिनं समभ्यर्च्य चाष्टमे विधिवच्चरेत् ।।३७।।
कायेन मनसा वाचा पूजयेच्च दिने दिने। तारं मायां तथा कूर्चं रक्ष कर्मणि तद्बहिः ।।३८।।
आगच्छ कनकान्ते च वति स्वाहा महामनुः। आनिशीथं जपेन्मन्त्रं बलिं दद्यान्मनोहरम् ।।३९।।
साधकेन्द्रं दृढं ज्ञात्वा आयाति साधकालये। साधकोऽपि च तां दृष्ट्वा दद्यादर्घ्यादिकं ततः ।।४०।।
ततः सपरिवारेण भार्या स्यात् कामभोजनैः। वस्त्रभूषादिकं त्यक्त्वा याति सा निजमन्दिरम् ।।४१।।
एवं भार्या भवेन्नित्यं साधकाज्ञानुरूपतः। आत्मभार्यां परित्यज्य भजेत् तां च विचक्षणः ।।४२।।

३. कनकावती—अब मैं कनकावती महाविद्या को कहता हूँ, एकाग्र होकर सुनो। श्रेष्ठ साधक वट वृक्ष के नीचे जाकर पूजा करे। ह्रीं मन्त्र से प्राणायाम तथा ह्रां ह्रीं इत्यादि से कराङ्ग न्यास करे। संयत होकर तत्काल प्राप्त मांस की बलि देकर पूजा करे। उच्छिष्ट रक्त से अर्घ्य उसे प्रतिदिन प्रदान करे। उसका ध्यान इस प्रकार करे—
प्रचण्डवदनां गौरीं पद्मपत्रायतेक्षणाम्। पक्वबिम्बाधरां बालां सर्वकामप्रदां शुभाम्।।

श्रेष्ठ साधक इस प्रकार का ध्यान करके दश हजार मन्त्र-जप करे। सात दिनों तक पूजा करके आठवें दिन विधिवत् पूजा करे। तन मन वचन से प्रतिदिन पूजा करे। 'ॐ ह्रीं हूं रक्षकर्मणि आगच्छ कनकावति स्वाहा' मन्त्र का जप रात भर करे और मनोहर बलि प्रदान करे। साधक को दृढ़ जानकर कनकावती साधक के घर में आती है। उसे देखकर साधक भी अर्घ्यादि प्रदान करे। तब योगिनी अपनी सेविकाओं सहित साधक की भार्या होकर उसे विविध प्रकार की अभिलषित भोज्य पदार्थ प्रदान करती है तथा अपने भूषण एवं वस्त्रों को छोड़कर अपने घर चली जाती है और फिर प्रतिदिन आती है। इस प्रकार साधक की आज्ञा के अनुरूप वह उसकी भार्या बन जाती है। विद्वान् साधक इस प्रकार सिद्धिप्राप्ति के बाद अपनी पत्नी का त्याग करके योगिनी का भजन करे।

४. कामेश्वरीसाधनम्

ततः कामेश्वरीं वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम्। प्रणवं भुवनेशीं चागच्छ कामेश्वरि ततः ।।४३।।
वह्निभार्या महामन्त्रः साधकानां सुखावहः। पूर्ववत् सकलं कृत्वा भूर्जपत्रे सुशोभने ।।४४।।
गोरोचनाभिः प्रतिभां निर्माय च स्वलङ्कृताम्। शय्यामारुह्य प्रजपेन्मन्त्रमेकमनास्ततः ।।४५।।
सहस्रैकप्रमाणेन मासमेकं जपेद् बुधः। घृतेन मधुना दीपं दद्याच्च सुसमाहितः ।।४६।।

कामेश्वरीं शशाङ्कास्यां खेलत्खञ्जनलोचनाम् । सदा लोलगतिं कान्तां कुसुमास्त्रशिलीमुखाम् ।।४७।।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं निशीथे याति सा सदा । गत्वा च साधकश्रेष्ठमाज्ञां देहीति तं वदेत् ।।४८।।
स्त्रीभावेन मुदा तस्यै दद्यात् पाद्यादिकं ततः । सुप्रसन्ना मुदा देवी साधकं तोषयेत् सदा ।।४९।।
अन्नाद्यै रतिभोगेन पतिवत् पालयेत् सदा । नीत्वा रात्रिं सुखैश्वर्यैर्दत्त्वा च विपुलं धनम् ।।५०।।
वस्त्रालङ्कारद्रव्यादीन् प्रभाते याति निश्चितम् । एवं प्रतिदिनं तस्य सिद्धिं स्यात् कामरूपतः ।।५१।।

४. कामेश्वरी योगिनी—अब मैं सर्वकामफलप्रदा कामेश्वरी को कहता हूँ। साधकों को सुखप्रद महामन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ कामेश्वरि स्वाहा। समस्त विधियाँ पूर्ववत् करके सुन्दर भोजपत्र पर गोरोचन से सभी अलंकारों से अलंकृत चित्र बनावे। तब शैय्या पर बैठकर एकाग्र चित्त से मन्त्र का जप प्रतिदिन एक हजार एक माह तक करे। घी और मधु से दीपक जलाकर निवेदित करे। तब इस प्रकार ध्यान करे—

कामेश्वरीं शशाङ्कास्यां खेलत्खञ्जनलोचनाम्। सदा लोलगतिं कान्तां कुसुमास्त्रशिलीमुखाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके मन्त्र-जप करे। तब रात्रि में वह साधक के पास आकर कहती है कि क्या आज्ञा है? अतिप्रसन्न उस देवी का स्त्रीभाव से पाद्य आदि से पूजन करे। तब वह देवी प्रसन्न होकर सदैव साधक को सन्तुष्ट करती है। अन्नादि प्रदान एवं रतिप्रसंग से पति के समान उसका पालन करती है। रात में सुख ऐश्वर्य के साथ प्रचुर धन वस्त्र अलंकार द्रव्यादि देकर प्रभात में चली जाती है। प्रत्येक रात में इसी प्रकार वह साधक के पास आती है और उसकी इच्छा के अनुसार सिद्धि प्रदान करती है।

५. रतिसुन्दरीसाधनम्

ततः पटे विनिर्माय पुत्तलीं ध्यानरूपतः । सुवर्णवर्णां गौराङ्गीं सर्वालङ्कारभूषिताम् ।।५२।।
नूपुराङ्गदहाराढ्यां रम्यां च पुष्करेक्षणाम् । एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं दद्यात् पाद्यमनुत्तमम् ।।५३।।
श्रीचन्दनेन पुष्पेण जातीपुष्पेण पानतः । गुग्गुलं धूपदीपं च दद्यान्मूलेन साधकः ।।५४।।
तारं माया तथागच्छ रतिसुन्दरिपदं ततः । वह्निजायाष्टसाहस्रं जपेन्मन्त्रं दिने दिने ।।५५।।
मासान्ते दिवसं व्याप्य कुर्यात् पूजादिकं शुभम् । घृतदीपं तथा गन्धं पुष्पं ताम्बूलमेव च ।।५६।।
तावन्मन्त्रं जपेद्विद्वान् यावदायाति सुन्दरी । ज्ञात्वा दृढं साधकेन्द्रं निशीथे याति निश्चितम् ।।५७।।
ततस्तामर्चयेद्भक्त्या जातीकुसुममालया । सुसन्तुष्टा साधकेन्द्रं तोषयेत् प्रीतिभोजनैः ।।५८।।
भूत्वा भार्या च सा तस्मै ददाति वाञ्छितं वरम्। भूषादिकं परित्यज्य प्रभाते याति सा ध्रुवम् ।।५९।।
साधकाज्ञानुरूप्येण प्रयाति सा दिने दिने । निर्जने प्रान्तरे वापि सिद्धिः स्यान्नात्र संशयः ।।६०।।
त्यक्त्वा भार्यां भजेत् तां च अन्यथा नश्यति ध्रुवम् ।

५. रतिसुन्दरी योगिनी—कपड़े पर ध्यान में प्रकटित रूप का चित्र बनाकर इस प्रकार ध्यान करे—

सुवर्णवर्णां गौरांगीं सर्वालंकारभूषिताम्। नूपुरांगदहाराढ्यां रम्यां च पुष्करेक्षणाम्।।

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र से उत्तम पाद्य प्रदान करे। पाद्य में श्रीचन्दन, फूल, जातीपुष्प मिले जल से आचमन प्रदान करे। मूल मन्त्र से गुग्गुल का धूप, दीप अर्पित करे। 'ॐ ह्रीं आगच्छ रतिसुन्दरि स्वाहा'। प्रतिदिन आठ हजार इस मन्त्र का जप करे। एक महीने तक इस प्रकार का अर्चन करे। मासान्त दिवस में विस्तृत पूजादि करे। घी का दीपक एवं गन्ध पुष्प ताम्बूल आदि का अर्पण करे। जब तक वह सुन्दरी न आवे तब तक रात में मन्त्र जप करता रहे। आधी रात में वह निश्चित रूप से आती है। आने पर भक्ति से जातीकुसुम की माला से उसका अर्चन करे। इससे सन्तुष्ट होकर वह साधक को प्रिय भोजन देकर सन्तुष्ट करती है। भार्या बनकर साधक को इच्छित वर देती है और अपना आभूषण आदि छोड़कर सवेरे चली जाती है। साधक की आज्ञा के अनुसार वह दिनोदिन आती है। निर्जन प्रान्त में साधना करने से निस्सन्देह रूप से सिद्धि मिलती है। अपनी पत्नी को छोड़कर साधक उसी को भजता रहे; अन्यथा वह साधक को मार देती है।

६. पद्मिनीसाधनम्

ततोऽन्यत् साधनं वक्ष्ये स्वगृहे शिवसंनिधौ ॥६१॥

वेदाद्यं भुवनेशीं चागच्छ पद्मिनि वल्लभा। पावकस्य महामन्त्रं पूर्ववत् सकलं ततः ॥६२॥
मण्डलं चन्दनैः कृत्वा मूलमन्त्रं लिखेत् ततः। पद्माननां श्यामवर्णां पीनोत्तुङ्गपयोधराम् ॥६३॥
कोमलाङ्गीं स्मेरमुखीं रक्तोत्पलदलेक्षणाम्। एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं च दिने दिने ॥६४॥
मासान्ते पूर्णिमां प्राप्य विधिवत् पूजयेन्मुदा। आनिशीथं जपं कुर्यात् तदाभ्यासेन साधकः ॥६५॥
सर्वत्र कुशलं दृष्ट्वा याति सा साधकालयम्। भूत्वा भार्या साधकं हि तोषयेद्विविधैरपि ॥६६॥
भोगद्रव्यैर्भूषणाद्यैः पद्मिनी सा दिने दिने। पतिवत् पातितं लोके नित्यं स्वर्णं च सर्वदा ॥६७॥
त्यक्त्वा भार्यां भजेत् तां च साधकेन्द्रः सदा प्रिये।

६. पद्मिनी योगिनी—अब अन्य साधन कहता हूँ। अपने घर में शिव के निकट यह महामन्त्र जप करे—ॐ ह्रीं आगच्छ पद्मिनि स्वाहा। इसके सभी कर्म पूर्ववत् होते हैं। चन्दन से पूर्ववत् मण्डल बनाकर उसमें मूल मन्त्र लिखे और इस प्रकार ध्यान करे—

पद्माननां श्यामवर्णां पीनोत्तुंगपयोधराम्। कोमलांगीं स्मेरमुखीं रक्तोत्पलदलेक्षणाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके प्रतिदिन एक हजार मन्त्रजप करे। जप का प्रारम्भ कृष्ण प्रतिपदा से करे। मास के अन्तिम दिन पूर्णिमा को प्रसन्न मन से विधिवत् पूजा करे और रात भर जप करे। साधक के उस अभ्यास से सर्वत्र कुशल देखकर वह साधक के घर आती है और साधक की पत्नी बनकर उसे विविध प्रकार से सन्तुष्ट करती है। प्रतिदिन भोग द्रव्य एवं भूषणादि प्रदान कर पद्मिनी पृथ्वी पर पतिवत् उसका पालन करती है एवं नित्य सर्वदा सुवर्ण प्रदान करती है। अपनी पत्नी को छोड़कर साधक सदैव उसी को भजता रहे।

७. नटिनीसाधनम्

ततो वक्ष्ये महाविद्यां विश्वामित्रेण धीमता ॥६८॥

ज्ञात्वां यां साधिता विद्या बला चातिबला प्रिये। प्रणवान्ते महामायां नटिनि पावकप्रिया ॥६९॥
महाविद्येह कथिता गोपनीया प्रयत्नतः। अशोकस्य तटं गत्वा स्नानं पूर्ववदाचरेत् ॥७०॥
मूलमन्त्रेण सकलं कुर्याच्च सुसमाहितः। त्रैलोक्यमोहिनीं गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ॥७१॥
विचित्रालंकृतां रम्यां नर्तकीवेषधारिणीम्। एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं च दिने दिने ॥७२॥
मांसोपहारैः संपूज्य धूपदीपौ निवेदयेत्। गन्धचन्दनताम्बूलं दद्यात् तस्यै सदा बुधः ॥७३॥
मासमेकं तु तां भक्त्या पूजयेत् साधकोत्तमः। मासान्ते दिवसं प्राप्य कुर्याच्च पूजनं महत् ॥७४॥
अर्धरात्रे भयं दत्त्वा किञ्चित् साधकसत्तमे। सुदृढं साधकं मत्वा सा याति साधकालयम् ॥७५॥
विद्याभिः सकलाभिश्च किञ्चित् स्मेरमुखी ततः। वरं वरय शीघ्रं त्वं यत्ते मनसि वर्तते ॥७६॥
तच्छ्रुत्वा साधकश्रेष्ठो भावयेन्मनसा धिया। मातरं भगिनीं वापि भार्यां वा प्रीतिभावतः ॥७७॥
कृत्वा सन्तोषयेद्भक्त्या नटिनी तत्करोत्यलम्। माता स्याद्यदि सा देवी पुत्रवत् पालयेन्मुदा ॥७८॥
स्वर्णं शतं सिद्धद्रव्यं ददाति सा दिने दिने। भगिनी यदि सा कन्यां देवस्य नागकन्यकाम् ॥७९॥
राजकन्यां समानीय ददाति सा दिने दिने। अतीतानागतां वार्तां सर्वां जानाति साधकः ॥८०॥
भार्या स्याद्यदि सा देवी ददाति विपुलं धनम्। अन्नाद्यैरुपहारैश्च ददाति कामभोजनम् ॥८१॥
स्वर्णं शतं सदा तस्मै ददाति सा ध्रुवं प्रिये। यद्यद्वाञ्छति तत् सर्वं ददाति नात्र संशयः ॥८२॥

७. नटिनी योगिनी—अब श्रेष्ठ विद्वान् विश्वामित्र द्वारा कथित महाविद्या को कहता हूँ, जिसे जानकर साधना करने

पर साधक को बला और अतिबला विद्या प्राप्त होती है। वह विद्या है—ॐ ह्रीं नटिनि स्वाहा। इस महाविद्या को प्रयत्नपूर्वक गोपनीय रखना चाहिये। अशोक वृक्ष के निकट जाकर पूर्ववत् स्नान करे। संयत होकर मूल मन्त्र से सभी कर्म करके निम्नवत् ध्यान करे—

त्रैलोक्यमोहिनीं गौरी विचित्राम्बरधारिणीम्। विचित्रालंकृतां रम्यां नर्तकीवेशधारिणीम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके प्रतिदिन एक हजार मन्त्र जप करे। मांसादि उपहारों से पूजा के बाद धूप, दीप, निवेदित करे। उसे गन्ध, चन्दन, ताम्बूल सदा प्रदान करे। एक महीने तक साधक भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे। महीने के अन्तिम दिन में विस्तृत पूजा करे। रात में जप करे। आधी रात में साधक को कुछ भयभीत करती है। साधक भयभीत न होकर जब दृढ़ बना रहता हैं तब वह समस्त विद्याओं सहित प्रसन्नमुख साधक के पास आती है और साधक से कहती है कि तुम्हारी जो इच्छा हो, वर माँगो। यह सुनकर साधक मन-बुद्धि से भावना करके उसे माता या भगिनी या भार्या होने का वर माँगे। उसे भक्ति से सन्तुष्ट करे। तब देवी सन्तुष्ट होकर साधक का मनोरथ पूर्ण करती है। यदि साधक देवी का भजन मातृभाव से करता है तो वह उसका पालन पुत्र के समान करती है और प्रतिदिन उसे सौ स्वर्णमुद्रा और अभिलाषित पदार्थ देती है। यदि साधक देवी का भजन बहन भाव से करता है तो वह उसे प्रतिदिन नागकन्या और राजकन्या लाकर देती है। साथ ही उसे भूत-भविष्य-वर्तमान की घटनाओ का ज्ञान कराती रहती है। यदि साधक देवी का भजन पत्नीभाव से करता है तो वह उसे प्रतिदिन बहुत धन देती है अन्नादि नाना प्रकार के उपहारों सहित काम सुख और सौ स्वर्ण मुद्रा देती है। साधक के इच्छानुरूप वह सब कुछ देती है। इसमें कोई संशय नहीं है।

८. मधुमतीसाधनम्

महाविद्यां प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय। कुङ्कुमेन समालिख्य भूर्जपत्रे स्त्रियं मुदा ।।८३।।
ततोऽष्टदलमालिख्य कुर्यान्न्यासादिकं प्रिये। जीवन्यासं ततः कृत्वा ध्यायेत् तत्र प्रसन्नधीः ।।८४।।
शुद्धस्फटिकसङ्काशां नानारत्नविभूषिताम्। मञ्जीरहारकेयूररत्नकुण्डलमण्डिताम् ।।८५।।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रं च दिने दिने। प्रतिपदि समारभ्य पूजयेत् कुसुमादिभिः ।।८६।।
धूपदीपविधानैश्च त्रिसंध्यं पूजयेन्मुदा। पूर्णिमां प्राप्य गन्धाद्यैः पूजयेत् साधकोत्तमः ।।८७।।
घृतदीपं तथा धूपं नैवेद्यं च मनोहरम्। रात्रौ च दिवसे जाप्यं कुर्याच्च सुसमाहितः ।।८८।।
प्रभातसमये याति साधकस्यान्तिकं ध्रुवम्। प्रसन्नवदना भूत्वा तोषयेद्रतिभोजनैः ।।८९।।
देवदानवगन्धर्वविद्याधृग्यक्षरक्षसाम्। कन्याभी रत्नभूषाभिः साधकेन्द्रं मुहुर्मुहुः ।।९०।।
चर्व्यचोष्यादिकं सर्वं द्रव्यं ददाति सा ध्रुवम्। स्वर्गे मर्त्ये च पाताले यद्वस्तु विद्यते प्रिये ।।९१।।
आनीय दीयते वापि साधकाज्ञानुरूपतः। स्वर्णं शतं सदा तस्मै ददाति सा दिने दिने ।।९२।।
साधकाय वरं दत्त्वा याति सा निजमन्दिरम्। तस्याः वरप्रसादेन चिरंजीवी निरामयः ।।९३।।
सर्वज्ञः सुन्दरः श्रीमान् सर्वगो भवति ध्रुवम्। रमेत् सार्धं तया देवि साधकेन्द्रो दिने दिने ।।९४।।
तारं मायां तथागच्छानुरागिणि मैथुनप्रिये। वह्निभार्या मनुः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।।९५।।
एषा मधुमती तु स्यात् सर्वसिद्धिप्रदा प्रिये। गुह्याद् गुह्यतरा विद्या तव स्नेहात् प्रकीर्तिता ।।९६।।

८. मधुमती योगिनी—अब मैं, एक अन्य महाविद्या कहता हूँ, सावधान होकर सुनो। भोजपत्र पर कुङ्कुम से प्रसन्न स्त्री का चित्र बनावे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। न्यासादि करे। उसमें प्राणप्रतिष्ठा करके प्रसन्न मन से इस प्रकार ध्यान करे—

शुद्धस्फटिकसङ्काशां नानारत्नविभूषिताम्। मञ्जीरहारकेयूररत्नकुण्डलमण्डिताम्।।

प्रतिदिन इस प्रकार का ध्यान करके एक हजार मन्त्र-जप करे। कृष्ण प्रतिपदा से प्रारम्भ करके पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य से तीनों सन्ध्याओं में विधिवत् पूजा करे। पूर्णिमा के दिन पुष्प, गन्धादि से पंचोपचार पूजा करे। धूप, घी का दीपक एवं मनोहर

नैवेद्य अर्पण करे। उस दिन दिन-रात जप करे। प्रभात वेला मे वह निश्चित रूप से साधक के समीप आती है एवं प्रसन्न मुख होकर उसे मैथुन और भोजन से सन्तुष्ट करती है। वह साधक को बार-बार देव-दानव-गन्धर्व-विद्याधर- यक्ष-राक्षसकन्या के साथ-साथ रत्नाभूषण भी प्रदान करती है। चर्व्य-चोष्यादि सभी प्रकार के भोजन देती है। इस प्रकार साधक की आज्ञा के अनुरूप स्वर्ग-पाताल और मर्त्य लोक की सभी वस्तुओं को लाकर देने के साथ-साथ प्रतिदिन सौ स्वर्णमुद्रा देती पुनः साधक को वर देकर अपने स्थान में चली जाती है। उसकी कृपा से चिरंजीवी, नीरोग, सर्वज्ञ, सुन्दर, श्रीमान् साधक सर्वत्र आने-जाने की शक्ति प्राप्त करता है। वह प्रतिदिन योगिनी देवी के साथ क्रीड़ा-कौतुकादि का सुख प्राप्त करता है। इसका सर्वसिद्धिदायक मन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ अनुरागिणि मैथुनप्रिये स्वाहा। सभी सिद्धियों को देनेवाली यह मधुमती विद्या अत्यन्त गुह्य है।

योगिनीसाधनविधिः समयश्च

श्रीदेव्युवाच

श्रुतं च साधनं पुण्यं यक्षिणीनां सुखप्रदम्। कस्मिन् काले प्रकर्तव्यं विधिना केन वा प्रभो ॥९७॥
अत्राधिकारिणः के वा समासेन वदस्व मे।

ईश्वर उवाच

वसन्ते साधयेद्धीमान् हविष्याशी जितेन्द्रियः। सदा ध्यानपरो भूत्वा तद्दर्शनमहोत्सुकः ॥९८॥
उज्जटे प्रान्तरे वापि कामरूपे विशेषतः। स्थानेष्वेकतमं प्राप्य साधयेत् सुसमाहितः ॥९९॥
अनेन विधिना साक्षाद्भवन्ति हि न संशयः। देव्याश्च सेवकाः सर्वे परं चात्राधिकारिणः ॥१००॥ इति।

देवी ने कहा कि हे प्रभो! योगिनियों के सुखदायक साधन को मैंने सुना। किस समय में किस विधि से इनका साधन करना चाहिये और कौन इसके अधिकारी हो सकते हैं, उसे मुझसे कहिये।

शिव ने कहा कि बुद्धिमान् साधक को यह साधना वसन्त ऋतु में करनी चाहिये। साधनकाल में जितेन्द्रिय रहते हुये सदा ध्यान-तत्पर होकर साधक उसके दर्शन के लिये उत्सुक रहे। उज्जट अथवा प्रान्तर में यह साधना करनी चाहिये; विशेषकर कामरूप देश में यह साधना विशेष फल देती है। पूर्वोक्त सभी स्थानों में से किसी एक स्थान में साधना करनी चाहिये। इस प्रकार विधिपूर्वक साधन करने से साधक को देवी का दर्शन, सामीप्य एवं अभिलषित वर की प्राप्ति अवश्य होती है। देवी के साधक ही इस साधना को करने के अधिकारी हैं। जो ब्रह्मवेत्ता हैं, उन्हें इस साधन को करने का अधिकार नहीं है।

षट्त्रिंशद्यक्षिणीसाधनम्

ग्रन्थान्तरे—

त्रिपुरान्धगजध्वंसपण्डितस्यास्यपङ्कजात्। करङ्किण्याश्च तन्त्रेऽस्मिन् सिद्धशावरतन्त्रके ॥१॥
निर्गतं तत्प्रसङ्गेन किञ्चिदुद्दिश्यते मया। विचित्रा विभ्रमा हंसी भीषणी जनरञ्जिनी ॥२॥
विशाला मदना घण्टा कालकण्टी महाभया। माहेन्द्री शंखिनी चान्द्री श्मशानी वटयक्षिणी ॥३॥
मेखला विकला लक्ष्मीर्मानिनी शतपत्रिका। सुलोचना सुशोभाढ्या कपाली च सुवासिनी ॥४॥
नटी कामेश्वरी स्वर्णरेखा च सुरसुन्दरी। मनोहरा प्रमोदानुरागिणी नखकेशिका ॥५॥
भामिनी पयस्विनी च सुदती च रतिप्रिया। इति षट्त्रिंशदाख्याता यक्षिण्यो वरसिद्धिदाः ॥६॥
करङ्किण्याश्च तन्त्रे तु शम्भुदेवेन भाषिताः।

यक्षिणी साधन—ग्रन्थान्तर में कहा गया है कि त्रिपुरासुर, अन्धकासुर एवं गजासुर के हन्ता श्रीशिव के मुख- कमल से कथित करङ्किणी तन्त्र से सिद्धशावर तन्त्र में निर्गत प्रसङ्ग से कुछ कहता हूँ। छत्तीस यक्षिणियाँ वर एवं सिद्धि देने वाली हैं। वे हैं—विचित्रा, विभ्रमा, हंसी, भीषणी, जनरंजिनी, विशाला, मदना, घण्टा, कालकण्टी, महाभया, माहेन्द्री, शङ्खिनी, चान्द्री, श्मशानी, वटयक्षिणी, मेखला, विकला, लक्ष्मी, मानिनी, शतपत्रिका, सुलोचना, सुशोभाढ्या, कपाली, सुवासिनी,

नटी, कामेश्वरी, स्वर्णरेखा, सुरसुन्दरी, मनोहरा, प्रमोदा, अनुरागिणी, नखकेशिका, भामिनी, पयस्विनी, सुदती और रतिप्रिया। करङ्किनी तन्त्र में ये स्वयं भगवान् शिव के द्वारा कथित हैं।

१. विचित्रासाधनम्

विचित्रे पदमाभाष्य विचित्रेति पदं ततः॥७॥
रूपे सिद्धिं कुरुयुगं स्वाहान्तोऽयं महामनुः। लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं मध्वाज्यैः क्षीरमिश्रितैः॥८॥
कुण्डे त्र्यस्ते दशांशेन जुहुयात् पूर्णयायुतम्। ततः सिद्धा भवेद् देवी विचित्रा वाञ्छितप्रदा॥९॥

१. विचित्रा—विचित्रा यक्षिणी का मन्त्र है—ॐ विचित्रे विचित्रे रूपे सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा। दो लाख मन्त्र-जप करे। मधु गोघृत दूधमिश्रित हवन द्रव्यों से त्रिकोण कुण्ड में दशांश हवन पूर्णिमा में करे। तब वांछितप्रदा देवी विचित्रा सिद्ध होती है।

२. विभ्रमासाधनम्

तारो माया विभ्रमाङ्गरूपे च विभ्रमे पदम्। कुरुयुग्मं तथैह्येहि भगवत्यग्निवल्लभा॥१०॥
विभ्रमाया महामन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः। लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं श्मशाने निर्भयो नरः॥११॥
घृताक्तैर्गुग्गुलैर्होमे दशांशेन कृते सति। विभ्रमा तोषमायाति पञ्चषण्मानुषैः समैः॥१२॥
ददाति भोजनं दिव्यं प्रत्यहं परितोषिता।

२. विभ्रमा—ॐ ह्रीं विभ्रमांगरूपे विभ्रमं कुरु एह्येहि भगवति स्वाहा। सभी मन्त्रों में उत्तम विभ्रमा का यह महामन्त्र है। निर्भय होकर श्मशान में दो लाख मन्त्र-जप साधक करे। दशांश हवन घृताक्त गुग्गुल से करे। तब सन्तुष्ट होकर विभ्रमा साधक के पास आकर वर देती है।

३. हंसीसाधनम्

प्रणवो हंसि हंसान्ते जाते कामोऽग्निवल्लभा॥१३॥
हंस्यास्त्वयं महामन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः। प्रदेशे नगरस्याऽणोर्लक्षसंख्यं जपेच्छुचिः॥१४॥
पद्मपत्रैर्घृताक्तैश्च कृते होमे दशांशके। प्रयच्छत्यञ्जनं हंसी येन पश्यति भूनिधिम्॥१५॥
सुखेन तं च गृह्णाति न विघ्नैः परिभूयते।

३. हंसी—ॐ हंसि हंसः जाते स्वाहा। हंसी का यह मन्त्र सभी मन्त्रों में उत्तम है। नगर के भीतर प्रवेश करके पवित्र होकर इस मन्त्र का एक लाख जप करे। दशांश हवन घृताक्त कमल के पत्तों से करे। इससे हंसी प्रसन्न होकर साधक को एक अंजन देती है, जिसे आँखों में लगाने से पृथ्वी में गड़ा हुआ धन भी दिखायी पड़ता है। साधक उसे निर्भयता से ग्रहण करे, उससे कोई विघ्न नहीं होता।

४. भीषणीसाधनम्

प्रणवं च महानादे भीषणि द्रां ततः परम्॥१६॥
द्रां स्वाहा भीषणीमन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः। त्रिपथस्थो जपेन्मन्त्रं लक्षसंख्यं दशांशतः॥१७॥
घृताक्तगुग्गुलैर्होमाद्भीषणी चिन्तितप्रदा।

४. भीषणी—ॐ महानादे भीषणि द्रां द्रां स्वाहा। भीषणी का यह मन्त्र सभी मन्त्रों में उत्तम है। तिराहे पर बैठकर इस मन्त्र का एक लाख जप करे। दशांश हवन घृताक्त गुग्गुल से करे। तब भीषणा इच्छित पदार्थ देती हैं।

५. जनरञ्जिनीसाधनम्

प्रणवं रञ्जनान्ते च रञ्जिकेऽग्निवधूस्तथा॥१८॥

मन्त्रोऽयं जनरञ्जिन्याः सर्वसौभाग्यदायकः। कदम्बाधो जपेन्मन्त्रं लक्षद्वयमनन्यधीः ॥१९॥
घृताक्तगुग्गुलैर्होमादेषा सौभाग्यदायिनी।

५. जनरंजिनी—ॐ रंजनरंजिके स्वाहा। जनरञ्जिनी का यह मन्त्र सर्व सौभाग्यदायक है। कदम्ब के पेड़ के नीचे एकाग्र बुद्धि से दो लाख इस मन्त्र का जप करे। घृताक्त गुग्गुल के हवन से यह सौभाग्यदायिनी होती है।

६. विशालासाधनम्

तारं सबिन्दुझिण्टीशो विशाले द्रां ततः परम् ॥२०॥
द्रींक्लींस्वाहेति मन्त्रोऽयं विशालायाः सुसिद्धिकृत्। चिञ्चावृक्षतले लक्षं मन्त्रमावर्तयेच्छुचिः ॥२१॥
शतपत्रभवैः पुष्पै सघृतैर्होममाचरेत्। ततः सिद्धा भवेद् देवी विशालाकाशगामिनी ॥२२॥
ददाति मन्त्रिणे तुष्टा रसं दिव्यं रसायनम्।

६. विशाला—ॐ ऐं विशाले द्रां द्रीं क्लीं स्वाहा। विशाला का यह मन्त्र सुसिद्धि देने वाला है, ईमली के पेड़ के नीचे बैठकर एक लाख मन्त्र-जप करे। घी मिश्रित शतपत्री के फूलों से दशांश हवन करे। तब आकाशगामिनी विशाला सिद्ध होती है। वह सन्तुष्ट होकर साधक को रस और दिव्य रसायन देती हैं।

७. मदनासाधनम्

प्रणवं मदने चैव मदनान्ते विडम्बिनि ॥२३॥
मूलीयसङ्गमं देहि देहि श्रीमग्निवल्लभा। लक्षसंख्यं जपेन्मन्त्रं राजद्वारेः शुचिः स्थितः ॥२४॥
ससिद्धैर्मालतीपुष्पैः कृते होमे दशांशतः। मदनायक्षिणी सिद्धा गुटिकां संप्रयच्छति ॥२५॥
तया मुखस्थयादृश्यो चिरस्थायी नरो भवेत्।

७. मदना—ॐ मदने विडम्बिनि मूलीयसंगमं देहि देहि श्रीं स्वाहा। पवित्र होकर राजद्वार में बैठकर इस मन्त्र का एक लाख जप करे। दशांश हवन मालती के फूलों से करे। इससे मदना यक्षिणी सिद्ध होती है और सिद्ध होने पर वह एक गुटिका देती है, जिसे मुख में रखने से साधक अदृश्य हो जाता है।

८. घण्टासाधनम्

प्रणवं वाग्भवं चैव जगदन्ते प्रजास्त्विति ॥२६॥
क्षोभयेति पदं चैव ततो भगवतीति च। गम्भीरान्ते स्वरे रे च स्वाहान्तोऽपि महामनुः ॥२७॥
घण्टां च वादयन्मन्त्री जपेन्मन्त्रायुतद्वयम्। ततः क्षोभयते लोकान् घण्टिका च सुसिद्धिदा ॥२८॥
निर्गुण्डीतरुमूले तु स्थित्वा मन्त्रं जपेत् सुधीः। ततो द्वादशसाहस्रं पूर्वोक्तफलदो भवेत् ॥२९॥

८. घण्टा—ॐ ऐं जगत्प्रजां क्षोभय भगवति गम्भीरस्वरे स्वाहा। इस मन्त्र का घण्टा बजाते हुए बीस हजार जप करे। तब वह घण्टा सुसिद्धिदा होकर लोकों को क्षुब्ध कर देती है। निर्गुण्डी के पेड़ के मूल में बैठकर बाहर हजार जप करे तो पूर्वोक्त फल देने वाली होती है।

९. कालकण्ठीसाधनम्

तारं सबिन्दुर्झिण्टीशः कालकण्ठि च ठद्वयम्। स्वाहान्तोऽयं महामन्त्रो जपेल्लक्षं जितेन्द्रियः ॥३०॥
मधुराक्तैघृतैर्होमे कालकण्ठी प्रसीदति। सैन्याधारास्यवह्न्यम्भोगतिस्तम्भकरी भवेत् ॥३१॥
सततं तां स्मरन् मन्त्री विविधाश्चर्यकारिणी।

९. कालकण्ठी—ॐऐं कालकण्ठि ठः ठः स्वाहा। जितेन्द्रिय रहकर साधक इस मन्त्र का एक लाख जप करे। मीठा-मिश्रित घी से दशांश हवन करे तो कालकण्ठी प्रसन्न होती है और वह सैन्य शिविर, मुख, आग, पानी, गति का स्तम्भन करती है। सतत स्मरण करने से वह विविध आश्चर्यजनक कार्य करती है।

१०. मदनमखलासाधनम्

प्रणवं मदने चैव मेखले च द्विरुच्चरेत् ॥३२॥
महाभये च स्वाहान्तो मन्त्रराजसुरद्रुमः। अस्थिमुद्राधरो लक्षं श्मशाने प्रजपेन्मनुम् ॥३३॥
ततो महाभया सिद्धा यच्छत्यस्य रसायनम्।

१०. मदनमेखला—ॐ मदनमेखले मदनमेखले महाभये स्वाहा। यह मन्त्रराज कल्पवृक्ष के समान है। हड्डी और मुद्रा धारण करके श्मशान में एक लाख मन्त्र जप करे, तब महाभया सिद्ध होकर रसायन देती है।

११. माहेन्द्रीसाधनम्

वाङ्माहेन्द्रि कुरुयुगं मुरुयुग्ममतः परम् ॥३४॥
हंसः स्वाहेति मन्त्रोऽयं माहेन्द्र्याः सर्वसिद्धिदः। शतपत्रवनान्तःस्थो मन्त्री लक्षं जपेन्मनुम् ॥३५॥
क्षीराज्यहोमतो यच्छेद्रससिद्धिं च भूनिधिम्।

११. माहेन्द्री—ऐं माहेन्द्रि कुरु कुरु मुरु मुरु हंसः स्वाहा। माहेन्द्री का यह मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। शतपत्र के वन में बैठकर इस मन्त्र का एक लाख जप करे। गाय के दूध एवं घी से दशांश हवन करे तो यह यथेच्छ सिद्धि देती है।

१२. शङ्खिनीसाधनम्

तारं च भुवनेशानी शङ्खिन्येह्येहि ठद्वयम् ॥३६॥

१२. शङ्खिनी—शंखिनी का मन्त्र है—ॐ ह्रीं शंखिनि ऐह्येहि स्वाहा। इसकी सिद्धि के विधान एवं फल माहेन्द्री के ही समान है।

१३. चान्द्रीसाधनम्

एवं चान्द्री समुद्दिष्टा साधनं पूर्वभाषितम्।

'ॐ ह्रीं शङ्खिनि एहि२ स्वाहा। ॐह्रीं चान्द्रि एहि २ स्वाहा'। पूर्वभाषितं माहेन्द्र्याः प्रोक्तं पुरश्चरणं फलं च मन्त्रद्वयस्य ज्ञातव्यमित्यर्थः।

१३. चान्द्री—चान्द्री का मन्त्र है—ॐ ह्रीं चान्द्रि एहि ऐहि स्वाहा। इसके पुरश्चरण माहेन्द्री के समान होते हैं। उसी के समान इसका फल भी होता है।

१४. श्मशानवासिनीसाधनम्

तथा—
द्रांद्रींद्रैं तु समुच्चार्य श्मशानान्ते च वासिनि। स्वाहा श्मशानवासिन्या मन्त्र एष उदाहृतः ॥३७॥
नग्नो भूत्वा श्मशानस्थो लक्षमावर्तयेन्मनुम्। श्मशानवासिनी तस्मै पटं तुष्टा प्रदास्यति ॥३८॥
तेत प्रावृतगात्रस्तु अदृश्यो भवति क्षणात्। देववत् पश्यति क्षिप्रं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥३९॥
निधिं पश्यति गृह्णाति न विघ्नैः परिभूयते।

१४. श्मशानवासिनी—द्रां द्रीं द्रैं श्मशानवासिनि स्वाहा। इस मन्त्र का श्मशान में नंगे होकर एक लाख जप करने पर तब श्मशानवासिनी तुष्ट होकर कपड़ा देती है, जिसे ओढ़कर साधक तुरन्त अदृश्य हो जाता है और देवता के समान तीनों लोकों के चराचरों को देखने लगता है। निधि देखकर उसे ग्रहण करता है। इससे विघ्न नहीं होते।

१५. वटयक्षिणीसाधनम्

प्रणवं वटयक्ष्यन्ते णिलासिनि सरद्वयम् ॥४०॥
प्रिया मे भव शब्दान्ते ह्रिया मे भव ठद्वयम्। मन्त्रो वै वटयक्षिण्याः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥४१॥

सरस्तीरे जपेदर्धलक्षं मन्त्रं तु साधकः। घृताक्तगुग्गुलैर्होमाद् देवी सौभाग्यदा भवेत्॥४२॥

१५. वटयक्षिणी—ॐ वटयक्षिणि लासिनि सर सर प्रिया मे भव ह्रिया मे भव स्वाहा—वटयक्षिणी का यह मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। साधक तालाब के किनारे जाकर पचास हजार इस मन्त्र का जप करे। घृताक्त गुग्गुल से हवन करने पर देवी वटयक्षिणी सौभाग्य देने वाली होती है।

१६. मेखलासाधनम्

तारं द्रां मदनान्ते च मेखले ठद्वयं ततः। स्वाहान्तो मेखलायास्तु मन्त्रः सर्वार्थसाधकः॥४३॥
मधुवृक्षतले मन्त्रं चतुर्दशदिनावधि। प्रजपेन्मेखला तुष्टा ददात्यञ्जनमुत्तमम्॥४४॥

१६. मेखला—ॐ द्रां मदनमेखले ठः ठः स्वाहा। यह मन्त्र सर्वार्थसाधक है। महुआ के पेड़ के नीचे बैठकर चौदह दिनों तक इस मन्त्र का जप करे तो मेखला प्रसन्न होकर अंजन प्रदान करती है।

१७. विकलासाधनम्

प्रणवं विकले वाणीं मायां श्रीकामराजकम्। स्वाहान्तो विकलायास्तु मन्त्रः सद्भिरुदीरितः॥४५॥
गुहान्तःस्थो धरे मासत्रयं मन्त्रं जपेन्नरः। ततः सिद्धा भवेद् देवि विकला वाञ्छितप्रदा॥४६॥
धरे पर्वते।

१७. विकला—ॐ विकले ऐं ह्रीं क्लीं स्वाहा। पर्वत की गुफा में रहकर तीन महीनो तक विकला के इस मन्त्र का जप करे तो विकला सिद्ध होकर वांछित फल देती है।

१८. लक्ष्मीसाधनम्

प्रणवं वाग्भवं लक्ष्मि कमलान्ते च धारिणि। ह्लांसः स्वाहेति मन्त्रोऽयं लक्ष्मीयक्ष्याः सुसिद्धिदः॥४७॥
स्वगृहस्थोऽर्चयेद्रक्तकरवीरप्रसूनकैः। लक्षमावर्तयेन्मन्त्रं दूर्वाज्याभ्यां दशांशतः॥४८॥
होमे कृते भवेत् सिद्धा लक्ष्मीर्नाम्नास्य यक्षिणी। रसं रसायनं दिव्यं निधनं संप्रयच्छति॥४९॥

१८. लक्ष्मी—ॐ ऐं लक्ष्मि कमलधारिणि ह्लां सः स्वाहा। यह मन्त्र सुसिद्धि देने वाला है। अपने घर में रहकर लाल कनैल के फूलों से पूजन कर लक्ष्मी के उपर्युक्त मन्त्र का एक लाख जप करे। आज्यमिश्रित दूब से दशांश हवन करे तो यह लक्ष्मी नामक यक्षिणी सिद्ध होती है और प्रसन्न होकर दिव्य रस रसायन खजाना प्रदान करती है।

१९. मानिनीसाधनम्

तारं वाङ्मानिनि द्रां च एहियुग्मं च सुन्दरि। हसद्वयं समीहं मे सङ्गमान्ते य ईरितः॥५०॥
स्वाहान्तोऽयं महामन्त्रो मानिन्याः सर्वसिद्धिदः। लक्षमावर्तयेन्मन्त्रं त्रिपथस्थो जितेन्द्रियः॥५१॥
होमे बिल्वप्रसूनैश्च सितागव्यान्वितैः कृते। मानिनी जायते तुष्टा दिव्यं खड्गं प्रयच्छति॥५२॥
तत्प्रभावेन लोकेऽस्मिन्नखण्डं राज्यमाप्नुयात्।

१९. मानिनी—ॐ ऐं मानिनि द्रां ऐहि एहि सुन्दरि हस हस समीहं मे संगमं स्वाहा। मानिनी का यह महामन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। जितेन्द्रिय साधक तिराहे पर बैठकर इस मन्त्र का एक लाख जप करे। बेल, फूल, शक्कर, गव्य-मिश्रित दशांश हवन करे। इससे मानिनी प्रसन्न होकर एक दिव्य तलवार देती है, जिसके प्रभाव से साधक इस पृथ्वी पर अखण्ड राज्य प्राप्त करता है।

२०. शतपत्रिकासाधनम्

प्रणवं द्रां शतान्ते च पत्रिका द्रां ततः परम्॥५३॥
द्रींह्रींस्वाहेति मन्त्रोऽयं सर्वसिद्धिप्रदायकः। महाव्रतधरो मन्त्री कपालौदनभोजनः॥५४॥

लक्षद्वयजपस्यान्ते कपालं लभते मुनिः। आकाशगमनं दूरश्रवणं दूरवर्तनम् ॥५५॥
दूरदर्शनमित्यादि साधकाय प्रयच्छति।

२०. शतपत्रिका—ॐ द्रां शतपत्रिका द्रां द्रां ह्रीं स्वाहा। शतपत्रिका का यह मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। महाव्रतधारी मन्त्री कपाल में भात खाकर इस मन्त्र का दो लाख जप करे। इससे उसे देवी एक कपाल प्रदान करती है, जिससे साधक को आकाश-गमन, दूर-श्रवण, दूरवर्तन, दूरदर्शन इत्यादि की शक्ति मिलती है।

२१. सुलोचनासाधनम्

प्रणवं ब्लूं सुलोचान्ते ने सिद्धिं देहि ठद्वयम् ॥५६॥
सुलोचनाया मन्त्रोऽयं साधितः सिद्धिदो नृणाम्। नदीतीरस्थितो लक्षत्रयं मन्त्री जपेन्मनुम् ॥५७॥
घृतहोमे दशांशेन कृते देवी प्रसीदति। ददाति पादुकायुग्मं यदारूढो भुवस्तले ॥५८॥
मनःपवनवेगेन याति चायाति योगवित्।

२१. सुलोचना—ॐ ब्लूं सुलोचने सिद्धिं देहि स्वाहा। साधना करने पर सुलोचना का यह मन्त्र मनुष्य के लिये सिद्धिप्रद होता है। नदी के किनारे बैठकर साधक तीन लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन घी से करने पर देवी प्रसन्न होकर साधक को दो पादुका देती है, जिस पर चढ़कर साधक मन एवं पवन के वेग से पृथ्वी पर आता-जाता है।

२२. शोभनासाधनम्

प्रणवं चाशोकपदं पल्लवाकारके ततः ॥५९॥
कुरु मे शोभनं श्रींक्षं स्वाहा मन्त्र उदाहृतः। पुण्याशोकतलं गत्वा चन्दनेन सुमण्डलम् ॥६०॥
कृत्वा देवीं समभ्यर्च्य धूपं दत्त्वा सहस्रकम्। मन्त्रमावर्तयेन्मासं नक्तभोजी नरस्ततः ॥६१॥
रात्रौ पूजां शुभां कृत्वा जपेन्मन्त्रं निशार्धतः। नदीतीरेऽथवा मन्त्री चतुर्दशदिनं जपेत् ॥६२॥
ततः सिद्धा भवेद् देवी शोभना शुभदायिनी।

२२. शोभना—ॐ अशोकपल्लवाकारके कुरु मे शोभनं श्रीं क्षं स्वाहा। पुनीत अशोक वृक्ष के नीचे जाकर चन्दन से सुन्दर मण्डल बनाकर उसमें देवी का अर्चन करके धूप प्रदान करे। केवल रात में भोजन करने का व्रती होकर एक महीने तक प्रतिदिन उपर्युक्त मन्त्र का एक हजार जप करे। तब रात में शुभ पूजा करके आधी रात से मन्त्र जप करे। अथवा नदी किनारे चौदह दिनों तक मन्त्र जप करे तो तब देवी शोभना शुभदायिनी सिद्ध होती है।

२३-२७. कपालिनी-सुवासिनी-नटी-कामेश्वरी-स्वर्णरेखासाधनम्

प्रणवं वाग्भवं चैव ततश्चैव कपालिनी ॥६३॥
पञ्चबाणान् समुद्धृत्य शक्तिकूटं समुद्धरेत्। अस्त्रं स्वाहेति मन्त्रोऽयं कपालिन्याः समीरितः ॥६४॥
कुङ्कुमेन समालिख्य भूर्जे देवीं सलक्षणाम्। प्रतिपत्तिथिमारभ्य पुष्पदीपादिकार्चनाम् ॥६५॥
कृत्वा समाहितो मन्त्रं त्रिसंध्यं परिवर्तयेत्। मासमेकं ततः पूजां कृत्वा मन्त्रं पुनर्जपेत् ॥६६॥
अर्धरात्रे तथा देवी वाञ्छितार्थं प्रयच्छति।
सुवासिनी नटी कामेश्वरी स्वर्णरेखाः प्रागेवोक्ताः।

२३. कपालिनी—ॐ ऐं कपालिनि द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सकलह्रीं फट् स्वाहा। भोजपत्र पर कुङ्कुम से लक्षणो से युक्त देवी का चित्र बनावे। प्रतिपदा तिथि से आरम्भ कर पुष्प दीपादि से अर्चन करके तीनों सन्ध्याओं में मन्त्रक एक महीना तक जप करे। तब पूजा करके पुनः मन्त्र-जप करे। आधी रात में देवी आती है और वांछित वर देती है।

सुवासिनी (२४), नटी (२५), कामेश्वरी (२६) एवं स्वर्णरेखा (२७) का विवेचन योगिनी-साधन में द्रष्टव्य है।

२८. सुरसुन्दरीसाधनम्

तथा—

प्रणवं भुवनेशीं च कुरुयुग्मं ततः परम्। आगच्छ युगलं चैव ततो वै सुरसुन्दरि ॥६७॥
स्वाहान्तोऽयं महामन्त्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः। चतुष्पथे स्थितो लक्षं सपादं प्रजपेन्मनुम् ॥६८॥
लाजादिकुसुमैर्होमे कृते देवी प्रसीदति।

२८. सुरसुन्दरी—ॐ ह्रीं कुरु कुरु आगच्छ आगच्छ सुरसुन्दरि स्वाहा—सुरसुन्दरी का यह महामन्त्र सर्व-सिद्धि-दायक है। चौराहे पर बैठकर इस मन्त्र का जप साधक सवा लाख करे। लावा और फूलों से हवन करने पर देवी प्रसन्न होती हैं।

२९. मनोहरासाधनम्

प्रणवं भुवनेशीं च सर्वान्ते कामदे पदम् ॥६९॥
मनोहरे ततः स्वाहा मन्त्रराजो नमो नमः। नदीतीरे शुभे देशे चन्दनेन सुमण्डलम् ॥७०॥
विधाय पूजयेद् देवीं साधकोऽथ मनोहरम्। मन्त्रायुतं जपेन्मन्त्री प्रत्यहं दिनसप्तकम् ॥७१॥
आदायातिप्रसन्नास्मै दीनाराणां शतं शतम्। ददाति प्रत्यहं देवी व्ययं कुर्याद् दिने दिने ॥७२॥
तद् व्ययाभावतो देवी नो ददात्यतिकुप्यति।

२९. मनोहरा—ॐ ह्रीं सर्वकामदे मनोहरे स्वाहा। नदी किनारे शुभ स्थान में चन्दन से सुन्दर मण्डल बनाकर देवी मनोहरा की पूजा करे। सात दिनों तक प्रतिदिन दश हजार मन्त्र-जप करे, तब प्रसन्न होकर देवी आती है और प्रतिदिन सौ-सौ दीनार देती है, जिसे प्रतिदिन खर्च कर देना चाहिये। खर्च न करने पर देवी क्रुद्ध होकर कुछ नहीं देती।

३०. प्रमोदासाधनम्

प्रणवं भुवनेशीं च प्रमोदायै च ठद्वयम् ॥७३॥
प्रमोदाया महामन्त्रः सर्वसिद्धिप्रदायकः। अर्धरात्रे समुत्थाय सहस्रं प्रजपेन्मनुम् ॥७४॥
मासमेकं ततो देवी निधिं दर्शयति ध्रुवम्।

३०. प्रमोदा—ॐ ह्रीं प्रमोदायै स्वाहा। प्रमोदा का यह महामन्त्र सर्वसिद्धिदायक है। आधी रात में उठकर एक हजार इस मन्त्र का जप एक महीने तक करे तो देवी निधि का दर्शन कराती है।

३१. अनुरागिणीसाधनम्

प्रणवं भुवनेशीं च कामं ब्लूं च ततः परम् ॥७५॥
चन्द्ररेखे पदं चैवागच्छयुग्मं च ठद्वयम्। मन्त्रोऽयमनुरागिण्याः प्रोक्तः सर्वार्थसाधकः ॥७६॥
वटमूले पुनर्गत्वा कृष्णाष्टम्यां समाहितः। मण्डलं कारयेत् तत्र अष्टपत्रं सुशोभितम् ॥७७॥
पश्चात् प्रपूजयेद् देवीं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। बलिं च दापयेत् पश्चाद् दिग्विदिक्षु प्रयत्नतः ॥७८॥
अर्धरात्रे पुरःप्राप्तिः सिद्धिर्भवति तत्क्षणात्। वरं ददामि वरय किं कार्यं साधकोत्तम ॥७९॥
साधकेन तु वक्तव्यमस्माकं चेटिके भुवि। रसं रसायनं दिव्यमजरामरतां दिश ॥८०॥
अव्याहतगतिं देवि भुवनेषु सदैव हि। इष्टसिद्धिं च मे देहि जीवनं ब्रह्मणा सह ॥८१॥
साधकाय तथा दत्त्वा सा गच्छेन्निजमन्दिरे।

३१. अनुरागिणी—ॐह्रीं क्लीं ब्लूं चन्द्ररेखे आगच्छ आगच्छ स्वाहा। अनुरागिणी का यह मन्त्र सर्वार्थसाधक है। वट वृक्ष की जड़ के निकट कृष्णाष्टमी को जाकर संयत होकर अष्टपत्र मण्डल बनावे। उसमें देवी का पूजन गन्ध, पुष्प, अक्षत से करे। दिशा-विदिशाओं में प्रयत्न से बलि प्रदान करे। आधी रात के बाद देवी प्रत्यक्ष होकर कहती है कि मैं वर देने को तैयार हूँ। बोलो साधक क्या काम है? तब साधक कहे कि मेरी चेटी हो जाओ और चेटी होकर रस-रसायन, दिव्य अजरता-

अमरता, सभी दिशाओं में अव्याहत गति, भुवनों में जाने की शक्ति, इष्टसिद्धि एवं ब्रह्मा के साथ जीवन प्रदान करो। तब वह देवी प्रसन्न होकर साधक को वर देकर अपने स्थान में चली जाती है।

३२. नखकेशिकासाधनम्

प्रणवं भुवनेशी चागच्छान्ते नखकेशिनि ॥८२॥
स्वाहान्तोऽयं महामन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः ।

३२. नखकेखिका—नख केशिका का मन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ नखकेशिनि स्वाहा। यह महा मन्त्र सभी में श्रेष्ठ है।

२३-३५. भामिनी-पयस्विनी-सुदतीसाधनम्

अस्मिन्नेव महामन्त्रे भामिनीति पयस्विनि ॥८३॥
सुदतीति च संबोध्य मन्त्रत्रयमुदाहृतम्। एतासां साधनं सर्वं पद्मिनीवत् समाचरेत् ॥८४॥

३३. भामिनी—भामिनी का मन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ भामिनि स्वाहा।

३४. पयस्विनी—पयस्विनी का मन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ पयस्विनी स्वाहा।

३५. सुदता—सुदती का मन्त्र है—ॐ ह्रीं आगच्छ सुदति स्वाहा।

इन सवों की साधना पद्मिनी के समान होती है।

३६. रतिप्रियासाधनम्

रतिप्रियाया वक्ष्यामि साधनं भुवि दुर्लभम्। यस्य विज्ञानमात्रेण दारिद्र्यान्नाभिभूयते ॥८५॥ इति।

करङ्किणीतन्त्रे—

प्रणम्य शिरसा देवी बभाषे सर्ववित् प्रभो। येन कल्पेन दारिद्र्यं विनश्यति च तद्वद ॥१॥
श्रुत्व गौरीवचः शंभुः स्मितवाक् शुभवीक्षणः। शृणु त्वं देवदेवेशि दारिद्र्यस्य विनाशनम् ॥२॥
पुरा विश्वसृजा प्रोक्ता कुबेराय महात्मने। विद्या दारिद्र्यसंहर्त्री यक्षिणी पापखण्डिनी ॥३॥
तेन तां तु समादाय मासमाराधिता सुरी। तस्मान्निधिवराणां तु नायको निश्चितोऽभवत् ॥४॥
निर्धनेन महीपेन विद्या सा ब्रह्मणो मुखात्। श्रुत्वा कुबेरवक्त्रेण सोऽभवत् परमेश्वरः ॥५॥
तच्छ्रुत्वा गिरिजा देवी पुनः प्राह च शङ्करम्। कृपा ते विद्यते चित्ते तदा तां मां प्रबोधय ॥६॥
श्रुत्वा पुनश्च पार्वत्या वाक्यमेवं प्रहस्य च। शंभुः प्राह न जानासि भवत्या मूर्तिरेव सा ॥७॥
यां स्मृत्वा याति रङ्कोऽपि भूपालत्वं न संशयः। विद्याधरत्वमाप्नोति किंपुनः बहुभाषितैः ॥८॥
याति लक्षेश्वरत्वं त तद्भक्तो देवि सर्वथा। तद्विद्याराधको लोके यस्मिन् रङ्केऽपि भाषते ॥९॥
भव त्वं वित्तवानेवं सोऽपि लक्षेश्वरो भवेत्। वर्षेणापि हि यो मन्त्रं स्मरेद्बहुधनेश्वरः ॥१०॥
नोपसर्पति दारिद्र्यं तार्क्ष्यं भोगिकुलं यथा। अस्य मन्त्रस्य चोद्धारं प्रवक्ष्ये शृणु पार्वति ॥११॥
यस्यैव ज्ञानमात्रेण महादारिद्र्यनाशनम्। भतुरीयं बिन्दुयुतं लज्जाबीजमनन्तरम् ॥१२॥
लक्ष्मीबीजं ततः प्रोक्त्वा संबोध्य च रतिप्रियाम्। वह्निजायान्वितो मन्त्रः सर्वमन्त्रोत्तमोत्तमः ॥१३॥

लज्जाबीजं ह्रीं, लक्ष्मीबीजं श्रीं, संबोध्य च रतिप्रियां रतिप्रिये, वह्निजाया स्वाहाकारः। तथा—

नाङ्गन्यासकरन्यासौ न च्छन्दो नास्य देवता। ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं शैलसंभवे ॥१४॥
हेमप्राकारमध्ये सुरविटपितले हेमपीठाधिरूढा यक्षी बाला विसर्पत्परिमलबहुलोद्भासिधम्मिल्लभारा।
पीनोत्तुङ्गस्तनाढ्या कुवलयनयना रक्तवर्णा कराग्रैर्भ्राम्यद्रक्तोत्पला भानवरविवसना रक्तभूषाङ्गरागा ॥१५॥

इति ध्यानं विधातव्यं चन्दनेनानुलेपिते। ताम्रपात्रे विधातव्यं मण्डलं सुमनोहरम् ॥१६॥
तत्र पूजा प्रकर्तव्या देव्या एवं मनीषिणा। कुबरेस्य मतेनास्या: पूजैव क्रियते सदा ॥१७॥

अथास्य प्रयोग:—तत्र प्राग्वन्मातृकान्यासान्तं विधाय मूलेन प्राणानायम्य, देवीं ध्यात्वा मानसपूजां विधाय, प्राग्वदर्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते चन्दनानुलिप्ते ताम्रादिपात्रे चतुरस्रवेष्टितं वृत्तं मण्डलं कृत्वा, तत्र देवी-मावाह्यावाहनादिपरमीकरणान्तं तत्तन्मुद्रा विधाय, आसनादिषोडशोपचारै: संपूज्य दुग्धदधिखण्डपायसशर्करानैवेद्यं दत्त्वा ताम्बूलं समर्प्य, मूलमन्त्रं यथाशक्ति जपित्वा, जपं देव्या वामहस्ते समर्प्य, प्रदक्षिणनमस्कारै: परितोष्य विसृजेत्।

३६. रतिप्रिया—अब मैं रतिप्रिया का पृथ्वी पर दुर्लभ साधन कहता हूँ, जिसके जानने-मात्र से दरिद्रता नहीं होती।

करङ्किणी तन्त्र के अनुसार सर्वज्ञ शिव से शिर झुकाकर देवी ने कहा कि हे सर्वज्ञ प्रभो! आप उस कल्प को कहिये, जिससे दरिद्रता का नाश होता है। गौरी के वचन सुनकर स्मित वाक् शुभवीक्षण शिवजी ने कहा कि देवदेवेशि! तुम दारिद्र्य-विनाशन कल्प को सुनो। पहले इसे ब्रह्मा ने कुबेर से कहा था। यह विद्या पापखण्डिनी एवं दारिद्र्य-संहर्त्री है। उनसे प्राप्त करके कुबेर ने एक महीने तक आराधना किया। इसी से वे श्रेष्ठ निधियों के स्वामी हो गये। निर्धन राजा भी कुबेर के मुख से इस विद्या को सुनकर परमेश्वर हो गया। यह सुनकर गिरिजा ने शंकर से फिर पूछा कि आपके चित्त मे जो विद्यमान है। उसे कृपया मुझे बताइये। पार्वती से पुन: सुनकर शंकर ने हँस कर कहा कि तुम उस मूर्ति को अपनी ही नहीं जानती, जिसका स्मरण करके रंक भी राजा हो जाता है और उसे विद्याधरत्व प्राप्त हो जाता है। फिर बहुत कहने से क्या लाभ? उसका भक्त लखपति हो जाता है। एक वर्ष तक जो मन्त्र का स्मरण करता है, वह धनेश्वर हो जाता है। उसके गरुड़ के समान कुल के समीप दारिद्र्य ठीक उसी प्रकार नहीं जाता, जैसे गरुड़ के पास सर्प नहीं जाते। अब मैं इस मन्त्र का उद्धार कहता हूँ, जिसके जानने से ही महादारिद्र्य का नाश हो जाता है। मन्त्र है—रं ह्रीं श्रीं रतिप्रिये स्वाहा। इसमें अंगन्यास, करन्यास, छन्द और देवता का कोई प्रयोजन नहीं होता। हे शैलसम्भवे! इसका ध्यान इस प्रकार है—

हेमप्राकारमध्ये सुरविटपितले हेमपीठाधिरूढा यक्षी बाला विसर्पत्परिमलबहुलोद्भासिधम्मिल्लभारा।
पीनोत्तुङ्गस्तनाढ्या कुवलयनयना रक्तवर्णा कराग्रैर्भ्राम्यद्रक्तोत्पला भानवरविवसना रक्तभूषाङ्गरागा।।

इस प्रकार ध्यान के बाद चन्दन अनुलेपित ताम्रपात्र में सुन्दर मण्डल बनावे। विद्वान् साधक उसमें देवी की पूजा करे। इसी प्रकार कुबेर भी सदा पूजा किया करते थे।

प्रयोग—पूर्ववत् मातृका न्यास के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। देवी का ध्यान करके मानस पूजा करे। अर्घ्यादि स्थापित करके आत्मपूजा करे। चन्दन से अनुलिप्त ताम्रादि के पात्र में पहले वृत्त बनाकर उसके बाहर चतुरस्र मण्डल बनावे। उसमें देवी का आवाहन करके आवाहनादि से परमीकरण तक उपयुक्त मुद्राओं को दिखावे। आसनादि षोडशोपचारों से पूजा करे। दूध, दही, मिश्री, पायस, शक्कर का नैवेद्य देकर ताम्बूल समर्पित करे। मूल मन्त्र का जप यथाशक्ति करे। जप देवी के बाँयें हाथ में समर्पित करे। प्रदक्षिणा एवं नमस्कार से सन्तुष्ट करके देवी का विसर्जन करे।

तथा—

सहस्रं सप्ततिस्तावत् पुरश्चरणमिष्यते। तथा घृतेन खण्डेन मधुना च दशांशकम् ॥१८॥
होमोऽपि च विधातव्योऽमुना दारिद्र्यमुक्तये। रात्रौ च जप्यते चाष्टसहस्रं सप्तवासरान् ॥१९॥
भुक्ते वाप्यथवाभुक्ते पायसान्नं प्रदापयेत्। एतेनापि च सिद्धि: स्यात् पुरश्चर्याधिका भवेत् ॥२०॥
बहु किं कथ्यते देवि निशायां जप्यते सदा। शतं वा दशकृत्वो वा सकृद्वापि च किं पुन: ॥२१॥
न भवेत् तस्य दारिद्र्यमभिजानीहि पार्वति। चन्द्रसूर्यग्रहे वापि जप्या दारिद्र्यमुक्तये ॥२२॥
वित्तं दृष्ट्वान्यलोकस्य जपेदष्टशतं मनुम्। तत्कामाय ददात्येव सदैव तद्विधाय च ॥२३॥

अष्टशतमष्टोत्तरशतमित्यर्थः। तद्विधाय तादृशाय दरिद्रायेति यावत्।

यद्ययं जप्यते मन्त्रः श्वेतपुष्पैश्च पूजयेत्। दरिद्राय स्वयं दत्ते गृहमानीय हेम च ॥२४॥
येनासौ जप्यते मन्त्रः सदा भक्तिपुरःसरम्। तस्य पुत्रश्च पौत्रश्च प्रपौत्रश्चापि तत्सुतः ॥२५॥
दारिद्र्याभिभवं याति न कदाचिन्न संशयः। स्वयं प्राहेति सा यक्षी यो मां स्मरति नित्यशः ॥२६॥
तस्य दारिद्र्यशमनं दासीवत् करवाण्यहम्। इति।

इसका पुरश्चरण सत्तर हजार जप से होता है। घी, मिश्री, मधु मिलाकर हवन करे तो दरिद्रता से छुटकारा प्राप्त होती है। सात रातों तक प्रतिरात आठ हजार मन्त्रजप करे। भोजन करके या बिना भोजन किये पायसान्न प्रदान करे। इतना करने पर भी सिद्धि मिलती है। हे देवि! बहुत क्या कहूँ, रात में एक सौ बार या दश बार सदा मन्त्रजप करे। ऐसा करने से उसे दरिद्रता नहीं होती। दारिद्र्य से मुक्ति के लिये चन्द्र-सूर्यग्रहण में भी जप करे। दूसरे लोक का धन देखकर एक सौ आठ मन्त्रजप करे तो उसकी कामना करने से विधान करने पर देवी सदैव धन देती है। जब इस मन्त्र का जप करे तो उजले फूलों से पूजा करे। ऐसा करने पर वह देवी घर में सोना ला देती है। भक्तिपूर्वक जो इस मन्त्र का सदैव जप करता है, उसके पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, प्रपौत्रपुत्र को कभी भी दरिद्रता नहीं होती। यक्षिणी स्वयं कहती है कि जो मेरा स्मरण नित्य करता है, उसकी दरिद्रता का शमन मैं दासी के समान करती हूँ।

धनदायक्षिणीप्रयोगः

धनदायक्षिणीविधिः सिद्धशावरतन्त्रे—

लपूर्वं बिन्दुसंयुक्तं लक्ष्मीप्रणवमेव च। मायाबीजं समुद्धृत्य संबोध्य च रतिप्रियाम् ॥१॥
वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः।

लक्ष्मीप्रणवं श्रीबीजम्। कुबेरानुमतोऽयं मन्त्रः। अस्या पूजाप्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि कुबेराय ऋषये नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदि धनदायै देवतायै नमः, इति विन्यस्य ममाभीष्टार्थे विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा 'ह्रां हृदयाय नमः' इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यायेत्।

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम्। मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषिताम् ॥२॥
कराभ्यां भ्राम्यत्कह्लारां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम्। हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि ॥३॥
ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले देवीं तां धनदायिकाम्।

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूजयेत्। अस्या यन्त्रम्—

नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत् कर्णिकोपरि। दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं ततो बहिः ॥४॥
कोणेषु वज्रान् संलिख्य मध्ये बीजं समुद्धरेत्।

ततोऽर्घ्यस्थापनम्—फडिति पात्रं प्रक्षाल्य, नमः इत्यापूर्य, ततः प्रणवेन गन्धपुष्पं निक्षिप्य, तीर्थमावाह्य धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणं चाभ्युक्ष्याधारशक्त्यादिज्ञानात्मान्तं पीठं संपूज्य 'पद्माय नमः' इति समस्तं संपूज्य पुनर्ध्यात्वा बाह्यपञ्चोपचारैः पूजयेत्। ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्याङ्गानि केसरेषु मध्ये दिक्षु च 'क्रां हृदयाय नमः' इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। ततो दलेषु ॐ श्रियै नमः। एवं लक्ष्म्यै०, परमायै०, पद्मनेत्रायै०, पद्मालयायै०, रमायै०, हरिप्रियायै०, तारायै०, कमलायै०, अब्जायै नमः। इति संपूज्य, पुनर्मध्ये देवीं संपूज्य धूपदीपादिकं सर्वं प्राग्वत् समर्प्य यथाशक्ति जपित्वा जपं समर्प्य क्षमस्वेति विसर्जयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः।

धनदा यक्षिणी-साधन—सिद्धशावर तन्त्र के अनुसार धनदा मन्त्र इस प्रकार है—रं श्रीं ॐ ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा। कुबेर के मत से मन्त्र है—श्रीं ॐ ह्रीं।

प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक के कर्मों को करने के बाद तीन प्राणायाम करे। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—शिरसि कुबेराय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि धनदायै देवतायै नमः। तदनन्तर 'ममाभीष्टार्थे विनियोगः'—इस प्रकार अञ्जलि बाँधकर कहते हुये ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि से करन्यास और षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर कल्पवृक्ष के मूल में अवस्थित धनदा देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

कुङ्कुमोदरगर्भामां किञ्चिद्यौवनशालिनीम्। मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषिताम्।।
कराभ्यां भ्राम्यत्कह्लारां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम्। हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि।।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार पूजा करे। इसके पूजा यन्त्र में नवत्रिकोण बनाकर उसके बाहर दश दल बनाकर उसके बाहर चतुरस्र बनावे, कोनों में वज्र बनावे और मध्य में बीज लिखे। तदनन्तर अर्घ्य स्थापन में फट् से पात्र धोकर नमः से उसमें जल भरे। प्रणव से गन्ध, पुष्प डाले। तीर्थावाहन कर धेनुमुद्रा दिखावे। उस जल से अपना और पूजा सामग्री का अभ्युक्षण करे। आधार शक्ति से ज्ञानात्मा तक की पीठ पर पूजा करे। 'पद्माय नमः' से पूरे पीठ की पूजा करे। पुनः ध्यान करके बाहर पञ्चोपचार पूजा करे। योनिमुद्रा दिखावे। केसर में अंग पूजा करे। केसर के मध्य में एवं दिशाओं में क्रां हृदयाय नमः इत्यादि से षडङ्ग पूजा करे। दश दल के दलों में—ॐ श्रियै नमः। ॐ लक्ष्म्यै नमः। ॐ परमायै नमः, ॐ पद्मनेत्रायै नमः, ॐ पद्मालयायै नमः, ॐ रमायै नमः, ॐ हरिप्रियायै नमः, ॐ तारायै नमः, ॐ कमलायै नमः, ॐ अब्जायै नमः से पूजा करके पुनः मध्य में देवी की पूजा धूप, दीप आदि पूर्ववत् समर्पित कर यथाशक्ति जप करके उसे समर्पित करके क्षमस्व कहकर विसर्जन करे। एक लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है।

तथा—

प्रजपेदक्षसूत्रेण रत्नादिककृतेन तु। लक्षजप्ते मन्त्रसिद्धिः पुरश्चर्या समाचरेत्।।५।।
विनियोगान्यथा कुर्यात् साधकः स्वमनोरथान्। रात्रौ च जप्यते साष्टसहस्रं सप्तवासरान्।।६।।
एतेनैव सुसिद्धः स्यात् पुरश्चर्यादिको विधिः। किमिहासुलभं देवि साधयेद्यदि मानवः।।७।।
भुक्त्वा वाप्यथवाभुक्त्वा पायसान्नं प्रदापयेत्। दशकृत्वोऽथवा शौचमकृत्वा च कुचैलताम्।।८।।
यः स्मरेद् देवि विद्यां तां दारिद्र्यैर्नाभिभूयते। कामदेवं यजेत् पार्श्वे देव्याः प्रत्यहमादरात्।।९।।
तेन प्रीता महादेवी वाञ्छितार्थं प्रयच्छति। पूजान्ते च समायाति रात्रौ देवी धनेश्वरी।।१०।।
सर्वालङ्कारमुत्सृज्य दत्त्वा याति निजालयम्। धनं च विपुलं दत्त्वा साधकस्य मनोरथान्।।११।।
पूजयित्वा महेशानि वशगा जायते शुभा। यद्वा भक्त्या महादेवि चन्दनेनानुलेपनम्।।१२।।
दातव्यं सर्वदा तस्यै नित्यं दारिद्र्यशान्तये। यक्षिणी स्वयमाहेति यो मां स्मरति मानवः।।१३।।
तस्य दारिद्र्यनिर्नाशं दासीवत् करवाण्यहम्। सहस्रसप्ततिर्यावत् पुरश्चरणमिष्यते।।१४।।
घृतेन खण्डेन तथा मधुना च दशांशतः। होमोऽपि च विधातव्यः क्षणाद् दारिद्र्यशान्तये।।१५।।
पूजा कार्या महादेव्याश्चन्दनेनानुलेपिते। ताम्रपात्रे तथा कार्यं मण्डलं सुमनोहरम्।।१६।।
तत्र पूजा विधातव्या देव्या एवं मनीषिणा। कुतो दारिद्र्यशङ्कास्य स हि कोटीश्वरो नरः।।१७।।
नाङ्गन्यासकरन्यासौ नाङ्गं चैवास्य देवता। कुबेरस्य मतेनास्याः पूजापि क्रियते तथा।।१८।।

इति धनदापरिच्छेदः।

अक्षसूत्र से या रत्नादि की माला से मन्त्रसिद्धि के लिये एक लाख जप करने से इसका पुरश्चरण होता है। अपने मनोरथ के अनुसार साधक इसका विनियोग करे। सात दिनों तक रात में एक हजार आठ जप प्रतिदिन करने से मन्त्र सिद्ध होता है। मनुष्य यदि साधना करे तो इससे क्या सुलभ नहीं है? खाकर या बिना खाये पायस का प्रसाद चढ़ावे। दश क्रिया करके या शौच किए बिना कुचैलता से जो इस विद्या का स्मरण करता है, उसे दारिद्र्य नहीं होता। देवी के बगल में प्रतिदिन आदर से कामदेव की पूजा करे। इससे प्रसन्न होकर महादेवी वांछित अर्थ देती है। पूजा के बाद देवी धनेश्वरी रात में अपने

सभी गहने-कपड़े देकर अपने स्थान पर चली जाती है। साधक को बहुत धन देकर उसका मनोरथ पूरा करती है। पूजा करने से वह वश में होती है। यदि भक्ति से साधक देवी को चन्दन का अनुलेप लगाता है तब वह साधक के दारिद्र्य-नाश के लिये सर्वदा धन देती है। यक्षिणी स्वयं कहती है कि जो मनुष्य मेरा स्मरण करता है, उसकी दरिद्रता का मैं नाश करती हूँ और उसकी दासी होकर सभी कार्य करती हूँ। इसका पुरश्चरण सतर हजार जप से होता है। घृत और खाण्ड मधु से दशांश हवन होता है। तत्काल दारिद्र्य-शान्ति के लिये हवन करना चाहिये। चन्दन-लेपित ताम्रपात्र में मनोहर मण्डल बनाकर पूजा करे। मनीषियों ने देवी की पूजा के लिये ऐसा ही विधान कहा है। इस विधान से पूजा करने पर दरिद्रता की शंका भी नहीं रहती। मनुष्य करोड़पति हो जाता है। इसके न अंगन्यास, न करन्यास, न ही देवता है। कुबेर के इस मत के अनुसार इसकी पूजा करनी चाहिये।

मधुमतीयक्षिणीभेदाः

अथ यक्षिणीभेदाः। तत्रादौ मधुमती—

पाशं मायामङ्कुशं च कामराजं च कूर्चकम्। तारमग्निप्रियान्तोऽयं वसुवर्णः प्रकीर्तितः ॥१॥

'आंह्रींक्रोंक्लींहूंॐस्वाहा'।

मधुच्छन्द ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो मधुमतीति च। मुन्याद्याः पञ्चभिर्बीजैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥२॥

ॐ स्वाहेत्यस्त्रमन्त्रः स्याद् देवीं ध्यायेत् समाहितः। मणिकाञ्चनपीठस्थां सुपर्वगणसेविताम् ॥३॥

दोर्भ्यां नीलाम्बुजयुगं दधानां विशदप्रभाम्। चारुस्मितमुखाम्भोजां देवीं मधुमतीं स्मरेत् ॥४॥

अष्टलक्षं जपित्वान्ते जुहुयात् तद् दशांशतः। बिल्वपत्रैर्घृताक्तैश्च ततो विप्रान् समर्चयेत् ॥५॥

यजेज्जयादिके पीठे नवशक्तिसमन्विते। केसरेषु षडङ्गानि वसुपत्रेषु शक्तयः ॥६॥

निद्रा छाया क्षमा तृष्णा कान्तिरार्या श्रुतिः स्मृतिः। भूपुरे लोकपालांश्च तदस्त्राणि च तद्बहिः ॥७॥

एवं देवीं पूजयितुस्तस्य श्रीः सर्वतोमुखी। भूपतीन् रक्तकमलैस्ताम्बूलैर्योषितो हुतैः ॥८॥

वशयेत् पायसैर्भोगान् प्राप्नोति विपुलान् नरः।

मधुमती यक्षिणी के भेद—मधुमती का अष्टाक्षर मन्त्र है—आं ह्रीं क्रों क्लीं हूं ॐ स्वाहा।

इसके मधुछन्द ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द एवं मधुमती देवता हैं। आं ह्रीं क्रों क्लीं हूं से पञ्चाङ्ग न्यास किया जाता है। ॐ स्वाहा इसका अस्त्र मन्त्र है। न्यास करने के उपरान्त देवी का ध्यान संयत होकर इस प्रकार करे—

मणिकाञ्चनपीठस्थां सुपर्वगणसेविताम्। दोर्भ्यां नीलाम्बुजयुगं दधानां विशदप्रभाम्।।
चारुस्मितमुखाम्भोजां देवीं मधुमती स्मरेत्।

आठ लाख जप करके दशांश हवन घृताक्त बेलपत्रों से करे। तब विप्रों को भोजन कराये। पीठ में जया आदि नव शक्तियों की पूजा करे। केसर में षडङ्ग पूजा करे। अष्ट पत्र में निद्रा क्षमा छाया तृष्णा कान्ति आर्या श्रुति स्मृति—इन आठ शक्तियों की पूजा करे। भूपुर में लोकपालों की और बाहर उनके आयुधों की पूजा करे। जो इस प्रकार से देवी की पूजा करता है, उसकी श्री सर्वतोमुखी होती है। साधक लाल कमल के हवन से राजा होता है, ताम्बूल के हवन से नारियाँ वश में होती हैं और पायस के हवन से विपुल भोग प्राप्त होते हैं।

मधुमत्याः परो मन्त्रो भौतिको बिन्दुना युतः ॥९॥

बिन्दुना युतो भौतिकः ऐं इति।

ध्यायेत् कुमारिकां देवीं पूर्ववद्यजनादिकम्। अर्धकोटिजपादेव नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥१०॥

मधुमती का दूसरा मन्त्र 'ऐं' है। पूर्ववत् पूजन में देवी का ध्यान कुमारी रूप में करे। तदनन्तर 'ऐं' मन्त्र का पचास लाख जप करने पर नाना जापक विद्याओं का खजाना हो जाता है।

माया प्रमदे स्वाहेति षडर्णो मनुरीरिता। ऋषिः शक्तिः स्मृतं छन्दो गायत्रं प्रमदाह्वया ॥११॥
देवता षड्दीर्घयुग्लज्जाबीजेनाङ्गक्रिया मता। सुवर्णाभरणैर्युक्तां कराभ्यां च वराभये ॥१२॥
दधानां मघवाद्यैश्च सेवितां सिद्धकिन्नरैः। सुवर्णवर्णां प्रमदां भावयेत् साधकोत्तमः ॥१३॥
रसलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतैर्हुनेत्। अङ्गदिक्पालवज्राद्यैस्त्रिभिरावरणैर्यजेत् ॥१४॥
ततो वने विविक्ते तु अयुतं नियतो हुनेत्। पायसान्नेन जुहुयात् तद्दशांशं ततः स्वपेत् ॥१५॥
एकविंशं दिनं यावदेवमाचरतो निशि। आगत्य देवीं साभीष्टं ददात्येव न संशयः ॥१६॥

ह्रीं प्रमदे स्वाहा—यह मधुमती का मन्त्र षडक्षर है। इसके ऋषि शक्ति, छन्द गायत्री और प्रमदा देवता हैं। षडदीर्घ युगल 'ह्रीं' से अंग न्यास करके साधक सुवर्णाभरणों से सुशोभित, हाथों में वर एवं अभय धारण करने वाली, इन्द्र आदि देवो एवं सिद्धकिन्नरों से सेवित सुवर्ण वर्ण वाली प्रमदा का ध्यान करे। इस प्रकार ध्यान के बाद छः लाख मन्त्र-जप करके दशांश हवन घी से करे। अंगों, दिक्पालों और वज्रादि, आयुधों की तीन आवरणों में पूजा करे। तब निर्जन वन में नियमसहित दश हजार जप करे। दशांश हवन पायसान्न से करे और वहीं पर शयन करे। इक्कीस दिनों तक रात में इस प्रकार साधना करने पर देवी आकर अभीष्ट प्रदान करती है, इसमें कोई संशय नहीं है।

प्रमदेतिपदं हित्वा प्रमोदे पदमुद्धरेत्। प्रमोदाया महामन्त्रो वाञ्छितार्थप्रदायकः ॥१७॥
प्राग्वदृष्यादिपूजा स्यात् पूर्वसेवा च पूर्ववत्। कृत्वा सरित्तटे विद्वान् मण्डलं चन्दनेन च ॥१८॥
जपो होमश्च कर्तव्यः प्रमोदां पश्यति ध्रुवम्।

उपर्युक्त मन्त्र में प्रमदा के बदले प्रमोदा लगाने से मन्त्र होता है—'ह्रीं प्रमोदे स्वाहा'। प्रमोदा का यह महामन्त्र वाच्छितार्थ-प्रद है। इसकी पूजा एवं समस्त विधि पूर्ववत् है। नदी किनारे चन्दन से मण्डल बनाकर पूजा करे। जप हवन करने से प्रमोदा का दर्शन अवश्य होता है।

तारो हिलिद्वयं वन्दीदेव्यै हृच्छिववर्णकः ॥१९॥
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तस्त्रिष्टुप् छन्दश्च देवता। वन्दीदेवा समुद्दिष्टा ह्येकेन हृदुदीरितम् ॥२०॥
ततो द्विशः षडङ्गानि कृत्वा ध्यायेत् परां शिवाम्। नीलजीमूतसङ्काशां रत्नसिंहासनस्थिताम् ॥२१॥
वराभये कराभ्यां च दधतीं पानपात्रकम्। सेवितां सुरकन्याभिर्भजे वन्दीं भवच्छिदे ॥२२॥
लक्षद्वयं जपित्वान्ते पायसेन ससर्पिषा। तद्दशांशं हुनेत् पीठे प्राक्प्रोक्ते पूजयेच्छिवाम् ॥२३॥
कर्णिकायां षडङ्गानि शक्तीः पत्रेषु संयजेत्। काली तारा भगवती कुब्जाख्या शीतलापि च ॥२४॥
त्रिपुरा मातृका लक्ष्मीर्लोकेशानायुधैः सह। एवमाराधिता वन्दी साधकाय समीहितम् ॥२५॥
दद्यात् त्रिसप्तदिवसमयुतं प्रत्यहं जपेत्। गणेशं पूजयित्वादौ नियमेन समन्वितः ॥२६॥
ततः कारागृहान्मुक्तिमेवं कुर्याद्विचक्षणः। अपूपे चतुरस्रान्तष्ठकारे साध्यनामकम् ॥२७॥
घृतेन विलिखेन्मायां दिक्षु संलिख्य तत्परम्। अष्टादशार्णमन्त्रेण चतुरस्रं प्रवेष्टयेत् ॥२८॥
तारत्रयं वन्द्यमुष्य बन्धान्मोक्षं कुरुद्वयम्। स्वाहान्तेन ततो वन्द्यां स्थिताय तमपूपकम् ॥२९॥
दद्यात् च भक्षयित्वा तु वन्दीमुक्तो भवेन्नरः।

इति श्रीमहामहोपाध्यायभगवत्पूज्यपाद-श्रीगोविन्दाचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे पञ्चविंश श्वासः॥२५॥

●

वन्दी देवी मन्त्र है—ॐ हिलि हिलि वन्दी देव्यै नमः। यह एकादशाक्षर मन्त्र है। इसके भैरव ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द और देवता वन्दी देवी हैं। मन्त्र के ॐ, हिलि, हिलि, वन्दी, देव्यै, नमः—इन छः पदों से षडङ्ग न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

नीलजीमूतसङ्काशां रत्नसिंहासनस्थिताम्। वराभये कराभ्यां च दधतीं पानपात्रकम्।।
सेवितां सुरकन्याभिर्भजे वन्दीं भवच्छिदे।

ध्यान करके मन्त्र का दो लाख जप करे। पायस में सर्पि मिलाकर दशांश हवन करे। पूर्वोक्त पीठ पर शिवा का पूजन करे। कर्णिका में षडङ्गों की, पत्रों में काली, तारा, भगवती, कुब्जा. शीतला, त्रिपुरा, मातृका और लक्ष्मी की पूजा करे। भूपुर मे लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार से आराधित वन्दी देवी साधक को इच्छित फल प्रदान करती है। इक्कीस दिनों तक प्रतिदिन इस मन्त्र का दश हजार जप करे। जप के पूर्व नियमपूर्वक गणेश की पूजा करे तब कारागृह से मुक्ति मिलती है। इसकी पूजा में चतुरस्र बनाकर मध्य में 'ठं' लिखकर उसमें साध्य नाम लिखे। चारो दिशाओं में घी से ह्री लिखे। चतुरस्र को अट्ठारह अक्षरों के मन्त्र से वेष्टित करे। मन्त्र है—ॐ ॐ ॐ वन्द्यमुष्य बन्धान्मोक्षं कुरु कुरु स्वाहा। तब वन्दी देवी के सामने स्थित होकर उस पूए को वन्दी को दे, जिसे खाकर बन्दी कारागार से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र के कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में पञ्चविंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ षड्विंशः श्वासः

वटयक्षिण्यादिभेदाः

अथ यक्षिणीमन्त्राः। सिद्धशावरतन्त्रे—

अथ वक्ष्ये महादेवि समस्ताभीष्टसिद्धिदाम्। महाविद्यां महागोप्यां संप्रीत्या वटयक्षिणीम् ॥१॥
एह्येहि यक्षियुगलं महायक्षिपदं ततः। वटवृक्षनिवास्यन्ते निशीघ्रं मे च सर्व च ॥२॥
सौख्यं कुरुयुगं स्वाहा मन्त्रो द्वात्रिंशदर्णकः। ऋषिः स्याद्विश्रवाश्छन्दोऽनुष्टुप् स्याद्देवता तथा ॥३॥
यक्षिणी वटपूर्वा च वह्नब्ध्यब्धिवसून्मितैः। मुन्यङ्गैश्च षडङ्गानि कुर्यान्मूलाणुवर्णकैः ॥४॥
मूर्ध्नि नेत्रद्वये वक्त्रे नासाकर्णांसयुग्मतः। कुचयोः पार्श्वयोश्चैव हृदि नाभौ तथोदरे ॥५॥
कट्यूरुनाभिजङ्घासु जान्वोश्च मणिबन्धयोः। करयोर्मस्तके न्यस्येन्मन्त्रवर्णान् विशालधीः ॥६॥
रक्तमाल्याम्बरधरां रक्तगन्धानुलेपनाम्। रक्तभूषणभूषाङ्गीं नीलतोयदसंनिभाम् ॥७॥
नागवल्लीदलयुतलताक्रमुकमञ्जरीम्। दधानां मृगनेत्रां च संस्मरेद्वटयक्षिणीम् ॥८॥
लक्षयुग्मं वटाधस्ताज्जपेद् बन्धूकसंभवैः। कुसुमैस्तद्दशांशेन जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥९॥
शाक्ते पीठे यजेद् देवीं प्रोच्यन्ते पीठशक्तयः। कामदा मानदा रक्ता मधुरा मधुरानना ॥१०॥
नर्मदा भोगदा मन्दा प्राणदा पीठशक्तयः। मनोहराय यक्षिण्या योगपीठाय हृन्मनुः ॥११॥
कर्णिकायां षडङ्गानि पत्रेष्वष्टसु शक्तयः। सुनन्दा चण्डिका हासा सुलापा मदविह्वला ॥१२॥
आमोदा च प्रमोदा च सुखदाष्टौ च सिद्धयः। चतुरस्रे लोकपालान् वज्राद्यायुधसंयुतान् ॥१३॥
विविक्ते विपिने गत्वा न्यग्रोधाधस्तले जपेत्। सहस्रं प्रत्यहं मन्त्री सप्तमे दिवसे तथा ॥१४॥
मण्डलं चन्दनैः कृत्वा घृतदीपं प्रकाशयेत्। तन्मण्डले यजेद् देवीं नियतो वटयक्षिणीम् ॥१५॥
आनिशीथं तदग्रे तु प्रजपेन्मन्त्रनायकम्। मञ्जीरशब्दं गीतं च श्रुत्वा निर्भयतो जपेत् ॥१६॥
देवी प्रत्यक्षतां याति तदा वै सुरतार्थिनी। तत्कामपूरणेनास्मै दद्याद्वाञ्छितमुत्तमम् ॥१७॥
तदारभ्य च भार्यावत् साधकस्यानुतिष्ठति।

१. यक्षिणी मन्त्र—सिद्धशावर तन्त्र में ईश्वर ने कहा है कि हे महादेवि! अब मैं सभी अभीष्टों को देने वाली महागोप्या वटयक्षिणी को प्रसन्न करने वाली महाविद्या को कहता हूँ। यह महाविद्या बत्तीस अक्षरों की है—एह्येहि यक्षि यक्षि महायक्षि वटवृक्षनिवासिनि शीघ्रं मे सर्वसौख्यं कुरु कुरु स्वाहा। इसके ऋषि विश्रवा, छन्द अनुष्टप् और देवता वटयक्षिणी है। मन्त्र के ३,४,४,८,७,६ अक्षरों से षडङ्ग न्यास करे। जैसे—ॐ एह्येहि हृदयाय नमः, यक्षि यक्षि शिरसे स्वाहा, महायक्षि शिखायै वषट्, वटवृक्ष-निवासिनि कवचाय हुं, शीघ्रं मे सर्वसौख्यं नेत्रत्रयाय वौषट्। कुरु कुरु स्वाहा अस्त्राय फट्। मन्त्रवर्णों से न्यास मूर्धा, नेत्रद्वय, मुख, दो नासा, दो कान, दोनों स्तनों, दोनों पार्श्वों, हृदय, नाभि, उदर, कटि, ऊरु, नाभि, जाँघों, घुटनों, मणिबन्धों, हाथों और मस्तक में करे। तदनन्तर निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तमाल्याम्बरधरां रक्तगन्धानुलेपनाम्। रक्तभूषणभूषाङ्गीं नीलतोयदसंनिभाम्॥
नागवल्लीदलयुतलताक्रमुकमञ्जरीम्। दधानां मृगनेत्रां च संस्मरेद्वटयक्षिणीम्॥

वट वृक्ष के नीचे बैठकर दो लाख जप करे। मन्त्रसिद्धि के लिये दशांश हवन बन्धूक-फूलों से करे। शाक्त पीठ में पूजा करे। पीठ शक्तियाँ हैं—कामदा, मानदा, रक्ता, मधुरा, मधुरानना, नर्मदा, भोगदा, मन्दा प्राणदा एवं 'मनोहराय यक्षिण्या योगपीठाय नमः' से पीठपूजा करे। कर्णिका में षडङ्ग पूजा करे। अष्टपत्रों में सुनन्दा, चण्डिका, हासा, सुलापा, मदविह्वला,

आमोदा, प्रमोदा और सुखदा—इन आठ शक्तियों की पूजा करे। आठों सिद्धियों की पूजा भी अष्टपत्र के आठों पत्रों के आगे करे। चतुरस्र में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। निर्जन वन में जाकर वटवृक्ष के नीचे प्रतिदिन एक हजार मन्त्रजप करे। सातवें दिन चन्दन से मण्डल बनाकर घी का दीपक प्रकाशित करे। उस मण्डल में देवी वटयक्षिणी की पूजा करे। साधक रात भर उसके आगे जप करे। मञ्जीरे के शब्द के साथ गीत को सुनकर भी निर्भयता से जप करता रहे। तब उसके समक्ष मैथुन की इच्छा से देवी प्रत्यक्ष होती हैं और उसकी कामेच्छा को साधक द्वारा तुष्ट करने पर उत्तम वांछित प्रदान करती है एवं तभी से वह साधक की पत्नी बनकर उसके साथ रहती है।

रमाद्वयं यक्षिणी हंत्रयं स्वाहा महामनुः ॥१८॥

'श्रीं श्रीं यक्षिणि हंहंहं स्वाहा।'

दशाक्षरो मुनिः प्राग्वत् पंक्तिश्छन्द उदाहृतम्। यक्षिणी देवता प्रोक्ता ह्येकैकत्रित्रियुग्मतः ॥१९॥
सर्वैरङ्गक्रिया प्रोक्ता ध्यायेच्चम्पककानने। सिंहासने समासीनां स्वर्णरत्नविभूषणाम् ॥२०॥
रक्ताम्बरधरां रक्तामप्सरोगणसेविताम्। ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षं जपापुष्पैर्दशांशतः ॥२१॥
हुनेत् पूर्वोदिते पीठे यजेत् सर्वेष्टदा भवेत्।

२. **यक्षिणी**—यक्षिणी का मन्त्र है—श्रीं श्री यक्षिणि हं हं हं स्वाहा। यह दशाक्षर मन्त्र है। इसके ऋषि विश्रवा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता यक्षिणी है। इसके १,१,३,३,२ मन्त्रवर्णों से अंगन्यास करके चम्पकवन में आसीन देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

सिंहासने समासीनां स्वर्णरत्नविभूषणाम्। रक्ताम्बरधरां रक्तामप्सरोगणसेविताम्॥

इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का एक लाख जप करे। दशांश हवन अड़हुल के फूलों से करे। पूर्वोक्त पीठ पर पूजा करे तो देवी समस्त इष्ट प्रदान करने वाली होती है।

प्रणवं क्रोधियुक् सेन्दुमनुग्रहमुदीरयेत् ॥२२॥

मदनान्ते मेखले स्यान्नमःस्वाहान्तको मनुः। रव्यर्णोऽस्याः समर्चादि प्राक्प्रोक्तविधिना चरेत् ॥२३॥
'ओं कौं मदनमेखले नमः स्वाहा'।

मधूकतरुमूले तु चतुर्दशदिनावधि। अयुतं प्रत्यहं जप्यात् सहस्रं जुहुयात् सुधीः ॥२४॥
मधुराक्तैर्मधूकोत्थपुष्पैस्तत्काष्ठदीपिते। वह्नौ तुष्टाञ्जनं यच्छेद्येन पश्यति भूनिधिम् ॥२५॥

३. **मदनमेखला**—ॐ कौं मदनमेखले नमः स्वाहा। यह द्वादशाक्षर मन्त्र है। पूर्वोक्त विधि से ही इसका अर्चन किया जाता है। महुआ वृक्ष के नीचे बैठकर साधक चौदह दिनों तक प्रतिदिन दश हजार मन्त्रजप करे और एक हजार हवन मधुराक्त महुआ के फूलों से महुआ काष्ठ द्वारा प्रज्वलित अग्नि में करे तो प्रसन्न होकर देवी अंजन प्रदान करती है, जिससे साधक भूमि में गड़े धन को देखता है।

तारं वाग्भवमुद्धृत्य विशाले भुवनेश्वरी। श्रीः कामः स्वाहया युक्तो मन्त्रः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥२६॥
प्राग्वन्मुन्यादिके ज्ञेयं चिञ्चावृक्षतले शुचिः। जपेल्लक्षं दशांशेन शतपत्रैर्हुनेत् ततः ॥२७॥
विशाला यक्षिणी तुष्टा साधकाय रसायनम्। प्रयच्छेद्येन दीर्घायुराप्नुयात् साधकोत्तमः ॥२८॥
इति यक्षिणीप्रकरणम्।

४. **विशाला**—मन्त्र है—ॐ ऐं विशाले ह्रीं श्रीं क्लीं स्वाहा। यह दशाक्षर मन्त्र है। इसके ऋष्यादि पूर्ववत् हैं। इमली के पेड़ के नीचे पवित्रतापूर्वक एक लाख मन्त्र-जप करे और उसका दशांश हवन कमल से करे तब विशाला यक्षिणी सन्तुष्ट होकर साधक को रसायन देती है, जिसके सेवन से साधक को दीर्घायु प्राप्त होती है।

राजमातङ्गिनीमन्त्रविधानम्

अथ मातङ्गीप्रकरणम्। उत्तरतन्त्रे—

राजमातङ्गिनीमन्त्रं प्रवक्ष्यामि यथाविधि। यत्पादद्वन्द्वसरसीरुहसंस्मृतितो नरः ॥१॥
लभते मुक्तिमतुलां दुष्प्रापां सिद्धिसञ्चयैः। येन चाकर्षणं साध्यवशीकारो यतो भवेत् ॥२॥
येन वाञ्छितमाप्नोति यशस्वी नियतं भवेत्। दुरितौघप्रविध्वंसः सौभाग्याप्तिश्च निश्चिता ॥३॥
सेवितं सन्ततिकरं (न स्यात्) निगडबन्धनम्। समस्तेषु च शास्त्रेषु पाण्डित्यमधिकं भवेत् ॥४॥
विशिष्टशिष्टगम्भीरपदविन्यासकोमले। ललिते च कवित्वेऽसौ प्रगल्भः सुतरां भवेत् ॥५॥
सङ्गीते सर्वविद्यासु चात्यन्तं निपुणो भवेत्। मन्दिरे तस्य कमला साध्वनश्वरविभ्रमा ॥६॥
निरन्तरं च वसति नात्र कार्या विचारणा। किमत्र बहुनोक्तेन वचसां पतिरेव सः ॥७॥
कान्त्या रतिपतिर्लक्ष्म्या कमलापतिरप्यसौ। द्वादशो दण्डियुग् व्योम वह्निदण्डित्रिमूर्तियुक् ॥८॥
तादृग्रूपं भवेदस्थि सद्यो बिन्दुयुतं च हृत्। भत्योर्मध्ये गवार्णौ स्तो विबिन्दुः कमला विषम् ॥९॥
कान्तियुक् कामिका बिन्दुयुता काच्च तृतीयकम्। शिवयुक् श्वरिशब्दान्ते भृगुरग्निश्च केवलः ॥१०॥
अम्बु द्वितीयवर्गस्य मध्यस्थं च तपञ्चमम्। विषं नो व्योमा वह्निदृक् सर्वान्ते मु च कात्परम् ॥११॥
राजिसर्वमुखं प्रोक्त्वा सबिन्दुर्वह्निरीरितः। जिन्यन्ते प्रवदेत् सर्वं वशंकर्योस्तु मध्यतः ॥१२॥
राज स्त्रीपुरुषं दुष्टमृगं सत्त्वं चतुर्षु च। स्थानेषु सर्वलोकान्ते विषं तत्कर्णयुक् च कम् ॥१३॥
आदित्यः शिवयुग् नीरं तदन्तं कान्तियुग् रविः। दीर्घा मरुच्च भृग्वम्ब्वा व्योम कान्तियुतं मनुः ॥१४॥
अष्टाशीत्यक्षरः प्रोक्तः सर्वकामसमृद्धिदः। रक्षार्थं सर्वलोकानामायुरारोग्यवर्धनः ॥१५॥
शान्तिके पौष्टिके चैव वृद्धिसिद्धिकरः प्रिये। अपमृत्युजपः श्रीदो ह्यपस्मारक्षयङ्करः ॥१६॥
सर्वज्वरांश्च शूलानि शक्तो नाशयितुं क्षणात्। राजद्वारे विशेषेण संग्रामे रिपुसङ्कटे ॥१७॥
अग्निचोरनिपातेषु सर्वग्रहनिवारणे। राक्षसेषु पिशाचेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ॥१८॥
नदीप्रतरणे दुर्गे संग्रामे प्राणसंशये। असौ मन्त्रः प्रयुक्तः स्यादेतत्सर्वनिवारणः ॥१९॥
स्त्रीणां सौभाग्यहीनानामपुत्राणां विशेषतः। अपुष्या यानपत्या या सदा पुष्पवती च या ॥२०॥
पतिद्वेष्या च या नारी दुष्टा श्वश्रूजनं प्रति। या वन्ध्या मृतपुत्रा च निद्रालस्यमहाभयैः ॥२१॥
इत्येवमादिदोषैश्च दुष्टानां योषितामयम्। शक्तस्तद् दोषहरणे स्मरणादेव निश्चितम् ॥२२॥
स्त्रीवश्यनरवश्यादिसर्ववश्यजयप्रदः। स्त्रीणां संमोहने शक्तो नराणां च विशेषतः ॥२३॥
मतङ्गमुनिना पूर्वं गीतस्तेनाप्यनुष्ठितः। वासुदेवेन गीतोऽयं तुम्बुरुप्रमुखादिभिः ॥२४॥
जप्तः सदा महामन्त्रो वसिष्ठाद्यैर्महर्षिभिः।

द्वादशः ऐ दण्डी अनुस्वारस्तद्युक्तस्तेन ऐं। व्योम ह, वह्नी रेफः, दण्डी अनुस्वारः, त्रिमूर्तिः ई तेन ह्रीं। अस्थिः शकारः। तादृग्रूपं वह्निदण्डित्रिमूर्तियुतमित्यर्थः तेन श्रीं। सद्यः ओकारः। बिन्दुरनुस्वारस्तेन ॐ। हृन्नमः। भत्योर्मध्ये गवार्णौ तेन भवगति। विबिन्दुः कमला श्री। विषं म कान्तियुक् आकारयुक्ता तेन मा। कामिका, बिन्दुयुता तेन तं। कतृतीयं ग, शिवः ए तेन गे। श्वरि स्वरूपं। भृगुः स। अग्नी रेफः केवलः स्वररहितोऽम्बु वकारस्तेन र्व। द्वितीयवर्गस्य मध्यस्थं ज, तपञ्चमं न, विषं म, नो स्वरूपं, व्योम ह, आ स्वरूपं तेन हा, वह्नि र, दृक् इ तेन रि। सर्व स्वरूपं, मु स्वरूपं, कात्परं ख, राजि स्वरूपं, सर्वमुख स्वरूपं, सबिन्दुर्वह्निः रं, जिनि स्वरूपं, सर्ववशङ्कर्योर्मध्ये राजपदं स्त्रीपुरुषपदं दुष्टपुरुषपदं दुष्टमृगपदं सत्त्वपदं च प्रत्येकं वदेत् 'चतुर्षु स्थानेष्वि'त्युक्तेः। सर्वलोक स्वरूपं, विषं म, तत्कर्णयुक्तं तेन मु। कं स्वरूवम्। आदित्यः म, शिवयुगेकारयुक्तं तेन मे। नीरं व, तदन्तं श, कान्तियुग्रविर्मा, दीर्घा न, मरुत् य। भृगुः स, अम्बु व, आ स्वरूपं तेन स्वा। व्योम ह, कान्तिः आ तेन हा। स्पष्टम्—'ऐंह्रींश्रींॐनमो

भगवति श्रीमातङ्गेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखराजि सर्वमुखरञ्जिनि सर्वराजवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि सर्वदुष्टमृगववशङ्करि सर्वसत्त्वशङ्करि सर्वलोकममुकं मे वशमानय स्वाहा' (८८)।

राजमातङ्गिनी मन्त्र—उत्तरतन्त्र में ईश्वर ने कहा है कि अब मैं राजमातङ्गिनी मन्त्र को यथाविधि कहता हूँ, जिस राजमातङ्गिनी देवी के दोनों चरणकमलों का स्मरण करके मनुष्य मुक्ति के साथ-साथ अतुल्य दुष्प्राप्य सिद्धिसमूह को भी प्राप्त करता है, जिससे साध्य का आकर्षण एवं वशीकरण होता है, जिससे साधक वांछित फल प्राप्त करके यशस्वी होता है। दु:साध्य रोग नष्ट होते हैं, सौभाग्य प्राप्त होता है। इसकी पूजा करने से सन्तति मिलती है एवं निगडबन्धन से छुटकारा होता है। सभी शास्त्रों में विलक्षण पाण्डित्य प्राप्त होता है। विशिष्ट गम्भीर पदविन्यास-सहित कोमल ललित कवित्व में वह प्रगल्भ हो जाता है। संगीत और सभी विद्याओं में अत्यन्त निपुण हो जाता है। उसके घर में लक्ष्मी सदैव विद्यमान रहती है। बहुत क्या कहा जाय, वह साक्षात् वाचस्पति हो जाता है। कान्ति से वह कामदेव और लक्ष्मी से विष्णु हो जाता है। मूलोक्त श्लोक ८-१४ के उद्धार करने पर राजमातङ्गिनी का अट्ठासी अक्षरों का मन्त्र बनता है—ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गेश्वरी सर्वजनमनोहारि सर्वसुखराजि सर्वमुखरञ्जिनि सर्वराजवशंकरि सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि अमुकं सर्व-लोकं मे वशमानय स्वाहा।

यह मन्त्र सर्व काम-समृद्धिप्रदायक है। सभी लोकों की रक्षा के लिये एवं आयु, आरोग्य, धन, शान्ति तथा पुष्टि की वृद्धि और सिद्धि देने वाला है। अपमृत्यु पर विजय, धनद और मृगी रोग का नाशक है। ज्वरपीड़ा को क्षण भर में नष्ट करने वाला है। विशेषकर राजद्वार में, शत्रु से युद्ध के संकट में, अग्नि और चोर से रक्षा में एवं समस्त ग्रहों के निवारण में यह समर्थ है। राक्षस-पिशाच-गन्धर्व-सर्पों से यह रक्षा करता है। नदी पार करने में, दुर्ग संग्राम में, प्राणसंकट में इस मन्त्र का प्रयोग करने से सबों का निवारण होता है। सौभाग्यहीना, वन्ध्या, अपुष्पा, अनपत्या, सदा पुष्पवती, पतिद्वेष्या या श्वसुर जन के प्रति दुष्टा या वन्ध्या या मृतपुत्रा, निद्रा-आलस्य-महाभय आदि से युक्त स्त्री के दोषों का नाश इस मन्त्र के स्मरण मात्र से हो जाता है। यह स्त्री वश्य, पुरुष वश्य. सर्ववश्य एवं जयप्रद है। इससे स्त्रियों का एवं पुरुष का सम्मोहन हो सकता है। पहले मतङ्ग मुनि ने इसका अनुष्ठान किया था, वासुदेव ने भी किया था, तुम्बरु ने इसका गायन किया था और वसिष्ट आदि महर्षियों ने भी इस मन्त्र का जप किया था।

तथा—

दक्षिणामूर्तिरस्य स्यादृषिश्छन्द उदाहृतम्। गायत्रं देवता प्रोक्ता मातङ्गी सर्वसिद्धिदा ॥२५॥
एकविंशतिभिर्वर्णैर्हृदयं समुदाहृतम्। त्रयोदशभिरर्णैः स्याच्छिरश्चाष्टादशार्णकैः ॥२६॥
शिखा तावद्भिरर्णैः स्यात् कवचं दशभिस्त्रिभिः। नेत्रं द्वाभ्यामथास्त्रं स्यान्मन्त्रवर्णैर्विभागशः ॥२७॥
वाङ्मायाकमलाद्याद्यैर्न्यासं कुर्यात् कराङ्गयोः।

आद्यैः प्रथमोक्तैरेकविंशतिभिर्वर्णैः तेन चतुर्विंशतिवर्णात्मको हृदयमन्त्रः। 'वर्णैश्चतुर्भिर्विंशत्या स्याद्हृदिति' शारदातिलकवचनात्।

शिरोललाटभ्रूमध्ये तालुकण्ठगलोरसि। अनाहते भुजद्वन्द्वे जठरे नाभिमण्डले ॥२८॥
स्वाधिष्ठाने गुह्यदेशे पादयोर्दक्षिणान्ययोः। मूलाधारे गुदे न्यसेत् पदान्यष्टादश क्रमात् ॥२९॥
कण्ठस्तन्मणिः, गलस्तदधः।

गुणैकद्विचतुः षड्भिर्वसुषट्पर्वताष्टभिः। दशपंक्त्यष्टवेदाग्निचन्द्रयुग्मगुणाक्षिभिः ॥३०॥

गुणास्त्रयः, वसवोऽष्टौ, पर्वताः सप्त, पङ्क्तिर्दश, वेदाश्चत्वारः, अग्नयस्त्रयः, चन्द्र एकः, अक्षि द्वयम्। तथा—

पदपङ्क्तिरियं प्रोक्तं मन्त्रवर्णैर्यथाक्रमम्।

इसके ऋषि दक्षिणामूर्ति, छन्द गायत्री और देवता सर्वसिद्धिदा मातङ्गी हैं। मन्त्र के इक्कीस अक्षरों से हृदय में, तेरह अक्षरों से शिर में, अट्ठारह अक्षरों से शिखा में, अट्ठारह अक्षरों से कवच में दश अक्षरों से त्रिनेत्रों में और दो अक्षरों से अस्त्रन्यास किया जाता है। पहले इक्कीस वर्णों के पूर्व ऐं ह्रीं श्रीं लगाकर चौबीस अक्षरों से हृदय में न्यास करना चाहिये—ऐसा शारदातिलक में कहा गया है। मन्त्र के अट्ठारह पदों का न्यास शिर, ललाट, भ्रूमध्य, तालु, कण्ठ, हृदय, अनाहत, दोनों भुजाओं, उदर, नाभिमण्डल, स्वाधिष्ठान, गुह्यदेश, दाँयें-बाँयें पैरों में, मूलाधार में एवं गुदा में करना चाहिये।

अट्ठारह पदों में क्रमशः ३,१,२४,६,८६,७८,१०,१०,८,४,३१,२,३,२ इतने अक्षर होते हैं। इसे पदपंक्ति कहते हैं। इसी प्रकार न्यास करना चाहिये।

(रत्याद्या मूलहृदयभ्रूमध्येषु विचक्षणः ॥३१॥

वाक्शक्तिलक्ष्मीबीजाद्या मातङ्ग्यन्ताः प्रविन्यसेत्) । शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु च प्रविन्यसेत् ॥३२॥

हृल्लेखां गगनां रक्तां भूयो मन्त्री करालिकाम् । महोच्छुष्मां स्वनामाद्यवर्णबीजपुरःसराः ॥३३॥

मातङ्ग्यन्ताः प्रविन्यस्य बाणन्यासमथाचरेत् । मूर्ध्नि पादास्यगुह्येषु हृदम्भोजे प्रविन्यसेत् ॥३४॥

द्राविणीं शोषिणीं भूयो बन्धिनीं मोहिनीं पुनः । आकर्षिणीं स्वनामादिबीजाद्याः शुभलक्षणाः ॥३५॥

स्वनाम्नामाद्यवर्णा एव बीजानि यासां तास्तदाद्या इत्यर्थः। (केचित्तु स्वनामादौ पूर्वोक्तबीजाद्या इति वदन्ति, एवं चेदाद्यशब्दवैयर्थ्यप्रसङ्गो दुष्परिहरः।)

मातङ्ग्यन्तास्ततो न्यसेन्मन्मथान् वदनांसयोः । पार्श्वकट्योर्नाभिदेशे कटिपार्श्वांसके पुनः ॥३६॥

बीजत्रयादिकान् मन्त्रीं मन्मथं मकरध्वजम् । मदनं पुष्पधन्वानं पञ्चमं कुसुमायुधम् ॥३७॥

षष्ठं कन्दर्पनामानं मनोभवरतिप्रियौ । मातङ्ग्यन्तांस्ततो न्यसेत् स्थानेष्वेतेषु मन्त्रवित् ॥३८॥

बीजत्रयं मूलमन्त्राद्यम्।

प्रथमानङ्गकुसुमा भूयोऽन्यानङ्गमेखला । अनङ्गमदना तद्वदनङ्गमदनातुरा ॥३९॥

अनङ्गमदनोद्वेगा भूयश्चानङ्गसंभवा । सप्तम्यनङ्गभुवनपालिनी स्यादथाष्टमी ॥४०॥

अनङ्गशशिरेखाख्या मातङ्ग्यन्ताः प्रकीर्तिताः । विन्यस्तव्यास्ततो मूलेऽधिष्ठाने मणिपूरके ॥४१॥

हृत्कण्ठास्ये भ्रुवोर्मध्ये मस्तके मन्त्रिणा ततः । आद्ये लक्ष्मीसरस्वत्यौ रतिः प्रीतिश्च कीर्तिका ॥४२॥

शान्तिः पुष्टिस्तथा तुष्टिर्मातङ्गीपदशेखरा । मूलमन्त्रं प्रविन्यस्य निजमूर्धनि मन्त्रवित् ॥४३॥

(आधारदेशेऽधिष्ठाने नाभौ पश्चादनाहते । कण्ठे वक्त्रे भ्रुवोर्मध्ये मस्तके विन्यसेत् क्रमात् ॥४४॥

ब्राह्म्याद्याः पूर्वमुद्दिष्टा मातङ्गीपदपश्चिमाः । एषु स्थानेषु विन्यसेदसिताङ्गादिभैरवान् ॥४५॥

असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोधोन्मत्तकपालिनः । भीषणाख्यश्च संहार इत्यष्टौ भैरवाः स्मृता ॥४६॥)

आधारदेशेऽधिष्ठाने नाभौ पश्चादनाहते । कण्ठदेशे भ्रुवोर्मध्ये बिन्दौ भूयः कलापदे ॥४७॥

निरोधिकायामर्धेन्दौ नादनादान्तयोः पुनः । उन्मन्यां विषुवक्त्रे च ध्रुवमण्डलके शुभे ॥४८॥

भ्रूमध्यादिशिवान्तानि स्थानान्यूर्ध्वोर्ध्वं ज्ञेयानि।

प्रमथा भाविनी विद्युन्माला चिच्छक्तिरप्यथ । ततश्च सुन्दरानन्दा नागवल्लीरिति क्रमात् ॥४९॥

शिरोभालहृदाधारेष्वेता बीजत्रयादिकाः । मातङ्ग्यन्ताः प्रविन्यसेद्यथावद् देशिकोत्तमः ॥५०॥

मातङ्गीं महदाद्यन्तां महालक्ष्मीपदादिकाम् । सिद्धलक्ष्मीपदाद्यन्तां मूलमाधारमण्डले ॥५१॥

न्यस्य तेनैव कुर्वीत व्यापकं देशिकोत्तमः । एवं न्यस्तशरीरोऽसौ चिन्तयेन्मन्त्रदेवताम् ॥५२॥

अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोरमे । स्वर्णप्राकारसंवीते मण्डपे रत्ननिर्मिते ॥५३॥

कदम्बबिल्वकह्लारकल्पवृक्षोपशोभिते । (वेदिमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे ॥५४॥

अष्टपत्रं महापद्मं केसराढ्यं सकर्णिकम् । तन्मध्ये च त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं ततो बहिः ॥५५॥
पुनः षोडशपत्रं स्यात्तद्वाह्ये स्याच्चतुर्दलम् । वेदास्त्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम् ॥५६॥)
तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम् । कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरैः ॥५७॥
प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्रलेखावतंसिकाम् । ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम् ॥५८॥
किञ्चित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्ज्वलाम् । वलीतरङ्गमध्यां तां रोमराजीविराजिताम् ॥५९॥
सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम् । नानामणिगणोन्नद्धकटिसूत्रैरलंकृताम् ॥६०॥
वलयै रत्नखचितैः केयूरैर्मणिभूषितैः । भूषितां द्विभुजां बालां मधुघूर्णितलोचनाम् ॥६१॥
आपीनमण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम् । प्रलम्बकर्णाभरणां कर्णोत्तंसविराजिताम् ॥६२॥
तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम् । चतुःषष्टिकलारूपपार्श्वस्थशुकशारिकाम् ॥६३॥
कोटिबालार्कसङ्काशां जपाकुसुमसंनिभाम् । एवं वा पीतवर्णां वा ध्यायेन्मातङ्गिनीं पराम् ॥६४॥
एवं ध्यात्वा समाराध्य मानसैरुपचारकैः । अर्घ्यादिपात्राण्यासाद्य पूजयेत् परमेश्वरीम् ॥६५॥ इति।

मातङ्गमनुकोशे—मध्याविःशक्तितेजो रसवसुचतुरस्रस्थमाधारमग्नेः पात्रं सूर्यस्य सोमस्य च विमलजलं मण्डलं भावयित्वा' इति। अर्घ्याधारमण्डलमाह—मध्याविरिति। शक्तिर्भुवनेश्वरीबीजं, वह्नि(बहिः)त्रिकोणमिति यावत्। रसः षट्कोणम्। वसु अष्टकोणम्। मण्डलमित्यग्नेरित्यादिषु त्रिषु स्थानेषु संबध्नाति। सारसंग्रहे—

धर्मादिक्लृप्ते पूर्वोक्ते पीठे शक्तीर्नवार्चयेत् । मातङ्ग्यन्ता विभूतिश्च उन्नतिः कान्तिरेव च ॥१॥
सृष्टिः कीर्तिः संनतिश्च व्युष्टिरुत्कृष्टिरेव च । ऋद्धिश्च नवमी प्रोक्ता मातङ्ग्याः पीठशक्तयः ॥२॥
वाङ्मायाकमलासर्वशक्त्यन्ते कमलापदम् । सनाय नम इत्युक्त्वा मातङ्ग्याः पीठमर्चयेत् ॥३॥
देव्या मूर्तिं च मूलेन कल्पयित्वा यथाविधि । पुनर्मूलं परस्यै श्रीमातङ्गीमूर्तये नमः ॥४॥
अर्चयेद्गन्धपुष्पाद्यैस्तां मूर्तिं साधकोत्तमः । तस्यामावाहयेद् देवीमर्चयेच्च विधानवित् ॥५॥
रत्याद्याः पूजयेन्मन्त्री त्रिषु कोणेषु च क्रमात् । पुरतो दक्षिणे सव्ये रतिः प्रीति(र्मनोभवा) ॥६॥
पाशाङ्कुशकरे श्वेतासिते चान्ये च साञ्जलिः । अरुणा सेक्षुकोदण्डपञ्चबाणलसत्करा ॥७॥
मध्ये दिक्षु च संपूज्या हृल्लेखाद्या यथाक्रमम् । गुणसृण्यभयेष्टानि वहन्त्यो भूतसप्रभाः ॥८॥
अग्नीशरक्षःपवनकोणेष्वग्रे दिशासु च । यजेदङ्गानि मन्त्रज्ञः पञ्चबाणांस्ततोऽर्चयेत् ॥९॥
दिक्ष्वग्रे क्रमतो मुक्तास्वर्णविद्रुमहीरकान् । अमलारुणभायुक्तान् धनुर्बाणधरांस्तथा ॥१०॥
दलेषु पूजयेदग्रादनङ्गकुसुमादिकाः । गुणसृण्यभयेष्टानि धारयन्त्योऽरुणप्रभाः ॥११॥
अग्रे दलानां संपूज्या रत्याद्याश्चारुभूषणाः । लक्ष्मीर्हेमप्रभा पद्मकरान्या शङ्खसन्निभा ॥१२॥
चिन्मुद्रापुस्तककरा धनुर्बाणकरे परे । श्वेतासिते कुन्दसमा चिन्मुद्राब्जकरा परा ॥१३॥
चिन्मुद्राभययुक् शान्तिररुणान्ये भयेष्टदे । द्वितीयेऽष्टदले पूज्या मन्मथाद्या मदोद्धताः ॥१४॥
पुर आकृष्टचापज्याः पृष्ठतः सनिषङ्गकाः । पत्रसंस्था मातरः स्युस्तदग्रे चाष्टभैरवाः ॥१५॥
कपालशूलडमरुवेतालासक्तपाणयः । दीर्घस्वाराद्या ब्राह्म्याद्या ह्रस्वाद्या भैरवा अपि ॥१६॥
ततः षोडशपत्रस्था वामाद्याः श्यामविग्रहाः । आदर्शं रत्नदीपं च व्यजनं च ततः परम् ॥१७॥
नागवल्लीदलं चैव चामरं ज्ञानकोशकम् । वासोमाल्यातपत्राण्याभरणं शुकशारिके ॥१८॥
चामरं रत्नचषकं तालवृन्तं प्रदीपकम् । बिभ्राणा वामहस्तैश्च देव्यग्रे नतिपाणयः ॥१९॥
रक्तवर्णाश्च विमला भावयन्नर्चयेदिमाः । वादयन्त्यः सदा वीणां चतुष्पत्रे ततोऽर्चयेत् ॥२०॥
मातङ्ग्याद्यास्तासु चाद्या पाशाङ्कुशवराभयैः । अलंकृतभुजा रक्ता द्वितीया चेन्दुसप्रभा ॥२१॥
असिखेटकशूलाह्वमुण्डहस्ता तथापरा । पाशाङ्कुशसरोजानि शालिपुञ्जं च बिभ्रती ॥२२॥

अरुणा चान्तिमा हेमरत्नपात्रे वराभये। दधाना श्यामवर्णा च ध्यातव्या मन्त्रिसत्तमैः ॥२३॥
अग्निनैर्ऋतवायव्यरुद्रकोणेषु संयजेत्। गणेशदुर्गावटुकक्षेत्रपांस्तद्बहिर्यजेत् ॥२४॥
चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च तद्बहिः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ॐ दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीमातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गीश्वरि सर्वजनमनोहारि हृदयाय नमः। ३ँ सर्वमुखराजि सर्वमुखरञ्जिनि शिरसे स्वाहा। ३ँ सर्वराजवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि शिखायै वषट्। ३ँ सर्वदुष्टमृगवशङ्करि सर्वसत्त्ववशङ्करि कवचाय हुं। ३ँ सर्वलोकममुकं मे वशमानय नेत्रत्रयाय वौषट्। ३ँ स्वाहा अस्त्राय फट्। इति षोढाविभक्तैर्मन्त्रवर्णैः करषडङ्गन्यासान् विधाय, शिरसि ऐंह्रींश्रीं नमः। ललाटे ॐ०। भ्रूमध्ये नमो०। तालुनि भगवति०। कण्ठे श्रीमातङ्गीश्वरि०। गले सर्वजनमनोहारि०। उरसि सर्वमुखराजि०। अनाहते सर्वमुखरञ्जिनि०। दक्षभुजे सर्वराजवशङ्करि०। वामे सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि०। जठरे सर्वदुष्टमृगवशङ्करि०। नाभौ सर्वसत्त्ववशङ्करि०। स्वाधिष्ठाने सर्वलोकं०। लिङ्गे अमुकं०। दक्षपादे मे०। वामे वशं०। मूलाधारे आनय०। गुदे स्वाहा नमः। मूलाधारे ऐंह्रींश्रीं रं रत्यै मातङ्ग्यै नमः। हृदि ३ँ प्रीं प्रीत्यै मा०। भ्रूमध्ये ३ँ मं मनोभवायै मा०। शिरसि ३ँ हं हृल्लेखायै मा०। वदने ३ँ गं गगनायै मा०। हृदि ३ँ रं रक्तायै मा०। गुह्ये ३ँ कं करालिकायै मा०। पादयोः ३ँ मं महोच्छुष्मायै मा०। शिरसि ३ँ द्रां द्राविण्यै मा०। पादयोः ३ँ शों शोषिण्यै मा०। मुखे ३ँ बं बन्धिन्यै मा०। गुह्ये ३ँ मों मोहिन्यै मा०। हृदये ३ँ आं आकर्षिण्यै मा०। ततो मुखे ३ँ मन्मथाय मा०। वामांसे ३ँ मकरध्वजाय मा०। वामपार्श्वे ३ँ मदनाय मा०। वामकट्यां ३ँ पुष्पधन्वने मा०। नाभौ ३ँ कुसुमायुधाय मा०। दक्षकट्यां ३ँ कन्दर्पाय मा०। दक्षपार्श्वे ३ँ मनोभवाय मा०। दक्षांसे ३ँ रतिप्रियाय मा०। मुखे ३ँ अनङ्गकुसुमायै मा०। वामांसे ३ँ अनङ्गमेखलायै मा०। वामपार्श्वे ३ँ अनङ्गमदनायै मा०। वामकट्यां ३ँ अनङ्गमदनातुरायै मा०। नाभौ ३ँ अनङ्गमदनोद्वेगायै मा०। दक्षकट्यां ३ँ अनङ्गसंभवायै मा०। दक्षपार्श्वे ३ँ अनङ्गभुवनपालिन्यै मा०। दक्षांसे ३ँ अनङ्गशशिरेखायै मा०। मूलाधारे ३ँ लक्ष्म्यै मा०। लिङ्गमूले ३ँ सरस्वत्यै मा०। मणिपूरे ३ँ रत्यै मा०। हृदि प्रीत्यै मा०। कण्ठे कीर्त्यै मा०। मुखे कान्त्यै मा०। भ्रूमध्ये पुष्ट्यै मा०। शिरसि तुष्ट्यै मा०। मूर्ध्नि मूलमन्त्रं न्यसेत्। मूले ३ँ ब्राह्म्यै मा०। स्वाधिष्ठाने माहेश्वर्य्यै मा०। नाभौ कौमार्य्यै मा०। हृदि वैष्णव्यै मा०। कण्ठे वाराह्यै मा०। मुखे इन्द्राण्यै मा०। भ्रूमध्ये चामुण्डायै मा०। शिरसि महालक्ष्म्यै मा०। मूले असिताङ्गाय मा०। स्वाधिष्ठाने रुरवे मा०। नाभौ चण्डाय मा०। हृदि क्रोधाय मा०। कण्ठे उन्मत्ताय मा०। मुखे कपालिने मा०। भ्रूमध्ये भीषणाय मा०। शिरसि संहाराय मा०। आधारे वामायै मा०। लिङ्गे ज्येष्ठायै मा०। नाभौ रौद्र्यै मा०। हृदि शान्त्यै मा०। कण्ठे श्रद्धायै मा०। भ्रूमध्ये वागीश्वर्य्यै मा०। बिन्दौ क्रियाशक्त्यै मा०। कलापदे लक्ष्म्यै मा०। निरोधिकायां सृष्ट्यै मा०। अर्धेन्दौ मोहिन्यै मा०। नादे प्रमथायै मा०। नादान्ते भाविन्यै मा०। उन्मन्यां विद्युन्मालायै मा०। विषुवक्त्रे चिच्छक्त्यै मा०। ध्रुवमण्डले सुन्दरानन्दायै मा०। शिवे नागवल्ल्यै मा०। शिरसि मातङ्ग्यै मा०। ललाटे महामातङ्ग्यै मा०। हृदि महालक्ष्म्यै मा०। मूले सिद्धलक्ष्म्यै मा०। मूलाधारे मूलमन्त्रं विन्यस्य तेनैव व्यापकं कुर्यात्। ततो ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रमाणोक्तं मण्डलं कृत्वा संप्रदायान्मूलमन्त्रेण मण्डलमध्यमादिबीजत्रयेण, द्विरावृत्त्या षट्कोणं, आद्यन्तप्रणवयुक्तैर्द्विरुक्तैस्तैर्बीजैरष्टकोणं, षडङ्गैश्चतुरस्रं च संपूज्य उक्तविधिनार्घ्यपात्रं संस्थाप्यान्यानि च पात्राणि प्राग्वत् संस्थाप्य, स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना सकेसरमष्टदलकमलं कृत्वा, तत्कर्णिकायां स्वाभिमुखाग्रं त्रिकोणं कृत्वाष्टदलाद्बहिः पुनरष्टदलकमलं तद्बहिः षोडशदलकमलं तद्बहिश्चतुर्दलं तद्बहिश्चतुर्द्वारोपेतं चतुरस्रत्रयं च कुर्यादिति पूजाचक्रं निर्माय, स्वपुरतः पीठादौ संस्थाप्य मूलेनाभ्यर्च्यार्घ्यस्थापनाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिज्ञानात्मार्चान्ते अष्टदलकेसरेषु—ॐ ऐंह्रींश्रीं विभूत्यै मा०। एवं ३ँ उन्नत्यै मा०। कान्त्यै मा०। सृष्ट्यै मा०। कीर्त्यै मा०। संनत्यै मा०। व्युष्ट्यै मा०। उत्कृष्ट्यै मा०। मध्ये ऋद्ध्यै मा०। इति संपूज्य, 'ऐंह्रींश्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय

नमः' इति समस्तं पीठं संपूज्य, मूलमुच्चार्य, श्रीमातङ्गीश्वरीमूर्तिं कल्पयामि' इति मूर्तिं परिकल्प्य, पुनर्मूलमुच्चार्य 'परस्यै श्रीमातङ्गीश्वरीमूर्त्यै नमः' इति मूर्तिमभ्यर्च्य तस्यां देवीमावाह्य, आवाहनादिप्राणप्रतिष्ठान्ते पाशाङ्कुशवराभय-खड्गचर्मधनुःशरमौसलीदौर्गबाणयोनीरिति द्वादशमुद्राः प्रदर्श्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वत् लयाङ्गत्वेन देवीमूर्तौ षडङ्गानि संपूज्य, त्रिकोणे ऐंह्रींश्रीं रत्यै मा०। ३ँ प्रीत्यै मा०। ३ँ मनोभवायै मा०, इति प्रादक्षिण्येनाभ्यर्च्य, त्रिकोणाष्टदलयोरन्तराले मध्ये चतुर्दिक्षु च—हं हल्लेखायै मा०, गं गगनायै मा०, कं करालिकायै मा०, मं महोच्छुष्मायै मा०, इति संपूज्याग्नीशासुरवायव्यमध्येषु चतुर्दिक्षु च क्रमेण षडङ्गानि संपूज्य, त्रिकोणाष्ट दलयोरन्तराले एवं—द्रां द्राविण्यै मा०, शों शोषिण्यै मा०, बं बन्धिन्यै मा०, मों मोहिन्यै मा०, आं आकर्षिण्यै मा०, इति देव्यग्रादिचतुर्दिक्षु पुनर्देव्यग्रे च प्रादक्षिण्येनाभ्यर्च्य, अष्टदलेषु देव्यग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—अनङ्गकुसुमायै मा०, अनङ्गमेखलायै मा०, अनङ्गमदनायै मा०, अनङ्गमदनातुरायै मा०, अनङ्गमदनोद्वगायै मा०, अनङ्गसंभवायै मा०, अनङ्गभुवनपालिन्यै मा०, अनङ्गशशिरेखायै मा०, इति संपूज्य, तदग्रेषु—लक्ष्म्यै मा०, सरस्वत्यै मा०, रत्यै मा०, प्रीत्यै मा०, कीर्त्यै मा०, कान्त्यै मा०, पुष्ट्यै मा०, तुष्ट्यै मा०। ततो द्वितीयाष्टदलमूलेषु देव्यग्रादि प्रादक्षिण्येन—ऐंह्रींश्रीं मन्मथाय मा०, ३ँ मकरध्वजाय मा०, ३ँ मदनाय मा०, ३ँ पुष्पधन्वने मा०, ३ँ कुसुमायुधाय मा०, ३ँ कन्दर्पाय मा०, ३ँ मनोभवाय मा०, ३ँ रतिप्रियाय मा०। पत्रमध्येषु—आं ब्राह्म्यै मा०, ईं माहेश्वर्यै मा०, इत्यादि। दलाग्रेषु—अं असिताङ्गभैरवाय नमः, इत्यादि भैरवाष्टकं संपूज्य, षोडशदलेषु—वामायै मा०, ज्येष्ठायै मा०, रौद्र्यै मा०, शान्त्यै मा०, श्रद्धायै मा०, वागीश्वर्यै मा०, क्रियाशक्त्यै मा०, लक्ष्म्यै मा०, सृष्ट्यै मा०, मोहिन्यै मा०, प्रमथायै मा०, भाविन्यै मा०, विद्युल्लतायै मा०, चिच्छक्त्यै मा०, सुन्दरानन्दायै मा०, नागवल्ल्यै मा०। ततश्चतुर्दलेषु—३ँ मातंग्यै मा०। ३ँ महामातंग्यै मा०। ३ँ महालक्ष्म्यै मा०। ३ँ सिद्धलक्ष्म्यै मा०। इति संपूज्य, चतुरस्राभ्यन्तरे आग्नेयादिचतुष्कोणेषु प्रादक्षिण्येन ॐ गणेशाय नमः। ॐ दुर्गायै नमः। ॐ वटुकाय नमः। ॐ क्षेत्रपालाय नमः। इत्यभ्यर्च्य, तद्बहिः प्राग्वत् लोकपालार्चादि सर्वं समापयेदिति।

प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तदनन्तर शिरसि ॐ दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदि श्रीमातङ्गीश्वरी देवतायै नमः—इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करके हाथ जोड़कर विनियोग कहे—मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः। तदनन्तर षडङ्ग न्यास करे। ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति श्री मातंगीश्वरि सर्वजनमनोहारि हृदयाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमुखराजि सर्वमुखरञ्जिनि शिरसे स्वाहा। ऐं ह्रीं श्रीं सर्वराज-वशंकरि सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि शिखायै वषट्। ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि कवचाय हुं। ऐं ह्रीं श्रीं सर्व-लोकममुकं मे वशमानय नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं ह्रीं श्रीं स्वाहा अस्त्राय फट्। इस प्रकार मन्त्रवर्णो का छः भाग करके करन्यास एवं षडङ्ग न्यास करे। तत्पश्चात् मन्त्र के अट्ठारह पदों का न्यास करे।

मन्त्र के अट्ठारह पदों का न्यास—शिरसि ऐं ह्रीं श्रीं नमः, ललाटे ॐ नमः, भ्रूमध्ये नमो नमः, तालुनि भगवति नमः, कण्ठे श्रीमातंगीश्वरि नमः, गले सर्वजनमनोहारि नमः, उरसि सर्वमुखराजि नमः, अनाहते सर्वमुखरञ्जिनि नमः, दक्षभुजे सर्वराज-वशंकरि नमः, वामे सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि नमः, जठरे सर्वदुष्टमृगवशंकरि नमः, नाभौ सर्वसत्त्ववशंकरि नमः, स्वाधिष्ठाने सर्व लोकं नमः, लिङ्गे अमुकं नमः। दक्षपादे मे नमः, वामपादे वशं नमः, मूलाधारे आनय नमः। गुदे स्वाहा नमः।

रत्यादि न्यास—मूलाधारे ऐं ह्रीं श्रीं रं रत्यै मातंग्यै नमः। हृदि ऐं ह्रीं श्रीं प्रीं प्रीत्यै मातङ्ग्यै नमः। भ्रूमध्ये ऐं ह्रीं श्रीं मं मनोभवायै मातङ्ग्यै नमः। शिरसि ऐं ह्रीं श्रीं हंहल्लेखायै मातङ्ग्यै नमः। वदने ऐं ह्रीं श्रीं गं गगनायै मातङ्ग्यै नमः। हृदि ऐं ह्रीं श्रीं रं रक्तायै मातङ्ग्यै नमः। गुह्ये ऐं ह्रीं श्रीं कं करालिकायै मातङ्ग्यै नमः। पादयोः ऐं ह्रीं श्रीं मं महोच्छुष्मायै मातङ्ग्यै नमः।

बाणन्यास—शिरसि ऐं ह्रीं श्रीं द्रां द्राविण्यै मातङ्ग्यै नमः। पादयोः ऐं ह्रीं श्रीं शों शोषिण्यै मातङ्ग्यै नमः। मुखे ऐं ह्रीं श्रीं बं बन्धिन्यै मातङ्ग्यै नमः। गुह्ये ऐं ह्रीं श्रीं मों मोहिन्यै मातङ्ग्यै नमः। हृदये ऐं ह्रीं श्रीं आं आकर्षिण्यै मातङ्ग्यै नमः।

कामन्यास—मुखे ऐं ह्रीं श्रीं मन्मथाय मातङ्ग्यै नम:। वामांसे ऐं ह्रीं श्रीं मकरध्वजाय मातङ्ग्यै नम:। वामपार्श्वे ऐं ह्रीं श्रीं मदनाय मातङ्ग्यै नम:। वामकट्यां ऐं ह्रीं श्रीं पुष्पधन्वने मातङ्ग्यै नम:। नाभौ ऐं ह्रीं श्रीं कुसुमायुधाय मातङ्ग्यै। दक्ष कट्यां ऐं ह्रीं श्रीं कन्दर्पाय मातङ्ग्यै नम: दक्षपार्श्वे ऐं ह्रीं श्रीं मनोभवाय मातङ्ग्यै नम:। दक्षांसे ऐं ह्रीं श्रीं रतिप्रियाय मातङ्ग्यै नम:।

अष्ट शक्ति न्यास—मुखे ऐं ह्री श्री अनङ्गकुसुमायै मातङ्ग्यै नम:। वामांसे ऐं ह्री श्रीं अनंगमेखलायै मातङ्ग्यै नम:। वामपार्श्वे ऐं ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनायै मातङ्ग्यै नम:। वामकट्यां ऐं ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनातुरायै मातङ्ग्यै नम:। नाभौ ऐं ह्री श्री अनङ्गमदनोद्वेगायै मातङ्ग्यै नम:। दक्षकट्यां ऐं ह्री श्रीं अनङ्गसम्भवायै मातङ्ग्यै नम:। दक्ष पार्श्वे ऐं ह्रीं श्रीं अनङ्गभुवनपालिन्यै मातङ्ग्यै नम:। दक्षांसे ऐं ह्री श्रीं अनङ्गशशिरेखायै मातङ्ग्यै नम:।

मूलाधारे ऐं ह्री श्रीं लक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:। लिङ्गमूले ऐं ह्रीं श्रीं सरस्वत्यै मातङ्ग्यै नम:। मणिपूरे ऐं ह्रीं श्रीं रत्यै मातङ्ग्यै नम:। हृदि ऐं ह्रीं श्रीं प्रीत्यै मातङ्ग्यै नम:। कण्ठे ऐं ह्रीं श्रीं कीर्त्यै मातङ्ग्यै नम:। मुखे ऐं ह्रीं श्रीं कान्त्यै मातङ्ग्यै नम:। भ्रूमध्ये ऐं ह्रीं श्री पुष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। शिरसि ऐं ह्रीं श्रीं तुष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। मूर्ध्नि ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखराजि सर्वमुखरञ्जिनि सर्वराजवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशङ्करि सर्वलोकममुकं मे वशमानय स्वाहा नम:।

अष्ट मातृका न्यास—मूले ब्राह्म्यै मातङ्ग्यै नम:। स्वाधिष्ठाने माहेश्वर्यै मातङ्ग्यै नम:। नाभौ कौमार्यै मातङ्ग्यै नम:। हृदि वैष्णव्यै मातङ्ग्यै नम:। कण्ठे वाराह्यै मातङ्ग्यै नम:। मुखे इन्द्राण्यै मातङ्ग्यै नम:। भ्रूमध्ये चामुण्डायै मातङ्ग्यै नम:। शिरसि महालक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:।

अष्टभैरव न्यास—मूले असितांगाय मातङ्ग्यै नम:। स्वाधिष्ठाने रुरवे मातङ्ग्यै नम:। नाभौ चण्डाय मातङ्ग्यै नम:। हृदि क्रोधाय मातङ्ग्यै नम:। कण्ठे उन्मत्ताय मातङ्ग्यै नम: मुखे कपालिने मातङ्ग्यै नम:। भ्रूमध्ये भीषणाय मातङ्ग्यै नम:। शिरसि संहाराय मातङ्ग्यै नम:।

पीठ शक्ति न्यास—आधारे वामायै मातङ्ग्यै नम:। लिङ्गे ज्येष्ठायै मातङ्ग्यै नम: नाभौ रौद्र्यै मातङ्ग्यै नम:। हृदि शान्त्यै मातङ्ग्यै नम:। कण्ठे श्रद्धायै मातङ्ग्यै नम:। भ्रूमध्ये वागीश्वर्यै मातङ्ग्यै नम:।

शक्ति न्यास—विन्दौ क्रियाशक्त्यै मातङ्ग्यै नम:। कला पदे लक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:। निरोधिकायां सृष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। अर्धेन्दौ मोहिन्यै मातङ्ग्यै नम:। नादे प्रमथायै मातङ्ग्यै नम:। नादान्ते भाविन्यै मातङ्ग्यै नम:। उन्मन्यां विद्युन्मालायै मातङ्ग्यै नम:। विषुवक्त्रे चिच्छक्त्यै मातङ्ग्यै नम:। ध्रुवमण्डले सुन्दरानन्दायै मातङ्ग्यै नम:। शिवे नागवल्ल्यै मातङ्ग्यै नम:।

मातङ्गी आदि न्यास—शिरसि मातंग्यै मातङ्ग्यै नम:। ललाटे महामातङ्ग्यै मातङ्ग्यै नम:। हृदि महालक्ष्म्यै मातङ्ग्यै। मूले सिद्धलक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:। तदनन्तर मूलाधार में मूल मन्त्र का न्यास करके उसी से व्यापक न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

अमृतोदधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोरमे। स्वर्णप्राकारसंवीते मण्डपे रत्ननिर्मिते।।
कदम्बबिल्वकह्लारकल्पवृक्षोपशोभिते। (वेदिमध्ये सुखास्तीर्णे रत्नसिंहासने शुभे।।
अष्टपत्रं महापद्मं केसराढ्यं सकर्णिकम्। तन्मध्ये च त्रिकोणं स्यादष्टपत्रं ततो बहि:।।
पुन: षोडशपत्रं स्यात्तद्वाह्ये स्याच्चतुर्दलम्। वेदास्त्रं सचतुर्द्वारं मण्डलं प्रोक्तमुत्तमम्।।
तस्य मध्ये सुखासीनां श्यामवर्णां शुचिस्मिताम्। कदम्बमालाभरणां पूजितां च सुरासुरै:।।
प्रलम्बालकसंयुक्तां चन्द्रलेखावतंसिकाम्। ललाटे तिलकोपेतामीषत्प्रहसिताननाम्।।
किञ्चित्स्वेदाम्बुमधुरललाटफलकोज्ज्वलाम्। वलीतरङ्गमध्यां तां रोमराजीविराजिताम्।।
सर्वाभरणसंयुक्तां मुक्ताहारविभूषिताम्। नानामणिगणोत्रद्धकटिसूत्रैरलंकृताम्।।
वलयै रत्नखचितै: केयूरैर्मणिभूषितै:। भूषितां द्विभुजां बालां मधुघूर्णितलोचनाम्।।
आपीनमण्डलाभोगसमुन्नतपयोधराम्। प्रलम्बकर्णाभरणां कर्णोत्तंसविराजिताम्।।

तमालनीलां तरुणीं मधुमत्तां मतङ्गिनीम्। चतु:षष्टिकलारूपपार्श्वस्थशुकशारिकाम्।।
कोटिबालार्कसङ्काशां जपाकुसुमसंनिभाम्। एवं वा पीतवर्णां वा ध्यायेन्मातङ्गिनीं पराम्।।

उपर्युक्त रूप से ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करे। अर्घ्यादि पात्रों का स्थापन करके परमेश्वरी की पूजा करे।

सारसंग्रह के अनुसार अर्घ्य स्थापन के लिये प्रमाणोक्त मण्डल बनाकर सम्प्रदाय के मूल मन्त्र से मण्डल मध्य में तीन आदिबीजों को दो आवृत्ति से षट्कोण के कोनों में लिखे। आद्यन्त प्रणवयुक्त दो-दो बीजों को अष्टकोण में लिखे। षडङ्ग मन्त्र से चतुरस्र की पूजा करके उसमें अर्घ्यपात्र स्थापित करके अन्य पात्रों को भी स्थापित करे।

स्वर्णादि के पट्ट पर कुङ्कुमादि से सकेसर अष्टदल कमल बनावे। कर्णिका में स्वमुखाग्र त्रिकोण बनावे। इसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर फिर अष्टदल कमल बनावे। उसके बाहर षोडश दल, उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर फिर उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनावे। इस प्रकार पूजा चक्र बनाकर अपने आगे पीठ पर स्थापित करे। मूल मन्त्र से अर्चन करे। अर्घ्य स्थापन से आत्म पूजा के बाद मण्डूक से ज्ञानात्मा तक की पूजा करे।

अष्टदल केसर में—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं विभूत्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं उन्नत्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं कान्त्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं सृष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं कीर्त्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं संनत्यै मातङ्ग्यै। ऐं ह्रीं श्रीं व्युष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं उत्कृष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। मध्य में ऐं ह्रीं श्रीं ऋद्ध्यै मातङ्ग्यै नम: से पूजा करे। ऐं ह्रीं श्रीं सर्वशक्ति- कमलासनाय नम: से पूरे पीठ की पूजा करे। मूल मन्त्र बोलकर श्री मातङ्गीश्वरीमूर्तिं कल्पयामि कहकर मूर्ति की कल्पना करके फिर मूल मन्त्र कहकर 'परस्यै श्रीमातङ्गीश्वरीमूर्त्यै नम:' से मूर्ति की पूजा करे। उसमें देवी का आवाहन करे। आवाहनादि प्राण-प्रतिष्ठा के बाद पाश अंकुश वर अभय खड्ग ढाल धनुष-बाण मुसल, दौर्ग, बाण और योनि—ये बारह मुद्रा दिखावे। आसन से पुष्पोपचार तक पूर्ववत् लयाङ्ग रूप से देवी की मूर्ति में षडङ्गों की पूजा करे।

त्रिकोण में अपने सामने के कोन से प्रादक्षिण्य क्रम से ऐं ह्रीं श्रीं रत्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं प्रीत्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं मनोभवायै मातङ्ग्यै नम: से पूजन करे।

त्रिकोण और अष्टकोण के अन्तराल की चारो दिशाओं में हं हृल्लेखायै मातङ्ग्यै नम:। गं गगनायै मातङ्ग्यै नम:। कं करालिकायै मातङ्ग्यै नम:। मं महोच्छुष्मायै मातङ्ग्यै नम: से पूजा करे। अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य वायव्य कोण मध्य और चारो दिशाओं में क्रमश: षडङ्ग पूजा करे। त्रिकोण एवं अष्टकोण के अन्तराल में द्रां द्राविण्यै मातङ्ग्यै नम:। बं बान्धिन्यै मातङ्ग्यै नम:। मों मोहिन्यै मातङ्ग्यै नम:। आं आकर्षिण्यै मातङ्ग्यै नम: से पूजा करे।

अष्टदल में देवी के आगे बाले दल से आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से इनकी पूजा करे—अनंगकुसुमायै मातङ्ग्यै नम:। अनङ्गमेखलायै मातङ्ग्यै नम:। अनङ्गमदनायै मातङ्ग्यै नम: अनङ्गमदनातुरायै मातङ्ग्यै नम:। अनङ्गमदनोद्वेगायै मातङ्ग्यै नम:। अनङ्गसम्भवायै मा०। अनङ्गभुवनपालिन्यै मातङ्ग्यै नम:। अनङ्गशशिरेखायै मातङ्ग्यै नम: कहकर पूजा करे। उनके आगे—लक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:। सरस्वत्यै मातङ्ग्यै नम:। रत्यै मातङ्ग्यै नम:। प्रीत्यै मातङ्ग्यै नम:। कीर्त्यै मातङ्ग्यै नम:। कान्त्यै मातङ्ग्यै नम:। पुष्ट्यै मातङ्ग्यै नम:। तुष्ट्यै मातङ्ग्यै नम: से पूजा करे। तदनन्तर द्वितीय अष्टदल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से—ऐं ह्रीं श्रीं मन्मथाय मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं मकरध्वजाय मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं मदनाय मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं पुष्पधन्वने मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं कुसुमायुधाय मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं कन्दर्पाय मातङ्ग्यै नम:। मनोभवाय मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं रतिप्रियाय मातङ्ग्यै नम:।

दलों के मध्य में आं ब्राह्म्यै मातङ्ग्यै नम:। ईं माहेश्वर्यै मातङ्ग्यै नम:। इत्यादि से पूजा करे। दलाग्रों में अं असितांगभैरवाय नम: इत्यादि से भैरवाष्टक की पूजा कर षोडश दल में वामायै मातङ्ग्यै नम:। ज्येष्ठायै मातङ्ग्यै नम:। रौद्र्यै मातङ्ग्यै नम:। शान्त्यै मातङ्ग्यै नम:। श्रद्धायै मातङ्ग्यै नम:। वागीश्वर्यै मातङ्ग्यै नम:। क्रियाशक्त्यै मातङ्ग्यै नम:। लक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम: सृष्ट्यै मा०। मोहिन्यै मातङ्ग्यै नम:। प्रमथायै मातङ्ग्यै नम:। भाविन्यै मातङ्ग्यै नम:। विद्युल्लतायै मातङ्ग्यै नम:। चिच्छक्त्यै मातङ्ग्यै नम:। सुन्दरानन्दायै मातङ्ग्यै नम:। नागवल्ल्यै मातङ्ग्यै नम: कहकर इन सोलह की पूजा करे।

तदनन्तर चतुर्दल में ऐं ह्रीं श्रीं मातंग्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं महामातंग्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं सिद्धलक्ष्म्यै मातङ्ग्यै नम: कहकर चार का पूजन करके चतुर्दशार के भीतर आग्नेयादि चारो कोणों में प्रदक्षिण क्रम से—ॐ गणेशाय नम:। ॐ दुर्गायै नम:। ॐ वटुकाय नम:। ॐ क्षेत्रपालाय नम: से पूजन करके चतुरस्र के बाहर लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करके पूजा का समापन करे।

काम्यहोम:

तथा—

प्रजपेदयुतं मन्त्री मन्त्रं पश्चाद् दशांशत:। त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयान्मधूककुसुमैर्वशी ॥२५॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणाराधनं तथा। एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेन्निजवाञ्छितम् ॥२६॥
भाग्यार्थी जुहुयाज्जातीमल्लिकानागकेसरै:। श्रीफलैश्चापि तत्पत्रैर्होमाद्राज्यश्रियं लभेत् ॥२७॥
राजपुत्र: पङ्कजै: स्वां श्रियमाप्नोत्यनिन्दिताम्। लक्ष्मीपुष्पैरुत्पलैश्च वशयेत् सकलं जगत् ॥२८॥
जपाबन्धूकबकुलैर्ब्रह्मवृक्षसमुद्भवै:। सुमनोभिश्च जुहुयाद्वश्यायैव तु मन्त्रवित् ॥२९॥
मधुना च हुनेन्मन्त्री सर्वसिद्धिर्भवत्यलम्। त्रिस्वादुसंयुतै: सम्यग् वेतसोत्थै: समिद्वरै: ॥३०॥
जुहुयाद् वृष्टिकामस्तु गुडूचीभिर्ज्वरं हरेत्। कदम्बकुसुमैर्हुत्वा वशयेत् प्रमदाजनान् ॥३१॥
आयुष्काम: प्रजुहुयाद् दूर्वाभिर्नात्र संशय:। अन्नं प्रजुहुयान्मन्त्री अन्नवानचिराद्भवेत् ॥३२॥
शालितण्डुलहोमेन धनाकुलगृहो भवेत्। होमद्रव्यं तु यत् प्रोक्तं त्रिस्वाद्वक्तं तु तद्भवेत् ॥३३॥
नन्द्यावर्तप्रसूनै: स्याद्धोमो वाक्सिद्धिद: परम्। निम्बप्रसूनहोमात्तु कमलां वाञ्छितां लभेत् ॥३४॥
हुनेत् किंशुकपुष्पैर्य: स भवेत् तेजसां निधि:। चन्दनागुरुकर्पूररोचनाकुङ्कुमैरपि ॥३५॥
होमात्तु विश्वं सकलं वशयेन्नात्र संशय:। अष्टाभिर्जप्तैरेतैस्तु तिलकं जनमोहनम् ॥३६॥
सिन्दुवारस्य मूलानि होमयेद् बन्धमुक्तये। उग्रगन्धस्य तैलेन संसिक्तैर्लवणैर्हुनेत् ॥३७॥
अचिराच्छत्रुसङ्घं स नाशयेन्नात्र संशय:। संचूर्णितनिशामिश्रैर्लवणै: स्तम्भयेदरीन् ॥३८॥
परिपक्वैरतिरसै: फलै: पुष्पै: सुगन्धिभि:। होमाद्वाञ्छितमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥३९॥ इति।

काम्य हवन—एक लाख मन्त्र जप करे। उसके पश्चात् जप का दशांश हवन त्रिमधुरमिश्रित महुआ के फूलों से वश्य कर्म की सिद्धि के लिये करे। तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मण भोजन कराये। इस प्रकार सिद्ध मन्त्र से मन्त्री अपने वांछित का साधन करे। भाग्यार्थी जाती मल्लिका नागकेसर श्रीफल व पत्तों से हवन करे तो उसे राज्यश्री प्राप्त होती है। राजपुत्र कमल से हवन करके अनिन्दित श्री को प्राप्त करता है। लक्ष्मीपुष्प एवं उत्पल के हवन से सारे संसार को वश में कर सकता है। वश्य के लिये अड़हुल, बन्धूक, मौलसिरी एवं पलाश के फूलों से हवन करे। मधु से हवन करने पर साधक को सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। त्रिमधुराक्त वेत की समिधा से हवन करने पर वर्षा होती है। गुरुच अर्थात् गिलोय के हवन से ज्वर छूटता है। कदम्बपुष्पों के हवन से प्रमदा वश में होती है। आयु की कामना से दूर्वा से हवन करे। अन्न के हवन से अल्प काल में ही होता अन्नवान होता है। शालि चावल के हवन से घर धन से भर जाता है। जिन हवन द्रव्यों को कहा है, उनमें त्रिमधुर मिलाना। नन्द्यावर्त फूलों के हवन से वाक्सिद्धि होती है। नीम के फूलों से हवन करने पर वांछित धन मिलता है। पलाश के फूलों से हवन करने पर साधक तेज: सम्पन्न होता है। चन्दन, अगर, कपूर, गोरोचन, कुङ्कुम-मिश्रण के हवन से सारे संसार को वश में किया जा सकता है। इस मन्त्र के आठ जप से मन्त्रित कर तिलक करने से लोगों को मुग्ध कर सकता है। बन्धन से छूटने के लिये सिन्दुवार की जड़ से हवन करे। कडुआ तेल से संसिक्त नमक से हवन करने पर अल्प काल में शत्रुओं का नाश होता है। हल्दी चूर्ण-मिश्रित नमक से हवन करने पर शत्रुओं का स्तम्भन होता है। परिपक्व रसीले फल, फूल, गन्ध से हवन करने पर वांछित फल प्राप्त होता है, यह निस्सन्दिग्ध है।

मातङ्गीमन्त्रविधिः

सारसंग्रहे—

बालात्रिबीजं वाग्बीजं मायां च कमलां वदेत्। तारं हृद्भगपानीयं ति श्रीमातं पदं वदेत्॥१॥
गीश्वर्यन्ते सर्वजान्ते दीर्घा कालश्च नो नियत्। रिसर्वमुखरं झाद्यं नि स्मरः शक्तिरिन्दिरा॥२॥
मध्ये सर्ववशंकर्य्योः पञ्चसूच्चारयेत् क्रमात्। राज-स्त्रीपुरुषं दुष्टमृगं सत्त्वपदं वदेत्॥३॥
लोकं स्यादमुकं मे वशमानय ठयुग्मकम्। वैपरीत्येन चाद्युक्तबीजषट्कान्तिको मनुः॥४॥
अक्षरैरष्टनवतिमितैरुदित आदरात्। अयं मन्त्रस्त्रिभुवनवशीकारकरः परः॥५॥
आचार्यानुग्रहात् प्राप्यो महापुण्यतमैरयम्। दुष्प्राप्योऽकृतपुण्यानां मुनीन्द्राद्यैश्च सेवितः॥६॥
वाञ्छावितरणे कल्पपादपः परिकीर्तितः।

बालात्रिबीजं पूर्वोक्तम्। बाग्बीजं ऐं। माया ह्रीं। कमला श्रीं। तारं ॐ। हृन्नमः। भग स्वरूपम्। पानीयं व। ति स्वरूपम्। श्रीमातं स्वरूपम्। गीश्वरि स्वरूपम्। सर्वज स्वरूपम्। दीर्घा न। कालो म। नो स्वरूपम्। वियत् ह। रि स्वरूपम्। सर्वमुखरं स्वरूपम्। झाद्यं ज। नि स्वरूपम्। स्मरः क्लीं। शक्तिः ह्रीं। इन्दिरा श्रीं। सर्वराजवंशकरि, सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि, सर्वदुष्टमृगवशंकरि, सर्वसत्त्ववशङ्करि, सर्वलोकवशंकरि, अमुकं स्वरूपम्। अत्र न सन्धिः अष्टनवत्यक्षरानुपपत्तेः। मे वशमानय स्वरूपम्। ठयुग्मकं स्वाहा। वैपरीत्यैन श्रींह्रींऐंसौःक्लींऐं इति क्रमेण। स्पष्टम्—ऐंक्लींसौःऐंह्रींश्रीं ॐ नमो भगवति श्रीमातङ्गीश्वरि सर्वजनमनोहरि सर्वमुखरञ्जनि क्लींह्रींश्रीं सर्वराजवशंकरि सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वलोकवशंकरि अमुकं मे वशमानय स्वाहा श्रींह्रींऐंसौःक्लींऐं (९८)। मतङ्गमनुकोशे—'सिद्धेऽष्टनवतिवर्णात्मके मन्त्रे सर्व एव पठितफला भवन्ति, तस्मान्मन्त्रमिमं सर्वदैवं जपेदिति'। तथा—

ऋष्याद्याः पूर्वमुदिता मन्त्रस्यास्य भवन्ति हि। ततस्तु मातृकां न्यसेद् देवताभावसिद्धये॥७॥
पञ्चबाणानङ्गुलीषु विन्यसेत् साधकोत्तमः। मकरध्वजमन्त्रं च तलयोर्विन्यसेत् सुधीः॥८॥
मकरध्वजङे-माया-हृदन्तो वाग्भवादिकः। मकरध्वजमन्त्रोऽयं सर्ववश्यकरः परः॥९॥
शिखाशिरोललाटेषु भ्रूमध्ये नेत्रयुग्मके। श्रोत्रयोर्घ्राणयोर्वक्त्रे गण्डयोः ककुदि क्रमात्॥१०॥
अंसयोरुरसि न्यसेत् स्तनयोर्हृदयाम्बुजे। नाभिमण्डलके लिङ्गे मूलाधारे पदान्यथ॥११॥
त्रयोविंशतिसंख्यानि त्रित्र्यैकद्विचतुस्तथा। षडष्टकससप्तैकचन्द्राष्टदशपंक्तिभिः॥१२॥
वस्वष्टवह्निचन्द्राक्षित्रिद्वित्रित्रिक्रमान् न्यसेत्। (चन्द्रः १ पंक्ति १० वसु ८ वह्नि ३ अक्षि २)॥

एकोनविंशति त्यक्त्वा मन्त्रार्णानादितः क्रमात्। पदैः षड्भिः षडङ्गानि त्रिताराद्यैः प्रकल्पयेत्॥१३॥

मतङ्गमनुकोशे तु—ऋष्यादिन्यासानन्तरं, 'अङ्गुलीषु तलयोरथ न्यसेत्पञ्चबाणमकरध्वजांस्तथा। अङ्गषट्कमथ मातृकावलिं मूलमन्त्रमपि खण्डशः कृतम्'। इति न्यासक्रम उक्तः। यथोपदेशं कार्यमिति।

द्राविण्याद्याः पुनः पञ्च कुक्षौ पार्श्वयुगे हृदि। मणिपूरक एव स्याद् ब्राह्म्याद्या विन्यसेत् ततः॥१४॥
पदद्वन्द्वसन्धिषु ततो ह्यष्टौ लक्ष्म्यादिका न्यसेत्। सव्यमारभ्य दोर्द्वन्द्वसन्धिषु क्रमतः सुधीः॥१५॥
लक्ष्म्याद्याः पूर्वमुदिता शक्तीरष्टौ प्रविन्यसेत्। कान्ते चैव भ्रुवोर्मध्ये नेत्रश्रोत्रगुदेषु च॥१६॥
नासायुग्मे मुखे गण्डद्वन्द्वे जिह्वाग्रदेशके। मूलाधिष्ठानतालौ च वामाद्याः षोडश न्यसेत्॥१७॥
दक्षाङ्घ्रिमारभ्य पदद्वन्द्वसन्धिषु भैरवान्। मातङ्ग्यादिचतुष्कं च हृदि नाभौ शिरोगुदे॥१८॥
गणेशदुर्गावटुकक्षेत्रपालांस्ततो न्यसेत्। कभ्रूमध्यास्यकण्ठेषु मूलेन व्यापकं न्यसेत्॥१९॥
सरस्वतीं तथा लक्ष्मीं निधियुग्मं प्रविन्यसेत्। आनने च भ्रुवोर्मध्ये चरणद्वय एव च॥२०॥
एवं न्यस्ततनुर्मन्त्री ध्यायेद् देवीमनन्यधीः।

अमृतमहोदधिमध्ये रत्नद्वीपे सकल्पवृक्षवने। मणिमयमण्डपमध्ये मणिमयसिंहासनस्योर्ध्वे ॥२१॥
मातङ्गीं मधुपूरपानमुदितामाघूर्णमानेक्षणां संस्विद्यद्वदनां कदम्बकुसुमप्रोल्लासिसद्वेणिकाम्।
वीणाशोभिकरां सुरक्तवसनामापक्वबिम्बाधरां कस्तूरीतिलकां शशाङ्कमुकुटां सच्छङ्खपात्रश्रुतिम् ॥२२॥
आपीनोन्नतशोभ्युरोजविनमन्मध्यां शुकश्यामलां ग्रैवेयाङ्गदचारुहाररसनामञ्जीरसंशोभिताम्।
भक्तौघं वरहास्यसस्मितदृशा संतर्पयन्तीं मुदा।
ध्यायेत् पार्श्वगतं तथाखिलकलारूपं शुकं शारिकाम् ॥२३॥

मातङ्गी मन्त्र—सारसंग्रह अनुसार अट्ठानवे अक्षरों का मातङ्गी का मन्त्र है—ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमो भगवति श्रीमातंगीश्वरि सर्वजनमनोहरि सर्वमुखरञ्जनि क्लीं ह्रीं श्रीं सर्वराजवशंकरि सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि सर्वदुष्टमृगवशंकरि सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वलोकवशंकरि अमुकं मे वशमानय स्वाहा श्रीं ह्रीं ऐं सौं क्लीं ऐं। मतङ्गमन्त्रकोश में कहा गया है कि इस अट्ठानबे अक्षर वाले मन्त्र के सिद्ध होने पर समस्त फल प्राप्त होते हैं, इसलिये इस मन्त्र का सर्वदा जप करना चाहिये।

पूर्व मन्त्र के समान ही इसके भी ऋष्यादि हैं। देवताभाव की सिद्धि के लिये मातृका न्यास किया जाता है। अंगुलियों में पाँच वर्णों का न्यास करे। मकरध्वज मन्त्र को करतलों में न्यस्त करे। मकरध्वज मन्त्र है—ऐं मकरध्वजाय ह्रीं नमः। यह मन्त्र सबको वश में करने वाला है। शिखा, शिर, ललाट, भ्रूमध्य, दोनों नेत्र, कान छिद्रों, मुख, गाल, ककुद, कन्धों, स्तनों, हृदय, कमल, नाभिमण्डल, लिङ्ग, मूलाधार और पैरों—इन तेईस स्थानों में ३, ३, १, २, ४, ६, ८, ७, ७, १, १, ८, १०, १०, ८, ३, १, २, ३, २, ३, ३, मन्त्राक्षरों का न्यास करे। प्रारम्भ से उन्तीस अक्षरों को छोड़कर शेष मन्त्रपदों से त्रिताराद्य षडङ्ग न्यास करे। द्राविणी आदि पञ्च बाणों का न्यास कुक्षियों, दोनों पार्श्वों, हृदय मणिपूर में करे। ब्राह्मी आदि का न्यास दोनों पैरों की सन्धियों में तब लक्ष्मी आदि आठ शक्तियों का न्यास बाँयें से आरम्भ करके सन्धियों में क्रमशः करे। ललाट, भ्रूमध्य-दोनों नेत्र, कान, गुदा, नासायुग्म, मुख, गण्डद्वन्द्व, जिह्वाग्र, मूलाधार, स्वाधिष्ठान एवं तालु मे वामा आदि सोलह का न्यास करे। दाहिने पैर से आरम्भ करके दोनों पैरों की सन्धियों में भैरवों का न्यास करे। मातङ्गी आदि चार का न्यास हृदय, नाभि, शिर, गुदा में करे। गणेश, दुर्गा, वटुक और क्षेत्रपाल का न्यास मस्तक, भ्रूमध्य, मुख एवं कण्ठ में करे। मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। सरस्वती एवं लक्ष्मी इन दोनों निधियों का न्यास ललाट भ्रूमध्य दोनों पैरों में करे। इस प्रकार के न्यस्त तन से साधक एकाग्र होकर देवी का निम्नवत् ध्यान करे—

अमृतमहोदधिमध्ये रत्नद्वीपे सकल्पवृक्षवने। मणिमयमण्डपमध्ये मणिमयसिंहासनस्योर्ध्वे।।
मातङ्गीं मधुपूरपानमुदितामाघूर्णमानेक्षणां संस्विद्यद्वदनां कदम्बकुसुमप्रोल्लासिसद्वेणिकाम्।
वीणाशोभिकरां सुरक्तवसनामापक्वबिम्बाधरां कस्तूरीतिलकां शशाङ्कमुकुटां सच्छङ्खपात्रश्रुतिम्।।
आपीनोन्नतशोभ्युरोजविनमन्मध्यां शुकश्यामलां ग्रैवेयाङ्गदचारुहाररसनामञ्जीरसंशोभिताम्।
भक्तौघं वरहास्यसस्मितदृशा संतर्पयन्तीं मुदा। ध्यायेत् पार्श्वगतं तथाखिलकलारूपं शुकं शारिकाम्।।

पूर्वोक्ते च शुभे पीठे यन्त्रमेतत् प्रकल्पयेत्। त्रिकोणं पञ्चकोणं चाप्यष्टपत्रं कलाच्छदम् ॥२४॥
अष्टपत्रं वेददलं चतुरस्रं मनोहरम्। चतुर्द्वारसमायुक्तं सर्वदृष्टिमनोहरम् ॥२५॥
अत्रावाह्य यजेद् देवीं मन्त्री शृङ्गारवेषवान्। आदौ लयाङ्गमभ्यर्च्य भोगाङ्गं पूर्ववद्यजेत् ॥२६॥
पूर्वोक्तवच्च रत्याद्या यजेन्मन्त्री यथाविधि। द्राविण्याद्याः पञ्च कोणेष्वभ्यर्च्या मन्त्रिणा सदा ॥२७॥
अष्टपत्रे यजेन्मातृर्लक्ष्म्याद्याश्च तदग्रतः। वामाद्याः षोडशदले तद्बाह्येऽष्टदले पुनः ॥२८॥
भैरवानष्ट चाभ्यर्चेत् तद्बाह्ये च चतुर्दले। मातङ्ग्याद्या यजेन्मन्त्री तद्बाह्ये गणपादिकान् ॥२९॥
सरस्वत्यादिकान् मन्त्री तथा य प्रयजेत् ततः। लोकपालान् यजेद्बाह्ये तदस्त्राणि ततो बहिः ॥३०॥
एवं संपूज्य मातङ्गीं यथाशक्ति मनुं जपेत्। पुनरभ्यर्च्याङ्गिषट्कं सुमिष्टान्नैश्च पानकैः ॥३१॥
सुदुग्धैश्च निवेद्याथ देवीं नत्वा ततो बलिम्। दद्याद् भक्तेन मन्त्रज्ञस्तेनेष्टं लभतेऽचिरात् ॥३२॥
नमो भगवतीत्युक्त्वा मातङ्गीश्वरी तत्परम्। इमं बलिं गृह्णयुग्मं स्वाहाशब्दमथोच्चरेत् ॥३३॥
बलिमन्त्रोऽयमाख्यातः सर्वकामफलप्रदः। इति।

पूर्वोक्त शुभ पीठ पर मातंगी यन्त्र की रचना करे। इस यन्त्र को चतुरस्र पर त्रिकोण, पञ्चकोण, अष्टपत्र, अष्टदल, चतुर्दल कमल एवं चार द्वारों से युक्त बनावे। जो कि देखने में अत्यन्त सुन्दर हो। यहीं पूर्णतया श्रृंगार की हुई देवी का आवाहन करे। लयांग पूजन करके पूर्ववत् भोगांग पूजन करे। पूर्वोक्त रूप से रति आदि का यथाविधि यजन करे। द्राविणी आदि पाँच बाणों का कोणों में अर्चन करे। अष्टपत्र में ब्राह्मी आदि मातृकाओं का एवं उसके आगे लक्ष्मी आदि का अर्चन करे। वामा आदि का षोडश दल में एवं उसके बाहर अष्टदल में पुन: आठ भैरवों का यजन करे। उसके बाहर चतुर्दल में मातंगी आदि का एवं उसके बाहर गणपति इस आदि का यजन करे। साथ ही सरस्वती आदि का भी अर्चन करे। तदनन्तर बाहर लोकपालों एवं उसके बाहर उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार पूजन कर यथाशक्ति मातंगी मन्त्र का जप करे। पुन: पूजन करके निष्टान्न, पानीय एवं दुग्ध निवेदित करते हुये देवी को नमन कर भात की बलि प्रदान करे। बलिमन्त्र है—ॐ नमो भगवति मातङ्गीश्वरि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। यह बलिमन्त्र समस्त कामनाओं की पूर्ति करने वाला है। इस प्रकार पूजन करने से साधक समस्त अभीष्टों को तत्क्षण प्राप्त करता है।

मातङ्गीमन्त्रप्रयोगप्रकार:

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नम:। मुखे गायत्रीछन्दसे नम:। हृदि मातङ्गीश्वरीदेवतायै नम:। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग:, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा प्राग्वन्मातृकां विन्यस्य, अङ्गुष्ठयो: द्रां द्राविण्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नम:। तर्जन्यो: शों शोषिण्यै मा०। मध्यमयो: बं बन्धिन्यै मा०। अनामिकयो: मों मोहिन्यै मा०। कनिष्ठिकयो: आं आकर्षिण्यै मा०। करतलयो: ऐं मकरध्वजाय ह्रीं नम:। इति विन्यस्य, शिखायां ऐंक्लींसौ: नम:। शिरसि ऐंह्रींश्रीं नम:। ललाटे ॐ नम:। भ्रूमध्ये नमो०। दक्षनेत्रे भगवति०। वामे श्रीमातङ्गीश्वरि०। दक्षश्रोत्रे सर्वजनमनोहरि०। वामे सर्वमुखरञ्जनि०। दक्षनासायां क्लीं। वामायां ह्रीं०। मुखे श्रीं०। दक्षगण्डे सर्वराजवशङ्करि०। वामे सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि०। ककुदि सर्वदुष्टमृगवशङ्करि०। दक्षांसे सर्वसत्त्ववशङ्करि०। वामे सर्वलोकवशङ्करि०। उरसि अमुकं०। दक्षस्तने मे०। वामे वशं०। हृदि आनय०। नाभौ स्वाहा०। लिङ्गे श्रींह्रींऐं०। मूलाधारे सौ:क्लींऐं०। इति विन्यस्य, ऐंह्रींश्रीं, सर्वजनमनोहरि हृदयाय नम:। ३ँ सर्वमुखरञ्जनि शिरसे स्वाहा। ३ँ क्लींह्रींश्रीं सर्वराजवशङ्करि शिखायै वषट्। ३ँ सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि कवचाय हुं। ३ँ सर्वदुष्टमृगवशङ्करि नेत्राभ्यां वौषट्। ३ँ सर्वसत्त्ववशङ्करि अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, कुक्षिदक्षवामपार्श्वहृदयनाभिषु पुनर्द्राविण्याद्या: पञ्च विन्यस्य, दक्षपादाङ्गुलिमूले आं ब्राह्म्यै मा०। एवं गुल्फसन्धि-दक्षजानु-दक्षोरुमूल-वामोरुमूल-तज्जानुगुल्फसन्ध्यङ्गुलीमूलेषु माहेश्वर्यादिमहालक्ष्म्यन्ता विन्यस्य, वामदोर्मूले लक्ष्म्यै मा०। तन्मध्यसन्धौ सरस्वत्यै मा०। मणिबन्धे रत्यै मा०। अङ्गुलीमूले प्रीत्यै मा०। दक्षकराङ्गुलीमूले कीर्त्यै मा०। मणिबन्धे कान्त्यै मा०। मध्यसन्धौ पुष्ट्यै मा०। मूले तुष्ट्यै मा०। शिरसि वामायै मा०। भ्रूमध्ये ज्येष्ठायै मा०। दक्षनेत्रे रौद्र्यै मा०। वामे शान्त्यै मा०। दक्षकर्णे श्रद्धायै मा०। वामे वागीश्वर्य्यै मा०। गुदे क्रियाशक्त्यै मा०। दक्षनसि लक्ष्म्यै मा०। वामे सृष्ट्यै मा०। मुखे मोहिन्यै मा०। दक्षगण्डे प्रमथायै मा०। वामे भाविन्यै मा०। जिह्वाग्रे विद्युल्लतायै मा०। मूलाधारे चिच्छक्त्यै मा०। स्वाधिष्ठाने सुन्दरानन्दायै मा०। तालुनिनागवल्ल्यै मा०। इति विन्यस्य, दक्षपादाङ्गुलिमूले अं असिताङ्गभैरवाय नम:। गुल्फसंधौ इं रुरुभैरवाय नम:। जानुनि उं चण्डभैरवाय नम:। दक्षोरुमूले ऋं क्रोधभैरवाय नम:। वामे लृं उन्मत्तभैरवाय नम:। जानुनि एं कपालिभैरवाय नम:। गुल्फसन्धौ ओं भीषणभैरवाय नम:। अङ्गुलिमूलेषु अं संहारभैरवाय०। हृदि मातङ्ग्यै मा०। नाभौ महामातंग्यै मा०। शिरसि सिद्धलक्ष्म्यै मा०। गुदे लक्ष्म्यै मा०। शिरसि गणेशाय मा०। भ्रूमध्ये दुर्गायै मा०। मुखे वटुकाय मा०। कण्ठे क्षेत्रपालाय मा०। इति विन्यस्य, मूलेन सर्वाङ्गे व्यापकं कृत्वा मुखे सरस्वत्यै मा०। भ्रूमध्ये लक्ष्म्यै मा०। दक्षचरणे शङ्खनिधये मा०। इति विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना त्रिकोणं विधाय, तद्बहि: पञ्चकोणं तद्बहिरष्टदलं तद्बहि: षोडशदलं तद्बहि: पुनरष्टदलं तद्बहिश्चतुर्दलं चतुरस्रत्रयमिति पूजाचक्रं निर्माय, स्वपुरत: पीठादौ संस्थाप्य मूलेनाभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् मातङ्गीपीठमभ्यर्च्य, तत्र प्राग्वन्मूर्तिकल्पनादिपुष्पोपचारान्ते लयाङ्गमभ्यर्च्य, त्रिकोणाभ्यन्तरे प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, त्रिकोणे प्राग्वत् रत्यादित्रयमभ्यर्च्य, पञ्चकोणेषु द्राविण्यादिपञ्चकं

देव्यग्रादिप्रादक्षिण्येनाभ्यर्च्य, अष्टपत्रेषु ब्राह्म्याद्यष्टकं तदग्रेषु लक्ष्म्याद्यष्टकं षोडशपत्रेषु वामादिशक्तिषोडशकं बाह्येऽष्टदले भैरवाष्टकं चतुर्दले मातङ्ग्यादिचतुष्कमन्तश्चतुरस्रस्याग्नेयादिकोणेषु गणेशादिचतुष्कं देव्यग्रादिद्वारचतुष्टये न्यासोक्तं सरस्वत्यादिचतुष्कं तद्बहिर्लोकपालांस्तद्बहिस्तदस्त्राणि च संपूज्य, मूलमन्त्रमृष्यादिन्यासपूर्वकं यथाशक्ति जपित्वा जपं समर्प्य धूपदीपौ निवेद्य, नैवेद्यं प्राग्वत् संस्कृत्य 'ॐ नमो भगवति मातङ्गीश्वरि इमं बलिं गृह्ण २ स्वाहा' इति नैवेद्यमुत्सृज्य, देव्या उत्तरे भागे वायव्यादीशानान्तं पङ्क्तिक्रमेण— ३ँ गुरुभ्यो नमः। एवं परमगुरुभ्यो नमः। परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। परमाचार्यगुरुभ्यो नमः। आदिसिद्धगुरुभ्यो नमः। अस्मद्गुरुभ्यो नमः। इति संपूज्य समापयेत् इति।

प्रयोग—प्रात:कृत्य से योगपीठ न्यास तक करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर दक्षिणामूर्तिऋषये नमः, मुख में गायत्रीछन्दसे नमः, हृदय में मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः। इस प्रकार न्यास करके अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर पूर्ववत् मातृका न्यास करके इस प्रकार न्यास करे—दोनों अङ्गुष्ठों में द्रां द्राविण्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दोनों तर्जनियों में शों शोषिण्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दोनों मध्यमाओं में बं बन्धिन्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दोनों अनामिकाओं में मों मोहिन्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दोनों कनिष्ठिकाओं में आं आकर्षिण्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, करतलयो: ऐं मकरध्वजाय ह्रीं नमः से पूजन करे। तदनन्तर शिखा में ऐंक्लींसौः नमः, शिर पर ऐंह्रींश्रीं नमः, ललाट में ॐ नमः, भ्रूमध्य में नमो नमः, दक्ष नेत्र में भगवति नमः, वाम नेत्र में श्रीमातङ्गीश्वरि नमः, दक्ष श्रोत्र में सर्वजनमनोहरि नमः, वामे सर्वमुखरञ्जनि नमः, दक्ष नासा में क्लीं नमः, वाम नासा में ह्रीं नमः, मुख में श्रीं नमः, दक्ष गण्ड में सर्वराजवशङ्करि नमः, वाम गण्ड में सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि नमः, ककुद में सर्वदुष्टमृगवशङ्करि नमः, दाहिने कन्धे पर सर्वसत्त्ववशङ्करि नमः, बाँयें कन्धे पर सर्वलोकवशङ्करि नमः, छाती में अमुकं नमः, दक्ष स्तन में मे नमः, वाम स्तन में वशं नमः, हृदय में आनय नमः, नाभि में स्वाहा नमः, लिङ्ग में श्रींह्रींऐं नमः, मूलाधार में सौःक्लींऐं नमः—इस प्रकार न्यास करके ऐंह्रींश्रीं, सर्वजनमनोहरि हृदयाय नमः, ३ँ सर्वमुखरञ्जनि शिरसे स्वाहा, ३ँ क्लींह्रींश्रीं सर्वराजवशङ्करि शिखायै वषट्, ३ँ सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि कवचाय हुं, ३ँ सर्वदुष्टमृगवशङ्करि नेत्राभ्यां वौषट्, ३ँ सर्वसत्त्ववशङ्करि अस्त्राय फट्—इस प्रकार करन्यास एवं षडङ्ग न्यास करके कुक्षि, दक्षवाम पार्श्व, हृदय, नाभि में पुनः द्राविणी आदि पाँच बाणों का विन्यास कर दक्ष पादांगुलि मूल में आं ब्राह्म्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः से पूजन करे। इसी प्रकार गुल्फसन्धि-दक्षजानु-दक्षोरुमूल-वामोरुमूल और जानु-गुल्फ-सन्ध्यङ्गुली मूल में माहेश्वरी से महालक्ष्मी तक का न्यास करके बाँयीं भुजा के मूल में लक्ष्म्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, उसके बीच में सरस्वत्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मणिबन्ध में रत्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, अङ्गुलीमूल में प्रीत्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दक्षकराङ्गुलीमूल में कीर्त्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मणिवन्ध में कान्त्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मध्यसन्धि में पुष्ट्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मूल में तुष्ट्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, शिर पर वामायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, भ्रूमध्य में ज्येष्ठायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दक्ष नेत्र में रौद्र्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, वाम नेत्र में शान्त्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दक्ष कर्ण में श्रद्धायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, वाम कर्ण में वागीश्वर्य्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, गुदा में क्रियाशक्त्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दक्ष नासा में लक्ष्म्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, वाम नासा में सृष्ट्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मुख में मोहिन्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, दक्ष गण्ड में प्रमथायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, वाम गण्ड में भाविन्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, जिह्वा के आगे विद्युल्लतायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मूलाधार में चिच्छक्त्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, स्वाधिष्ठान में सुन्दरानन्दायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, तालु में नागवल्ल्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः—इस प्रकार न्यास करके दक्षपादाङ्गुलिमूल में अं असिताङ्गभैरवाय नमः, गुल्फसन्धि में इं रुरुभैरवाय नमः, जानुओं में उं चण्डभैरवाय नमः, दक्ष ऊरुमूल में ऋं क्रोधभैरवाय नमः, वाम ऊरुमूल में लृं उन्मत्तभैरवाय नमः, जानुओं में एं कपालिभैरवाय नमः, गुल्फसन्धि में ओं भीषणभैरवाय नमः, अङ्गुलिमूल में अं संहारभैरवाय नमः, हृदय में मातङ्ग्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, नाभि में महामातंग्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, शिर पर सिद्धलक्ष्म्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, गुदा में लक्ष्म्यै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, शिर पर गणेशाय मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, भ्रूमध्य में दुर्गायै मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, मुख में वटुकाय मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः, कण्ठ में क्षेत्रपालाय मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः—इस प्रकार न्यास करके ध्यान एवं मानस पूजन करने के बाद स्वर्ण पट्ट पर कुंकुम आदि से त्रिकोण बनाकर उसके बाहर पञ्चकोण बनाकर उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर षोड़शदल कमल बनाकर पुनः अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर तीन चतुरस्र बनाकर पूजा चक्र का निर्माण करके

अपने आगे पीठ पर स्थापित कर मूल मन्त्र से उसका पूजन करके अर्घ्य प्रदान कर स्थापित करते हुये आत्म पूजा तक करके पूर्ववत् मातंगी पीठ का पूजन करके वहीं पर पूर्ववत् मूर्ति की कल्पना करके पुष्पोपचार से लयांग पूजन करके त्रिकोण के बीच में पूर्ववत् षडङ्ग पूजन करके त्रिकोण में पूर्ववत् रति आदि तीन का पूजन कर पञ्चकोणों में द्राविणी आदि पाँच बाणों का देवी के आगे प्रदक्षिण क्रम से पूजन करके अष्टपत्र में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं का एवं उसके आगे लक्ष्मी आदि आठ का पूजन करके षोड़श पत्र में वामा आदि सोलह शक्तियों का पूजन कर बाहर अष्टदल कमल मे आठ भैरवों का पूजन करे। उसके बाद चतुर्दल में मातंगी आदि चार का पूजन कर चतुरस्र के भीतर आग्नेय आदि कोण में गणेश आदि चार का पूजन कर देवी के आगे चार द्वारों पर न्यास में कहे गये सरस्वती आदि चार का पूजन कर उसके बाहर लोकपालों का एवं उसके बाहर लोकपालों के अस्त्रों का पूजन कर मूल मन्त्र से ऋष्यादि न्यास करके यथाशक्ति जप करके जप का समर्पण कर धूप-दीप निवेदन करे। उसके बाद नैवेद्य को पूर्ववत् संस्कृत करके 'ॐ नमो भगवति मातङ्गीश्वरि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' मन्त्र से नैवेद्य समर्पण कर देवी के उत्तर भाग में वायव्या कोण से ईशान कोण तक पङ्क्तिक्रम से ऐं गुरुभ्यो नमः, परमगुरुभ्यो नमः, परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, परमाचार्यगुरुभ्यो नमः, आदिसिद्धगुरुभ्यो नमः, अस्मद्गुरुभ्यो नमः से पूजन कर पूजा का समापन करे।

तथा—

पूर्वमेव जपेल्लक्षं पुरश्चरणसिद्धये। पलाशपुष्पैस्त्रिस्वादुयुक्तैरन्तेऽयुतं हुनेत्॥३४॥
तर्पणं मार्जनं कुर्याद्भोजयेद् भूसुरानपि। कुमारीर्भोजयेच्चापि वशयेत् क्षोभयेज्जगत्॥३५॥
मातङ्गीविग्रहो भूत्वा सर्वकर्माणि साधयेत्। कुण्डे वा स्थण्डिले वाथ विदध्यात् काम्यकर्म च॥३६॥
रक्तवस्त्रपरीताङ्गो रक्तमाल्यानुलेपनः। घृताक्तैर्गुग्गुलैर्हुत्वा राज्ञः स वशयेत् सुधीः॥३७॥
मल्लिकाजातिपुंनागैर्जुहुयाद् भाग्यवान् भवेत्। राज्यार्थी बिल्वपत्रैश्च हुनेत् पद्मैर्विशेषतः॥३८॥
श्रीकामः श्वेतपुष्पैश्च पीतैर्वापि च संहुनेत्। उत्पलैर्धनकामस्तु लक्ष्मीपुष्पैश्च होमयेत्॥३९॥
बन्धूकैश्चैव वागर्थी किंशुकैर्बकुलैर्हुनेत्। वश्यार्थी मधुसंयुक्तैर्मधूककुसुमैर्हुनेत्॥४०॥
आकर्षणे तु लवणैस्तिलैर्मधुरसंयुतैः। वञ्जुलैर्वृष्टिमाप्नोति गुडूचीभिर्ज्वरं हरेत्॥४१॥
अन्नाय जुहुयादन्नं धनार्थी शालितण्डुलैः। गन्धद्रव्येण होमस्तु सर्वसौभाग्यदो भवेत्॥४२॥
कुङ्कुमै रोचनाभिर्वा होमो वश्यार्थिनां मतः। नन्द्यावर्तैश्च वागर्थी त्र्यर्थी निम्बप्रसूनकैः॥४३॥
पलाशपुष्पैस्तेजोर्थी कपिलाज्येन वा हुनेत्। शत्रोरुन्मादकृद्धोम उन्मादकुसुमैरपि॥४४॥
विषवृक्षोत्थनिम्बाख्यश्लेष्मान्तकविभीतकैः। उलूककाकगृध्रोत्थपक्षैस्तैलपरिप्लुतैः॥४५॥

विषवृक्षः कोचिलेति प्रसिद्धः। श्लेष्मान्तको लसोडीति प्रसिद्धः कान्यकुब्जभाषया। 'पिचुमन्दकतैलसेवितैर्बलिभुक्कौशिकगृध्रपक्षकै'रिति मनुकोशवाक्यात्।

होमयेद्रिपुनाशाय निशायां वह्निकुण्डके। पायसैर्गुडसंमिश्रैः खण्डैरिक्त(क्षु)रसैस्तथा॥४६॥
उन्मादनाशनो होमः पायसैर्घृतसंप्लुतैः। मरिचं तिलतैलाक्तं कासश्वासज्वरापहम्॥४७॥
निर्गुण्डीमूलहोमेन निगडस्य च मोचनम्। इति।

इस मन्त्र के पुरश्चरण की सिद्धि के लिये पहले एक लाख जप करे। जप के बाद त्रिमधुराक्त पलाशफूलों से हवन दश हजार करे। दशांश तर्पण, मार्जन करके ब्राह्मणभोजन करावे। साथ ही कुमारियों को भी भोजन करावे तो संसार वश में होता है और जगत् क्षुब्ध होता है। मातङ्गी विग्रह होकर सभी कर्मो का साधन करे। काम्य कर्म कुण्ड या स्थण्डिल में करे। लाल वस्त्र पहनकर लाल माला गले में डालकर लाल अनुलेप लगाकर घृताक्त गुग्गुल के हवन से राजा वश में होता है। मल्लिका जाती पुंनाग के हवन से साधक भाग्यवान होता है। राज्यप्राप्ति के लिये बेलपत्र अथवा कमल से हवन करे। लक्ष्मी की प्राप्ति के लिये उजले और पीले फूल से हवन करे। धन के लिये लक्ष्मीपुष्प एवं बन्धूक पुष्प से हवन करे। वाक्सिद्धि के लिये पलाश और बकुल के फूलों से हवन करे। वश्य के लिये मधुयुक्त महुआ के फूलों से हवन करे। आकर्षण के लिये मधुरयुक्त नमक और तिल से हवन करे। वंजुल के हवन से वर्षा होती है। गिलोय के हवन से बुखार खत्म होता है। अन्न

के लिये अन्न से एवं धन के लिये शालि चावल से हवन करे। गन्ध द्रव्यों के हवन से सर्व सौभाग्य प्राप्त होते हैं। वश्य के लिये कुङ्कुम या रोचन से हवन करे। वागर्थी नन्द्यावर्त से एवं त्र्यर्थी नीम के फूलों से हवन करे। तेजस्वी होने के लिये पलाशपुष्पों या कपिला गाय के घी से हवन करे। शत्रु को उन्मत्त करने के लिये उन्माद फूलों से हवन करे। कुचिला, नीम, लिसोड़ा, विभीतक, उल्लू, कौआ, गीध के पंखों को तेल से परिप्लुत करके शत्रुनाश के लिये रात में अग्निकुण्ड में हवन करे। गुड़मिश्रित पायस, ईख खण्ड रस के हवन से उन्माद का नाश होता है। घी सम्प्लुत पायस, तिल, तैलाक्त मरिच के हवन से कास-श्वास-ज्वर समाप्त होता है। निर्गुण्डी मूल के हवन से जेल से छुटकारा होता है।

जीवाकर्षणविधि:

तथा—

अथात: संप्रवक्ष्यामि जीवस्याकर्षणं परम्। साध्यप्रतिकृती: कृत्वा चतस्रो मन्त्रवित्तम: ॥१॥
एका साध्यर्क्षवृक्षोत्था मधूच्छिष्टेन चापरा। तृतीया पिष्टसंभूता मृदुत्था च तत: परम्॥२॥
हृद्यालिखितसाध्याख्या: कृतासुस्थापना: शुभा:। एता: स्पृष्ट्वा जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं पृथक्॥३॥
कुण्डाधो द्व्यङ्गुलां मूर्तिमुत्तानां तरुजां खनेत्। स्वासनाध: पिष्टभवां मृदुत्थां निखनेत् तत: ॥४॥
पादन्यासस्थलाधस्ताल्लम्बयेदूर्ध्वमम्बरे। मधूच्छिष्टमयीमूर्ध्वपादामथाप्यवाङ्मुखीम् ॥५॥
पोतलोणं घृतं शत्रुपादपांसुं तथैव च। गुडमाक्षिकसंयुक्तं कुडवं पेषयेत् तत: ॥६॥
तेन प्रतिकृतिं कृत्वा स्पष्टाङ्गीमतिमञ्जुलाम्। रक्तमाल्याम्बरालेप: कृतन्यासविधि: स्वयम्॥७॥
प्रतिमायां तु संहारवर्त्मनाणुं प्रविन्यसेत्। नामप्रतिष्ठितप्राणां मन्त्री तदनु पूर्ववत्॥८॥
असिना सप्तधा छित्त्वा तां साध्यर्क्षतरूद्भवे। अनले जुहुयात् साध्यं संस्मरंश्च निशामुखे॥९॥
एकोऽङ्घ्रिरूरुमूलादिर्द्वितीयोऽर्धशरीरत:। तृतीयो बाहुमूलादिश्चतुर्थो मस्तकेन च॥१०॥
भागस्तु पञ्चमो दोष्णा षष्ठो देहार्धत: पर:। ऊरुमूलादितस्त्वेवं स्त्रीणां वामादि कल्पयेत्॥११॥
पुंसां दक्षिणभागादिरेकं वा सप्तधा पृथक्। अथवैकादशांशो वा गुल्फजानूरुखण्डत: ॥१२॥
एवं सप्ताहतो नार्य्य: संक्षुब्धा मदनातुरा:। स्विद्यदङ्ग्यो वेपमाना: साधके न्यस्तमानसा: ॥१३॥
विश्लिष्यत्पृथुलोत्तुङ्गनितम्बवसना: शुभा:। त्राहि त्राहि क्षमस्वेति पश्य मां न परित्यज॥१४॥
इत्थं सर्वा व्याहरन्त्य: करुणायुक्तमानसा:। पतन्ति साधकस्याग्रे मदनानलदीपिता: ॥१५॥
तिष्ठन्ति दासवच्चास्य मन्त्रिणो योषित: सदा। लवणं तिलतैलाक्तं होमयेच्छत्रुनाशनम्॥१६॥
हरिद्राचूर्णसंयुक्तं लवणं स्तम्भने मतम्। इति।

नक्षत्रवृक्षास्तु प्रागेवोक्ता: (पृ० २०७)।

जीवाकर्षण—अब परम जीवाकर्षण को कहता हूँ। मन्त्रज्ञ साध्य की चार प्रतिकृति बनावे, एक साध्य नक्षत्र- वृक्ष के पिष्ट से, दूसरी मोम से, तीसरी अन्न के पिष्ट से और चौथी मिट्टी से। उनके हृदय में साध्य नाम लिखकर स्थापित करे। प्रत्येक को अलग-अलग स्पर्श करके एक सौ आठ मन्त्र-जप करे। कुण्ड में दो अंगुल के गड्ढे में तरुजा मूर्ति को चित्त लिटाकर ऊपर से मिट्टी डाल दे। अपने आसन के नीचे पिष्ट और मिट्टी से बनी मूर्तियों को गाड़ दे। पादन्यास स्थल में मोम की मूर्ति को शिर नीचे और पैर ऊपर करके आकाश में लटकाये। पोत लोण घी शत्रु के पैर तले की धूलि, गुड़, मधु मिलाकर एक कुडव पिष्ट बनावे। उससे स्पष्टाङ्गो वाली अतिमञ्जुल प्रतिकृति बनावे। लाल वस्त्र माला पहन कर लाल लेप लगाकर साधक स्वयं न्यास करे। प्रतिमा में संहार क्रम से मातृका न्यास करे। नाम से प्राण प्रतिष्ठा करे। तलवार से प्रतिमा को सात भाग में काटकर साध्य नक्षत्रवृक्ष से प्रज्वलित अग्नि में साध्य का स्मरण करते हुए रात के पहले प्रहर में हवन करे। प्रथम भाग पैर से ऊरुमूल तक, दूसरा आधा शरीर तक, तीसरा बाहुमूल तक, चौथा मस्तक, पाँचवाँ कन्धा, छठा आधा देह एवं सातवाँ ऊरुमूल तक के भाग का हवन करे। स्त्रियों के बाँयें भाग से सात भाग करे एवं पुरुषों के दाहिने भाग से सात भाग करे। इसके ग्यारह भागों से भी हवन होता है। उसमें गुल्फ एवं जानु को खण्डित किया जाता है। ऐसा करने से एक सप्ताह में नारी संक्षुब्ध

हो कामातुरता से काँपते अंगों से रोती हुई साधक में न्यस्त मानस होती है। ऊँचे नितम्बों से वस्त्र सरकाती हुई त्राहि त्राहि, क्षमा करो, मुझे देखो, मेरा त्याग मत करो—कहती है। इस प्रकार का व्यवहार करती हुई करुणार्द्र होकर साधक के आगे कामानल से दग्ध हो गिर पड़ती है। मन्त्री के पास नारियाँ दासवत् मुख किए रहती हैं। तिल-तैलाक्त नमक से हवन करने पर शत्रु का नाश होता है। हल्दी चूर्ण और नमक से हवन करने पर स्तम्भन होता है।

सारसंग्रहे—

मातङ्गीप्रीतये मन्त्री भौमवारे प्रपूजयेत्। कन्यामेकां तथा तिस्रः पञ्च सप्त तथा पुनः ॥१॥
स्वादुभिर्भक्ष्यभोज्यैश्च स्वन्नपानैर्मनोहरैः। पुष्पैर्धूपैश्च दीपैश्च स्तुत्याः पूज्याश्च देशिकैः ॥२॥
वीणाहस्ता गायकाश्च पूज्याः सर्वेऽपि यत्नतः। सर्ववर्णा रमण्यश्च स्वन्नपानैर्मनोहरैः ॥३॥
अर्चनीयाश्च मन्त्रज्ञैः सर्वभावेन सर्वदा। सर्वा नार्यो भावनीयाः श्यामा एवात्र मन्त्रिणा ॥४॥
भौमवारे तथा पिष्टमयान् दीपान् प्रकारयेत्। प्रज्वालयेद् घृतेनैतान् मातङ्गीप्रीतये बुधः ॥५॥
मातङ्गीप्रीतये मन्त्री योगिन्यष्टाष्टकं यजेत्। वाग्भवाद्याः प्रपूज्याश्च प्रोच्यन्ते ता यथाक्रमम् ॥६॥
दिव्याद्या योगिनी पूर्वा महदाद्या तथा परा। सिद्धादिका गणेश्वर्य्या प्रतासिन्यपि कीर्तिता ॥७॥
डाकिनी च तथा काली कालरात्री निशाचरी। ऊर्ध्वकेशी विरूपाक्षी शुष्काङ्गी भोगिनी मता ॥८॥
जटाधारिण्यपि तथा वीरभरण्यपीरिता। धूम्राक्षी षोडशाप्येता ईशानादि प्रपूजयेत् ॥९॥
कलहाद्या प्रिया चान्या राक्षस्यन्या प्रकीर्तिता। गदिता घोररक्ताक्षी विश्वरूपा भयङ्करी ॥१०॥
वाराह्या च कुमारी स्यान्मुण्डधारिण्यपीरिता। भयासुरा रुद्रहुंकार्य्यपि प्रोक्ता च भीषणा ॥११॥
त्रिपुरान्तकभैरव्यौ ध्वंसिन्यपि च संमता। क्रोधिनी दुर्मदा ज्ञेया आग्नेयादि प्रपूजयेत् ॥१२॥
हंसा च दित्या खट्वाङ्गी दीर्घा लम्बोष्ठयान्विता। तापिनीमन्त्रयोगिन्यौ कालाग्निर्ग्राहिणी परा ॥१३॥
चक्रिण्यन्या च कङ्काली भुवनेश्वर्य्यपीरिता। हुंकारी स्याच्च कौमारी यमदूती करालिनी ॥१४॥
नैर्ऋत्यादि यजेदेता योगिनीः षोडश क्रमात्। केशिनी मदिरा पश्चाल्लोमजङ्घा तथा परा ॥१५॥
अपधारिण्यपि परा भ्रामरी कार्मुकी मता। लोमकाधोमुखी तद्वन्मता कुण्डोग्ररूपिणी ॥१६॥
व्याघ्री सर्वजटी चान्या विकटा घोरया सह। कपालिनी समुद्दिष्टा षोडश्यरिविनाशिनी ॥१७॥
वायव्यादि यजेदेताः योगिनीः षोडश क्रमात्। लक्षार्धं प्रजपेन्मन्त्रं क्षोभयेत् सर्वयोषितः ॥१८॥
पृथ्वीश्वरांस्तदर्धेन वशयेन्नात्र संशयः। तदर्धेन च सत्त्वानि वशगानि भवन्ति हि ॥१९॥
दूरस्था योषितः सर्वा आयान्त्ययुतजापतः। नेदीयस्यस्तदर्धेन समायान्त्येव निश्चितम् ॥२०॥
सहस्रत्रयतः सर्वा वाञ्छिताप्तिर्भवेद् ध्रुवम्। मातङ्गीशीमहामन्त्रस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ॥२१॥
सकृदुच्चारमात्रेण सर्वलोकप्रियो भवेत्। गोपनीया प्रयत्नेन भोगमोक्षफलप्रदा ॥२२॥

सारसंग्रह—मातङ्गी को प्रसन्न करने के लिये मंगलवार को एक, तीन, पाँच या सात कुमारियों की स्वादिष्ट भक्ष्य, भोज्य, मनोहर अन्न-पान, पुष्प, धूप, दीप, स्तुति से पूजा करे। वीणा बजाने वाले एवं गायक की भी पूजा करनी चाहिये। सभी वर्णों की नारियाँ अन्नपान से पूजनीया हैं। साधक सर्वभाव से सर्वदा सबों की पूजा करे। सभी नारियों की मातङ्गी रूप में कल्पना करे। मातङ्गी की प्रीति के लिये भौमवार को पिष्ट से दीपक बनाकर बुधवार को उसे घी से जलावे। मातङ्गी की प्रसन्नता के लिये मन्त्री चौसठ योगिनियों की पूजा करे। इनमें क्रम से दिव्य, महत्, सिद्ध, गणेश्वरी, प्रतासिनी, डाकिनी, काली, कालरात्री, निशाचरी, ऊर्ध्वकेशी, विरूपाक्षी, शुष्कांगी, भोगिनी, जटाधारिणी, वीरभरणी एवं धूम्राक्षी—इन सोलह की पूजा ईशान में करे।

कलहप्रिया, राक्षसी, घोररक्ताक्षी, विश्वरूपा, भयंकरी, वाराही, कुमारी, मुण्डधारिणी, भयासुरा, रुद्रहुंकारी, भीषणा, त्रिपुरान्तकभैरवी, ध्वंसिनी, क्रोधिनी एवं दुर्मदा—इन सोलह की पूजा आग्नेय में करे।

हंसा, दिव्या, खट्वांगी, दीर्घा, लम्बोष्ठा, तापिनी, मन्त्रयोगिनी, कालाग्नि, ग्राहिणी, चक्रिणी, कङ्काली, भुवनेश्वरी, हुंकारी, कौमारी, यमदूती, करालिनी—इन सोलह योगिनियों की नैर्ऋत्य में पूजा करे। केशिनी, मदिरा, लोमजंघा, परा,

अपधारिणी, भ्रामरी, कार्मुकी, लोमका, अधोमुखी, कुण्डा, उग्ररूपिणी, व्याघ्री, सर्वजटी, विकटा, घोरा, कपालिनी—इन सोलहों को शत्रुविनाशिनी कहते हैं। इन सोलह योगिनियों की पूजा वायव्य में करे।

पचास हजार जप करने से सभी नारियाँ क्षोभित होती हैं। पच्चीस हजार जप करने पर राजा वश में होते हैं। साढ़े बारह हजार जप से समस्त सत्त्व वश में होते हैं। दश हजार जप से दूरस्थ सभी नारियाँ पास आ जाती हैं। पाँच हजार जप करने से समीपवर्ती स्त्रियाँ निश्चित रूप से आती हैं। तीन हजार जप से सभी वांछित की प्राप्ति होती है। मातङ्गी का महामन्त्र तीनों लोकों में विख्यात है। इसके एक बार उच्चारण मात्र से ही साधक सर्वलोकप्रिय होता है। यह प्रयत्नपूर्वक गोपनीय है और भोग-मोक्ष फलदायक है।

मातङ्गीयन्त्रधारणविधि:

आदौ वह्निपुरे लिखेत् प्रविलसद्वाक्शक्तिमाराक्षरांस्तत्कोणेषु मनोभवादितनयालक्ष्मीमनून् बाह्यत: ।
षट्कोणेषु च बीजषट्कमपरान् पत्रेषु पञ्चस्वथो वह्न्यम्भोधिरसाष्टसप्तकमितान् मन्त्रस्य वर्णान् बहि: ॥२३॥
पत्रेष्वष्टसु रुद्रदिग्युगवसुद्वन्द्वग्रहद्व्यक्षरानन्ते तर्कमितांस्तथा स्वपरितो मन्त्रेण संवेष्टयेत् ।
बाह्ये मातृकया क्रमोत्क्रमवशात् साध्याक्षरैर्भूपुरं भूगेहास्रिषु साध्यनामसहितं कामं लिखेन्मन्त्रवित् ॥२४॥
सुवर्णरचिते पट्टे लेखन्या स्वर्णरौप्ययो: । रजते फलके वापि भूर्जे वा सुमनोहरे ॥२५॥
सरोचनाकुङ्कुमचन्दनेन कस्तूरिकालक्तकरक्तसीतै: ।
स्वयं शुचि: साधकमानवानां सौभाग्यसिद्ध्यै च लिखेत् सुयन्त्रम् ॥२६॥
एतद्यन्त्रं लिखित्वैवं घृतसंपातपूर्वकम् । हुत्वा प्रजप्य संपूज्य गुलिकीकृत्य साधक: ॥२७॥
साभिषेक: स्वयं बाहौ दक्षिणे तद्धि धारयेत् । पूज्यते त्रिदशाद्यैश्च किं पुनर्मानुषोत्तमै: ॥२८॥
आयुरारोग्यमैश्वर्यमन्यद्यद्यत् स्ववाञ्छितम् । पुत्रपौत्रादिकं चापि लभते नात्र संशय: ॥२९॥ इति।

अस्यार्थ:—भूर्जादौ प्रोक्तद्रव्यैरुक्तलेखिन्या त्रिकोणमालिख्य, तन्मध्ये साधकनामसहितं वाग्बीजं शक्तिबीजं मारबीजं चालिख्य, तत्कोणेषु कामबीजं शक्तिबीजं श्रीबीजञ्चालिख्य, तद्बहि: षट्कोणं कृत्वा तत् कोणेषु स्वाग्रादि प्रादक्षिण्येन मन्त्रादिगतबीजषट्कमालिख्य, तद्बहि: पञ्चदलपद्मं विरच्य, तत्र प्रथमदले ॐ नमो, द्वितीये भगवति, तृतीये मातङ्गीश्वरि, चतुर्थे सर्वजनमनोहारि, पञ्चमे सर्वमुखरञ्जिनि, इति स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन विलिख्य, तद्बहिरष्टदलपद्मं विरच्य तद् दलेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन प्रथमे—कामशक्ति श्रीबीजानि सर्वराजवशङ्करि, इति विलिख्य, द्वितीये—सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि इति, तृतीये—सर्वदुष्टमृगवशङ्करि इति, चतुर्थे—सर्वसत्त्ववशङ्करि इति, पञ्चमे—सर्वलोकवशङ्करि इति, षष्ठे—अमुकं मे वशमानय इति, सप्तमे—स्वाहा इति, अष्टमे—अन्तिमबीजषट्कं विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा वृत्तयोरन्तराले स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन मूलमन्त्रेणावेष्ट्य, तद्बहिर्वृत्तं कृत्वा तत्रस्थवीथ्यां स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन सबिन्दुभिर्मातृकावर्णैरावेष्ट्यान्ते साध्यनामालिख्य, तद्बहिर्वृत्तं कृत्वा तत्रस्थवीथ्यां साध्यनामाक्षराणि विलोमरीत्या विलिख्य, क्षकाराद्यकारान्तान्, मातृकावर्णान् सबिन्दूनालिख्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु साध्यनामसहितं कामबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। जीवस्याकर्षणे क्रमस्तु—साध्यर्क्षवृक्षेण मधूच्छिष्टेन शालितण्डुलपिष्टेन कुलालहस्तमृदा चैकैकां पुत्तलीं कृत्वा, तासां हृदयेषु 'अमुकं मे वशमानय' इति साध्यनामालिख्य, तासु साध्यप्राणान् संस्थाप्य ता: स्पृष्ट्वा प्रत्येकं प्रत्येकं मूलमन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत्। अत्र मूलमन्त्रजपे अमुकपदस्थाने साध्यनाम योजयित्वा जपेत्।

अमुकपदं यद्रूपं यत्र मन्त्रेषु दृश्यते । साध्याभिधानं तद्रूपं तत्र स्थाने निवेशयेत् ॥

इति नारायणीयवचनात् । कुण्डमध्ये द्व्यङ्गुलाध: काष्ठमयीं पुत्तलीमुत्तानरूपां निखाय स्वासनस्याधस्तथा पिष्टमयीं स्वपादन्यासस्थाने मृण्मयीं निक्षिपेत्। अत्र लवणेन सह निखनेदिति संप्रदाय:। ततो मधूच्छिष्टमयीमधोमुखीमूर्ध्वपादामर्कतूलतन्तुना पादयोर्बद्ध्वा, कुण्डादूर्ध्वं धूमेन स्पृश्यमानां लम्बयित्वा, कुडवमात्रं लवणं घृतमधुगुडसहितं श्लक्ष्णं पेषयित्वा, तेन पुत्तलीं कृत्वा स्वयं यथोक्तवेशन्यासादियुक्तो लवणमय्यां पुत्तल्यां मूलविद्याया: प्रोक्तपदानि

संहाररीत्या विन्यस्य, अन्यानपि स्वदेहकृतन्यासान् संहाररीत्यैव विन्यस्य कृतप्राणप्रतिष्ठामूरुमूलात् पादद्वयाग्रान्तां एकैकं भागं कटेः कण्ठावधि दैर्घ्येण द्विधाकृतभागद्वयं बाहुद्वयेन कण्ठादूर्ध्वं भागमेकमिति सप्तधा तीक्ष्णशस्त्रेण च्छित्त्वा, घृतप्लुतमेकमेकं भागं संस्कृतेऽग्नौ साध्यर्क्षवृक्षसमिद्धे साध्यं स्मरन्निशामुखे मूलमन्त्रेण जुहुयात्। साध्यः पुरुषश्चेत्तदा दक्षिणपादमारभ्य जुहुयात्, स्त्री चेद्वामपादमारभ्येति। अथवैकमेकं भागं सप्तधा सप्तधा कृत्वोक्तविधिना जुहुयात्। यद्वा—गुल्फद्वये जानुद्वये छेदेनैकादशधा कृत्वा जुहुयादिति।

यन्त्रधारण विधि—सोना, चाँदी के पत्र पर या भोजपत्र पर सोना, चाँदी के कलम से त्रिकोण बनावे। उसके बीच में ऐं ह्रीं क्लीं के साथ साध्य नाम लिखे। उसके तीनो कोनों में क्लीं ह्रीं श्रीं लिखे। उसके बाहर षट्कोण बनावे। उसके छः कोनों में मन्त्र के प्रारम्भ के छः बीज ऐं क्लीं सौः ऐं ह्रीं श्रीं को अपने आगे से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से लिखे। इसके बाहर पञ्चदल पद्म बनावे। उसके प्रथम दल में ॐ नमो, द्वितीय में भगवति, तृतीय में मातङ्गीश्वरि, चौथे में सर्वजनमनोहारि एवं पाँचवें में सर्वमुखरञ्जिनि अपने आगे से आरम्भ करके प्रदक्षिण क्रम लिखे। इसके बाहर अष्टदल पद्म अंकित करके अपने आगे के दल से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से पहले दल में क्लीं ह्रीं श्रीं सर्वराजवशंकरि लिखे। दूसरे में सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि, तीसरे में सर्वदुष्टमृगवशंकरि, चौथे में सर्वसत्त्ववशंकरि, पाँचवें में सर्वलोकवशंकरि, छठे में अमुक मे वशमानय, सातवें में स्वाहा और आठवें में अन्तिम छः बीजों—श्रीं ह्रीं ऐं सौः क्लीं ऐं को लिखे। इसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से मूल मन्त्र को लिखे। उसके बाहर एक वृत्त बनाकर उसकी वीथि में प्रादक्षिण्य क्रम से सानुस्वार मातृकाओं को और साध्य नाम लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर उसकी वीथि में साध्य नाम के अक्षरों को विलोम रीति से लिखकर क्षं से अं तक मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके कोनों में साध्य नाम के सहित क्लीं लिखे।

इस यन्त्र को यन्त्र बनाकर घृतसम्पातपूर्वक हवन करे, मन्त्र जप करे पूजन कर उसकी गुलिका बनावे। तदनन्तर अपना अभिषेक करके अपनी दक्षिण भुजा में उस यन्त्र गुलिका को धारण करे। ऐसा करने से उसकी पूजा देवता भी करने लगते हैं, तब मनुष्यों की तो बात ही क्या है? इसके प्रभाव से साधक निःसन्देह रूप से आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य के साथ-साथ अन्य जो भी कामना करता है, वह प्राप्त करता है एवं पुत्र-पौत्रादि से समन्वित होता है।

जीवाकर्षण कर्म में साध्य वृक्ष, मोम, शालितण्डुल-पिष्ट, कुम्हार के हाथ की मिट्टी से एक-एक मूर्ति बनाकर उनके हृदय में 'अमुकं मे वशमानय स्वाहा' के साथ साध्य नाम लिखे। उनमें साध्य के प्राण की प्रतिष्ठा करे। प्रत्येक का अलग-अलग स्पर्श करके नारायणीय की उक्ति के अनुसार मूल मन्त्र में 'अमुकं' स्थान पर साध्य नाम जोड़कर एक सौ आठ जप करे।

कुण्ड में एक अंगुल नीचे काष्ठ पुत्तली को उत्तान करके गाड़े। अपने आसन के नीचे पिष्टमयी और अपने पैर रखने के स्थान पर मिट्टी की मूर्ति गाड़ दे। कुछ के मत से इसे नमक के साथ गाड़े। मोम की पुत्तली के पैरों में अकवन की रूई का सूत बाँधकर शिर नीचे एवं पाँव ऊपर करके कुण्ड के ऊपर ऐसा लटकाये कि उसमें कुण्ड का धुँआ लगे। ३२० ग्राम नमक में घी मधु गुड़ मिलाकर कर पीसे। उस पिष्ट से पुत्तली बनावे। साधक स्वयं यथोक्त वेश-न्यासयुक्त लवण की पुत्तली में मूल विद्या के प्रोक्त पदों का न्यास संहार क्रम से करे। अपने देह में किये गये दूसरे न्यासों को भी संहार क्रम से ही न्यस्त कर पुत्तली में प्राण प्रतिष्ठा करे। ऊरु मूल से पद तल तक पैरों का एक-एक भाग करे। कमर से कण्ठ तक का दो भाग करे। दोनों हाथों को अलग-अलग दो भाग करे। कण्ठ के ऊपर मस्तक तक एक भाग करे। इस प्रकार सात भाग तेज शस्त्र से करे। साध्य नक्षत्र वृक्ष की लकड़ी से प्रज्वलित संस्कृत अग्नि में घृतप्लुत एक-एक भाग को साध्य का स्मरण करते हुए रात के पहले प्रहर में मूल मन्त्र से हवन करे। साध्य यदि पुरुष हो तब दाहिने पैर से प्रारम्भ करके हवन करे और यदि स्त्री हो तो बाँयें पैर से हवन आरम्भ करे। एक-एक भाग को सात-सात भाग में बाँटकर उक्त विधि से हवन करे। दोनों गुल्फों और दोनों घुटनों अथवा को अलग-अलग काटकर भी ग्यारह बार हवन करे।

पुत्तलीमानम्

पुलीमानं तु मात्स्येन्द्रसंहितायाम्—

आयामः पादयोस्तस्या आकटेश्चतुरङ्गुलम्। पादोनद्व्यङ्गुला कुक्षिस्तावदेवाङ्गुलः करः ॥१॥

अङ्गुलद्वयमावक्त्रात् कण्ठदेशस्य मानकम्। सशिरोवक्त्रमानं तु सार्धद्व्यङ्गुलमीरितम्॥२॥
द्वादशाङ्गुलिभिः सर्वाः सम्यक् पुत्तलिकाः शुभाः। इति।

पुत्तली मान—मत्स्येन्द्र संहिता के अनुसार पुत्तली का माप पैर से कमर तक चार अंगुल, पौने दो अंगुल लक्ष्मी कुक्षि, पौने दो अंगुल लम्बे हाथ, कण्ठ से मुख तक दो अंगुल लम्बा एवं मुखसहित शिर का मान ढाई अंगुल होना चाहिये। बारह अंगुल लम्बी पुत्तलिका शुभ होती है।

मातङ्ग्याः मन्त्रान्तराणि

मातङ्गमनुकोशे—प्रोक्तसर्वपदतस्तार्तीयं राज्यलक्ष्मी च। प्रदे इति पदेऽन्ते पञ्चनवत्यक्षरो मन्त्रः। अयमर्थः—प्रागुद्धृताष्टाशीत्यक्षरराजमातङ्गिनीमन्त्रे सर्वसत्त्ववशङ्करीति पदानन्तरं 'सौः राज्यलक्ष्मीप्रदे' इति सप्ताक्षराणि संयोज्यानन्तरं सर्वलोकममुकमित्यादि वदेदिति। एवं पञ्चनवत्यक्षरो मन्त्रो भवति। तथा—

ऋष्यादि पूर्वमुक्तं षड्दीर्घयुजा स्वरेणाङ्गविधिः। विन्यस्याङ्गानि ततो विचिन्तयेन्मनुदेवतामेवम्॥१॥

दीर्घयुजा स्वरेण। तेन आंईऊं इत्यादयः षडङ्गमन्त्राः। एवं पूर्वोक्तप्रकारेण। तेन राजमातङ्गिनीवत् ध्यानपूजादिकं सर्वं ज्ञेयम्।

९५ अक्षरों का मातङ्गी मन्त्र—मातङ्गमनुकोश के अनुसार पूर्वोक्त अट्ठासी अक्षरों के मन्त्र में सर्वसत्त्ववशंकरि के बाद 'सौः राज्यलक्ष्मीप्रदे'—यह सात अक्षर जोड़ने के पश्चात् सर्वलोकममुकं इत्यादि कहने से यह मन्त्र पञ्चानबे अक्षरों का हो जाता है।

इसके ऋषि आदि पूर्ववत् ही हैं। छः दीर्घ स्वरों से इसका षडङ्ग न्यास करे। अंग न्यास के बाद राज मातङ्गिनी के समान ही ध्यान-पूजा आदि करे।

तथा—

मायाहृदोरथान्ते ब्रह्मश्रीराजितेऽक्षरान् प्रोक्त्वा। पदमथ राजपूजिते इति तत्परतो जये विजये॥१॥
गौर्यथ गान्धारि ततो देयं त्रिभुवनवशंकरीति पदम्। सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि सुसुदुदुघे ततो घे च॥२॥
वावामायास्वाहान्तः प्रणवादिरयं भवेन्मन्त्रः।

माया ह्रीं, हृत् नमः, अन्यत्सर्वं स्वरूपम्। तेन चतुष्पञ्चादक्षरोऽयं मन्त्रः। ॐ ह्रींनमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते जये विजये गौरि गान्धारि त्रिभुवनवशङ्करि सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि सुसुदुदुघेघेवावा ह्रीं स्वाहा। अयं मन्त्रः प्रणवादिः। प्रपञ्चसारे तु—सत्रिभुवनवशङ्कर्य्यन्ते सर्वलोकवशङ्करीति (सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करीति च) पदं प्रोक्तम्। प्रवणो नोद्धृतस्तेनैकाधिकषष्ट्यक्षरो मन्त्रः। तत्र गौरी देवता निचृच्छन्दः।

अत्र चतु(ष्पञ्चा)शदक्षरे तु—

ऋषिरस्याजश्छन्दो निचृद्गायत्रमीरितं प्राज्ञैः। वाञ्छितफलदा देवी प्रोक्ता श्रीराजमातङ्गी॥३॥
अङ्गानि मायया स्याद् ध्यानं पूर्वोक्तमेव विज्ञेयम्।

ध्यानमित्युपलक्षणं तेन पूजाजपादिकमपि तथैव ज्ञेयम्। गौरीदेवतापक्षे तु प्रपञ्चसारे, (३२ प० श्लो० ३७)—

सचतुर्दशभिर्दशभिस्तथाष्टभिश्चाष्टभिस्तथा दशभिः। एकादशभिर्मन्त्राक्षरैः क्रमादुच्यते षडङ्गविधिः॥

ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते हृदयाय नमः। जये विजये गौरि गान्धारि शिरसे स्वाहा। त्रिभुवनवशङ्करि शिखा०। सर्वलोकवशङ्करि कवचाय०। सर्वस्त्रीपुरुषवशङ्करि नेत्रत्रयाय०। सुसुदुदुघेघेवावाह्रीं स्वाहा अस्त्रम्। ध्यानं तत्रैव—

असकलशशिराजन्मौलिराबद्धपाशाङ्कुशरुचिरकराब्जा बन्धुजीवारुणाङ्गी।
अमरनिकरवन्द्या त्रीक्षणा शोणलेपांशुककुसुमयुता स्यात् संपदे पार्वती नः॥४॥

'आराधयेत् तदङ्गैर्मातृभिराशाधिपास्त्रैश्च' इति मातृभिर्ब्राह्म्यादिभिः। अत्र गौरीदेवतापक्षे भुवनेश्वरीपीठपूजनं ज्ञेयम्। (तदग्रे वक्ष्यते)—

अयुतं प्रजपेज्जुहुयात् पायसैर्घृतप्लुतैर्दशांशेन। तद्वच्च तर्पणादि कुर्यादिष्टार्थसिद्धये मन्त्री ॥१॥ इति।

५४ अक्षरों का मातङ्गी मन्त्र—मातङ्गी का एक अन्य मन्त्र है—ॐ ह्रीं नमो ब्रह्मश्रीराजिते राजपूजिते जये विजये गौरि गान्धारि त्रिभुवनवशंकरि सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि सुसुदुदुघेघेवावा ह्रीं स्वाहा।

प्रपञ्चसार के अनुसार त्रिभुवनवशंकरि के बाद सर्वलोकवशंकरि का भी समावेश करने एवं प्रणव का समावेश न करने से यह ६१ अक्षरों का एक अन्य मन्त्र होता है। उसमें मन्त्र के देवता गौरी और छन्द निचृद गहे गये हैं।

चौवन अक्षरों के मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द निचृद् गायत्री और देवता राजमातङ्गी है। इसका अङ्ग न्यास ह्रीं से होता है। ध्यान-पूजादि पूर्ववत् ही होते हैं।

प्रपञ्चसार के अनुसार गौरी देवतापक्ष में अंगन्यास इस प्रकार होता है—ह्रीं नमो ब्रह्म श्री राजिते राजपूजिते हृदयाय नमः, जये विजये गौरि गान्धारि शिरसे स्वाहा, त्रिभुवनवशंकरि शिखायै वषट्, सर्वलोकवशंकरि कवचाय हुं। सर्वस्त्रीपुरुषवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्, सुसुदुदुघेघेवावा ह्रीं स्वाहा अस्त्राय फट्। प्रपञ्चसार में ही इसका ध्यान इस प्रकार कहा गया है—

असकलशशिराजन्मौलिराबद्धपाशाङ्कुशरुचिरकराब्जा बन्धुजीवारुणाङ्गी।
अमरनिकरवन्द्या त्रीक्षणा शोणलेपांशुककुसुमयुता स्यात् संपदे पार्वती नः।।

यहाँ पर ब्राह्मी आदि मातृकाओं लोकपालों एवं उनके आयुधों की भी आराधना करनी चाहिये। गौरी देवता के अर्चन पक्ष में भुवनेश्वरी पीठ पर पूजा करनी चाहिये।

उपर्युक्त मन्त्रद्रय का दश हजार जप करे। घी प्लुत पायस से दशांश हवन करे। इष्टार्थ सिद्धि के लिये दशांश तर्पण करे।

मातङ्गमनुकोशे—

राजमुखि पदाद्राजाभिमुखि वश्यपूर्वमुखि च पदम्। भुवनेशीश्रीकामान् वदेत् ततो देवदेवि पदम् ॥
तदन्ते महादेविपदं पदमथ देवाधिदेवीति। सर्वजनस्य मुखं मम वश्यं कुरु द्विस्ततः स्वाहा ॥
प्रणवादिरयं मन्त्रः प्रोक्तः श्रीवश्यमातङ्ग्याः। जपपूजाद्यं सर्वं प्रोक्तं श्रीराजमातङ्गीवत् ॥ इति।

प्रपञ्चसारे (३२.४६)—

दशभिः सप्तभिश्चैव चतुर्भिः करणाक्षरैः। पञ्चभिः सप्तदशभिर्वर्णैरङ्गक्रिया मनोः ॥१॥

करणानि चत्वारि। तेन ॐ राजमुखि राजाभिमुखि हृदयाय०। वश्यमुखि ह्रींश्रींक्लीं शिरसे०। देवदेवि शिखा०। महादेवि कवचाय०। देवाधिदेवि नेत्र०। सर्वजनस्य मुखं मम वश्यं कुरुकुरु स्वाहा अस्त्राय०।

मातङ्ग मनुकोश के अनुसार एक अन्य मन्त्र होता है—ॐ राजमुखि राजाभिमुखि वश्यमुखि ह्रीं श्रीं क्लीं देव देवि महादेवि देवाधिदेवि सर्वजनस्य मुखं मम वश्यं कुरु कुरु स्वाहा। राजमातङ्गी के समान ध्यान-जप-पूजा आदि होते हैं।

प्रपञ्चसार के अनुसार मन्त्र के १०,७,४,४,५,१७ अक्षरों से अंगन्यास करे। जैसे—ॐ राजमुखि राजाभिमुखि हृदयाय नमः। वश्यमुखि ह्रीं श्रीं क्लीं शिरसे स्वाहा। देवदेवि शिखायै वषट्। महादेवी कवचाय हुं देवाधिदेवि नेत्रत्रयाय वौषट्। सर्वजनस्य मुखं मम वश्यं कुरु कुरु स्वाहा अस्त्राय फट्।

मातङ्गमनुकोशे—

मायाहृदोरथान्ते हिलिहिलिपदमुच्चरेच्च ततः। चण्डपदान्मातङ्गि वह्निजायेति मन्त्रोऽयम् ॥१॥
पूजाजपादि सर्वं संप्रोक्तं राजमातङ्ग्याः। अयुतजपाद् घृतपायसहोमात् सिद्धो भवेन्मन्त्रः ॥२॥ इति।

पन्द्रह अक्षर का मातङ्गी मन्त्र—मातंगमनुकोश के अनुसार एक अन्य मन्त्र है—ह्रीं नमः हिलि हिलि चण्डमातंगिनि स्वाहा। इसके पूजा-जप आदि राजमातङ्गी के समान होते हैं। इसके दश हजार जप के बाद घी-पायस के हवन से यह मन्त्र सिद्ध होता है।

तथा—

वाग्भवं हृदयं चाथ श्रीराजमातङ्गि-पदम्। वदेदमोघे सत्यवादिनि मम कर्णे-पदं ततः ॥१॥
अवतरपदं वीप्स्य सत्यं कथेति कथ पदम्। एह्येहि पदाभ्यां परतः श्रीमातङ्ग्यै नमस्तदनु ॥२॥
वीप्स्य द्विरुच्चार्य।

मन्त्रोऽयं लक्षजपाद् दशांशहोमाच्च पायसघृताद्यैः। सिद्धः कर्णे कथयति शुभाशुभं पृच्छकस्याशु ॥३॥ इति।

ऐं नमः श्रीराज मातंगि अमोघे सत्यवादिनि मम कर्णे अवतर अवतर सत्यं कथय कथय एह्येहि श्रीमातंग्यै नमः—यह कर्णमातङ्गी मन्त्र ४६ अक्षरों का है। एक लाख जप एवं उसे दशांश घृत-पायस के होम से यह मन्त्र सिद्ध होता है। सिद्ध होने पर यह साधक के कान में उसके शुभ-अशुभ को कहता है।

तथा—

तस्मादपि शतगुणफलदं देव्या मूलमन्त्रमथ वच्मि। सिद्धेन येन बहवो मन्त्राः पठनेन सिद्ध्यन्ति ॥
वाङ्मायाश्रीबीजं बालाबीजत्रयं ततः कामः। मायाश्रीबीजमथो श्रीमातङ्गीश्वरीति पदम् ॥२॥
सर्ववशङ्करिपदतः स्वाहाकारं ततश्च वदेत्। सद्यः फलदो ज्ञेयः श्रीमातङ्ग्या मूलमन्त्रोऽयम् ॥३॥

तस्मादित्यष्टनवत्यक्षरमन्त्रात्। मन्त्रोद्धारः सुगमः। तथा—

ऋषिरस्य दक्षिणामूर्तिश्छन्दो निचृदन्विता च गायत्री। वाञ्छितफलदा ज्ञेया श्रीमातङ्गीश्वरी देवी ॥४॥
बालाबीजैस्त्रिभिरथ द्विप्रोक्तैः करषडङ्गविधिः। ध्यात्वा प्राग्वद् देवीं सम्यग् गन्धादिनार्चयेद्भक्त्या ॥५॥

प्राग्वदष्टनवत्यक्षरमन्त्रवत्। पूजनमपि तत्रोक्तमेव। तथा—

श्रीमातङ्गीदेव्याः सिद्ध्यति मन्त्रस्त्रिलक्षजपात्। पुष्पैर्मधूकजैरथ मधुरत्रयलोलितैः कृतो होमः ॥६॥
सघृतेन पायसेन च फलैस्तथा कदल्या फलदायी। इति।

अन्य मन्त्र—मातंगमनुकोश में ही कहा है कि इससे भी सौ गुना अधिक फल देने वाला देवी का एक मूलमन्त्र है, जिसके सिद्ध होने पर बहुत से मन्त्र केवल पाठ से ही सिद्ध हो जाते हैं। मन्त्र है—ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः क्लीं श्रीं ह्रीं श्रीमातंगीश्वरि सर्ववशंकरि स्वाहा। यह सद्यः फलदायक मातंगी का मूल मन्त्र है। इसके ऋषि दक्षिणामूर्ति, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता वांछित फलप्रदा श्री मातङ्गीश्वरी हैं। बालाबीजों की दो आवृत्ति से इसका करांग न्यास होता है। देवी का ध्यान एवं पूजा आदि पूर्ववत् ९८ अक्षरी मन्त्र के समान करना चाहिये। इसके तीन लाख जप से श्री मातङ्गी देवी सिद्ध होती है और त्रिमधुराक्त महुआ के फूलों से एवं घी-पायस-केले के फल से हवन करने पर यह मन्त्र फलदायी होता है।

प्रपञ्चसारे—कामिनि रञ्जिनि ठद्वयमित्यपरम्। ठद्वयं स्वाहाकारः।

ऋषिः संमोहनः प्रोक्तो निचृच्छन्दोऽस्य देवता। सर्वसंमोहिनी चाङ्गं द्विरावृत्तैर्पदैर्भवेत् ॥१॥
श्यामाङ्गी वल्लकीं दोर्भ्यां वादयन्ती सुभूषणा। चन्द्रावतंसा विविधैर्गानैर्मोहयते जगत् ॥२॥
पूजा मातङ्गिनीपीठे रत्याद्यास्तु त्रिकोणगाः। पञ्चबाणास्ततः पूज्याः केसरेष्वङ्गपूजनम् ॥३॥
अनङ्गकुसुमाद्यास्तु पत्रेष्वग्रेषु मातरः। लोकपालैश्च वज्राद्यैः सप्तावृत्तिरियं मता ॥४॥
प्रजपेदयुतद्वन्द्वं दशांशं जुहुयात् ततः। मधूकजैस्त्रिमध्वक्तैः सर्वं संमोहयेज्जगत् ॥५॥
प्रयोगः सुगम इति।

अन्य मन्त्र—प्रपञ्चसार के अनुसार अष्टाक्षर मन्त्र है—कामिनि रञ्जिनि स्वाहा। इसके ऋषि सम्मोहन, छन्द निचृद्

और देवता सर्वसम्मोहिनी है। इसके तीन पदों की दो आवृत्ति से अंग न्यास होता है। इसका ध्यान इस प्रकार है—

श्यामाङ्गी वल्लकीं दोर्भ्यां वादयन्ती सुभूषणा। चन्द्रावतंसा विविधैर्गानैर्मोहयते जगत्।।

इसका पूजन पूजा मातङ्गी पीठ पर करे। त्रिकोण में रति आदि की पूजा करे। तब पञ्च बाणों की पूजा के बाद केसर में अंग-पूजा करे। अष्टपत्र में अनङ्गकुसुमादि की, पत्राग्रों में ब्राह्मी आदि की एवं भूपुर में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। यह पूजा सात आवरणों की होती है। पुरश्चरण हेतु बीस हजार मन्त्रजप होता है। दशांश हवन त्रिमधुराक्त महुआ के फूलों से किया जाता है। इससे सारा संसार मोहित होता है।

मातङ्गमनुकोशे—

उच्छिष्टशब्दं पुरतो निधाय चण्डालि मातङ्गि पदे च भूयः ।
पदं ततः सर्ववशंकरीति नमोऽग्निपत्न्योर्मनुरेष मध्ये ॥१॥

नमःपदादिस्वाहापदान्त एकोनविंशत्यक्षरो मन्त्रः। अत्र केचित्—चण्डालीति दीर्घं चकारं वदन्ति, तत्र 'हृन्नेत्रं (कर्णः) चान्तनेत्रे ष्ट कूर्मश्चैवेन्दुखण्डवान्' इति सारसंग्रहवचनान्मन्त्रोद्धारे चकारस्य ह्रस्वत्वदर्शनात्। अस्य भेदानाह तत्रैव—'तारत्रयादिर्मनुरेष सद्यः सर्वार्थसिद्धिं विदधाति नूनम्।' तारत्रयं वाङ्मायाश्रीबीजात्मकम्। तथा—

कामराजभुवनेश्वरीरमाबीजयुक् सपदि विश्ववश्यकृत् ।
मन्त्र एष यदि वा स्मरादिकः स्यादशेषजनरञ्जने क्षमः ॥१॥ इति।

प्रथमोक्तत्रितारादिमन्त्रस्य सतुम्बुरुर्नारद ऋषिः। इतरयोस्तु—

मदनोऽस्य ऋषिः प्रोक्तश्छन्दो निचृदन्विता च गायत्री ।
विश्वस्य वशहेतुर्मातङ्गीश्वरी देवता प्रोक्ता ॥२॥
दृग्वह्निलोकानलषड्द्विवर्णैरङ्गक्रियाप्यस्य मनोः प्रदिष्टा ।
अङ्गानि मन्त्रवर्णैरेवं कृत्वाथ देवतां ध्यायेत् ॥३॥

दृग् द्वयम्। वह्नयस्त्रयः। लोकास्त्रयः।

मातङ्गीं नवयावकार्द्रचरणामुल्लासिकृष्णांशुकां वीणोल्लासिकारां समुन्नतकुचां मुक्ताप्रवालावलीम् ।
हृद्याङ्गीं सितशङ्खकुण्डलधरां बिम्बाधरां सस्मितामाकीर्णालकवेणिमब्जनयनां ध्यायेच्छुकश्यामलाम् ॥४॥

मातंगमनुकोश के अनुसार उच्छिष्ट चाण्डालि का मन्त्र है—नमः उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशंकरि स्वाहा। इसमें उन्नीस अक्षर हैं। कुछ लोग इस मन्त्र में चण्डालि के बदले चाण्डालि यह दीर्घ चकार कहते हैं; परन्तु सारसंग्रह के अनुसार ह्रस्व चकार का पाठ ही समीचीन है। सारसंग्रह में ही इसका एक और भेद यह भी कहा गया है—ऐं ह्रीं श्रीं नमः उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशंकरि स्वाहा।

दूसरा भेद यह बताया गया है—क्लीं ह्रीं श्रीं उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशंकरि स्वाहा। यह मन्त्र तत्काल विश्व को वश में करने वाला है। यदि यह मन्त्र क्लीं से प्रारम्भ होता है तो सभी लोगों का रंजन करने में सक्षम होता है।

प्रथमोक्त त्रितारादि मन्त्र के ऋषि तुम्बरु नारद एवं दूसरे मन्त्र के मदन, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता मातङ्गीश्वरी हैं। मन्त्र के २,३,३,३,६,२ अक्षरों से अंगन्यास करके मन्त्र वर्ण न्यास करने के पश्चात् निम्नवत् इसका ध्यान किया जाता है—

मातङ्गीं नवयावकार्द्रचरणामुल्लासिकृष्णांशुकां वीणोल्लासिकारां समुन्नतकुचां मुक्ताप्रवालावलीम्।
हृद्याङ्गीं सितशङ्खकुण्डलधरां बिम्बाधरां सस्मितामाकीर्णालकवेणिमब्जनयनां ध्यायेच्छुकश्यामलाम्।।

मातङ्ग्याः पूजायन्त्रम्

त्र्यशं वसुदलयुग्मं चतुरश्रं पीठमेतस्याः। त्र्यश्रेऽर्च्या रत्याद्याः पत्रेषु ब्राह्म्याद्यास्ततोऽभ्यर्च्याः ॥५॥
मातङ्ग्यन्ताः सर्वा अनङ्गकुसुमादिकाश्च पत्रेषु। देवीपादतलाग्रे पूज्यास्ता बाणदेवताः सर्वाः ॥६॥
अङ्गानि च तत्पार्श्वे मध्ये देवीं च यजेत् पुनः। इति।

पूजा यन्त्र—त्रिकोण बनाकर उसके बाहर दो अष्टदल बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। इस पीठ पर पूजा करे। त्रिकोण के कोनों में रति आदि की, पत्रों में ब्राह्मी आदि की तथा अनङ्गकुसुमादि से मातङ्गी तक की पूजा करे। देवी के पाद तल के आगे पाँचो बाण देवता की पूजा करे। उसके पार्श्वों में अङ्गों की और मध्य में देवी की पूजा करे।

प्रयोगविधि:

अथ प्रयोग:—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा केवलविद्यया तारत्रयादिविद्यया वा सतुम्बुरवे नारदायऋषये नम:। इतरविद्ययोर्मदनाय ऋषये नम:। निचृद्गायत्रीच्छन्दसे नम:। श्रीमातङ्गीश्वरीदेवतायै नम:। इति यथास्थानं विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग:, इत्युक्त्वा। नमो हृदयाय०। उच्छिष्ट शिरसे०। चण्डालि शिखायै०। मातङ्गि कवचाय०। सर्ववशङ्करि नेत्रत्रयाय०। स्वाहा अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यानमानसपूजान्ते प्राग्वत् स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिनाष्टदलद्वन्द्वमन्तर्बहिर्विभागेन कृत्वा, तदन्तरष्टदलकमलकर्णिकायां स्वाभिमुखाग्रं त्रिकोणं विधाय, पद्माद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्त्रत्रयं च कुर्यादिति पूजाचक्रं निर्माय, स्वपुरत: संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिपात्रस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् मातङ्गीश्वरीपीठमभ्यर्च्य आवाहनादिपुष्पोपचारान्ते त्रिकोणकोणेषु प्राग्वद्रत्याद्या: संपूज्य, त्रिकोणाद्बहि: पद्मकर्णिकायामेव प्राग्वत् पञ्चबाणान् षडङ्गानि च संपूज्य, प्रथमाष्टदलेषु ब्राह्म्याद्या, द्वितीयाष्टदलेष्वनङ्गकुसुमाद्या: संपूज्य, चतुरस्रे लोकपालांस्तदस्त्राणि च संपूज्य धूपदीपादि सर्वं शेषं समापयेदिति।

प्रयोग—पूर्ववत् योगपीठ न्यास के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। केवल विद्या या तारत्रय से सतुम्बरवे नारदाय ऋषये नम:। दूसरे मन्त्र का मदनाय ऋषये नम:। निचृद् गायत्री छन्दसे नम:। श्रीमातङ्गीश्वरीदेवतायै नम:—इस प्रकार यथास्थान न्यास के बाद 'मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग:' कहकर अंगन्यास करे—नमो हृदयाय स्वाहा। उच्छिष्ट शिरसे नम:। चण्डालि शिखायै वषट्। मातंगि कवचाय हुम्। सर्ववशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास करे। ध्यान-मानस पूजा करे। पूर्ववत् स्वर्णादि पट्ट पर कुङ्कुमादि से पहला अष्टदल बनाकर उसके बाहर दूसरा अष्टदल बनावे। पहले अष्टदल की कर्णिका में त्रिकोण बनावे। सबों के बाहर तीन भूपुर बनावे। इस प्रकार का पूजा चक्र बनाकर अपने आगे स्थापित करे, अर्चन करे। अर्घ्य स्थापन से आत्म पूजा तक करे। पूर्ववत् मातङ्गीश्वरी पीठ की पूजा करे। आवाहनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। त्रिकोण के कोनों में पूर्ववत् रति आदि की पूजा करे। त्रिकोण के बाहर पद्मकर्णिका में पंचबाणों की और षडङ्गों की पूजा करे। प्रथम अष्टदल में ब्राह्मी आदि आठ की, दूसरे में अनङ्गकुसुमादि आठ की पूजा करे। चतुरस्र में इन्द्रादि लोकपालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। धूप, दीपादि निवेदित करके पूजा समाप्त करे।

तथा—

अयमनुलोमविलोमितबालान्त:स्थस्तदा जप्त:। वाग्मितां च कवित्वं दत्ते गानस्य शक्तिमपि ॥७॥
अन्यत् सर्वं प्राग्वदृषिरस्य दक्षिणामूर्ति:। अङ्गक्रिया पुरोवद् बालाबीजत्रयाभ्यासात् ॥८॥
अंसे वेणीं कुसुमनिचयां चूलिकानीलचूडां मुक्ताभूषां पृथुकुचनतां वल्लकीं वादयन्तीम्।
माध्वीमत्तां मधुरवचनां श्यामलां कोमलाङ्गीं मातङ्गीं तां सकलफलदां सन्ततं भावयामि ॥९॥
त्रिकपञ्चकाष्टयुगलं षोडशकाष्टौ चतुष्कं च। पीठेऽस्मिन् संपूज्या श्रीदेवी भक्तिभावेन ॥१०॥
त्रिकं त्रिकोणं, पञ्चकेति, पञ्चदलादीनि पद्मानि।

मन्त्रान्तर—मातंगमनुकोश के अनुसार ही एक अन्य मन्त्र का स्वरूप होता है—ऐं क्लीं सौ: सौ: क्लीं ऐं नम: उच्छिष्टचण्डालि मातङ्गि सर्ववशंकरि स्वाहा। इस मन्त्र के जप से वाग्मिता, कवित्व और गान शक्ति की प्राप्ति होती है शेष सब कुछ पूर्ववत् होता है। इसके ऋषि दक्षिणा मूर्ति हैं। अंगन्यास पूर्ववत् बालाबीज की दो आवृत्ति से होता है। इसका ध्यान निम्नवत् है—

अंसे वेणीं कुसुमनिचयां चूलिकानीलचूडां मुक्ताभूषां पृथुकुचनतां वल्लकीं वादयन्तीम्।
माध्वीमत्तां मधुरवचनां श्यामलां कोमलाङ्गीं मातङ्गीं तां सकलफलदां सन्ततं भावयामि।।

इसका पूजा यन्त्र त्रिकोण, पञ्चकोण, दो अष्टदल, षोडश दल, अष्टदल और चतुरस्र से बनता है। इस पीठ पर श्री देवी की पूजा भक्ति-भाव से करे।

त्र्यस्रेऽर्च्या रत्याद्या इच्छाज्ञानक्रियाशक्तीश्च। पञ्चदलेषु ततोऽर्च्याः प्राग्वत्ता बाणदेवताः कन्याः ॥११॥
अष्टदलेषु ब्राह्म्याद्याः कन्या दीर्घस्वरैः क्रमात्पूज्याः। बाह्येऽष्टदलेऽपि यजेदनङ्गकुसुमादिकाश्च कन्यास्ताः ॥१२॥
पूज्याश्च षोडशारे षोडश कन्यास्तु गन्धाद्यैः। उर्वशीकन्यकां पूर्वं मेनकां कन्यकां ततः ॥१३॥
रम्भाघृताच्यौ कन्ये च मञ्जुकेशीं च कन्यकाम्। तथैव काश्यपीं कन्यां सुकेशीं कन्यकां तथा ॥१४॥
मञ्जुस्थलीं कन्यकां च पूजयेद्भक्तिभावतः। सनागयक्षगन्धर्वसिद्धकिन्नरकन्यकाः ॥१५॥
विद्याधरकिंपुरुषपिशाचानां च कन्यकाः। पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैः स्वनामाद्यक्षरान्विताः ॥१६॥
अभ्यर्चयेत् ततोऽष्टारे ह्यणिमासिद्धिकन्यकाम्। महिमासिद्धिकन्यां च लघिमासिद्धिकन्यकाम् ॥१७॥
परकायप्रवेशिन्या पूजयेत् कन्यकां ततः। कन्यकां दूरदर्शिन्या गुटिकासिद्धिकन्यकाम् ॥१८॥
कन्यामञ्जनसिद्धेश्च पादुकासिद्धिकन्यकाम्। ततश्चतुर्षु द्वारेषु पूजयेद् द्वारदेवताः ॥१९॥
ततं च विततं चाथ घनं च सुषिरं सह। अग्निकोणेऽथ वटुकं गणेशं नैर्ऋते यजेत् ॥२०॥
क्षेत्रपालं च वायव्यामैशान्यां योगिनीरपि। उच्छिष्टशब्दपुरतः पादुकां पूजयाम्यथ ॥२१॥
स्वनामाद्यक्षरं बीजं कृत्वा गन्धादिनार्चयेत्। पुनः सर्वोपचारैश्च मध्ये भगवतीं यजेत् ॥२२॥
स्वराः सर्वे श्रुतियुता वामभागे ततः परम्। (रामाश्च रागिणीयुक्ताः पूज्याः पार्श्वे च दक्षिणे ॥२३॥
अभ्यर्च्य परमेश्वर्याः पार्श्वयोः शुकसारिके। पुरतो गुरुपङ्क्तिं च स्वगुरुं पूजयेत्ततः ॥२४॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं विधाय, शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे निचृद्गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीमातङ्गीश्वर्यै देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा। ऐं नमो हृदयाय०। क्लीं उच्छिष्ट शिरसे०। सौः चण्डालि शिखा०। ऐं मातङ्गि कवचा०। क्लीं सर्ववशङ्करि नेत्र०। सौः स्वाहा अस्त्रा०। इति षडङ्गं विधाय 'अंसे वेणी'मित्यादिपूर्वोक्तेन ध्यात्वा, ध्यानमानसपूजान्ते त्रिकोणगर्भं पञ्चदलकमलं तद्बहिरष्टदलद्वयं तद्बहिः षोडशदलं तद्बहिरष्टदलं तद्बहिश्चतुर्द्वारोपेतं चतुरस्रत्रयमिति पूजाचक्रं निर्माय, प्राग्वदभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते प्राग्वत् मातङ्गीपीठमभ्यर्च्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वत् लयाङ्गं संपूज्य, त्रिकोणे स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन—रं रत्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि। प्रीं प्रीत्युच्छिष्टपादुकां पू०। मं मनोभवोच्छिष्टपा०। पुनस्त्रिकोणेषु—इं इच्छाशक्त्युच्छिष्टपादुकां०। ज्ञां ज्ञानशक्त्युच्छिष्टपा०। क्रिं क्रियाशक्त्युच्छिष्टपा०। ततः पूर्ववदङ्गानि संपूज्य, पञ्चदलेषु—द्रां द्राविणीकन्योच्छिष्टपा०। शों शोषिणीकन्योच्छिष्टपा०। बं बन्धिनीकन्योच्छिष्टपा०। मों मोहिनीकन्योच्छिष्टपा०। आं आकर्षिणीकन्योच्छिष्टपा०। ततोऽष्टदलेषु—आं ब्राह्मीकन्योच्छिष्टपा०। ईं माहेश्वरी-कन्योच्छिष्टपा०। इत्याद्यष्टशक्तीः संपूज्य, द्वितीयाष्टदले—अं अनङ्गकुसुमाकन्योच्छिष्टपा०, इत्यादिपूर्वोक्ताः संपूज्य, षोडशदलेषु—उं उर्वशीकन्योच्छिष्टपा०। में मेनका०। रं रम्भा०। घृं घृताचीक०। मं मञ्जुकेशी०। कां काश्यपीकन्यो०। सुं सुकेशीकन्योच्छिष्टपा०। मं मञ्जुस्थलीक०। नां नागक०। यं यक्षक०। गं गन्धवर्क०। सिं सिद्धक०। किं किन्नरक०। विं विद्याधरक०। किं किंपुरुषकन्या०। पिं पिशाचकन्या०। इति संपूज्य, तद्बहिरष्टदलेषु—अं अणिमासिद्धिकन्या०। मं महिमासिद्धिक०। लं लघिमासिद्धि०। पं परकायप्रवेशिनीसिद्धिक०। दूं दूरदर्शिनीसिद्धिक०। गुं गुटिकासिद्धिक०। अं अञ्जनसिद्धिक०। पां पादुकासिद्धिक०। ततश्चतुर्द्वारेषु—तं ततोच्छिष्टपा०। विं विततोच्छिष्टपा०। घं घनोच्छिष्टपा०। सुं सुषिरोच्छिष्टपा०। तत आग्नेयादिकोणेषु—वं वटुकोच्छिष्टपा०। गं गणेशोच्छिष्टपा०। क्षें क्षेत्रपालोच्छिष्टपा०। यों योगिन्युच्छिष्टपा०। इति संपूज्य, दिगीशार्चादिदीपान्तं अष्टनवत्यक्षरप्रकरणोक्तबलिमन्त्रेण नैवेद्यमुत्सृज्य, तत्रोक्तां गुरुपङ्क्तिं देव्याः पुरतोऽभ्यर्च्य प्राग्वत् सर्वं समापयेदिति। अत्र यद्यपि मन्त्रभेदेन पूजाभेद

उक्तस्तथापि तन्त्रान्तरदर्शनान्मन्त्रभेदचतुष्टयस्यापि संक्षेपविस्तारकथनार्थमेव द्वैविध्यं प्रतीयते न तु मन्त्रभेदपरत्वेनेति। तथाच सारसंग्रहे—

बालात्रिबीजपूर्वो वा मायाद्यो मदनादिक:। त्रितारााद्यो मारशक्तिकमलाद्योऽपि वा भवेत्॥१॥
वाग्भवाद्योऽथवा मन्त्र:…………………।

इति मन्त्रभेदानुक्त्वान्ते विस्तारपूजनस्यैवोक्तत्वात्। एवमेव मात्स्येन्द्रसंहितायामपीति।

पूर्ववत् योगपीठ न्यास के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणयाम करे। तब ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दक्षिणामूर्ति ऋषये नम:। मुखे निचृद् गायत्री छन्दसे नम:। हृदये श्रीमातङ्गीश्वरी देवतायै नम:। 'मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोग:' कहकर इसका विनियोग किया जाता है। तदनन्तर ऐं नमो हृदयाय: नम:। क्लीं उच्छिष्ट शिरसे स्वाहा। सौ: चण्डालि शिखायै वषट्। ऐं मातङ्गि कवचाय हुं। क्लीं सर्ववशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्। सौ: स्वाहा अस्त्राय फट् से षडङ्ग न्यास करके पूर्वोक्त रूप से ध्यान कर मानस पूजा करे। पहले त्रिकोण बनाकर उसके बाहर पञ्चदल, कमल उसके बाहर दो अष्टदल, उसके बाहर षोडश दल, उसके बाहर अष्टदल, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र से पूजाचक्र बनावे। पूर्ववत् अर्चन करके अर्घ्यादि स्थापन से आत्म पूजा तक का कर्म करे। पूर्ववत् मातङ्गी पीठ पूजा के बाद आवाहनादि से पुष्पोपचार तक लयांग पूजा करके त्रिकोण में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से—रं रत्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि, प्रीं प्रीत्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि, मं मनोभवोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, पुन: त्रिकोण में—इं इच्छाशक्त्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि, ज्ञं ज्ञानशक्त्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि, क्रिं क्रियाशक्त्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि। तब पूर्ववत् अंगों की पूजा करे। पञ्चदल में—द्रां द्राविणीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, शों शोषिणीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, बं वन्धिनीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, मों मोहिनीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, आं आकर्षिणीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि। अष्ट-दल में—आं ब्राह्मीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, ईं माहेश्वरीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि इत्यादि प्रकार से आठ शक्तियों की पूजा करे। द्वितीय अष्टदल में—अं अनंगकुसुमाकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि इत्यादि रीति से पूर्वोक्त कन्याओं की पूजा करे। षोडश दल में—उं उर्वशीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, में मेनकाकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, रं रम्भाकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, घृं घृताचीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, मं मंजुकेशाकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, कां काश्यपीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, सुं सुके-शीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, मं मंजुस्थलीकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, नां नागकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, यं यक्षकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, गं गन्धर्व कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, सिं सिद्ध कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, किं किन्नरकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, विं विद्याधर कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, पिं पिशाचकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि—इन सोलह की पूजा करे।

उसके बाहर अष्टदल में—अं अणिमासिद्धि कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, मं महिमासिद्धि कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, लं लघिमासिद्धि कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, पं परकायप्रवेशिनीसिद्धि कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, दूं दूरदर्शिनीसिद्धिकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, गुं गुटिकासिद्धिकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, अं अंजनसिद्धिकन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि, पां पादुकासिद्धि कन्योच्छिष्टपादुकां पूजयामि से पूजन करे। द्वारों में तं ततोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, विं विततोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, घं घनोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, सुं सुषिरोच्छिष्टपादुकां पूजयामि से पूजन करे। आग्नेयादि कोणों में—वं वटुकोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, गं गणेशोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, क्षें क्षेत्रपालोच्छिष्टपादुकां पूजयामि, यों योगिन्युच्छिष्टपादुकां पूजयामि से पूजा करे। लोकपालों और आयुधों की पूजा करे। ९८ अक्षर प्रकरणोक्त बलि मन्त्र से नैवेद्य का उत्सर्ग करे। तन्त्रोक्त गुरुपंक्ति की पूजा देवी के आगे करके पूर्ववत् पूजा समाप्त करे। यहाँ पर यद्यपि मन्त्रभेद से पूजा में भी भेद कहा गया है, तथापि तन्त्रान्तर दर्शन से मन्त्रभेदचतुष्टय में भी संक्षेप-विस्तार कथन से ही अर्थद्वैविध्य प्रतीत होता है, मन्त्रभेद होने से नहीं। सारसंग्रह में कहा भी है कि आरम्भ में बाला के तीन बीज, माया, मदन, त्रितारी, मारशक्ति, कमला या वाग्भव होते हैं। इस प्रकार मन्त्रभेद बताकर वहाँ पूजा का विस्तार ही बताया गया है। इसी प्रकार मात्स्येन्द्र संहिता में भी कहा गया है।

मातङ्गमनुकोशे—

स्रग्वी सुवस्त्रः शुचिरप्रमत्तः प्रशान्तचित्ते नियुतं प्रजप्य।
उच्छिष्टभक्तेन बलिं निवेद्य मन्त्री निशि स्यादिति मन्त्रसिद्धः ॥१॥

बलिर्नैवेद्यम्। अयमर्थः—प्रोक्तवेषः पुनः प्रोक्तविधिना रात्रौ देवीं संपूज्योच्छिष्टभक्तादिना देव्यै नैवेद्यं निवेद्य उच्छिष्टमुख एव नित्यजपं पौरश्चरणजपं चान्यत् काम्यादि वा सर्वं कुर्यादिति। नियुतं दश लक्षं 'एका च दश च शतं च सहस्रं चायुतं च लक्षं च नियुतं चे'ति श्रुतेः। अत्र पुरश्चरणाङ्गहोमद्रव्यं नोक्तं तत्र पूर्वोक्तमेव पालाशपुष्पं ग्राह्यम् 'पालाशकुसुमैः स्वादुयुक्तैर्मन्त्री यथाविधि' इति सारसंग्रहोक्तम्। सारसंग्रहे तु 'वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रम्' इत्युक्तं वर्णलक्षमेकोनविंशतिलक्षं स्वोपास्यमन्त्रवर्णसंख्यलक्षं वा। एकलक्षपक्षस्तु स्वगुरुजप्तमन्त्रपरः इति सांप्रदायिकाः। सारसंग्रहे—

कुमारीपूजनं प्रोक्तं कुर्यादत्रापि साधकः। (योगिन्यष्टाष्टकस्यापि पूजा कार्यात्र मन्त्रिणा ॥१॥
उच्छिष्टभक्तशेषेण रात्रौ तस्यै बलिं हरेत्। पूर्वोदितेन मनुना मन्त्रोऽयं तेन सिद्ध्यति ॥२॥

पूर्वोदितेनाष्टनवत्यक्षरप्रकरणोक्तबलिमन्त्रेण।

मातङ्गमनुकोश में कहा गया है कि माला धारण कर, सुन्दर वस्त्र पहनकर, पवित्र होकर अप्रमत्त एवं प्रशान्त चित्त से दस लाख मन्त्र-जप करे और रात में जूठे भात की बलि प्रदान करे तो यह मन्त्र सिद्ध होता है।

आशय यह है कि उक्त वेष धारण कर पुनः विधि से रात में देवी की पूजा पूर्वोक्त कर जूठे भात का नैवेद्य देकर जूठे मुख से नित्य जप, पौरश्चरण जप एवं दूसरे कार्य करे। यहाँ पुरश्चरणांग स्वरूप हवन द्रव्य का उल्लेख नहीं है। तब पूर्वोक्त प्रकार से ही हवन में पलाशपुष्प ग्राह्य है। सारसंग्रह के 'वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रम्' के अनुसार उन्नीस लाख जप करना चाहिये।

सारसंग्रह में कहा गया है कि यहाँ भी पूर्वोक्त कुमारी पूजन करे। चौंसठ योगिनियों की पूजा भी करे। जूठे भात की बलि रात में प्रदान करे। पूर्वकथित मन्त्र से यह मन्त्र सिद्ध होता है।

चतुर्दशावृत्ति जपेद्भोजनानन्तरं मनुम्। नृपतीनां पूजनीयो नारीणां च विशेषतः ॥३॥
अष्टोत्तरसहस्रेण ताम्बूलं मनुनामुना। प्रजप्तं भक्षयेद्या स्त्री याचितानङ्गभोगिका ॥४॥
मन्त्रिणस्तु वशे तिष्ठेद्यावदायुर्न संशयः। सहदेवी तथा दूर्वा मुसली मधुयष्टिका ॥५॥
भद्रा च विष्णुदयिता लक्ष्मीवल्लीन्द्रवल्ल्यपि। अञ्जलिन्यपि संप्रोक्ता पृथगेताः स्पृशञ्जपेत् ॥५॥
अष्टोत्तरशतं मन्त्रं ततस्ता मूर्ध्नि धारयेत्। नरनारीनृपतयो धत्ते हर्षसमूहकम् ॥७॥
इन्द्राग्निविश्वयुग्मर्तुमन्वष्टवसुदिङ्मिताः। पृथग्जप्त्वा शतशतमेषां संयोज्य पेषयेत् ॥८॥
शुष्कास्तद्गुटिका मन्त्रं जप्त्वा चाथ सहस्रशः। ललाटे च धृताः सम्यक् सर्वस्त्रीजनरञ्जिकाः ॥९॥
भवन्ति सर्वलोकस्य दक्षा रञ्जनकर्मणि। एतस्य गुटिकारेणुयोगेन मनुवित्तमः ॥१०॥
तूलवर्त्या च कृष्णाज्ययुक्तया कज्जलं धृतम्। सहस्रं मनुना जप्तमञ्जनं नेत्रयोः शुभम् ॥११॥
प्रत्यहं च जगद्वश्यनारीसंक्षोभकारकम्। प्रेतग्रहगणादींश्च नाशयेदचिरादपि ॥१२॥
पूर्वोक्तैर्दशभिर्द्रव्यैः पञ्चगव्यैश्च कापिलैः। युक्तैश्च भसितं जप्तं सहस्रं मनुनामनु ॥१३॥
धृतं ललाटे वशयेत् भुवनं नैव चान्यथा। क्षौमपट्टे प्रविन्यस्य वर्तिका रचिता शुभा ॥१४॥
बिल्वास्यकुमुदश्यामपद्मरेणुसुगर्भिता। कृष्णगोसर्पिषा दीप्ता तदुत्पन्ना च या मसी ॥१५॥
मातङ्गीमनुना जप्ता नेत्राक्ता रञ्जने नृणाम्। यद्वा नमस्कारिणी सा गदितात्र न संशयः ॥१६॥
लक्ष्मीः सविष्णुदयिता भृङ्गराजोद्भवं रजः। एतद्भावितवर्तिः सा कपिलाज्येन दीपिता ॥१७॥
तज्जाता या मसी पूर्वफलदा नात्र संशयः। कर्पूरचन्दनं पद्मयुगं बकुलरोचने ॥१८॥

त्रैलोक्यं वशयत्येषा मषी तत्संभवा भृशम्। निजपञ्चेन्द्रियाणां च मलं क्रकचसंभवे ॥१९॥
फले निवेश्य नीलैश्च तन्तुभिर्वेष्टयेत् फलम्। भुवः सूनोर्दिने भूमौ स्थापयेत् तत्फलं ततः ॥२०॥
आभौमवारं संजप्तं कर्पूरं तत्समं ततः। (पिष्ट्वा चात्माम्बुना जप्त्वा गुलिकाः कारयेद् बुधः॥ २१ ॥
मस्तके कारिता एता राजादिवश्यदाः परम्। हेमपञ्चाङ्गकं चात्ममलपञ्चकसंयुतम्) ॥२२॥
सहस्रजप्तं भक्षेषु प्रयुक्तं पानकेषु च। यस्मै दत्तं नरेशाय स वश्यो नात्र संशयः ॥२३॥
पूर्वमन्त्रोदितान् सर्वान् प्रयोगानत्र चाचरेत्।

पूर्वेति राजमातङ्गीप्रकरणोदितान्।

मातङ्गिनीं यो भजते जपाद्यैः कृत्वा जगद्वश्यमशेषमत्र।
स साधकेन्द्रो निखिलांश्च भोगान् भुक्त्वा परत्रापि च मुक्तिमेति ॥

भोजन के बाद चौदह बार मन्त्र जप करने से साधक राजा और नारियों का विशेष पूजनीय होता है। पान को एक हजार आठ जप से मन्त्रित करके जिस स्त्री को खिला दिया जाता है, वह सम्भोग की याचना करने लगती है और वह आजीवन साधक के वश में रहती है। सहदेई, दूब, मुसली, मधुयष्टि, भद्रा, विष्णुदयिता, लक्ष्मीवल्ली इन्द्रवल्ली एवं अञ्जलि को अलग-अलग एक सौ आठ जप से मन्त्रित करके उन्हें मूर्धा में धारण करे। इससे नर-नारी राजा प्रसन्न होते हैं। इन्द्र अग्नि विश्वयुग् अष्टवसु के मन्त्र के सौ-सौ जप से मन्त्रित करके मिलाकर पीस दे। उससे गुटिका बनाकर उसके सूखने पर एक हजार जप से मन्त्रित करके ललाट में धारण करे तो यह समस्त स्त्रियों को आनन्दित करने वाला है। सभी लोकों का रंजन करने में वे साधक दक्ष होते हैं। इस गुटिका के चूर्ण को रूई में मिलाकर बत्ती बनावे। काली गाय के घी से दीपक जलाकर काजल पारे। एक हजार जप से इसे मन्त्रित करके आँखों में अंजन लगाने से शुभ होता है। ललाट में इसका तिलक लगाने से साधक चौदहों भुवनों को वश में कर लेता है। इस चूर्ण को रेशम के कपड़े में मिलाकर बत्ती बनावे। इसे बेल कुमुद नील कमल के रेणु से गर्भित करे। काली गाय के घी से दीपक जलाकर काजल पारे। मातङ्गी मन्त्र से मन्त्रित करके आँखों में लगावे तो मनुष्यों का रञ्जन होता है। जिस स्त्री को वह साधक नमस्कार करता है, वह प्रसन्न होती है—इसमें सन्देह नहीं है।

लक्ष्मी, विष्णु दयिता, भृगंराज के चूर्ण से भावित बत्ती को काली गाय के घी से पूर्ण दीपक में रखकर जलावे। उससे बने काजल से भी पूर्व फल मिलता है। कपूर, चन्दन, लाल, उजले कमल, बकुल, गोरोचन के चूर्ण से गर्भित बत्ती से दीपक जलाकर काजल पारे और आँखों में लगावे तो तीनों लोक वश में होते हैं। अपनी पाँचों इन्द्रियों—आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा के मल को क्रकच के फल में रखकर नीले सूत्र से वेष्टित करे। उस फल को मंगलवार को भूमि में गाड़ दे तो भी वही फल होता है। मंगलवार से मंगलवार तक कपूर को मन्त्रित करके अपने मूत्र से पीसे, मन्त्र का जप कर गोली बनावे। मस्तक में इसका तिलक लगाने से राजादि वश में होते हैं। हेमपञ्चाग में अपना मलपञ्चक मिलाकर हजार जप से मन्त्रित करके शर्बत में मिलाकर जिस राजा को पिलाया जाता है, वह वश में होता है। पूर्व मन्त्रोदित सभी प्रयोगों को यहाँ करे। मातङ्गिनी को जो जपादि से भजन करते हैं, वे सारे संसार को अपने वश में कर लेते हैं। वह साधकेन्द्र सभी भोगों को भोगकर देहान्त के बाद मोक्ष प्राप्त करता है।

उच्छिष्टमन्त्रः

अथोच्छिष्टमन्त्राः। फेत्कारिणीतन्त्रे—

श्रीदेव्युवाच

सूचिता मे पुरा शम्भो मन्त्रा नैकविधास्तथा। इदानीं श्रोतुमिच्छामि देवीमुच्छिष्टपूर्विकाम् ॥१॥

उच्छिष्ट मन्त्र—फेत्कारिणी तन्त्र में श्रीदेवी ने ईश्वर से कहा कि पहले आपने अनेकविध मन्त्रों को बतलाया है। अब मैं उच्छिष्टपूर्विका देवी को सुनना चाहती हूँ।

ईश्वर उवाच

शृणु देवि वरारोहे देवीं तां कथयाम्यहम्। यया विज्ञातया देवि क्षयं गच्छन्ति चापदः ॥२॥
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चाङ्गजं तथा। विषं जयति देवीशी स्वपराङ्गसमाश्रितम् ॥३॥
इयं विद्या परा विद्या सर्वपापापहारिणी। स्वर्गदा मोक्षदा चैव राज्यसौख्यफलप्रदा ॥४॥
इयं देवि मया पूर्वं साधिता विषनिर्जये। सकृदुच्चारिता विद्या ब्रह्महत्याविशोधिनी ॥५॥
सर्वपापापहन्त्रीयं वश्यसौभाग्यदायिनी। यद्युच्छिष्टमुखो भूत्वा स्मरेद् देवीं कदाचन ॥६॥
तदाचान्तो भवेद् देवि विनैवाचमने कृते। दुर्भगा सुभगा नूनं दुःखिता सुखिता भवेत् ॥७॥
वन्ध्यापि लभते पुत्रं शतहायनजीवितम्। निर्धनो धनमाप्नोति सर्वविद्या अवाप्नुयात् ॥८॥
यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात्तां तामवाप्नुयात्।

ईश्वर ने कहा—हे देवि वरारोहे! सुनो, मैं उन्हें कहता हूँ, जिन्हें जानने से ही आपदाओं का नाश हो जाता है। स्थावर जंगम कृत्रिम और अंगज विष के प्रभावों को देवेशी अपने परा मन्त्र के आश्रितों से दूर कर देती है। यह परा विद्या सर्वपापों का हरण करने वाली है। इससे स्वर्ग मोक्ष राज्य सौख्य की प्राप्ति होती है। विष-विजय के लिये इसकी साधना पहले मैंने किया था। उच्चारण मात्र से ही यह विद्या ब्रह्महत्या के पाप का मोचन करती है। यह सभी पापों का अपहरण करने वाली एवं वश्य और सौभाग्य देने वाली है। यदि जूठे मुख इस मन्त्र का जप करे, कभी आचमन न करे, बिना आचमन के जप करे तो दुर्भगा भी सुभगा होती है, दुखिया सुखिया होती है और वन्ध्या को भी सौ वर्ष जीने वाला पुत्र मिलता है। निर्धन को धन और सभी विद्यायें मिलती हैं। जिस-जिस सिद्धि को साधक माँगता है, वह उसे अचानक मिल जाती है।

श्रीदेव्युवाच

को विधिः किं फलं चास्यामपि विद्यास्वरूपतः। कथ्यतां देवदेवश रहस्यं न निवेदितम् ॥९॥

श्री देवी ने कहा कि इसका क्या फल और क्या विधि है और क्या स्वरूप है? हे देवदेवेश! इस विद्या का रहस्य मुझसे कहिये।

सुमुखीमन्त्रः

ईश्वर उवाच

विधानं ते प्रवक्ष्यामि शृणु देवि मनोरमे। भोजनानन्तरं देवि विनैवाचमने कृते ॥१०॥
बलिं दत्त्वा प्रथमतो मूलमन्त्रेण साधकः। ततो मन्त्रं जपेद् ध्यात्वा देवीं तामिष्टसिद्धये ॥११॥
मन्त्रं शृणु महादेवि यथावत् कथयामि ते। दद्यादुच्छिष्टशब्दं तु तथा चण्डालिनीति च ॥१२॥
सुमुखि च ततो देवि कीर्तयेत् तदनन्तरम्। महापिशाचिनीत्युक्त्वा लज्जाबीजं ततः परम् ॥१३॥
नादबिन्दुसमायुक्तं ठकारत्रितयं ततः। सविसर्गं महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥१४॥

अत्रादिपदे चकारो ह्रस्व एव। सारसंग्रहे लघुमातङ्गिनीमन्त्रोद्धारे तथैवोद्धृतत्वात्। केचित्तु—चण्डालिनी-त्यादिपदत्रये दीर्घमिकारं वदन्ति, तन्न तत्तु संबुध्यन्तमेव। अत एव सारसंग्रहे प्राक्प्रोक्ते मन्त्रे चण्डालिपदादीनां संबुद्-ध्यन्तदर्शनादेतन्मत्रयोस्तुल्यरूपत्वात् अत्रापि तथैवेति निर्णीतमस्माभिरिति। लज्जाबीजं भुवनेश्वरीबीजं, ठकारत्रितयं ठःठःठः इति। ग्रन्थान्तरे—

अथ वक्ष्ये परां विद्यां सुमुखीमतिगोपिताम्। यां लब्ध्वा देशिको विद्वान्न शोचति कृताकृते ॥१॥
कर्णो द्युतिः सनयनः श्वेतेशः स्याज्जरासनः। लक्ष्मीर्दीर्घेन्दुसंयुक्ता नन्दी दीर्घा सदृक्क्रिया ॥२॥
मेषः समाधवः कर्णी भृगुस्तन्द्री च सेन्धिका। खिदेवि मवियद्दीर्घं पिशाचिनि हिमाद्रिजा ॥३॥
नन्दजत्रितयं सर्गि द्वाविंशत्यक्षरो मनुः।

कर्ण उ। द्युतिः च्छ, सनयन इकारयुक्तस्तेन च्छि। श्वेतेशः ष, जरासनष्टकारोपरि स्थितस्तेन ष्ट, लक्ष्मीः च दीर्घा आ तेन चा, इन्दुसंयुक्ता बिन्दुसंयुक्ता तेन चां। नन्दी ड दीर्घा आ तेन डा। सदृक् इकारयुक्तः क्रिया ल, तेन लि। मेषो न समाधव इकारसहितस्तेन नि। कर्णी उकारयुतोऽभृगुः सकारस्तेन सु। तन्द्री म सेन्धिका उकारयुक्ता तेन मु। खि देवि म स्वरूपम्। वियत् हकारो दीर्घमाकारयुक्तं तेन हा। पिशाचिनि स्वरूपम्। हिमाद्रिजा भुवनेश्वरीबीजं ह्रीं। नन्दजत्रितयं ठठठ इति सर्गि विसर्गयुक्तं तेन ठःठःठः इति। स्पष्टम्—'उच्छिष्टचाण्डालिनि सुमुखि देवि महापिशाचिनि ह्रींठःठःठः' इति।

स्मृता भैरवगायत्रीसुमुखी मुनिपूर्विका। मुनिरामद्विषट्चन्द्रवह्न्यर्णैरङ्गकं मनोः॥
विन्यस्य सुमुखीं ध्यायेद् भक्तचित्ताम्बुजस्थिताम्।
गुञ्जानिर्मितहारभूषितकुचां सद्यौवनोल्लासिनीं हस्ताभ्यां नृकपालखड्गलतिके रम्ये मुदा बिभ्रतीम्।
रक्तालंकृतवस्त्रलेपनलसद्देहप्रभां ध्यायतां नृणां श्रीसुमुखीं शवासनगतां स्युः सर्वदा संपदः॥६॥

ईश्वर ने कहा—हे देवि मनोरमे! मैं इसका विधान कहता हूँ, सुनो! भोजन के बाद बिना आचमन के बलि मूल मन्त्र से प्रदान करे, तब देवी का ध्यान करके इष्टसिद्धि के लिये मन्त्र का जप करे। हे महादेवि! इसका मन्त्र है—उच्छिष्टचण्डालिनि सुमुखि देवि महापिशाचिनि ह्रीं ठः ठः ठः। यह बाईस अक्षरों का मन्त्र सर्वसिद्धिप्रदायक है।

ग्रन्थान्तर में अत्यन्त गुप्त, सिद्ध होने पर साधक को कृताकृत के फल से मुक्त करने वाली सुमुखी विद्या इस प्रकार कही गई है—उच्छिष्टचाण्डालिनि सुमुखि देवि महापिशाचिनि ह्रीं ठः ठः ठः। इसके ऋषि भैरव, छन्द गायत्री एवं देवता सुमुखी कहे गये है। मन्त्र के ७, ३, २, ६, १, ३ अक्षरों से षडङ्ग न्यास करे। इस न्यास के बाद भक्त सुमुखी का ध्यान अपने हृदय कमल में इस प्रकार करे—

गुञ्जानिर्मितहारभूषितकुचां सद्यौवनोल्लासिनीं हस्ताभ्यां नृकपालखड्गलतिके रम्ये मुदा बिभ्रतीम्।
रक्तालंकृतवस्त्रलेपनलसद्देहप्रभां ध्यायतां नृणा श्रीसुमुखीं शवासनगतां स्युः सर्वदा संपदः॥

सुमुखीसाधनविधानम्

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं किंशुकोद्भवैः। पुष्पैः समिद्वरैर्वापि जुहुयान्मन्त्रसिद्धये॥७॥
कालीपीठे यजेद् देवीं पञ्चकोणात्मकर्णिके। अष्टपत्रे षोडशारवृत्ते भूपुरसंवृते॥८॥
मूलेन मूर्तिं संकल्प्य पाद्यादीनि प्रकल्पयेत्। चन्द्रां चन्द्राननां चारुमुखीं चामीकरप्रभाम्॥९॥
चतुरां पञ्चकोणेषु केसरेष्वङ्गदेवताः। ब्राह्म्याद्या अष्टपत्रेषु षोडशारे कलादिकाः॥१०॥
कला कलानिधिः काली कमला च क्रिया कृपा। कुला कुलीना कल्याणी कुमारी कलभाषिणी॥११॥
करालाख्या किशोरी च कोमला कुलभूषणा। कल्यदा भूपुरे पूज्या इन्द्राद्या हेतयोऽपि च॥१२॥
इत्थं जपादिभिः सिद्धे मनौ काम्यानि साधयेत्। भुक्त्वौदनमनाचम्य जपेन्मन्त्रमनन्यधीः॥१३॥
उच्छिष्टोऽयुतमेकं यः स भवेत् संपदां पदम्। उच्छिष्टेनैव भक्तेन बलिं दद्यान्निरन्तरम्॥१४॥
दध्नाभ्यक्तैः प्रजुहुयाल्लक्षं सिद्धार्थतण्डुलैः। राजानो मन्त्रिणस्तस्य भवन्ति वशगाः क्षणात्॥१५॥
शस्त्राणि वशगानि स्युर्हुतान्मार्जारमांसतः। धनर्द्धिश्छागमांसेन विद्याप्राप्तिस्तु पायसैः॥१६॥
मधुपायससंपृक्तस्त्रीरजोयुक्तवाससा। होममाचरतः पुंसो जनता वशवर्तिनी॥१७॥
मधुसर्पिर्युतैर्नागवल्लीपत्रैर्महाश्रियः। सद्योनिहतमार्जारमांसेन मधुसर्पिषा॥१८॥
युक्तेनान्त्यजकेशाद्यैर्हुतैराकर्षयेत् स्त्रियः। मध्वक्तशशमांसेन तत्फलं विद्यया सह॥१९॥
उन्मत्ततरुभिर्दीप्ते चिताग्नौ जुहुयाच्छदैः। कोकिलाकाकयोर्मन्त्री मारयेदचिरादरीन्॥२०॥
वायसोलूकयोः पत्रैर्होमाद् विद्वेषयेदरीन्। गर्भपातः सगर्भाणामुलूकच्छदनैर्भवेत्॥२१॥
आज्याक्तैर्बिल्वपत्रैर्यो मासमेकं सहस्रकम्। प्रत्यहं जुहुयात् तेन वन्ध्यापि लभते सुतम्॥२२॥

सौभाग्यार्थे दुर्भगाया बन्धूककुसुमैर्नवैः। मधुराक्तैः प्रजुहुयात् स्त्रीणामाकृष्टयेऽपि तैः ॥२३॥
निर्जने सघनेऽरण्ये प्रेतावासे चतुष्पथे। बलिं दत्त्वा प्रजपतां सहस्रं चाष्टसंयुतम् ॥२४॥
उच्छिष्टस्य च सा देवी प्रत्यक्षा जायतेऽचिरात्। यत्र नोक्ता होमसंख्याऽयुतं तत्र विनिर्दिशेत् ॥२५॥
वाममार्गेण सुमुखी शीघ्रं कामविधायिनी। भोजनान्ते यथोच्छिष्टैर्जप्या सा स्वेष्टसिद्धये ॥२६॥
न शीघ्रफलदा देवी सुमुखीसदृशी परा। यस्या मन्त्रजपाद् देवि प्रसद्ध्यिन्ति मनोरथाः ॥२७॥ इति।

एक लाख मन्त्र जप करे। उसका दशांश हवन पलाश के फूलों से पलाश की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में करे। पञ्चकोण काली पीठ में देवी की पूजा करे। पञ्चकोण के बाहर अष्टपत्र उसके बाहर षोडशार उसके बाहर वृत्त और उसके बाहर भूपुर बनावे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके पाद्यादि स्थापित करे। चन्द्रा, चन्द्रानना, चारुमुखी, चामीकरप्रभा, चतुरा की पूजा पञ्च कोण के कोनों में करे। केसर में अंग देवता की पूजा करे। अष्टपत्र में ब्राह्मी आदि की और षोडशार में कला, कलानिधि, काली, कमला, क्रिया, कृपा, कुला, कुलीना, कल्याणी, कुमारी, कलभाषिणी, कराला, किशोरी, कोमला, कुलभूषणा, कल्यदा की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार जपादि से सिद्ध मन्त्र से काम्य साधन करे। भात खाकर बिना मुँह धोये एकाग्र बुद्धि से मन्त्र जप करे। जो जूठे मुँह से दश हजार मन्त्र जप करता है, वह सम्पत्ति से युक्त होता है। जूठे भात से निरन्तर बलि प्रदान करे। दही-मिश्रित तिल चावल से हवन करने पर राजा और उसके मन्त्री तुरन्त वश में होते हैं। बिलार के मांस से हवन करने पर शत्रु वश में होते हैं। छागमांस के हवन से धन और पायस के हवन से विद्या की प्राप्ति होती है। मधु-पायस संपृक्त स्त्रीरजयुक्त वस्त्र लेकर हवन करने से जनता वश में होती हैं। मधु-सर्पियुक्त पान पत्तों से हवन करने पर श्रीप्राप्त होती है। तुरन्त मारे हुए बिलार के मांस में मधु-गोघृत और शूद्र के बाल मिलाकर हवन करने से स्त्रियों का आकर्षण होता है। मध्वक्त खरगोश के मांस से मन्त्र से हवन करने पर भी वही फल होता है। चिता की अग्नि को धत्तूर की लकड़ी से प्रदीप्त करके कोयल और कौए के पंखों से हवन करके मन्त्री शत्रुओं को तुरन्त मार देता है। कौआ और उल्लू के पंखों के हवन से शत्रुओं में परस्पर वैर होता है। उल्लू के पंखों से हवन करने पर गर्भवती का गर्भपात रुक जाता है। गाय के घी से सिक्त बेल पत्रों से एक महीने तक प्रतिदिन एक हजार हवन करने से वन्ध्या को भी पुत्र होता है। दुर्भगा को सौभाग्यवती करने के लिये मधुराक्त बन्धूकपुष्पों से हवन करे। इससे स्त्रियों का आकर्षण भी होता है। निर्जन घने जंगल में, प्रेतावास में, चौराहे पर उच्छिष्ट की बलि देकर एक हजार आठ जप करने से देवी अल्प काल में ही प्रत्यक्ष हो जाती है। जहाँ हवनसंख्या न कही गई हो, वहाँ दश हजार हवन करना चाहिये। वाम मार्ग से सुमुखी शीघ्र अभीष्ट प्रदान करती है। भोजन के बाद जूठन को मन्त्रित करके बलि देने से इष्टसिद्धि होती है। सुमुखी के समान शीघ्र फल देने वाली दूसरी कोई देवी नहीं है, जिसके मन्त्रजप से ही मनोरथ सिद्ध होते हैं।

सारसंग्रहे—

न तिथिर्न च नक्षत्रं न चाङ्गन्यासमेव च। नारिदोषो न वा विघ्नं नाशौचं नियमो न च ॥१॥
यस्य तिष्ठति मन्त्रोऽयं न स विघ्नैस्तु बाध्यते। ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि यथावज्जगदीश्वरि ॥२॥
शवोपरि समासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम्। रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविराजिताम् ॥३॥
रक्तां षोडशवर्षां च पीनोन्नतघनस्तनीम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां परमज्योतीरूपिणीम् ॥४॥
वामदक्षिणयोगेन ध्यायेन्मन्त्रविदुत्तमः। उच्छिष्टेन बलिं दत्त्वा जपेत् तद्गतमानसः ॥५॥
उच्छिष्टेनैव कर्तव्यो जपोऽस्याः सिद्धिमिच्छता। उच्छिष्टजपमानस्य जायन्ते सर्वसिद्धयः ॥६॥
अपरं च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि फलप्रदम्। होमं संतर्पणं चास्याः सहसा कार्यसिद्धये ॥७॥
स्थण्डिले मण्डलं कृत्वा चतुरस्रं समाहितः। पूजयेन्मण्डलं देव्या मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ॥८॥
तत्र चाग्निं समाधाय वह्निरूपां व्यवस्थिताम्। देवीं ध्यात्वा चरेद्धोमं (दधिसिद्धार्थतण्डुलैः ॥९॥
सहस्रैकं विधानेन राजा भवति वश्यगः। मार्जारस्य च मांसेन यो देव्यै होममाचरेत् ॥१०॥

स प्राप्नोति परां विद्यां शस्त्रशास्त्रवशीकृताम्। कुर्याच्छागस्य मांसेन होमं मधुरसान्वितम् ॥११॥
सहस्त्रैकं विधानेन भवन्ति धनसिद्धयः। विद्याकामश्चरेद्धोमं) शर्कराघृतपायसैः ॥१२॥
मासात् तस्य भवन्त्येव सिद्धा विद्याश्चतुर्दश। रजस्वलाया वस्त्रेण मधुना पायसेन च ॥१३॥
होमं कृत्वा महादेवि त्रैलोक्यं वश्यमानयेत्। नागवल्ल्या चरेद्धोमं मधुना सह सर्पिषा ॥१४॥
अयुतैकं विधानेन सिद्धिरिष्टा भवेद् ध्रुवम्। सद्योमार्जारमांसेन घृतेन मधुना सह ॥१५॥
चण्डालकेशयुक्तेन भवेदाकर्षणं ध्रुवम्। शशकस्य तु मांसेन मधुना लोलितेन च ॥१६॥
कृत्वा होममवाप्नोति विद्यावित्तवरस्त्रियः। धत्तूरार्कस्य होमेन चितावह्नौ तु मन्त्रवित् ॥१७॥
कोकिलाकाकपक्षैश्च होमाच्छत्रून् विनाशयेत्। उच्चाटनाय शत्रूणां होमं कुर्याच्च मन्त्रवित् ॥१८॥
पूर्वोक्तेन विधानेन चिताकाष्ठहुताशने। उलूककाकपक्षाभ्यां कृत्वा होमं निरन्तरम् ॥१९॥
(शत्रू विद्वेषयेद् द्विष्टौ अन्योन्यं कलहाकुलम्। उलूकपक्षहोमेन गर्भपातो भवेत् स्त्रियः ॥२०॥
सहस्त्रैकविधानेन कुर्याद्धोमं समाहितः। बिल्वपत्रैः समध्वाज्यैर्मासमेकं निरन्तरम् ॥२१॥)
वन्ध्यापि लभते पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम्। बन्धूककुसुमं हुत्वा रक्तं मधुसमन्वितम् ॥२२॥
दुर्भगाया हठाद् देवि सौभाग्यसुखदायकम्। प्रातरुत्थाय यः कश्चित् कुर्याद्धोमं दिने दिने ॥२३॥
जपापुष्पैराज्ययुक्तैरष्टोत्तरशतं प्रिये। षण्मासस्य प्रयोगेण भवेदाकर्षणं ध्रुवम् ॥२४॥
देवगन्धर्वकन्याश्च कन्या नागाङ्गनागणाः। हठादागत्य कामार्ता बलादालिङ्गयन्ति तम् ॥२५॥
विद्यायै क्रियते होमस्तिलैः पायसमिश्रितैः। समाप्नोति महाविद्यां शास्त्रौघपदशालिनीम् ॥२६॥
मधुना रुरुमांसेन होमं कुर्यात् प्रयत्नतः। विद्यावान् धनवान् विद्धि शस्त्रशास्त्रवशीकृतः ॥२७॥
इयं देवी महादेवि वामाचारफलप्रदा। दक्षिणाचारयोगेन न भवेत् फलदायिनी ॥२८॥
भोजनानन्तरं चास्या बलिं कृत्वा दिने दिने। उच्छिष्टेन जपेन्मन्त्रं शतमष्टोत्तरं प्रिये ॥२९॥
उटजे वा श्मशाने वा शून्यागारे चतुष्पथे। बलिप्रधानतो देवी प्रत्यक्षा भवति ध्रुवम् ॥३०॥
एषा देवी मया जप्ता भैरवाकारमिच्छता। इत्येषा कथिता देवी सर्वपापापहारिणी ॥३१॥
मन्त्रोस्योच्चारणाद् देवि सर्वपापविवर्जितः। उच्छिष्टदूषणं हित्वा स पवित्रो भवेद् ध्रुवम् ॥३२॥
इत्युच्छिष्टचण्डालिनी देवी भुवनविश्रुता। गोपनीया प्रयत्नेन कथनीया न कस्यचित् ॥३३॥

गुरुभक्तिश्च कर्तव्या कायेन च धनेन च।
लोकापवादे न च देवि पापं नैवापरा तिष्ठति मर्त्यलोके।
मोक्षैकसारा धनदैकसारा विद्यैकसारा शृणु सिद्धविद्या ॥ इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि सुमुखी की मन्त्रसाधना में न तिथि, न नक्षत्र, न अंगन्यास न अरिदोष, न विघ्न, न शौच, न नियम का ही कोई विचार अपेक्षित होता है। जिसके पास यह मन्त्र रहता है, उसे विघ्न भी बाधा नहीं पहुँचाते। हे जगदीश्वरि! अब इसका ध्यान यथावत कहता हूँ—

शवोपरि समासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम्। रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविराजिताम्।।
रक्तां षोडशवर्षां च पीनोन्नतघनस्तनीम्। कपालकर्त्रिकाहस्तां परमज्योतीरूपिणीम्।।

उत्तम मन्त्र ज्ञानी वाम-दक्षिणयोग से ध्यान करे। उच्छिष्ट की बलि देकर उसमें मन लगाकर जप करे। सिद्धि चाहने वाला जूठे मुँह जप करे। जो जूठे मुँह जप करता है, उसे सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। और भी इसके फलप्रद प्रयोगों को कहता हूँ। इसके हवन-तर्पण से सहसा कार्य सिद्ध होते हैं। स्थण्डिल पर चतुरस्त्र मण्डल बनाकर देवी के मूल मन्त्र से मण्डल की पूजा करे। उसपर अग्निस्थापन करके देवी का ध्यान अग्निरूप में करके दही, सरसों, चावल से हवन विधिवत् एक हजार करे तो राजा वश में होता है। बिलार के मांस से देवी के लिये जो हवन करता है, उसे परा विद्या प्राप्त होती है, जिससे वह

शस्त्र और शास्त्र को भी वश में कर लेता है। मधु-रसान्वित बकरे के मांस से विधिवत् एक हजार हवन करने पर धन मिलता है। विद्या-प्राप्ति की इच्छा से शक्कर, घी, पायस से हवन करे तो एक महीने में चौदह विद्यायें सिद्ध होती हैं। रजस्वला का कपड़ा, मधु और पायस मिलाकर हवन करने से तीनों लोक् वश में होते हैं। मधु सर्पिमिश्रित पान पत्तों से विधिवत् दश हजार हवन करने पर आठो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। तुरन्त मारे गये बिलार के मांस के साथ मधु, घी और चण्डाल के केश मिलाकर हवन करने से आकर्षण होता है। मधु-लोलित खरगोश के मांस से हवन करने पर पढ़ी-लिखी सुन्दर स्त्री मिलती है। धत्तूर, अकवन तथा कोयल एवं कौआ के पंख से चिता की अग्नि में हवन करने से शत्रुओं का नाश होता है। मन्त्रज्ञ को शत्रुओं के उच्चाटन के लिये हवन करना चाहिये। पूर्वोक्त विधान से चिताकण्ठ की प्रज्वलित अग्नि में उल्लू और कौए के पंखों से निरन्तर हवन करने से शत्रुओं में परस्पर वैर एवं कलह होने से वे सदा व्याकुल रहते हैं। उल्लू के पंख से हवन करने पर स्त्रियों का गर्भपात होता है। विधान पूर्वक समाहित चित्त होकर एक हजार हवन मधु-आज्यसिक्त बेल पत्र से एक माह तक निरन्तर करे तो वन्ध्या को भी दीर्घायु पुत्र प्राप्त होता है। लहू और मधु-मिश्रित बन्धूकफूलों के हवन से दुर्भगा भी अचानक सौभाग्यसुख वाली हो जाती है। सबेरे उठकर जो प्रति दिन एक सौ आठ हवन आज्यमिश्रित अड़हुल के फूलों से छः महीनों तक करता है तो निश्चित ही उसके प्रति आकर्षित होकर देवकन्यायें, गन्धर्वकन्यायें, नागकन्यायें कामार्त होकर अचानक आकर हठात् साधक का आलिङ्गन करती हैं। तिल, पायस मिश्रित करके जो हवन करता है उसे शास्त्रसमूह से युक्त महाविद्या प्राप्त होती है। यत्नपूर्वक मधु और रुरु के मांस से हवन करने पर साधक धनवान एवं विद्यावान होने के साथ-साथ शस्त्र एवं शास्त्र को वश में करने वाला होता है। यह विद्या वामाचार से ही फलप्रदा होती है। दक्षिणा चार से फलदायिनी नहीं होती। भोजन के बाद जूठे भात से बलि देकर जो एक सौ आठ मन्त्र का जप निर्जन या श्मशान या सूने घर में या चौराहे पर करता है, उसके सामने देवी प्रत्यक्ष प्रकट होती है। इसी मन्त्र का जप करके मैं भैरव का रूप धारण करने की कामना से करता हूँ। सर्व पापापहारिणी देवी के इस मन्त्र के उच्चारण करने से साधक सभी पापों से रहित एवं उच्छिष्ट दोष से रहित होकर पवित्र हो जाता है। यह उच्छिष्टचण्डालिनी विद्या भुवनों में विख्यात है। यह यत्नपूर्वक गोपनीय है और किसी से कहने लायक नहीं है तन एवं धन से गुरुभक्ति करना कर्तव्य है। हे देवि! लोकापवाद में कोई पाप नहीं है। यह अपरा विद्या मृत्युलोक में नहीं रहती है। यह मोक्ष एवं धन विद्याओं का सारभूत सिद्ध विद्या है।

परिमलमन्त्रनिरूपणम्

फेत्कारिणीतन्त्रे—

अथातः संप्रवक्ष्यामि मन्त्रं परिमलात्मकम्। येन विज्ञातमात्रेण नासाध्यं भुवनत्रये ॥१॥
रुद्रजाया महायोगिन्यन्ते गौरिपदं वदेत्। भुवनभयङ्करीति वर्मान्तमुच्चरेन्मनुम् ॥२॥

रुद्रजाया मायाबीजं, महायोगिनि स्वरूपम्, गौरि स्वरूपम्, भुवनभयङ्करि स्वरूपम्, वर्म हुंकारः। तथा—

अङ्गिराश्च ऋषिर्देवी गायत्रीच्छन्द ईरितम्। सिंहवक्त्रा च भूतानां भयकारिण्यतः परम् ॥३॥
महाकृत्या देवता चेत्युक्त्वा न्यासं समाचरेत्। षड्दीर्घयुक्तबीजेन मन्त्रार्धेनास्त्रयोगिना ॥४॥
हृदयं च ततोऽर्धेन मन्त्रार्धेन शिरः क्रमात्। शिखा कवचनेत्रेऽस्त्रमेवं न्यासक्रमस्ततः ॥५॥
सिंहासनां कृष्णमुखीं लम्बमानपयोधराम्। दंष्ट्राकरालवदनां त्रिनेत्रां सर्वतोज्वलाम् ॥६॥
कृष्णकञ्चुकसंवीतां विधूमाग्निसमप्रभाम्। त्रिशूलचक्रचषकखट्वाङ्गकरपङ्कजाम् ॥७॥
लेलिहानमहाजिह्वां विद्युत्प्रेक्षणभीषणाम्। ध्यात्वा कृत्वां विधानेन पूजयेन्मन्त्रवित्तमः ॥८॥
ध्यात्वा कृत्यामर्चयीत रक्तपुष्पैश्च वश्यके। कृष्णां मारणकृत्येषु मांसरक्तासवैस्तथा ॥९॥
कृत्यां च मदनां सर्वकृत्यामुत्सादिनीं तथा। भीषिणीं श्रीमतीं चैव प्रतिष्ठां च ततः परम् ॥१०॥
विद्यामभ्यर्चयेदष्टपत्रेषु क्रमतः सुधीः। पूर्वे तु शाङ्करीं नाम शुभ्रवर्णां वरान्विताम् ॥११॥
द्विभुजां सौम्यवदनां पाशाङ्कुशधरां शिवाम्। दक्षे भयङ्करीं नाम लम्बजिह्वामधोमुखीम् ॥१२॥

कृष्णवर्णां रक्तकेशीं रक्तमाल्यानुलेपनाम्। चतुर्भुजां सिंहनादां ज्वलच्छूलकपालिनीम्॥१३॥
खड्गहस्तां शिरोमालां सर्वाभरणभूषिताम्। पश्चिमे वारुणीं नाम स्वर्णवर्णां हसन्मुखीम्॥१४॥
सुवर्णमालिकां शुभ्रदंष्ट्रामभयदां सदा। उत्तरे भीषिकां नाम चतुर्वक्त्रां भयङ्करीम्॥१५॥
पूजयित्वा जपेन्मन्त्रं नित्यमष्टोत्तरं शतम्।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि—अङ्गिरसे ऋषये नमः। मुखे—देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये—महाकृत्यायै देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ह्रांह्रींमहायोगिनि गौरि फट् हृदयाय नमः। ह्रींह्रींभुवनभयङ्करि हुंफट् शिरसे स्वाहा। ह्रूंह्रींमहायोगिनि गौरि फट् शिखायै वषट्। ह्रैंह्रींभुवनभयङ्करि हुंफट् कवचाय हुं। ह्रौंह्रींमहायोगिनि गौरि फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः ह्रीं भुवनभयङ्करि फंट् अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते भुवनेशीपीठं संपूज्य तत्रावाह्याङ्गपूजान्तं प्राग्वद्विधाय, देव्याः पुरोभागे ॐ शाङ्कर्य्यै नमः। दक्षिणे भयङ्कर्यै नमः। पश्चिमे वारुण्यै नमः। उत्तरे भीषिकायै नमः। इति संपूज्य, अष्टदलेषु देव्यग्रमारभ्य, कृत्यायै नमः। एवं मदनायै०। सर्वकृत्यायै०। उत्सादिन्यै०। भीषिण्यै०। श्रीमत्यै०। प्रतिष्ठायै०। विद्यायै०। इति संपूज्य, अथवा षडङ्गपूजानन्तरं अष्टदलेषु प्रोक्तशक्तीः संपूज्याभ्यन्तरे प्रोक्तशक्तिचतुष्टयं संपूज्य दिक्पालार्चादि पूर्ववत् कुर्यादिति।

फेत्कारिणी तन्त्र में कहा गया है कि अब मैं परिमलात्मक मन्त्र कहता हूँ, जिसके जानने मात्र से ही तीनों लोकों में कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता। मन्त्र है—ह्रीं महायोगनि गौरि भुवनभयंकरि हुं। इसके ऋषि अंगिरा, छन्द गायत्री, देवता समस्त भूतों में भय उत्पन्न करने वाली सिंह मुखी महाकृत्या। इसका ऋष्यादि न्यास इस प्रकार किया जाता है शिरसि अंगिरसे ऋषये नमः। मुखे—देवी गायत्री छन्दसे नमः। हृदये महाकृत्यायै देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडंग न्यास करे—ह्रां ह्रीं महायोगिनि गौरि फट् हृदयाय नमः। ह्रीं ह्रीं भुवनभयंकरि हुं फट् शिरसे स्वाहा। ह्रूं ह्रीं महायोगिनि गौरि फट् शिखायै वषट्। ह्रैं ह्रीं भुवनभयंकरि हुं फट् कवचाय हुं। ह्रौं ह्रीं महायोगिनि गौरि फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः ह्रीं भुवनभयंकरि फट् अस्त्राय फट्। इसी प्रकार कर न्यास करे। कर षडङ्ग न्यास करने के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

सिंहासनां कृष्णमुखीं लम्बमानपयोधराम्। दंष्ट्राकरालवदनां त्रिनेत्रां सर्वतोज्वलाम्॥
कृष्णकञ्चुकसंवीतां विधूमाग्निसमप्रभाम्। त्रिशूलचक्रचषकखट्वाङ्गकरपङ्कजाम्॥
लेलिहानमहाजिह्वां विद्युत्प्रेक्षणभीषणाम्।

ध्यान के बाद मन्त्रज्ञ वश्य कर्म के लिये कृत्या का पूजन लाल फूलों से पूजा करे। मारण कर्म में कृष्ण वर्ण का ध्यान करके मांस, रक्त एवं आसव से पूजा करे। इस प्रकार आत्मपूजा तक करके भुवनेशी पीठ का पूजन कर आवाहनादि कर्म पूर्ववत् सम्पन्न कर देवी के आगे ॐ शांकर्यै नमः, दक्षिण में भयंकर्यै नमः, पश्चिम में वारुण्यै नमः एवं उत्तर में भीषिकायै नमः कहते हुये क्रमशः शांकरी, भयंकरी, वारुणी एवं भीषिका की पूजा करे।

अष्टदल में देवी के आगे से प्रारम्भ करके कृत्यायै नमः, मदनायै नमः, सर्वकृत्यायै नमः, उत्सादिन्यै नमः, भीषिण्यै नमः, श्रीमत्यै नमः, प्रतिष्ठायै नमः. विद्यायै नमः कहकर क्रमशः कृत्या, मदना, सर्वकृत्या, उत्सादिनी, भीषिणी, श्रीमती, प्रतिष्ठा एवं विद्या की पूजा करे। अथवा षडङ्ग पूजा के बाद अष्टदल में उपर्युक्त शक्तियों की पूजा के बाद उक्त शांकरी आदि शक्तिचतुष्टय की पूजा करे। दिक्पालों की पूजा पूर्ववत् करे। शक्ति चतुष्टय का स्वरूप इस प्रकार है—शांकरी शुभ्र वर्ण वाली, वर देने वाली, दो भुजाओं वाली, सौम्य मुख वाली तथा हाथों में पाश एवं अंकुश धारण करने वाली हैं। भयंकरी की जिह्वा लम्बी एवं मुख नीचे की ओर रहता है। वे कृष्ण वर्ण की, लाल केशों वाली, लाल माला एवं अनुलेप धारण करने वाली, चार भुजाओं में शूल, कपाल, खड्ग एवं शिरों की माला धारण करने वाली तथा समस्त आभरणों से सुसज्जित हैं। वारुणी स्वर्ण वर्ण वाली, विहसित मुख वाली, सुवर्ण की माला धारण करने वाली, स्वच्छ दाँतों वाली एवं सदा अभय देने वाली

हैं। भीषिका चार मुख वाली अत्यन्त भयंकर हैं। इन सभी का विधिपूर्वक पूजन करके नित्य प्रति मन्त्र का एक सौ आठ जप करना चाहिये।चतुर्भुजां सिंहनादां ज्वलच्छूल कपालिनीम्।

परिमलमन्त्रविनियोगविधि:

तथा—

अथास्या विनियोगस्तु कर्तव्या मन्त्रिणा सदा। कालं विदित्वा प्रतिमां मधूच्छिष्टेन कारयेत् ॥१६॥
द्वादशाङ्गलिकां शत्रोर्नखलोमसमन्विताम्। हृदये नामधेयं च फट्कार: सप्तमर्मके ॥१७॥
अमुष्य प्राणा इम चामुष्य जीव इह स्थित:। अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि अमुष्य वाङ्मनश्चक्षु: ॥१८॥
श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्याग्निवल्लभा। इति प्राणान् प्रतिष्ठाप्य मरिचैर्लेपयेत् तत: ॥१९॥
मृतब्राह्मणचण्डालकेशाभ्यां पादयो: पृथक्। बद्ध्वा कारस्करमये तोरणे वाप्यधोमुखीम् ॥२०॥
तस्याधो मेखलायुक्तं त्रिकोणं वह्निकुण्डकम्। चन्द्रगौरं विधायाग्निं परिस्तीर्य शरैस्तृणै: ॥२१॥
विभीतकपरिध्या च कल्पयेद्यस्य मारणम्। जुहुयान्निम्बतैलाक्तै: काकोलूकोत्थपिच्छकै: ॥२२॥
दारयैनं शोषयैनं मारयेत्यभिधाय च। अष्टोत्तरशतेनैनमनया जुहुयाद् बुध: ॥२३॥
होमान्ते विधिवत् कृत्यामाराध्याग्नेश्च सन्निधौ। यो मे कण्ठग्रहो वातिदूरस्थो वान्तिकेऽपि च ॥२४॥
पिब क्रव्यमसृक् तस्येत्येवमुक्त्वा निवेदयेत्। संरक्ष्याग्निविधानेन नवरात्रं समापयेत् ॥२५॥
मृतस्तिष्ठति तेनांशस्तावदस्य रिपोर्मृति:।

फेत्कारिणी तन्त्र में ही कहा गया है कि मान्त्रिकों को सदा इसका विनियोग करना चाहिये। काल ज्ञात करके नख-रोमसमन्वित मोम से बारह अंगुल लम्बी प्रतिमा बनावे। उसके हृदय में नाम लिखे सात मर्मों में 'फट्' लिखकर इस प्रकार प्राण-प्रतिष्ठा करे—अमुष्य प्राणा इह चामुष्य जीव इह स्थित:। अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि, अमुष्य वाङ्मनश्चक्षु:श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य स्वाहा। प्राण-प्रतिष्ठा के बाद उसमें मरिच का लेप लगावे। मृत ब्राह्मण एवं चण्डाल के केशों से उसके पैरों को अलग-अलग बाँधकर कारस्कर से बने तोरण में उस प्रतिमा को अधोमुखी लटका दे। उसके नीचे मेखलायुक्त त्रिकोण चन्द्रगौर अग्नि कुण्ड बनाकर उसमें शरकंडा एवं घास बिछाकर अग्नि प्रज्वलित करे। लिसोड़े के मूसल से मारण की कल्पना करे। नीम के तेल से सिक्त कौआ और उल्लू के पिच्छक से 'दारय शोषय मारय' कहकर एक सौ आठ हवन करे। हवन के बाद अग्नि के समीप कृत्या का विधिवत् आराधन करे। 'यो मे कण्ठग्रहो वातिदूरस्थो आन्तिकेपिवा पिब क्रव्यमसृक् तस्य' यह कहकर क्रव्य का निवेदन करे। अग्नि का संरक्षण नव रातों तक करके पूजा समाप्त करे। इससे शत्रु की मृत्यु होती है।

अर्कक्षीरेण मरिचं पिष्ट्वा सिद्धार्थमेव च ॥२६॥
जले संलोड्य मन्त्रेण रिपुं ध्यात्वा निरुद्धदृक्। कृष्णाम्बरोत्तरीयोऽग्रपादेनाक्रम्य तद्रिपुम् ॥२७॥
वज्रशूलमिति ध्यात्वा अद्भिस्तस्योपरि क्षिपेत्। नवरात्रान्तरे शत्रुर्म्रियते नात्र संशय: ॥२८॥
हर(सुस)मिद्धे चितावह्नौ तैलसिक्तैर्विभीतकै:। जुह्वतो म्रियते शत्रु: सत्यमौशनसोदितम् ॥२९॥
रिपो: प्रतिकृतिं कृत्वा साध्यर्क्षफलकेऽमले। अर्कक्षीरेण मरिचं पिष्ट्वा तत्रैव लेपयेत् ॥३०॥
फट्कारं हृदये कृत्वा शिवं निर्माय कूपके। क्षिपेत् कृष्णचतुर्दश्यां जप्त्वा मन्त्रं सहस्रश: ॥३१॥
सद्योऽवगाहनं कृत्वा तस्यामेव च रक्षणम्। मन्त्रं जप्त्वा विधानेन भेदयेत् सिंहमुद्रया ॥३२॥
षण्मासान्म्रियते शत्रु: संध्ययोरुभयोरपि। बाह्यसमुद्भूतं पत्रं शुष्कं वैभीतिकं तत: ॥३३॥
गृहीत्वा च लिखेन्मन्त्रं कृष्णसर्पस्य शोणितै:। नामधेयं रिपोरन्ते वायुबीजेन वेष्टयेत् ॥३४॥
निखनेत्तस्य गेहे तु काकवद् भ्रमते ध्रुवम्। वातोद्भूतै: शुष्कपत्रै: काष्ठैरशनिपातितै: ॥३५॥
उष्ट्रास्थिना शवाङ्गारै: शत्रोरुच्चाटनं भवेत्। दूर्वागुडूचीगव्येन सर्पिषा तिलतण्डुलै: ॥३६॥
अन्नै: समिद्भि: पालाशै: शान्तिं कुर्याद्विचक्षण:। लक्ष्मीबिल्वफलै: पत्रैर्नन्द्यावर्तै: श्रिये तथा ॥३७॥

रक्तपुष्पैरपामार्गैरङ्गारैश्च सुभद्रकैः। मधुरत्रयसंसिक्तैरेभिः कुर्यात् तु वश्यकम् ॥३८॥
उक्तमौशनसे तन्त्रे च्यवनस्यापि कथ्यते। शान्तिं कृत्वा विधानेन जपेत् परिमलं त्विदम् ॥३९॥
महाव्याधिप्रशमनं नित्यमष्टाधिकं शतम्। जपेदेकाग्रचित्तस्तु लोकवश्यकरं परम् ॥४०॥

अकवन के दूध में मरिच एवं सरसो पीसकर मन्त्रोच्चारणपूर्वक जल में सबको मिलाकर शत्रु का ध्यान करते हुये उसमें दृष्टि लगाकर कल्पना करे कि वह काला उत्तरीय ओढ़े हुए है। उसे अपने पैरों से दबाकर वज्रशूल का ध्यान करके जल से उस पर छींटा मारे। इससे शत्रु नव रातों में मर जाता है।

लिसोड़े के तेल से सिक्त हरसु की समिधा से चिता की अग्नि में हवन से शत्रु की मृत्यु होती है ऐसा औसनस का कथन है। साध्य नक्षत्र वृक्ष के स्वच्छ फलक पर साध्य शत्रु की प्रतिमा बनाकर अकवन के दूध में मरिच पीसकर उसपर लेप करे। उसके हृदय में फट् लिखे। शिव बनाकर कृष्ण चतुर्दशी में एक हजार मन्त्रजप कर उसे कूप में डाल दे। फिर तत्काल ही उस कूप में से निकालकर उसका रक्षण करे। विधान से मन्त्रजप कर सिंहमुद्रा से उसका भेदन करे तो शत्रु छः महीनों में मर जाता है। दोनों सन्ध्याओं में लिसोड़े के सूखे पत्तों को लाकर काले साँप के रक्त से शत्रु का नाम लिखे। वायुबीज यं से उसे वेष्टित करे। उसे शत्रु के घर में गाड़ने से निश्चित ही वह कौए के समान घूमता रहता है। हवा से गिरे सूखे पत्तों, वज्र से गिरी लकड़ी, ऊँट की हड्डी एवं शव के अंगार से शत्रु का उच्चाटन होता है। दूर्वा गिलोय गव्य गोघृत तिल चावल एवं अन्न से पलाश की लकड़ी से ज्वलित अग्नि में हवन करने से इनकी शान्ति होती है। बेलफल के हवन से लक्ष्मी और नन्द्यावर्त के पत्तों के हवन से श्री प्राप्त होती है। लाल चिड़िचिड़ा के फूलों को मधुरत्रय से संसिक्त करके हवन करने से वशीकरण होता है। यह औशनस तन्त्र एवं च्यवन का कथन है। विधान से शान्ति करके परिमल मन्त्र का जप करे। नित्य एक सौ आठ जप से भयंकर व्याधियों का प्रशमन होता है। एकाग्र चित्त से इसका जप करने पर लोक का वशीकरण होता है।

मनसा चिन्तयेत् कृत्यां गजारूढां वियद्गताम्। तस्य वश्या भवेत् क्षिप्रमश्वारूढा तथा भवे ॥४१॥
चौरव्याघ्रमृगादीनां सलिलादिभयापहम्। सकृच्छ्रवणमात्रेण सर्वपापविनाशनम् ॥४२॥
सप्ताभिमन्त्रितं तोयं पीत्वा मन्त्री समाहितः। मेधावी च भवेद्वाग्मी तावज्जप्ताभिषेकतः ॥४३॥
सप्ताभिमन्त्रितं कृत्वा विषमप्यमृतं भवेत्। पक्षं मासं द्विमासं वा षण्मासं वत्सरं तु वा ॥४४॥
एवं यः कुरुते मर्त्यः स पुण्यां गतिमाप्नुयात्।

मानसिक चिन्तन करे कि कृत्या हाथी पर सवार होकर आकाश में चली गयी। ऐसा चिन्तन करने से चिन्तक के वश में तत्काल ही अश्वारूढ़ा हो जाती है तथा इस संसार में उस चोर, बाघ, मृगादि का एवं जल आदि का भय नहीं होता। इसके श्रवणमात्र से ही सभी पापों का नाश होता है। सात परिमल मन्त्र के जप से मन्त्रित कर जल पीने से मान्त्रिक मेधावी होता है। सात जप से मन्त्रित जल से स्नान करने पर वाग्मी होता है। विष भी सात जप से मन्त्रित होने पर अमृत हो जाता है। इस मन्त्र का जप जो पन्द्रह दिन, तीस दिन, छः माह या साल भर करता है, वह मनुष्य पुण्य गति को प्राप्त करता है।

अथ वक्ष्ये विशेषेण महाशान्तिविधिक्रमम् ॥४५॥
सर्वसिद्धिकरं पुण्यं सर्वपापविनाशनम्। सर्वमुद्राप्रहरणं सर्वारिष्टविनाशनम् ॥४६॥
अकालमृत्युमथनं सदा विजयवर्धनम्। आयुष्यं पावनं पुष्टिलक्ष्मीसौभाग्यवश्यकृत् ॥४७॥
पुत्रदं पौत्रदं चैव अलक्ष्मीमलनाशनम्। महाव्याधिप्रशमनमपस्मारविनाशनम् ॥४८॥
योगिनीभूतवेतालाः प्रेतकूष्माण्डपन्नगाः। तत्र स्थाने न तिष्ठन्ति डाकिन्याद्या विशेषतः ॥४९॥
कृत्यामभ्यर्चयेद्वत्स यथाविधिपुरःसरम्। षोडशारं लिखेत् पद्मं योनियुक्तं सबिन्दुकम् ॥५०॥
तन्मध्येऽष्टदलं लिख्य मकारादीन् न्यसेत्क्रमात्। तन्मध्ये रसकोणं तु लिखेन्मूलमनुं स्मरन् ॥५१॥
चन्द्रबिम्बं लिखेन्मध्ये तस्योर्ध्वे प्रेतमालिखेत्। तस्य मध्ये न्यसेत् कुम्भं वस्त्रस्त्रग्रत्नभूषितम् ॥५२॥

कुम्भमध्ये न्यसेत् कृत्यां सर्वलक्षणसंयुताम्। अर्चयेच्च यथान्यायं पायसं तु निवेदयेत् ॥५३॥
परितोऽष्टौ घटे न्यस्येदसिताङ्गादिभैरवान्। गन्धपुष्पादिनाभ्यर्च्य तद्बाह्ये क्षेत्रपालकान् ॥५४॥
लोकेशान्तं यजेद्देवीं तदग्रे होममाचरेत्। जुहुयादाज्यसंसिक्तापामार्गतिलसर्षपान् ॥५५॥
दूर्वाग्रखदिराश्वत्थैः प्रत्येकं तु शताष्टकम्। कुण्डे वा स्थण्डिले वापि होमकर्म समाचरेत् ॥५६॥
तस्य दक्षिणापार्श्वे तु लक्ष्मीं ध्यायेद्यथाविधि। कुम्भमध्ये न्यसेद् देवीं दक्षिणे तु श्रियं स्मरेत् ॥५७॥
वामपार्श्वे यजेद् देवीं हृल्लेखां परमेश्वरीम्। तस्यैव वामपार्श्वे तु पूजयेद् गणनायकम् ॥५८॥
अयुतं मूलमन्त्रं तु जपेन्मृत्युविनाशनम्। नियुतं भ्रूणहत्यायां जपेत् परिमलं विदुः ॥५९॥
महाव्याधिप्रशमनं तावज्जप्ताभिषेकतः। एवं यः कुरुते मर्त्यः स पुण्यां गतिमाप्नुयात् ॥६०॥
येन ज्ञातं परिमलं यस्य वक्त्रे स्थितं सदा। तस्यासाध्यं न विद्येत व्याध्यरिभ्यो भयं नहि ॥६१॥
इत्यादि वाखुले तन्त्रे ख्यातः परिमलो मनुः। महाशान्तिकरः पुंसां दुःखदारिद्र्यनाशनः ॥६२॥ इति।

अब महाशान्ति विधि के क्रम को कहता हूँ। यह सर्वसिद्धिदायक, पुण्यदायक, सर्व पापविनाशक, सर्व मुद्रापहारक, सर्वारिष्ट-विनाशक, अकालमृत्यु प्रशामक सवदा विजय देने वाला, आयुष्य कारक, पुष्टि एवं लक्ष्मी तथा सौभाग्यकारक है। पुत्रदायक, पौत्रदायक, दरिद्रता दोषनाशक, महाव्याधिविनाशक एवं अपस्मारविनाश भी है। योगिनी-भूत-वेताल प्रेत कुष्माण्ड, सर्प, डाकिनी आदि उस स्थान पर नही रहते। कृत्या का अर्चन अग्र वर्णित रूप मे यथाविधि करे। पहले त्रिकोण बनाकर उसके बीच में बिन्दु अंकित करे। उसके बाहर षट्कोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल बनावे उसके बाहर षोडश दल बनावे। अष्टदल में क्रमशः मकारादि लिखे। षट्कोण में मूल मन्त्र लिखे। मध्य में चन्द्रविम्ब लिखे। उसके ऊपर प्रेत लिखे। उसमें कलश स्थापित करे। कलश को वस्त्र माला रत्न से भूषित करे। कलश में सभी लक्षणों से युक्त कृत्या का न्यास करे। यथाविधि पूजा करे। पायस का निवेदन करे। कलश के सब ओर असिताङ्गादि आठ भैरवों का न्यास करे। उनकी पूजा गन्ध, पुष्पादि मे करे। उसके बाहर क्षेत्रपालों. लोकेशों की पूजा करके देवी का पूजन कर उसके आगे हवन करे। आज्य से सिक्त अपामार्ग, तिल, सरसों, दूर्वाग्र, खैर, पीपल—इन प्रत्येक से एक सौ आठ हवन करे। कुण्ड या स्थण्डिल में हवन करे। उसके दाँयें भाग में यथाविधि लक्ष्मी का ध्यान करे। कलश के मध्य में देवी का न्यास करे। दक्षिण भाग में लक्ष्मी का स्मरण करे। बॉयें पार्श्व में हृल्लेखा परमेश्वरी की एवं उनके बाँयें गणेश की पूजा करे। परिमल मन्त्र दश हजार जप मृत्यु-विनाशक है। दस लाख जप से भ्रूणहत्या दोष का नाश होता है। दस लाख जप एवं अभिषेक से महाव्याधि का प्रशमन होता है। जो मनुष्य ऐसा करता है. उसे पुण्यात्माओं की गति मिलती है। इस परिमल मन्त्र को जिसने जान लिया और जिसके मुख में यह सदा विद्यमान रहता है, उसके लिये कुछ भी असाध्य नहीं रहता। व्याधि और शत्रुओं का भय भी उसे नहीं रहता। वाखुल तन्त्र में कहा गया है कि मनुष्यों के लिये यह परिमल मन्त्र महाशान्तिकारक तथा दुःख-दारिद्र्य का नाशक है।

उच्छिष्टमन्त्रान्तरम्

मन्त्रान्तरे—
प्रणवं भुवनेशीं च वाग्भवं कमला च हृत्। ततश्च भगवत्यन्ते उच्छिष्टपदमीरयेत् ॥१॥
चण्डालि श्रीपदं मातङ्गीश्वरीति पदं ततः। सर्वान्ते जनमुच्चार्य वशंकर्य्यग्निवल्लभा ॥२॥
द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रः सर्वलोकवशंकरः।

'ॐह्रींऐंश्रीं नमो भगवति उच्छिष्टचण्डालि श्रीमातङ्गीश्वरि सर्वजनवशङ्करि स्वाहा' (३२)।

मतङ्गो मुनिराख्यातोऽनुष्टुप् छन्दश्च देवता। श्रीमातङ्गीश्वरी देवी सर्वलोकवशङ्करी ॥३॥
वेदाङ्गाङ्गरसाष्टाक्षिमितैर्मन्त्रसमुद्भवैः। वर्णैः कुर्यात् षडङ्गानि ततो देवीं विचिन्तयेत् ॥४॥
नीलजीमूतसङ्काशां रत्नसिंहासनस्थिताम्। हस्तन्यस्तशुकप्रौढवार्तालापं च शृण्वतीम् ॥५॥
रक्तवस्त्रपरीधानां वीणावादनतत्पराम्। सरोजन्यस्तपद्युग्मां मधुमत्तां मतङ्गिनीम् ॥६॥

एवं ध्यात्वार्चयेत् पीठे राजमातङ्गिकोदिते। त्रिकोणमष्टपत्राब्जयुगषोडशपत्रकम् ॥७॥
चतुरस्रं विधायात्र पीठपूजां समाचरेत्। तारमायावाग्रमादि सर्वशक्तिपदं ततः ॥८॥
कमलासनमुच्चार्य ङेन्तो हृत्पीठमन्त्रकः। अनेन मनुना सम्यक् पीठं देव्याः प्रपूजयेत् ॥९॥
मूर्तिं मूलेन संकल्प्य तस्यामावाह्य पूजयेत्। रत्यादीश्च त्रिकोणेषु केसरेष्वङ्गदेवताः ॥१०॥
अष्टपत्रेषु ब्राह्म्याद्या द्वितीये भैरवांस्तथा। षोडशारे तु पूर्वादि पूज्याः षोडश शक्तयः ॥११॥
वामा ज्येष्ठा च रौद्री च शान्तिः श्रद्धा महेश्वरि। क्रिया लक्ष्मीश्च सृष्टिश्च मोहिनी प्रमथासिनी ॥१२॥
विद्युल्लता च चिच्छक्तिः सुरापानन्दया सह। षोडशी नन्दबुद्धिस्तु पूजनीया विशेषतः ॥१३॥
मातङ्गीपूजने प्रोक्ताश्चतुरस्रे प्रपूजयेत्। लोकपालांस्तदस्त्राणि पूजयेद् भाग्यहेतवे ॥१४॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि मतङ्गऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीमातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृत्वाञ्जलिरुक्त्वा, ॐह्रींऐंश्रीं हृदयाय नमः। नमो भगवति शिरसे स्वाहा। उच्छिष्टचण्डालि शिखायै वषट्। श्रीमातङ्गीश्वरि कवचाय हुं। सर्वजनवशङ्करि नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। एवं करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानमानसपूजाद्यर्घ्यस्थापनाद्यात्मपूजान्ते स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना त्रिकोणं, तद्बहिरष्टदलकमलं, तद्बहिः पुनरष्टदलं, तद्बहिः षोडशदलं, तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रं कुर्यादिति पूजाचक्रं निर्माय, तत्र मातङ्गीपीठं संपूज्य, ॐह्रींऐंश्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। इति समस्तं पीठं संपूज्य, मूर्तिकल्पनादिपुष्पोपचारान्ते त्रिकोणकोणेषु—रत्यै नमः। प्रीत्यै०। मनोभवायै०। इति संपूज्य, केसरेषु प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, प्रथमाष्टदलेषु ब्राह्म्यादिमातृकाः, द्वितीयाष्टदलेऽसिताङ्गादिभैरवान् संपूज्य, षोडशदले—वामायै नमः। ज्येष्ठायै०। रौद्र्यै०। शान्त्यै०। श्रद्धायै०। माहेश्वर्यै०। क्रियायै०। लक्ष्म्यै०। सृष्ट्यै०। मोहिन्यै०। प्रमथायै०। असिन्यै०। विद्युल्लतायै०। चिच्छक्त्यै०। सुरापानन्दायै०। नन्दबुद्ध्यै०। इति संपूज्य, चतुरस्रे मातङ्ग्यादिशक्तिचतुष्टयं कोणेषु विघ्नेशादिचतुष्टयं प्राग्वत् संपूज्य लोकेशादिसमर्चनादि प्राग्वत् समापयेत् इति। तथा—

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद् दशांशतः। मधूकपुष्पैस्त्रिस्वादुयुक्तैर्मन्त्रस्य सिद्धये ॥१५॥
राजमातङ्गिनीप्रोक्तप्रयोगानत्र चाचरेत्। इति।

तन्त्रान्तर में उच्छिष्ट चण्डालिनी का एक अन्य मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—ॐ ह्रीं ऐं श्रीं नमो भगवति उच्छिष्टचण्डालि श्रीमातङ्गीश्वरि सर्वजनवशंकरि स्वाहा। बत्तीस अक्षरों का यह मन्त्र समस्त लोकों को वश में करने वाला है।

प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे— शिरसि मतङ्ग ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्री मातङ्गीश्वरीदेवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार कर-षडङ्ग न्यास करे—ॐ ह्रीं ऐं श्रीं हृदयाय नमः, नमो भगवति शिरसे शिरसे स्वाहा, उच्छिष्ट-चण्डालि शिखायै वषट्, श्रीमागङ्गीश्वरि कवचाय हुं, सर्वजनवशंकरि नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

नीलजीमूतसङ्काशां रत्नसिंहासनस्थिताम्। हस्तन्यस्तशुकप्रौढवार्तालापं च शृण्वतीम्।।
रक्तवस्त्रपरीधानां वीणावादनतत्पराम्। सरोजन्यस्तपद्युग्मां मधुमत्तां मतङ्गिनीम्।।

इस प्रकार ध्यान, मानस पूजा, अर्घ्य स्थापनादि करके आत्म पूजा के बाद स्वर्णादि पट्ट पर कुङ्कुम आदि से त्रिकोण, उसके बाहर अष्टदल कमल, उसके बाहर पुन: अष्टदल, उसके बाहर षोडशदल, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र बनाकर पूजाचक्र निर्मित करे। वहाँ मातङ्गी पीठ की पूजा करे। पुन: ॐ ह्रीं ऐं श्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः से पूरे पीठ की पूजा करे। तदनन्तर मूर्ति कल्पना से पुष्पोपचार तक पूजा करके त्रिकोण के कोणों में रत्यै नमः, प्रीत्यै नमः, मनोभवायै से पूजा करे। केसर में पूर्ववत् षडङ्ग पूजा करे। प्रथम अष्टदल में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। द्वितीय अष्टदल में

असिताङ्गादि आठ भैरवों की पूजा करे। षोडशदल में वामायै नमः, ज्येष्ठायै नमः, रौद्र्यै नमः, शान्त्यै नमः, श्रद्धायै नमः, माहेश्वर्यै नमः, क्रियायै नमः, लक्ष्म्यै नमः, सृष्ट्यै नमः, मोहिन्यै नमः, प्रमथायै नमः, असिन्यै नमः, विद्युल्लतायै नमः, चिच्छक्त्यै नमः, सुरापानन्दायै नमः, नन्दबुद्ध्यै नमः—इन मन्त्रों से पूजा करके चतुरस्र में मातङ्गी आदि शक्तिचतुष्टय की एवं कोणों में विघ्नेशादि चतुष्टय की पूजा पूर्ववत् करे। तब लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करके पूर्ववत् पूजा का समापन करे। तदनन्तर दश हजार मन्त्र जप करे। जप का दशांश हवन त्रिमधुर संसिक्त महुआ के फूलों से करे। इससे मन्त्र सिद्ध होता है। तदनन्तर इस सिद्ध मन्त्र से राजमातङ्गी में प्रथित प्रयोगों को करे।

लघुमातङ्गिनी

तथा—

वागुच्छिष्टपदं चैव चाण्डालिपदमुद्धरेत्। कामराजं च मातङ्गि तार्तीयं सर्वमुद्धरेत् ॥१६॥
वशङ्कर्य्याग्निजायान्तो लघुमातङ्गिसंज्ञकः। विंशद्वर्णो महामन्त्रः सर्वलोकवशङ्करः ॥१७॥
'ऐं उच्छिष्टचाण्डालि क्लीं मातङ्गि सौः सर्ववशङ्करि स्वाहा'(२०)।

मतङ्गोऽस्य ऋषिः प्रोक्तोऽनुष्टुप् छन्द उदाहृतम्। लघुमातङ्गिनी देवी देवता परिकीर्तिता ॥१८॥
वाग्भवं बीजमित्युक्तं स्वाहा शक्तिरुदाहृता। कीलकं कामराजं स्याद्विनियोगस्तु पूर्ववत् ॥१९॥
बालाबीजत्रिरावृत्त्या षडङ्गन्यासमाचरेत्।

स्मरे.[प्रथमपुष्पिणीं रुधिरबिन्दुनीलाम्बरं गृहीतमधुपात्रिकां मदविघूर्णनेत्राञ्चलाम्।
घनस्तनभरालसां गलितचूलिकां बालिकां करस्फुरितवल्लकीं विमलशङ्खताटङ्किनीम् ॥२०॥
एवं ध्यात्वा जपपूजाप्रयोगादिकं प्राग्वत् कुर्यादिति।

वाणी शुकप्रिया ङेन्ता विद्महे कामराजकम्। कामेश्वरी धीमहीति तार्तीयं च समुच्चरेत् ॥२१॥
तन्नः श्यामीपदं प्रोक्त्वा ततः श्यामा प्रचोदयात्। एषां प्रोक्ता तु मातङ्गी गायत्री सर्वसिद्धिदा ॥२२॥

मन्त्रान्तर—लघुमातङ्गिनी का बीस अक्षरों का मन्त्र इस प्रकार है—ऐं उच्छिष्टचाण्डालि क्लीं मातङ्गि सौः सर्ववशंकरि स्वाहा। इसके ऋषि मतङ्ग, छन्द अनुष्टुप् और देवता लघुमातङ्गिनी हैं। ऐं बीज, स्वाहा शक्ति एवं क्लीं कीलक है। अभीष्ट सिद्धि के लिये उसका विनियोग किया जाता है बाला बीज की तीन आवृत्ति से षडङ्ग न्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

स्मरेत् प्रथमपुष्पिणीं रुधिरबिन्दुनीलाम्बरं गृहीतमधुपात्रिकां मदविघूर्णनेत्राञ्चलाम्।
घनस्तनभरालसां गलितचूलिकां बालिकां करस्फुरितवल्लकीं विमलशङ्खताटङ्किनीम्।।

इस प्रकार ध्यान करके पूर्ववत् जप-पूजादि करे। मातङ्गी गायत्री इस प्रकार है—ॐ शुकप्रियायै विद्महे श्रीकामेश्वर्यै धीमहि तन्नः श्यामी प्रचोदयात्।

वाराहीमन्त्रोद्धारः

अथ वाराहीप्रकरणम्। तत्र दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्—

ईश्वर उवाच

पञ्चमीं रत्नदेवेशीं कथयामि शृणु प्रिये। यस्याः स्मरणमात्रेण पवनोऽयं स्थिरो भवेत् ॥१॥
वाग्भवं बीजमुच्चार्य गलानुग्रहबिन्दुभिः। नादेन भूषितं बीजं पार्थिवं चोच्चरेत् ततः ॥२॥
पुनराद्यं नमोऽन्ते भगवतीति समालिखेत्। वातालियुग्मं वाराहि पुनरेतद् द्वयं लिखेत् ॥३॥
वराहमुखि च द्वन्द्वं संधिहीनं ततः परम्। अन्धे चान्धिनि सप्तार्णं हृदन्तेन भवेत् प्रिये ॥४॥
रुन्धे रुन्धिन्यतो हृच्च जम्भे जम्भिनि हृत्ततः। मोहे मोहिनि हृच्चापि स्तम्भे स्तम्भिनि हृत्ततः ॥५॥
एतदुक्त्वा महेशानि सर्वदुष्ट प्रदुष्ट च। सान(आनाम)न्तं च सर्वेषां सर्ववागिति चित्त च ॥६॥

चक्षुर्मुखगति प्रोक्त्वा जिह्वास्तम्भं कुरुद्वयम्। शीघ्रं वश्यं कुरुद्वन्द्वं वाग्भवं पार्थिवं पुनः ॥७॥
ठ(ठः)कारस्य चतुष्कान्ते कवचास्त्राग्निवल्लभा। चतुर्दशोत्तरशतं मन्त्रवर्णा भवन्ति हि ॥८॥

'ऐंग्लौंऐं नमो भगवति वातालि २ वाराहि २ वराहमुखि २ अन्धे अन्धिनि नमः रुन्धे रुन्धिनि नमः जम्भे जम्भिनि नमः मोहे मोहिनि नमः स्तम्भे स्तम्भिनि नमः सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु २ ऐंग्लौं ठःठःठःठः हुं फट् स्वाहा' (११४)।

वाराही मन्त्रोद्धार—दक्षिणामूर्तिसंहिता के अनुसार एक सौ चौदह अक्षरों का वाराही का मन्त्र इस प्रकार है—ऐं ग्लौं ऐं नमो भगवति वार्तालि वार्तालि वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि अन्धे अन्धिनि नमः रुन्धे रुन्धिनि नमः जम्भे जम्भिनि नमः मोहे मोहिनि नमः स्तम्भे स्तम्भिनि नमः सर्वदुष्टप्रदुष्टानां सर्वेषां सर्व वाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं कुरु कुरु शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु ऐं ग्लौं ठः ठः ठः ठः हुं फट् स्वाहा।

वाराहीयन्त्रविधिस्तत्प्रयोगश्च

चतुश्चत्वारिंशतिभिः पदैर्न्यासस्तु कीर्तितः। मातृकावन्न्यसेद्वक्त्रे पदानि दश मन्त्रवित् ॥९॥
दोःपत्संधिषु साग्रेषु न्यसेद् विंशतिसंख्यकान्। पदार्णानथ विन्यस्य पार्श्वयोरेकमेतयोः ॥१०॥
अनेनैव प्रकारेण मातृकावन्न्यसेत् सुधीः। ततः षडङ्गविन्यासं कुर्याद् देहविशुद्धये ॥११॥
वार्ताल्यास्तु पदद्वन्द्वं हृदयं च ततः परम्। वाराहियुगलं देवि शिरो मन्त्रः उदाहृतः ॥१२॥
वराहमुखियुग्मं तु शिखा सप्ताक्षरं ततः। कवचं च ततः सप्तवर्णैर्नेत्रं (प्रकीर्तितम् ॥१३॥
ततोऽस्त्रं सप्तभिर्वर्णैः षडङ्गानि) न्यसेत्क्रमात्। यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि येन त्रैलोक्यमुत्तमम् ॥१४॥
ताम्रे वा राजते स्वर्णमये वा भूर्जपत्रके। लिखेद्रोचनया वापि कुङ्कुमागुरुचन्दनैः ॥१५॥
हरिद्रया वारुणया लिखेच्चक्रं मनोरमम्। त्रिकोणं पञ्चकोणं च षट्कोणं वसुपत्रकम् ॥१६॥
शतपत्रं सहस्रारं ततो भूबिम्बमालिखेत्। चतुर्द्वारविशोभाढ्यं मध्ये सिंहासनं यजेत् ॥१७॥
वाणीभूबीजयुग्मेन संपूज्य सर्वमातृकाः। स्फटिकाचलमध्यस्थं पीठमेतद्विचिन्त्य च ॥१८॥
देवीमावाहयेत् तत्र ध्यानं कुर्याद्विचक्षणः। प्रत्यग्रारुणसङ्काशां पद्मान्तर्गतवासिनीम् ॥१९॥
इन्द्रनीलमहातेजःप्रकाशां विश्वमातरम्। रुण्डं च मुण्डमालाढ्यां नवरत्नविभूषिताम् ॥२०॥
अनर्घ्यरत्नघटितमुकुटश्रीविराजिताम्। कौशेयार्धोरुकां चारुप्रवालमणिभूषिताम् ॥२१॥
हलेन मुसलेनापि वरदेनाभयेन च। विराजितचतुर्बाहुं कपिलाक्षीं सुमध्यमाम् ॥२२॥
नितम्बिनीमुत्पलाभां कठोरघनसत्कुचाम्। कोलाननां यजेद् देवीमुपचारैः सहेतुभिः ॥२३॥
गन्धपुष्पादिभिः सम्यक् सर्वकार्यार्थसिद्धये। दशसप्तसहस्राणि पुरश्चरणसिद्धये ॥२४॥
तद् दशांशेन होमस्तु तिलैर्बन्धूकपुष्पकैः। त्रिमध्वक्तैर्हेतुमिश्रैर्हरिद्राचन्दनैर्हुनेत् ॥२५॥
लाक्षागुरुपुरुद्रव्यैः पिशितैर्विविधैरपि। सिद्धिर्भवति देवेशि मन्त्रिणे नात्र संशयः ॥२६॥
आदावङ्गावृतिं पश्चादग्नीशासुरवायुषु। मध्ये दिक्षु त्रिकोणान्तस्त्रिषु कोणेषु संशृणु ॥२७॥
वामवामेतराग्रेषु क्रमेण त्रितयं यजेत्। जम्भिनीं स्तम्भिनीं चैव मोहिनीं सर्वसिद्धये ॥२८॥
अन्धिन्याद्यास्तु देवेशि स्तम्भिन्यन्ताः प्रपूजयेत्। पञ्चकोणे महादेवि पुरआदिक्रमेण तु ॥२९॥
मनुस्था एव तद्बाह्ये ततो मात्रर्चनं भवेत्। षडरे पुरआरभ्य प्रादक्षिण्येन पूजयेत् ॥३०॥
ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी प्रिये। माहेन्द्री चैव चामुण्डा डाकिन्याद्यास्ततः शृणु ॥३१॥
डाकिनी राकिणी देवि लाकिनी काकिनी तथा। शाकिनी हाकिनी चैव ततः षट्कोणके यजेत् ॥३२॥
षट्कोणपार्श्वयोः पूज्ये देव्यौ सर्वार्थसिद्धये। हलं कपालं दधतीं क्रोधिनीं वामतो यजेत् ॥३३॥
मुसलेष्टकरां देवीं स्तम्भिनीं दक्षिणे यजेत्। चण्डोच्चण्डं महेशानि षट्कोणपुरतो यजेत् ॥३४॥

नागं कपालं डमुरुं त्रिशूलं दधतं प्रिये। नग्नं नीलं जटाराजन्मस्तकं पञ्चमीयुतम् ॥३५॥
ततोऽष्टदलपत्रेषु वाताल्याद्यष्टकं यजेत्। शृणु त्वमेवं तस्याग्रे पूजयेन्महिषाष्टकम् ॥३६॥
शृङ्गाभ्यां चांत्ररक्तारिकुक्षिवक्त्रनिकृन्तनम्। नीलजीमूतसङ्काशं रिपुभूम्यन्तरिक्षगम् ॥३७॥
शतपत्रं क्रमात् पूज्यं रुद्रार्कवसुदस्त्रकैः। त्रयस्त्रिंशद्दलगतैस्त्रिवारोच्चारितैः पृथक् ॥३८॥
अवशिष्टे दले पूज्या स्तम्भिनी जम्भिनीयुता। शताराग्रे महेशानि महासिंहं समर्चयेत् ॥३९॥
सहस्रपत्रे संपूज्यं वाराहीणां सहस्रकम्। अङ्कुशान्ते महेशानि वाराह्यै नम आलिखेत् ॥४०॥
अनेन मनुना देवि पूजयेत् तु सहस्रधा। भूबिम्बे वटुकक्षेत्रयोगिनीगणपान् यजेत् ॥४१॥
पुनर्देवीं समाराध्य गन्धपुष्पादितर्पणैः। अक्षमाला हरिद्राया मुख्या स्तम्भनकारिणी ॥५०॥
स्फाटिकी वाथ पद्माक्षरुद्राक्षादिसमुद्भवा। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीवाराहीदेवतायै नमः। इति विन्यस्य ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, शिरसि ऐं। मुखवृत्ते ग्लौं। नेत्रयोः ऐं। श्रोत्रयोः नमः। नासिकयोः भगवति। गण्डयोः वार्तालि। ओष्ठयोः वार्तालि। दन्तपङ्क्तिद्वये वाराहि। मूर्ध्नि वाराहि। आस्ये वराहमुखि। दक्षदोर्मूले वराहमुखि। दक्षमणिबन्धे अन्धे। दक्षकराङ्गुलिमूले अन्धिनि। दक्षकराग्रे नमः। वामबाहुमूले रुन्धे। वामकूर्परे रुन्धिनि। वाममणिबन्धे नमः। वामकराङ्गुलिमूले जम्भे। वामकराग्रे जम्भिनि। दक्षोरुमूले नमः। दक्षजानुनि मोहे। दक्षगुल्फे मोहिनी। दक्षपादाङ्गुलिमूले नमः। दक्षपादाग्रे स्तम्भे। वामोरुमूले स्तम्भिनि। वामजानुनि नमः। वामगुल्फे सर्वदुष्टप्रदुष्टानाम्। वामपादाङ्गुलिमूले सर्वेषाम्। वामपादाग्रे सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भम्। पार्श्वयोः कुरु। पृष्ठे कुरु। नाभौ शीघ्रम्। जठरे वश्यम्। हृत्पूर्वे कुरु। दक्षांसे कुरु। अपरगले ऐं। वामांसे ग्लौं। हृदादिदक्षकराग्रान्तं ठः। हृदादिवामकराग्रान्तं ठः। हृदादिदक्षपादाग्रान्तं ठः। हृदादिवामपादाग्रान्तं ठः। हृदयादिनाभ्यन्तं हुं। हृदादिवक्त्रान्तं फट्। शिरसि स्वाहा। इति विन्यस्य षडङ्गं कुर्यात्। वातालि २ हृदयाय नमः। वाराहि २ शिरसे स्वाहा। वराहमुखि २ शिखायै वषट्। अन्धे अन्धिनि नमः कवचाय हुं। रुन्धे रुन्धिनि नमः नेत्राभ्यां वौषट्। जम्भे जम्भिनि नमः अस्त्राय फट्। इति विन्यस्य ध्यानमानसपूजान्ते स्वपुरतः स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना त्रिकोणं तद्बाह्ये पञ्चकोणं, तद्बहिरष्टदलकमलं, तद्बहिः शतपत्रकमलं, तद्बहिः सहस्रपत्रकमलं, तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रं लिखेदिति पूजायन्त्रं निर्माय, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्था-पनाद्यात्मपूजान्ते भुवनेश्वरीपीठमभ्यर्च्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते त्रिकोणमध्ये अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, त्रिकोणाग्रेषु—जम्भिन्यै नमः। स्तम्भिन्यै०। मोहिन्यै०। इति संपूज्य, पञ्चकोणकोणेषु अन्धिन्यै नमः। रुन्धिन्यै नमः। जम्भिन्यै०। मोहिन्यै०। स्तम्भिन्यै०। इति संपूज्य, षट्कोणकोणेषु—डाकिन्यै नमः। राकिण्यै०। लाकिन्यै०। काकिन्यै०। साकिन्यै०। हाकिन्यै०। इति संपूज्य, अष्टदलेषु ब्राह्म्यादिमातृकाः संपूज्य, षट्कोणपार्श्वयोः—हल-कपालधारिण्यै क्रोधिन्यै०। मुसलेष्टकरायै स्तम्भिन्यै० इति संपूज्य, षट्कोणपुरतः—चंडोच्चण्डाय नमः। ततोऽष्टदलेषु—वाताल्यै नमः। वाताल्यै०। वाराह्यै०। वाराह्यै०। वराहमुख्यै०। वराहमुख्यै०। अन्धिन्यै०। रुन्धिन्यै० इति संपूज्य, अष्टदलाग्रेषु—अष्टमहिषेभ्यो नमः। इति संपूज्य, शतपत्रेषु—एकादश रुद्राः, द्वादशादित्याः, अष्टौ वसवः, द्वावश्वि-नीकुमारकौचेति त्रयस्त्रिंशद् देवतास्त्रिधा संपूज्यावशिष्टदले—स्तम्भिन्यै जम्भिनीयुतायै नमः। इति संपूज्य, पत्राग्रेषु—महासिंहासनाय नमः। इति संपूज्य, सहस्रपत्रेषु—क्रों वाराह्यै नमः। इति मन्त्रेण सहस्रवाराहीः संपूज्य, भूपुरकोणेषु—वटुकक्षेत्रपालयोगिनीगणपान् संपूज्य, लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दक्षिणा मूर्ति ऋषये नमः। मुखे गायत्री छन्दसे नमः। हृदये श्री वाराहीदेवतायै नमः। अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार मन्त्र पद न्यास करे—शिरसि ऐं, मुखवृत्ते ग्लौं, नेत्रयोः ऐं, श्रोत्रयोः नमः, नासिकयोः भगवति, गण्डयो

वार्तालि, ओष्ठयो: वार्तालि, दन्तपंक्तिद्वये वाराहि, मूर्ध्नि वाराहि, आस्ये वराहमुखि, दक्षदोर्मूले वराहमुखि, दक्षमणिवन्धे अन्धे, दक्षकरांगुलिमूले अन्धिनि, दक्षकराग्रे नम:, वामबाहुमूले रुन्धे, वामकर्पूर रुन्धिनि, वाममणिवन्धे नम:, वामकराङ्गुलिमूले जम्भे, वामकराग्रे जम्भिनि, दक्षोरुमूले नम:, दक्षजानुनि मोहे, दक्षगुल्फे मोहिनि, दक्षपादाङ्गुलिमूले नम:, दक्षपादाग्रे सतम्भे, वामोरुमूले स्तम्भिनि, वामजानुनि नम:। वामगुल्फे सर्वदुष्टप्रदुष्टानां, वामपादाङ्गुलिमूले सर्वेषां, वामपादाग्रे सर्ववाक्चित्तचक्षुर्मुखगतिजिह्वास्तम्भं, पार्श्वयो: कुरु, पृष्ठे कुरु, नाभौ शीघ्रं, जठरे वश्यं, हृत्पूर्वे कुरु, दक्षांसे कुरु, अपरगले ऐं, वामांसे ग्लौं, हृदादिदक्षकराग्रान्तं ठ:, हृदादिवामकराग्रान्तं ठ:, हृदादिदक्षपादाग्रान्तं ठ:, हृदादिवामपादाग्रान्तं ठ:, हृदयादिनाभ्यंतं हुं, हृदादिवक्त्रान्तं फट्, शिरसि स्वाहा। इस न्यास के बाद षडङ्ग न्यास करे—वार्तालि वार्तालि हृदयाय नम:। वाराहि वाराहि शिरसे स्वाहा। वराहमुखि वराहमुखि शिखायै वषट्। अन्धे अन्धिनि नम: कवचाय हुं। रुन्धे रुन्धिनि नम: नेत्राभ्यां वौषट्। जम्भे जम्भिनि नम: अस्त्राय फट्। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

प्रत्यग्रारुणसङ्काशां पद्मान्तर्गतवासिनीम्। इन्द्रनीलमहातेज:प्रकाशां विश्वमातरम्।।
रुण्डं च मुण्डमालाढ्यां नवरत्नविभूषिताम्। अनर्घ्यरत्नघटितमुकुटश्रीविराजिताम्।।
कौशेयार्धोरुकां चारुप्रवालमणिभूषिताम्। हलेन मुसलेनापि वरदेनाभयेन च।।
विराजितचतुर्बाहुं कपिलाक्षीं सुमध्यमाम्। नितम्बिनीमुत्पलाभां कठोरघनसत्कुचाम्।।
कोलाननां यजेद् देवीमुपचारै: सहेतुभि:।

उपर्युक्त रूप में ध्यान के बाद मानस पूजा करके अपने आगे स्वर्णादि के पट्ट पर कुङ्कुमादि से त्रिकोण बनाकर उसके बाहर पञ्चकोण, उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर अष्टदल कमल, उसके बाहर शतपत्र कमल, उसके बाहर सहस्र पत्र कमल, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र बनाकर पूजा यन्त्र का निर्माण करे। उसे अपने सामने स्थापित करके पूजा करे। अर्घ्यादि स्थापन से आत्मपूजा तक की क्रिया करने के बाद भुवनेश्वरी पीठ का अर्चन करके आवाहन से पुष्पोपचार तक की पूजा करने के पश्चात् त्रिकोण में अग्नि-ईशान-नैर्ऋत्य-वायव्य कोण, मध्य एवं दिशाओं में पूर्ववत् षडङ्ग पूजा करे। त्रिकोण के कोनों में जम्भिन्यै नम:, स्तम्भिन्यै नम:, मोहिन्यै नम: मन्त्रों से पूजा करे। पञ्च कोण के कोनों में अन्धिन्यै नम:, रुन्धिन्यै नम:, जम्भिन्यै नम:, मोहिन्यै नम:, स्तम्भिन्यै नम: से पूजा करे। षट्कोण के कोनों में डाकिन्यै नम:, राकिन्यै नम:, लाकिन्यै नम:, काकिन्यै नम:, साकिन्यै नम:, हाकिन्यै नम: से पूजा करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा के बाद षट्कोण के पार्श्वों में हलकपालधारिण्यै क्रोधिन्यै नम: एवं मुसलेष्टकरायै स्तम्भिन्यै नम: से पूजा करके षट्कोण के आगे चण्डोच्चण्डाय नम: से पूजन कर अष्टदल में वार्तान्यै नम:, वार्ताल्यै नम:, वाराह्यै नम:, वाराह्यै नम:, वराहमुख्यै नम:, वराहमुख्यै नम:, अन्धिन्यै नम:, रुन्धिन्यै नम: से पूजा करे। अष्टदल के आगे अष्टमहिषेभ्यो नम: से पूजन करके शतपत्र में एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, आठ वसुओं एवं दो अश्विनी कुमार—इन तैंतीस देवता की पूजा तीन आवृत्ति में करे। अवशिष्ट एक दल में स्तम्भिन्यै जम्भिनीयुतायै नम: से पूजा करे। पत्राग्रों में महासिंहासनाय नम: से पूजा करे। सहस्र पत्र में क्रों वाराह्यै नम: मन्त्र से एक हजार वाराही की पूजा करे। भूपुर के कोनों में वटुक क्षेत्रपाल योगिनी गणेश की पूजा करे। तब दश दिक्पालों और उनके आयुधों की पूजा करके पूर्ववत् पूजा का समापन करे। पुन: देवी की पूजा गन्ध-पुष्पादि से करे। इनके जप में हल्दी की अक्षमाला स्तम्भनकारिणी कही गई है। स्फटिक, पद्माक्ष अथवा रुद्राक्ष की माला से जप करे।

तथा—

अथात: संप्रवक्ष्यामि तर्पणं भुवि दुर्लभम्। तिलमैरेयबन्धूककुसुमैस्तर्पयेच्छिवाम् ।।४३।।
मनोहरे सुवर्णादिपात्रे संपूज्य पूर्ववत्। अनेन विधिना देवीप्रियो भवति निश्चयात् ।।४४।।
एतस्या एव विद्याया कुण्डेऽस्ति परमेश्वरि। विशेष: कथ्यते सोऽत्र सर्ववैरिनिकृन्तन: ।।४५।।
एकहस्तमितं कुण्डमधो हस्तेन विस्तृतम्। हस्तखातं मनोरम्यं होमो यत्र निगद्यते ।।४६।।
स्तम्भने शिवदिग्भागे निग्रहे यमदिग्भवेत्। अस्मिन् कुण्डे महेशानि भैरवाग्निं प्रपूजयेत् ।।४७।।

लौकिंक वा यजेन्मन्त्रैर्वक्ष्यमाणैः परेश्वरि। हृदयं भुवनेशान्या भुवनेशीं च संलिखेत् ॥४८॥
तस्या एव शिखा देवि बीजत्रयमिदं शिवे। उक्त्वा भैरवमुच्चार्य चतुर्थ्यन्तं नमो लिखेत् ॥४९॥
ह्रांह्रींह्रूं इति। भैरवाय नमः इति।

इत्यग्निपूजनं कृत्वा ततोऽग्नेराहुतिं यजेत्। पूर्वबीजत्रयं भैरवाग्नये द्विठमालिखेत् ॥५०॥
ह्रांह्रींह्रूं भैरवाग्नये स्वाहा इति।

अनेनैकां हुतिं दत्त्वा नीलोत्पलस्रुचानले। नीलोत्पलैर्भैरवाग्निं तापिच्छैरपि वा यजेत् ॥५१॥
तापिच्छैः स्तम्भने होमो विज्ञेयस्तु चतुःशतम्। देवदारुतिलैर्लाक्षाहरिद्राभिस्तथा भवेत् ॥५२॥
त्रिसप्तमध्यरात्रेषु प्रत्येकं साष्टकं शतम्। हरिणीमुद्रया होमः कथितस्तव सुन्दरि ॥५३॥
दक्षिणे होमकुण्डस्य हस्तमात्रांस्तिलान् प्रिये। प्रसार्य भाण्डे स्वर्णादौ वृत्ते वा लोहसंभवे ॥५४॥
कृष्णाशाटीपरिक्षिप्तोत्पलतापिच्छपुष्पिणीम्। तिलमिश्रैरम्बुभिस्तं पूरयेन्मनुवित्तमः ॥५५॥
वाग्भवं धरणीमुक्त्वा कर्षणादिहलाय च। नवाक्षरमिदं चोक्त्वा हृदन्तं मन्त्रमालिखेत् ॥५६॥
ऐं धरणीकर्षणहलाय नमः इति। क्रोंहुं मुसलाय नमः इति।

अङ्कुशं कोपितं देवि मुसलाय नमो लिखेत्। सप्तविंशतिकृत्वस्तु देवीमन्त्रं समुच्चरेत् ॥५७॥
घटं स्पृष्ट्वा हृदि ध्यात्वा पञ्चमीं परमेश्वरीम्। तद्घटस्थोदकैः शत्रुमभिषिञ्चेद् विचक्षणः ॥५८॥
कफान्वितक्षयी वैरी वश्यो भवति निश्चयात्।

तर्पण—अब मैं संसार में दुर्लभ तर्पण को कहता हूँ। तिल मैरेय बन्धूक पुष्पों से शिवा का तर्पण मनोहर सोने आदि के पात्र में पूर्ववत् पूजन कर करे। इस विधि से देवी निश्चित प्रसन्न होती है। इस विद्या के हवन कुण्ड में कुछ विशेषता होती है, जिसे कहता हूँ। यह सभी वैरियों का विनाशक है। एक हाथ लम्बा, आधा हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा सुन्दर कुण्ड बनाकर उसमें हवन करे। पूजा स्थल के उत्तर में स्तम्भन के लिये और दक्षिण में निग्रह के लिये कुण्ड बनावे। इस कुण्ड में भैरवाग्नि की पूजा करे। पूर्वोक्त मन्त्र से लौकिक से पूजा करे। मन्त्र है—ह्रां ह्रीं ह्रूं भैरवाय नमः। इस मन्त्र से अग्नि की पूजा के बाद एक आहुति 'ह्रां ह्रीं ह्रूं भैरवाग्नये स्वाहा' मन्त्र से प्रदान करे। इस एक आहुति के बाद नीलोत्पल सदृश अग्नि में नीलोत्पल से या तमाल के फूलों से भैरवाग्नि की पूजा करे। तमाल के फूलों से चार सौ हवन स्तम्भन में करे। देवदार तिल लाह हल्दी के हवन से भी स्तम्भन होता है। तीन या सात आधी रातों में प्रत्येक से एक सौ आठ आहुति प्रदान करे। यह हवन मृगी मुद्रा से किया जाता है। हवन कुण्ड के दक्षिण में हस्तमात्र तिल को स्वर्णादि या लोहे के पात्र में फैलाकर कर उसे काली साड़ी से ढककर उस पर उत्पल और तमाल के फूल छिड़क दे। तिलमिश्रित जल से उसे भरे। 'ऐं धरणीकर्षणहलाय नमः'—इस मन्त्र को उस पर लिखे। 'क्रों हुं मुसलाय नमः' मन्त्र का उच्चारण सत्ताईस बार करे। घट को स्पर्श करके हृदय में पञ्चमी परमेश्वरी का ध्यान करके उस घट में स्थित जल से शत्रु का अभिषेक करे। इससे कफान्वित क्षय से ग्रसित वैरी अवश्य ही वश में हो जाता है।

निग्रहहोमविधिः

अथ निग्रहहोमस्य विधिं वक्ष्ये शृणु प्रिये ॥५९॥

खरमेषाङ्गरक्तेन लाजाचूर्णतिलैः सह। मिश्रं पिण्डं तु पिण्डेन मेलयेद्धेतुना प्रिये ॥६०॥
पिशितैर्गन्धपुष्पाद्यैर्धूपदीपैश्च साधकः। तर्पयेद्योगिनीपिण्डं परमानन्दसुन्दरम् ॥६१॥
सपत्रवेश्म संकल्प्य मृदा वा लोहकेन वा। निवेश्य कुण्डे वक्त्रे वा हुनेल्लाजारजःकणैः ॥६२॥
अयुतं संजपन् देवि त्रिसप्तक्षणदा हुनेत्। त्वगसृङ्मांसमेदोस्थिमज्जाशुक्राणि वैरिणः ॥६३॥
योगिनीनां मुखे देवि पतन्त्यत्र न संशयः।

निग्रह हवन विधि—गदहे और भेड़ के रक्त में लाजाचूर्ण और तिल मिलाकर पिण्ड बनावे। पिण्ड में मांस के छोटे-छोटे टुकड़े मिलाकर उसकी पूजा गन्ध, पुष्प, धूप, दीप से करे। पिण्ड में परमानन्द सुन्दर योगिनी का तर्पण करे। लोहे से या मिट्टी से दूसरी मूर्ति बनाकर कुण्ड में निवेश करे। उसके मुख में लाजा के चूर्णों से हवन करे। दश हजार जप करके तीन या सात आहुति वैरी के त्वचा, रक्त, मांस, मेद, हड्डी, मज्जा, शुक्र से अलग-अलग डाले। इससे शत्रु को योगिनियाँ खा जाती हैं।

अथातः संप्रवक्ष्यामि साधकानन्दकारकम् ॥६४॥
प्रणवं प्रणवेनैव संपुटीकृत्य योजयेत्। औभ्यामौभ्यां च साध्याख्यां ठकारेण च वेष्टयेत् ॥६५॥
अष्टभिः कुलिशैर्भित्त्वा ग्लौंक्ष्रौमिति तदन्तरे। कुलिशाग्रे तारबीजं पार्थिवं मण्डलं ततः ॥६६॥
कुलिशान्ते लिखेन्नाम चान्ते विद्यां समालिखेत्। बहिरङ्कुशसंरुद्धं सर्वमेतद्वरानने ॥६७॥
रुद्रस्वरे समारोप्य पीतपुष्पैः समर्चयेत्। पञ्चमीशकटं यन्त्रं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥६८॥
सहस्रसंख्ययानेन निशाभाण्डे क्षिपेद् बुधः। खनेद्रात्रौ भूर्जपत्रे लिखित्वा स्थापयेत् सुधीः ॥६९॥
श्यामलोहितमन्त्रज्ञो रक्तपुष्पैः समर्चयेत्। प्रेतधूमानले क्षिप्त्वा यजेद् गुरुर्विधानतः ॥७०॥
सौवर्णं राजतं ताम्रं क्रमेणैतत् समर्चयेत्। कटकार्थी हरिद्राक्तैः पुष्पैराराधयेच्छिवाम् ॥७१॥
धान्यराशौ च सायाह्ने विनिक्षिप्य च तद्भवेत्। नूतने कुम्भकारस्य खर्परे यन्त्रमालिखेत् ॥७२॥
अञ्जनाभैः समभ्यर्च्य कुसुमैः पथि देशिकः। उच्चाटयेत् तदा शीघ्रं कोट्यब्दसुस्थिरं रिपुम् ॥७३॥
तद्भाण्डे तु मषीद्रव्यैर्भिन्नभिन्नाञ्जनप्रभैः। समुद्धृत्य समभ्यर्च्य लोहकारगृहे क्षिपेत् ॥७४॥
वध्यमानो रोगजालैर्मरणं प्राप्नुयाद्रिपुः। निःसाने पटहे वाद्ये विलिखेन्मनुवित्तमः ॥७५॥
युद्धे तद्ध्वनिमाकर्ण्य पलायन्ते महाबलाः। धूमचितौ समालिख्य धूमाभैरर्चयेत् प्रिये ॥७६॥
नश्यन्ति दृष्टयस्तेषां शत्रूणां नान्यथा भवेत्। हरिद्रया शिलामध्ये समालिख्यार्चयेत् सुधीः ॥७७॥
पीतपुष्पेषु तद्यन्त्रमधोवक्त्रं विनिक्षिपेत्। वाक्स्तम्भो जायते शीघ्रं वादिनां परमेश्वरि ॥७८॥
अथ सीसे समालिख्य सीसाभैः कुसुमैर्यजेत्। शिलाधस्ताद्विनिक्षिप्य व्यवहारे जयी भवेत् ॥७९॥
सार्धं लोहमये पात्रे सितपुष्पैः समर्चयेत्। वाक्पतिर्जायते मन्त्री यन्त्रसारेऽथ संलिखेत् ॥८०॥
पञ्चवर्णैः प्रसूनैश्च पूजयेत् सर्वकर्मकृत्। अथातस्तिमिरामिश्रे सीसयुग्मे लिखेद् बुधः ॥८१॥
अभ्यर्च्य कुसुमै रम्यैः प्रेतभूमौ प्रतापयेत्। तेनाकृष्टिर्भवेदाशु पुंसां वा योषितामपि ॥८२॥
वृक्षगर्भे न्यसेच्चक्रं सीसपात्रे सुरञ्जिते। बंहिष्ठाः ग्रामभागेभ्यः संप्रविष्टा भवन्ति हि ॥८३॥
साध्यनक्षत्रवृक्षस्य गर्भे चक्रं प्रविन्यसेत्। वृक्षस्य यत्कृतं देवि साध्यस्य भवति स्फुटम् ॥८४॥
जले क्षिप्तं दोषदायि वह्नौ क्षिप्तं तु तापकृत्। योगदं भस्मनि क्षिप्तं हितदं भूमिगं प्रिये ॥८५॥
अन्नगं कामिनीं दद्यात् कुम्भे क्षिप्तं सुतप्रदम्। पूर्वस्यां दिशि संक्षिप्तं रिपूणां भपदं भवेत् ॥८६॥
आग्नेये यमदिग्भागे वैरिणां मृत्युदं भवेत्। यथा नैर्ऋतदिग्भागे शत्रून्मादनकारणम् ॥८७॥
पश्चिमे रोगदं तेषां भीतिदं वायुदिग्गतम्। धनदं चोत्तरे भागे साधकस्य न संशयः ॥८८॥
ईशानगं भ्रान्तिकरं वैरिणां परमेश्वरि। मध्यगं सर्वकार्याणि शत्रूणां नाशनं ध्रुवम् ॥८९॥
एतस्या एव विद्याया मध्यरात्रेऽर्चनं भवेत्। अन्यथा देवताशापो जायतेऽतीव दुस्तरम् ॥९०॥ इति।

अथैतद्यन्त्ररचनाप्रकारः—तत्र प्रोक्तभूर्जादौ प्रोक्तद्रव्यैरष्टकोणं विलिख्य कोणाग्रेषु कुलिशानि विधाय, मध्ये वप्र(प्रणव)द्वयसंपुटं प्रणवं विलिख्य, तदुपरिष्टादधस्ताच्च औकारद्वयमध्यगं साध्यनाम विलिख्य, तत्सर्वं ठकारेण संवेष्ट्य, तद्बहिरष्टारस्याष्टकोणेषु तत्कुलिशेषु च ग्लौंक्ष्रौं इति बीजद्वयं प्रतिकोणं प्रतिकुलिशं विलिख्य, कुलिशेषु साध्यनाम विलिख्य तत्सर्वं मूलमन्त्रेण संवेष्ट्य, कुलिशाग्रेषु प्रणवं विलिख्य, तद्बहिर्भूपुरं विलिख्य,

तत्सर्वमङ्कुशबीजेन संवेष्ट्य सर्वं यन्त्रमेकारमध्ये यथा भवति तथा विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। इति स्तम्भनाद्यखिलेष्टसाधने वाराहीप्रकरणम्।

अब साधक को आनन्द देने वाले विधान को कहता हूँ। भोजपत्रादि पर निर्दिष्ट द्रव्यों से अष्ट कोण बनावे। कोणाग्रों में वज्र बनावे। मध्य में दो प्रणवों से सम्पुटित प्रणव लिखे। उसके ऊपर-नीचे दो औंकार लिखे। मध्य में साध्य नाम लिखे। इन मंत्रों को ठकार से वेष्टित करे। उसके बाहर अष्टकोण के कोणों में वज्रों में ग्लौं क्ष्रौं दो बीजों को प्रत्येक कोण में प्रत्येक वज्र में लिखे। वज्रों में साध्य नाम लिखे। उन सबों को मूल मन्त्र से वेष्टित करे। वज्रों के अग्र भाग में प्रणवलि रखे। उसके बाहर भूपुर बनावे। उसे 'क्रों' बीज से वेष्टित करे। समस्त यन्त्र ऐंकार के मध्य में जैसे हो सके, वैसे लिखे। पीले फूलों से उसकी पूजा करे। यह पञ्चमी शकट यन्त्र तीनों लोकों में दुर्लभ है।

अन्य प्रयोग—एक हजार हल्दी को वर्तन में रखकर कूटे। भोजपत्र पर लिखकर यन्त्र स्थापित करे। श्याम लोहित मन्त्रज्ञ लाल फूलों से पूजा करे। चिता धुआँ और अग्नि में उसे रखकर गुरु के विधान से पूजा करे। सोना-चाँदी ताम्बा के यन्त्र में क्रमशः उसकी पूजा करे। कटकार्थी हल्दी से सिक्त पुष्प से शिवा की पूजा करे। अनाजों की ढेरी में यन्त्र को छिपाकर प्रातः सायं पूजन करने से भी यह कार्य होता है। कुम्हार के नये खपड़े मे यन्त्र लिखे। अंजनाभ से पूजा करके फूलों को शत्रु के मार्ग में फेंक देने से बहुत करोड़ों वर्षों से स्थिर शत्रु का भी उच्चाटन होता है। अञ्जन से रंगे वर्तन में उसे रखकर उसका पूजन कर लोहार के घर में रखने से शत्रु रोगों से ग्रस्त होकर मर जाता है। निःसान पटह और वाद्यों पर यह यन्त्र लिखकर युद्ध में जाने पर उनके आवाज को सुनकर शत्रु भाग जाते हैं। चिताधूम से यन्त्र को लिखकर धूमाभ से ही उसकी पूजा करे। इस यन्त्र को देखते ही शत्रु की आँखें नष्ट हो जाती हैं। पत्थर पर हल्दी से यन्त्र को लिखकर पूजा करे। तब यन्त्र को अधोमुख करके पीले फूलों से ढक दे। इससे वादी की वाणी का स्तम्भन शीघ्र होता है। इस यन्त्र को सीसा पर लिखकर सीसा के रंग के फूलों से पूजन करे। उसे पत्थर से दबा दे तो व्यवहार में विजय प्राप्त होती है। यन्त्र को लोहे के पात्र में रखकर उजले फूलों से पूजा करे तो मन्त्री वाचस्पति हो जाता है। फूलों के रस से यन्त्र लिखकर पाँच रंग के फूलो से पूजा करे तो सभी कार्य होते हैं।

काजल-मिश्रित फूलों के रस से दो सीसा पर यन्त्र बनाकर उसे सुन्दर फूलों से पूजा करे। चिता में उसे तपावे तो नर-नारी का आकर्षण होता है। सीसे पर चक्र बनाकर गाँव के बाहर वृक्षगर्भ में रखे तो नारी आकर्षित होती है। साध्य नक्षत्र वृक्ष गर्भ में यन्त्र को प्रविष्ट करे तो उस वृक्ष की देवी प्रत्यक्ष होती है। जल में छिपाने से यह यन्त्र दोषदायी होता है, अग्नि में डाल देने से तप्त करता है, भस्म में छिपाने से योग प्रद होता है और भूमि में गाड़ने से कल्याणकारी होता है। अन्न से ढकने पर कामिनी मिलती है, घड़े में छिपाने से पुत्र प्राप्त होता है, पूर्व दिशा में छिपाने से शत्रुओं को भयदायक होता है। आग्नेय और दक्षिण दिशा में छिपाने से शत्रुओं की मृत्यु होती है। नैर्ऋत्य दिशा में छिपाने से शत्रुओं को पागल बनाता है। पश्चिम में छिपाने से शत्रु रोग ग्रस्त होता है। वायव्य में छिपाने से शत्रुओं को भय देता है। उत्तर दिशा में छिपाने से धन मिलता है। ईशान कोण में यन्त्र को छिपाने से शत्रुओं को भ्रान्ति होती है। मध्य में छिपाने से सभी कार्य होते हैं और निश्चित रूप से शत्रुओं का नाश होता है। इस यन्त्र का अर्चन मध्य रात्रि मे किया जाता है, अन्यथा देवता का दुस्तर शाप प्राप्त होता है।

निग्रहवाराहीमन्त्रः

अथ निग्रहवाराही उत्तरतन्त्रे—

वाग्भवं पृथिवीबीजं ठकारत्रितयं तथा। बिन्दुयुक्तं ततश्चैव कूर्चबीजाग्निवल्लभा ॥१॥

'ऐंग्लौंठंठंठंहूं स्वाहा'।

अष्टाक्षरी महाविद्या शत्रुनिग्रहकारिणी। कपिलोऽस्य मुनिश्छन्दोऽनुष्टुप् च परिकीर्तितम् ॥२॥

वाराही देवता प्रोक्ता वाताली पदपूर्विका। द्व्येकैकभूमिचन्द्रद्विवर्णैरङ्गक्रिया मनोः ॥३॥

विद्युद्दामसमानाङ्गीं पाशं शक्तिं च मुद्गरम्। अङ्कुशं बिभ्रतीं दोर्भिर्नेत्रत्रयविराजिताम् ॥४॥

नानालङ्कारभूषाङ्गीं वाराहीं संस्मरेत् तदा। प्राक्प्रोक्ते पूजयेत् पीठे अङ्गदिक्पालहेतिकैः ॥५॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि कपिलऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीवातालीवाराहीदेवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ऐंग्लौं हृदयाय नमः। ठं शिरसे०। ठं शिखायै०। ठं कवचाय०। हूं नेत्रत्रयाय०। स्वाहा अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासं विधाय, ध्यानमानसपूजान्ते स्वपुरतः स्वर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना षट्कोणवृत्तभूपुरात्मकं यन्त्रं विलिख्य पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते भुवनेश्वरीपीठमभ्यर्च्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते षट्कोणेषु षडङ्गानि संपूज्य तद्बहिर्लोकपालार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेत् इति। तथा—

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं बिल्वपत्रैर्हयारिजैः। धात्रीफलैर्भृङ्गाराजपत्रैर्दर्भैर्दशांशतः ॥६॥
जुहुयान्मन्त्रसंसिद्ध्यै ततः कर्माणि साधयेत्। अङ्कुशेनारिमादाय दृढं बद्ध्वा गुणेन च ॥७॥
प्रहारं कुर्वतीं मूर्ध्नि मुद्गरेण स्मरन् जपेत्। अयुतं जुहुयाच्छुद्धैरयुतं वनगोमयैः ॥८॥
वापीकूपतडागेषु प्रक्षिपेद्भस्म तद्भवम्। तत्र तज्जलपानेन म्रियन्ते शत्रवो भृशम् ॥९॥
पलायन्ते च रिपवो दिशो दश सुनिश्चयात्।

इति निग्रहवाराही।

निग्रह वाराही मन्त्र—उत्तर तन्त्र के अनुसार निग्रहवाराही का मन्त्र है—ऐं ग्लौं ठं ठं ठं हूं स्वाहा। यह अष्टाक्षरी महाविद्या शत्रुओं का निग्रह करने वाली है। इसके ऋषि कपिल, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता वाताली वाराही हैं। समस्त अभीष्ट की सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। इसका अंगन्यास इस प्रकार किया जाता है—ऐं ग्लौं हृदयाय नमः, ठं शिरसे स्वाहा। ठं शिखायै वषट्, ठं कवचाय हुं, हूं नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी किया जाता है। तदनन्तर विभिन्न आभूषणों से भूषित वाराही का इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

विद्युद्दामसमानाङ्गीं पाशं शक्तिं च मुद्गरम्। अङ्कुशं बिभ्रतीं दोर्भिर्नेत्रत्रयविराजिताम्।।

ध्यान के बाद मानस पूजा करे। अपने आगे स्वर्णादि पट्ट पर कुङ्कुमादि से षट्कोण वृत्त भूपुरात्मक यन्त्र बनाकर उसे स्थापित करे। अर्घ्य-स्थापन करे। पाद्यादि से आत्म पूजा तक की पूजा के बाद भुवनेश्वरी पीठ पर आवाहनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। षट्कोण में षडङ्ग पूजा करे। भूपुर में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। तब धूप-दीप-नैवेद्यादि से पूजा के बाद पूर्ववत् पूजा का समापन करे।

आठ लाख मन्त्र जप करे। बेलपत्र, कनेल के फूलों, आँवला फल, भृंगराज पत्र एवं कुश से दशांश हवन करे। इससे मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इस सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मों का साधन करे। जप के समय ध्यान करे कि देवी अंकुश से शत्रु को लाकर रस्सी से बाँधकर उसके शिर पर मुद्गर से प्रहार कर रही हैं। जंगली गाय के गोबर से दश हजार हवन करे और उसके भस्म को वापी, कूप या तालाब से डाल दे उस जल को पीने से शत्रुओं की मृत्यु हो जाती है और शेष बचे हुए शत्रु दशों दिशाओं में भाग जाते हैं।

धूम्रवाराहीमन्त्रविधिः

अथ धूम्रवाराही। तत्र कालमृत्युतन्त्रे—

देव्युवाच

कालरुद्र नमस्तुभ्यं कालाधार नमोनमः। अधुना धूम्रवाराह्या मन्त्रयोगं वद प्रभो ॥१॥

ईश्वर उवाच

कालमृत्युमयं प्रोक्तं प्राणिप्राणापहारकम्। मारणास्त्रमिदं देवि सर्वतन्त्रेषु गोपितम् ॥२॥
मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि न्यासध्यानादिकं तथा। यन्त्रं प्रयोगं गिरिजे धूम्रवाराहिगं प्रिये ॥३॥

वेदादि विलिखेत् पूर्वं धूंकारद्वयमेव च। मृत्युधूमे तु प्रोच्चार्य पुनः धूंकारमुच्चरेत् ॥४॥
धूंकारं कालधूमे च पुनः धूंकारमेव च। धूंपूर्वं धूम्रशब्दं च वाराहीति पदं वदेत् ॥५॥
हुंफट्स्वाहा-समायुक्तो धूम्रवाराहिगो मनुः। पञ्चविंशतिवर्णोऽयं मन्त्रराजेश्वरेश्वरः ॥६॥

'ॐधूंधूं मृत्युधूमे धूंधूं कालधूमे धूंधूं धूम्रवाराहि हुं फट् स्वाहा'।

कालमृत्युर्ऋषिः प्रोक्तो बृहती छन्द एव च। देवता धूम्रवाराही नियोगः शत्रुमारणे ॥७॥
धूं बीजं हूं तथा शक्तिः कीलकं प्रणवं तथा। न्यासजालं प्रवक्ष्यामि तव पर्वतनन्दिनि ॥८॥
सप्तभिश्च पुनः षड्भिर्द्वाभ्यां वेदैर्द्विका(द्वाभ्यां त्रिका)ब्धिभिः।
न्यासं चैवानुलोमेन विलोमेन पुनर्न्यसेत् ॥९॥
एवं न्यासविधिं कृत्वा साक्षाद् देवीमयो भवेत्। अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ॥१०॥
वाराही धूम्रवर्णा च भक्षयन्ती रिपून् सदा। पशुरूपान् मुनिसुरैर्वन्दितां धूम्ररूपिणीम् ॥११॥
एवं ध्यात्वा मन्त्रराजमयुतं जपमाचरेत्। तर्पणं शुद्धतोयेन पूजयेच्चन्दनादिभिः ॥१२॥
होमं दशांशं कुर्वीत तर्पणस्याप्ययं क्रमः।

जपदशांशहोमः। जपदशांशतर्पणमित्यर्थः।

हुनेज्जपदशांशं तु त्रिमध्वक्तगुडौदनैः। अथवा जुहुयाद् देवि मधूककुसुमेन च ॥१३॥
तर्पणं तद्दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेत् प्रिये। एवं चानुष्ठितो मन्त्रो मन्त्रिणः सिद्धिमाप्नुयात् ॥१४॥
पुनः प्रयोगमतुलं कृत्वा शत्रून् निवारयेत्। पूर्वोक्तविधिना ध्यात्वा वाराहीं धूम्ररूपिणीम् ॥१५।
त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्रं गर्भितं शत्रुनामभिः। आगत्य धूम्ररूपेण तच्छत्रून् भक्षयन्त्यपि ॥१६॥
शत्रूंश्च शत्रुसेनां च धूममध्ये समाकुलाम्। एवं ध्यात्वा रिपून् सम्यगयुतं जपमाचरेत् ॥१७॥
मृत्युना ग्रस्तदेहाश्च म्रियन्ते नात्र संशयः। गृहधूमं समानीय चारनालेन संयुतम् ॥१८॥
मन्त्रयेच्छतवारं तु लोहपात्रमये ततः। तदंशं बिन्दुमात्रेण खाने पाने च वैरिणः ॥१९॥
दातव्यं यत्नतो देवि स रिपुर्म्रियते ध्रुवम्। अथवा चारनालं तु निक्षिपेद्गोमये प्रिये ॥२०॥
तापज्वरेण महतो तच्छत्रुर्म्रियते ध्रुवम्। सहस्रत्रयमाजप्य ध्यायेद् देवीमनन्यधीः ॥२१॥
शतयोजनगः शत्रुर्म्रियते पक्षमात्रतः। गृहधूमं गरं चैव गान्धारीद्रवयोगतः ॥२२॥
मर्दयेत् सूक्ष्मकल्कं तु कुर्याद्गुलिकमादरात्। पूजयेदुपचारेण वैरिप्राणान् निवेदयेत् ॥२३॥
सहस्रद्वितयेनैव शत्रुः क्षयमवाप्नुयात्। वाराहीं धूम्ररूपेण चिन्तयेत् तस्य मध्यगाम् ॥२४॥
रिपुं संक्षुभितं ध्यायेन्नित्यमष्टोत्तरं जपेत्। मण्डलाद्वैरिवर्गं च भार्याबन्धुसमन्वितम् ॥२५॥
कुलक्षयं नयेच्छीघ्रं पशुमित्रादिभिः सह। यक्षधूपं समानीय मन्त्रयेन्मूलमन्त्रतः ॥२६॥
शतमष्टोत्तरं चैव जपित्वा पूर्वमेव च। शनैः शनैर्धूपयेच्च जपन्नष्टोत्तरं शतम् ॥२७॥
त्रिदिनैः पञ्चदिवसैश्चतुर्भिर्म्रियते ध्रुवम्। शत्रुमारणकार्येषु प्रोक्तसंख्याजपात् प्रिये ॥२८॥
दृश्यते धूम आद्यन्तमाश्चर्यकरमेव च। तदानीमेव तच्छत्रुर्मृतवानिति निश्चितम् ॥२९॥
एवं सिद्धमनुर्देवि दुर्लभो भुवि पार्वति। न वक्तव्यं न वक्तव्यं न वक्तव्यं कदाचन ॥३०॥
धूम्रधूसरवान् देवि रसमांसप्रिये शिवे। शत्रुमारणकार्येषु ध्यायेत् क्रोडमुखीं ततः ॥३१॥

धूम्र वाराही—कालमृत्युतन्त्र में देवी ने ईश्वर से कहा है कि हे कालरुद्र! आपको प्रणाम है। आप ही काल के आधार हैं; अतः आपको प्रणाम है। अब कृपा करके धूम्रवाराही के मन्त्र योग को मुझसे कहिये। ईश्वर ने कहा कि इसे कालमृत्यु इसलिये कहते हैं कि यह प्राणियों के प्राणों का अपहरण करने वाली है। यह मारण अस्त्र सभी तन्त्रों में गोपित है। अब मैं धूम्रवाराही,

मन्त्रोद्धार, न्यास के ध्यान, यन्त्र एवं प्रयोग को कहता हूँ। पच्चीस अक्षरों का धूम्रवाराही मन्त्र इस प्रकार का है—ॐ धूं धूं मृत्युधूमे धूं धूं कालधूमे धूं धूं धूम्रवाराहि हुं फट् स्वाहा। इसके ऋषि कालमृत्यु, छन्द बृहती एवं देवता धूम्रवाराही हैं शत्रुमारण के लिये इसका विनियोग: होता है। धूं बीज, हूं शक्ति और ॐ कीलक है। इसका अंग न्यास मन्त्र के ७, ६, २, ४, २, ३ अक्षरों से किया जाता। अनुलोम एवं विलोम वर्ण न्यास करने से न्यासकर्ता साक्षात् देवीस्वरूप हो जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

वाराही धूम्रवर्णा च भक्षयन्ती रिपून् सदा। पशुरूपान् मुनिसुरैर्वन्दितां धूम्ररूपिणीम्।।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद उक्त मन्त्रराज का जप दश हजार करे। शुद्ध जल से तर्पण करे। चन्दनादि से पूजा करे। जप का दशांश हवन और जप का ही दशांश तर्पण करने का यहाँ नियम है।

त्रिमधुरात्त गुड़ भात से दशांश हवन करे अथवा महुआ के फूलों से हवन करे। जप का दशांश तर्पण करे। ब्राह्मणभोजन कराये। इस तरह के अनुष्ठान से मान्त्रिकों को मन्त्रसिद्धि प्राप्त होती है। तदनन्तर इसके अलौकिक प्रयोग से शत्रुओं का निवारण करे। धूम्ररूपिणी वाराही का ध्यान करते हुये शत्रु नामगर्भित मन्त्र का तीन हजार जप करने पर देवी धूम्र रूप में आकर शत्रुओं को खा जाती है। शत्रु और शत्रुसेना को धुएँ से घिरकर व्याकुल होने का ध्यान करके दश हजार जप करे तो मृत्युग्रस्त होकर शत्रु का नाश हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

घर के रसोई घर के धुएँ में चारनाल मिलाकर एक सौ जप से लोहपात्र में रखकर मन्त्रित करे। उसका बिन्दु मात्र अंश वैरी के खाने-पीने के पदार्थों में मिला दे। उसे यत्न से वैरी को खिलाये-पिलाये तो शत्रु की मृत्यु अवश्य होती है। अथवा चारनाल को गोबर में छिपा दे तो बड़े से बड़ा शत्रु भी तापज्वर से मर जाता है। एकाग्र होकर देवी का ध्यान करके तीन हजार जप इस मन्त्र का करे तो बाहर सौ योजन दूर स्थित शत्रु भी एक पक्ष में मर जाता है। गृहधूम विष गान्धारी रस को मिलाकर भेदन करके कल्क बनावे। उससे गोली बनावे। उसकी पूजा उपचारों से करके वैरी के प्राणों को निवेदित करके दो हजार जप करने से ही शत्रु नष्ट हो जाता है। वाराही का चिन्तन धूमरूप में करे और उसमें शत्रु को स्थित देखे। शत्रु के संक्षुभित होने का चिन्तन करते हुए नित्य एक सौ आठ जप करे तो चालीस दिनों में पत्नी-बन्धुसमन्वित शत्रु वर्ग अपने कुल-पशु-मित्रादि सहित नष्ट हो जाता है। यक्षधूप को लाकर उसे मूल मन्त्र के एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे। उससे एक सौ आठ बार मन्त्र बोलकर धूप देवे। ऐसा तीन दिन, चार दिन या पाँच दिन तक करने से शत्रु अवश्य ही मर जाता है। शत्रुमारण कर्म के लिये विहित संख्या में जप करने से आद्यन्त आश्चर्यजनक धुआँ दिखायी पड़ता है, उससे शत्रु की मृत्यु अवश्य हो जाती है। इस प्रकार देवी का सिद्ध मन्त्र संसार में दुर्लभ है। इसे किसी से नहीं कहना चाहिये। धूम्रधूसर रूप की देवी को रस-मांस अत्यन्त प्रिय हैं। शत्रु के मारण कर्म में उसका ध्यान वराहमुख का करना चाहिये।

धूम्रवाराहीयन्त्रप्रयोग:

देव्युवाच

नम: कैलासनाथाय करुणाकर शङ्कर। अधुना धूम्रवाराह्या यन्त्रयोगं वद प्रभो।।३२।।

ईश्वर उवाच

बिन्दुत्रिकोणं षट्कोणमष्टपत्रं कुलेश्वरि। वृत्तं च भूपुरद्वन्द्वमष्टवज्रसमन्वितम्।।३३।।
बिन्दुमध्ये लिखेद् देवि धूंकार: यत्नत: प्रिये। ग्लौंकारेण च संवेष्ट्य पश्चाद् धूंकारत: प्रिये।।३४।।
त्रिकोणे विलिखेद्वर्णान् वाराहीति त्रिमन्त्रितान्। षट्कोणे विलिखेद्वर्णान् वाराहीति षडक्षरी।।३५।।
कोणरन्ध्रेषु गिरिजे धूंकारं च यथाक्रमम्। अष्टपत्रे लिखेद् देवि वाराह्यष्टाक्षरं तथा।।३६।।
केसरेषु च पूर्वादि षोडशस्वरयुग्मकान्। आद्ये वृत्ते लिखेन्मन्त्रं धूम्रवाराहिभाषितम्।।३७।।
द्वितीयवृत्ते विलिखेदस्त्रवाराहिगं मनुम्। तृतीयवृत्ते विलिखेत् प्राणस्थापनगं मनुम्।।३८।।
अष्टवज्रेषु विलिखेत् कचटाद्यष्टवर्गकान्। एवं यन्त्रवरं देवि लिखेत् कार्यानुसारत:।।३९।।

स्वर्णे वा रजते वापि शान्तिवश्येषु संलिखेत्। पाषाणे स्तम्भने पत्रे लिखेदुच्चाटकर्मणि ॥४०॥
पत्रे विभीतपत्रे।

ताम्रे विद्वेषकार्येषु मारणे प्रेतवस्त्रके। एवं यन्त्रवरं सम्यग् लिखेद् ग्रन्थोक्तमार्गतः ॥४१॥
आशु प्रयोगाः सकलाः संभवन्ति न संशयः। स्वर्णपट्टे लिखेद्यन्त्रं वश्यकार्ये विशेषतः ॥४२॥
पूजयेद्रक्तपुष्पैस्तु परमान्नं निवेदयेत्। त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्रं शुचिर्भूत्वा तु नित्यशः ॥४३॥
मातृकान्तरितं साध्यं वाराहीमुक्तमार्गतः। मण्डलं चैव गिरिजे भक्त्याप्येवं समाचरेत् ॥४४॥
कुबेरसदृशः श्रीमाञ्जायते नात्र संशयः। पाषाणादौ लिखेद्यन्त्रं पत्रे धूम्रमयी प्रिये ॥४५॥
वाराही नाम सा देवी पूजयेत्तां यथाविधि। विद्वेषणमथोच्चाटं यद्यन्मनसि वर्तते ॥४६॥
तत्तदाप्नोति पक्षे तु नित्यमष्टोत्तरं जपेत्। प्रेतवस्त्रे लिखेद्यन्त्रं प्रेताङ्गारेण बुद्धिमान् ॥४७॥
यमकण्टकयोगे तु लिखेद्यमदिशामुखः। भौमवारे खनेद्यत्नाद्वने गर्तमतन्द्रितः ॥४८॥
गोपयेत् तत्र तद्यन्त्रं बलिं दद्याद्गुडौदनैः। जपेदष्टसहस्रं तु मन्त्री निशि दिगम्बरः ॥४९॥
अष्टसहस्रम् अष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः।

शतयोजनगः शत्रुः संगच्छेद्यममन्दिरम्। पूर्वोक्तविधिना देवि यन्त्रं प्रेतपटे लिखेत् ॥५०॥
निक्षिपेच्छत्रुगेहे तु स शत्रुर्नावशिष्यते। काकोलूकदले चैव रज्जुनापि च वेष्टयेत् ॥५१॥
त्रिसप्तमूलमन्त्रेण वेष्टयित्वा तु भौमके। स्थापयेच्छत्रुगेहे तु जपेदष्टसहस्रकम् ॥५२॥
काकवद् भ्रमते शत्रुस्तिरस्कारेण संयुतः।

धूम्रवाराही का मन्त्र-प्रयोग—श्री देवी ने कहा कि हे कैलासनाथ करुणाकर शंकर! आपको नमस्कार है। अब मुझे धूम्रवाराही के मन्त्रयोग को बतलाइये। ईश्वर ने कहा कि देवी का पूजन करने लिये चाहिये। बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, अष्टपत्र, वृत्त, दो भूपुर एवं आठ वज्रों से युक्त यन्त्र बनावे। उसके मध्य में 'धूं' लिखे। उसे ग्लौं से वेष्टित करे। उसे तब धूं से वेष्टित करे। त्रिकोण में वाराही के तीन अक्षरों को लिखे। षट्कोण में वाराही-वाराही—इन छः अक्षरों को लिखे। षट्कोणों के बीच में यथाक्रम 'धूं' लिखे। अष्ट पत्र में अष्टाक्षर वाराही—ऐं ग्लौं ठं ठं ठं हूं स्वाहा—इन आठ अक्षरों को लिखे। आठ पत्रों के केसर में सोलह स्वर वर्णों के दो-दो वर्णों को लिखे; जैसे—अं आं, इं ईं। प्रथम वृत्त में धूम्रवाराही मन्त्र लिखे। दूसरे वृत्त में अस्त्रवाराही मन्त्र लिखे। तृतीय वृत्त में प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र लिखे। आठ वज्रों में अ क च ट प य श—इस अष्टवर्ग के वर्णों को लिखे। स्तम्भन के लिये पत्थर पर यन्त्र बनावे। उच्चाटन के लिये लिसोड़े के पत्ते पर बनावे। विद्वेषण में ताम्र पत्र पर एवं मारण कर्म मे प्रेत वस्त्र पर ग्रन्थोक्त मार्ग से यन्त्र बनावे। सभी प्रयोग तुरन्त फल देने वाले अवश्य होते हैं। वश्य कार्य लिये विशेषकर यन्त्र स्वर्ण पत्र पर बनावे। लाल फूलों से उसकी पूजा करे। परमान्न का नैवेद्य अर्पण करे। प्रतिदिन पवित्र होकर तीन हजार मन्त्र जप करे। अक्षमाला पर साध्य नाम के साथ वाराही मन्त्र का जप करे। चालीस दिनों तक भक्तिसहित ऐसा करे इससे साधक कुबेर के समान धनी हो जाता है। यन्त्र पत्थर पर या धूम्र वर्ण के पत्ते पर लिखे। यथाविधि वाराही देवी की पूजा करे। इससे विद्वेषण, उच्चाटन या जो-जो मन में आकांक्षा हो, उन सबों की प्राप्ति पन्द्रह दिनों तक एक सौ आठ जप से होती है। मुर्दे के वस्त्र पर चिता के कोयला से यमकण्टक योग में दक्षिण के तरफ मुख करके यन्त्र लिखे। मंगलवार में जंगल के गर्त में उस यन्त्र को गाड़ दे। उसे गुप्त रखकर गुड़-भात की बलि दे। नंगे होकर एक हजार आठ जप रात में करे तो इससे सौ योजन दूर अवस्थित शत्रु भी यमलोक चला जाता है अर्थात् मर जाता है।

पूर्वोक्त विधि से यन्त्र को मुर्दे के कपड़े पर लिखे। उसे शत्रु के घर में फेंक दे तो शत्रु नहीं बचता। कौआ और उल्लू के पंखों को तीन या सातमूल मन्त्र से वेष्टित करे। मंगलवार में शत्रु के घर में उसे स्थापित करके एक हजार आठ जप करे। ऐसा करने से शत्रु कौए के समान तिरस्कृत होकर भ्रमण करने लगता है।

अस्त्रवाराहीमन्त्रः

पूर्वोक्तधूम्रवाराहीमन्त्रे धूंधूमपास्य च ॥५३॥
फट्द्वयं तु समायोज्य धूमरूपे च संलिखेत् । धूम्राक्षरद्वयं हित्वा चास्त्रेति विनियोजयेत् ॥५४॥
अस्त्रवाराहिमन्त्रोऽयं चतुर्विंशतिवर्णकः ।
'ॐफट्फट् मृत्युरूपे फट्फट् कालरूपे फट्फट् अस्त्रवाराहि हुं फट् स्वाहा'।

पूर्वोक्ता एव मुन्याद्याः साधनं पूर्ववच्चरेत् । निग्रहोक्तसपर्यात्र विशोषोच्चाटने मता ॥५५॥
नमस्ते अस्त्रवाराहि वैरिप्राणापहारिणि । गोकण्ठमिव शार्दूलो गजकण्ठं यथा हरिः ॥५६॥
शत्रुरूपपशून् हत्वा आशु मांसं च भक्षय । वाराहि त्वां सदा वन्दे वन्द्ये चास्त्रस्वरूपिणि ॥५७॥
इति ध्यानविशेषः।

अस्त्रवाराही मन्त्र—अस्त्र वाराही का चौबीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ फट् फट् मृत्युरूपे फट् फट् कालरूपे फट् फट् अस्त्रवाराहि हुं फट् स्वाहा।

इसके ऋषि आदि पूर्ववत् ही हैं। इसकी साधना भी पूर्ववत् ही करनी चाहिये। उच्चाटक कर्म के लिये इसकी निग्रहवाराही के समान पूजा करनी चाहिये। इस अस्त्र वाराही की वन्दना इस प्रकार करे—

नमस्ते अस्त्रवाराहि वैरिप्राणापहारिणि। गोकण्ठमिव शार्दूलो गजकण्ठं यथा हरिः।।
शत्रुरूपपशून् हत्वा आशु मांसं च भक्षय। वाराहि त्वां सदा वन्दे वन्द्ये चास्त्रस्वरूपिणि।।

अन्धिनीपञ्चकोपेता पञ्चमीति निगद्यते । अन्धिनीपञ्चकोपेता वाराही शस्यते बुधैः ॥५८॥
पञ्चमी स्तम्भने शस्ता वाराही वश्यकर्मणि । वाराहीयुगलं चैव वाराहमुखियुग्मकम् ॥५९।
हित्वा वार्तालिसंज्ञा स्यात् सारस्वतविधायिनी । वाराहीतियुगं हित्वा सा विश्वविजयाभिधा ॥६०॥
रणे राजकुले द्यूते सर्वत्र जयदायिनी । वाराहमुखियुग्मं तु हित्वा स्याद्भद्रकौमुदी ॥६१॥
संपत्प्रदा सा गदिता विद्या वैश्रवणार्चिता । वार्तात्यादिकमेकैकं हित्वा स्यात् सर्वतोमुखी ॥६२॥
आकर्षणे मोहने च प्रशस्ता वश्यकर्मणि ।

'अन्धे अन्धिनि' के पाँच वर्णो से पञ्चमी बनती है। इस वाराही की प्रशंसा विद्वान् करते हैं। पञ्चमी स्तम्भन में उत्तम है। वश्यकर्म में वाराही श्रेष्ठ है। वाराही मन्त्र के ११४ अक्षरों में से 'वाराहि वाराहि वराहमुखि वराहमुखि' छोड़ने पर यह वार्तालि नाम की विद्या सारस्वत-विधायिनी है। 'वाराहि वाराहि' दो पदों को छोड़ने पर यह विश्वविजया नामक विद्या राजदरबार, युद्ध और जुए में जयदायिनी होती है। 'वराहमुखि वराहमुखि' दो पदों का छोड़ने पर इसका नाम भद्रकौमुदी हो जाता है। यह कुबेरोपासिता विद्या सम्पत्प्रदा के नाम से विख्यात है। वार्तालि आदि एक-एक को छोड़ने पर इसे सर्वतोमुखी कहते हैं। यह आकर्षण, मोहन और वशीकरण में प्रशस्त कही गई है।

स्वप्नवाराहीमन्त्रः

वक्ष्ये श्रीस्वप्नवाराहीं शीघ्रसिद्धिविधायिनीम् ॥६३॥
प्रणवं भुवनेशीं च नमो वाराहि चोच्चरेत् । अघोरेश्वरिशब्दान्ते स्वप्नं ठद्वयमुद्धरेत् ॥६४॥
'ॐह्रीं नमो वाराहि अघोरेश्वरि स्वप्नं ठठस्वाहा' (१८)।

स्वाहान्तोऽयं महामन्त्रोऽष्टादशाक्षरवर्णवान् । ईश्वर ऋषिराख्यातो गायत्रं छन्द ईरितम् ॥६५॥
देवी श्रीस्वप्नवाराही देवता परिकीर्तिता । बीजं तु प्रणवं चैव स्वाहा शक्तिरुदाहृता ॥६६॥
मायाबीजं कीलकं स्याद् द्वाभ्यां द्वाभ्यां त्रिभिस्ततः । पञ्चभिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यामङ्गक्रिया मनोः ॥६७॥

पज्जानुकटिकण्ठेषु गण्डाक्षिश्रुतिनासिके। मस्तके तु प्रविन्यस्येद् विद्यां पञ्चदशाक्षरीम् ॥६८॥
अत्र प्रणवं मायां च विना सन्धिं कृत्वा पञ्चदशाक्षिरमित्यर्थः।

नीलाञ्जनगिरिश्यामां हेमरत्नविभूषिताम्। अश्वारूढां च वाराहीं पाशाङ्कुशधरां शुभाम् ॥६९॥
भीमरूपां महादेवीं खड्‌गखेटकधारिणीम्। चतुर्भुजां तीक्ष्णदंष्ट्रां दंष्ट्राग्रस्थवसुन्धराम् ॥७०॥
दुष्टसंहरणोद्युक्तां साधकस्य वरप्रदाम्।
ध्यायेदञ्जनभूधरोज्ज्वलनिभामश्वाधिरूढां करैर्बिभ्राणां मणिहेमभूषिततनुं पाशाङ्कुशौ भैरवीम्।
खड्‌गं खेटकमग्रदंष्ट्रविलसत्पृथ्वीमरिध्वंसिनीं देवीं तुङ्गपयोधरामनुदिनं श्रीस्वप्नवाराहिकाम् ॥७१॥
एवं ध्यात्वा यजेद् देवीं प्राक्प्रोक्तविधिना सुधीः।
प्रागुक्तस्तम्भनवाराहिपूजनमत्रापि कुर्यादित्यर्थः।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ईश्वरऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीस्वप्नवाराहीदेवतायै नमः। गुह्ये ॐबीजाय नमः। पादयोः स्वाहाशक्तये नमः। नाभौ ह्रींकीलकाय नमः। इति विन्यस्य, ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐह्रींहृदयाय नमः। नमो शिरसि०। वाराहि शिखा०। अघोरेश्वरि कवचा०। स्वप्नं ठठ नेत्रत्रयाय०। स्वाहा अस्त्राय फट्। इति, एवं करषडङ्गन्यासं विधाय, पादद्वय-जानुद्वय-कटिद्वय-कंठगण्डद्वयाक्षिद्वय-श्रुतिद्वय-नासिकाद्वयमस्तकेषु पञ्चदशाक्षराणि विन्यस्य, प्रणवमायासहितमूलेन सर्वाङ्गे व्यापकं विन्यस्य, ध्यानमानसपूजान्ते भुवनेश्वरीपीठमभ्यर्च्य स्तम्भवाराह्युक्तपूजां विदध्यात्। तथा—

जपेच्च वर्णसाहस्रं पुरश्चरणसिद्धये। दशांशं जुहुयाद् देवि तापिच्छैरुत्पलैः शुभैः ॥७२॥
जलैर्वा तर्पयेद् देवीं दशांशैर्नारिकेलजैः। भूतं भव्यं भविष्यं च स्वप्ने कथयति ध्रुवम् ॥७३॥
इति वाराहीप्रकरणम्।

स्वप्नवाराही—शीघ्र सिद्धि देने वाली स्वप्नवाराही का मन्त्र है—ॐ ह्रीं नमो वाराहि अघोरेश्वरि स्वप्नं ठः ठः स्वाहा। इसमें अट्ठारह अक्षर होते हैं। इसके ऋषि ईश्वर, छन्द गायत्री और देवी श्रीस्वप्नवाराही देवता है। ॐ बीजस्वाहा शक्ति और ह्रीं कीलक है। मन्त्र के २, २, ३, ५, ४, २ वर्णों से अंग न्यास किया जाता है। पञ्चदशाक्षरी मन्त्र 'ॐ ह्रीं नमो वाराह्यघोरेश्वरि स्वप्नं ठः ठः स्वाहा' से पद जानु कटि कण्ठ गाल आँख, कान, नाक, मस्तक, पन्द्रह स्थानों में वर्णन्यास करने के बाद इस प्रकार ध्यान किया जाता है।

नीलाञ्जनगिरिश्यामां हेमरत्नविभूषिताम्। अश्वारूढां च वाराहीं पाशाङ्कुशधरां शुभाम्।।
भीमरूपां महादेवीं खड्‌गखेटकधारिणीम्। चतुर्भुजां तीक्ष्णदंष्ट्रां दंष्ट्राग्रस्थवसुन्धराम्।।
दुष्टसंहरणोद्युक्तां साधकस्य वरप्रदाम्। ध्यायेदञ्जनभूधरोज्ज्वलनिभामश्वाधिरूढां-
करैर्विभ्राणां मणिहेमभूषिततनुं पाशाङ्कुशौ भैरवीम्।
खड्‌गं खेटकमग्रदंष्ट्रविलसत्पृथ्वीमरिध्वंसिनीं देवीं तुङ्गपयोधरामनुदिनं श्रीस्वप्नवाराहिकाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके पूर्वोक्त विधि से देवी की पूजा करे। पूर्वोक्त स्तम्भन वाराही पूजन के समान यहाँ भी पूजा करे। प्रातःकृत्य से योगिनीपीठन्यास तक की क्रिया करने के वाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम कर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ईश्वर ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीस्वप्नवाराहीदेवतायै नमः। गुह्ये ॐ बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः, नाभौ ह्रीं कीलकाय नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार अंग न्यास करे—ॐ ह्रीं हृदयाय नमः। नमो शिरसि स्वाहा। वाराही शिखायै वषट्। अघोरेश्वरि कवचाय हुं स्वप्नं ठ ठ नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। इसके बाद मन्त्रवर्ण न्यास करे। मन्त्र के पन्द्रह वर्णों का न्यास दोनों पैरों, दोनों

जानुओं, कमर के दोनों ओर, कण्ठ, दोनों गालों, दोनों आँखों, दोनों कानों, दोनों नासाछिद्रों और मस्तक पर करे। प्रणव माया सहित मूल मन्त्र से सर्वांग में व्यापक न्यास करे। ध्यान एवं मानस पूजा करे। तब भुवनेश्वरी पीठ का अर्चन करे। तब स्वप्न वाराही का विहित पूजन करे।

पुरश्चरण की सिद्धि के लिये वर्णसाहस्र अर्थात् अट्ठारह हजार मन्त्र-जप करे। दशांश हवन शुभ्र तापिच्छ उत्पल से करे। नारियल जल से दशांश तर्पण करे। इससे देवी भूत भव्य एवं भविष्य को स्वप्न में अवश्य कहती है।

शवरीमन्त्रोद्धारः

अथ शवरीमन्त्रः—

वदाम्याकर्षिणीं विद्यां शीघ्रसिद्धिविधायिनीम्। बकेशोऽनन्तसंयुक्तबिन्दुभूषितमस्तकः ॥१॥
अद्रीशस्तादृशो ज्ञेयोऽप्यथ शावरिशक्तिकौ। ङेन्तौ हृदन्तो मन्त्रोऽयं नवार्णः परिकीर्तितः ॥२॥

'शांदांशवर्य्यै शक्त्यै नमः'।

जाबालिरस्यर्षिः प्रोक्तोऽनुष्टुप् छन्दः प्रकीर्तितम्। शवरी देवता प्रोक्ता शां बीजं दां च शक्तिकम् ॥३॥
आकर्षयाकर्षयेति कीलकं परिकीर्तितम्। शांदां शींदीमिति न्यस्येत् षड्दीर्घस्वरयुक्तितः ॥४॥
रक्तवर्णां बद्धसाध्यां पाशेनानीय तं क्षणात्। वरप्रदां महादुर्गां शवरीं शरणं भजे ॥५॥
अष्टलक्षं जपित्वान्ते पलाशकुसुमैर्हुनेत्। ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद् दीनान्धकृपणैः सह ॥६॥
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रः प्रयोगेषु क्षमः सदा। स्फटिकाक्षस्रजा जप्यात् प्रयोगेऽप्ययुतं सुधीः ॥७॥
नववर्णान्तिके दद्यात् तमाकर्षय-युग्मकम्। शतयोजनगं साध्यं शीघ्रमाकर्षयेद् ध्रुवम् ॥८॥
कांमामिति समुच्चार्य शवरान्ते च देवताम्। ङेन्तां विलिख्य शक्त्यै तमुच्चाटययुगं ततः॥९॥
वह्निजायान्वितो मन्त्र एकविंशार्णकस्तथा।

'कामां शवरदेवतायै शक्त्यै तमुच्चाटयोच्चाटय स्वाहा' (२१)।

जाबालिरस्यर्षिः प्रोक्तो बृहती छन्द ईरितम्। कादम्बर्य्यादिदुर्गा च देवता परिकीर्तिता ॥१०॥
कां बीजं मां तथा शक्तिरुच्चाटययुगं तथा। कीलकं च तथा प्रोक्तं कांमामित्यादिनाङ्गकम् ॥११॥
निःश्वासोत्थमहावातैः शत्रून् देशान्तरे क्षिपन्। नृत्यन्तीं मुक्तकेशान्तां धूम्रवर्णां भजेच्छुभाम् ॥१२॥
मासद्वयं लक्षषट्कं जपित्वान्तेऽर्कपुष्पकैः।

अत्र दशांशं हुत्वाष्टादशमिथुनानां भोजनं देयम्। साध्यप्रतिकृतिं विलिख्य हृदये ककारं विलिख्य शिरआदिपादान्तं वायुबीजसाध्यनामसहितमूलमन्त्राक्षराणि विलिख्य, अप्रादक्षिण्येन वेष्टयित्वा स्नुहीक्षीरेण विलिप्य, वीथीस्थपांसुना स्नुहीदण्डेनोरू बद्ध्वा दृष्ट्वा जपेत्। ततस्तं दग्ध्वा तद्भस्म हुनेत् सिद्धिर्भवति।

शवरी मन्त्र—अब मैं शीघ्र सिद्धि देने वाली आकर्षिणी विद्या को कहता हूँ। 'शां दां शवर्यै शक्त्यै नमः' यह नवार्ण शवरी है। इस मन्त्र के ऋषि जाबालि, छन्द अनुष्टुप्, देवता शवरी, बीज शां, शक्ति दां एवं आकर्षय आर्कषय कीलक है। इसका अंगन्यास शांदां, शीं दीं, शूं दूं, शैं, दैं, शौं दौं, शः दः से करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तवर्णां बद्धसाध्यां पाशेनानीय तं क्षणात्। वरप्रदां महादुर्गां शवरीं शरणं भजे ।।५।।

आठ लाख जप के बाद पलाश के फूलों से दशांश हवन करे। ब्राह्मणों को भोजन कराकर गरीबों, अन्धों, कृपणों को भोजन कराये। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध होकर प्रयोगों के लिये सक्षम होता है। प्रयोग में दश हजार जप स्फटिक की माला या अक्ष माला से करे।

आकर्षण के लिये नवार्ण के बाद आकर्षय आकर्षय योजित करे। जैसे—'शां दां शवर्यै शक्त्यै नमः आकर्षय आकर्षय। इससे सौ योजन दूर रहने वाला भी निश्चित ही आकर्षित होता है।

शवरी का उच्चाटन कर्म में प्रयुक्त होने वाला कां मां शवरदेवतायै शक्त्यै तमुच्चाटयोच्चाटय स्वाहा। इसमें इक्कीस वर्ण होते हैं। इसके ऋषि जाबालि, छन्द बृहती, देवता कादम्बरी आदि दुर्गा, कां बीज, मां शक्ति एवं उच्चाटय उच्चाटय कीलक हैं। कां मां कीं मीं इत्यादि से अंगन्यास किया जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार है—

निःश्वासोत्थमहावातैः शत्रून् देशान्तरे क्षिपन्। नृत्यन्तीं मुक्तकेशान्तां धूम्रवर्णां भजेच्छुभाम्।।

दो महीनों में छः लाख जप करे। तब अकवन के फूलो से हवन करे। दशांश हवन के बाद अट्ठारह जोड़ियों को भोजन कराये। साध्य की प्रतिकृति बनाकर उसके हृदय में 'क' लिखे। शिर से पैरों तक वायुबीज यं एवं साध्य नाम के साथ मूल मन्त्र के अक्षरों को अप्रादक्षिण्य क्रम से लिखकर वेष्टित करे। स्नुही के दूध से उसमें लेप लगाये। वीथी में स्थित धूलि से स्नुही के डंडे को उरु में बाँधे और उसे देखते हुए जप करे। तब उसे जलाकर उसके भस्म से हवन करने से सिद्धि होती है।

कर्णपिशाचिनीमन्त्रः

अथ कर्णपिशाचिनीमन्त्रः। तदुक्तं तन्त्रान्तरे—

तारं च भुवनेशानी ततः कर्णपिशाचिनि। कर्णे मे कथय स्वाहा मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः ।।१।।

'ॐह्रींकर्णपिशाचिनि कर्णे मे कथय स्वाहा' (१६)।

पिप्पलाद ऋषिश्छन्दो निचृद्गायत्रसंज्ञकम्। देवता कथिता सद्भिर्देवी कर्णपिशाचिनी ।।२।।
एकैकरसवह्न्यग्निनेत्रवर्णैः षडङ्गकम्। कुर्यान्मन्त्रस्य वर्णैश्च ध्यायेत् कर्णपिशाचिनीम् ।।३।।
चितासनसमारूढां मुण्डमालाविभूषिताम्। प्रोतान् नरान्त्रास्थिमणीन् धारयन्तीं कुवस्त्रकाम् ।।४।।
एवं ध्यात्वा श्मशानस्थः शवस्थो वा जपेन्मनुम्। लक्षसंख्यं दशांशेन विभीतकसमिद्वरैः ।।५।।
हुनेत् पूर्वोदिते पीठे चाङ्गदिक्पालहेतिभिः। यजेत् सिद्धे मनौ कुर्याज्जपं लक्षं समाहितः ।।६।।
अशुचिर्बदरीवृक्षाधस्तात् तुष्टा पिशाचिनी। परचित्तस्य वार्तां च त्रिकालस्थां वदेच्छ्रुतौ ।।७।। इति।

कर्णपिशाची मन्त्र—तन्त्रान्तरों में कर्णपिशाचिनी का मन्त्र इस प्रकार कहा गया है—ॐ ह्रीं कर्णपिशाचिनि कर्णे में कथय कथय स्वाहा। इसमें सोलह अक्षर होते हैं। इसके ऋषि पिप्पलाद, छन्द निचृद्गायत्री और देवता देवी कर्णपिशाचिनी हैं। मन्त्र के १,१,६,३,३,२ अक्षरों से षडङ्ग न्यास करके कर्णपिशाचिनी का इस प्रकार ध्यान करे—

चितासनसमारूढां मुण्डमालाविभूषिताम्। प्रोतान् नरान्त्रास्थिमणीन् धारयन्तीं कुवस्त्रकाम्।।

इस प्रकार का ध्यान करके श्मशान में बैठकर या शव पर बैठकर एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन बहेरा वृक्ष की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में करे। पूर्वोक्त पीठ पर अंगदेवता, दिक्पालों और उनके आयुधों की पूजा करे। सिद्ध मन्त्र का एक लाख जप अपवित्र अवस्था में वैर वृक्ष के नीचे बैठकर करे। इससे सन्तुष्ट पिशाचिनी दूसरों के मन की तीनों कालों की बातों को आकर कान में कहती है।

कर्णपिशाचिनीमन्त्रान्तरम्

मन्त्रान्तरं तन्त्रान्तरे—

कर्णात् सेक्षणलोहितो बकगतोऽनन्तश्चिकारो वदातीतानागतशब्दयुक्तभुवनेशी वह्निजायान्विता ।
ताराद्यो मनुरेष लक्षजपतो व्यासेन संसेवितः सार्वज्ञ्यं लभतेऽचिरेण नियतं पैशाचिकीभक्तितः ।।१।।

'ॐकर्णपिशाचि वदातीतानागतं ह्रीं स्वाहा (१६)। ध्यानम्—

खर्वां रक्तविलोचनां घननिभश्यामां च लम्बोदरीं बन्धूकारुणजिह्विकां वरकराभीयुक्करामुन्मुखीम् ।
धूम्रार्चिर्जटिलां कपालविलसत्पाणिद्वयां चञ्चलां सर्वज्ञां शवहृत्कृताधिवसतिं पैशाचिकीं तां नुमः ।।२।। इति।

कर्णपिशाचिनी का अन्य मन्त्र—कर्णपिशाचिनी का दूसरा मन्त्र है—ॐ कर्णपिशाचि वदातीतानागतं ह्रीं स्वाहा। सोलह अक्षरों का यह मन्त्र है। व्यास के द्वारा सेवित इस मन्त्र के एक लाख जप से थोड़े ही दिनों में पिशाचिनी की भक्ति

करके साधक सर्वज्ञता प्राप्त करता है। इसका ध्यान इस प्रकार है—

खर्वां रक्तविलोचनां घननिभश्यामां च लम्बोदरीं बन्धूकारुणजिह्विकां वरकराभीयुक्करामुन्मुखीम्।
धूम्रार्चिर्जटिलां कपालविलसत्पाणिद्वयां चञ्चलां सर्वज्ञां शवहत्कृताधिवसतिं पैशाचिकीं तां नुम:।।

कर्णपिशाचिनीपूजाप्रयोग:

अथ पूजा—

निशायामर्धरात्रे च हृदि न्यस्य पिशाचिकीम्। दग्धमीनबलिं दद्याद्रात्रौ संपूज्य संजपेत्।।

'ॐ कर्णपिशाचि दग्धमीनबलिं गृह्ण २ मम सिद्धिं कुरु 'स्वाहा' इति दग्धमीनबलिं दद्यात्।

रक्तचन्दनबन्धूकजपापुष्पादिकं च यत्। अमृतं कुरु देवेशि स्वाहेति प्रोक्षयेज्जलै:।।

पूर्वाह्ने किञ्चिज्जपं कृत्वा मध्याह्ने एकभक्तं निरामिषं भुक्त्वा रात्रावपि तत्संख्यं जपेत्। जपस्य दशांशं तर्पणम्। 'ॐ कर्णपिशाचीं तर्पयामि ह्रीं स्वाहा' एवं क्रमेण लक्षमेकं पुरश्चरणं कृत्वा दशांशं होमयेत्। तदभावे दशांशतर्पणं कृत्वा वरं प्रार्थयेत्। मूलं रक्तचन्दनेन लिखित्वा यन्त्रोपरि इष्टदेवतां पूजयेत्।

पूजा—आधी रात में पिशाचिनी का न्यास हृदय में करके तली हुई मछलियों की बलि देकर पूजा करे और जप करे। बलि मन्त्र है—ॐ कर्णपिशाचि दग्धमीनबलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा। लाल चन्दन, बन्धूक, अड़हुल आदि के फूलों को 'अमृतं कुरु देवेशि स्वाहा' मन्त्र से जल से प्रोक्षित करे।

पूर्वाह्न में कुछ जप करके मध्याह्न में एक बार निरामिष भोजन करके रात में भी उतना ही जप करे। जप के बाद—'ॐ कर्णपिशाचीं तर्पयामि ह्रीं स्वाहा' मन्त्र से जप का दशांश तर्पण करे। एक लाख जप से पुरश्चरण करके दशांश हवन करे। उसके अभाव में दशांश तर्पण करके वर माँगे। लाल चन्दन से यन्त्र पर मूल मन्त्र लिखकर इष्टदेवता की पूजा करे।

कर्णपिशाचिनीसिद्धिलक्षणानि

अथ सिद्धिलक्षणमुच्यते—गगनमण्डले हूंकारादिश्रवणदीर्घाग्निशिखारूपसंदर्शनात् सिद्धिर्भविष्यतीति ज्ञात्वा तथाविधमाचरेत्।

कर्णपिशाचिनी-सिद्धि के लक्षण—इसकी सिद्धि के लक्षण हैं—आकाश में हूंकारादि का श्रवण अथवा लम्बी अग्निशिखा दर्शन होना।

कर्णपिशाचिनीमन्त्रविशेषा:

मन्त्रान्तरम्—प्रणवं मायाकर्णपिशाचि मे कर्णे कथय हुं फट् स्वाहा। इति प्रदीपतैलं पादयोर्दत्त्वा रात्रौ लक्षं जपेत्। तत: सर्वज्ञो भवति नास्य पूजाध्यानम्। तथा—'तारं कामबीजं जयादेवि स्वाहा' अस्यापि न्यासादेरभाव:। पूर्वं लक्षं जप्त्वा गृहगोधिकां निपात्य तदुपरि जयादेवीं यथाशक्ति संपूज्य तावज्जपेत् यावत्सा जीवति तत: सिद्ध्यति। सिद्धिस्तु—मानसादिप्रश्ने कृते सा आयाति तस्या: पृष्ठे सर्वं भूतभविष्यादिकं पश्यति। 'ॐ चारुचण्डालि चिरुचण्डालि स्वाहा' इति फलके भूमौ वा चाण्डालिरूपमालिख्य षोडशोपचारै: संपूज्य संध्यात्रयेऽष्टोत्तरशतं जपेत्। अष्टदिनावधि आकर्षणं भवति (१)। 'ॐ चिरुचण्डालि रुचिचण्डालि स्वाहा' इत्यभिलषितस्त्रीरूपं नामसहितं विलिख्योपचारै: संपूज्य पूर्ववदष्टोत्तरशतं जपेदाकर्षणं भवति (२)। 'ॐ नमो भगवति ललिताङ्गभूषिणि त्रिभुवनतिलकि सर्वजनवशंकरि ह्रींह्रांहूं स्वाहा' इत्यष्टोत्तरशतं जपेत् स्त्रीवश्यम् (३)। 'ॐ नमो भगवति शुचिचण्डालिनि श्मशानवासिनि स्वाहा' इति शयनसमये पश्चिमाभिमुखोऽष्टोत्तरशतं जपेत् आकर्षणं भवति। सा स्त्री नागता चेत्तद् देहे स्फोटका भवन्ति (४)। 'ॐह्रांहूंक्षींक्षींक्षूं रुक्षिरुघेरुघे स्वाहा' इति सप्तदिनानि नित्यमष्टोत्तरशतं जपेत् नारी समायाति (५)। 'ॐ हिरहन्त्रि ॐ नमो भगवति भूतेश्वरि मद्वलय्य मद्वलय्य हरेपुरहुंपुरकोल्ला भगवति रुद्राय स्वाहा' इति नागवल्लीदले स्त्रीनाम विलिख्य दीपशिखायां तापितं चेत् स्त्र्याकर्षणं भवति (६)। एते डामरोक्तमन्त्रविशेषा षड्भेदा:।

मन्त्रान्तर—ॐ ह्रीं कर्णपिशाचि मे कर्णे कथय हुं फट् स्वाहा। दीपक से तेल निकालकर उसे पैर के तलवों में लगाकर इस मन्त्र का रात में एक लाख जप करे। ऐसा करने से साधक सर्वज्ञ हो जाता है। इसमें पूजा-ध्यान आदि नहीं होते।

अन्य मन्त्र—'ॐ ह्रीं जया देवि स्वाहा'। इसमें भी न्यासादि नहीं होते। पहले एक लाख जप करे फिर घर की छिपकिली को पकड़कर उस पर जया देवी की यथाशक्ति पूजा करे। जब तक वह जीवित रहे तब तक उपर्युक्त मन्त्र जपता रहे। इससे मन्त्र सिद्ध होता है। इससे किसी के द्वारा मन से प्रश्न पूछने पर वह उसकी पीठ पर आकर सभी भूत-भविष्य को देखती है और बतलाती है। यही इसकी सिद्धि का लक्षण है।

अन्य मन्त्र—'ॐ चारुचण्डालि चिरुचण्डालि स्वाहा'। फलक या भूमि पर चाण्डालि का चित्र बनाकर उसकी षोडशोपचार पूजा करके तीनों सन्ध्याओं में इस मन्त्र का एक सौ आठ जप करे। तब आठ दिनों में साध्य का आकर्षण होता है।

अन्य मन्त्र—ॐ चिरुचण्डालि रुचिचण्डालि स्वाहा। अभिलषित स्त्री का चित्र बनाकर उसका नाम लिखकर उपचारों से पूजा करे इस मन्त्र का भी पूर्ववत् एक सौ आठ जप करे तो आकर्षण होता है।

अन्य मन्त्र—ॐ नमो भगवति ललितांगभूषिणि त्रिभुवनतिलकि सर्वजन वशंकरि ह्रीं ह्रीं ह्रूं स्वाहा। इसका एक सौ आठ जप स्त्री-वश्यकर होता है।

अन्य मन्त्र—ॐ नमो भगवति शुचिचण्डालिनि श्मशानवासिनि स्वाहा। सोने के समय पश्चिम की तरफ मुख करके इसके एक सौ आठ जप से आकर्षण होता है। साध्य स्त्री यदि नहीं आती है तो उसके शरीर में चेचक हो जाता है।

अन्य मन्त्र—ॐ ह्रां ह्रीं क्षीं क्षीं क्षूं रुक्षि रुघे रुघे स्वाहा। प्रतिदिन इसका एक सौ आठ जप करने से आकर्षित होकर नारी आ जाती है।

अन्य मन्त्र—ॐ हिरहत्रि ॐ नमो भगवति भूतेश्वरि मद्वलय्य मद्वलय्य हरेपुरहुंपुरकोल्ला भगवति रुद्राय स्वाहा। इस मन्त्र को पान के पत्ते पर लिखकर साध्य स्त्री का नाम लिखकर दीपशिखा पर तपाने से उस स्त्री का आकर्षण होता है। छः प्रकार के विशेष मन्त्र डामर में कहे गये हैं।

स्वप्नेश्वरीमन्त्रः

भूतडामरे—

प्रणवं कमलाबीजं स्वप्नेश्वरि पदं ततः। कार्यं मे वद शब्दान्ते वह्निजायान्तिको मनुः ॥१॥
'ॐ श्रीं स्वप्नेश्वरि कार्यं मे वद स्वाहा' (१३)।

त्रयोदशाक्षरो मन्त्रः स्वप्नेश्वर्याः फलप्रदः। उपमन्युर्ऋषिः प्रोक्तो बृहती छन्द एव च ॥२॥
स्वप्नेश्वरी देवता स्यादक्षिवेदाक्षिभूयुगैः। नेत्रार्णैश्च षडङ्गानि न्यस्य ध्यायेच्च देवताम् ॥३॥
वराभये पद्मयुग्मं दधतीं शुभ्रवाससम्। कनकासनमारूढां शरच्चन्द्रायुतप्रभाम् ॥४॥
रत्नभूषणभूषाढ्यां स्वप्नेशीं हृदि भावयेत्। लक्षसंख्यं जपित्वान्ते बिल्वपत्रैर्दशांशतः ॥५॥
जुहुयाद् भुवनेश्वर्याः पीठे देवीं समर्चयेत्। अङ्गदिक्पालवज्राद्यैरावृतित्रयसंयुताम् ॥६॥
रात्रौ देवीं समभ्यर्च्यायुतं देव्यग्रतो जपेत्। ततः शयीत भूमौ तु ब्रह्मचर्य्येण मन्त्रवित् ॥७॥
दर्भास्तरणके देव्यै स्वस्वकार्यं निवेदयेत्। स्वप्ने वदति सा देवी शुभाशुभफलं ध्रुवम् ॥८॥ इति।

स्वप्नेश्वरी मन्त्र—भूतडामर के अनुसार स्वप्नेश्वरी का मन्त्र है—ॐ श्रीं स्वप्नेश्वरि कार्यं मे वद स्वाहा। स्वप्नेश्वरी का तेरह अक्षरों का यह मन्त्र अभीप्सित फल को देने वाला है। इसके ऋषि उपमन्यु, छन्द बृहती और देवता स्वप्नेश्वरी हैं। मन्त्र के २,४,२,१२,२ अक्षरों से षडङ्ग न्यास सम्पन्न कर इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वराभये पद्मयुग्मं दधतीं शुभ्रवाससम्। कनकासनमारूढां शरच्चन्द्रायुतप्रभाम्।।
रत्नभूषणभूषाढ्यां स्वप्नेशीं हृदि भावयेत्।

इस मन्त्र का एक लाख जप कर दशांश हवन बेलपत्रों से करे। तदनन्तर भुवनेश्वरी पीठ पर देवी का अर्चन करे। अंगपूजन, लोकपाल और उनके आयुधों का पूजन करे। तीन आवरणों की यह पूजा होती है। रात में देवी की पूजा करके देवी के आगे बैठकर दश हजार जप करे। तब ब्रह्मचर्य रहकर साधक जमीन पर कुश की चटाई पर शयन करके देवी को अपने-अपने कार्यों को निवेदित करे। तब देवी निश्चित रूप से स्वप्न में शुभ या अशुभ फल बतलाती है।

शीतलामन्त्र:

अथ शीतलामन्त्र:—

तारं च भुवनेशानीं श्रीबीजं शीतलापदम्। यै नमोन्तो महामन्त्रो नववर्णात्मक: शिवे ॥१॥

'ॐ ह्रीं श्रीं शीतलायै नम:' (९)।

पूर्वोक्ता एव मुन्याद्या दीर्घषट्कयुजा तथा। शक्तिलक्ष्मीद्वयेनैव षडङ्गन्यासकल्पना ॥२॥
रक्ताम्बरां कराभ्यां च शूर्पं मार्जनिकां तथा। दधानां रासभस्थां च नीलजीमूतसंनिभाम् ॥३॥
रक्ताङ्गरागवसनां रक्तमाल्यविभूषिताम्। एवं ध्यायेच्छीतलां च रोगनाशाय सर्वदा ॥४॥
जपेदयुतसंख्याकं पायसेन दशांशत:। हुनेत् प्राग्वद्यजेद् देवीं स्फोटानां नाशनाय च ॥५॥
नाभिमात्रेऽम्भसि स्थित्वा सहस्रं प्रजपेन्मनुम्। तेन स्फोटामया: शीघ्रं विनश्यन्त्यतिदारुणा: ॥६॥ इति।

शीतला मन्त्र—देवी शीतला का नववर्णात्मक मन्त्र है—ॐ ह्रीं श्रीं शीतलायै नम:। इसके ऋषि आदि पूर्ववत् ही हैं। इसका षडङ्ग न्यास ह्रां श्रां ह्रीं श्रीं ह्रूं श्रूं ह्रैं श्रैं ह्रौं श्रौं ह्र: श्र: से करके प्रकार न्यास किया जाता है—

रक्ताम्बरां कराभ्यां च शूर्पं मार्जनिकां तथा। दधानां रासभस्थां च नीलजीमूतसंनिभाम्।।
रक्ताङ्गरागवसनां रक्तमाल्यविभूषिताम्।

शीतला का इस प्रकार का ध्यान रोगनाश के लिये सदा-सर्वदा करना चाहिये। एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन खीर से करे। चेचक के नाश के लिये देवी की पूजा पूर्ववत् करे। नाभि तक जल में खड़े होकर एक हजार जप करे। इससे देवी भयानक चेचक को भी शीघ्र समाप्त कर देती है।

कालरात्रिविधानम्

अथ कालरात्रिप्रकरणम्।

देव्युवाच

देव देव जगन्नाथ भक्तानामिष्टदायक। त्वत्प्रसादान्मया सर्वं श्रुतं मन्त्रसमुच्चयम् ॥१॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कालरात्रिविधानकम्। मन्त्रयन्त्रप्रयोगादि तत्सर्वं कृपया वद ॥२॥

ईश्वर उवाच

शृणु गुह्यतमं देवि न कस्य कथितं मया। इदानीं कथयिष्यामि शृणुष्वैकाग्रमानसा: ॥३॥
प्रणवं वाग्भवं शक्ति: कामराजं रमा तथा। काह्लेश्वरि सर्वजनमनोहारि च सर्व च ॥४॥
मुखस्तम्भिनि सर्वान्ते राजेति च वशङ्करि। सर्वदुष्टनिर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषेति च ॥५॥
कर्षिणीति ततो बन्दी शृङ्खलास्त्रोटयद्वयम्। सर्वशत्रून् भञ्जय द्वे द्वेषिणो दलय-द्वयम् ॥६॥
सर्वं स्तम्भय-युग्मं च मोहनास्त्रेण तत्परम्। द्वेषिण: पदत: पश्चादुच्चाटय-युगं तत: ॥७॥
सर्वं वशं कुरुयुगं स्वाहान्ते देहियुग्मकम्। सर्वं च कालरात्रि च कामिनि च गणेश्वरि ॥८॥
नमोन्तेयं महाविद्या वह्न्यग्निविधुवर्णका।

'ॐऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्लेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखस्तम्भिनि सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि बन्दीशृङ्खलास्त्रोटय २ सर्वशत्रून् भञ्जय २ द्वेषिणो दलय २ सर्वं स्तम्भय २ मोहनास्त्रेण द्वेषिण

उच्चाटयोच्चाटय सर्वं वशं कुरु २ स्वाहा देहि २ सर्वं कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः' (१३३)।

ऋषिर्दक्षो निगदितश्छन्दोऽतिजगती स्मृता। देवता कालरात्रिः स्यादलर्कपुरवासिनी ॥९॥
मायाबीजं तु बीजं स्यादलर्कपुरवासिनी। मायाराज्ञीति शक्तिः स्यान्नमः कीलकमुच्यते ॥१०॥
पञ्चाङ्गुलीषु विन्यसेत् ताराद्यं पञ्चबीजकम्। हृदयं चतुर्विंशतिभिः पञ्चविंशतिभिः शिरः ॥११॥
शिखैकविंशद्वर्णैश्च वर्माष्टादशवर्णकैः। नेत्रं षड्विंशदर्णैश्चोनविंशत्यर्णकैस्ततः ॥१२॥
अस्त्रं तारास्त्रमादौ च दत्त्वान्ते षट्पदानि च। जगत्त्रयविमोह्यन्ते नि चतुर्दशमीरयेत् ॥१३॥
भुवनव्यापिनि ततो दण्डधारिणि तत्परम्। दुर्गा दुर्गतिहन्त्रीति नानासिद्धिविधायिनि ॥१४॥
सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहेति पदमीरयेत्। षडङ्गमेवं विन्यस्य ध्यायेद् देवीं गणेश्वरीम् ॥१५॥
आरक्तभानुसदृशीं कामिनीं मदनातुराम्। चतुर्भुजां त्रिनयनां कवरीमुक्तकेशिकाम् ॥१६॥
मोहनं दक्षिणे हस्ते वरदं च तथोपरि। भुवनं वामहस्ते च अधोदण्डं सुशोभितम् ॥१७॥
चूडाकलापिकाशोभां मातृकापरिवेष्टिताम्। कृष्णाम्बरधरां देवीं कृष्णकञ्चुकभूषिताम् ॥१८॥
कर्णनाटङ्कसंयुक्तां नानारत्नसुमौक्तिकाम्। विचित्रचाम्पेयपुष्पैः वेणिनद्धां सुकुन्तलाम् ॥१९॥
सुनासामौक्तिकां चारुताम्बूलापूरिताननाम्। ग्रैवेयहारपदकस्तनाभरणभूषिताम् ॥२०॥
ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैः स्तूयमानां मदालसाम्। कन्यकागणसंसेव्यां मायाराज्ञीं गणेश्वरीम् ॥२१॥
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं पूजयेत् सर्वसिद्धये। निशायां प्रहरातीते महापूजां समाचरेत् ॥२२॥
पूजयेत् कालिकापीठे पूजायन्त्रमतः शृणु। बिन्दुत्रिकोणषट्कोणवृत्तं चाष्टदलं तथा ॥२३॥
वृत्तं षोडशपत्रं च त्रिवृत्तं भूपुरत्रयम्। लिखेद् भूर्जे क्षीरवृक्षफलके वा लिखेद् बुधः ॥२४॥
अष्टगन्धेन शान्त्यै स्याल्लेखिन्या चम्पकस्य च।

शक्त्यष्टगन्धाः प्रागेवोक्ताः।

सिन्दूरदरदाभ्यां च विलिखेद्वश्यकर्मणि। रसालस्य च लेखिन्या स्तम्भने कोकिलातरोः ॥२५॥
मारणे लोहपत्रे च हरितालहरिद्रया। निर्गुण्ड्युन्मत्तकद्रावैः खराश्वमहिषासृजा ॥२६॥
विलिख्यैवं यन्त्रराजं तत्र देवीं समर्चयेत्। संमोहिनीं मोहिनीं च ततश्चैव विमोहिनीम् ॥२७॥
पूजयेत् त्रिषु कोणेषु षट्कोणेषु षडङ्गकम्। वृत्ते स्वरानष्टदले ब्राह्म्याद्या मातृका यजेत् ॥२८॥
व्यञ्जनानि पुनर्वृत्ते कलास्त्रे उर्वशीमुखाः। उर्वशी मेनका रम्भा घृताची तदनन्तरम् ॥२९॥
मञ्जुघोषा च सहजा सुकेशी च तिलोत्तमा। गन्धर्वसिद्धकन्या च किन्नरी नागकन्यका ॥३०॥
विद्याधरी किंपुरुषी यक्षकन्या पिशाचिका। पुनर्वृत्ते पञ्चबीजाधिपान् बीजादिनार्चयेत् ॥३१॥
पञ्चबाणाधिदेव्यश्च पूजनीयाः प्रयत्नतः। भूगृहान्तः सिद्धयः स्युः त्रिरेखासु नव क्रमात् ॥३२॥
इच्छाज्ञानक्रियास्तिस्त्र आद्यरेखागता यजेत्। द्वितीयायां शिवब्रह्मविष्णवोऽर्च्याः क्रमेण वै ॥३३॥
गुणत्रयं तृतीयायां द्वारेषु गणपादिकाः। मध्ये देव्याश्चतुर्दिक्षु तिस्रस्तिस्रश्च देवताः ॥३४॥
माया च कालरात्रिश्च वटवासिन्यतः परम्। गणेश्वरी च काह्लेशी व्यापिकाऽलर्कवासिनी ॥३५॥
मायाराज्ञी च मदनप्रिया च रतिरेव च। लक्ष्मीः काह्लेश्वरी चेति पूज्या द्वादश शक्तयः ॥३६॥ इति।

कालरात्रि विधान—श्री देवी ने कहा कि हे देवदेव जगन्नाथ! आप भक्तों के मनोरथ पूर्ण करते हैं। आपकी कृपा से मैंने सर्वमन्त्रसमुच्चय को सुना। अब मैं कालरात्रि का विधान सुनना चाहती हूँ। आप कृपा करके कालरात्रि के मन्त्र-यन्त्र-प्रयोगादि सब कुछ कहिये।

ईश्वर ने कहा—हे देवि! सुनो, आज तक जिसे किसी को नहीं बतलाया, उस अत्यन्त गुह्य विद्या को कहता हूँ।

एकाग्रता से सुनो। एक सौ तैंतीस अक्षरों का कालरात्रि का मन्त्र है—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्लेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखस्तम्भिनि सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि वन्दीशृंखलां स्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून् भंजय भंजय द्वेषिणो दलय दलय सर्वं स्तम्भय स्तम्भय मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटयोच्चाटय सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा देहि देहि सर्वं कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः।

इसके ऋषि दक्ष, छन्द अति जगति एवं देवता अर्लकपुरवासिनी कालरात्रि हैं। ह्रीं बीज, अलर्कपुरवासिनी मायाराज्ञी शक्ति एवं नम: कीलक है। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं—इन पाँच बीजों का अंगुलियों में न्यास करे। मन्त्रवर्ण के चौबीस वर्णों से हृदय मे, पच्चीस वर्णों से शिर में, इक्कीस वर्णों से शिखा में, अट्ठारह वर्णो से कवच में, छब्बीस वर्णों से नेत्रों में एवं उन्नीइस अक्षरों से अस्त्र न्यास करे। इनके पहले ॐ हुं और बाद में छ: पदों को लगावे। जैसे—'जगत् त्रयविमोहिनी', 'चतुर्दशभुवनव्यापिनी' 'दण्डधारिणी', 'दुर्गादुर्गतिहन्त्री', 'नानासिद्धिदायिनी', 'सर्ववशं कुरु कुरु स्वाहा' इस तरह न्यास के बाद देवी गणेश्वरी का ध्यान इस प्रकार करे—

आरक्तभानुसदृशीं कामिनीं मदनातुराम्। चतुर्भुजां त्रिनयनां कवरीमुक्तकेशिकाम्।।
मोहनं दक्षिणे हस्ते वरदं च तथोपरि। भुवनं वामहस्ते च अधोदण्डं सुशोभितम्।।
चूडाकलापिकाशोभां मातृकापरिवेष्टिताम्। कृष्णाम्बरधरां देवीं कृष्णकञ्चुकभूषिताम्।।
कर्णताटङ्कसंयुक्तां नानारत्नसुमौक्तिकाम्। विचित्रचाम्पेयपुष्पैः वेणिनद्धां सुकुन्तलाम्।।
सुनासामौक्तिकां चारुताम्बूलापूरिताननाम्। ग्रैवेयहारपदकस्तनाभरणभूषिताम्।।
ऋषिभि: सिद्धगन्धर्वै: स्तूयमानां मदालसाम्। कन्यकागणसंसेव्यां मायाराज्ञीं गणेश्वरीम्।।

इस प्रकार ध्यान करके सभी सिद्धियो के लिये जप करे। रात के पहले प्रहर के बीतने पर कालिकापीठ पर महापूजा करे। पूजा यन्त्र इस प्रकार बनावे—विन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, अष्टदल, वृत्त, षोडशदल, तीन वृत्त, तीन भूपुर भोजपत्र पर या दूध वाले वृक्ष के पटरे पर अष्टगन्ध से चम्पा की लेखनी से बनावे। इससे शान्ति कर्म होता है। वश्य कर्म में सिन्दूर और गेरू से आम की लेखनी से यन्त्र लिखे। स्तम्भन में कोकिला वृक्ष के पटरे पर, मारण में लौह के पत्र पर हरिताल द्वारा हल्दी से लिखे। निर्गुण्डी, धत्तूर, गदहा, घोड़ा, भैसा के खून से यन्त्रराज को बनाकर उसमें देवी का अर्चन करे। सम्मोहिनी, मोहिनी, विमोहिनी का अर्चन तीनो कोणों में करे। छ: कोणों में षडङ्ग पूजा करे। वृत्त में सोलह स्वरों की पूजा करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि मातृकाओं की पूजा करे। पुन: वृत्त में व्यञ्जनों की पूजा करे। कलाओं में उर्वशी, मेनका, रम्भा, घृताची, मंजुघोषा, सहजा, सुकेशी, तिलोत्तमा, गन्धर्वकन्या, सिद्धकन्या, किन्नरकन्या, नागकन्या, विद्याधरकन्या, किंपुरुषकन्या यक्षकन्या, पिशाच-कन्या की पूजा करे। पुन: वृत्त में पाँच बीजाधियों एवं पाँच बाण देवताओं की पूजा करे। भूपुर की प्रथम रेखा में इच्छा-ज्ञान-क्रिया, द्वितीय रेखा में शिव ब्रह्मा विष्णु एवं तृतीय रेखा में सत्त्व-रज-तम की पूजा करे। मध्य में देवी की एवं उसके चारो ओर क्रम से तीन-तीन देवताओं की पूजा करे। वे शक्तियाँ हैं—माया, कालरात्रि, वटवासिनी, गणेश्वरी, काह्लेशी, व्याधिका, अलर्कवासिनी, मायाराज्ञी, मदनप्रिया, रति, लक्ष्मी एवं काह्लेश्वरी।

कालरात्रिप्रयोग:

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि दक्षाय ऋषये नम:। मुखे अतिजगतीच्छन्दसे नम:। हृदये अलर्कवासिन्यै कालरात्र्यै देवतायै नम:। गुह्ये ह्रींबीजाय नम:। पादयो: मायाराज्ञीशक्तये नम:। नाभौ नम: कीलकाय नम:। इति विन्यस्य ममाभीष्टसिद्धये विनियोग:। इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐहुंॐऐंह्रींक्लींश्रीं काह्लेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखस्तम्भिनि जगत् त्रयविमोहिनि हृदयाय नम:। ॐहुं सर्वराजवशङ्करि सर्वदुष्टनिर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि चतुर्दशभुवनव्यापिनि शिरसे स्वाहा। ॐहुं बन्दीशृङ्खलास्त्रोटय २ सर्वशत्रून् भञ्जय २ दण्डधारिणि शिखायै वषट्। ॐहुं द्वेषिणो दलय २ सर्वं स्तम्भय २ (दुर्गादुर्गतिहन्त्रि) कवचाय हुं। ॐहुं मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटयोच्चाटय सर्वं वशं कुरु २ स्वाहा (नानासिद्धिदायिनि) नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐहुं देहि २

सर्वं कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः (सर्वं वशं कुरु २ स्वाहा) अस्त्राय फट्। अत्र प्रथमतो विद्यादिपञ्चबीजानि अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं विन्यस्य ततः षडङ्गन्यासं कुर्यात्। एवं करषडङ्गन्यासं कृत्वा मूलेन व्यापकन्यासं विधाय, ध्यानमानसपूजान्ते स्वपुरतश्चन्दनादिपीठे कुङ्कुमादिना विन्दुगर्भं त्रिकोणं विलिख्य, तद्बहिः षट्कोणं, तद्बहिर्वृत्तं, तद्बहिरष्टदलं, तद्बहिर्वृत्तं, तद्बहिः षोडशदलं, तद्बहिर्वृत्तत्रयं, तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रत्रयं कुर्यादिति पूजायन्त्रं विरच्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते कालीपीठं समभ्यर्च्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते त्रिकोणेषु—संमोहिन्यै नमः। मोहिन्यै०। विमोहिन्यै०। इति संपूज्य, षट्कोणकोणेषु प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, तद्बहिर्वृत्ते—अं नमः। आं नमः। इत्यादिषोडशस्वरान् संपूज्य, अष्टसु दलेषु ब्राह्म्यादिमातृकाः प्राग्वत् संपूज्य, तद्बहिर्वृत्ते—कं नमः। खं नमः। इत्यादि क्षं नमः इत्यन्तं व्यञ्जनानि सम्पूज्य, षोडशदलेषु देव्यग्रादिप्रादक्षिण्येन उर्वश्यै नमः। मेनकायै०। रम्भायै०। घृताच्यै०। मञ्जुघोषायै०। सहजायै०। सुकेश्यै०। तिलोत्तमायै०। गन्धर्वकन्यायै०। सिद्धकन्यायै०। किन्नरकन्यायै०। नागकन्यकायै०। विद्याधरकन्यायै०। किंपुरुषकन्यायै०। यक्षकन्यायै०। पिशाचकन्यायै०। इति संपूज्य, तदुपरि वृत्ते स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन—ॐ परविद्यायै नमः। ऐं सरस्वत्यै०। ह्रीं भुवनेश्वर्य्यै०। क्लीं मनोभवायै०। श्रीं लक्ष्म्यै०। पञ्चबाणबीजानि तदधिदेवता मातङ्गीप्रकरणोक्ताः संपूज्य, भूपुरान्तः स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येनाणिमादिसिद्धिः संपूज्य, प्रथमरेखायां—इच्छाशक्त्यै नमः। ज्ञानशक्त्यै०। क्रियाशक्त्यै०। इति संपूज्य, द्वितीयरेखायां—शिवब्रह्मरमाधिपान् संपूज्य, तृतीयरेखायां—सत्त्वरजस्तमोगुणान् संपूज्य, पूर्वादिषु चतुर्षु द्वारेषु—गणेशक्षेत्रपालवटुकयोगिनीः संपूज्य, तद्बहिर्लोकपांस्तदस्त्राणि च संपूज्य, मध्ये देव्याः पूर्वभागे—मायायै नमः। कालरात्र्यै०। वटवासिन्यै०। दक्षभागे—गणेश्वर्य्यै०। काह्लेश्वर्य्यै०। व्यापिकायै०। पश्चिमे—अलर्कवासिन्यै नमः। मायाराज्यै०। मदनप्रियायै०। उत्तरे—रत्यै नमः। लक्ष्म्यै०। काह्लेश्वर्य्यै०। इति संपूज्य धूपदीपादिसर्वं प्राग्वत् समापयेत् इति। तथा—

प्रजपेदयुतं मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत् तिलैः। क्षीरद्रुमसमिद्भिर्वा तर्पणादि ततश्चरेत् ॥३७॥
मार्जनं तद्दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेत् सुधीः। एवं संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगानाचरेद् बुधः ॥३८॥

प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके ऋष्यादि न्यास करे; जैसे—शिरसि दक्षाय ऋषये नमः, मुखे अतिजगति छन्दसे नमः, हृदये अलर्कवासिन्यै कालरात्र्यै देवतायै नमः, गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः, पादयोः मायाराज्ञीशक्तये नमः, नाभौ नमः कीलकाय नमः। इस प्रकार न्यास कर अपने अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ हुं ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्लेश्वरि सर्वजनमनोहारि सर्वमुखस्तम्भिनि जगत्त्रयविमोहिनि हृदयाय नमः, ॐ हुं सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्टनिर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि चतुर्दशभुवनव्यापिनि शिरसे स्वाहा, ॐ हुं बन्दी-श्रृंखलांस्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून् भंजय भंजय दण्डधारिणि शिखायै वषट्, ॐ हुं द्वेषिणो दलय दलय सर्वं स्तम्भय स्तम्भय दुर्गादुर्गतिहन्त्रि कवचाय हुं, ॐ हुं मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटयोच्चाटय सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा नानासिद्धिदायिनि नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ हुं देहि देहि सर्वं कालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नमः सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा अस्त्राय फट्। यहाँ पहले ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं—इन पाँच आद्य बीजों से अंगूठे से कनिष्ठा तक का न्यास करने के बाद षडङ्ग करना चाहिये।

इस प्रकार करन्यास और षडङ्ग न्यास के बाद मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके ध्यान करने के बाद मानस पूजा करके अपने आगे चन्दनादि पीठ पर कुङ्कुमादि से बिन्दुगर्भ त्रिकोण बनाकर उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर वृत्त, उसके बाहर अष्टदल, उसके बाहर वृत्त, उसके बाहर षोडश दल, उसके बाहर तीन वृत्त, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनाकर पूजा यन्त्र बनावे। अपने आगे उसे स्थापित करके अर्चन करे। अर्घ्यादि स्थापन, आत्मपूजा के बाद कालीपीठ पर पूजा करके आवाहन से पुष्पोपचार तक करे। तब त्रिकोण में सम्मोहिन्यै नमः, मोहिन्यै नमः, विमोहिन्यै नमः से पूजा कर षट्कोण में पूर्ववत् षडङ्गों की पूजा करे। उसके बाहर के वृत्त में अं नमः से लेकर अः नमः तक सोलह स्वरों की पूजा करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं की पूजा करे। उसके बाहर के वृत्त में कं नमः से क्षं नमः तक व्यञ्जनों की पूजा करे। षोडश दल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से उर्वश्यै नमः, मेनकायै नमः, रम्भायै नमः, घृताच्यै नमः, मंजुघोषायै नमः, सहजायै

नमः, सुकेश्यै नमः, तिलोत्तमायै नमः, गन्धर्वकन्यायै नमः, सिद्धकन्यायै नमः, किन्नरकन्यायै नमः, नागकन्यकायै नमः, विद्याधरकन्यायै नमः, किंपुरुषकन्यायै नमः, यक्षकन्यायै नमः, पिशाचकन्यायै नमः से पूजा करे। उसके बाहरी वृत्त में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से ॐ परविद्यायै नमः, ऐं सरस्वत्यै नमः, ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः, क्लीं मनोभवायै, नमः, श्रीं लक्ष्म्यै नमः से पूजन कर ॐ ऐं ह्रीं क्ली श्रीं—इन पाँच बीजों के मातंगी प्रकरणोक्त अधिदेवताओं की क्रम से पूजा करे। अणिमादि सिद्धियों की पूजा भूपुर में करे। भूपुर की प्रथम रेखा में इच्छाशक्त्यै नमः, ज्ञानशक्त्यै: नमः एवं क्रियाशक्त्यै नमः से पूजा करे। द्वितीय रेखा में शिव, ब्रह्मा विष्णु की पूजा करे एवं तृतीय रेखा में सत्त्व रज तम—इन तीन गुणों की पूजा करे। तदनन्तर पूर्वादि चारों द्वारों पर गणेश, क्षेत्रपाल, वटुक, योगिनी की पूजा करे। उसके बाहर इन्दादि लोकपालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। मध्य में देवी के पूर्व भाग में मायायै नमः, कालरात्र्यै नमः, वटवासिन्यै नमः से पूजा करे। दक्ष भाग में गणेश्वर्यै नमः, काह्लेश्वर्यै नमः, व्यापिकायै नमः से पूजन करे। पश्चिम भाग से अलर्कवासिन्यै नमः, मायाराज्यै नमः एवं मदनप्रियायै से पूजन करे। उत्तर में रत्यै नमः, लक्ष्म्यै नमः एवं काह्लेश्वर्यै नमः से पूजा के बाद धूप, दीपादि से पूर्ववत् पूजा करके पूजन का समापन करे। मन्त्र का दश हजार जप करे। उसका दशांश हवन तिल से अथवा दुध वाले वृक्षों की समिधाओं से करे। तब तर्पण, मार्जन, ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे।

जलौकाग्रहणमन्त्रः

संध्यायां शनिवारे तु रम्यं गच्छेत् सरोवरम्। मन्त्रेणानेन संपूज्य हरिद्राक्षतपुष्पकैः ॥३९॥
तारं नमो जलौकायै द्विधा सर्वजनं वशम्। कुरुद्वन्द्वं हुमन्तोऽयं मन्त्रस्तेनैव पूजयेत् ॥४०॥

'ॐ नमो जलौकायै जलौकायै सर्वजनं वशं कुरु कुरु हुं' (२२)।

ततश्च गृहमागत्य देवीं ध्यायन् भुवि स्वपेत्। प्रातस्तत्रैव गत्वा च जलौकाद्वितयं ततः ॥४१॥
गृहीत्वा तु तदागत्य च्छायायां परिशोषयेत्। कृष्णकर्पासतन्तुनैतच्चूर्णसहितां शिवे ॥४२॥
वर्तिं दृढतरां कृत्वा कुम्भकारस्य चक्रतः। मृदमानीय यत्नेन तया पात्रं तु कारयेत् ॥४३॥
भ्रमद्यन्त्राहृतं तैलं तस्मिन् पात्रे क्षिपेच्छुचि। कोकिलाक्षेन्धनैरग्निमाहरेद्गणिकागृहात् ॥४४॥
त्रिकोणद्वयमालिख्य तद्बहिर्भूपुरं लिखेत्। निशारसेन रचिते लाजाक्षतसमन्विते ॥४५॥

मण्डले इति शेषः।

दीपं प्रज्वाल्य दीपाग्रे कालरात्रिं प्रपूजयेत्। सर्वावरणसंयुक्तां कज्जलाहरणाय च ॥४६॥
नवीनं पात्रमुपरि विन्यसेत् साधकोत्तमः। जातं कज्जलमाहृत्य पश्चिमाभिमुखो नरः ॥४७॥
वक्ष्यमाणेन मन्त्रेण त्रिशतं मन्त्रयेन्मषीम्।

शनिवार के शाम में रम्य सरोवर के तट पर जाकर 'ॐ नमो जलौकायै जलौकायै सर्वजनं वशं कुरु कुरु हुं' इस मन्त्र से हल्दी अक्षत फूल से उसकी पूजा करे। तब घर आकर देवी का ध्यान करके जमीन पर शयन करे। सबेरे वही पर जाकर दो जलौका को पकड़कर ले आये। उन्हें छाया में सुखाकर काले कपास के धागे में उसका चूर्ण मिलाकर मजबूत बत्ती बनावे। कुम्हार के चक्र से मिट्टी लाकर दीपक बनावे। घूमते हुए यन्त्र से तेल लाकर दीपक में भरे। गणिका घर से आग लाकर कोकिलाक्ष लकड़ी से आग जलावे। दो त्रिकोण बनाकर उसके बाहर भूपुर बनावे। इसे लाजा और अक्षत मिले हल्दी के घोल से बनावे। इस मण्डप पर दीपक जलाकर दीप के आगे कालरात्रि की पूजा सभी आवरणों के साथ करे। काजल पारने के लिये दीपक पर नया पात्र रखे। काजल बन जाने पर उसे लेकर पश्चिम तरफ मुँह करके विहित मन्त्र के तीन सौ जप से काजल को मन्त्रित करे।

कज्जलाभिमन्त्रणमन्त्रः

प्रणवं वाग्भवं मारं मायां रमां भूमिं ब्लूंह्सौः ॥४८॥

नमः काह्लेश्वरिपदं सर्वान्मोहय मोहय। कृष्णे च कृष्णवर्णे च कृष्णाम्बरसमन्विते ॥४९॥
सर्वानाकर्षययुगं शीघ्रं वश्यं कुरुद्वयम्। वर्म वाग्भुवनेशी च कामराजं रमा तथा ॥५०॥
अष्टपञ्चाशदर्णेयं कज्जलस्याभिमन्त्रणे।

'ॐऐंह्रींक्लींश्रींग्लौंब्लूंहसौ नमः काह्लेश्वरि सर्वान्मोहय मोहय कृष्णे कृष्णवर्णे कृष्णाम्बरसमन्विते सर्वानाकर्षयाकर्षय शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु हुंऐंह्रींक्लींश्रीं' (५८)।

कपिलानवनीतेन मर्दयेत् कज्जलं शुभम्। अष्टोत्तरशतावृत्त्या मूलमन्त्रेण मन्त्रयेत् ॥५१॥
हुनेदष्टोत्तरशतं मधूककुसुमैः प्रिये। सुवासिनीं कुमारीं च वटुकं भोजयेन्मुदा ॥५२॥
तेनाञ्जनेन तिलकं कुर्यात् साधकसत्तमः। वशयेत् सकलांल्लोकान् नरनारीनरेश्वरान् ॥५३॥
दत्तं तदन्नपानादौ तेनापि च वशं नयेत्।

काजल को अभिमन्त्रित करने का मन्त्र हैं—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं ग्लौं ब्लूं ह्सौः नमः काह्लेश्वरि सर्वान्मोहय मोहय कृष्णे कृष्णवर्णे कृष्णाम्वरसमन्विते सर्वानाकर्षयाकर्षय शीघ्रं वश्यं कुरु कुरु हुं ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं। यह अट्ठावन अक्षरों का मन्त्र है।

कपिला गाय के मक्खन में काजल मिलावे। मूल मन्त्र के एक सौ आठ जप से उसे मन्त्रित करे। महुआ के फूलों से एक सौ आठ हवन करे। सुवासिनी, कुमारी और बटुक को भोजन करावे। उस अंजन से साधक तिलक लगावे तो उसके वश में नर, नारी, राजा समेत सभी लोक हो जाते हैं। मन्त्रित अन्न पानी देने से भी वे सभी वश में होते हैं।

स्तम्भनयन्त्रयन्त्रनिर्णयः

स्तम्भनं ते प्रवक्ष्यामि हारिद्रे कर्पटे लिखेत् ॥५४॥
हरिद्रारोचनाकुष्ठाञ्जनैर्गोमूत्रपेषितैः। लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ॥५५॥
कर्णिकायां साध्यनाम दलेषु प्रणवद्वयम्। भूबीजयुग्मं द्विचटं पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ॥५६॥
सप्तभिः कोकिलाक्षद्रुकण्टकैः परिकीलयेत्। अर्कपत्रैः सुसंवेष्ट्य क्षिपेद्वल्मीकरन्ध्रके ॥५७॥
मेषमूत्रेण संपूर्य पाषाणैर्घटयेद् दृढम्। सहस्रं प्रजपेन्मूलमन्त्रं राक्षसदिङ्मुखः ॥५८॥
हरिद्रामालिकां कृत्वा बद्धमुद्राकरान्वितः। मनुं वक्ष्ये ध्रुवो ह्लांह्लींह्लूं कामाक्षि ततः परम् ॥५९॥
मायारूपिणि सर्वान्ते मनोहारिण्यनन्तरम्। स्तम्भय द्वे रोधय द्वे मोहय-द्वितयं ततः ॥६०॥
कामबीजं त्रिधा दीर्घैः कामाक्षि च ततः परम्। काह्लेश्वरि त्रिवर्माणि पञ्चाशद्वर्णवान् मनुः ॥६१॥

'ॐह्लांह्लींह्लूं कामाक्षि मायारूपिणि सर्वमनोहारिणि स्तम्भय स्तम्भय रोधय रोधय मोहय मोहय क्लांक्लींक्लूं कामाक्षि काह्लेश्वरि हुंहुंहुं' (५०)।

जपादेतस्य मन्त्रस्य शत्रूणां स्तम्भनं भवेत्।

स्तम्भन के लिये हल्दी से खपड़े पर यन्त्र बनावे। हल्दी गोरोचन कूठ अंजन को गोमूत्र में पीसे। इस लेप से कर्णिका-केसरसहित अष्टदल बनावे। अष्टदल की कर्णिका के मध्य में साध्य नाम और दलों में प्रणवद्वय (ॐ ॐ) लिखे। 'ग्लौं ग्लौं चट चट' कहकर उस पर मोटा धागा लपेट दे। सात कोकिलाक्ष के काँटों से उसका परिकीलन करे। उस पर अकवन के पत्तों को लपेट दे। दीमक के ऊँचे घर में उसे प्रविष्ट कराये। भेड़ के मूत्र से उसे भरे। उस पर पत्थर रखकर उसे बन्द कर दे। नैर्ऋत्य दिशा में मुख करके मूल मन्त्र का एक हजार जप हल्दी की माला से करे। हाथों से मुद्रा बनाकर 'ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं कामाक्षि मायारूपिणि सर्वमनोहारिणि स्तम्भय स्तम्भय रोधय रोधय मोहय मोहय क्लां क्लीं क्लूं कामाक्षि काह्लेश्वरि हुं हुं हुं' मन्त्र का जप करे तो शत्रुओं का स्तम्भन होता है।

मोहनयन्त्रमन्त्रविधिः

रविवारे हरिद्रां च स्त्रीस्तन्येन च पेषयेत् ॥६२॥

तत्कल्केन लिखेद् भूर्जे कामराजं मनोहरम्। तद्बहिर्वेष्टयेद् वृत्तं कामराजदशान्वितम् ।।६३।।
तद्बहिर्वृत्तमालिख्य वेष्टयेद्रविमन्मथैः। तद्बहिर्वेष्टयेद् वृत्तं षोडशस्मरसंयुतम् ।।६४।।
षट्कोणं तद्बहिर्लिख्य कामं कोणेषु विन्यसेत्। तत्सर्वं वाग्भवान्तःस्थं यन्त्रं मोहनकारकम् ।।६५।।
दशवर्णं मनुं जप्यात् तदुपर्य्युपविश्य च। ध्रुवो ङेन्तं कामपदं कामराजमतः परम् ।।६६।।
कामिन्यै कामराजं च द्वितीयं कामराजकम्।

'ॐ कामाय क्लीं कामिन्यै क्लीं क्लीं' (१०)।

पञ्चाहं प्रजपेत् क्रुद्धः सहस्रं नित्यमादरात्। ततो होमं प्रकुर्वीत तद्दशांशं तिलैः शुभैः ।।६७।।
आज्याक्तैस्तद्भस्मना च तिलकं विश्वमोहनम्।

रविवार को स्त्री के स्तन के दूध मे हल्दी को पीसे। इस कल्क से भोजपत्र पर 'क्लीं' लिखे। उसके बाहर वृत्ताकार मे दश 'क्लीं' लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर बारह 'क्लीं' से उसे वेष्टित करे। उसके बाहर वृत्त बनाकर उसपर सोलह 'क्लीं' लिखें। उसके बाहर षट्कोण बनाकर उसके कोणों में हिलि हिलि क्लीं लिखे। इन सबों को 'ऐं' के अन्तःस्थ करे। यह यन्त्र मोहनकारक होता है। उस पर बैठकर निम्नांकित दशाक्षर मन्त्र का जप करे—ॐ कामाय क्लीं कामिन्यै क्लीं क्लीं। क्रुद्ध होकर पाँच दिनों तक प्रतिदिन इस मन्त्र का एक हजार जप करे। इसका दशांश हवन आज्याक्त तिल से करे। उससे भस्म का तिलक विश्वमोहन होता है।

आकर्षणविधानम्

आकर्षणविधानं तु शृणु वक्ष्ये यथाविधि ।।६८।।

कृष्णाष्टमीदिने मूले भौमयुक्तेऽथवा रवौ। उषःकाले नाभिदघ्ने जले स्थित्वा सहस्रकम् ।।६९।।
सशतं मूलमन्त्रं तु जपित्वा गृहमागतः। तैलाभ्यक्तः पीठिकादौ विलिखेत् प्रतिमां स्त्रियः ।।७०।।
नराकृतिं वा मषिभिर्यजेल्लजालुपत्रकैः। तन्मूलजै रसैः प्रोक्षेत् तदग्रे प्रजपेन्मनुम् ।।७१।।
नखद्वयार्णं तं वक्ष्ये तारं च हृदयं ततः। कालिकायै पदं सर्वाकर्षिण्यै अमुकीं ततः ।।७२।।
आकर्षय-द्वयं शीघ्रमानय-द्वितयं ततः। पाशमायाङ्कुशा भद्रकाल्यै हृदयमन्ततः ।।७३।।

'ॐ नमः कालिकायै सर्वाकर्षिण्यै अमुकीं आकर्षणं आकर्षय शीघ्रमानय आनय आंह्रींक्रों भद्रकाल्यै नमः' (४०)।

अष्टोत्तरशतं जप्त्वा लोहितैश्च हयारिजैः। पञ्चाशद्भिर्यजेत्तत्र पुत्तलीं तु समाहितः ।।७४।।
एकैकं मातृकावर्णां तन्नामाकर्षय-द्वयम्। नम इत्यभिसंजप्य पुष्पमेकैकमर्पयेत् ।।७५।।

'अं अमुकमाकर्षय आकर्षय नमः' इति करवीरपुष्पैः पूजयेदित्यर्थः।

धूपादिकं निवेद्यापि चणकैराज्यसंप्लुतैः। जुहुयान्मन्त्रवर्य्येण प्रोक्तेनाकर्षणात्मना ।।७६।।
कृष्णाकार्पाससूत्रस्य कुमारीनिर्मितस्य च। षणावत्यङ्गुलायाममष्टाविंशतितन्तुकम् ।।७७।।
रज्जुमाकृष्य मनुना ग्रन्थीनष्टोत्तरं शतम्। दत्त्वा तद्डोरकं हस्ते धृतमाकर्षयेत् स्त्रियम् ।।७८।।
पुरुषं वा त्रिरात्राच्च एकग्रामस्थमानयेत्। देशान्तरान्नवाहाच्च हठादाकर्षयेद् ध्रुवम् ।।७९।।

आकर्षण-विधान—अब आकर्षण-विधान को यथाविधि कहता हूँ। कृष्ण पक्ष की अष्टमी एवं मूल नक्षत्रयुक्त भौमवारी या रविवार को उषा काल में नाभि में दही लगाकर जल में खड़े होकर एक हजार एक सौ मन्त्र का जपकर घर आ जाय। तैलाभ्यक्त पीठिका में स्त्री का या पुरुष का चित्र बनावे। लाजवन्ती के पत्तों से उसकी पूजा करे। लाजवन्ती की जड़ के रस से उसका प्रोक्षण करे। उसके आगे चालीस अक्षरों के इस मन्त्र का जप करे—ॐ नमः कालिकायै सर्वाकर्षिण्यै अमुकीं आकर्षय आकर्षय शीघ्रमानय आनय आं ह्रीं क्रों भद्रकाल्यै नमः।

इस मन्त्र का एक सौ आठ मन्त्र जप कर पचास लाल कनैल के फूलों से चित्र की पूजा एकाग्र होकर करे। प्रत्येक मातृका वर्ण के साथ साध्य नाम के बाद आकर्षय आर्कषय नम: लगाकर एक-एक फूल चढ़ावे। इससे आकर्षण होता है। मन्त्र का स्वरूप इस प्रकार होता है—अं अमुकमाकर्षय आकर्षय नम:। तदनन्तर धूपादि देकर पूजन कर आज्यसंप्लुत चना से मन्त्रोच्चारण करते हुये आकर्षण के लिये हवन करे। कुमारी-निर्मित काले कपास के ९६ अंगुल लम्बा अट्ठाईस सूत लेकर रस्सी बनावे। उसमें एक सौ आठ गाँठ मन्त्र जपते हुए लगावे। उस डोर को हाथ में बाँधने से स्त्रियों का आकर्षण होता है। साधक के ग्राम में रहने वाले पुरुष का तीन रात में आकर्षण होता है एवं दूर रहने वाले पुरुष का नव दिनों में हठात् आकर्षण होता है।

उच्चाटनमन्त्रविधानम्

अथोच्चाटविधिं वक्ष्ये शृणु देवि समाहिता। कृष्णाङ्गारचतुर्दश्यां प्रयोगं शून्यमन्दिरे ॥८०॥
यमदिग्वदनः कुर्यात् कुक्कुटासनसंस्थितः। नीलाम्बरधरो मुक्तकच्छो मन्त्रमिमं जपेत् ॥८१॥
मौञ्जीरज्जुकृतग्रन्थिमालया मुक्तकुन्तलः। ब्लूंस्लूंम्लूंक्ष्लूं कालरात्रि महाध्वांक्ष्यमुकं पदम् ॥८२॥
आशूच्चाटययुग्मं च छिन्धि भिन्धि शुचिप्रिया। प्रासादबीजं कामाक्षि सृण्यन्तः प्रणवादिकः ॥८३॥

'ॐ ब्लूंस्लूंम्लूंक्ष्लूं कालरात्रि महाध्वांक्षि अमुकमाशु उच्चाटय उच्चाटय छिन्धि भिन्धि स्वाहा हौं कामाक्षि क्रों' (३६) इति स्पष्टम्।

अर्धरात्रे जपेन्मन्त्रं सहस्रद्वयमेव च। ततो होमं सर्षपैस्तु दशांशं च दिने दिने ॥८४॥
बलिं दद्यात् प्रयत्नेन तैलोदकयुतं ततः। तथा सर्षपपिण्याकशाकपिष्टं च मूलकम् ॥८५॥
मुद्रया सह तेनैव मनुना मन्त्रवित्तमः। एवं यः कुरुते नित्यं सप्ताहाच्चाटयेद् ध्रुवम् ॥८६॥
प्रतिमां देवतानां च का कथा मानवादिषु ।

उच्चाटन-विधान—अब उच्चाटन विधि को कहता हूँ, सावधान होकर सुनो। कृष्णपक्ष की मंगलवारी चतुर्दशी में सूने घर में दक्षिण तरफ मुख करके कुक्कुटासन में बैठकर इसका प्रयोग करे। कच्छारहित नीला कपड़ा पहनकर साधक मन्त्र का जप करे। मूंज की रस्सी में गाँठ देकर निर्मित माला से खुले केश होकर इस मन्त्र का जप करे—ॐ ब्लूं स्लूं म्लूं क्ष्लूं कालरात्रि महाध्वांक्षि अमुकमाशु उच्चाटय उच्चाटय छिन्धि भिन्धि स्वाहा हौं कामाक्षि क्रों। इसमें छत्तीस अक्षर होते हैं। आधी रात में इस मन्त्र का दो हजार जप करे। उसका दशांश हवन सरसों से प्रति दिन करे। यत्नपूर्वक तेल भात की बलि प्रति दिन प्रदान करे। साथ ही सरसों पिण्याक शाक पिष्ट मूली का मुद्राप्रदर्शनपूर्वक मन्त्र से वलि दे। एक सप्ताह तक जो ऐसा करता है, वह देवताओं की प्रतिमा का भी उच्चाटन कर सकता है, तब मनुष्यों के बारे में क्या कहा जाय।

विद्वेषणमन्त्रविधानम्

अथ विद्वेषणं देवि शृणु गोप्यागमाह्वयम् ॥८७॥
तालवृक्षस्य फलकद्वयमानीय तं नरः। विषैरष्टभिराघृष्य स्नुहीदुग्धेन साधकः ॥८८॥
लिखेन्नाम तयोः साध्येऽथवा रूपं तु कारयेत्। ततस्तु फलके पूज्ये धत्तूरकुसुमैस्तथा ॥८९॥
प्रोक्षयेत् तेन सारेण अष्टाविंशतिसंख्यया। तत् स्पृष्ट्वा प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रमधियामिनि ॥९०॥
ह्रौंग्लौंह्सौं ततो भ्रौं च भगवत्यन्तदण्ड च। धारिण्यमुकममुकं शीघ्र विद्वेषय-द्वयम् ॥९१॥
रोधय-द्वितयं चैव भञ्जय-द्वितयं रमा। मायाराज्ञ्यै ततस्तारो गुणशः कवचं पठेत् ॥९२॥
पञ्चाशदक्षरो मन्त्रस्तारादिर्द्वेषकारकः ।

'ॐह्रौंग्लौंह्सौंभ्रौं भगवति दण्डधारिणि अमुकममुकं शीघ्रं विद्वेषय विद्वेषय रोधय रोधय भञ्जय भञ्जय श्रींमायाराज्ञ्यै ॐहुंहुंहुं' (५०) इति मूलम्।

जप्त्वा फलकयुग्मं तु बद्ध्वा रज्ज्वा परस्परम् । खरसैरिभगन्धर्वपुच्छरोमसमुत्थया ॥९३॥
वल्मीकरन्ध्रे निक्षिप्य तावत्संख्यं जपेन्मनुम् । सप्ताहाज्जायते वैरं रामलक्ष्मणयोरपि ॥९४॥

विद्वेषण-विधान—हे देवि! अब मैं आगमों में गोपनीय विद्वेषण को कहता हूँ। ताड़ के दो फल लाकर, उस पर आठ विषों को स्नुही के दूध से पीसकर उन पर साध्य का नाम लिखे या उनका चित्र बनावे। उन्हें फलक पर रखकर धतूर के फूलों से पूजा करे। धतूर के सार से उनका प्रोक्षण अट्ठाईस बार करे। उन्हें स्पर्श करके आधी रात में एक हजार मन्त्र जप करे। मन्त्र है—ॐ ह्रौं ग्लौं ह्सौं भ्रौं भगवति दण्डधारिणि ममुकं अमुक शीघ्रं विद्वेषय विद्वेषय रोधय रोधय भंजय भंजय श्रीं मायाराज्यै ॐ हुं हुं हुं। यह पचास अक्षरों का मन्त्र है।

जप के बाद दोनों फलों को एक साथ गदहा सैरिभ गन्धर्व के पुच्छ रोम से बनी रस्सी से बाँधकर दीमक के बिल में घुसाकर एक हजार मन्त्र जप करे। इससे एक सप्ताह में राम लक्ष्मण में भी वैर हो जाता है।

मारणमन्त्रविधानम्

अथ मारणकं कर्म कथयामि सविस्तरम् । न प्रयोगं प्रकुर्वीत ब्राह्मणस्योपरि प्रिये ॥९५॥
ब्राह्मणेन विना सर्वं ज्ञातव्यं रिपुवज्जगत् । बहूनां पीडको यस्तु सर्वोपद्रवकारकः ॥९६॥
तस्योपरि प्रकुर्वीत मारणं कुलधर्मवित् । प्रजपेदात्मशुद्ध्यर्थं सहस्रं मूलमन्त्रकम् ॥९७॥
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां भौमवारे विशेषतः । गोपुराच्च श्मशानाच्च शिवागाराच्चतुष्पथात् ॥९८॥
मृदमानीय यत्नेन श्मशानादौ विनिक्षिपेत् । विडङ्गाद्यर्कजाश्वारिपुष्पाण्यानीय देशिकः ॥९९॥
श्मशाने निर्जनागारे मुक्तकेशो दिगम्बरः । नीलाम्बरधरो रात्रौ पुत्तलीं विदधीत वै ॥१००॥
तच्छिरस्यालिखेन्नाम साध्यस्य तु प्रयत्नतः । प्राणयन्त्रं हृदि न्यस्य प्राक्प्रोक्तविधिना सुधीः ॥१०१॥
प्राणादिस्थापनं कृत्वाऽच्छादयेन्मृतवाससा । खराश्वमहिषाणां तु रुधिरे स्थापयेच्च ताम् ॥१०२॥
तैलाभ्यक्तां ततो रक्तचन्दनेन समर्चयेत् । धतूरकुसुमैर्वापि मारणोक्ताणुना ततः ॥१०३॥
जपं होमं च पूजां च कुर्यादुक्तविधानतः । ॐप्रांप्रींप्रूंमृतिकेश्वर्य्यमुकं शीघ्रमन्ततः ॥१०४॥
मारय-द्वितयं चैव सृणिबीजं त्रिरुच्चरेत् । त्रयोविंशत्यक्षरेण पूजां होमं च कारयेत् ॥१०५॥
'ॐप्रांप्रींप्रूंमृतिकेश्वरि अमुकं शीघ्रं मारय मारय क्रोंक्रोंक्रों' (२३)।

वचासर्षपभल्लातबीजैरुन्मत्तबीजकैः । अष्टोत्तरशतं हुत्वा श्मशानादौ विधानवित् ॥१०६॥
प्रतिमायाः शिरश्छित्त्वा पूर्णाहुतिमतश्चरेत् । ततश्च प्रतिमां दग्ध्वा मारणाख्याणुना सुधीः ॥१०७॥
एवं कृते त्रिसप्ताहाद्रिपुर्याति यमालयम् । भैरवाय बलिं दद्यात् प्रत्यहं विधिना सुधीः ॥१०८॥
माषान्नपलमद्याद्यैरेवं सिद्धिः प्रजायते । मृत्युञ्जयादिमन्त्रान् वै प्रजपेत् प्रत्यहं ततः ॥१०९॥
आत्मरक्षा भवेन्नो चेत् साधकस्य मृतिर्भवेत् ।

इति कालरात्रिप्रकरणम्।

मारण-विधान—अब मैं मारण कर्म को विस्तार से कहता हूँ इसका प्रयोग ब्राह्मण पर न करे। ब्राह्मण के अतिरिक्त सारे संसार को शत्रुवत् समझे। जो पीड़क और सर्वोपद्रवकारक हो, उसी पर कुलधर्मज्ञानी को इसका प्रयोग करना चाहिये। आत्मशुद्धि के लिये पहले मूल मन्त्र का एक हजार जप करे। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी विशेषकर भौमवारी चतुर्दशी में गोशाला, श्मशान, शिवालय या चौराहे पर जप करे। श्मशान से मिट्टी लाकर उसमें विडङ्ग अकवन कनैल के फूल मिलाकर श्मशान में या सूने घर में केश खोलकर नंगा होकर या नीला वस्त्र पहन कर रात में पुत्तली बनावे। उसके शिर में साध्य का नाम लिखे। पूर्वोक्त विधि से उसके हृदय में प्राणयन्त्र का न्यास करे। प्राण-प्रतिष्ठा करके उसे मुर्दे के कपड़े से ढक दे। गदहा, घोड़ा, भैंसा के खून को उनमें लगावे। उसमें तेल लगाकर लाल चन्दन से पूजा करे या धत्तूर के फूलों से पूजा करे। तदनन्तर मारण

मन्त्र का जप, हवन, पूजन विधिवत् करे। जप का मन्त्र है—ॐ म्रां म्रीं म्रूं मृतिकेश्वरि अमुकं शीघ्रं मारय मारय क्रों क्रों क्रों। यह तेईस अक्षरों का मन्त्र है। वचा सरसों भल्लातक धत्तूर बीजों से श्मशान आदि में एक सौ आठ हवन करे। प्रतिमा का शिर काटकर उससे पूर्णाहुति करे। तब प्रतिमा को मारण मन्त्र से जला दे। ऐसा तीन सप्ताहों तक करने से शत्रु मर जाता है। प्रतिदिन भैरव को उड़द, भात मद्य आदि की बलि आदर से प्रदान करे, तब सिद्धि मिलती है। प्रतिदिन मृत्युञ्जय आदि मन्त्र जप करे। इससे अपनी रक्षा होती है; अन्यथा साधक की मृत्यु होती है।

शारदामन्त्रोद्धारस्तद्विधिनिरूपणञ्च

अथ शारदा—

प्रणवो भुवनेशी च कामराजमतः परम्। भृगुः सर्गी च हृदयं ङेन्तं भगवतीपदम्॥१॥
शारदायै त्रपा वह्नेः प्रिया सप्तदशार्णकः।

ॐह्रींक्लींसः नमो भगवत्यै शारदायै ह्रीं स्वाहा' (१७)।

नास्य विघ्नो न वा शौचं न वा मन्त्रविपर्ययः। न क्लेशो न च दौर्बल्यं न होमो न चिरन्तता॥२॥
साक्षादमृतरूपोऽयं मन्त्रः सर्वार्थसिद्धिदः। वर्णलक्षं पुरश्चर्या तदर्धं वा महेश्वरि॥३॥
अर्धादर्धं समाख्यातमतो न्यूनं न कारयेत्। जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः॥४॥
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः। गृहे वने श्मशाने वा शून्यागारे चतुष्पथे॥५॥
साधकः सिद्धये कुर्यात् पुरश्चरणकां क्रियाम्। जपाद् दशांशतो होमस्तद्दशांशेन तर्पणम्॥६॥
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम्। पुरस्क्रियां मनोः कृत्वा मनूत्कीलनमाचरेत्॥७॥
मनुं संजीवयेत् पश्चात् सिद्धमूलं ततो जपेत्। संपुटं च पुनर्दद्यात्ततो मन्त्रोऽपि सिध्यति॥८॥
आद्यवर्णं महादेवि दद्यान्मन्त्राञ्चले शिवे। मन्त्रादौ दीयते नीरमिदमुत्कीलनं भवेत्॥९॥
नाम दद्यात्तथाप्यादौ तारं दद्यात्तथाञ्चले। एष संजीवनो नाम मन्त्रो मन्त्रस्य भामिनि॥१०॥
ततो जपेन्मनुं सिद्धं साधकः सर्वसिद्धये। नामाग्रे दीयते नीरं संपुटाख्यस्त्वयं मनुः॥११॥
एकवारं पठेद् देवि यथाशक्त्या जपेत्ततः। अणिमाद्यष्टसिद्धीनामीश्वरः साधको भवेत्॥१२॥
यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपितम्। सर्वसंमोहनं यन्त्रं सर्वाशापरिपूरकम्॥१३॥
बिन्दुगर्भं त्रिकोणं च तद्बही रसकोणकम्। अष्टपत्रं षोडशारं भूपुरं विलिखेत् प्रिये॥१४॥
लयाङ्गमथ वक्ष्यामि तव प्रीत्या वरानने। यन्त्रमभ्यर्च्य विधिवत्साधको मुक्तिमाप्नुयात्॥१५॥
गणेशो धर्मराजश्च वरुणश्च कुबेरकः। एते द्वाःस्थाः समाख्याता दक्षावर्तेन पूजयेत्॥१६॥
जया च विजया दुर्गा शाम्बरी रक्तदन्तिका। शाकम्भरी च चामुण्डा शिवा च शिवदूतिका॥१७॥
शीतला सुप्रभा शान्ता रतिः प्रीतिः स्थितिर्मतिः। इति षोडशपत्रेषु पूज्याः षोडश देवताः॥१८॥
करालो विकरालश्च संहारो रुरुभैरवः। महाकालोऽपि कालाग्निरुन्मत्तः सुप्तभैरवः॥१९॥
पूज्या अष्टदले देवि स्वमन्त्रैरष्ट भैरवाः। शारिका च तथा राज्ञीदेवी ज्वालामुखी ततः॥२०॥
कालिका त्रिपुरा देवि सुमुखी परमेश्वरि। एताः षट्कोणमध्यस्थाः पूज्याः साधकसत्तमैः॥२१॥
भवानी बगला तारा पूजनीयास्त्रिकोणगाः। मूलेन शारदादेवी बिन्दौ विद्यां सरस्वतीम्॥२२॥
पूजयेद् भक्तिभावेन गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। शूलं प्रासं तथा पद्मं पाशं कलशमेव च॥२३॥
व्यूहमित्यायुधान् बिन्दौ पूजयेत् साधकोत्तमः। स्ववामे पूजयेद् देवि गुरुपञ्चकमादरात्॥२४॥
स्वदक्षे धर्मवैराग्यं पूजयेत् क्रमशस्ततः। ऊर्ध्वं क्षेत्रेश्वरांश्चैव यथावद्वर्ण्यते मया॥२५॥
क्रोष्टुवक्त्रं हयवक्त्रं ततोऽजवक्त्रकं शिवे। सिंहवक्त्रं महादेवि पूजयेच्चतुरस्त्रके॥२६॥
शिवं रुद्रं मृडं भीमं भैरवं परमेश्वरि। बिन्दौ संपूजयेन्मन्त्री लयाङ्गमिदमुच्यते॥२७॥

मन्त्रस्यास्य महादेवि भैरवो ऋषिरीरितः। छन्दस्त्रिष्टुप् समाख्यातं देवता शारदा स्मृता॥२८॥
माया बीजं शरः शक्तिः स्तम्भं कीलकमुच्यते। धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोग इति स्मृतः॥२९॥
तारमायास्मराद्यैश्च वर्णैः षड्दीर्घभागिभिः। करन्यासः समाख्यातो हृदयादिषडङ्गकम्॥३०॥
अश्मरीबीजरूपेण कुर्याद् दिग्बन्धनं सुधीः। इति।

शारदा मन्त्र—सत्रह अक्षरों का शारदा का मन्त्र है—ॐ ह्रीं क्लीं सः नमो भगवत्यै शारदायै ह्रीं स्वाहा। इस मन्त्र की साधना में न विघ्न, न शौच, न मन्त्रविपर्यय, न क्लेश, न दौर्बल्य, न हवन ही न दीर्घकालिक साधना की आवश्यकता होती है। साक्षात् अमृतरूप यह मन्त्र सर्वार्थ-सिद्धिदायक है। सत्रह लाख, साढ़े आठ लाख या सवा चार लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। इससे कम न करे। जैसे जीवहीन देह किसी काम में सक्षम नहीं होता, वैसे ही पुरश्चरण, हीन मन्त्र से भी कोई काम नहीं होता। घर में, वन में, श्मशान में, शून्यागार में या चौराहे पर साधक सिद्धि के लिये पुरश्चरणात्मक क्रियाओं को करे। जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन कराकर मन्त्र का पुरश्चरण करे। पहले उत्कीलन करे, तब मन्त्र को सञ्जीवित करे और तत्पश्चात् सिद्ध मूल मन्त्र का जप करे। तब सम्पुटित करके जप करने से मन्त्र सिद्धि होता है। मन्त्र के पहले वर्ण को मन्त्र के अंचल में देकर मन्त्र के पहले वं लगाने से उत्कीलन होता है। पहले नाम लगावे तो मन्त्र का ॐ लगावे संजीवन होता है। साधक इस सिद्ध मन्त्र का जप सभी सिद्धियों के लिये करे। नाम के आगे वं लगाने से मन्त्र सम्पुटित होता है। एक बार पाठ करे तब यथाशक्ति जप करे। इससे साधक आठो सिद्धियों का स्वामी हो जाता है।

अब मैं सभी तन्त्रों में गोपित यन्त्रोद्धार को कहता हूँ। यह यन्त्र सर्वसम्मोहन कारक एवं सर्वाशापरिपूरक है। पहले त्रिकोण बनाकर उसके मध्य में बिन्दु अंकित करे। उसके बाहर षट्कोण बनाकर उसके बाहर अष्टपत्र, उसके बाहर षोड़श दल तब भूपुर बनावे। यन्त्र की पूजा विधिवत् करके साधक मोक्ष प्राप्त करता है। गणेश, धर्मराज, वरुण, कुवेर की पूजा द्वारों पर दक्षिणावर्त क्रम से करे। षोडश दल में जया, विजया, दुर्गा, शाम्बरी, रक्तदन्तिका, शाकम्भरी, चामुण्डा, शिवा, शिवदूती, शीतला, सुप्रभा, शान्ता, रति, प्रीति, स्थिति एवं मति की पूजा करे। अष्टदल में कराल, विकराल, संहार, रुरुभैरव, महाकाल, कालाग्नि, उन्मत्त भैरव, सुप्तभैरव—ये आठ भैरव पूज्य हैं। षट्कोण में शारिका, राज्ञी, ज्वालामुखी, कालिका, त्रिपुरा, सुमुखी—ये छः पूज्या हैं। त्रिकोण में भवानी, बगला, तारा पूज्य हैं। बिन्दु में मूल मन्त्र से शारदा देवी विद्या सरस्वती की पूजा करे। पूजा भक्ति-भाव से गन्ध, पुष्प, अक्षतादि से करे। बिन्दु के चारो ओर शूल, प्रास, पद्म, कलश, आयुध, व्यूह की पूजा करे। अपने वाम भाग में गुरुपञ्चक की पूजा करे। अपने दाँयें भाग में धर्म और वैराग्य की पूजा करे। ऊपर क्षेत्रपाल की पूजा यथाविधि करे। चतुरस्र में क्रोष्टुवक्त्र, हयवक्त्र, अजवक्त्र, सिंहवक्त्र की पूजा करे। बिन्दु में लयाङ्ग पूजा में शिव रुद्र भृड भीम भैरव की करे। इस मन्त्र के ऋषि भैरव, छन्द त्रिष्टुप्, देवता शारदा, ह्रीं बीज, फट् शक्ति एवं स्तम्भ कीलक है। धर्मार्थ-काम-मोक्ष के लिये इसका विनियोग होता है। ॐ ह्रीं क्लीं के षड्दीर्घ रूप से अंगन्यास एवं करन्यास करे तथा नमः से दिग्बन्ध करे।

शारदामन्त्रप्रयोगः

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यं निर्वर्त्य शौचादिकं विधाय, स इति शक्तिबीजेन दन्तान् विशोध्य, प्रणवेन मुखं प्रक्षाल्य, 'ॐ मणिधरवज्रिणि हूंशिखापरिसरे रक्ष रक्ष ठःठःउः फट् स्वाहा' इति मन्त्रेण शिखां बद्ध्वा मलस्नानं विधाय मन्त्रस्नानार्थं स्वपुरतस्तीर्थमण्डलं परिकल्प्य प्राग्वत् तीर्थान्यावाह्य, तत्र 'शारदे वरदे मातर्मातृकाक्षरभूषिते। परिवारयुते देवि यन्त्रेऽस्मिन् संनिधिं कुरु' इत्यावाह्यान्यत् सर्वं प्राग्वद्विधाय, ॐ शारदायै विद्महे सप्तदशाक्षर्य्यै धीमहि तन्नः सरस्वती प्रचोदयात्। इति गायत्र्या संध्यावन्दनादितर्पणान्तं कर्म समाप्य यागगृहमागत्य, योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि भैरवाय ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीशारदायै देवतायै नमः। गुह्ये ह्रींबीजाय नमः। पादयोः सौः शक्तये नमः। नाभौ नः कीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम चतुर्वर्गफलसिद्धये

विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐह्रांक्लां इत्यादि षड्दीर्घयुक्तेन करषडङ्गन्यासं कुर्यात्। ततः ॐह्रींश्रीं कामरूपपीठाय नमः हृदयाय नमः। एवं जालन्धरपूर्णगिरि-उड्याणवाराणसीशारदापीठानां षडङ्गन्यासं कुर्यादिति पीठषडङ्गं विधाय, प्रागुक्तरीत्या शारदामातृकां विन्यस्य आत्मविद्याशिवगुरुशिवशक्तितत्त्वानि षडङ्गेषु न्यसेदिति तत्त्वषडङ्गं विधाय, ॐनमः शिरसि। एवं ह्रींनमो मुखे। क्लींनमो हृदये। सः नमो नाभौ। नं पृष्ठे। मों मेढ्रे। भं गुह्ये। गं कट्यां। वं जानुनि। त्यैं जङ्घायां। शां गुल्फयोः। रं पादयोः। दां शिरसः पादपर्यन्तं। यैं पादादिमूर्धान्तं। ह्रीं मूर्ध्नि। स्वां मुखे। हां नमः सर्वाङ्गेषु। एवं न्यासं विधाय, श्रीगुरुं ध्यात्वा देवीं ध्यायेत्।

उद्यद्बालार्कबिम्बद्युतिमनलशिखाकोटितेजस्विनीं तां
भास्वच्चन्द्राग्निनेत्रां विविधमणिशिलारश्मिभास्वत्किरीटाम्।
तारार्णाक्षीं च मायामदनविलसितां शक्तिवर्णैकरूपां
वन्दे सिंहासनस्थां प्रहसितवदनां शारदां षड्भुजाढ्याम्॥१॥
अरुणार्कनिभां त्रिलोचनां कमलदिप्रासकशूलधारिणीम्।
कलशव्यूहकपाशषड्भुजां हृदि देवीमनिशं भजामहे॥२॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैराराध्य, स्वपुरतश्चन्दनादिपीठे कुङ्कमादिना बिन्दुगर्भं त्रिकोणं विलिख्य तद्बहिः षट्कोणं, तद्बहिरष्टदलं, तद्बहिः षोडशदलं, तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्रं कुर्यादिति पूजायन्त्रं विरच्य, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्य, अर्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजान्ते भुवनेश्वरीपीठमभ्यर्च्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते बिन्दावग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च षडङ्गानि संपूज्य, चतुरस्रे वायव्यादीशान्तं गुरुपङ्क्तित्रयं संपूज्य, गणेशधर्मराजवरुणकुबेरान् पूर्वादिदिक्षु पूजयेदिति प्रथमावरणम्।

ततः षोडशदले देव्यग्रादिप्रादक्षिण्येन—जयायै नमः। विजया०। दुर्गा०। शाम्बरी०। रक्तदन्तिका०। शाकम्भरी०। चामुण्डा०। शिवा०। शिवदूती०। शीतला०। सुप्रभा०। शान्ति०। रति०। प्रीति०। स्थिति०। मति०। इति द्वितीयावरणम्।

ततोऽष्टदले देव्यग्रादिप्रादक्षिण्येन—करालभैरवाय नमः। विकराल०। संहार०। रुरु०। महाकालभै०। कालाग्नि०। उन्मत्त०। सुप्तभै०। इति तृतीयावरणम्।

ततः षट्कोणे—शारिकायै नमः। राज्ञी०। ज्वालामुखी०। कालिका०। त्रिपुरा०। सुमुखी०। इति चतुर्थावरणम्।

ततस्त्रिकोणे—भवान्यै नमः। बगला०। तारा०। इति पञ्चमावरणम्।

बिन्दौ—श्रीं आनन्दभैरवसहितायै शारदायै नमः इति सप्तवारमभ्यर्च्य, पुनस्त्रिकोणे—भवान्यै नमः। बगला०। तारा०। पूजयेदिति षष्ठम्।

शूलप्रासपद्मकलशव्यूहान् पूजयेदिति सप्तमम्।

स्ववामे—पुनर्गुरुपङ्क्तित्रयमभ्यर्च्य, स्वदक्षे—धर्मज्ञानवैराग्यानि संपूज्य, चतुरस्रे-ऊर्ध्वे हयवक्त्र-क्रोष्टुवक्त्र-अजवक्त्र-सिंहवक्त्रान् क्षेत्रेशान् संपूज्य, पुनः शिवरुद्रमृडभीमभैरवान् संपूजयेदित्यष्टमावरणम्।

एवं संपूज्य धूपदीपादिनैवेद्यान्तं दत्त्वा जप्त्वा जपं समर्प्य प्राग्वद्वटुकादिभ्यो बलीनुत्सृज्यारार्तिकं सर्वं समापयेदिति। पुरश्चरणं तु प्रागेवोक्तम्।

प्रयोग—प्रातःकृत्य करके शौचादि करके 'सः' शक्तिबीज से दतुवन करे। ॐ से मुख धोये। ॐ मणिधर वज्रिणि हुंशिखापरिसरे रक्ष रक्ष ठः ठः फट् स्वाहा—इस मन्त्र से शिखा-बन्धन करे। मलस्नान करके मन्त्रस्नान के लिये अपने आगे तीर्थमण्डल कल्पित करे। उसमें पूर्ववत् तीर्थों का आवाहन करते हुये यह मन्त्र पढ़े—शारदे वरदे मातर्मातृकाक्षरभूषिते। परिवारयुते देवि यन्त्रेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु। आवाहन के बाद सब कुछ पूर्ववत् करके 'ॐ शारदायै विद्महे सप्तदशाक्षर्यै धीमहि तन्नः सरस्वती प्रचोदयात्' इस शारदा गायत्री से सन्ध्यावन्दन से तर्पणादि तक के कर्म करके पूजा स्थल में आकर योगपीठन्यास

करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तदनन्तर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भैरवाय ऋषये नम:। मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नम:। हृदये श्रीशारदायै देवतायै नम:। गुह्ये ह्रीं बीजाय नम:। पादयो: सौ: शक्तये नम:। नाभौ न: कीलकाय नम:। इस प्रकार न्यास करके चतुर्वर्ग की प्राप्ति हेतु विनियोग कर ॐ ह्रां क्लां हृदयाय नम:, ॐ ह्रीं क्लीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं क्लूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं क्लैं कवचाय हुम्, ॐ ह्रौं क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्र: क्ल: अस्त्राय फट् कहकर षडङ्ग न्यास करे।

तदनन्तर ॐ ह्रीं श्रीं कामरूपपीठाय नम: हृदयाय नम:। इसी प्रकार जालन्धर, पूर्णगिरि, उड्यान, वाराणसी, शारदा पीठों से षडङ्ग न्यास करे। पूर्वोक्त रीति से शारदा मन्त्रवर्णों से न्यास करके आत्मविद्या, शिव, गुरु, शिव, शक्ति, तत्त्वों का न्यास षडङ्गों में करे तब मन्त्र वर्ण न्यास करे—ॐ नम: शिरसि, ह्रीं नमों मुखे, क्लीं नमो हृदये, स: नमो नाभौ, नं नम: पृष्ठे, मों नम: मेढ्रे, भं नम: गुह्ये, गं नम: कट्यां वं नम: जानुनि त्यैं नम: जंघायां, शां नम: गुल्फयो:। रं नम: पादयो:, दां नम: शिरस: पादपर्यन्तं यं नम: पादादि मूर्धातन्तं ह्रीं नम: मूर्ध्नि स्वां नम: मुखे। हां नम: सर्वाङ्गेषु इस प्रकार न्यास करके श्री गुरु का ध्यान करके देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यद्बालार्कबिम्बद्युतिमनलशिखाकोटितेजस्विनीं तां भास्वच्चन्द्राग्निनेत्रां विविधमणिशिलारश्मिभास्वत्किरीटाम्।।
ताराणाक्षीं च मायामदनविलसितां शक्तिवर्णैकरूपां वन्दे सिंहासनस्थां प्रहसितवदनां शारदां षड्भुजाढ्याम्।।
अरुणार्कनिभां त्रिलोचनां कमलदिप्रासकशूलधारिणीम्। कलशव्यूहकपाशषड्भुजां हृदि देवीमनिशं भजामहे।।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करे। अपने आगे चन्दन आदि के पीठ पर कुङ्कुमादि से बिन्दुगर्भ त्रिकोण बनाकर उसके बाहर षट्कोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल, उसके बाहर षोडश दल, उसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र बनाकर पूजायन्त्र बनावे। उसे अपने आगे स्थापित कर पूजा करे। अर्घ्यादि स्थापन करके आत्मपूजा करे। भुवनेश्वरी पीठ में अर्चन करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहनादि से पुष्पोपचार तक की पूजा करें। बिन्दु, अग्नि ईशान नैर्ऋत्य वायव्य कोण, मध्य और दिशाओं में षडङ्ग पूजा करे। चतुरस्र में वायव्य से ईशान तक गुरुपंक्तियों की पूजा करे। गणेश, धर्म, राज, वरुण, कुबेर की पूजा पूर्वादि दिशाओं में करे। यह प्रथमावरण की पूजा होती है।

षोडश दल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से जयायै नम:, विजयायै नम:, दुर्गायै नम:, शाम्बर्यै नम:, रक्तदन्तिकायै नम:, शाकम्भर्यै नम:, चामुण्डायै नम:, शिवायै नम:, शिवदूत्यै नम:, शीतलायै नम:, सुप्रभायै नम:, शान्त्यै नम:, रत्यै नम:, प्रीत्यै नम:, स्थित्यै नम:, मत्यै नम: से इन सबकी पूजा करे। यह द्वितीयावरण की पूजा होती है।

अष्टदल में देवी के आगे से प्रदक्षिण क्रम से करालभैरवाय नम:। विकराल भैरवाय नम:। संहार भैरवाय नम:। रुरु भैरवाय नम:। महाकलाभैरवभैरवाय नम:। कालाग्नि भैरवाय नम:। उन्मत्तभैरवाय नम: एवं सुप्तभैरवाय नम: से पूजा करे। यह तृतीयावरण की पूजा होती है।

षट्कोण में शारिकायै नम:, राज्ञ्यै नम:, ज्वालामुख्यै नम:। कालिकायै नम:, त्रिपुरायै नम: एवं सुसुख्यै नम: से पूजा करे। यह चतुर्थावरण की पूजा होती है।

त्रिकोण में भवान्यै नम:। बगलायै नम: एवं तारायै नम: से पूजा करे। यह पञ्चमावरण की पूजा होती है।

विन्दु में श्री आनन्दभैरवसहितायै शारदायै नम: से पूजा करे। पुन: त्रिकोण में भवान्यै नम:, बगलायै नम:, तारायै नम: से पूजा करे। यह षष्ठावरण की पूजा होती है।

शूल प्रास पद्म कलश व्यूह की पूजा सप्तम आवरण में होती है। अपने बाँयें गुरुपंक्तित्रय की पूजा करे। दाहिने भाग में धर्म ज्ञान वैराग्य की पूजा करे। चतुरस्र में ऊपर हयवक्त्र, क्रोष्टुवक्त्र, अजवक्त्र, सिंहवक्त्र, क्षेत्रेशों की पूजा करे। फिर शिव रुद्र मृड भीम भैरवों की पूजा करे। यह अष्टम आवरण की पूजा होती है। तदनन्तर धूप, दीप, नैवेद्य, अर्पण करे। जप करे। जप का समर्पण करे। पूर्ववत् वटुकादि को बलि प्रदान करे एवं आरती करके पूजा समाप्त करे।

अष्टविधप्रयोगविधिः

तथा—

प्रयोगानष्ट वक्ष्यामि साधकानां हिताय वै। स्तम्भनं मोहनं चैव मारणाकर्षणे तथा ॥३१॥
उच्चाटनं वशीकारं शान्तिकं पौष्टिकं तथा। उपचारं तथैतेषां शृणु वक्ष्यामि पार्वति ॥३२॥
रवौ प्रभातवेलायां गत्वा प्रेतगृहे शिवे। भस्मना स्नानमङ्गेषु कृत्वा साधकसत्तमः ॥३३॥
मूलं जप्त्वायुतं मन्त्री होमं कुर्याच्चितानले। दशांशं घृतपद्माक्षयवमाषाजमेढ्रकैः ॥३४॥
गतिस्तम्भं भवेच्छीघ्रं दस्युवातार्कपाथसाम्। वादिनां च मुखस्तम्भं कामिनां रेतसस्तथा ॥३५॥
चन्द्रे मध्याह्नवेलायां स्नात्वा शून्यस्थले व्रजेत्। मूलमन्त्रं महादेवि जपेदयुतसंख्यया ॥३६॥
होमः सर्पिर्मधुक्षौद्रमालतीकनकादिभिः। तद्भस्मना चरेद्भाले तिलकं साधकोत्तमः ॥३७॥
तस्य दर्शनमात्रेण त्रिजगन्मोहमेष्यति। भौमेऽर्धरात्रसमये गत्वा श्मशानमण्डले ॥३८॥
पशु संपूजयेत् तत्र मूलेनाजं च साधकः। तदग्रे च जपेन्मन्त्रं मालयायुतसंख्यया ॥३९॥
बलिं निवेद्य तत्राज्यं जुहुयात्तस्य मेढ्रके। सर्पिषा च सहृत्पद्मं तथान्त्राणि दशांशतः ॥४०॥
शेषं संभोजयेच्छीघ्रं यावत्तृप्तो भविष्यति। कर्मणा मनसा वाचा सत्यं सत्यं कुलेश्वरि ॥४१॥
शत्रुः कालसमानोऽपि मृत्युमेष्यति नान्यथा। बुधे सायं समागत्य नदीतीरं च साधकः ॥४२॥
स्नात्वा रहो जपेन्मन्त्रमयुतं दिव्यमालया। होमो घृतगुडूच्यादिद्रव्यशुक्रादिशुद्धिभिः ॥४३॥
तत्रैव सहसा स्त्रीणां भवेदाकर्षणं ध्रुवम्। गुरौ निशीथकाले तु गत्वा तु शवसद्मनि ॥४४॥
चितायामासनं दत्त्वा जपेदयुतसंख्यया। होमो घृतेन मीनैश्च कपोतान्त्रसमन्वितैः ॥४५॥
कटुतैलेन काकानां पक्षैः कार्यो विधानतः। कर्मणा मनसा वाचा रिपुमुच्चाटयेद् ध्रुवम् ॥४६॥
शुक्रे ब्राह्मे मुहूर्ते च गत्वा वटतले जपेत्। मूलं वायुतसंख्याकं साधको मन्त्रसाधकः ॥४७॥
होमं कुर्यात् तदा सर्पिर्मधुगोधूमचूर्णकैः। रजस्वलाम्बरै रक्तैः पीतपुष्पैर्महेश्वरि ॥४८॥
साधकस्य तदा देवि त्रैलोक्यं वशमेष्यति। शनौ रात्रिमुखे देवि गृहे वा वनभूमिषु ॥४९॥
जपेन्मन्त्रायुतं देवि होमयेत् सर्पिषा सिताम्। नारिकेलं च पाषण्डं मीनकण्टकसंयुतम् ॥५०॥
वह्निग्रहादिपीडानामतिवृष्टिभयस्य च। मारीदुर्भिक्षभीतीनां सद्यः शान्तिर्भविष्यति ॥५१॥
सर्ववारेषु सर्वत्र पौष्टिकं साधकश्चरेत्। शुभेऽह्नि शुभनक्षत्रे गृहे जप्त्वायुतं मनुम् ॥५२॥
होमः सर्पिर्दधिक्षौद्रपायसाद्यैश्च श्रीफलैः। खगाण्डाक्षियुतैः कार्यः साधकैः सर्वसाधकैः ॥५३॥
देवीनां देवतानां च महापुष्टिः प्रजायते। सर्पिर्यवादिगोधूमशालिद्रव्यादिभिः शिवे ॥५४॥
होमो दशांशतः कार्यः साधकैः सर्वसिद्धये। इतीदं साधनं देवि शारदाया मया स्मृतम् ॥५५॥
गुह्यं गोप्यं न दातव्यं भक्तिहीनाय पार्वति। कुलीनाय च शान्ताय गुरुभक्तिरताय च ॥५६॥
दद्यात् सद्यो भवेत् सिद्धिरन्यत्र सिद्धिहानिता। शारदासाधनं द्रव्यं गोपनीयं विशेषतः ॥५७॥
सर्वदा गोपयेद्यत्नादित्याज्ञा पारमेश्वरी। शारदोपासको देवि दरिद्रो न भवेत् क्वचित् ॥५८॥
मूर्खत्वं च न प्राप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः।

इति श्रीमहामहोपाध्यायभगवत्पूज्यपाद-श्रीगोविन्दाचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे षड्विंश श्वासः॥२६॥

●

अष्टविध प्रयोग—साधकों के हित के लिये अब आठ प्रयोगों को कहता हूँ। ये आठ प्रयोग हैं—स्तम्भन, मोहन, मारण, आकर्षण, उच्चाटन एवं वशीकरण, शान्तिक, पौष्टिक।

१. स्तम्भन—रविवार की प्रभात वेला में श्मशान में जाकर साधक अपने सारे शरीर में चिताभस्म लगावे। दश हजार मूल मन्त्र का जप करे। चिता की अग्नि में दशांश हवन घी, कमलगट्टा, यव, उडद, अज एवं मेढ़ से करे। इससे लुटेरों, हवा, सूर्य, जल एवं वादियों की गति और मुख का स्तम्भन के साथ कामियों का वीर्यस्तम्भन भी होता है।

२. मोहन—सोमवार के दोपहर में शून्य स्थान में बैठकर मूल मन्त्र का जप दश हजार करे। सर्पि मधु क्षौद्र मालती धतूरे से हवन करे। उसके भस्म से भाल में तिलक लगावे तो उसे देखकर तीनों लोक मोहित होते हैं।

३. मारण—मंगलवार की आधी रात में श्मशान मण्डल में जाकर मूल मन्त्र से बकरे की पूजा करे। उसके आगे माला से दश हजार मन्त्रजप करे। उसे बलि देकर उसके मेढ़ और गोघृत, हृदय, अंतड़ी से दशांश हवन करे। शेष का इच्छा भर भोजन कर्म मन वचन से करावे। तब काल के समान शत्रु भी मर जाता है।

४. आकर्षण—बुधवार के शाम में नदी तट पर जाकर स्नान करे। दिन भर दिव्य माला से दश हजार जप करे। घी, गुरुच, शुक्रादि शुद्धि से हवन करे तो वहीं पर सहसा स्त्रियों का आकर्षण होता है।

५. उच्चाटन—गुरुवार में रात के समय श्मशान में जाकर चिता में आसन लगाकर दश हजार मन्त्रजप करे। घी, मछली और कबूतर की आँत, कड़ुआ तेल और कौए के पंख से विधान से हवन करे तो कर्म-मन-वाणी से शत्रु का उच्चाटन होता है।

६. वशीकरण—शुक्रवार में ब्राह्म मुहूर्त में उठकर वटवृक्ष के नीचे जाकर मूल मन्त्र का दश हजार जप करे। तब सर्पि, मधु, गेहूँचूर्ण, रजस्वला का वस्त्र, लाल-पीले फूलों से हवन करे। तब देवी साधक के वश में तीनों लोक कर देती है।

७. शान्तिक—शनिवार में रात के पहले प्रहर में देवी मन्दिर या जंगल में जाकर दश हजार मन्त्र जप करे। तब गोघृत, मिश्री, नारियल, पाषंड, मीनकण्टक के मिश्रण से हवन करे। तब अग्निग्रहादि पीड़ा, अतिवृष्टि का भय, मारी एवं दुर्भिक्ष के भय की तुरन्त शान्ति होती है।

८. पौष्टिक—सभी दिनों में सर्वत्र पौष्टिक कर्म साधक करे। शुभ दिन शुभ नक्षत्र में घर में दश हजार मन्त्र जप करे। सर्पि, दधि, क्षौद्र, पायस, श्रीफल, चिड़ियों का अण्डा एवं आँख से हवन करे। तब साधक के सभी कार्यों से देवियों एवं देवताओं की महापुष्टि होती है। सर्पि, यव, गेहूँ, चावल आदि से दशांश हवन करने पर साधक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

शारदा-साधन का यह विधान अत्यन्त गुप्त है तथा भक्तिहीनों को देय नहीं है। कुलीन, शान्त, गुरुभक्त को देने से तुरन्त सिद्धि मिलती है, अन्यथा सिद्धि नहीं होती। शारदा-साधन द्रव्य विशेषरूप से गोपनीय है। यत्न से सदैव इसे गुप्त रखे—यह परमेश्वरी की आज्ञा है। शारदा का उपासक कभी भी दरिद्र नहीं होता और उसे कभी भी मूर्खत्व प्राप्त नहीं होता; यह सत्य है, सत्य है, सत्य है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र के कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में षड्विंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ सप्तविंशः श्वासः

वैष्णवमन्त्रविधानम्

अथ वैष्णमन्त्राः। उत्तरतन्त्रे—

अथ वैष्णवमन्त्राणां विधानमभिधीयते। त्रिषु लोकेषु विख्यातं मुनीन्द्रगणसेवितम् ॥१॥
धर्मार्थकामामोक्षाप्तिनिदानं सर्वसमंतम्। षट्कर्मकरणश्रेष्ठं गोपनीयं सदा बुधैः ॥२॥
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानदृष्टिप्रदायकम्। धनैश्वर्यप्रदं सर्वपापविध्वंसकारकम् ॥३॥
अपमृत्युहरं पुंसां रोगदारिद्र्यनाशनम्। क्षुद्रग्रहहरं क्ष्वेडनाशनं श्रीजयप्रदम् ॥४॥
दुर्गकान्तारमार्गादौ भयनाशकरं परम्। नदीनदसमुद्रादौ तरिध्वंसेषु तारणम् ॥५॥
नराश्वरथगोहस्तिपुत्रमित्रकलत्रदम्। क्षेत्रग्रामप्रदं वीर्यशौर्यधैर्यप्रभाकरम् ॥६॥
स्फूर्तिकान्तिकवित्वादिकरं सौभाग्यदायकम्। ब्रह्माण्डकोटिसंक्षोभिसिद्ध्यष्टकगुणप्रदम् ॥७॥
बहुना किमिहोक्तेन सर्वदं नात्र संशयः।

वैष्णव मन्त्र—उत्तरतन्त्र में कहा गया है कि अब वैष्णव मन्त्र का विधान कहा जाता है। श्रेष्ठ मुनियों द्वारा सेवित यह वैष्णव मन्त्र तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। सर्वसंमत रूप से यह धर्मार्थ-काम-मोक्षदायक कहा गया है। यह षट्कर्म करने हेतु भी श्रेष्ठ है और विद्वानों द्वारा इसे सदा गुप्त रखा गया है। अज्ञान रूपी तिमिर से गन्धों को यह ज्ञानरूपी दृष्टिदायक है। यह धन एवं ऐश्वर्य देने वाला तथा सभी पापों का विनाशक है। मनुष्यों के अपमृत्यु, रोग और दारिद्र्य को नष्ट करने वाला है; क्षुद्र ग्रह-हारक, क्ष्वेंडनाशक एवं श्री-जयप्रदायक है। दुर्ग-कान्तार-मार्गभय का विनाशक है। नदी, नद, समुद्र आदि में नाव के डूबने के समय यह तारक है। मनुष्यों को घोड़ा, हाथी, गाय, रथ, पुत्र, मित्र, कलत्र देने वाला है। यह क्षेत्र एवं ग्रामप्रद तथा वीर्य-शौर्य-धैर्य और तेज: प्रदायक है। स्फूर्ति, कान्ति, कवित्वादि के साथ-साथ सौभाग्यदायक है। यह करोड़ ब्रह्माण्डों को संक्षोभित करने वाला और सिद्धि के आठ गुणों को देनेवाला है। बहुत कहने से क्या लाभ; यह सब कुछ नि:सन्देह रूप से देने वाला है।

नारायणमन्त्रनिर्णयः

तेष्वथाष्टाक्षरो मन्त्रो यथावदभिधीयते ॥८॥
पापौघनाशनः श्रीदो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः। ध्रुवो दीर्घा विषं सद्यो दीर्घा चाननवृत्तयुक् ॥९॥
अग्न्यनन्तौ समीरश्च सदीर्घस्तादिरीरयुक्। अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो नारायणसमाह्वयः ॥१०॥

ध्रुवः प्रणवः। दीर्घा नकारः। विषं मकारः, सद्य ओकारः, ताभ्यां मो इति। दीर्घा नकारः, आननवृत्तं आकारः, ताभ्यां नां। अग्नी रेफः, अनन्त आकारः, तेन रा। समीरो य। सदीर्घस्तादिः आकारयुक्तो णकारः, तेन णा। ईरो यकारः। स्पष्टम्। 'ॐ नमो नारायणाय' इति। मन्त्रनिरुक्तिश्च तत्रैव—

प्रणवः परमात्मार्णवाचको वक्ष्यते ततः। नकारश्च निषेधार्थः खमर्थे मोपदं मतम् ॥११॥
ना जलं रा वह्निरुक्तो यो वायुर्णा धरात्मता। यश्चतुर्थ्यर्थकस्तस्मादेवं व्याख्यानमीरितम् ॥१२॥
गदितो मुनिरस्याणोः साध्यनारायणाह्वयः। प्रोक्तं छन्दस्तु देव्याद्यं गायत्रं देवता मनोः ॥१३॥
परमात्मा समुद्दिष्टः पञ्चाङ्गानि ततो न्यसेत्। क्रुद्धोल्कश्च महोल्कश्च वीरोल्को द्युल्कसंज्ञकः ॥१४॥
सहस्रोल्कश्चतुर्थ्यन्तैरेभिरङ्गुलिषु न्यसेत्। उक्तमङ्गुष्ठपूर्वासु तर्जन्याद्यासु केचन ॥१५॥
कनिष्ठान्तासु संप्रोचुर्मन्त्री पश्चात्तनौ न्यसेत्।

चतुर्थ्यन्तैः स्वाहान्तैश्च। 'क्रुधोल्कादिपदैर्वह्निजायान्तैर्जातिसंयुतैः' इति त्रैलाक्यमोहनतन्त्रवचनात्। 'एषां विभक्तियुक्तानां भवेदन्तेऽग्निवल्लभा' इति तन्त्रप्रकाशवचनाच्च। नारायणीये—'कनिष्ठादितदन्तानामङ्गुलीनां त्रिपर्वसु। ज्येष्ठाग्रेण नमस्ताररुद्धानष्टाक्षरे न्यसेत्' इति। प्रपञ्चसारे (२० प० ६ श्लो०)। 'अष्टाक्षरेण व्यस्तेन कुर्यादष्टाङ्गकं सुधीः। सहृच्छिरः शिखावर्मनेत्रास्त्रोदरपृष्ठके'। इति। तथा—मन्त्रार्णानङ्गषट्केषु जठरे पृष्ठके ततः। दिग्बन्धमस्त्रमन्त्रेण विदध्यान्मन्त्रवित्तमः'। हृदये ॐनमः इत्यादि, उदरे णां नमः। पृष्ठे यं नमः। इति प्रयोगः। केचित्तु—ॐहृदयाय नमः, नं शिरसे० इत्यादिन्यासं वदन्ति, तन्न, अन्त्यवर्णयोर्जात्यभावात्। अपरे—णां हृदयाय नमः, यं पृष्ठाय नमः, इति न्यासं वदन्ति तन्न, स्थानानामधिकरणत्वात् नैषु वर्णानामेवंविन्यासः स्यात्। अन्यथा, अं शिरसे नमः, आं मुखवृत्ताय नमः इत्यादिन्यासापत्तेः। अष्टाक्षरेणेति बिन्दुयुक्तेन। तथा चेशानशिवः—'वर्णा बिन्दुसमायुक्ताः' इति। प्रपञ्चसारे—'अस्त्रमन्त्रेण बद्धाशो मन्त्रवर्णास्तनौ न्यसेत्'। अस्त्रं चक्रम्। 'बद्धदिक् चक्रमन्त्रेण' इति शारदातिलकात्। चक्रमन्त्रोऽग्रे वक्ष्यते दिक्बन्धानन्तरम्। हयशीर्षपञ्चरात्रे—'मूर्धाक्षिमुखहृन्नाभिगुह्यजानुपदेषु च। सृष्टिन्यासोऽयमुद्दिष्टः संहारश्चरणादिकः। मूर्धान्तः स्थितिरित्युक्तो नाभ्यादिहृदयान्तिकाः' इति।

नारायण-मन्त्र—उन वैष्णव मन्त्रों में अष्टाक्षर मन्त्र को अब यथावत् कहा जाता है। यह पापों के समूह का नाशक होने के साथ-साथ धन-भुक्ति-मुक्ति प्रदायक है। नारायण के आठ अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो नारायणाय।

उत्तरतन्त्र में ही इस मन्त्र की निरुक्ति इस प्रकार कही गई है—मन्त्र में प्रणव को परमात्मा का वाचक कहा गया है। न निषेधार्थक है, मो आकाश का वाचक है। ना जल है, रा अग्नि है, य वायु है, णा भूमि है, य चतुर्थी विभक्ति का बोधक है। इसके ऋषि साध्य नारायण, छन्द आद्या गायत्री एवं देवता परमात्मा हैं। पञ्चाङ्ग न्यास, क्रुद्धोल्क, महोल्क, वीरोल्क, द्युल्क, सहस्रोल्क के चतुर्थ्यन्त नामों से अंगुलियों में न्यास किया जाता है। तदनन्तर सम्पूर्ण शरीर में न्यास करना चाहिये।

उत्तर तन्त्र में कहा गया है कि विहित स्थानों में मन्त्रवर्णो का न्यास करे। इस न्यास को शरीर में करने से साधक स्वयं नारायण स्वरूप हो जाता है।

दशविधन्यासाः

उत्तरतन्त्रे—

स्थानेषु वक्ष्यमाणेषु मनुवर्णान् न्यसेत् सुधीः। विन्यस्तमात्रैर्यैर्देहे भवेन्नारायणः स्वयम्॥१॥
आधारहृदयाननभुजपदमूलकनाभिषु प्रथमः। गलनाभिहृत्कुचद्वयपार्श्वद्वयपृष्ठकेष्वपरः॥२॥
शीर्षानननयनद्वयकर्णद्वयनासिकापुटेष्वन्यः। बाहुद्वयपादद्वयसन्धित्रितयशरमिताङ्गुलिषु॥३॥
हृदि सप्तधातुवायुषु कदृगास्यहृदुरःसोरुजङ्घासु। पादयोश्च तथान्यो गण्डांसोर्वङ्घ्रिषु न्यसेत्॥४॥
चक्राङ्गशङ्खसगदापद्मस्थानेषु विन्यसेद्वर्णान्। तत्तन्मुद्रापूर्वकमुक्ता एवं दश न्यासाः॥५॥

प्रपञ्चसारे—'विन्यस्तैर्यैर्भवेन्मन्त्री मन्त्रवर्णात्मको हरिः'। अत्र पद्मपादाचार्याः—मन्त्री मन्त्रवर्णात्मक इत्यनेन न्यासे मन्त्रवर्णानां प्रणवपुटितत्वं प्रतिपर्य्यायं व्यापकन्यासश्चोक्त इति। मन्त्रतन्त्रप्रकाशे—विन्यसेद्वर्णमेकैकं बिन्द्वन्तं ध्रुववेष्टितम् इति। उत्तरतन्त्रे—

क्षितिसलिलानलपवनव्योमाहंकृतिमहत्प्रकृत्याख्येषु। क्रमगदितैरेतैः क्रमगतमन्त्रार्णसंयुतैर्मन्त्री॥१॥
चरणान्धुहृदयवक्त्रकद्वयव्यापकेषु च विन्यसेत्। संहारोऽयं गदितो विपरीता सृष्टिरस्य निर्दिष्टा॥२॥

विपरीता प्रकृत्यादिः।

दशविध न्यास—विद्वान् साधक को विहित स्थानों में मन्त्रवर्ण का न्यास करना चाहिये। शरीर में मात्र न्यास को करने मात्र से ही साधक साक्षात् नारायण-स्वरूप हो जाता है। आधार, हृदय, मुख, भुजा, पादमूल एवं नाभि में प्रथम न्यास होता है। गला, नाभि, हृदय, स्तनद्वय, पार्श्वद्वय एवं पृष्ठ में दूसरा न्यास होता है। शिर, मुख, नेत्रद्वय, कर्णद्वय, नासिकाओं

में तीसरा न्यास होता है। बाहुद्वय, पादद्वय, तीनों सन्धियों, अंगुलियों में चौथा न्यास होता है। हृदय में पाँचवाँ, सप्त धातुओं एवं पञ्च वायुओं में छठा, आत्मा, आँख, मुख, हृदय, ऊरु, जंघा में सातवाँ, पैरों में आठवाँ, कपोल, अंस, ऊरु एवं चरण में नवाँ तथा चक्र, अंग, शंख, गदा, पद्मस्थानों में दशवाँ न्यास होता है। उत्तर में कहा गया है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, अहंकार, महत् एवं प्रकृति में क्रमशः मन्त्र वर्णों का न्यास करना चाहिये। पैर, पादतल, हृदय, मुख, बाहुद्वय में व्यापक न्यास किया जाता है। यह संहार क्रम होता है। इसके विपरीत सृष्टिक्रम न्यास होता है।

न्यासेऽङ्गुलिनियमः

अत्र न्यासे अङ्गुलीनियमश्च तत्रैव—

तत्राङ्गुलीभिर्न्यासः स्याच्छिरस्यैकैव मध्यमा। तर्जनीमध्यमाभ्यां तु चक्षुषोर्न्यास उच्यते ॥१॥
अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तु मुखे न्यासः प्रकीर्तितः। हृदये ज्ञानमुदा स्यादङ्गुष्ठश्च कनिष्ठिका ॥२॥
नाभौ प्रकीर्तिता गुह्ये अनङ्गुष्ठाः प्रकीर्तिताः। सर्वा जानौ च पादे च पञ्चापि परिकीर्तिताः ॥३॥ इति।

तथा—

बिन्दुनादशक्तिशान्तिरूपमात्मचतुष्टयम्। न्यसेत् सर्वतनौ मन्त्री देवताभावसिद्धये ॥१॥ इति।

नारदीये—

द्वादशाक्षरमन्त्राद्या अक्लीबस्वरबीजकाः। केशवाद्या धातृपूर्वसूर्या न्यस्या नमोन्तकाः ॥१॥ इति।

न्यास में अंगुलिनियम यह है कि शिर पर न्यास मध्यमा अंगुलि से, तर्जनी एवं मध्यमा से आँखों में, अंगुष्ठ-अनामिका से मुख में, हृदय में अंगुष्ठ से ज्ञानमुद्रा से, कनिष्ठा से नाभि में, अंगुष्ठरहित अंगुलियों से गुह्य में तथा जानु एवं पाद में सभी अंगुलियों से न्यास करना चाहिये। सम्पूर्ण शरीर में देवताभाव की सिद्धि के लिए बिन्दु-नाद-शक्ति-शान्तिरूप आत्मचतुष्टय न्यास करना चाहिये। नारदीय में कहा गया है कि द्वादशाक्षर मन्त्र में 'नमः' लगाकर न्यास करना चाहिये।

मूर्तिपञ्जरन्यासः

सारसंग्रहे—

मूर्तिपञ्जरनामानं कुर्यान्न्यासान्तरं शुभम्। ग्रहक्ष्वेडहरं श्रीदं यशःपुष्टिसुखावहम् ॥१॥
अष्टवर्णस्यास्य मनोः पूरणायार्कवर्णकः। स्मरणीयो मनुः सम्यग् मन्त्रशास्त्रविशारदैः ॥२॥
अष्टप्रकृतिरूपोऽयमष्टवर्णो मनुर्मतः। तासामात्मचतुष्कस्य मेलनाद्विधिवद् बुधैः ॥३॥
उदितो मनुवर्योऽयमर्कसंख्याक्षरः क्रमात्। अतस्तेनैव तद्वर्णान् विषण्ढस्वरपूर्वकान् ॥४॥
द्वादशार्कयुतान् न्यसेत् प्रोक्तान् द्वादशकेशवान्।

प्रोक्तान् केशवादिमातृकान्यासे, अकारादिद्वादशस्वरेशत्वेन।

भाले कुक्षौ हृदि गले पार्श्वांसकगलेषु च। दक्षिणेषु च वामेषु पृष्ठे ककुदि च क्रमात् ॥५॥

कुक्षिपदेन सान्निध्यान्नाभिभागो लक्ष्यते। 'ललाटनाभिहृदयकण्ठपार्श्वांसकन्धरे। पार्श्वान्तरेंऽसे ग्रीवायां पृष्ठे ककुदि च क्रमात्।' इत्यगस्त्यवचनात्। स्वायम्भुवे नारसिंहे च—

केशवं विन्यसेत्तार्क्ष्य मूर्धदेशेऽथ विष्णुना। नाभौ नारायणं देवं विष्ण्वन्तेन समन्वितम् ॥१॥
माधवं हृदि विन्यसेन्मन्मथेन समन्वितम्। मन्मथान्तेन संयुक्तं गले गोविन्दसंज्ञकम् ॥२॥
विष्णुं भूतस्वरेणाथ दक्षपार्श्वे प्रविन्यसेत्। तदंसे मातृतीयेन सूदनं मधुपूर्वकम् ॥३॥
बिन्दुना शिवयुक्तेन दक्षकर्णे त्रिविक्रमम्। वामनं श्रीधरं चैव हृषीकेशमतः परम् ॥४॥
वामेष्वेकारमोंकारमौकारं बिन्दुना सह। बिन्दुना पद्मनाभं च पृष्ठदेशे तदन्तयुक् ॥५॥

अन्त्यं ककुदि दामेन द्वादशाङ्गमिति स्मृतम्। द्वादशेमानि बीजानि नादबिन्दुयुतानि च ॥६॥
आदित्या द्वादश तथा द्वादशोद्धारसंयुताः।

विष्णुः अ, विष्ण्वन्तः आ, मन्मथ इ, मन्मथान्त ई, भूतस्वरः उ, मा लक्ष्मीस्तेन ईकारः, तत्तृतीयः ऊ, शिवः ए, तदन्तं औकारान्तः अं, अन्त्यः अः इति। आदित्यास्तु—'धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोंऽशुर्भगस्तथा। विवस्वदिन्द्रौ पूषा च पर्जन्यो दशमः स्मृतः। त्वष्टा च विष्णुरित्येते' इति कुम्भसंभवोक्ताः, अंशुः अंशुमत्त्वात्। 'अंशुस्त्वमंशुधारित्वादिति' विष्णुधर्मोत्तरवचनात्। प्रपञ्चसारे (२०.२०)—

द्वादशाक्षरमन्त्रं तु मन्त्रविन्मूर्ध्नि विन्यसेत्। मूर्धस्थो वासुदेवस्तु व्याप्नोति सकलां तनुम्॥

मन्त्रविन्मूर्ध्नीत्यष्टाक्षरेण सार्धमित्यर्थः इति पद्मपादाचार्यः। मन्त्रतन्त्रप्रकाशे—'अष्टाक्षरेण सहितं विन्यसेद् द्वादशाक्षरम्' इति। न्यासप्रकारमाह कुम्भसम्भवः—

(प्रणवश्च स्वरस्तद्वद्वासुदेवाक्षरस्तथा। श्रीराममन्त्रवर्णाश्च ततः स्युः केशवादयः॥
ध्रुवादयो नमोऽन्ताश्च न्यस्तव्या न्यासयोजने)। इति।

राममन्त्रवर्णा इति तत्प्रकरणे।

मूर्तिपञ्जर न्यास—सारसंग्रह में कहा गया है कि मूर्तिपञ्जर न्यास ग्रह आदि को दूर करने वाला, यश-पुष्टि एवं सुख देने वाला तथा लक्ष्मी प्रदान करने वाला होता है। नारायण के अष्टाक्षर मन्त्र का सूर्यवर्ण के रूप में स्मरण करना चाहिये। यह मन्त्र अष्ट प्रकृतिरूप कहा गया है। उसमें आत्मचतुष्क को भी मिला देने से यह द्वादशाक्षर हो जाता है। इसलिये उन्हीं क्लीव स्वररहित बारह अक्षरों से केशवादि बारह का न्यास करना चाहिये। भाल, कुक्षि, हृदय, गला, पार्श्व, अंस, कन्धा, गला, दक्षिण, वाम, पृष्ठ एवं ककुद में क्रमशः नयास करना चाहिये। द्वादश बीजों से समन्वित केशवादि द्वादश नामों से तत्तत् स्थानों में न्यास करना चाहिये। द्वादशाक्षर मन्त्र का न्यास मूर्धा में किया जाता है। वासुदेव मन्त्र से व्यापक न्यास करना चाहिये।

किरीटादिमन्त्राः

प्रपञ्चसारे (२०.२१)—

पुनस्तत्प्रतिपत्त्यर्थं किरीटादिमनुं जपेत्। किरीटकेयूरहारपदान्याभाष्य मन्त्रवित्॥१॥
मकरान्ते कुण्डलं च शङ्खचक्रगदादिकम्। अब्जहस्तपदं प्रोक्त्वा पीताम्बरधरेति च॥२॥
श्रीवत्साङ्कितमाभाष्य वक्षःस्थलमथो वदेत्। श्रीभूमिसहितं स्वात्मज्योतिर्द्वयपदं वदेत्॥३॥
दीप्तिमुक्त्वा करायेति सहस्रादित्यतेजसे। हृदन्तः प्रणवादिः स्यात् किरीटादिमनुस्त्वयम्॥४॥

जपेत् सर्वदेहं स्पृशन्निति। 'ततः किरीटमन्त्रेण सर्वाङ्गे व्यापकं न्यसेत्' इति संकर्षणवचनात्। मन्त्रे सर्वाणि पदानि संबुद्ध्यन्तानि ज्ञेयानि। मन्त्रविदित्यनेन मकरान्ते कुण्डलमित्यलंकृतपदाध्याहारः सूचितः, इति पद्मपादाचार्यः। मन्त्रतन्त्रप्रकाशेऽपि—

तारः किरीटकेयूरहारान्ते मकरं-पदम्। कुण्डलालंकृतेत्यन्ते शङ्खचक्रगदापदम्॥१॥ इति।

तदनन्तर किरीट मन्त्र का जप करना चाहिये। किरीट मन्त्र इस प्रकार है—ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलशंखचक्रगदाब्जहस्ताय पीताम्बरधराय श्रीवत्साङ्कितवक्षःस्थलाय श्रीभूमिसहितस्वात्मज्योतिषे दीप्तिकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः।

तत्त्वन्यासनिर्णयः

सारसंग्रहे—

अतः परं प्रवक्ष्यामि तत्त्वन्यासमनुत्तमम्। यस्तत्त्वन्यासमात्रेण तत्त्वात्मा संप्रजायते॥१॥
ध्रुवान्ते मादिकान् वर्णान् कान्तानुक्त्वा हृदन्तकान्। परायेति पदं तत्तन्नामान्ते तत्त्वशब्दतः॥२॥

आत्मने नमसा युक्तांस्तत्त्वमन्त्रान् समुद्धरेत्। जीवप्राणौ सर्वतनौ न्यस्य बुद्धिं ततः परम्॥३॥
अहङ्कारं मनश्चैव हृद्येतानि प्रविन्यसेत्। मस्तकाननहृद्गुह्यपाददेशेष्वतः परम्॥४॥
शब्दस्पर्शौ रूपरसगन्धांस्तु क्रमतो न्यसेत्। श्रोत्रत्वगक्षिजिह्वास्यघ्राणेषु श्रोत्रपूर्वकान्॥५॥
स्वस्वस्थानेषु वागादिकर्मेन्द्रियगणं न्यसेत्। मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि शिवे पादयोर्वियदादिकान्॥६॥
हृत्पुण्डरीकसंज्ञं हि हृदये मण्डलानि च। अर्कषोडशदिक्संख्याकलायुक्तानि च क्रमात्॥७॥
सोमसूर्यकृशानूनां श्वेताकारेन्दुवह्निभिः। अथाकाशादिभूतानां न्यासस्थानेषु विन्यसेत्॥८॥
पराद्यं मेष्ठिनं चैव पुमांसं विश्वसंज्ञकम्। निवृत्तिं सर्वनामान्तः षोयरावलवर्णकैः॥९॥
नारायणान्तकान् वासुदेवाद्यान् विनियोजयेत्। परमेष्ठ्यादिभिः पश्चान्नृसिंहबीजपूर्वकम्॥१०॥
कोपतत्त्वं च मूर्द्धादिपादान्तं व्यापयेत्ततः। एवं विन्यस्य विधिवत् साक्षान्नारायणो भवेत्॥११॥
ज्वररोगाभिचाराद्याः प्रलयं यान्ति नान्यथा। भूतप्रेतपिशाचाश्च तथैव ब्रह्मराक्षसाः॥१२॥
कूष्माण्डाश्चैव डाकिन्यो नैव द्रुष्टमपि क्षमाः। एवं न्यस्तशरीरोऽसौ स्मरेद्विष्णुमनन्यधीः॥१३॥
हस्तैश्चकदरौ गदासरसिजे बिभ्राणमर्कोल्लसत्कान्तिं श्रीधरणीविभूषितलसत्पार्श्वं किरीटान्वितम्।
श्रीवत्साङ्कसकौस्तुभोरुपदकं केयूरहारोज्ज्वलं राजत्कुण्डलमण्डितं हृदि भजे पीताम्बरं शार्ङ्गिणम्॥१४॥
वामाद्यधःकरयोराद्ये तदाद्यूर्ध्वयोरन्ये इत्यायुधध्यानम्।

तत्त्वन्यास—तत्त्वन्यास करने से साधक स्वयं तत्स्वरूप हो जाता है। तत्त्वन्यास तत्तत् मन्त्रों से सम्पूर्ण शरीर, बुद्धि, अहंकार, मन, हृदय, मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य, पैर में करना चाहिये। शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्ध का न्यास क्रमशः श्रोत्र, त्वक्, अक्षि, जिह्वा, घ्राण, में करना चाहिये। अपने-अपने स्थानों में वाक् आदि कर्मेन्द्रियों का न्यास करना चाहिये। मूर्धा, वक्त्र, हृदय, पैरों में आकाशादि का न्यास करना चाहिये। हृदय में हृत्पुण्डरीक का न्यास करना चाहिये। षोडश अर्क, एवं कलाओं से युक्त सोम-सूर्य-अग्नि एवं आकाशादि महाभूतों का तत्तत् स्थानों में न्यास करे। परमेष्ठि आदि का न्यास नृसिंह बीज के सहित करे। तदनन्तर मूर्धा से पैर तक व्यापक न्यास करे। इस प्रकार न्यास करने से साधक साक्षात् नारायण हो जाता है। इस प्रकार के न्यास करने वाले की तरफ ज्वर, रोग, अभिचार, भूत, प्रेत, पिशाच, ब्रह्मराक्षस, कूष्माण्डा आदि डाकिनियाँ देखने में भी समर्थ नहीं होती। उक्त न्यास के पश्चात् इस प्रकार विष्णु का ध्यान करना चाहिये—

हस्तैश्चकदरौ गदासरसिजे बिभ्राणमर्कोल्लसत्कान्तिं श्रीधरणीविभूषितलसत्पार्श्वं किरीटान्वितम्।
श्रीवत्साङ्कसकौस्तुभोरुपदकं केयूरहारोज्ज्वलं राजत्कुण्डलमण्डितं हृदि भजे पीताम्बरं शार्ङ्गिणम्॥

केशव-नारायणमूर्तिलक्षणम्

पङ्कजं दक्षिणे यस्य पाञ्चजन्यं तथोपरि। वामाधस्तु गदा यस्य चक्रं चोर्ध्वे व्यवस्थितम्॥१॥
इति केशवलक्षणमुक्त्वा,
अधरोत्तरभावेन कृतमेतत्तु यत्र वै। नारायणाख्या सा ज्ञेया स्थापिता भुक्तिमुक्तिदा॥२॥
इति हयशीर्षपञ्चरात्रवचनात्।

सव्यान्यपाणौ प्रथमे तु पद्मं बिभ्राणमब्जं तदनन्तरेण।
आद्ये गदा वामकरेऽथ चक्रं विराजयन्तं भुवनानि भासा॥

इति मन्त्रतन्त्रप्रकाशवचनात् च। सव्यान्यपाणौ दक्षिणे। अब्जं शङ्खम्। तथा प्रपञ्चसारे (२०.२५)—

कृत्वा स्थण्डिलमस्मिन् निःक्षिप्य निजासनिकां समुपविश्य।
पीठादिकं निजाङ्गे प्रपूज्य गन्धादिभिः सुशुद्धमनाः॥१॥
सद्द्वादशाक्षरान्तं प्रपूज्य विधिवत् किरीटमन्त्रेण।
कुर्यात् पुष्पाञ्जलिमपि निजदेहे पञ्चशोऽथवा त्रिशः॥ इति।

केशव मूर्ति का लक्षण—दाहिने हाथ में नीचे कमल, ऊपर पाञ्चजन्य शंख, बाँयें नीचले हाथ में गदा एवं ऊपर वाले हाथ में चक्र केशव की मूर्ति में होते हैं।

नारायण मूर्ति लक्षण—नारायण की मूर्ति में उपर्युक्त सबों की अवस्थिति विपरीत क्रम से होती है। नारायण की मूर्ति भुक्ति एवं मुक्ति प्रदान करने वाली होती है। मन्त्र तन्त्र प्रकाश में भी इसी का समर्थन किया गया है।

पीठपूजाविधि:

सारसंग्रहे—

नवशक्तिसमायुक्ते पीठे देवं यजेत् ततः। विमला सोत्कर्षिणी च ज्ञाना स्याच्च क्रियान्विता ॥१॥
योगा प्रह्वी तथा सत्या सेशानानुग्रहा मता। तारो हृद् ङेन्तभगवत्पदं विष्णुं च ङेयुतम् ॥२॥
सर्वभूतात्मने-शब्दं वदेद्वासुपदं ततः। ङेन्तं देवं च सर्वात्मसंयोगपदमुच्चरेत् ॥३॥
योगपद्मपदं प्रोक्त्वा पीठात्मा ङेयुतो नमः। अयमासनमन्त्रः स्यात् प्रदद्यादमुनासनम् ॥४॥

तार: प्रवण:। हृन्नम:। ङेन्तं भगवत्पदं भवगते। विष्णुं ङेयुतं विष्णवे। सर्वेत्यादिपदं स्वरूपम्। वासु स्वरूपम्। ङेन्तं देवं देवाय। सर्वात्मसंयोगं स्वरूपम्। योगपद्म स्वरूपम्। पीठात्मा ङेयुत: पीठात्मने। नम: स्वरूपम्। 'मूलेन मनुना मूर्तिं कल्पयेद् देवमर्चयेत्।' नारदपञ्चरात्रे—

पीठपूजां विनिष्पाद्य गन्धपुष्पादिभि: क्रमात्। पश्चादावाहयेद् देवं मन्त्रेणानेन केशवम् ॥१॥
एह्येहि भगवन् देव लोकानुग्रहकारक। यज्ञभागं गृहाण त्वं वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥२॥

सारसंग्रहे—

आवाह्य तत्र विधिवदुपचारैर्यथोदितै:। कर्णिकायां यथास्थानं यजेदङ्गानि पूर्ववत् ॥१॥
केसरेषु यजेत् पश्चान्मन्त्रवर्णान् समाहित:। वासदेवादिका मूर्तीश्चतस्रो विधिपूर्वकम् ॥२॥
दिक्पत्रेषु समभ्यर्च्यास्तासां नामान्यमूनि हि। वासुदेवस्तथा प्रोक्त: संकर्षणसमाह्वय: ॥३॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च पीतवस्त्रैरलंकृता:। गौरहारिद्रनीलाख्यशक्रनीलनिभा: क्रमात् ॥४॥
दरचक्रगदापद्मधारिणश्च चतुर्भुजा:। कोणपत्रस्थिता एता: शान्ति: श्रीश्च सरस्वती ॥५॥
रतिसंज्ञा भवेदन्या पूज्याश्चैव यथाक्रमम्। शुक्लस्वर्णपय:श्यामसङ्काशाश्चारुभूषित: ॥६॥
दलाग्रेषु तत: पूज्या यथावन्द्धरिहेतय:। अरिं रक्तं दरं स्वच्छं गदां पीतां च पङ्कजम् ॥७॥
स्वर्णाभं कौस्तुभं श्यामं कृष्णाभं मुसलं ह्यसिम्। सुवर्णं वनमालां च शुभ्राभां च क्रमाद्यजेत् ॥८॥
दिग्गताश्च ततो बाह्ये पूज्या एते यथाक्रमम्। ध्वज: कृष्णो वैनतेयो रक्ताभ: शङ्खसन्निधि: ॥९॥
शुल्क: पद्मनिधी रक्तो विघ्नो रक्तस्तथार्यक:। श्याम: श्यामनिभा दुर्गा विश्वक्सेनो निशानिभ: ॥१०॥
आग्नेयादिदलेष्वेते संपूज्या विधिवत् क्रमात्। लोकपालांस्ततो बाह्ये वज्रादीन्यायुधान्यपि ॥११॥
विष्णो: पूजाविधानं तु षडावरणमीरितम्। इति।

महाकपिलपञ्चरात्रे—

नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णु: पुनस्तद्वदन्ते चैव प्रचोदयात् ॥१॥
गायत्री वैष्णवी प्रोक्ता सर्वपापहरा त्वियम्। अङ्गानि प्रथमं मूर्तिशक्तय: केशवादिका: ॥२॥
लोकेशास्तद्धेतयश्च पूज्या: सर्वेष्टसिद्धये। वासुदेवादिकानादौ चक्रशङ्खध्वजादिकान् ॥३॥
केशवाद्यान् द्वादशाथ चक्रवज्रादिकान्यजेत्। वासुदेवान् ध्वजादींश्च लोकपालांस्तदायुधै: ॥४॥
प्रोक्ते विधिचतुष्केऽत्र हरिमेकेन संयजेत्।

अत्रापि तृतीयचतुर्थप्रकारयोरङ्गानि पूज्यान्येव।

पीठपूजा विधि—नव शक्तियों से युक्त पीठ पर देव का पूजन करने के पश्चात् विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना, अनुग्रहा—इन नव शक्तियों की पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपीठात्मने नमः' इस आसन मन्त्र से आसन प्रदान करना चाहिये। नारदपञ्चरात्र में कहा गया है कि गन्ध-पुष्प आदि से क्रमशः पीठपूजा करके 'एह्येहि भगवन् देव लोकानुग्रहकारक। याभागं गृहाण त्वं वासुदेव नमोऽस्तु ते' से भगवान् के शव का आवाहन करे। सारसंग्रह में कहा गया है कि वहाँ पर विधिवत् आवाहन करके पूर्वोक्त उपचारों से कर्णिका में यथास्थान पूर्ववत् अंगपूजन करे। केसरों में मन्त्रवर्णों से वासुदेवादि चारों मूर्तियों का विधिपूर्वक पूजन करे। दिक्पत्रों में पीत वस्त्र से अलंकृत एवं गौर, हारिद्र, कृष्ण तथा नीले वर्ण के तथा शंख-चक्र-गदा-पद्म धारण करने वाले वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध का सम्यक् अर्चन करे। कोणपत्रों में शान्ति, श्री, सरस्वती, रति का क्रमशः पूजन करे। दलाग्रों में क्रमशः चक्र, शंख, गदा, पद्म, कौस्तुभ, मुसल, खड्ग एवं वनमाला का पूजन करे। तदनन्तर दिशाओं में बाहर क्रमशः ध्वज, गरुड़, शंखनिधि एवं पद्मनिधि की पूजा करे। विदिशाओं में विघ्न, आर्या, दुर्गा एवं विश्वक्सेन की पूजा करे। तदनन्तर बाहर लोकपालों एवं उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करना चाहिये। इस प्रकार विष्णु की छः आवरणों की पूजा कही गई है।

महाकपिलपञ्चरात्र में वैष्णवी गायत्री इस प्रकार कही गई है—नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्। यह गायत्री समस्त पापों का हरण करने वाली है। अंगपूजन के पश्चात् केशवादि मूर्ति शक्तियों की पूजा करके समस्त इष्टसिद्धि के लिये लोकेशों एवं उनके आयुधों का पूजन करना चाहिये। वासुदेव आदि के पूजन के पश्चात् चक्र, शंख, ध्वजा आदि का पूजन कर केशव आदि द्वादश मूर्तियों एवं उनके चक्र-वज्रादि आयुधों का पूजन करना चाहिये। तदनन्तर वासुदेव-ध्वज आदि का पूंजन कर लोकपालों एवं उनके आयुधों की पूजा करनी चाहिये।

पूजाप्रयोगः

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि साध्यनारायणाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदये श्रीपरमात्मने देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममेष्टार्थे विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, मूलमन्त्रं करयोर्व्यापय्य, क्रुधोल्काय स्वाहा हृदयाय नमः। महोल्काय० शि। वीरोल्काय० शि। द्युल्काय० कव०। सहस्रोल्काय० अस्त्रं०। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिपञ्चाङ्गुलीषु विन्यस्य, दक्षकनिष्ठामूलपर्वादितर्जन्यग्रपर्वान्तेषु द्वादशस्थानेषु—ॐॐॐ नमः। ॐनं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। पुनः ॐ ॐ ॐ नमः। ॐ नं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। इति विन्यस्य, वामतर्जनीमूलादिपर्वारभ्य तत्कनिष्ठिकाग्रपर्वान्तेषु द्वादशस्थानेषु—ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। पुनः—ॐ ॐ ॐ नमः। ॐ नं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। इति त्रिरावृत्त्या मूलमन्त्राक्षराणि विन्यस्य, हृच्छिरःशिखाकवचास्त्रेषु प्रोक्तपञ्चाङ्गानि विन्यस्य, हृदये ॐ नमः। शिरसि नं नमः। शिखायां मों नमः। कवचे० नां नमः। अस्त्रस्थाने रां नमः। नेत्रयोः यं नमः। (इति षड्भिर्वर्णैः षडङ्गानि विन्यस्य) कुक्षौ णां नमः। पृष्ठे यं नमः। इति विन्यस्य, ऐंह्रीं चक्रेण बध्नामि नमश्चक्राय स्वाहा, आग्नेयीं चक्रेण बध्नामि स्वाहा, इत्यादितत्तद्दिगूहेन दश-दिग्बन्धनं कृत्वा, मूर्ध्नि ॐ ॐ ॐ नम। नेत्रयोः ॐ नं ॐ नमः। मुखे ॐ मों ॐ नमः। हृदि ॐ नां ॐ नमः। नाभौ ॐ रां ॐ नमः। गुह्ये ॐ यं ॐ नमः। जान्वोः ॐ णां ॐ नमः। पादयोः ॐ यं ॐ नमः। इति सृष्ट्या विन्यस्य, पादयोः ॐ ॐ ॐ नमः। जान्वोः ॐ नं ॐ नमः। गुह्ये ॐ मों ॐ नमः। नाभौ ॐ नां ॐ नमः। हृदि

ॐ रां ॐ नमः। मुखे ॐ यं ॐ नमः। नेत्रयोः ॐ णां ॐ नमः। मूर्ध्नि ॐ यं ॐ नमः। इति संहारेण विन्यस्य, नाभौ ॐ ॐ ॐ नमः। गुह्ये ॐ नं ॐ नमः। जानुनोः ॐ मों ॐ नमः। पादयोः ॐ नां ॐ नमः। मूर्ध्नि ॐ रां ॐ नमः। नेत्रयोः ॐ यं ॐ नमः। मुखे ॐ णां ॐ नमः। हृदि ॐ यं ॐ नमः। इति स्थित्या विन्यस्य, मूलाधारे ॐ ॐ ॐ नमः। हृदि ॐ नं ॐ नमः। मुखे ॐ मों ॐ नमः। दक्षबाहुमूले ॐ नां ॐ नमः। वामबाहुमूले ॐरां ॐ नमः। दक्षोरुमूले ॐ यं ॐ नमः। वामोरुमूले ॐ णां ॐ नमः। नाभौ ॐ यं ॐ नमः। ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा, कण्ठे ॐ ॐ ॐ नमः। नाभौ ॐ नं ॐ नमः। हृदि ॐ मों ॐ नमः। दक्षस्तेन ॐ नां ॐ नमः। वामे ॐ रां ॐ नमः। दक्षपार्श्वे ॐ यं ॐ नमः। वामे ॐ णां ॐ नमः। पृष्ठे ॐ यं ॐ नमः। पुनः पृष्ठे ॐ यं ॐ नमः। इति व्यापकम्। एवं प्रत्यावृत्तिं कुर्यात्। मूर्ध्नि ॐ ॐ ॐ नमः। मुखे ॐ नं ॐ नमः। दक्षनेत्रे ॐ मों ॐ नमः। वामे ॐ नां ॐ नमः। दक्षकर्णे ॐ रां ॐ नमः। वामे ॐ यं ॐ नमः। दक्षनसि ॐ णां ॐ नमः। वामे ॐ यं ॐ नमः। ततो व्यापकम्। दक्षबाहुमूले ॐ ॐ ॐ नमः। बाहुमध्ये ॐ नं ॐ नमः। मणिबन्धे ॐ मों ॐ नमः। दक्षाङ्गुष्ठाद्यङ्गुलीष्ववशिष्टान् पञ्च वर्णानेवं न्यसेत्। वामबाहुमूले ॐ ॐ ॐ नमः। बाहुमध्ये ॐ नं ॐ नमः। मणिबन्धे ॐ मों ॐ नमः। वामाङ्गुष्ठाद्यङ्गुलीष्ववशिष्टान् पञ्च वर्णानेवं न्यसेत्। एवं दक्षोरुमूलजानुगुल्फाङ्गुष्ठादिषु न्यसेद्, एवं वामेऽपि। हृदि एवं त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्रेषु सप्तसु धातुषु सप्त वर्णान् विन्यस्य अष्टमं वायौ न्यसेत्। मूर्ध्नि ॐ ॐ ॐ नमः। नेत्रयोः ॐ नां ॐ नमः। मुखे ॐ मों ॐ नमः। हृदि ॐ नां ॐ नमः। उदरे ॐ रां ॐ नमः। ऊर्वोः ॐ यं ॐ नमः। जङ्घयोः ॐ णां ॐ नमः। पादयोः ॐ नां ॐ नमः। गण्डयोः ॐ ॐ ॐ नमः। अंसयोः ॐ नं ॐ नमः। ऊर्वोः ॐ मों ॐ नमः। पादयोः ॐ नां ॐ नमः। वामाधःकरे ॐ रां ॐ नमः। दक्षाधःकरे ॐ यं ॐ नमः। वामोर्ध्वकरे ॐ णां ॐ नमः। दक्षोर्ध्वकरे ॐ यं ॐ नमः। इति विभूतिपञ्जरन्यासः।

पादयोः ॐ नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः। लिङ्गे ॐ नं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः। हृदि ॐ मों नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः। मुखे ॐ नां नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः। मूर्ध्नि ॐ रां नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः हृदि ॐयं नमः। परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः। सर्वाङ्गे ॐ णां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। ॐ यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। इति संहृत्या न्यस्य, सर्वाङ्गे यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः, णां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। हृदि यं नमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने०। मूर्ध्नि रां नमः परायाकाशतत्त्वात्मने०। मुखे नां नमः पराय वायुतत्त्वात्मने०। हृदि मों नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने०। लिङ्गे नं नमः पराय जलतत्त्वात्मने०। पादयोः ॐ नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने०। इति सृष्ट्या विन्यस्य, ततः सर्वाङ्गे ॐ आं बिन्दुरूपायात्मने नमः। ॐ अं नादरूपायान्तरात्मने नमः। ॐ षं शक्तिरूपाय परमात्मने नमः। ॐ ह्रीं शान्तिरूपाय ज्ञानात्मने०। इति विन्यस्य, ललाटे ॐ अं केशवाय धात्रे नमः। उदरे नंआं नारायणायार्यम्णे०। हृदि मोंईं माधवाय मित्राय०। कण्ठे भंईं गोविन्दाय वरुणाय०। दक्षपार्श्वे गंउं विष्णवे अंशवे०। दक्षांसे वं ऊं मधुसूदनाय भगाय०। गलदक्षभागे तेंएं त्रिविक्रमाय विविस्वते०। वामपार्श्वे वांऐं वामनायेन्द्राय०। वामांसे सुंऔं श्रीधराय पूष्णे०। गलवामभागे देंओं हृषीकेशाय पर्जन्याय०। पृष्ठे वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे०। ककुदि यंअः दामोदराय विष्णवे०। शिरसि ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः। इति न्यस्येदिति मूर्तिपञ्जरन्यासः।

ततः किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलालंकृतशंखचक्रगदाब्जहस्तपीताम्बरधरश्रीवत्सालंकृतवक्षःस्थलश्रीभूमि-सहितात्मज्योतिर्द्वयदीप्तिकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः, इति सर्वाङ्गे व्यापकं न्यसेत्। सर्वाङ्गे ॐ मं नमः पराय जीवात्मने नमः। ॐभं पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः। हृदि ॐ बं नमः पराय। बुद्धितत्त्वा०।ॐ फं नमः परायाहङ्कारत०। ॐ पं नमः पराय मनस्त०। मूर्ध्नि ॐ नं नमः पराय शब्दत०। मुखे ॐ धं नमः पराय स्पर्शतत्त्वा०। हृदि ॐ दं

नमः पराय रूपत०। गुह्ये ॐ थं नमः पराय रसत०। पादयोः ॐ तं नमः पराय गन्धत०। कर्णयोः ॐ णं नमः पराय श्रोत्रत०। सर्वाङ्गे ॐ ढं नमः पराय त्वक्तत्त्वा०। अक्ष्णोः ॐ डं नमः पराय नेत्रत०। जिह्वायां ॐ ठं नमः पराय जिह्वात०। घ्राणयोः ॐ टं नमः पराय घ्राणत०। मुखे ॐ ञं नमः पराय वाक्त०। पाणयोः ॐ झं नमः पराय पाणित०। पादयोः ॐ जं नमः पराय पादत०। पायौ ॐ छं नमः पराय पायुत०। गुह्ये ॐ चं नमः परायोपस्थतत्त्वाय०। मूर्ध्नि ॐ ङं नमः परायाकाशत०। मुखे ॐ घं नमः पराय वायुत०। हृदि ॐ गं नमः पराय तेजस्तत्त्वा०। लिङ्गे ॐ खं नमः पराय जलत०। पादयोः ॐ कं नमः पराय पृथ्वीत०। हृदि ॐ षं नमः पराय हृत्पुण्डरीकत०। तत्रैव, ॐ हं नमः पराय सूर्यमण्डलत०। ॐ सं नमः पराय सोममण्डलत०। ॐ रं नमः पराय वह्निमण्डलत०। मूर्ध्नि ॐ षों नमः पराय परमेष्ठिने वासुदेवत०। मुखे ॐ यं नमः पराय पुरुषाय सङ्कर्षणत०। हृदि ॐ रं नमः पराय विश्वाय प्रद्युम्नत०। गुह्ये ॐ वं नमः पराय निवृत्तयेऽनिरुद्धत०। पादयोः ॐ लं नमः पराय सर्वाय नारायणत०। ॐ क्ष्रों ॐ नमः पराय नृसिंहाय कोपतत्त्वात्मने नमः। इति मूर्धादिपादान्तं व्यापकत्वेन विन्यस्य, श्रीनारायणात्मकं स्वात्मानं ध्यात्वा प्रागुक्त 'उद्यत्कोटिदिवाकराभ'मित्यादि (८) ध्यायेत्।

पूजा प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से लेकर योगपीठ न्यास तक की क्रिया के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तब इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि साध्यनारायणाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदये श्रीपरमात्मने देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास कर अपने इष्टसिद्धि के लिये विनियोग करे। तब मूल मन्त्र से दोनों हाथों में व्यापक न्यास कर क्रुधोल्काय स्वाहा हृदयाय नमः, महोल्काय स्वाहा शिरसे स्वाहा, वीरोल्काय स्वाहा शिखायै वषट्, द्युल्काय स्वाहा कवचाय हुम्, सहस्रोल्काय स्वाहा अस्त्राय फट्—इन पञ्चाङ्ग मन्त्रों से दक्ष अंगूठे से कनिष्ठा तक न्यास करे।

तदनन्तर दक्ष कनिष्ठा के मूल पर्व से तर्जनी के अग्र पर्व तक बारह स्थानों में इस प्रकार न्यास करे—ॐ ॐ ॐ नमः। ॐ नं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। पुनः ॐ ॐ ॐ नमः। ॐ नं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। इसके बाद वाम तर्जनी मूलादि पर्व से आरम्भ करके वाम कनिष्ठाग्र पर्व तक बारह स्थानों में इस प्रकार न्यास करे—ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। पुनः ॐ ॐ ॐ नमः। ॐ नं ॐ नमः। ॐ मों ॐ नमः। ॐ नां ॐ नमः। ॐ रां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। ॐ णां ॐ नमः। ॐ यं ॐ नमः। इस प्रकार मूल मन्त्र के अक्षरों से तीन बार न्यास के बाद हृदय, शिर, शिखा, कवच, अस्त्र—इन पाँच अंगों में पूर्वोक्त पञ्चाङ्ग मन्त्रों से न्यास करे।

तदनन्तर हृदय में ॐ नमः, शिर पर नं नमः, शिखा में ॐ मों नमः, कवच में नां नमः, अस्त्रस्थान में रां नमः, नेत्रों में यं नमः—इस प्रकार षडङ्ग न्यास करके कुक्षि में णां नमः एवं पृष्ठ में यं नमः कहकर न्यास करे। तब दिग्बन्ध करे—पूर्व में ऐं ह्रीं चक्रेण बध्नामि नमश्चक्राय स्वाहा, आग्नेय कोण में चक्रेण बध्नामि स्वाहा। दक्षिण दिशा में चक्रेण बध्नामि स्वाहा। इसी प्रकार नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ऊपर-नीचे भी दिग्बन्ध करे।

तदनन्तर इस प्रकार सृष्टिन्यास करे—मूर्धा में ॐ ॐ ॐ नमः। नेत्र में ॐ नं ॐ नमः। मुख में ॐ मों ॐ नमः। हृदय में ॐ नां ॐ नमः। नाभि में ॐ रां ॐ नमः। गुह्य में ॐ यं ॐ नमः। जानुओं में ॐ णां ॐ नमः। पैरों में ॐ यं ॐ नमः।

तदनन्तर इस प्रकार संहार न्यास करे—पैरों में ॐ ॐ ॐ नमः। जानुओं में ॐ नं ॐ नमः। गुह्य में ॐ मों ॐ नमः। नाभि में ॐ नां ॐ, नमः हृदय में ॐ रां ॐ नमः, मुख में ॐ यं ॐ नमः, नेत्रों में ॐ णां ॐ नमः, मूर्धा में ॐ यं ॐ नमः।

तदनन्तर इस प्रकार स्थिति न्यास करे—नाभि में ॐ ॐ ॐ नमः। गुह्य में ॐ नं ॐ नमः। जानु में ॐ मों ॐ नमः। पैरों में ॐ नां ॐ नमः। मूर्धा में ॐ रां ॐ नमः। नेत्रों में ॐ यं ॐ नमः। मुख में ॐ णां ॐ नमः। हृदय में ॐ यं ॐ नमः।

इसके बाद मूलाधार में ॐ ॐ ॐ नमः। हृदय में ॐ नं ॐ नमः। मुख में ॐ मों ॐ नमः। दक्ष बाहुमूल में ॐ नां ॐ नमः। वाम बाहुमूल मे ॐ रां ॐ नमः। दक्षोरुमूल में ॐ यं ॐ नमः। वामोरुमूल में ॐ णां ॐ नमः। नाभि में ॐ यं ॐ नमः। तब मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। इसी प्रकार प्रत्यावृत्ति करे।

मूर्धा में ॐ ॐ ॐ नमः। मुख में ॐ नं ॐ नमः। दक्ष नेत्र में ॐ मों वाम में ॐ नां ॐ नमः। दक्ष कर्ण में ॐ रां ॐ नमः। वाम कर्ण में ॐ यं ॐ नमः। दक्ष नाक में ॐ णां ॐ नमः। वाम नाक में ॐ यं ॐ नमः से न्यास करके व्यापक न्यास करे। दक्ष बाहुमूल में ॐ ॐ ॐ नमः। बाहुमध्य में ॐ नं ॐ नमः, मणिबन्ध में ॐ मों ॐ नमः। दाहिने अंगुष्ठादि अंगुलियों में भी इसी प्रकार शेष वर्णों का न्यास करे। वाम बाहु मूल में—ॐ ॐ ॐ नमः। बाहुमध्य में ॐ नं ॐ नमः। मणिबन्ध में ॐ मों ॐ नमः, इसी प्रकार वाम अंगुष्ठादि अंगुलियों में अवशिष्ट पाँच वर्णों से न्यास करे। इसी प्रकार दक्ष उरुमूल जानु गुल्फ अंगुष्ठादि में न्यास करके बाँयें में भी इसी प्रकार न्यास करे। हृदय, त्वक्, असृक्, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, शुक्र—इन सात धातुओं में सात वर्णों का न्यास करके आठवें को वायु में न्यस्त करे, मूर्धा में ॐ ॐ ॐ नमः। नेत्रों में ॐ नां ॐ नमः। मुख में ॐ मों ॐ नमः। हृदय में ॐ नां ॐ नमः। पेट में ॐ रां ॐ नमः। ऊरुओं में ॐ यं ॐ नमः। जांघों में ॐ णां ॐ नमः। पैरों में ॐ यं ॐ नमः। गण्ड स्थलों में ॐ ॐ ॐ नमः। कन्धों में ॐ नं ॐ नमः। ऊरुओं में ॐ मों ॐ नमः। पैरों में ॐ नां ॐ नमः। बाँयें हाथ में नीचे ॐ रां ॐ नमः। दाहिने हाथ में नीचे ॐ यं ॐ नमः। बाँयें हाथ में ऊपर ॐ णां ॐ नमः। दाहिने हाथ में ऊपर ॐ यं ॐ नमः—इस प्रकार न्यास करे। यह विभूति पञ्जर न्यास कहलाता है।

तत्त्वन्यास संहार क्रम से इस प्रकार करे—पैरों में ॐ नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में ॐ नं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः, हृदय में ॐ मों नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः, मुख में ॐ नां नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः, मूर्धा ॐ रां नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः, हृदय में ॐ यं नमः परायाहंकारतत्त्वात्मने नमः, सर्वांग में ॐ णां नमः पराय महत् तत्त्वात्मने नमः, ॐ यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। इस प्रकार संहार न्यास करने के बाद सर्वांग में यं नमः पराय प्रकृति-तन्वात्मने नमः, णां नमः पराय महत् तत्त्वात्मने नमः, हृदय में यं नमः परायाहंकारतत्त्वात्मने नमः, मूर्धा में रां नमः परायाकाश-तत्त्वात्मने नमः, मुख में नां नमः पराय वायु तत्त्वात्मने नमः, हृदय में मों नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में नं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः, पैरों में ॐ नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः से सृष्टि न्यास करे।

तदनन्तर सर्वांग में ॐ आं बिन्दुरूपायत्मने नमः, ॐ अं नादरूपायान्तरात्मने नमः, ॐ षं शक्तिरूपाय परमात्मने नमः, ॐ ह्रीं शान्तिरूपाय ज्ञानात्मने नमः—इस प्रकार न्यास करने के बाद ललाट में ॐ केशवाय धात्रे नमः। उदर में नं आं नारायणायार्यम्णे नमः। हृदय में मों ईं माधवाय मित्राय नमः। कण्ठ में भं ईं गोविन्दाय वरुणाय नमः। दक्ष पार्श्वे में गं उं विष्णवे अंशवे नमः। दाहिने कन्धे पर वं ॐ मधुसूदनाय भगाय नमः। गले के दक्षिण भाग में तें एं त्रिविक्रमाय विवस्वते नमः। वामपार्श्व में वां ऐं वामनायेन्द्राय नमः। बाँये कन्धे पर सुं ओं श्रीधराय पूष्णे नमः गले के वाम भाग में दें औं हृषीकेशाय पर्जन्याय नमः। पृष्ठ में वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमः। ककुद में यं अः दामोदराय विष्णवे नमः। शिर पर ॐ नमो नारायणाय, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः कहते हुये मूर्तिपञ्जर न्यास करे।

तदनन्तर—किरीट-केयूर-हार-मकर-कुण्डलालंकृतशङ्खचक्रगदाब्जहस्तपीताम्बरधरश्रीवत्सालंकृतवक्षस्थलश्रीभूमि-सहितात्मज्योतिर्द्वयदीप्तिकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः से सर्वाङ्ग में व्यापक न्यास करे। पुनः सर्वांग में ॐ मं नमः पराय

जीवात्मने नम:। ॐ भं नम: पराय प्राणतत्त्वात्मने नम:। हृदय ॐ बं नम: पराय बुद्धितत्वात्मने नम:, ॐ फं नम: परायाहङ्कार तत्त्वात्मने नम: ॐ पं नम: पराय मनस्तत्त्वात्मने नम:। मूर्धा में ॐ नं नम: पराय शब्दतत्त्वात्मने नम:। मुख में धं नम: पराय स्पर्शतत्त्वात्मने नम:। हृदय में ॐ दं नम: पराय रूपतत्त्वात्मने नम:। गुह्य में ॐ थं नम: पराय रसतत्त्वात्मने नम:। पैरों में ॐ तं नम: पराय गन्धतत्त्वात्मने नम:। कानों मे ॐ णं नम: पराय श्रोत्रतत्त्वात्मने नम:। सर्वांग में ॐ ढं नम: पराय त्वक् तत्त्वात्मने नम:। आँखों में ॐ डं नम: पराय नेत्रतत्त्वात्मने नम:। जिह्वा में ॐ ठं नम: पराय जिह्वातत्त्वात्मने नम:। नासाछिद्रों में ॐ टं नम: पराया घ्राणतत्त्वात्मने नम:। मुख में ॐ ञं नम: पराय वाक् तत्त्वात्मने नम:। हाथों में ॐ झं नम: पराय पाणि तत्त्वात्मने नम:। पैरों में ॐ जं नम: पराय पादतत्त्वात्मने नम:। पायू में ॐ छं नम: पराय पायुतत्त्वात्मने नम:। गुह्य में ॐ चं नम: परायोपस्थतत्त्वात्मने नम:। मूर्धा में ॐ ङं नम: परायाकाशतत्त्वात्मने नम:। मुख में ॐ घं नम: पराय वायु तत्त्वात्मने नम:। हृदय में ॐ गं नम: पराय तेजस्तत्त्वात्मने नम:। लिङ्ग में ॐ खं नम: पराय जलतत्त्वात्मने नम:। पैरों में ॐ कं नम: पराय पृथ्वी तत्त्वात्मने नम:। हृदय में ॐ षं नम: पराय हृत्पुण्डरीकतत्त्वात्मने नम:। हृदय में ही ॐ हं नम: पराय सूर्यमण्डलतत्त्वात्मने नम:। ॐ सं नम: पराय सोममण्डलतत्त्वात्मने नम:। ॐ रं नम: पराय वह्निमण्डलतत्त्वात्मने नम:। मूर्धा में ॐ षों नम: पराय परमेष्ठिने वासुदेवतत्त्वात्मने नम: मुख में ॐ यं नम: पराय पुरुषाय संकर्षणतत्त्वात्मने नम:। हृदय में ॐ रं नम: पराय विश्वाय प्रद्युम्न तत्त्वात्मने नम:। गुह्य में ॐ वं नम: पराय निवृत्तये अनिरुद्धतत्त्वात्मने नम:। पैरों में ॐ लं नम: पराय सर्वाय नारायणतत्त्वात्मने नम:। ॐ क्ष्रौं ॐ नम: पराय नृसिंहाय कोपतत्त्वात्मने नम:—इस प्रकार मूर्धा से पैरों तक व्यापक न्यास करने के बाद श्रीनारायणात्मक स्वात्मा का ध्यान इस प्रकार करे—

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पंकजं चक्रं विभ्रतमिन्दिरा वसुवती संशोभिपार्श्व द्वयम्।
कोटीरांगदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभोद्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीब्रह्मचिह्नं भजे।।

कमलाधरणीध्यानम्

ध्यानविशेषस्तु—

वामे विचिन्त्या कमलायताक्षी हेमाब्जवर्णा कमला च देवी।
विभूतिकामेन सुरत्नहारा प्रेम्णा सृजन्ती नयने हरौ या ॥१॥

तं च देवं सुवर्णाभं चिन्तयेद्रत्नभूषितम्। क्षेत्रधान्यसुवर्णानां प्राप्तये धरणीं स्मरेत् ॥२॥
देवीं दूर्वादलश्यामां दधानां शालिमञ्जरीम्। चिन्तयेद्भारतीं देवीं वीणापुस्तकधारिणीम् ॥३॥
दक्षिणे देवदेवस्य पूर्णचद्रनिभाननाम्। क्षीराब्धिफेनपुञ्जाभे वसानां श्वेतवाससी ॥४॥
भारत्या सहितं विष्णुं ध्यायेदेवं परात्परम्। वेदवेदार्थसंवेदी जायते सर्ववित्तमः ॥५॥ इति।

नारायणीये तु—

प्रणवद्वयमध्यस्थो नमोन्तश्च सबीजकः। विबीजो मोक्षकृन्मन्त्रो यथोक्तप्रणवादिकः ॥ इति।

अथ ध्यानानन्तरं श्रीवत्सकौस्तुभवनमालामुद्राः प्रदर्शयेत्। ततो ध्यानाद्यात्मपूजान्तं कुर्यात् । आत्मपूजायां विशेषस्तु—स्वेष्टदेवतारूपध्यानान्ते विभूतिपञ्जरन्यासक्रमेण न्यासस्थानेषु न्यासमन्त्रेण गन्धपुष्पादिभिः संपूज्य, किरीटमन्त्रेण पुष्पाञ्जलिपञ्चकं त्रयं वा स्वदेहे दत्त्वा योगपीठदेवतापूजादि यथोक्तविधिना सर्वं कुर्यादिति। ततो मण्डूकादिपृथिव्यन्ते क्षीरसमुद्रं श्वेतद्वीपं च संपूज्य नन्दनोद्यानादि परतत्त्वपूजान्तेऽष्टदलकेसरेषु स्वाग्रादिमध्यान्तं प्रादक्षिण्येन—विमलायै नमः। उत्कर्षिण्यै०। ज्ञानायै०। क्रियायै०। योगायै०। प्रह्व्यै०। सत्यायै०। ईशानायै०। अनुग्रहायै०। इति संपूज्य, 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपीठात्मने नमः' इति मन्त्रेण समस्तं पीठं संपूज्य, मूलमुच्चार्य 'श्रीविष्णुमूर्तिं कल्पयामि' इति मध्ये मूर्तिं परिकल्प्य, पुनर्मूलमुच्चार्य

'श्रीविष्णुमूर्तये नमः' इति संपूज्य, चतुरायतनदेवता गणेशादिकाः समभ्यर्च्य, प्र(मा)णोक्तावाहनमन्त्रेण वाह्य-स्थापनादिप्राणस्थापनान्ते वैष्णवमुद्राः प्रदर्श्य आसनादिपुष्पोपचारान्ते कर्णिकायां प्राग्वत् पञ्चाङ्गानि संपूज्य अष्टदलकेसरेष्वेव स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन—ॐ नं नमः। मों नमः। नां नमः। रां नमः। यं नमः। णां नमः। यं नमः। इति संपूज्य, अष्टदलेषु स्वाग्रादिदिक्पत्रचतुष्टये—ॐ वासुदेवाय नमः। संकर्षणाय०। प्रद्युम्नाय०। अनिरुद्धाय०। विदिग्दलेषु—शान्त्यै नमः। श्रियै०। सरस्वत्यै०। रत्यै०।

ततो दलाग्रेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन—चक्राय नमः। शङ्खाय०। गदायै०। पद्माय०। कौस्तुभाय०। गुसलाय०। खड्गाय०। वनमालायै०।

ततश्चतुरस्रप्रथमरेखायां देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन चतुर्दिक्षु—ध्वजाय नमः। गरुडाय०। शङ्खनिधये०। पद्मनिधये०। विदिक्षु—विघ्नाय नमः। आर्य्याय०। दुर्गायै०। विश्वक्सेनाय०। इति संपूज्य, द्वितीयरेखायां इन्द्रादीन्, तृतीयरेखायां वज्रादींश्च संपूज्य धूपादिकं सर्वं समापयेदिति। सारसंग्रहे—

द्वात्रिंशल्लक्षमानेन पादोनेनार्धतोऽपि वा। तदर्धेनाथवा मन्त्री जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥१॥
जुहुयात् तद्दशांशेन त्रिमध्वक्तैः सरोरुहैः। तर्पयेच्चन्द्रकाश्मीरमृगनाभिसुवासितैः ॥२॥
सलिलैः स्वाभिषेकान्ते तर्पयेद् ब्राह्मणानपि। सुकुलीनसदाचारान् विष्णुभक्तानतन्द्रितः ॥३॥ इति।

अत्रेयं जपसंख्या कलियुगादिकृतयुगान्तपरा ज्ञेया। अन्यत्र तु—'विकारलक्षं प्रजपेन्मनुमेनं समाहितः। तद्दशांशैः सरसिजैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः। पीठे संपूजयेद् देवं विमलादिसमन्विते' इति।

ध्यान-विशेष—

वामे विचिन्त्या कमलायताक्षी हेमाब्जवर्णा कमला च देवी।
विभूतिकामेन सुरत्नहारा प्रेम्णा सृजन्ती नयने हरौ या।।
तं च देवं सुवर्णाभं चिन्तयेद्रत्नभूषितम्। क्षेत्रधान्यसुवर्णानां प्राप्तये धरणीं स्मरेत्।।
देवीं दूर्वादलश्यामां दधानां शालिमञ्जरीम्। चिन्तयेद्भारतीं देवीं वीणापुस्तकधारिणीम्।।
दक्षिणे देवदेवस्य पूर्णचद्रनिभाननाम्। क्षीराब्धिफेनपुञ्जाभे वसानां श्वेतवाससी।।

भारती-सहित परात्पर ब्रह्म विष्णु का इस प्रकार ध्यान करने वाला साधक वेद-वेदार्थ को जानने वाला एवं सभी धनों से युक्त होता है। नारायणीय में भी कहा है कि प्रणव से सम्पुटित और अन्त में नमः लगा 'वि' बीज मोक्षदायक है। इस प्रकार ध्यान के बाद श्रीवत्स, कौस्तुभ एवं वनमाला मुद्रा दिखावे। तब ध्यानादि से आत्मपूजा तक का कर्म करे। यहाँ आत्मपूजा में विशेष यह है कि अपने को इष्ट देवता रूप में ध्यान करके विभूतिपञ्जर न्यास के क्रम से न्यास के स्थानों में न्यास मन्त्रों से गन्ध-पुष्पादि से पूजा करे। किरीट मन्त्र से पाँच या तीन पुष्पाञ्जलि अपने ऊपर डाले। योगपीठदेवता आदि का पूजन यथोक्त विधि से करे।

तदनन्तर मण्डूक से पृथ्वी तक एवं क्षीरसागर तथा श्वेत द्वीप की पूजा करे। नन्दनोद्यानादि परतत्त्व पूजा के बाद अष्टदल के केसरों में अपने आगे से प्रारम्भ करके मध्यतक प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजा करे—विमलायै नमः, उत्कर्षिण्यै नमः, ज्ञानायै नमः, क्रियायै नमः, योगायै नमः, प्रह्व्यै नमः, सत्यायै नमः, ईशानायै नमः, अनुग्रहायै नमः तव 'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपीठात्मने नमः' मन्त्र से समस्त पीठ की पूजा करे। मूल मन्त्र के साथ 'श्रीविष्णुमूर्तिं कल्पयामि' कहकर मध्य में मूर्ति कल्पित करे। फिर मूल मन्त्र कहकर श्रीविष्णुमूर्तये नमः से पूजा करे। चतुरा-यतन देवता गणेशादि की पूजा करे। प्रमाणोक्त आवाहन मन्त्र से आवाहन करे। स्थापनादि से प्राणप्रतिष्ठा के बाद वैष्णव मुद्रा दिखावे। आसनादि से पुष्पोपचार तक कर्णिका में पूर्ववत् पञ्चाङ्ग पूजा करे।

तदनन्तर अष्टदल के केसर में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से ॐ नं नमः, ॐ मों नमः, ॐ नां नमः, ॐ रां नमः, ॐ यं नमः, ॐ णां नमः, ॐ यं नमः से पूजा करे। अष्टदल के अपने आगे के पूर्वादि चार पत्रों में ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ सङ्कर्षणाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः, ॐ अनिरुद्धाय नमः से पूजा करे। चारो कोणदिशाओं में शान्त्यै नमः, श्रियै नमः, सरस्वत्यै नमः, रत्यै नमः से पूजा करे। पत्राग्रों में स्वाग्रादि प्रदक्षिण क्रम से चक्राय नमः, शङ्खाय नमः, गदायै नमः, पद्माय नमः, कौस्तुभाय नमः, मुसलाय नमः, खड्गाय नमः एवं वनमालायै नमः से पूजा करे।

तदनन्तर चतुरस्र की पहली रेखा में देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से चारो दिशाओं में ध्वजाय नमः, गरुड़ाय नमः, शङ्खनिधये नमः, पद्मनिधये नमः, कोण दिशाओं में विघ्नाय नमः, आर्य्याय नमः, दुर्गायै नमः एवं विश्वक्सेनाय से पूजा करे। द्वितीय रेखा में इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करे। तृतीय रेखा में उनके वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। तदनन्तर धूपादि उपचारों से पूजा करके समापन करे।

सारसंग्रह में कहा गया है कि बत्तीस लाख या सोलह लाख या चार लाख या आठ लाख जप मन्त्री एकाग्रता से करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त कमलफूलों से करे। कपूर-केसर-कस्तूरीसुवासित जल से दशांश तर्पण करे। उस जल से अपने ऊपर अभिषेक कर सुकुलीन, सदाचारी, विष्णुभक्त ब्राह्मणों का भी तर्पण करे।

यहाँ यह जपसंख्या कलियुग से आरम्भ करके कृतयुग तक के लिये कही गई है। अर्थात् कलियुग में जपसंख्या बत्तीस लाख, द्वापर में सोलह लाख, त्रेता में आठ लाख एवं सत्ययुग में चार लाख होती है।

यजनद्रव्यादिनिर्णयः

तथा—

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् साधयेत् सुधीः। सायुधाष्टभुजं सौम्यं सर्वाङ्गधवलद्युतिम्॥१॥
निर्विषीकरणे ध्यायेद् विष्णुं गरुडवाहनम्। एवमेव हरिं ध्यायेद्रोगसंहारकर्मणि॥२॥
दधिमध्वाज्यसंयुक्ताश्चतुरङ्गुलसम्मिताः। गडूचीरयुतं हुत्वा मृत्युमेवातिवर्तते॥३॥
शनैश्चरदिनेऽश्वत्थं सम्यगालम्ब्य पाणिना। जपेदष्टशतं शुद्धो म्रियते नापमृत्युना॥४॥
पञ्चविंशतिकं जप्त्वा मन्त्री शुद्धाः पिबेदपः। निरस्तपातको भूत्वा ह्यरोगी ज्ञानवान् भवेत्॥५॥
जप्त्वायुतेन कुम्भाद्भिः सेचनं सर्वरोगनुत्। भुञ्जानः सप्तजप्तान्नं श्रीबुद्ध्यारोग्यवान् भवेत्॥६॥
चन्द्रसूर्योपरागे च त्रिदिनं दिनमेव वा। उपोष्याष्टसहस्रं तु स्पृष्ट्वा ब्राह्मीघृतं जपेत्॥७॥
यः पिबेल्लभते मेधां कवित्वं वादितां च सः। बिल्वैरयुतहोमेन सद्यो धनपतिर्भवेत्॥८॥
बिल्वैस्तत्फलैः पत्रैर्वा।

पद्मतन्तुमयं सूत्रमयुतेनाभिमन्त्रितम्। धारयेद् दक्षिणे हस्ते सर्वत्र स्यात् सुरक्षितः॥९॥

इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से साधक प्रयोगों को करे। आयुधों सहित आठ भुजाओं वाले, सौम्य स्वरूप एवं तेजः सम्पन्न गरुड़ पर सवार विष्णु का ध्यान निर्विषीकरण में करे। रोग-निवारण के लिये भी इसी प्रकार ध्यान करे। दही, मधु, आज्य से प्लुत चार अंगुल लम्बे गुरुच के टुकड़ों से हवन करने पर मृत्यु पर भी विजय प्राप्त होती हैं। शनिवार को पीपल के पेड़ को हाथ से स्पर्श किए हुए आठ सौ जप करने से शुद्ध साधक की अपमृत्यु से मृत्यु नहीं होती पच्चीस जप से मन्त्रित जल पीने से मनुष्य निष्पाप होकर निरोगी और ज्ञानवान होता है। घड़े भर जल को दश हजार जप से मन्त्रित करके स्नान करने पर सभी रोगों से मुक्ति प्राप्त होती है। सात जप से मन्त्रित अन्न का भोजन आरोग्यवान बनाता है। चन्द्र- सूर्यग्रहण में तीन दिन या एक दिन उपवास रहकर ब्राह्मी घृत को स्पर्श किए हुए आठ हजार मन्त्र जप करने के बाद इस घी को जो पीता है, उसे बुद्धि एवं कवित्व प्राप्त होता है। बेलफल से दश हजार हवन करने से साधक धनपति होता है। पद्मतन्तु से निर्मित धागे को दश हजार जप से मन्त्रित करके दाहिने हाथ में बाँधने से साधक सर्वत्र सुरक्षित रहता है।

मन्त्रवर्णध्यानानि

मन्त्रवर्णध्यानमुक्तं महाकपिलपञ्चरात्रे—

ॐकारं तु सदा ध्येयं ज्योतिर्मालासमाकुलम्। नकारं मेघवर्णाभं मोंकारं चिन्तयेत् सदा।।१।।
भिन्नाञ्जनसमाकारं तृतीयं बीजमुत्तमम्। नाकारं श्यामवर्णाभं सौम्यरूपं सुशोभनम्।।२।।
राकारं जलवर्णाभं सम्यक् संदीप्ततेजसम्। धूम्रवर्णं सदा ध्येयं यकारं परमुत्तमम्।।३।।
अनौपम्यगुणाकारं णाकारं च विचिन्तयेत्। यकारं तु ततो ध्येयं पद्मरागसमप्रभम्।।४।। इति।

अर्थे उद्देश्ये श्रीबीजादिर्जप्तव्य:। तदुक्तम्—'श्रीबीजेन युतं मन्त्रं तत्कामस्तन्मना जपेत्' इति।

कामनायामपि विशेष:।

नारसिंहमिवात्मानं देवं ध्यात्वातिभैरवम्। मन्त्रेण स्पर्शयेच्छस्त्रं नाविजित्य निवर्तते।।१।।
नारसिंहेन बीजेन मन्त्रं योज्य सदा जपेत्। शतमष्टोत्तरं जप्त्वा वामहस्ताभिमन्त्रित:।।२।।
पुन: पुनश्च य: सिञ्चेत् सर्पदष्टोऽपि जीवति। गारुडेन समायुक्तं पञ्चार्णेन सदा जपेत्।।३।।
निर्विषीकरणे ध्यायेद् विष्णुं गरुडवाहनम्। अशोकफलके पक्षीन्द्रमालिख्याशोकसंहतौ।।४।।
अशोकपुष्पैराराध्य भगवन्तं तदग्रत:। जुहुयात् तानि पुष्पाणि त्रिसंध्यं सप्तरात्रकम्।।५।।
प्रत्यक्षो जायते पक्षी वरमिष्टं प्रयच्छति। गाणपत्यसमायुक्तं जपेल्लक्षं पयोव्रत:।।६।।
महागणपतिं देवं प्रत्यक्षमिव पश्यति। भारतीबीजसंयुक्तं षण्मासात् तज्जपार्चनात्।।७।।
साक्षात् सरस्वतीं देवीं प्रत्यक्षामिह पश्यति। यो जपेत् प्रणवपूर्णं मन्त्रं त्रैवर्णिक: पुमान्।।८।।
योषितश्च तथा शूद्रा जपेयु: प्रणवं विना। आदावष्टाक्षरस्य स्यात् प्रणव: सर्वकामिक:।।९।।
आदावन्ते यदा ह्येष ज्ञानवृद्धिस्तदा भवेत्। आदित: संहितां कुर्यादन्ततस्तु न संहिताम्।।१०।। इति।

मन्त्रवर्ण का ध्यान—महाकपिल पञ्चरात्र में कहा गया है कि असंख्य ज्योतियों से समन्वित ॐकार का सदा ध्यान करना चाहिये। न और मो का चिन्तन मेघ वर्ण की आभा से युक्त करना चाहिये। भिन्न अंजन के आकार का तृतीय बीज 'ना' श्याम वर्ण का सौम्य रूप वाला अन्यन्त सुन्दर है। 'रा' जल वर्ण की आभा से युक्त एवं तेज से दीप्त है। परम उत्तम 'य' का सदा धूम्र वर्ण ध्यान करना चाहिये। 'णा' का चिन्तन अनुपम गुणाकार करना चाहिये। तदनन्तर पद्मराग के समान प्रभा से युक्त 'य' का ध्यान करना चाहिये। धनप्राप्ति के लिये 'श्रीनमो नारायणाय' मन्त्र का जप करना चाहिये। कहा भी गया है कि तत्तत्कामनाओं की पूर्ति के लिये श्रींबीज से युक्त मन्त्र का जप करना चाहिये।

अपने को अति भयंकर नृसिंह के रूप में ध्यान करके मन्त्र से शस्त्र का स्पर्श करे तो दुर्जय पर भी विजय प्राप्त होती है। नारसिंह बीज 'क्ष्रौं' जोड़कर सदा जप करे; जैसे—'क्ष्रौं नमो नारायणाय'। इसके एक सौ आठ जप द्वारा बाँयें हाथ से अभिमन्त्रित जल से यदि सर्पदंशित मनुष्य को बार-बार नहलावे तो वह भी जीवित हो जाता है। गरुड़ मन्त्र के साथ नारायणाय जोड़कर का जप सदा करे। विष उतारने के लिये गरुड़वाहन विष्णु का ध्यान करे। अशोक के फलक पर गरुड़ लिखकर अशोक के नीचे अशोक के फूलों से पूजा करे। उसके आगे अशोक के उन्हीं फूलों से तीनों सन्ध्याओं में सात रात तक हवन करे तो गरुड़ प्रत्यक्ष होकर इच्छित वर प्रदान करते हैं। गाणपत्य बीज 'ग्लौं' के साथ इस मन्त्र का एक लाख जप केवल दूध पीकर करे तो महागणपति प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं। 'ऐं नमो नारायणाय' का छ: महीनों तक जप एवं अर्चन करने से सरस्वती प्रत्यक्ष दर्शन देती हैं। 'ॐ नमो नारायणाय' का जप जो विप्र, क्षत्रिय और वैश्य मनुष्य करता है तथा जो स्त्री और शूद्र मात्र 'नमो नारायणाय' का जप करते हैं, उनकी कामनायें पूर्ण होती हैं। अष्टाक्षर मन्त्र का आद्य प्रणव समस्त कामनाओं को देने वाला है। 'ॐ नमो नारायणाय ॐ' के जप से ज्ञानवृद्धि होती है।

यन्त्ररचनाप्रकार:

कल्पोक्तं यन्त्रमुच्यते—

अष्टपत्रं च षट्कोणं रविसंख्यदलाम्बुजम् । दन्तपत्रं च तद्बाह्ये वृत्तं भूमिपुरं शुभम् ॥१॥
ससाध्यं कर्णिकायां तु लिखेदाद्यस्वरं सुधी: । अष्टपत्रेषु मूलार्णान् पत्राग्रे श्रीकरं लिखेत् ॥२॥
षट्कोणे चक्रमन्त्रार्णान् सूर्यरि द्वादशार्णकम् । दन्तपत्रे मन्त्रराजं वृत्ते नृहरिबीजकम् ॥३॥
प्राणार्णैरपि संयुक्तं साक्षाद्विष्णोश्च मन्दिरम् । आवाह्य मन्त्रैराराध्य सूत्रैर्बद्ध्वा दृढं वहन् ॥४॥
सर्वदा तस्य वर्द्धन्ते धनारोग्यार्थसंपद: । सायुज्यं सार्ष्टिसालोक्ये सामीप्यं वाथ वाञ्छितम् ॥५॥ इति।

सारसंग्रहेऽपि—

षट्कोण प्रणवान्तरे प्रणवगं साध्यं लिखेन्मध्यत: । षट्कोणेषु लिखेत् सुदर्शनमनुं पद्मेऽष्टपत्रे तत: ॥
अष्टार्णं च दलाग्रत: प्रविलिखेत्तं श्रीकराष्टाक्षरं
बाह्ये द्वादशवर्णमन्त्रसहितं स्याद् द्वादशारं तत: ॥१॥
द्वात्रिंशद्दल आलिखेन्नरहरेरानुष्टुभार्णांस्त-
तस्तद्बीजेन च वेष्टयेद्बहिरिदं यन्त्रं हि विष्णो: परम् ।
पूजाहोमसुसाधितं करधृतं भूतादिरक्षाकरं
लक्ष्मीकीर्तिविवर्धनं परमिदं मोक्षार्थिनां मुक्तिदम् ॥२॥ इति।

अस्यार्थ:—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये प्रणवोदरे प्रणवं विलिख्य, तन्मध्ये साध्यनामालिख्य षट्सु कोणेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन वक्ष्यमाणसुदर्शनषडक्षरस्यैकैकमक्षरं प्रतिकोणं विलिख्य, तद्बहिरष्टदलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु नारायणाष्टक्षरवर्णानालिख्य, तद्दलाग्रेषु प्रागुक्तश्रीकराष्टाक्षराणि आलिख्य, तद्बहिर्द्वादशदलं कृत्वा तद्दलेषु वक्ष्यमाणवासुदेवद्वादशाक्षराणि आलिख्य, तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलपद्मं विरच्य तद्दलेषु वक्ष्यमाणनृसिंहमन्त्रस्य द्वात्रिंश-द्वर्णानेकैकश: समालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा वृत्तयोरन्तराले स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन मध्यस्थाक्षरसंमुखं यथा भवति तथा निरन्तरं नृसिंहबीजेन वेष्टयेदित्येतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। श्रीयन्त्रसारे—

षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं साध्यसमन्वितम् । सुदर्शनषडर्णं च षट्सु कोणेषु सन्धिषु ॥१॥
षडङ्गानि चतुष्पत्रकेसरेषु क्रमेण च । गोपालकचतुर्वर्णमन्त्रस्यैकैकमक्षरम् ॥२॥
दलेषु द्वादशार्णस्य त्रीणि त्रीण्यक्षराणि च । अष्टपत्रे केसरोद्यदष्टार्णैकैकवर्णके ॥३॥
नृसिंहानुष्टुभो वर्णांश्चतुरश्चतुरस्तत: । सुदर्शनद्व्यष्टपत्रकेसरे षोडशच्छदे ॥४॥
ऋचां पुरुषसूक्तस्य क्रमात् षोडशकं बहि: । मातृकार्णोल्लसद्वृत्तं भूपुराश्रिस्थतारकम् ॥५॥
यन्त्रं पुरुषसूक्तस्य पुत्रायु:कीर्तिकान्तिदम् । सर्वपापहरं श्रीदं धर्मार्थसुखमोक्षदम् ॥६॥
हैयङ्गवीने प्रविलिख्य यन्त्रं त्रिवारमेतत् प्रविजप्य सूक्तम् ।
प्रात:समद्याद्वनिता विदग्धं पुत्रं प्रसूते सकलागमज्ञम् ॥७॥
घोरे विषे घोरतरेऽभिचारे घोरे ज्वरे घोरतरे च शूले ।
प्रभक्षयेत् तत्प्रशमाय जप्त्वा······················॥८॥ इति।

अस्यार्थ:—षट्कोणं कृत्वा तत्कर्णिकामध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, तत्कोणेषु सुदर्शनषडक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरं स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन विलिख्य, तत्सन्धिषु सुदर्शनषडक्षरस्य षडङ्गमन्त्रानालिख्य, तद्बहिश्चतुर्दलकमलं कृत्वा तत्केसरेषु गोपालचतुरक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, तत्पत्रेषु वासुदेवद्वादशाक्षरमन्त्रस्य वर्णानां त्रयं त्रयं प्रतिदलं विलिख्य, तद्बहिरष्टदलकमलं कृत्वा तत्केसरेषु नारायणाष्टाक्षरस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, तद्दलेषु द्वात्रिंशदक्षरनृसिंहमन्त्रस्य

चतुरश्चतुरो वर्णान् प्रतिदलं विलिख्य, तद्बहिः षोडशदलपद्मं कृत्वा तत्केसरेषु वक्ष्यमाणषोडशाक्षरसुदर्शनमन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, तद्दलेषु पुरुषसूक्तस्यैकैकामृचं विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तदन्तरालवीथ्यां मातृकां सबिन्दुकां विलिख्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु प्रणवं विलिखेद्, इत्येतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। अत्र पुरुषसूक्तं तु सर्वैरपि ऋग्वेदोक्तमेव ग्राह्यं सर्वेषां सूक्तानां तन्मूलकत्वादन्यवेदेषु पाठभेददर्शनात्। सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य सूक्तस्य नारायण ऋषिः पुरुषो देवता पञ्चदशानुष्टुभस्त्रिष्टुबेका।

यन्त्र-रचना प्रकार—कल्प में कहा गया है कि अष्टपत्र, षट्कोण, द्वादश दल पद्म, बत्तीस दल कमल एवं वृत्त के बाहर भूपुर बनावे। कर्णिका में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। अष्टपत्र में मन्त्र के आठ अक्षरों को लिखे। षट्कोण में चक्र मन्त्र के वर्णों को लिखे। द्वादश दल में ॐ नमो भगवते वासुदेवाय के अक्षरों को लिखे। बत्तीस पत्र में मन्त्रराज लिखे। वृत में नृसिंह-बीज लिखे। दश वर्णों से संयुक्त यह यन्त्र साक्षात् विष्णु का मन्दिर हो जाता है। उसमें विष्णु का आवाहन करके मन्त्र से पूजा करके धागे से मजबूती से बाँधे तो साधक के धन, आरोग्य एवं सम्पदा की सर्वदा वृद्धि होती है। साथ ही सायुज्य, सार्ष्टि, सालोक्य या या सामीप्य मुक्ति की प्राप्ति होती है।

सारसंग्रह में भी कहा गया है कि षट्कोण बनाकर उसके मध्य में ॐ के गर्भ में ॐ लिखे। उसमें साध्य नाम लिखे। षट्कोण में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से सुदर्शन मन्त्र 'सहस्रार हुं फट्' के छः अक्षरों को एक-एक करके प्रत्येक कोण में लिखे। इसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसके दलों में 'ॐ नमो नारायणाय' मन्त्र के आठ अक्षरों को एक-एक करके लिखे। उसके दलों के अग्रभाग में 'उत्तिष्ठ श्रीकर स्वाहा'—इस श्रीकर मन्त्र के आठ अक्षरों में से प्रत्येक अक्षर को प्रत्येक दल में लिखे। उसके बाहर द्वादशदल कमल बनाकर उसके दलों में 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' के बारह अक्षरों को लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनाकर उसमें नृसिंह मन्त्र 'उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युर्मृत्युं नमाम्यहं' के बत्तीस अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर वृत्तों के अन्तराल में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से मध्यस्थ अक्षर को नृसिंह बीज से वेष्टित करे। पूजा-हवन से सुसाधित इस यन्त्र को हाथ में धारण करने से भूतादि से रक्षा होती है एवं लक्ष्मी तथा कीर्ति की वृद्धि होती है। यह श्रेष्ठ मन्त्र मोक्षार्थियों को मोक्ष देने वाला है।

श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि षट्कोण बनाकर उसके मध्य मे 'ॐ' के साथ साध्य नाम लिखे। षट्कोण के कोनों में सुदर्शन मन्त्र 'सहस्रार हुं फट्' के एक-एक अक्षरो को लिखे। कोणों की सन्धियों में सुदर्शन षड्क्षर के षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर उसके केसर में चतुरक्षर गोपाल मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय' के एक-एक अक्षर को लिखे। दलों में द्वादशाक्षर मन्त्र के तीन-तीन वर्णों को लिखे। जैसे—ॐ नमो, भगव, तेवासु, देवाय। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर दल के केसरों में नारायण का अष्टाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो नारायणाय' के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके दलों में बत्तीस अक्षरों के नृसिंह मन्त्र—उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखं नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युर्मृत्युं नमाम्यहं' के चार-चार अक्षरों को लिखे। इसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर दल के केसरों में सुदर्शन षोडशाक्षर मन्त्र—'ॐ नमो भगवते महासुदर्शनाय हुं फट्' के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके दलों में पुरुष सूक्त के सोलह ऋचाओं में से एक-एक ऋचा को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लं लृं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं सं शं षं हं क्षं तक की पचास मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके कोणों में 'ॐ' लिखे। यहाँ पर ऋग्वेदोक्त पुरुष सूक्त 'सहस्रशीर्षा' ग्राह्य है। यह पुरुषसूक्त यन्त्र पुत्र, आयु, कीर्ति एवं कान्तिप्रद होने के साथ-साथ सर्वपापहर, श्रीप्रद एवं धर्म-अर्थ-मोक्ष-सुखदायक है। इस प्रकार के यन्त्र को बनाकर पुरुषसूक्त का तीन बार पाठ करे और उस यन्त्र को प्रातःकाल वनिता यदि भक्षण करे तो सभी आगमों के ज्ञानी एवं वैराग्य-समन्वित पुत्र को वह जन्म देती है। घोर विष, घोरतर अभिचार, घोर ज्वर, घोरतर पीड़ा के शमन के लिये जप करके इसका भक्षण करना चाहिये।

अष्टवर्णमन्त्रस्यर्षिच्छन्दोदेवतावर्णस्वरपार्थक्यवर्णनम्

सारसंग्रहे—

अष्टवर्णस्य मन्त्रस्य वर्णाष्टकर्षयः पृथक्। मूर्तिभेदविभिन्नोऽसौ प्रोच्यते साधकेष्टदः॥१॥
गौतमोऽथ भरद्वाजौ विश्वामित्राह्वयस्तथा। जमदग्निर्वशिष्ठश्च कश्यपश्चात्रिरेव च॥२॥
अगस्त्य इति विज्ञेया ऋषयोऽष्टौ यथाक्रमम्। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरेव च॥३॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव विराट् छन्दांसि तु क्रमात्। धरो ध्रुवस्तथा सोम आपोऽग्निर्वायुरेव च॥४॥
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च विज्ञेया देवताः क्रमात्। अग्निर्भूर्वायुराकाश आदित्या द्यौर्विधुश्च भम्॥५॥
तत्त्वानि सप्त लोकाः स्यु क्षेत्राणि सपरात्मकाः। शुक्लं हिरण्मयं कृष्णं रक्तं कुङ्कुमसन्निभम्॥६॥
पद्मं किञ्जल्कनीलाभं रक्तं वर्णाष्टकं मतम्। पष्ठाद्ययोरुदात्तः स्यात् स्वरितोऽन्त्यद्वितीययोः॥७॥
(प्रचयौ त्रिचतुर्वर्णौ निहतं पञ्चमाक्षरम्। उदात्तं सप्तमं बीजमिति संस्मृत्य संजपेत्॥८॥
दरचक्रगदापद्मकरे मूर्ती नमोर्णयोः।) इतराः स्युश्चक्रशङ्खगदापद्मकराः क्रमात्॥९॥
या मूर्तिः पूज्यते पूर्वं तस्या अन्याः प्रयान्त्यथ। अङ्गतामवशिष्टेंऽशे स्वयं यात्यङ्गतां पुनः॥१०॥
वक्ष्यमाणाच्च तारस्य विधानादधिकावृतिः। इयमेवेतरत् सर्वं वक्ष्यमाणप्रकारवत्॥११॥
सर्वार्चायां पूर्वमङ्गमूर्त्यष्टकमतो बिदुः। लोकपालादिकं चान्यत् समानं सर्वपूजने॥१२॥
नार्णजे वासुदेवादिशक्तयोऽर्च्या ध्वजादिकाः। तृतीयजे रतिधृती कान्तिस्तुष्टिः सपुष्टिका॥१३॥
स्मृतिर्दीप्तिश्च कीर्तिश्च पूज्याः पश्चाद्ध्वजादिकाः। तुरीयजे च रत्यादिपूजा शेषं च पूर्ववत्॥१४॥
पञ्चमाक्षरजे श्रीर्भूर्माया स्याच्च मनोन्मनी। ह्रीः रतिः पुष्टिमोहिन्यौ माया च महदादिका॥१५॥
योगादिका तथा पूज्या षष्ठाक्षरभवे त्वरिः। शङ्खो गदा हलं शार्ङ्गो मुसलोऽसिः सशूलका॥१६॥
सप्तमार्णभवेऽनन्तो वासुकिस्तक्षकस्तथा। (कार्कोटकस्ततः पद्मो महापद्मस्ततः परम्॥१७॥
शङ्खपालाख्यकुलिकौ सम्यक् पत्रेषु पूजयेत्।) मत्स्यादिभिः पञ्चमी स्यात् पष्ठ्यनन्तादिभिर्मता॥१८॥
अन्यत् पूर्ववदेव स्यात् सर्वं मत्स्यश्च कूर्मकः। वराहश्च नृसिंहश्च कुब्जो रामत्रयं तथा॥१९॥
कृष्णः कल्की त्वनन्तात्मा बुद्ध एवैष नामतः। पूजाविधौ च पूर्वोक्ते यन्त्रोक्तं चोह्यमेव तत्॥२०॥
अष्टाक्षरार्णमन्त्राणां विधानं सम्यगीरितम्। एतेन यो यजेन्मन्त्री भक्त्या परमया हरिम्॥२१॥
स वाञ्छितार्थांल्लभते ह्ययत्नादेव साधकः।

अथाष्टाक्षरस्याष्टवर्णसंज्ञानामष्टमूर्तीनां विधानमाह—अष्टवर्णस्येति। दरः शङ्खः। नमोर्णयोर्मूर्त्योः पूर्ववदायुधध्यानम्। अन्यासां तु दक्षाधःकरमारभ्य प्रादक्षिण्येन दक्षोर्ध्वकरपर्यन्तं चक्रशङ्खगदापद्मानि ध्येयानि। या मूर्तिरिति—या मूर्तिः प्राधान्येनार्चयितुरिष्टा सा मध्ये पूज्या। इतराः सप्त मूर्तयः पूर्वादिसौम्यान्तासु दिशासु पूज्याः। ईशानकोणे तु पुनः प्रधानमूर्तिरेव पूज्या। अवशिष्टेंऽशे 'स्वयं यात्यङ्गतां पुनः' इत्युक्तेः। अत्र द्वितीयमूर्तिपूजायां तृतीयादिमूर्तीः संपूज्यानन्तरमाद्यां द्वितीयां च पूजयेदेवं तृतीयादिष्वप्यूहनीयम्। तत्र प्रथमपूजायां प्रथममङ्गावृतिः द्वितीया अष्टमूर्तिभिः, तृतीया सशक्तिकैर्वासुदेवादिभिरात्मादिभिः, शान्त्यादिभिः चतुर्थी, चक्रादिभिः पञ्चमी, ध्वजादिभिः शक्रादिभिः तदस्त्रैश्च षष्ठी। नार्णमूर्त्यर्चायां—तृतीया वासुदेवादिभिः, सशान्त्यादिभिर्ध्वजादिभिश्चतुर्थी, पञ्चमी षष्ठी च शक्रादिभिस्तदस्त्रैश्च। मोर्णमूर्तिपूजायां—तृतीया रत्यादिभिः, सशान्त्यादिभिर्ध्वजादिभिश्चतुर्थी। नार्णजे विधाने—रत्यादिभिस्तृतीया। रार्णविधौ—आत्मादिभिस्तृतीया, तत्र माया महामाया योगमायेति शक्तित्रयनाम ज्ञेयम्। यार्णविधौ—तृतीया शङ्खादिभिः। णकारविधौ—तृतीयानन्तादिभिः। यकारमूर्तिपूजायां—प्रथमा अङ्गावृत्तिः, द्वितीया वासुदेवादिभिः शान्त्यादिभिश्च, तृतीया केशवाद्यैः, तुरीया ध्वजाद्यैः, पञ्चमी मत्स्यादिभिः, लोकेशैः षष्ठी, तदस्त्रैः सप्तमी, इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि अष्टाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो नारायणाय' के प्रत्येक अक्षर के अलग-अलग रूप की मूर्तियाँ हैं, जो साधक को अभीष्ट प्रदान करने वाली हैं इन आठ अक्षरों के आठ ऋषि क्रमश: गौतम, भारद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ, कश्यप, अत्रि और अगस्त्य हैं। गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप्, जगती, विराट्—ये क्रमश: इसके छन्द हैं। इनके देवता क्रमश: धर, ध्रुव, सोम, आप, अग्नि, वायु, प्रत्यूष और प्रभास हैं। इनके क्षेत्र क्रमश: अग्नि, पृथ्वी, वायु, आकाश, आदित्य, द्यौ, चन्द्र, भम और परतत्त्व-सहित सहित सात लोक इसके क्षेत्र हैं। इनके वर्ण क्रमश: शुक्ल, स्वर्णिम, काला, लाल, कुङ्कुम, पद्म, किंजल्क के समान नीला एवं लाल हैं। मन्त्र के पहले और छठे अक्षर उदात्त, दूसरे और आठवें वर्ण स्वरित्, तीसरे और चौथे वर्ण प्रचय, पाँचवाँ अक्षर निहत, सातवाँ बीज उदात्त होता है—ऐसा स्मरण करके मन्त्र का जप करना चाहिये। इन वर्णमूर्तियों के चार हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म हैं। आयुध का यह क्रम क्रमश: तीसरे, चौथे, पाँचवें, सातवें वर्णमूर्तियों का है। पहले, छठे, दूसरे, आठवें वर्णमूर्तियों के आयुध का क्रम चक्र, शङ्ख, गदा, पद्म है। जिस मूर्ति की पूजा इष्ट हो, वह मध्य में होती है। अन्य सात मूर्तियों की पूजा पूर्व से उत्तर तक की दिशाओं में कर ईशान कोण में पुन: प्रधान मूर्ति की पूजा होती है। द्वितीय मूर्ति की पूजा में तृतीयादि मूर्ति की पूजा के बाद द्वितीया की पूजा करे। इसमें तृतीयादि व्यूह रूप में रहती हैं। प्रथम पूजा में प्रथम अंगावृति, द्वितीया में अष्टमूर्ति, तृतीया में शक्तियों सहित वासुदेवादि पूज्य हैं। चौथे आवरण में शान्ति आदि पूज्य हैं। पाँचवें आवरण में ध्वजा, शक्रादि पूज्य हैं। छठे आवरण में आयुधों की पूजा करे। वर्ण मूर्तिपूजा में तृतीय में वासुदेवादि पूज्य हैं। चौथी आवृत्ति में शान्ति आदि ध्वजा आदि पूज्य हैं। पञ्चमी में शाक्रादि, छठी में आयुधों की पूजा करे। मो वर्णमूर्ति की पूजा में तीसरी आवृत्ति में रति आदि, चौथी में शान्ति आदि एवं ध्वजा आदि की पूजा करे। 'ना' वर्णमूर्ति पूजा में तीसरी आवृत्ति में रति आदि की पूजा करे। 'रा' वर्णमूर्ति पूजा में तीसरी आवृत्ति में माया, महामाया, योगमाया—इन तीन शक्तियों की पूजा होती है। 'य' वर्णमूर्ति पूजा में तीसरी आवृत्ति में शङ्खादि की पूजा होती है। 'णा' वर्णमूर्ति पूजा में तीसरी आवृत्ति में अनन्तादि पूज्य हैं। 'य' वर्णमूर्ति पूजा में अंग पूजन प्रथम आवृत्ति, द्वितीया वासुदेवादि-शान्त्यादि, तृतीया केशवादि, चौथी ध्वजादि, पञ्चमी आवृत्ति में मत्स्यादि, षष्ठी आवृत्ति में लोकेश और सातवीं आवृत्ति में अस्त्रों की पूजा होती है।

इस प्रकार इस अष्टाक्षर मन्त्र से भक्तिसहित जो साधक हरि की पूजा करता है, उसे वांछित फल प्राप्त होते हैं।

लक्ष्मीनारायणमन्त्रोद्धार:

रुद्रयामले—

महादेव उवाच

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि लक्ष्मीनारायणस्य ते। अष्टसिद्धिप्रदं सद्य: साधकानां सुखावहम्॥१॥
तारं परां च हरितं परां लक्ष्मीं ततोऽभिधाम्। लक्ष्मीनारायणायेति विश्वमन्ते मनु: स्मृत:॥२॥

तारं प्रणव:। परां ह्रीं। हरितं ह्सौ:। परां ह्रीं। लक्ष्मीं श्रीं। लक्ष्मीनारायणाय स्वरूपम्। 'ॐह्रीं ह्सौ: ह्रींश्रीं नमो लक्ष्मीनारायणाय'।

लक्ष्मीनारायण मन्त्र—रुद्रयामल के अनुसार लक्ष्मी नारायण का चतुर्दशाक्षर मन्त्र इस प्रकार है—ॐ ह्रीं ह्सौ: ह्रीं श्रीं नमो लक्ष्मीनारायणाय।

लक्ष्मीनारायणमन्त्रयजनविधि:

तथा—

नास्य विघ्नो न वा दोषो न भीतिर्न विपर्यय:। साक्षान्मोक्षप्रदो मन्त्र: सर्वार्थफलदायक:॥३॥
वर्णलक्षं पुरश्चर्या विनायं चास्ति दोषभाक्। जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षम:॥४॥
पुरश्चरणहीनोऽपि न मन्त्र: फलदायक:। वटेऽरण्ये श्मशाने च शून्यागारे चतुष्पथे॥५॥
अर्धरात्रे च मध्याह्ने पुरश्चरणमाचरेत्। वर्णलक्षं पुरश्चर्यां तदर्धं वा महेश्वरि॥६॥

एकलक्षावधिं कुर्यान्नातो न्यूनं कदाचन। प्रथमं गुरुहस्तेन साधकस्य करेण वा ॥७॥
ततः स्वयं चरेद्वह्नीः पुरश्चर्याविधानतः। जपाद् दशांशतो होमस्तद्दशांशेन तर्पणम् ॥८॥
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम्। विना दशांशहोमेन न तत्फलमवाप्नुयात् ॥९॥
पञ्चरत्नेश्वरीं विद्यां लक्ष्मीनारायणस्य हि। जपेत् तां पञ्चभिः सार्धं पुरश्चर्याफलं लभेत् ॥१०॥
मन्त्रस्यास्य महादेवि वर्णितोऽत्र ऋषिः शिवः। त्रिष्टुप् छन्दः समाख्यातं देवतापि समीरिता ॥११॥
लक्ष्मीनारायणो देवि बीजं लक्ष्मीरुदाहृता। शक्तिः परा तथा तारं कीलकं समुदाहृतम् ॥१२॥
भोगापवर्गसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः। ध्यानमस्य प्रवक्ष्यामि लक्ष्मीनारायणस्य ते ॥१३॥
येनैव ध्यानमात्रेण लक्ष्मीसिद्धिमुपैष्यति। पूर्णेन्दुवदनं पीतवाससं कमलासनम् ॥१४॥
लक्ष्म्याश्रितं चतुर्बाहुं लक्ष्मीनारायणं भजे। तारमाभूतिबीजैश्च षड्दीर्घान्तैर्महेश्वरि ॥१५॥
न्यासं कुर्यात् षडङ्गानि करशुद्ध्यादिपूर्वकम्।

इस लक्ष्मीनारायण मन्त्र की साधना में न विघ्न, न दोष, न भय और नहीं विपर्यय है। यह साक्षात् मोक्षप्रद एवं सर्वार्थफलदायक है। वर्णलक्ष के अनुसार चौदह लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। पुरश्चरण के बिना यह मन्त्र दोषयुक्त रहता है। जैसे जीवहीन देही कोई काम नहीं कर सकता वैसे ही पुरश्चरणरहित मन्त्र भी फलदायक नहीं होते। वटवृक्ष के नीचे, जंगल में, श्मशान में, सूने घर में, चौराहे पर आधी रात में या मध्य दिवस में पुरश्चरण करे। इसमें जप चौदह लाख या सात लाख या एक लाख करे। इससे कम जप कभी न करे। पहले गुरु के हाथ से तब साधक के हाथ से तब अपने हाथ से अग्नि प्रज्वलित करे। पुरश्चरण विधान से जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन करावे। दशांश हवन के बिना मन्त्र का फल नहीं मिलता है। पञ्चरत्नेश्वरी विद्या के साथ लक्ष्मीनारायण मन्त्र के जप करने से पुरश्चरण का फल मिलता है। इस मन्त्र के ऋषि शिव, छन्द त्रिष्टुप्, देवता लक्ष्मी-नारायण, बीज श्रीं, शक्ति ह्सौः और ॐ कीलक हैं। भोग-अपवर्ग की सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। लक्ष्मी की सिद्धि प्रदान करने वाला लक्ष्मीनारायण का ध्यान इस प्रकार—

पूर्णेन्दुवदनं पीतवाससं कमलासनम्। लक्ष्म्याश्रितं चतुर्बाहुं लक्ष्मीनारायणं भजे।।

इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् करशुद्धि आदि करके छः दीर्घ ह्रीं श्रीं आदि से षडङ्ग न्यास करना चाहिये।

यन्त्ररचनार्चनम्

यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि सर्वाशासिद्धिदं परम् ॥१६॥
सर्वसंमोहनं यन्त्रं वाञ्छितैकप्रदायकम्। बिन्दुत्रिकोणं वस्वस्रं वृत्ताष्टदलमण्डितम् ॥१७॥
षोडशारं च वृत्तं च भूगेहेनोपशोभितम्। लक्ष्मीनारायणस्यैतच्छ्रीचक्रं परमार्थदम् ॥१८॥
लयाङ्गं देवि वक्ष्यामि भोगमोक्षप्रदायकम्। वेदागमरहस्याढ्यं पूजाकोटिफलप्रदम् ॥१९॥
वज्रशक्तिदण्डखड्गपाशयष्टिध्वजास्तथा। शूलं पूज्याः शिवे चैव बाह्यद्वारेषु सर्वदा ॥२०॥
इन्द्राग्नियममांसादवरुणानिलवित्तपाः। सेश्वराः साधकैः पूज्या ब्रह्मानन्तादयस्तथा ॥२१॥
केशवं माधवं कृष्णं गोविन्दं मधुसूदनम्। गदाधरं शङ्खधरं चक्रपाणिं चतुर्भुजम् ॥२२॥
पद्मायुधं कैटभारिं घोरदंष्ट्रं जनार्दनम्। वैकुण्ठं वामनं चैव पूजयेद्गरुडध्वजम् ॥२३॥
षोडशारेषु देवेशि वामावर्तेन साधकः। तत्रार्चयेन्महादेवि मन्त्री गुरुचतुष्टयम् ॥२४॥
अमृताङ्गं हंसकेतुं वंशपाणिं च पूजयेत् (श्रीपतिं)। वृत्तत्रयेषु देवेशि साधको गन्धपुष्पकैः ॥२५॥
संहारं रुरुकं चण्डं भूतेशं कालभैरवम्। कपालं भीषणं चैव तथा श्मशानभैरवम् ॥२६॥
पूजयेत् साधकः सिद्ध्यै वसुपत्रे महेश्वरि। विष्णुं च वासुदवं च देवि दामोदरं तथा ॥२७॥
नरसिंहं च देवेशि देवि संकर्षणं तथा। त्रिविक्रमं चानिरुद्धं विश्वक्सेनं च साधकः ॥२८॥

लक्ष्मीशब्दान्तिकं देवि वसुकोणेषु पूजयेत्। गङ्गां च यमुनां चैव त्र्यस्रे सरस्वतीं तथा॥२९॥
पूजयेदग्रवह्नीशक्रमयोगेन पार्वति। लक्ष्मीनारायणं देवं पूजयेद् बिन्दुमण्डले॥३०॥
गन्धाक्षतप्रसूनाद्यैर्गुरुर्माल्यविभूषणैः। इति।

अब सर्वाशा-परिपूरक इसके पूजायन्त्र को कहता हूँ। यह यन्त्र सबको मोहित करने वाला एवं वाञ्छित फल प्रदान करने वाला है। बिन्दु, त्रिकोण, अष्टकोण, वृत्त, अष्टदल कमल, षोडशदल कमल, वृत्त एवं भूपुर से शोभित लक्ष्मी- नारायण का यह श्रीयन्त्र परमार्थप्रदायक है। इसका लयाङ्गपूजन भोगमोक्ष-प्रदायक है। साथ ही वेद एवं आगम के रहस्यों तथा करोड़ों पूजा के फल को देने वाला है। बज्र, शक्ति, दण्ड, ब्रह्मा एवं अनन्तः खड्ग, पाश, यष्टि, ध्वज एवं शूल की पूजा बाह्य द्वार पर करनी चाहिये। इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुवेर भी ईश्वरसहित साधकों द्वारा पूज्य हैं। षोडशदल में केशव, माधव, कृष्ण, गोविन्द, मधुसूदन, गदाधर, शङ्खधर, चक्रपाणि, चतुर्भुज, पद्मायुध, कैटभारि, घोरदंष्ट्र, जनार्दन, वैकुण्ठ, वामन एवं गरुड़ध्वज वामावर्त से क्रमशः पूज्य होते हैं। वहीं पर गुरुचतुष्टय की भी पूजा करनी चाहिये। दलाग्रों में अमृतांग, हंसकेतु एवं वंशपालि की पूजा की जाती है। अष्टपत्र में संहार, रुरु, चण्ड, भूतेश, कालभैरव, कपालभैरव, भीषण भैरव एवं श्मशानभैरव की पूजा सिद्धि के लिये साधक को करनी चाहिये। पुनः अष्टपत्र में विष्णु, वासुदेव, दामोदर, नरसिंह, संकर्षण, त्रिविक्रम, अनिरुद्ध और विश्वक्सेन की 'लक्ष्मी' लगाकर पूजा करनी चाहिये। त्रिकोण में गंगा, यमुना एवं सरस्वती की पूजा करनी चाहिये। बिन्दुमण्डल में गन्ध-पुष्प-अक्षत-माला आदि से लक्ष्मीनारायण की पूजा करनी चाहिये।

लक्ष्मीनारायणयन्त्रप्रयोगविधिः

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादिस्नानान्तं कर्म समाप्य 'ॐह्रीं लक्ष्मीनारायणाय विद्महे, ह्सौः परब्रह्मणे धीमहि, ह्रींश्रीं तन्नः परमात्मा प्रचोदयात्' इति गायत्र्या संध्यावन्दनं विधाय ततो यागगृहप्रवेशादि योगपीठन्यासान्तं कृत्वा मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि सदाशिवाय ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीलक्ष्मीनारायणाय देवतायै नमः। गुह्ये श्रींबीजाय नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। सर्वाङ्गे ओं कीलकाय नमः। इति ऋष्यादिकं यथास्थानं विन्यस्य मम चतुर्वर्गफलसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, श्रांह्रां हृदयाय नमः। श्रीं ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रूंहूं शिखायै वषट्। श्रैंह्रैं कवचाय हुं। श्रौंह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रः ह्रः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततः करशुद्धिरूपषडङ्गं न्यसेत्। यथा—ॐकामरूपपीठाय नमः अङ्गु-ष्ठहृदययोः। ह्रीं जालन्धरपीठाय नमः तर्जनीशिरसोः। ह्सौः पूर्णगिरिपीठाय नमः मध्यमाशिखयोः। श्रींवाराणसीपीठाय नमः अनामिकाकवचयोः। ह्रीं अवन्तीपीठाय नमः करतलकरपृष्ठास्त्रयोः। इति विन्यस्य, अं ८ वामपादादि गुल्फान्तं, लं ८ दक्षपादादि गुल्फान्तं, कं ५ गुल्फादि वामपादमूलान्तं, चं ५ गुल्फादि दक्षपादमूलान्तं, टं ५ नाभ्यादि वामबाहुमूलान्तं, तं ५ नाभ्यादि दक्षबाहुमूलान्तं, पं ५ कट्यादि स्कन्धान्तं, यं ५ स्कन्धादि कर्णान्तं, शं ६ शिरसः पादपर्यन्तम्। इति त्रिर्व्यापकम्। ततो मातृकाषडङ्गं विन्यस्य मातृकास्थानेषु बिन्दुयुक्तां मातृकां विन्यस्य, अंॐअं इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। ॐअंॐ इति च क्षान्तं विन्यस्य, अंह्रींअं इति क्षान्तं, ह्रींअंह्रीं इति च क्षान्तं, अंश्रींअं ५१, श्रींअंश्रीं ५१, इति मातृकास्थानेषु षोढान्यासं विधाय, मूलेन त्रिर्व्यापकन्यासं विधाय ध्यानादिमानस-पूजान्तेऽर्घ्यादिस्थापनाद्यात्मपूजां विधाय, मण्डूकादिपीठमन्वन्तं प्राग्वद्वैष्णवं पीठमभ्यर्च्य, मूलेन मूर्तिं परिकल्प्यावा-हनादिपुष्पोपचारान्ते देवाज्ञामादाय परिवारदेवताः पूजयेत्। मध्ये त्रिकोणकोणेषु—मू० श्रीमहालक्ष्मीपादुकां पूजयामि नमः। एवं मू० महाराजलक्ष्मीपा०। मू० महासिद्धलक्ष्मी०। इति स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन पूजयेदिति प्रथमावरणम्। ततस्त्रिकोणाग्रेषु—ॐह्रींह्सौः गं गङ्गाश्रीपा०। ३ँ यं यमुनाश्री०। ३ँ सं सरस्वतीश्री०। इति द्वितीयावरणम्। ततो-ऽन्तरालचक्रे—३ँ शङ्खश्री०। ३ँ चक्रश्री०। ३ँ गदाश्री०। ३ँ पद्मश्री०। इति तृतीयावरणम्। ततोऽष्टकोणेषु—३ँ लक्ष्मीविष्णुश्री०। ३ँ लक्ष्मीवासुदेवश्री०। ३ँ लक्ष्मीदामोदरश्री०। ३ँ लक्ष्मीनरसिंहश्री०। ३ँ लक्ष्मीसङ्कर्षणश्री०। ३ँ लक्ष्मीत्रिविक्रमश्री०। ३ँ लक्ष्मीअनिरुद्धश्री०। ३ँ लक्ष्मीविश्वक्सेनश्री०। इति चतुर्थावरणम्। ततोऽष्टदलेषु—३ँ संहारभैरवश्री०। ३ँ रुरुभैरवश्री०। ३ँ चण्डभैरवश्री०। ३ँ भूतेशभैरवश्री०। ३ँ कालभैरवश्री०। ३ँ कपालभैरवश्री०।

इँ भीषणभैरवश्री०। इँ श्मशानभैरवश्री०। इति पञ्चमावरणम्। ततो दलाग्रेषु— इँ अमृताङ्गश्री०। इँ हंसकेतुश्री०। इँ वंशपाणिश्री०। इँ श्रीपतिश्री०। इँ श्रीगुरुश्री०। इँ परमगुरुश्री०। इँ परापरगुरुश्री०। इँ परमेष्ठिगुरुश्री०। इति षष्ठावरणम्। ततः षोडशदलेषु— इँ केशवश्रीपा०। इँ माधव०। इँ कृष्ण०। इँ गोविन्द०। इँ मधुसूदन०। इँ गदाधर०। इँ शङ्खधर०। इँ चक्रपाणि०। इँ चतुर्भुज०। इँ पद्मायुध०। इँ कैटभारि०। इँ घोरदंष्ट्र०। इँ जनार्दन०। इँ वैकुण्ठ०। इँ वामन०। इँ गरुडध्वज०। इति सप्तमावरणम्। ततश्चतुरस्रे लोकपालैरष्टमम्, तद्बहिस्तदायुधैर्नवमम्, इति नवावरणपूजां कृत्वा मूलेन साङ्गायेत्यादिना पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा धूपदीपादिकं सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। अस्य पुरश्चरणं प्रागेवोक्तम्।

प्रयोग—प्रातःकृत्य से लेकर स्नान तक का कर्म समाप्त करके 'ॐह्रीं लक्ष्मीनारायणाय विद्महे, ह्सौः परब्रह्मणे धीमहि, ह्रींश्रीं तन्नः परमात्मा प्रचोदयात्' इस गायत्री मन्त्र से संध्यावन्दन करके यागगृह में प्रवेश करके योगपीठ न्यास करके मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम कर इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि सदाशिवाय ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीलक्ष्मीनारायणाय देवतायै नमः, गुह्ये श्रींबीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे ओं कीलकाय नमः। तदनन्तर अपने चतुर्वर्ग की प्राप्ति के लिए विनियोग बोलकर इस प्रकार हृदयादि षडङ्ग न्यास करे—श्रांह्रां हृदयाय नमः, श्रीं ह्रीं शिरसे स्वाहा, श्रूंहूं शिखायै वषट्, श्रैंहैं कवचाय हुं, श्रौंहौं नेत्रत्रयाय वौषट्, श्रः हः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार षडङ्ग मन्त्रों से करन्यास भी करे। तदनन्तर करशुद्धिरूप षडङ्ग न्यास इस प्रकार करे—ॐकामरूपपीठाय नमः (अङ्गुष्ठ-हृदय में), ह्रीं जालन्धरपीठाय नमः (तर्जनी-शिर पर), ह्सौः पूर्णगिरिपीठाय नमः (मध्यमा-शिखा में), श्रींवाराणसीपीठाय नमः (अनामिका-कवच में), ह्रीं अवन्तीपीठाय नमः (करतल-करपृष्ठ में)। इस प्रकार न्यास करके अं ८ वामपादादि गुल्फान्तं, लं ८ दक्षपादादि गुल्फान्तं, कं ५ गुल्फादि वामपादमूलान्तं, चं ५ गुल्फादि दक्षपादमूलान्तं, टं ५ नाभ्यादि वामबाहुमूलान्तं, तं ५ नाभ्यादि दक्षबाहुमूलान्तं, पं ५ कट्यादि स्कन्धान्तं, यं ५ स्कन्धादि कर्णान्तं, शं ६ शिरसः पादपर्यन्तम्—तीन बार व्यापक न्यास करे। तदनन्तर मातृका-षडङ्ग न्यास करके मातृकास्थानों में बिन्दुयुक्त मातृका का न्यास कर अंॐअं इस प्रकार अंक्षंअं तक न्यास करे। ॐअंॐ से ॐक्षंॐ तक, अंह्रींअं से क्षंह्रींक्षं तक, ह्रींअंह्रीं से ह्रींक्षंह्रीं तक, अंश्रींअं ५१, श्रींअंश्रीं ५१—इस प्रकार मातृकास्थानों में षोढा न्यास करके मूल मन्त्र से तीन बार व्यापक न्यास कर ध्यान-मानस पूजन-अर्घ्य स्थापन-आत्मपूजा करके मण्डूकादि पीठ पर पूर्ववत् वैष्णव पीठ की पूजा करके मूल मन्त्र से मूर्ति की कल्पना करके आवाहन से पुष्पोपचार तक पूजा कर देवता से आज्ञा लेकर उनके परिवारदेवता का अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजन करे—मध्य में त्रिकोण के कोणों में मूल मन्त्र के साथ श्रीमहालक्ष्मीपादुकां पूजयामि नमः, मूल मन्त्र के साथ महाराजलक्ष्मीपादुकां पूजयामि नमः, मूल मन्त्र के साथ महासिद्धलक्ष्मीपादुकां पूजयामि नमः। यह प्रथमावरण की पूजा होती है। तदनन्तर त्रिकोण के आगे द्वितीय आवरण में इस प्रकार पूजा करे—ॐह्रींह्सौः गं गङ्गाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः यं यमुनाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः सं सरस्वतीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर अन्तराल चक्र में तृतीय आवरण में इस प्रकार पूजा करे—ॐह्रींह्सौः शङ्ख-श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः चक्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः गदाश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः पद्म-श्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर अष्टकोण में चतुर्थ आवरण की पूजा इस प्रकार करे—ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीविष्णुश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीवासुदेवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीदामोदरश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीनरसिंहश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीसङ्कर्षणश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीत्रिविक्रमश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीअनिरुद्धश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः लक्ष्मीविश्वक्सेनश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर अष्टदल में पञ्चम आवरण की पूजा इस प्रकार करे—ॐह्रींह्सौः संहारभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः रुरुभैरव-श्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः चण्डभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः भूतेशभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ-ह्रींह्सौः कालभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः कपालभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः भीषणभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः,ॐह्रींह्सौः श्मशानभैरवश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर दलाग्रों में षष्ठ आवरण की पूजा इस प्रकार करे—ॐह्रींह्सौः अमृताङ्गश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः हंसकेतुश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौःवंशपाणिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः श्रीपतिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः श्रीगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐह्रींह्सौः परमगुरुश्रीपादुकां

पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः परापरगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः परमेष्ठिगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर षोडश दल में सप्तम आवरण की पूजा इस प्रकार करे—ॐ ह्रींह्सौः केशवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः माधवश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः कृष्णश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः गोविन्दश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः मधुसूदनश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः गदाधरश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः शङ्खधरश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः चक्रपाणिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः चतुर्भुजश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः पद्मायुधश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः कैटभारिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः घोरदंष्ट्रश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः जनार्दनश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः वैकुण्ठश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः वामनश्रीपादुकां पूजयामि नमः, ॐ ह्रींह्सौः गरुडध्वजश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तदनन्तर अष्टम आवरण में लोकपालों की पूजा करे। उसके पश्चात् नवम आवरण में चतुरस्र के बाहर लोकपालों के आयुधों की पूजा करके मूल मन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान कर धूप-दीप आदि करके पूजा का समापन करे। इसका पुरश्चरण पूर्व में ही स्पष्ट कर दिया गया है।

लक्ष्मीनारायणयन्त्रप्रयोगसाधनविधानम्

तथा—

……………………प्रयोगानथ पार्वति। वक्ष्ये येन भवेत्सिद्धिर्मन्त्रस्यास्य विशेषतः ॥१॥
स्तम्भनं मोहनं चैव मारणाकर्षणे ततः। वशीकारं तथोच्चाटं शान्तिकं पौष्टिकं ततः ॥२॥
एतेषां साधनं वक्ष्ये प्रयोगाणां महेश्वरि। एषां साधनमात्रेण मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥३॥
रवौ स्नात्वा महादेवि गत्वाश्वत्थतरोस्तलम्। जपेदयुतमीशानि हुनेत् तत्र दशांशतः ॥४॥
घृतमत्स्यण्डगुडजैः पुष्पैरानन्दमिश्रितैः। स्तम्भनं जायते सद्यो वादिवातार्कपाथसाम् ॥५॥
चन्द्रेऽर्धरात्रवेलायां गत्वा शृङ्गाटकं सुधीः। दिशो बद्ध्वासनं शोध्य प्राणायामविधानतः ॥६॥
जपेन्मूलं हरिं ध्यात्वा हुत्वा देवि दशांशतः। घृतनागरपुन्नागकरञ्जकुसुमानि च ॥७॥
तर्पयित्वा दशांशेन मार्जयित्वा महेश्वरि। तद्भस्मना चरेद्भाले तिलकं साधकोत्तमः ॥८॥
त्रैलोक्यं सहसा दृष्ट्वा मोहमेष्यति तन्मुखम्। भौमे गत्वा श्मशानं च जपेदयुतसंख्यया ॥९॥
हुनेद् दशांशतो देवि सर्पिर्गोधूमपायसैः। दूर्वापत्रसमायुक्तैर्मृत्युश्च म्रियते क्षणात् ॥१०॥
बुधे गत्वाटवीं दूरं जपेज् झंझातटे शिवे। अयुतं मूलमन्त्रं च हुनेत् सर्पिर्जपाकणाः ॥११॥
दूर्वापूतासपद्माक्षपत्राणि कुसुमानि च। रम्भापि पुरतस्तस्य सद्यः प्रादुर्भविष्यति ॥१२॥
गुरौ गत्वा नदीतीरं जपेत् तत्र दशांशतः। हुनेदाज्येन मधुना शटीचन्द्रकरीरकान् ॥१३॥
तद्भस्मना साधितेन त्रैलोक्यं वशमेष्यति। शुक्रेऽशोकतरुं गत्वा जपेदयुतसंख्यया ॥१४॥
हुत्वा सर्पिर्नागपुटं शालिचूर्णं तुषाकुलम्। तर्पयेदासवाज्येक्षुरसैर्भुक्त्वा दशांशतः ॥१५॥
शत्रोः शंभुसमानस्य भवेदुच्चाटनं ध्रुवम्। शनौ गत्वा नदीतीरं जपेदयुतसंख्यया ॥१६॥
होमो दशांशतः कार्यो घृतपायसकुङ्कुमैः। सारनालैर्जम्बुफलैः शान्तिकं जायते क्षणात् ॥१७॥
शुभर्क्षे शुभवारे वा गत्वोपवनमण्डलम्। जपेदयुतमीशानि हुनेदाज्येन पङ्कजैः ॥१८॥
सोत्पलं सकलं साम्लं महापुष्टिः प्रजायते। एतद्रहस्यं परमं तव भक्त्या मयोदितम् ॥१९॥
लक्ष्मीनारायणस्येदं सर्वस्वं परमार्थदम्। न दातव्यमभक्तेभ्यो दुष्टेभ्यो वीरवन्दिते ॥२०॥
महाचीनपदस्थेभ्यो भोगदं मोक्षदं शिवे। कलौ गोप्यं गुह्यतमं गुह्याद् गुह्यतमं प्रिये ॥२१॥
आनन्दकरणं गोप्यं गोपनीयं स्वयोनिवत्। इति।

इस मन्त्र के उन प्रयोगों को अब मैं कहता हूँ, जिनसे विशेष सिद्धि मिलती है। इस मन्त्र से स्तम्भन, मोहन, मारण, आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन, शान्ति तथा पुष्टि साधन के प्रयोगों को कहता हूँ। इनके साधन से मन्त्रसिद्धि होती है। रात में स्नान करके पीपल के पेड़ के नीचे जाकर दश हजार जप करे। दशांश हवन घी, शक्कर, गुड़मिश्रित फूलों से करे तो

प्रतिवादी हवा, सूर्य एवं बादल का स्तम्भन होता है। सोमवार को आधी रात के समय चौराहे पर बैठकर दिग्बन्ध करके आसन-शोधन करके विधिवत् प्राणायाम करके विष्णु के मूल मन्त्र का जप करे। दशांश हवन घी, नागर, पुन्नाग, करंज के फूलों से करे। दशांश तर्पण-मार्जन करे। उस भस्म से तिलक लगावे। उसे देखकर सहसा तीनों लोक मोहित होता है। मंगलवार को श्मशान में जाकर दश हजार जप करे। दशांश हवन गोघृत, गेहूँ, पायस, दूर्वापत्र मिलाकर करे तो मृत्यु की भी मृत्यु होती है। बुधवार को जंगल में दूर जाकर झरना के तट पर मूल मन्त्र का जप दश हजार करे। दशांश हवन गोघृत अड़हुल के टुकड़ों, दूर्वा, पद्माक्ष पत्र फूलों को मिलाकर करे। इससे रम्भा भी उसके सामने तुरन्त आ जाती है। गुरुवार को नदी किनारे जाकर दश हजार जप करे। दशांश हवन मधु, शटी, कपूर, करीर से करे। उसके भस्म को साधित करने पर तीनो लोक वश में हो जाता है। शुक्रवार को अशोक के पेड़ के नीचे बैठकर दश हजार मन्त्र जप करे। दशांश हवन सर्पि नागपुट शालि चूर्ण और उसकी भूसी को मिलाकर करे। तर्पण आसव आज्य ईखरस के मिश्रण से करे तो शम्भु के समान शत्रु का भी उच्चाटन हो जाता है। शनिवार को नदी किनारे जाकर दश हजार जप करे। दशांश हवन घी, पायस, कुङ्कुम, सारनाल और जामुन फलों से करे तो क्षण भर में शान्ति होती है। शुभ नक्षत्र शुभ वार में उपवन मण्डल में जाकर दश हजार जप करे। दशांश हवन आज्य, कमल, उत्पल में अम्ल मिलाकर करे तो महा पुष्टि होती है। इस परम रहस्य को तुम्हारी भक्ति के कारण मैंने प्रकाशित किया है। यह लक्ष्मी नारायण मन्त्र सर्वस्व होने के साथ-साथ परमार्थ-दायक है। अभक्तों को यह देय नहीं है, दुष्टों को भी इसे नहीं बतलाना चाहिये। महाचीनाचारी को यह भोग-मोक्ष दोनों देता है। कलियुग में यह अत्यन्त गोप्य तथा गुह्य है। परम आनन्ददायक यह मन्त्र अपनी योनि के समान गोपनीय है।

द्वादशार्णमन्त्रोद्धारः

सारसंग्रहे—

अथ वक्ष्ये द्वादशार्णमन्त्रं सर्वार्थसिद्धिदम्। सर्वापत्तारणं पुंसां भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्॥१॥
ध्रुवं नमः पदं ब्रूयात् ङेन्तं च भगवत्पदम्। वासुदेवपदं तद्वद् द्वादशार्णो मनुर्मतः॥२॥

ध्रुवः प्रणवः, नमः स्वरूपं, ङेन्तं भगवत्पदं भगवते, तद्वद्वासुदेवपदं वासुदेवाय। 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इति स्पष्टम्। तथा—

मुनिः प्रजापतिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम्। देवता स्याद्वासुदेव एकद्व्यब्धिशरार्णकैः॥३॥
अब्धयश्चत्वारः। शराः पञ्च।

द्वादशाक्षर मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार सर्वार्थ, सिद्धिदायक, समस्त अपत्तियों से उद्धार करने वाला एवं मनुष्यों को भोग-मोक्ष प्रदान करने वाला द्वादशक्षर मन्त्र है—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। इसके ऋषि प्रजापति, छन्द गायत्री एवं देवता वासुदेव हैं।

न्यासादिनिरूपणम्

तथा—

समस्तेन च पञ्चाङ्गं द्वादशाङ्गं ततो न्यसेत्। हृदादिनेत्रजठरपृष्ठबाहूरुजानुषु॥४॥
सपादेषु मनोरर्णैर्नमोऽन्तैः साधकोत्तमः।

अत्रास्त्रानन्तरं नेत्रन्यासः। पद्मपादाचार्यास्तु—पुरुषसत्याच्युतवासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धनारायणब्रह्मविष्णुनृसिंहवराहाणां द्वादशाङ्गयोगमाहुः। उक्तं च विष्णुयामले—'आदौ तु पुरुषः सत्याच्युतौ पश्चान्महेश्वरि। वासुदेवादयो नारायणो ब्रह्म ततः परम्। नृसिंहश्च वराहश्च द्वादशाङ्गेष्विमान् न्यसेत्।' इति। तथा—

मन्त्रसंपुटलिप्यर्णैर्यथास्थानं न्यसेत् ततः। त्रिशस्तारप्रपुटितमूलेन व्यापकं न्यसेत्॥५॥
मन्त्रार्णैस्त्रिविधं न्यासं न्यसेन्मन्त्री समाहितः। कभालदृग्वक्त्रकण्ठदोर्हृज्जठरनाभिषु॥६॥
लिङ्गजान्वङ्घ्रिषु प्रोक्तः सृष्टिन्यासश्च मन्त्रिभिः। हृदादिकान्तावधिकं स्थितिन्यासं प्रचक्षते॥७॥

पादादारभ्य शीर्षान्तं न्यासं संहारमूचिरे। एवं क्रमो यतीनां स्याद्विलोमेनोच्यते ह्यसौ ॥८॥
पूर्वाश्रमयुतानां च स्थित्यन्तो गृहमेधिनाम्। संहाराद्यो निगदितो मन्त्रशास्त्रविशारदैः ॥९॥
संहृतेर्दोषसंहारः सृष्टेश्च शुभसृष्टयः। स्थितेश्च शान्तिर्विन्यासः तस्मात् कार्यस्त्रिधा बुधैः ॥१०॥
व्यापकत्वेन मन्त्रार्णान् पुनर्न्यसेत् तनौ सुधीः। कभालदृग्वक्त्रकण्ठदोर्युग्महृदयेषु च ॥११॥
कुक्षौ लिङ्गे पादयुग्मे मूलेन व्यापकं न्यसेत्। तत्त्वन्यासं प्रविन्यस्य विन्यसेन्मूर्तिपञ्जरम् ॥१२॥

तत्त्वानि द्वादशानि तु—'जीवप्राणधियश्चित्तं हृत्पद्मं सूर्यमण्डलम्। चन्द्रमण्डलमग्नेश्च मण्डलं स्वकलान्वितम्। वासुदेवादयश्चेति तत्त्वाति द्वादशावदत्' इति हयशीर्षपञ्चरात्रोक्तानि। अत्र तत्त्वानां न्यासस्थानानि प्रागुक्ततत्त्वन्यासप्रकरणे यस्य तत्त्वस्य यत्स्थानमुक्तं तत्र तत्र तत्तत्त्वं न्यसेत्। एतेषां द्वादशतत्त्वानां तदन्तर्गतत्वादेवात्र पृथक्तया न्यासस्थानानि नोक्तानीति। सारसंग्रहे—

ततः समाहितो भूत्वा वासुदेवं हृदि स्मरत्। मध्ये दुग्धाम्बुधि द्वीपे दिव्ययोषानिषेविते ॥१॥
तत्र सञ्चिन्त्य विपिनमखिलर्तुनिषेवितम्। तन्मध्ये कल्पवृक्षं च दिव्यमद्भुतदर्शनम् ॥२॥
तस्याधस्ताद्रत्नमञ्चे कमलं विमलप्रभम्। शरत्पूर्णेन्दुविलसत्प्रभापटलराजितम् ॥३॥
तत्र संचिन्तयेद् देवं वासुदेवं स्मिताननम्। कुन्देन्द्वाभं गदाचक्रपद्मशंखलसत्करम् ॥४॥
चन्द्रायुतलसत्कान्त्या मोहयन्तं जगत्त्रयम्। केयूराङ्गदसंराजद्दोर्दण्डं रत्नभूषणम् ॥५॥
श्रीवत्साङ्कं लसद्रत्नमुकुटं कौस्तुभान्वितम्। अरबिन्ददलाताम्रसुरम्यायतलोचनम् ॥६॥
कुण्डलप्रोल्लसद्गण्डमण्डलं पीतवाससम्। ग्रैवेयहारसंशोभिकम्बुकण्ठं सुकङ्कणम् ॥७॥
विशालवक्षसं राजत्प्रफुल्लवनमालिकम्। सनकादिमुनीन्द्रैश्च तत्त्वनिर्णयकाङ्क्षया ॥८॥
निषेवितं दित्यदितिजातिगन्धर्वसञ्चयैः। सिद्धविद्याधरौघैश्च सेवितं च महोरगैः ॥९॥ इति।

वामोर्ध्वादि तदधःकरान्तमायुधध्यानम्। 'वासुदेवं तु कुर्वीत चतुर्बाहुं सुरेश्वरम्। दक्षिणोपरि चक्रं च पद्मं चाधः प्रकल्पयेत्। वामोपरि गदा कार्या शङ्खं चाधः सुशोभनम्।' इति हयशीर्षपञ्चरात्रवचनात्। तथा—

एवं ध्यात्वा वासुदेवं स्वाभेदेन जगत्प्रभुम्। पूर्वोदिते यजेत् पीठे देवागावाह्य मन्त्रवित् ॥१०॥
मूर्तिं मूलेन संकल्प्य गन्धाद्यैस्तत्र पूजयेत्। पूर्वमङ्गानि संपूज्य वासुदेवादिशक्तयः ।११॥
दिग्विदिक्षु च संपूज्यास्ततो द्वादश मूर्तयः। केशवाद्याः समभ्यर्च्या लोकेशाः स्वायुधैः सह ॥१२॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि प्रजापतये ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीवासुदेवाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, मूलेन करयोर्व्यापकं कृत्वा, ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखा०। वासुदेवाय कवचं०। नमो भगवते वासुदेवायास्त्रं। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं करयोर्विन्यस्य, नेत्रवर्ज्यं हृदाद्यस्त्रान्तं च विन्यस्य, हृदये ॐ पुरुषाय नमः। शिरसि नं सत्याय नमः। शिखायां मों अच्युताय०। कवचस्थाने भं वासुदेवाय०। अस्त्रस्थाने गं सङ्कर्षणाय०। नेत्रयोः वं प्रद्युम्नाय०। उदरे तें अनिरुद्धाय०। पृष्ठे वां नारायणाय०। बाह्वोः सुं ब्रह्मणे०। ऊरौ दें विष्णवे०। जानुनोः वां नृसिंहाय०। पादयोः यं वराहाय०। ततः शिरसि—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय, अं विलोममन्त्रं नमः। एवं १२ आं १२ नमः इत्यादि मूलमन्त्रपुटितान् मातृकान्यासस्थानेषु विन्यस्य, प्रणवपुटितेन मूलमन्त्रेण स्वदेहे त्रिर्व्यापकं कृत्वा, पादयोः ॐ नमः। जानुनोः नं नमः। लिङ्गे मों नमः। नाभौ भं०। उदरे गं०। हृदये वं। बाह्वोः तें०। कण्ठे वां०। मुखे सुं। दृशोः दें०। भाले वां०। शिरसि यं नमः। इति संहारेण विन्यस्य, शिरसि ॐ नमः। भाले नं नमः। दृशोः मों नमः। मुखे भं नमः। कण्ठे गं नमः। बाह्वोः वं नमः। हृदये तें नमः। उदरे वां नमः। नाभौ सुं नमः। लिङ्गे दें नमः। जानुनोः वां नमः। पादयोः यं नमः। इति सृष्टिन्यासः। ततो हृदि ॐ नमः। उदरे नं नमः। नाभौ मों नमः। लिङ्गे भं नमः। जानुनोः गं नमः। पादयोः वं नमः। बाह्वोः तें नमः।

कण्ठे वां नमः। मुखे सुं नमः। दृशोः दें नमः। भाले वां नमः। शिरसि यं नमः। इति स्थितिन्यासः। एवं गृहस्थैः कर्तव्यम्। यतिभिस्तु सृष्टिस्थितिसंहारक्रमेण कार्यः। वर्णिभिस्तु स्थितिसंहारसृष्टिक्रमेण न्यस्तव्य इति। 'एते वर्णाः प्रणवपुटिता न्यस्तव्याः' इति केचित्। ततः पुनर्मन्त्रवर्णान् मूर्धभालनेत्रवक्त्रकण्ठ-बाहुद्वयहृदयजठरलिङ्गपादद्वयेषु द्वादशस्थानेषु प्राग्वद्विन्यस्य पुनर्मूलमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा, सर्वाङ्गे ॐ नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः। नं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः। हृदये मों नमः पराय बुद्धितत्त्वात्मने नमः। भं नमः मनस्तत्त्वा०। गं नमः हृत्पद्मतत्त्वात्म०। वं नमो द्वादशकलाढ्यसूर्यमण्डल०। तें नमः षोडशकलान्वितचन्द्रमण्डलत०। वां नमो दशकलान्वितवह्निमण्डलत०। शिरसि सुं नमो वासुदेवत०। मुखे दें नमः संकर्षणत०। हृदि वां नमः प्रद्युम्नत०। गुह्ये यं नमः परायानिरुद्धत०। इति द्वादशतत्त्वानि विन्यस्य, प्राग्वन्मूर्तिपञ्जरन्यासं विधाय, ध्यानादिपुष्पोपचारान्तेऽङ्गानि संपूज्याष्टदलेषु प्राग्वद्वासुदेवादिमूर्तिशक्तीः संपूज्य, तद्बहिर्द्वादशदलेषु—ॐ केशवाय नमः। नारायणाय०। माधवाय०। गोविन्दाय०। विष्णवे०। मधुसूदनाय०। त्रिविक्रमाय०। वामनाय०। श्रीधराय०। हृषीकेशाय०। पद्मनाभाय०। दामोदराय०। इति देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन संपूज्येन्द्राद्यर्चादि प्राग्वत्सर्वं समापयेदिति। तथा—

एवं संपूज्य विधिवद्वर्णलक्षं मनुं जपेत्। तत्सहस्रं च कमलैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः ॥१३॥

वर्णलक्षं द्वादशलक्षम्।

तिलैः शुद्धैरथेच्छन्ति केचिदाज्यपरिप्लुतैः। तर्पणादि ततः कुर्याद्यथोक्तविधिना सुधीः ॥१४॥

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री वाञ्छितार्थान् प्रसाधयेत्। स्तनजद्रुमसंभूतसमिद्भिर्पापमुक्तये ॥१५॥

स्तनजद्रुमः क्षीरवृक्षः।

पयोक्ताभिः प्रजुहुयात् साधकोऽर्कसहस्रकम्। साज्येन हविषा चैव जुहुयाच्चित्तशुद्धये ॥१६॥

पायसेन तिलैः शुद्धैः समिदाज्यैर्हुनेत्तु यः। शालीभिश्चान्वहं मन्त्री सोऽभीष्टफलभाग्भवेत् ॥१७॥

अपुत्रो लभते मुक्तिं नियतात्मा न संशयः। द्वादशाक्षरमन्त्रस्य विधानं परिकीर्तितम् ॥१८॥

अशेषतः साधकानां भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्। इति।

प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद तीन प्राणायाम मूल मन्त्र से करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि प्रजापति ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीवासुदेवाय देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके मूल मन्त्र से हाथों में व्यापक करे। तब न्यास करे—ॐ हृदयाय नमः, नमः शिरसे स्वाहा, भगवते शिखायै वषट्, वासुदेवाय कवचाय हुं, नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्। इस पञ्चाङ्ग न्यास के बाद इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों से अंगूठे से कनिष्ठा तक करन्यास करे। फिर नेत्र छोड़कर हृदय से अस्त्र तक न्यास करे। पञ्चाङ्ग न्यास के बाद द्वादशाङ्ग न्यास इस प्रकार करे—हृदय में ॐ पुरुषाय नमः, शिर पर नं सत्याय नमः, शिखा में मों अच्युताय नमः, कवचस्थान में भं वासुदेवाय नमः, अस्त्र स्थान में गं संकर्षणाय नमः, नेत्रों में वं प्रद्युम्नाय नमः, उदर में तें अनिरुद्धाय नमः, पीठ में वां नारायणाय नमः, बाहुओं में सुं ब्रह्मणे नमः, ऊरुओं में दें विष्णवे नमः, जानुओं में वां नृसिंहाय नमः, पैरों में यं वराहाय नमः, तब शिर पर ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः। इस प्रकार १२ आं १२ नमः इत्यादि मूल मन्त्रपुटित वर्णों को मातृका न्यासस्थानों में विन्यस्त करे। 'ॐ' से पुटित मूल मन्त्र से अपने देह में तीन बार व्यापक करे। तदनन्तर पैरों में ॐ नमः, जानुओं में नं नमः, लिङ्ग में मों नमः, नाभि में मं नमः, उदर में गं नमः, हृदय में वं नमः, बाहुओं में तें नमः, कण्ठ में वां नमः, मुख में सुं नमः, आँखों में दें नमः, ललाट में वां नमः, शिर में यं नमः से संहार न्यास करे। तदनन्तर शिर में ॐ नमः। ललाट में नं नमः, आँखों में मों नमः, मुख में भं नमः, कण्ठ में गं नमः, बाहुओं में वं नमः, हृदय में तें नमः, उदर में वां नमः, नाभि में सुं नमः, लिङ्ग में दें नमः, जानुओं में वां नमः, पैरों में यं नमः से सृष्टिन्यास करे। तदनन्तर हृदय में ॐ नमः, उदर में नं नमः, नाभि में मों नमः, लिङ्ग में भं नमः, जानुओं में गं नमः, पैरों में वं नमः, बाहुओं में तें नमः, कण्ठ में वां नमः, मुख में सुं नमः, नेत्रों में दें नमः, ललाट में वां नमः, शिर पर यं नमः से स्थितिन्यास करे।

इस प्रकार का न्यास गृहस्थों को करना चाहिये। यतियों को सृष्टि-स्थिति-संहार क्रम से न्यास करना चाहिये एवं वानप्रस्थों को स्थिति-संहार-सृष्टि क्रम से न्यास करना चाहिये। कुछ के मत से इन वर्णों को प्रणव से पुटित करके न्यास करना चाहिये। तदनन्तर फिर से मन्त्रवर्णों का न्यास मूर्धा भाल नेत्र मुख कण्ठ दोनों बाहु हृदय उदर लिङ्ग दोनों पैरों के द्वादश स्थानों में पूर्ववत् करके मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करने के पश्चात् सर्वांग में ॐ नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः। नं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः। हृदय में मों नमः पराय बुद्धितत्त्वात्मने नमः। भं नमः मनस्तत्त्वात्मने नमः। गं नम हृत्पद्मतत्त्वात्मने नमः वं नमो द्वादशकलाढ्यसूर्य मण्डलतत्त्वात्मने नमः, तें नमः षोडशकलान्वितचन्द्रमण्डलतत्त्वात्मने नमः। वां नमः दशकलान्वितअग्निमण्डलतत्त्वात्मने नमः। शिर पर सुं नमो वासुदेवतत्त्वात्मने नमः। मुख में दें नमः संकर्षणतत्त्वात्मने नमः। हृदय में वां नमः प्रद्युम्नतत्त्वात्मने नमः। गुह्य में यं नमः परायानिरुद्धतत्त्वात्मने नमः। इस प्रकार द्वादश तत्त्वों के न्यास के बाद पूर्ववत् मूर्तिपञ्जर न्यास करके समाहित चित्त होकर हृदय में इस प्रकार वासुदेव का ध्यान करे—

कुन्देन्द्वाभं गदाचक्रपद्मशंखलसत्करम्। चन्द्रायुतलसत्कान्त्या मोहयन्तं जगत्त्रयम्।।
केयूराङ्गदसंराजद्दोर्दण्डं रत्नभूषणम्। श्रीवत्साङ्कं लसद्रत्नमुकुटं कौस्तुभान्वितम्।।
अरबिन्ददलाताम्रसुरम्यायतलोचनम्। कुण्डलप्रोल्लसद्गण्डमण्डलं पीतवाससम्।।
ग्रैवेयहारसंशोभिकम्बुकण्ठं सुकङ्कणम्। विशालवक्षसं राजत्प्रफुल्लवनमालिकम्।।
सनकादिमुनीन्द्रैश्च तत्त्वनिर्णयकाङ्क्षया। निषेवितं दित्यदितिजातिगन्धर्वसञ्चयैः।।
सिद्धविद्याधरौघैश्च सेवितं च महोरगैः।

ध्यानादि से पुष्पोपचार तक अंगों की पूजा करके अष्टदल में पूर्ववत् वासुदेवादि मूर्तिशक्ति की पूजा करे। उसके बाहर द्वादशदल में ॐ केशवाय नमः, नारायणाय नमः, माधवाय नमः, गोविन्दाय नमः, विष्णवे नमः, मधुसूदनाय नमः, त्रिविक्रमाय नमः, वामनाय नमः, श्रीधराय नमः, हृषीकेशाय नमः, पद्मनाभाय नमः एवं दामोदराय नमः से इनकी पूजा देवता के आगे से प्रदक्षिण क्रम से करे। तब इन्द्रादि लोकपालों की पूजा के बाद पूर्ववत् पूजा का समापन करें।

इस प्रकार पूजा करके वर्णलक्ष नियम के अनुसार विधिवत् बारह लाख जप करे, उसका दशांश बारह हजार हवन मधुरप्लुत कमल से करे। कुछ के मत से आज्य-परिप्लुत तिल से हवन करे। तब यथोक्त विधि से तर्पणादि करे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से वांछितार्थ का साधन करे। पाप-मुक्ति के लिये क्षीर वृक्ष की समिधा से हवन करे। दूध एवं गोघृत मिश्रित खीर से चित्त शुद्धि के लिये बारह हजार हवन करे। पायस, तिल, गोघृत एवं शालि से प्रतिदिन हवन करने पर साधक को अभीष्ट फल प्राप्त होता है इससे अपुत्रों को भी मुक्ति मिलती है। इस प्रकार द्वादशाक्षर मन्त्र का विधान कहा गया। यह साधकों को भोग-मोक्ष दोनों देने वाला है।

चतुर्दशाक्षरमन्त्रोद्धारस्तत्प्रयोगश्च

तथा सारसंग्रहे—

मायाद्वयं रमाद्वन्द्वं लक्ष्मीपदमथोच्चरेत्। वासुदेवं चतुर्थ्यन्तं नमोन्तश्च ध्रुवादिकः।।१।।
मनुसंख्याक्षरः प्रोक्तो मनुः सर्वसमृद्धिदः।

मायाद्वयं भुवनेशीद्वयं ह्रींह्रीं, रमाद्वयं श्रींश्रीं, लक्ष्मी स्वरूपं, वासुदेवं चतुर्थ्यन्तं वासुदेवाय, ध्रुवादिकः प्रणवाद्यः। मनुसंख्याक्षरश्चतुर्दशाक्षरः। ॐ ह्रींह्रींश्रींश्रींलक्ष्मीवासुदेवाय नमः। तथा—

ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्री देवता मता। मनोर्लक्ष्मीवासुदेवो देवदानववन्दितः।।२।।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां ततो द्वाभ्यां पञ्चभिर्द्वितयेन वा। पञ्चाङ्गानि मनोर्वर्णैः प्रणवाद्यैः प्रकल्पयेत्।।३।।
पुरोदिते यजेत् पीठे द्वादशाक्षरवर्त्मना।

उद्यत्सौदामिनीरुक् शशधररुचिरं भूषणैर्भूषिताङ्गं
एकीभूतं वपुः श्रीकमलनयनयोः सम्यगाश्लेषलोभात्।

लक्ष्मीं दिश्यात् सदा नो लिखितसरसिजे दर्पणं रत्नकुम्भं
संविभ्रद् हस्तपद्मैः सरसिरुहगदाशङ्खचक्राह्वयानि ॥४॥

वामभागस्थैः करैरूर्ध्वादिभिर्लिखिलादीनि दक्षिणस्थैः सरसीरुहादीनि च। अथ प्रयोगः—तत्र प्रातः-कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि प्रजापतये ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीलक्ष्मीवासुदेवाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ॐ ह्रींह्रीं हृदयाय नमः। ॐ श्रींश्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ लक्ष्मी शिखायै वषट्। ॐवासुदेवाय कवचाय हुं। ॐ नमः अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान्मूलाभिमृष्टयोः पाण्योरङ्गुलीषु विन्यस्य, नेत्ररहितेषु हृदादिषु च विन्यस्य, यथोक्तरूपं ध्यात्वा मानसपूजादिसर्वं द्वादशाक्षरवत् कुर्यादिति।

चतुर्दशाक्षर मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार चौदह अक्षरों का लक्ष्मी-वासुदेव मन्त्र इस प्रकार है—ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मीवासुदेवाय नमः।

प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तब इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर प्रजापतये ऋषये नमः, मुख में गायत्री छन्दसे नमः, हृदय में श्रीलक्ष्मीवासुदेवाय देवतायै नमः। इस प्रकार ऋषिन्यास करके अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करे। तदनन्तर ॐ ह्रीं ह्रीं हृदयाय नमः, ॐ श्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ लक्ष्मी शिखायै वषट्, ॐ वासुदेवाय कवचाय हुं, ॐ नमः अस्त्राय फट्—इस पञ्चाङ्ग न्यास मन्त्रों से कर न्यास करके नेत्ररहित हृदय आदि में भी न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यत्सौदामिनीरुक् शशधररुचिरं भूषणैर्भूषिताङ्गं एकीभूतं वपुः श्रीकमलनयनयोः सम्यगाश्लेषलोभात्।
लक्ष्मीं दिश्यात् सदा नो लिखितसरसिजे दर्पणं रत्नकुम्भं संविभ्रद् हस्तपद्मैः सरसिरुहगदाशङ्खचक्राह्वयानि॥

ध्यान के बाद मानस पूजादि सभी क्रियायें द्वादशाक्षर मन्त्र के समान करे।

हरिहरमन्त्रोद्धारस्तत्प्रयोगश्च

तथा सारसंग्रहे—

वेदादिमायया युक्तं हौंबीजं शङ्करं वदेत्। ङेन्तं नारायणं प्रोक्त्वा हृदन्तं हौं वदेत् ततः ॥१॥
हृल्लेखाप्रणवान्तश्च मन्त्रो हरिहरात्मकः। सर्वसंपत्प्रदो नित्यं षोडशाक्षर ईरितः ॥२॥

वेदादिः प्रणवः। माया भुवनेश्वरीबीजं। हौं स्वरूपं। शङ्कर स्वरूपं। ङेन्तं नारायणं नारायणाय, हृत् नमः। हृल्लेखा ह्रीं। 'ॐह्रींह्रौंशङ्करनारायणाय नमः हौंह्रींॐ'।

तथा—

ऋषिः नारायणः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। देवता स्याद्धरिहरः सर्वाभीष्टप्रदायकः ॥३॥
षड्दीर्घयुग्मायया च षडङ्गानि प्रकल्पयेत्। शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करैः ॥४॥
स्वस्वरूपाद्यनीलार्धदेहं हरिहरं भजे ।

दक्षोर्ध्वादि तदधोन्तमायुधध्यानम्।

देवं प्रपूजयेत् पीठे पूर्वोक्ते नवशक्तिके। पूर्वमङ्गानि संपूज्य शक्तीरेताः प्रपूजयेत् ॥५॥
लक्ष्मीर्नारायणी भूश्च धरा स्यादम्बिका तथा। त्रैयम्बका तथा गौरी गङ्गा धर्माष्टमी तथा ॥६॥
लोकेशास्तद्बहिः पूज्या वज्रादीन्यायुधान्यपि। एवं सम्यक्प्रकारेण पूजितेऽभीष्टमाप्नुयात् ॥७॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि नारायणाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीहरिहराय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः। इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

हः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिष्वपि विन्यस्य, ध्यानाद्यङ्ग-पूजान्तेऽष्टदलेषु— लक्ष्म्यै नमः। नारायण्यै०। भूम्यै०। धरायै०। अम्बिकायै०। त्रैयम्बकायै०। गौर्य्यै०। गङ्गायै०। धर्मायै०। इति देवाग्रादिषु प्रादक्षिण्येन संपूज्येन्द्राद्यर्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति।

षोडशाक्षर हरिहर मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार षोडशाक्षर हरिहर मन्त्र है—ॐ ह्रीं ह्रौं शंकरनारायणाय नमः ह्रौं ह्रीं ॐ। यह मन्त्र समस्त सम्पत्तियों को देने वाला है। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक की क्रिया के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर नारायणाय ऋषये नमः, मुख में अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदय में श्री हरिहराय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ह्रां हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, हः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास एवं हृदयादि न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—

शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करैः। स्वस्वरूपाद्यनीलार्धदेहं हरिहरं भजे।।

इस प्रकार ध्यान करके अंगपूजा के अन्त में अष्टदल में—लक्ष्म्यै नमः, नारायण्यै नमः, भूम्यै नमः, धरायै नमः, अम्बिकायै नमः, त्रैयम्बकायै नमः, गौर्यै नमः, गङ्गायै नमः, धर्मायै नमः द्वारा देवता के आगे से प्रदक्षिण क्रम से पूजा के बाद इन्द्रादि की पूजा करके पूर्ववत् पूजा का समापन करे।

दधिवामनमन्त्रोद्धारस्तदर्चाप्रयोगपद्धतिश्च

सारसंग्रहे—

अथोच्यते मन्त्रवरो दधिवामनसंज्ञकः। येन प्रजप्तमात्रेण सिद्ध्यन्ते च मनोरथाः ।।१।।
ॐ नमो विष्णवे ब्रूयात् सुरान्ते पतये महा। बलायाग्निवधूर्मन्त्रोऽष्टादशाक्षर ईरितः ।।२।।

'ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा'।

तथा—

मुनिरिन्दुः समाख्यातो विराट् छन्द उदाहृतम्। दधिवामनसंज्ञोऽस्य विष्णुर्देवः समीरितः ।।३।।
हृदयं प्रणवेन स्यान्नमोमन्त्रेण वै शिरः। विष्णवे च शिखा वर्म सुराद्यं पतये स्मृतम् ।।४।।
महाबलाय नेत्रं स्यात् स्वाहास्त्रमङ्गकल्पना। भ्रूमध्यकण्ठहृदयनाभ्यन्ध्वाधारकेषु च ।।५।।
षट्पदानि मनोर्न्यस्य वर्णान् न्यस्येत्ततः सुधीः। मूर्ध्नि दृक्श्रवणद्वन्द्वे नासायां मुखमध्यतः ।।६।।
कण्ठे हृद्बाहुयुग्मे च नाभौ पृष्ठे च गुह्यके। जान्वोश्च पादयोस्तद्वत् स्थानेष्वेषु यथाक्रमम् ।।७।। इति।

शारदातिलके (१५.५८) **तु—'मूर्ध्नि भाले दृशोर्युग्मे कर्णनासोष्ठतालुषु। कण्ठबाहुद्वये पश्चाद्, हृदयोदरनाभिषु। गुह्योरुजानुयुग्मेषु जङ्घयोः पादयोर्न्यसेत्। पश्चात्पृष्ठे' इत्युक्तम्। अत्र यथोपदेशं न्यासः कार्यः।**

ध्यानम्—

राकेन्द्वाभः सिताब्जे स्रवदमृतमणिच्छत्रतोऽधोनिविष्टः
श्रीभूम्याश्लिष्टपार्श्वः स्फटिकमणिनिभोऽशेषभूषाविशेषः।
वामे दध्यन्नपूर्णं कनकजचषकं स्वर्णपीयूषकुम्भं
विभ्रच्छ्रीवामनाख्यः सततमवतु वो विष्णुरिष्टार्थदायी ।।८।।

वामेऽन्नपात्रमित्युक्तेर्दक्षिणे पूर्णकुम्भं ज्ञेयम्।

पूजा तु वैष्णवे पीठे कर्तव्या साधकोत्तमैः। आदावङ्गानि संपूज्य पश्चाच्छक्तीः प्रपूजयेत् ।।९।।
शुभ्रवर्णाः सुभूषाश्च वराभयकराः शुभाः। पूषा च सुमना प्रीतिस्तुष्टिः पुष्टिस्तथैव च ।।१०।।
ऋद्धिर्धृतिश्च सौम्या च मरीचिन्यंशुमालिनी। शशिनी दुर्गमा चैव लक्ष्मीश्छाया तथैव च ।।११।।

संपूर्णमण्डला चैवममृता षोडशी कला। सशक्तीन् वासुदेवाद्यांस्तृतीयावरणेऽर्चयेत् ॥१२॥
केशवाद्यैश्चतुर्थं स्यात् पञ्चमं कुमुदादिभिः। शुभ्रवर्णैः शङ्खचक्रगदापङ्कजपाणिभिः ॥१३॥
कुमुदः कुमुदाक्षश्च पुण्डरीकोऽथ वामनः। शङ्कुकर्णः सर्वनेत्रः सुमुखः सुप्रतिष्ठितः ॥१४॥
यजेत् षष्ठे लोकपालान् सप्तमे दिग्गजानपि।

अपिशब्देन वज्रादिपूजानन्तरं दिग्गजपूजेत्युक्तम्। 'वज्रादीन् दिग्गजानष्टौ सप्तावरणमीरितम्' इति शारदा-तिलकवचनात्। 'प्रागुक्ते वैष्णवे पीठे चन्द्रमण्डलपश्चिमे। चन्द्रान्तकल्पिते पीठे प्रागुक्ते तं समर्चयेत् (१५.६२)' इति शारदातिलकात् सूर्यवह्निमण्डले समभ्यर्च्य पश्चात् सोममण्डलमर्चयेदित्यर्थः। चद्रासनत्वविधानादेतदन्तैरेवासनार्चेति केचित्। 'धर्मज्ञानमये पीठे पूजयेच्चन्द्रमण्डले। विष्णवे सहसोमाय त्रैलोक्याप्यायनाय च। स्वाहान्ततारहृत्पूर्वमन्त्रेणैवार्चयेच्च तत्' इति मन्त्रतन्त्रप्रकाशवचनात् तदिति चन्द्रमण्डलम्। एतेन पीठमन्त्रान्तं योगपीठं संपूज्य तदेव चन्द्रमण्डलत्वेन ध्यात्वोक्तमन्त्रेणाभ्यर्च्य तत्र देवं पूजयेदिति। पीठ इति प्रागुक्ते योगपीठे। तत्तु मण्डूकादि पीठपर्यन्तमभ्यर्च्य तस्यैव अन्यथा नवशक्त्यर्चनाभावेऽपि पीठत्वानुपपत्तेः।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि इन्दवे ऋषये नमः। मुखे विराजे छन्दसे नमः। हृदये श्रीदधिवामनाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। विष्णवे शिखायै०। सुरपतये कवचाय०। महाबलाय नेत्रत्रयाय०। स्वाहा अस्त्राय०। भ्रूमध्ये ॐनमः। कण्ठे नमो नमः। हृदये विष्णवे नमः। नाभौ सुरपतये नमः। लिङ्गे महाबलाय नमः। मूलाधारे स्वाहा नमः। मूर्ध्नि ॐ नमः। दक्षनेत्रे नं०। वामे मों०। दक्षश्रोत्रे विं०। वामे ष्णां०। नासायां वें०। मुखे सुं०। कण्ठे रं०। हृदि पं०। दक्षबाहौ तं०। वामे यें०। नाभौ मं०। पृष्ठे हां०। गुह्ये बं०। दक्षजानुनि लां०। वामे यं०। दक्षपादे स्वां०। नाभौ हां०। इति विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते योगपीठं संपूज्य 'ॐ नमो विष्णवे सहसोमाय त्रैलोक्याप्यायनाय स्वाहा चन्द्रमण्डलाय नमः' इति योगपीठमध्ये चन्द्रमण्डलमभ्यर्च्य। आवहनाद्यङ्गार्चान्ते षोडशदलेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन— पूषायै नमः। सुमनायै०। प्रीत्यै०। तुष्ट्यै०। पुष्ट्यै०। ऋद्ध्यै०। धृत्यै०। सौम्यायै०। मरीचिन्यै०। अंशुमालिन्यै०। शशिन्यै०। दुर्भगायै०। लक्ष्म्यै०। छायायै०। संपूर्णमण्डलायै०। अमृतायै०। इति संपूज्य, अष्टदलेषु दिग्विदिक्षु प्राग्वद्वासुदेवादिमूर्तीः शान्त्यादिशक्तीश्च संपूज्य, तद्बहिर्द्वादशदलेषु प्रागुक्तकेशवादिद्वादशामूर्तीः संपूज्य, अष्टदलेषु— कुमुदाय नमः। कुमुदाक्षाय०। पुण्डरीकाय०। वामनाय०। शंकुकर्णाय०। सर्वनेत्राय०। सुमुखाय०। सुप्रतिष्ठिताय०। इति संपूज्य प्रथमचतुरस्रे इन्द्रादीन्, द्वितीये वज्रादीन्, तृतीये लक्ष्मीप्रकरणोक्तानष्टौ दिग्गजांश्च संपूज्य धूपदीपादि सर्वं प्राग्वत् समापयेत्। तथा—

दीक्षां प्राप्य शूचिर्भूत्वा जपेद् द्वादशलक्षकम्। तदर्धं वा तदर्धं वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥१५॥
तदन्ते जुहुयाद्विद्वान् पायसेन दशांशकम्। तर्पणादि ततः कुर्यान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये ॥१६॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री वाञ्छितार्थान् प्रसाधयेत्।
श्रीमन्दिरे मण्डलमध्यभागे मायावटुं वामनमर्चयित्वा।
दध्योदनं निर्मलशर्कराढ्यं निवेदयेत् तस्य सदा विभूत्यै ॥१७॥

दधिवामन मन्त्र—अब मैं दधिवामन नामक मन्त्रवर को कहता हूँ, जिसके जपमात्र से मनोरथ सिद्ध होते हैं। मन्त्र है—ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा। इसमें अट्ठारह अक्षर हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक की क्रिया करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिर पर इन्दवे ऋषये नमः, मुख में विराजे छन्दसे नमः, हृदय में श्री दधिवामनाय देवतायै नमः। तदनन्तर समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार अंग न्यास करे—ॐ हृदयाय नमः, नमः शिरसे स्वाहा, विष्णवे शिखायै वषट्, सुरपतये कवचाय हुम्, महाबलाय नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्, भ्रूमध्य में ॐ नमः, कण्ठ में नमो नमः, हृदय में विष्णवे नमः, नाभि में सुरपतये नमः, लिङ्ग में महाबलाय नमः, मूलाधार में स्वाहा नमः।

मन्त्रवर्ण न्यास—मूर्धा में ॐ नमः, दक्ष नेत्र में नं नमः, वाम नेत्र में मों नमः, दक्ष कर्ण में विं नमः, वाम कर्ण में ष्णं नमः, नासिका में वें नमः, मुख में सुं नमः, कण्ठ में रं नमः, हृदय में पं नमः, दक्ष बाहु में तं नमः, वाम बाहु में यें नमः, नाभि मे मं नमः, पृष्ठ में हां नमः, गुह्य में बं नमः, दक्ष जानु में लां नमः, वाम जानु में यं नमः। दाहिने पैर में स्वां नमः, बाँयें पैर में हां नमः। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

राकेन्द्वाभः सिताब्जे स्रवदमृतमणिच्छत्रतोऽधोनिविष्टः श्रीभूम्याश्लिष्टपार्श्वः स्फटिकमणिनिभोऽशेषभूषाविशेषः।
वामे दध्यन्नपूर्णं कनकजचषकं स्वर्णपीयूषकुम्भं विभ्रच्छ्रीवामनाख्यः सततमवतु वो विष्णुरिष्टार्थदायी।।

इस प्रकार ध्यान के बाद आत्मपूजा, योगपीठ पूजा करके ॐ नमो विष्णवे सह सोमाय त्रैलोक्याप्यायनाय चन्द्र-मण्डलाय नमः मन्त्र से योगपीठ के मध्य में चन्द्रमण्डल की पूजा करे। आवाहनादि के बाद अंगपूजा करके षोडश दल में देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से इनकी पूजा करे—पूषायै नमः, सुमनायै नमः, प्रीत्यै नमः, तुष्ट्यै नमः, पुष्ट्यै नमः, ऋद्ध्यै नमः, धृत्यै नमः, सौम्यायै नमः, मरीचिन्यै नमः, अंशुमालिन्यै नमः, शशिन्यै नमः, दुर्भगायै नमः, लक्ष्म्यै नमः, छायायै नमः, सम्पूर्णमण्डलायै नमः, अमृतायै नमः। इस प्रकार पूजन करके अष्टदल में दिशा एवं विदिशाओं में पूर्ववत् वासुदेवादि अष्टमूर्ति-शान्त्यादि एवं अष्ट शक्तियों की पूजा करके उसके बाहर द्वादश दल में पूर्वोक्त केशवादि बारह मूर्ति की पूजा करे। अष्टदल में कुमुदाय नमः, कुमुदाक्षाय नमः, पुण्डरीकाय नमः, वामनाय नमः, शंकुकर्णाय नमः, सर्वनेत्राय नमः, सुमुखाय नमः, सुप्रति-ष्ठिताय नमः से पूजन करके भूपुर की प्रथम रेखा में इन्द्रादि, दूसरी रेखा में वज्रादि, तीसरी रेखा में लक्ष्मी प्रकरणोक्त आठ दिग्गजों की पूजा करने के पश्चात् धूप-दीपादि सब कुछ पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

दीक्षा प्राप्त करके पवित्र होकर बारह लाख मन्त्र जप करे अथवा छः लाख या तीन लाख जप एकाग्र मन से करे। तदनन्तर मन्त्र की सिद्धि के लिये तर्पण करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से साधक वांछितार्थ की साधना करे। श्री मन्दिर में मण्डल के मध्य भाग में मायावटु वामन का अर्चन करे। दही भात शक्कर का नैवेद्य सदा अर्पित करे तो विभूति प्राप्त होती है।

होमद्रव्यविधानम्

अन्नकामो हुनेन्नित्यमष्टाविंशतिसंख्यया। सितान्नं घृतमिश्रं तु प्राप्नुयादन्नमक्षयम्।।१८।।
अपूपं षड्रसोपेतं हुनेदष्टसहस्रकम्। अलक्ष्मीर्नाशमायाति महतीं श्रियमाप्नुयात्।।१९।।
अयुतं मन्त्रविद् हुत्वा दध्यन्नं शर्करान्वितम्। अन्नपर्वतमाप्नोति यत्र यत्र स गच्छति।।२०।।
हुनेद् बिल्वसमीपस्थः पद्माक्षैरयुतं नरः। वसुधारामहालक्ष्मीर्वसु वर्षति तत्र च।।२१।।
विद्यार्थी प्रजपेल्लक्षं ध्यायेद्देवं जनार्दनम्। जुहुयात् पायसं मन्त्री साक्षाद्वागीश्वरो भवेत्।।२२।।
पुत्रकामो जपेल्लक्षं पुत्रजीवफलैर्हुनेत्। तत्काष्ठदीपिते वह्नावुत्तमं पुत्रमाप्नुयात्।।२३।।
ध्यात्वा त्रिविक्रमं देवं रक्ताभं करवीरकैः। हुनेदयुतसंख्यैश्च सर्वत्र विजयी भवेत्।।२४।।
राज्यकामोऽपि पद्मानामयुतं जुहुयान्नरः। ध्यात्वा चन्द्रपदं राज्यं लभेताशु ह्यकण्टकम्।।२५।।
अपामार्गदलैर्हुत्वा लवङ्गैर्वा मधुप्लुतैः। अयुतं साध्यनामाढ्यं स वश्यो भवति ध्रुवम्।।२६।।
आरोग्यकामो जुहुयादपामार्गैः शतं शतम्। सप्ताहान्मुच्यते रोगी तावदेव जपेत् सुधीः।।२७।।
आयुष्कामस्त्रिमध्वक्तैस्तिलदूर्वाङ्कुराक्षतैः। अयुतं जुहुयात् तावज्जपेदायुर्लभेच्चिरम्।।२८।।
स्मृत्वा त्रिविक्रमं रूपं जपेदष्टसहस्रकम्। मुक्तबन्धो भवेत् सद्यो नात्र कार्या विचारणा।।२९।।

अष्टसहस्रमष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः। एवं सर्वत्र ज्ञेयम्।

अन्न की कामना से नित्य अट्ठाईस बार मिश्री अन्न घी के मिश्रण से हवन करे; इससे अक्षय अन्न प्राप्त होता हे। षड्रसयुक्त पूओं से आठ हजार हवन करने पर दरिद्रता का नाश होता है और श्रीसम्पदा प्राप्त होती है। साधक दही, गुड़, अन्न से हवन करे तो जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ वहाँ उसे अन्न का पहाड़ प्राप्त होता है। बेलवृक्ष के समीप बैठकर यदि साधक कमलगट्टे से दश हजार हवन करे तो महालक्ष्मी धन की वर्षा करती है। विद्यार्थी एक लाख जप करे एवं जनार्दन का ध्यान करे और पायस से हवन करे तो वह साक्षात् वागीश्वर हो जाता है, पुत्रार्थी एक लाख जप करे। पुत्रजीव फल से उसी के लकड़ी

की अग्नि में दश हजार हवन करे तो उसे पुत्र प्राप्त होता है। त्रिविक्रम का ध्यान करके लाल कनैल फूल से दश हजार हवन करे तो सर्वत्र विजयी होता है। राज्यप्राप्ति की कामना से दश हजार हवन कमल से करे। तदनन्तर चन्द्र पद का ध्यान करे तो तुरन्त उसे अकण्टक राज्य प्राप्त होता है। अड़हुल दल से या मधुप्लुत लवङ्ग से दश हजार हवन साध्य नामयुक्त मन्त्र से करे तो साध्य वश में होता है। आरोग्य-कामी प्रतिदिन एक-एक सौ हवन अपामार्ग से एवं उतना ही जप सात दिनों तक करे तो रोग से मुक्त होता है। आयु की कामना से दश हजार जप करे और दश हजार हवन त्रिमधुरयुक्त तिल दुर्वांकुर चावल से करे तो दीर्घायु प्राप्त होती है। त्रिविक्रम के रूप का ध्यान करके आठ हजार जप करे तो तुरन्त बन्दी जेल से रिहा हो जाता है।

यन्त्ररचनाप्रकार:

पद्मे सप्तदशारे तु कर्णिकायां ध्रुवं लिखेत्। स्वरैः संवेष्टितं तत्र केसरेषु च कादिकान्॥३०॥
क्षान्तान् द्विशो लवर्ज्यांश्च मन्त्रवर्णान् दले लिखेत्। शिष्टान् बाह्ये च संवेष्ट्य प्रणवाभ्यां ततो बहिः॥३१॥
श्रीबीजाभ्यां वेष्टयेच्च यन्त्रं श्रीपुत्रमित्रदम्। इति।

अस्यार्थ:—सप्तदशदलं पद्मं विरच्य तन्मध्ये स्वरषोडशकवेष्टितं प्रणवं ससाध्यं विलिख्य, तत्केसरेषु कादिक्षान्तान् द्वितीयलकारवर्जितान् वर्णान् विलिख्य, दलेषु मन्त्रवर्णानवशिष्टान् सप्तदश प्रतिदलमेकैकशो विलिख्य, संपुटाकारेण प्रणवद्वयेन मध्ये यन्त्रं यथा भवति तथा संवेष्ट्य तद्बहिरपि तथैव श्रीबीजद्वयेन वेष्टयेत्, एतद्यन्मुक्तफलदं भवति। तथा—

ससाध्यनामप्रणवाब्जमध्यमष्टाक्षैररुज्ज्वलपत्रमूलम् ।
मन्त्राक्षराणि द्विश आलिखेच्च पत्रेषु शिष्टद्वयमन्त्यपत्रे॥१॥
बहिर्वृतं द्वादशवर्णकेन ततो बहिर्मातृकया च वीतम्।
संपूजितं चन्दनपुष्पवर्य्यैर्यन्त्रं त्विदं श्रीकृदभीष्टदं च॥२॥ इति।

अस्यार्थ:—अष्टदलं पद्मं कृत्वा तन्मध्ये साध्यसहितं प्रणवं विलिख्य, तत्केसरेषु नारायणाष्टाक्षरवर्णानेकैकशः समालिख्य, तत्पत्रेषु मूलमन्त्रस्य वर्णान् द्विशो२ विलिख्यावशिष्टवर्णद्वयमन्त्यपत्रे विलिख्य, पद्माद्बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा-भ्यन्तरवीथ्यां वासुदेवद्वादशाक्षरमन्त्रार्णैर्निरन्तरं वेष्टयित्वा बाह्यवीथ्यां मातृकावर्णैस्तथैव वेष्टयेत्, एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

पूजन यन्त्र—सत्रह दल का कमल बनाकर उसके मध्य में सोलहों स्वरों से वेष्टित साध्य सहित ॐ लिखे। उसके केसर में क से क्ष तक द्वितीय लकाररहित वर्णों को लिखे। दलों में अवशिष्ट सत्रह अक्षरों को एक-एक करके लिखे। दो प्रणवों से यन्त्र को सम्पुटित करके वेष्टित करे। उसके बाहर पुन: दो श्रीबीजों से भी सम्पुटित करके वेष्टित करे तो यह यन्त्र लक्ष्मी, पुत्र एवं मित्रप्रदायक होता है।

दूसरा प्रकार यह है कि अष्टदल पद्म बनाकर उसके मध्य में साध्य नामसहित ॐ लिखे। केसर में अष्टाक्षर मन्त्र के एक-एक वर्ण को लिखे। उसके पत्रों में मूल मन्त्र के दो-दो वर्णों को लिखे। अवशिष्ट दो वर्णों को अन्तिम पत्र में लिखे। पद्म के बाहर तीन वृत्त अंकित करे। उसकी प्रथम वीथि में वासुदेव के द्वादशाक्षर मन्त्र को निरन्तर लिखकर वेष्टित करे। वाह्य वीथि में मातृका वर्णों को लिखकर वेष्टित करे तो यह यन्त्र लक्ष्मी, पुत्र एवं मित्रप्रदायक होता है।

यज्ञवामनमन्त्रस्तत्प्रयोगादिश्च

तथा—'तारकामरमासौधैर्बीजैर्युक्तो मनुर्मत:'। पूर्वमन्त्रस्यादौ प्रणवकामबीजश्रीबीजानि योजयेदित्यर्थ:। तथा—

च्यवनो मुनिराख्यातो गायत्री छन्द ईरितम्। देवता चास्य संप्रोक्त: सन् यज्ञेश्वरवामन:॥१॥
षड्दीर्घकामबीजेन षडङ्गानि प्रविन्यसेत्। कर्पूरधवलं देवं निविष्टं सरसीरुहे॥२॥

सुप्रसन्नं सुनेत्रं च चारुस्मितमनोहरम्। दण्डं चामृतकुम्भं च शरच्चन्द्रसमप्रभम्॥३॥
दधिभक्तं सोपदंशं वसुपात्रं च बिभ्रतम्। चिन्तयेज्जगतामाद्यं जगदार्तिहरं परम्॥४॥
अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना। इति।

अथ प्रयोग:—तत्र योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि च्यवनाय ऋषये नम:। मुखे गायत्रीछन्दसे नम:। हृदये श्रीयज्ञेश्वराय वामनाय देवतायै नम:। इति विन्यस्य, क्लांक्लीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय ध्यानमानसपूजादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति।

कुर्यात् ततो मन्त्रसिद्ध: काम्यान् स्वाभीष्टदायकान्। सहस्रं हविषा होमाल्लक्ष्मीधान्यमवाप्नुयात्॥५॥
धान्यहोमेन बीजैश्च शतपत्रसमुद्भवै:। सहस्रहोमाद्भीतीनां नाशो भवति निश्चितम्॥६॥
दध्यक्तान्नेन जुहुयाद् दारिद्र्यान्मुच्यते नर:। त्रिविक्रमं वामनस्य रूपं ध्यायन् मनुं जपेत्॥७॥
घोराद्भयान्मुच्यतेऽसौ देवेशं च पटे लिखेत्। भित्तौ वालिख्य गन्धाद्यैर्महतीं श्रियमाप्नुयात्॥८॥

यज्ञवामन मन्त्र—ॐ क्लीं श्रीं ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महा बलाय स्वाहा। योगपीठ न्यास के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि च्यवनाय ऋषये नम:, मुखे गायत्री छन्दसे नम:, हृदये श्री यज्ञेश्वराय वामनाय देवतायै नम:। इसके बाद क्लां क्लीं इत्यादि से कर न्यास षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् जगत् के आदि कारण भूत, संसार के कष्टों का हरण करने वाले यज्ञवामन भगवान् का इस प्रकार ध्यान करे—

कर्पूरधवलं देवं निविष्टं सरसीरुहे। सुप्रसन्नं सुनेत्रं च चारुस्मितमनोहरम्।।
दण्डं चामृतकुम्भं च शरच्चन्द्रसमप्रभम्। दधिभक्तं सोपदंशं वसुपात्रं च बिभ्रतम्।।

ध्यान के पश्चात् मानस पूजा आदि समस्त क्रियायें पूर्ववत् सम्पन्न करे।

पूर्ववत् पुरश्चरण से सिद्ध मन्त्र से स्वाभीष्टदायक काम्य कर्मों को करे। हवि से एक हजार हवन करने पर लक्ष्मी और धान्य प्राप्त होता है। धान्य और कमलगट्टे से एक हजार हवन करने पर भय का नाश होता है। दही मिश्रित अन्न के हवन से मनुष्य दारिद्र्य से मुक्त होता है। त्रिविक्रम वामन के ध्यान सहित मन्त्र जप से महाभय से छुटकारा प्राप्त होता है। देवता का चित्र वस्त्र या भीत्ति पर गन्धादि से लिखने पर प्रचुर सम्पदा मिलती है।

भोगवामनमन्त्रोद्धार:

ॐ नम: पदमुक्त्वा तु ततो भगवते-पदम्। विष्णवे-पदमारभ्य पूर्वमन्त्रं समुच्चरेत्॥९॥
ऋषि: कपिल आख्यातो गायत्रं छन्द उच्यते। उदीरित: सर्ववन्द्यो देवता भोगवामन:॥१०॥
षड्भिर्मन्त्रपदैरुक्त: षडङ्गविधिरुत्तम:। नीलवर्णश्चतुर्बाहु: शङ्खचक्रगदाब्जभृत्॥११॥
सर्वान् भोगान् ददात्येष भक्तानां भोगवामन:। अस्य पूजादिकं सर्वं मन्त्री पूर्ववदाचरेत्॥१२॥

ॐ नमों हृदयाय नम:। भगवते शिरसे०। विष्णवे शिखायै०। सुरपतये कवचाय०। महाबलाय नेत्राभ्यां०। स्वाहा अस्त्राय०। अन्यत्पूर्ववत्।

भोगवामन मन्त्र—भोगवामन का द्वाविंशाक्षर मन्त्र है—ॐ नमो भगवते विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि कपिल, छन्द गायत्री एवं देवता भोगवामन हैं। इसका षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ नमो हृदयाय नम:, भगवते शिरसे स्वाहा, विष्णवे शिखायै वषट्, सुरपतये कवचाय हुम्, महाबलाय नेत्राभ्यां वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसकी शेष समस्त विधियाँ पूर्ववत् होती हैं।

मायाबालकवामनमन्त्रोद्धार:

तथा--

तारो हृदयमायाबालकान्ते विष्णवे-पदम्। आरभ्योक्ताणुरस्यर्षिर्ब्रह्मा गायत्रमुच्यते॥१॥

छन्दश्च देवता प्रोक्ता मायाबालकवामनः। षडङ्गानि च मन्त्रस्य पदैः षड्भिः समाचरेत् ॥२॥
पीताम्बरोत्तरीयोऽसौ मौञ्जीकौपीनधृद्धरिः। कमण्डलुं च दध्यन्नं दण्डं छत्रं करैर्दधत् ॥३॥
यज्ञोपवीती नीलाभो ध्यातव्यश्छद्मवामनः। पूजादिकं पूर्ववच्च कुर्यान्मन्त्री यथाविधि ॥४॥
अन्नविद्याभूतिदोऽयं भक्तानामभयेष्टदः।

माया बालक वामन मन्त्र—बालक वामन का द्वाविंशाक्षर मन्त्र है—ॐ नमो ह्रीं बालकविष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता बालक वामन हैं। इसका षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ नमो हृदयाय नमः, ह्रीं शिरसे स्वाहा, बालक शिखायै वषट्, विष्णवे कवचाय हुम्, महाबलाय नेत्राभ्यां वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

पीताम्बरोत्तरीयोऽसौ मौञ्जीकौपीनधृद्धरिः। कमण्डलुं च दध्यन्नं दण्डं छत्रं करैर्दधत्।।
यज्ञोपवीती नीलाभो ध्यातव्यश्छद्मवामनः।

साधक पूजादि सब कुछ पूर्ववत् यथाविधि करे। भक्तों को इस मन्त्रोपासना से अन्न, विद्या, धन मिलता है। साथ ही निर्भयता और अभीष्ट की प्राप्ति होती है।

एतन्मन्त्रोपासकानां नियमः

एतन्मन्त्रोपासकानां नियममाह कपिलपञ्चरात्रे—
नाश्नीयात् कुण्डलीशाकं तथा चोदुम्बरं फलम्। करकं पद्मबीजं च भक्षयेन्न कदाचन ॥१॥
करकं वर्षोपलम्।

पद्मपत्रे न भुञ्जीत तथा वार्कदलेष्वपि। तन्तुकार्पासबीजानि न स्पृशेच्च कदाचन ॥२॥
वल्मीकं गोमयं विप्रच्छायामपि न लङ्घयेत्। देवाग्निगुरुपूजां च कुर्याद्भक्तिसमन्वितः ॥३॥ इति।

मन्त्रोपासकों के लिये नियम—कपिलपञ्चरात्र में इन मन्त्रों के उपासकों के लिये कहा गया है कि इन मन्त्रों का उपासक कुण्डली शाक, गूलर के फल, वर्षा ऋतु में गिरे ओले एवं कमलबीज का भक्षण कभी न करे। कमल के पत्तों पर भोजन न करे। अकवन के पत्तों और कपास बीजों का कभी भी स्पर्श न करे। दीमक के घर, गोबर एवं विप्र की छाया को न लांघे एवं देवता, अग्नि तथा गुरु की पूजा भक्ति से करे।

हयग्रीवमन्त्रस्तत्प्रयोगश्च

सारसंग्रहे—
अथोच्यते हयग्रीवमन्त्रः सर्वसमृद्धिदः। चन्द्रस्थं गगनं वामकर्णबिन्दुसमन्वितम् ॥१॥
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तो हयग्रीवस्य मन्त्रिभिः।

चन्द्रः सकारः। गगनं हकारः। वामकर्ण ऊकारः। बिन्दुरनुस्वारः। एतैः ह्सूं इति बीजमुद्धृतम्।

शङ्करकल्पे—
शून्यं शून्यसमायुक्तं जीवस्योपरि संस्थितम्। अनुग्रहयुतं कृत्वा वागीशं सर्वकामदम् ॥१॥ इति।

शून्यं हकारः। शून्यसमायुक्तं बिन्दुयुक्तं जीवस्य सकारस्योपरि स्थितम्, अनुग्रहेण चौकारेण युतं, तेन ह्सौं इति बीजमुद्धृतम्। केचिदस्मिन्नेव श्लोकेऽनुग्रहेणेत्यत्र रुद्रेणेति पठन्ति। रुद्र एकारस्तेन ह्सें इति बीजं वदन्ति। एवं त्रिविधमिदं बीजम्।

सारसंग्रहे—
ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टः त्रिष्टुप् छन्द उदाहृतम्। देवता च हयग्रीवो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥२॥
षड्दीर्घयुक्तमूलेन षडङ्गविधिरीरितः।

धवलनलिननिष्ठं क्षीरगौरं कराब्जैर्जपवलयसरोजे पुस्तकाभीतिदाने।
दधतममलवस्त्राकल्पजालाभिरामं तुरगवदनविष्णुं नौमि देवारिजिष्णुम्॥३॥

दक्षोर्ध्वादितदधोन्तमायुधध्यानम्।

पुरोक्ते प्रयजेत् पीठे गायत्र्यावाह्य मन्त्रवित्। ङेन्तं वागीश्वरपदं विद्महे पदमुच्चरेत्॥४॥
हयग्रीवश्च ङेन्तः स्यात् धीमहीति ततो वदेत्। ततो वदेच्च मन्त्रज्ञस्तन्नो हंसः प्रचोदयात्॥५॥
प्रथमावृतिरङ्गैः स्याद् द्वितीया चाष्टभिर्हयैः। प्रज्ञाहयस्तथा मेधाहयः स्मृतिहयस्तथा॥६॥
विद्याहयः श्रीहयश्च वागीशीहय एव च। विद्याविलासहयतो हयान्तो नादमर्दनः॥७॥
लक्ष्म्यादिभिस्तृतीया स्यात् ताश्च लक्ष्मीः सरस्वती। रतिः प्रीतिः कीर्तिकान्ती तुष्टिः पुष्टिस्तथाष्टमी॥८॥
चतुर्थीः कुमुदाद्यैः स्याल्लोकपालैस्तु पञ्चमी। तदायुधैस्तु षष्ठी स्यादेवं पूजा समीरिता॥९॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीहयग्रीवाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ह्सांह्सीं इत्यादि करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानादिपीठपूजान्ते 'ॐवागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्' इत्यनया गायत्र्यावाह्य, मूलेन स्थापनाद्यङ्गपूजान्ते तदष्टदलेषु—देवाग्रमारभ्य, ॐप्रज्ञाहयाय नमः। मेधाहयाय०। स्मृतिहयाय०। विद्याहयाय०। श्रीहयाय०। वागीशीहयाय०। विद्याविलासहयाय०। नादमर्दनहयाय०। इति संपूज्य, दलाग्रेषु—लक्ष्म्यै नमः। सरस्वत्यै०। रत्यै०। प्रीत्यै०। कीर्त्यै०। कान्त्यै०। तुष्ट्यै०। पुष्ट्यै० इति संपूज्य, द्वितीयाष्टदलेषु दधिवामनपूजोक्तकुमुदाद्यष्टमूर्तीः संपूज्येन्द्रादिपूजादिकं प्राग्वत् कुर्यादिति।

तथा—

वेदलक्षं जपित्वान्ते तद्दशांशं हुनेद् घृतैः। तर्पयित्वाथ सलिलैः सुशुद्धैश्च सुगन्धिभिः॥१०॥
आत्माभिषेकं कृत्वा च तर्पयेद् भूसुरानपि। ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् विदधीत वै॥११॥
शशिमण्डलमध्यस्थं हिमकुन्दनिभं मनुम्। करे ध्यात्वा न्यसेद्वक्त्रे सभापूज्यः च जायते॥१२॥
अथवा तं करे कुम्भे न्यस्य तज्जलसेचनात्। प्रातराहन्ति लूतादिदौर्भाग्यं पञ्चधा विषम्॥१३॥
योऽम्भस्त्रिः सप्तजप्तं तु प्रभाते प्रत्यहं पिबेत्। संपूज्य जायते तस्य दिव्या वाणी मनोरमा॥१४॥
इन्दुमण्डलमध्यस्थं लकारे न्यस्य मन्त्रकम्। पीतं वादिमुखे भूत्वा स्तम्भयेत् तस्य भारतीम्॥१५॥
प्रणवद्वयमध्यस्थहकारद्वयमध्यगम्। वादिनाम लिखेद्गर्भे भूर्जपत्रे हरिद्रया॥१६॥
(पत्राष्टके हयग्रीवाष्टाक्षरं स्वरकेसरे। कादिक्षान्तावृतं बाह्ये तद्बहिर्भूपुरं लिखेत्)॥१७॥
यन्त्रं प्रतिष्ठितप्राणं शरावद्वयसंपुटे। वेष्टितं पीतसूत्रेण मूकत्वं कुरुतेऽचिरात्॥१८॥
शृङ्गाटपुटमध्यस्थं रेफाक्रान्तं तु बीजकम्। ज्वालामालाकुलं ध्यायेत् स्तम्भनं परमं मतम्॥१९॥

शृङ्गाटं त्रिकोणम्।

वायुमण्डलमध्यस्थं वायुबीजसमन्वितम्। संहारकमिदं ध्यानं विषादीनां न संशयः॥२०॥
जलमण्डलमध्यस्थं ध्यात्वा चन्द्रांशुनिर्मलम्। आप्यायनकरं ह्येतत् सर्वरोगविनाशनम्॥२१॥
शून्यगर्भगतं यन्त्रं हिमगोक्षीरसंनिभम्। ध्यायेद् हृत्पद्ममध्यस्थं निर्विषीकरणं परम्॥२२॥
लिखेद्रोचनया भूर्जे मन्त्रं बाहौ विधारयेत्। महारक्षा भवेदेषा सर्वदोषविनाशिनी॥२३॥
बीजं रेफसमायुक्तं हूंकारद्वयमध्यगम्। यस्य नाम्ना जपेन्मन्त्रं मारयेत्तं न संशयः॥२४॥
बीजं रेफसमायुक्तं सकारहकारयोरधः। हूँकारद्वयमध्यस्थं मन्त्रबीजमनुत्तमम्॥२५॥
विद्वेषयेज्जगत् सर्वं मासं जप्तं न संशयः। इति।

हयग्रीव मन्त्र—सारसंग्रह में सभी समृद्धियों को देने वाले हयग्रीव एकाक्षर मन्त्र 'ह्सूं' कहा गया है। वहीं शंकर कल्प के अनुसार एकाक्षर मन्त्र 'ह्सौं' है। कुछ के अनुसार यह मन्त्र 'ह्सें' है। इस प्रकार इस एकाक्षर मन्त्र के तीन रूप होते हैं—ह्सूं, ह्सौं, ह्सें। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता भुक्ति-मुक्तिप्रदायक हयग्रीव हैं। ह्सां ह्सीं, ह्सें: ह्सूं, ह्सैं, ह्सौं, ह्स: से इसका षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

धवलनलिननिष्ठं क्षीरगौरं कराब्जैर्जपवलयसरोजे पुस्तकाभीतिदाने।
दधतममलवस्त्राकल्पजालाभिरामं तुरगवदनविष्णुं नौमि देवारिजिष्णुम्।।

प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक की क्रिया के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे त्रिष्टुप् छन्दसे नम:। हृदये श्रीहयग्रीवाय देवतायै नम:। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके ह्सां ह्सीं इत्यादि से कर-षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर पूर्वोक्त रीति से ध्यान करने के उपरान्त पीठपूजा करके 'ॐ वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंस: प्रचोदयात्' इस गायत्री से आवाहन करे। मूल मन्त्र से स्थापना करके अंगपूजा में करके अष्टदल में देव के आगे से आरम्भ करके इस प्रकार पूजन करे—ॐ प्रज्ञाहयाय नम:। मेधाहयाय नम:। स्मृतिहयाय नम:। विद्याहयाय नम:। श्रीहयाय नम:। वागीशीहयाय नम:। विद्याविलासहयाय नम:। नादमर्दनहयाय नम:। पुन: दलाग्रों में लक्ष्म्यै नम:। सरस्वत्यै नम:। रत्यै नम:। प्रीत्यै नम:। कीर्त्यै नम:। कान्त्यै नम: तुष्ट्यै नम:। पुष्ट्यै नम: से पूजन करे द्वितीय अष्टदल में दधिवामन पूजोक्त कुमुदादि आठ मूर्ति की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करके शेष पूजा पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

इस मन्त्र का चार लाख मन्त्र जप के बाद दशांश हवन घी से करे। शुद्ध सुगन्धित जल से तर्पण करे। मार्जन के बाद ब्राह्मणों का भी तर्पण करे। तदनन्तर सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे। अपने हाथ में चन्द्रमण्डल के मध्य में स्थित हिम के समान शुभ्र मन्त्र का ध्यान करते हुये उसका अपने मुख में न्यास कर जो सभा में जाता है वह उस सभा में पूज्य होता है अथवा उस हाथ को जलपूर्ण कुम्भ में डालकर उससे सबेरे स्नान करे तो लूतादि दौर्भाग्य एवं पाँच प्रकार के विषों का नाश होता है। जो प्रतिदिन प्रभात में इसके तीन जप से अभिमन्त्रित जल को पीता है, उसके मनोरम दिव्य वाणी की पूजा होती है।

चन्द्रमण्डल के मध्य में स्थित लकार में मन्त्र का न्यास कर जल का पान करके प्रतिवादी की तरफ मुख करने से उसकी वाणी का स्तम्भन हो जाता है। भोजपत्र पर दो प्रणव के मध्य में स्थित दो हकारों के मध्य में हल्दी से वादी का नाम लिखे। आठ पत्रों में हयग्रीव का अष्टाक्षर मन्त्र लिखे। केसर में स्वरों को लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर क से क्ष तक के वर्णों को लिखे। उसके बाहर भूपुर बनाकर यन्त्र में प्राण प्रतिष्ठा करे। उस यन्त्र को मिट्टी के प्याले में रखकर दूसरे प्याले से ढक दे। पीले सूते से उसे वेष्टित करे तो वह वादी को तुरन्त गूंगा बना देता है। त्रिकोण में 'ह्सूं बीज लिखे। उसे ज्वाला से घिरा हुआ ध्यान करे। इससे परम स्तम्भन होता है। वायुमण्डल के मध्य में स्थित वायु बीज 'यं' का ध्यान करे तो विषों का प्रभाव नष्ट हो जाता है। जलमण्डल के मध्य में निर्मल चन्द्र किरणों का ध्यान करके रोगी पर उस जल का छींटा मारे तो सभी रोगों का नाश हो जाता है। शून्य के बीच में यन्त्र को वर्फ और गोदुग्ध के वर्ण का ध्यान हृदयकमल में करे तो परम निर्विषीकरण होता है। भोजपत्र पर रोचन से मन्त्र लिखकर ताबीज में भरकर बाँह में बाँधे तो सर्व दोष विनाशिनी महारक्षा होती है। 'हुं ह्सूं हुं' के साथ जिसका नाम जोड़कर मन्त्र का जप किया जाता है, उसकी मृत्यु हो जाती है। ह्सूं बीज को दो हुं के मध्य में करके 'स' और 'ह' के नीचे लिखकर एक महीने तक जप करे तो संसार विद्वेषित हो जाता है।

हयग्रीवमन्त्रान्तरप्रयोग:

तथा—

पूर्वं वदेदुद्गिरत्प्रणवोद्गीथपदं वदेत्। सर्ववागीश्वशब्दान्ते ततो रेश्वरशब्दत: ।।२६।।
सर्ववेदपदं प्रोक्त्वा मयाचिन्त्य-पदं वदेत्। सर्वं स्याद्बोधयद्वन्द्वं स्वाहान्तं केचनोचिरे ।।२७।।
स्वबीजप्रणवाभ्यां च संपुट: परिकीर्तित:। षट्त्रिंशदक्षरो मन्त्रो हयग्रीवहरे: शुभ: ।।२८।।

स्वबीजं हयग्रीवबीजं पूर्वोद्धृतम्। अन्यत्सर्वं सुगमम्। षट्त्रिंशदक्षरः स्वाहारहितपक्षे। तद्योगे त्वष्टात्रिंशदक्षरः।

तथा—

ऋषिर्ब्रह्मानुष्टुबुक्तं छन्दो देवोऽस्य कीर्तितः। वागैश्वर्यप्रदो नित्यं हयग्रीवहरिः स्वयम्॥२९॥
पञ्चाङ्गानि मनोस्तारमन्त्रपादैर्भवन्ति हि। हयग्रीवं चतुर्बाहुं शरदम्भोरुहप्रभम्॥३०॥
शङ्खारिपाणिमश्वास्यं जानुन्यस्तकरं भजे। पूर्वोदिते यजेत् पीठे देवमावाह्य मन्त्रवित्॥३१॥

वामदक्षोर्ध्वयोः शङ्खचक्रे।

एकाक्षरेण मूर्तिं तु कल्पयित्वा विधानतः। दिग्गजांश्चतुरो वेदान् यजेत् केसरगांस्ततः॥३२॥
ऋग्वेदः श्वेतवर्णस्तु द्विभुजो रासभाननः। अक्षमालाभयः सौम्यः पीतश्चाध्यापनोद्यतः॥३३॥
अजास्यः पीतवर्णस्तु यजुर्वेदोऽक्षसूत्रकः। वामः कुलिशपाणिः स्याद्भूतिदो मङ्गलप्रदः॥३४॥
नीलोत्पलदलाभासः सामवेदो हयाननः। अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कुम्भधरः स्मृतः॥३५॥
अथर्वणाभिधो देवो धवलो मर्कटाननः। अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कुम्भधरः स्मृतः॥३६॥
कोणकेसरगानङ्गस्मृतिन्यायांस्तथार्चयेत्। सर्वशास्त्रं च पत्रेषु षडङ्गानि समर्चयेत्॥३७॥
लोकपालान् न्यसेद्बाह्ये तेषामस्त्राणि तद्बहिः। विधानेनामुना देवं भजन् वाचस्पतिर्भवेत्॥३८॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीहयग्रीवाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐ हृदयाय नमः। उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ शिरसे०। सर्ववागीश्वरेश्वर शिखा०। सर्ववेदमयाचिन्त्य कवच०। सर्वं बोधय२ अस्त्रं। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान् मूलमन्त्राभिमृष्टकराङ्गुलीषु न्यस्य, नेत्रवर्जं हृदयादिषु च विन्यस्य, ध्यानादियोगपीठपूजान्ते एकाक्षरेण मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्तेऽष्टदलकेसरेषु देवाग्रादि चतुर्दिक्षु—ॐऋग्वेदाय नमः। यजुर्वेदाय नमः। सामवेदाय नमः। अथर्ववेदाय नमः। इति संपूज्य, अग्न्यादिकोणकेसरेषु—षडङ्गेभ्यो नमः। स्मृतिभ्यो नमः। न्यायशास्त्रेभ्यो नमः। सर्वशास्त्रेभ्यो नमः। इति संपूज्याष्टदलेषु प्राग्वदङ्गानि संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं कुर्यादिति।

तथा—

षट्त्रिंशल्लक्षकं जप्त्वा तदन्ते जुहुयात् सुधीः। कुन्दैस्त्रिस्वादुसंयुक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत्॥३८॥
लक्ष्मीकामः प्रजुहुयाद्बिल्वपत्रैः सुशोभनैः। वाक्कामो जुहुयान्नित्यं कुन्दैस्त्रिमधुराप्लुतैः॥३९॥
आज्यं ब्राह्मीरसे पक्क मन्त्रेणानेन साधितम्। सेवितं विधिना प्रातरनर्गलकवित्वदम्॥४०॥
साधितां मन्त्रवर्येण वचामनुदिनं सुधीः। भक्षयेत् सर्वशास्त्राणां व्याख्याता भवति ध्रुवम्॥४१॥
ऋग्यजुःसामरूपं च वेदाभरणकर्म च। प्रणवोद्गीथवपुषे महाश्वशिरसे पदम्॥४२॥
ङेन्तं पादद्वयं पूर्वं नमोन्ते सोहंपूर्वकम्। हंसादिरश्ववक्त्रस्य प्रोक्तः षट्त्रिंशदक्षरः॥४३॥

ङेन्तं पूर्वपादद्वयं ऋग्यजुःसामरूपाय वेदाभरणकर्मणे इति। अन्यत्सुगमम्।

विश्वोत्तीर्णपदं प्रोक्त्वा स्यात् स्वरूपाय चिन्मयः। नादान्ते रूपिणे तुभ्यं पदं प्रोक्त्वा नमो वदेत्॥४४॥
हयग्रीवपदं पश्चाद्विद्याराजाय विष्णवे। स्वाहा सोहं च हंसादिरष्टत्रिंशाक्षरो मनुः॥४५॥
ऋष्याद्यङ्गविधिध्यानपूजाकाम्यानि मन्त्रवित्। कुर्यादानुष्टुभोक्तेन विधानेन विधानवित्॥४६॥

पञ्चाङ्गानि प्रणवमन्त्रपादैः। पुरश्चरणं च षट्त्रिंशल्लक्षम्।

तथा—

स्वबीजं पूर्वमुद्धृत्य ङेन्तं हयशिरो वदेत्। हृदन्तोऽष्टाक्षरो मन्त्रो हयग्रीवस्य चेरितः॥४७॥

ङेन्तं हयशिरः हयशिरसे। हृन्नमः।

ऋष्याद्यङ्गविधिन्यासजपपूजा यथाविधि। एकाक्षरोक्तमार्गेण च्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ॥४८॥
कविताश्रीप्रदो नित्यमस्मादन्यो च कुत्रचित्।
पद्माक्षमालालिखितेष्टदानि दधानमम्भोरुहसन्निविष्टम्।
कर्पूरभङ्गाधिकशुभ्रकान्तिं हयाननं सौम्यमहं स्मरामि ॥४९॥
दक्षिणाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम् इति।

हयग्रीव के छत्तीस अक्षरों का एक अन्य मन्त्र है—ह्सूं उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय स्वाहा ॐ।

प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नम:, हृदये श्रीहयग्रीवाय देवतायै नम:। इस प्रकार न्यास करके अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार अंग न्यास करे—ॐ हृदयाय नम:, उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ शिरसे स्वाहा, सर्ववागीश्वरेश्वर शिखायै वषट्, सर्ववेदमयाचिन्त्य कवचाय हुम्, सर्वं बोधय बोधय अस्त्राय फट्। इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों से करन्यास एवं नेत्ररहित हृदयादि में न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

हयग्रीवं चतुर्बाहुं शरदम्भोरुहप्रभम्। शङ्खारिपाणिमश्वास्यं जानुन्यस्तकरं भजे।।

इस प्रकार ध्यान करके योगपीठ की पूजा करने के बाद एकाक्षर मन्त्र 'ह्सूं' से हयग्रीव की मूर्ति कल्पित करके आवाहनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। तदनन्तर अष्टदल के केसरों में देवता के आगे से आरम्भ कर चारो दिशाओं में ॐ ऋग्वेदाय नम:, यजुर्वेदाय नम:, सामवेदाय नम: एवं अथर्ववेदाय नम: कहकर वेदों कापूजन करे। चारो वेदों का ध्यान निम्न प्रकार का है—

ऋग्वेद का ध्यान—ऋग्वेद: श्वेतवर्णस्तु द्विभुजो रासभानन:। अक्षमालाभय: सौम्य: पीतश्चाध्यापनोद्यत:।।

यजुर्वेद का ध्यान—अजास्य: पीतवर्णस्तु यजुर्वेदोऽक्षसूत्रक:। वाम: कुलिशपाणि: स्याद्भूतिदो मङ्गलप्रद:।।

सामवेद का ध्यान—नीलोत्पलदलाभास: सामवेदो हयानन:। अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कुम्भधर: स्मृत :।।

अथर्व वेद का ध्यान—अथर्वणाभिधो देवो धवलो मर्कटानन:। अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कुम्भधर: स्मृत:।।

केसर में अग्न्यादि कोण में षडङ्गेभ्यो नम:, स्मृतिभ्यो नम:, न्यायशास्त्रेभ्यो नम:, सर्वशास्त्रेभ्यो नम: से पूजन कर अष्टदल में पूर्ववत् अंगपूजा के बाद दिक्पालों का अर्चन आदि करके पूजा का समापन करे।

इस मन्त्र के छत्तीस लाख जप के बाद साधक त्रिमधुराक्त कुन्दपुष्पों से हवन करे। तब तर्पणादि करे। लक्ष्मी की कामना वाला सुन्दर बेलपत्रों से हवन करे। वाणी चाहने वाला नित्य त्रिमधुराप्लुत कुन्दपुष्पों से हवन करे। ब्राह्मी रस में गाय का घी पकाकर इस मन्त्र से मन्त्रित करके सबेरे विधिपूर्वक उसका सेवन करे तो कवित्व शक्ति प्राप्त होती है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित वचा प्रतिदिन खाने से साधक निश्चित ही सभी शास्त्रों का व्याख्याता हो जाता है।

हयग्रीव के छत्तीस अक्षरों का एक अन्य मन्त्र है—हंस: ऋग् यजुस्सामरूपाय वेदाभरणकर्मणे प्रणवोद्गीथवपुषे महाश्वशिरसे नम: सोऽहं।

हयग्रीव के अड़तीस अक्षरों का एक अन्य मन्त्र है—हंस: विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयाचिन्त्यरूपिणे तुभ्यं नमो हयग्रीवविद्याराजय विष्णवे स्वाहा हंस:।

हयग्रीव का एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—ह्सूं हयशिरसे नम:। इसकी पूजा-विधि एकाक्षर मन्त्र के समान है। इसका छन्द अनुष्टुप् है। कविता एवं लक्ष्मी प्रदान करने वाला इसके समान दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

पद्माक्षमालालिखितेष्टदानि दधानमम्भोरुहसन्निविष्टम्। कर्पूरभङ्गाधिकशुभ्रकान्तिं हयाननं सौम्यमहं स्मरामि।।

वराहमन्त्रोद्धारस्तद्यजनादिप्रयोगश्च

सारसंग्रहे—

अथोच्यतेऽर्चाविधानं वाराहस्य मनोः क्रमात्। साङ्गहोमाभिषेकं च सप्रयोगसजापकम् ॥१॥
भगवत्पदमाभाष्य ङेन्तं स्याच्च वरापदम्। ङेन्तं हरूपमाभाष्य व्याहृतीश्च ततो वदेत् ॥२॥
ङेन्तं पतिं भूपतित्वं मे देहि दपदं वदेत्। दापय स्वापदं प्रोक्त्वा हान्तस्तारहृदादिकः ॥३॥
त्रयस्त्रिंशद्वर्णसंख्यो वराहमनुरीरितः ।

भगवत्पदं ङेन्तं भगवते। वरा स्वरूपं। हरूपपदं ङेन्तं हरूपाय। व्याहृतीः भूर्भुवःस्वः। ङेन्तं पतिं पतये। भूपतित्वं मे देहि। द स्वरूपं। दापय स्वाहा स्वरूपं। तारहृदादिकः तारः प्रणवः, हृन्नमः। अत्र सन्धिः ॐ नमो इत्यादि।

तथा—

ऋष्यादयो भार्गवानुष्टुब्वराहाः समीरिताः। ङेन्तो हृदेकशृङ्गं स्याद् व्योमोल्कस्तादृशः शिरः ॥४॥
शिखा तेजोधिपतये विश्वरूपाय वर्म च। महादंष्ट्राय चास्त्रं स्यात् पञ्चाङ्गविधिरीरितः ॥५॥ इति।

प्रपञ्चसारे—'सप्तभिश्च पुनः षड्भिः सप्तभिश्चाथ पञ्चभिः। अष्टभिर्मूलमन्त्रार्णैर्विदध्यादङ्गकल्पनाम्' (२३.१७) इत्युक्तम्।

सारसंग्रहे—

अथवा मन्त्रवर्णैस्तु सप्तषण्मुनिसायकैः। वसुभिश्चापि पञ्चाङ्गं विदध्यान्मनुवित्तमः ॥६॥

मुनयः सप्त। सायकाः पञ्च। वसवोऽष्टौ।

जान्वोः पदावधि सुवर्णनिभं च नाभेराजानु चन्द्रधवलं च गलाद् हृदन्तम्।
वह्निप्रभं शशिनिभं शिरसो गलान्तं मौलिस्थलाद्वियत एन्दुनिभं च कान्तम् ॥७॥
संबिभ्रतं करतलैररिशङ्खखड्गान् खेटं गदां तदनु शक्तिवराभयानि।
सर्वसहाधरणशोभिसदेकदंष्ट्रमाद्यं वराहमनिशं प्रभजस्व चित्ते ॥८॥

दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये, तदधःस्थयोरन्ये, तदधःस्थयोरपरे, तदधःस्थयोरितरे, इत्यायुधध्यानम्।

तथा—

धराधरशरीरं वा नीलजीमूतसंनिभम्। उदध्युपरिगं ध्यायेत् सितदंष्ट्राधृताचलम् ॥९॥
हेमाभं पार्थिवे ध्यायेन्मण्डले हिमसंनिभम्। वारुणे मण्डले वह्नेः कृशानुभमथानिले ॥१०॥
कृष्णं वियत्युग्रभं स्यादेवं ध्यायेच्च सूकरम्। दंष्ट्रायां वसुधां ध्यायेत् सशैलवनकाननाम् ॥११॥
वागीशीं हुंकृतौ ध्यायेत् पवनं श्वसिते तथा। बाह्वोर्वामान्ययोश्चन्द्रसूर्यावुदरगान् वसून् ॥१२॥
ब्रह्माणं पादयोर्ध्यायेद् हृदये च हरिं तथा। शङ्करं च मुखे ध्यायेत्...................... ॥१३॥ इति।

तथा—

पद्ममष्टदलोपेतमुल्लसत्कर्णिकं शुभम्। मण्डलं विरचय्यैवं कोटिसूर्यसमप्रभम् ॥१४॥
तत्र संपूजयेत् कोलं वक्ष्यमाणविधानतः। मूलेन मूर्तिं संकल्प्य कोलमावाहयेत् ततः ॥१५॥
तत्र गन्धादिभिः सम्यग् देवं संपूज्य सूकरम्। कोलदंष्ट्राद्यङ्गगतान् वसुधादीन् प्रपूजयेत् ॥१६॥
विदिक्षूर्ध्वमधश्चापि पूजयेदस्त्रमुत्तमम्। चक्रादीनि च तद्बाह्ये चक्रशङ्खासिखेटकान् ॥१७॥
गदाशक्ती वराभीती लोकपालानथो यजेत्। तदस्त्राणि च तद्बाह्ये कोलपूजा समीरिता ॥१८॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि भार्गवाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीवराहदेवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः। इति

कृताञ्जलिरुक्त्वा, एकशृङ्गाय हृदयाय नमः। व्योमोल्काय शिरसे स्वाहा। तेजोधिपतये शिखा०। विश्वरूपाय कवचं०। महादंष्ट्राय अस्त्रं। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान् मूलमन्त्राभिमृष्टयोः पाण्योरङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तास्वङ्गुलीषु विन्यस्य, नेत्ररहितं पञ्चाङ्गेषु च विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते देवस्य दंष्ट्रायां वसुधायै नमः। अष्टदलकेसरेषु देवाग्रादिचतुर्दिक्षु हृदयादिकवचान्तं संपूज्याग्रादि कोणेषु इन्द्रेशानयोर्मध्ये निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये चास्त्रं संपूज्य, अष्टदलेषु देवाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—चक्राय नमः। शङ्खाय०। खड्गाय०। खेटाय०। गदायै०। शक्त्यै०। वराय०। अभयाय०। इति संपूज्य लोकपालार्चादि प्राग्वत् कुर्यादिति।

तथा—

एकलक्षं जपेन्मन्त्रं नियमस्थो जितेन्द्रियः। तद्दशांशं प्रजुहुयात् (पद्मैः स्वादुपरिप्लुतैः ॥१९॥
तर्पणादि ततः कुर्याद् ब्राह्मणाराधनावधि। बिल्ववृक्षं स्पृशन्नित्यं जपेन्मासं सहस्रकम् ॥२०॥
दशांशं जुहुयादग्नौ) पुरश्चरणवान् भवेत्। अर्थो ध्यानाज्जपाद् भूमिर्जपपूजाहुतैः क्रमात् ॥२१॥
धनधान्यधरालक्ष्म्यो भवन्त्येव न संशयः। भूमण्डले सदा ध्यातः प्रयच्छति भुवं शुभाम् ॥२२॥
वारुणे तूच्चकैः शान्तिमाग्नेये च प्रयच्छति। वश्यं ज्वरादिकं सम्यगुच्चाटो वायुमण्डले ॥२३॥
द्युमण्डले शत्रुभूतग्रहक्ष्वेडादिरक्षणम्। सिंहस्थे शुक्लपक्षे हि रवौ श्वेतशिलां शुभाम् ॥२४॥
पञ्चगव्यविनिक्षिप्तां संजप्तामयुतेन च। उदङ्मुखो जपेन्मन्त्रं क्षेत्रे तां निखनेत् ततः ॥२५॥
शत्रूणां संनिरोधो हि क्षेत्रस्यास्य विनश्यति। अर्कोदयेऽङ्गारवारे जपेन्मन्त्रं समाहितः ॥२६॥
वैरिरुद्धादपि क्षेत्रान्मृदमानीय यत्नतः। तां च त्रिधा विभज्यांशं चुल्यामेकं विलिप्य च ॥२७॥
पाकपात्रे परांशं च पयस्यन्यं तृतीयकम्। संस्कृते हव्यवाहे च तण्डुलैश्च पचेच्चरुम् ॥२८॥
तत्र देवं यथावच्च धूपदीपादिभिर्यजेत्। साज्येन तेन हविषा हुनेदष्टाधिकं शतम् ॥२९॥
एवं भौमाष्टवारेषु कुर्यान्नियतधीः क्रमात्। ततः शत्रुगृहीतं च क्षेत्रं संप्राप्यतेऽचिरात् ॥३०॥
अह्नो मुखे भौमवारे मृदं संगृह्य पूर्ववत्। पूर्ववच्च चरुं कृत्वा जुहुयात् प्रोक्तवर्त्मना ॥३१॥
बलिं च दद्यात् क्षेत्रस्य विरोधो नश्यति ध्रुवम्।

बलिं च देवस्य। हुतशेषेण देवस्य नैवेद्यं दद्यादित्यर्थः।

सप्तभिर्दिवसैश्चाथ डाकिनीविकृतीर्हरेत्। तामेव मृत्तिकां दुग्धे विलोड्याज्येन संहुनेत् ॥३२॥
अष्टाधिकं सहस्रं च मण्डलद्वितयं ततः। निःसपत्ना समृद्धास्य महार्था च मही भवेत् ॥३३॥
आरग्वधसमिद्भिश्च जुहुयादयुतं सुधीः। तस्य सर्वसमृद्धिः स्याल्लभेत् क्षेत्रादिकं बहु ॥३४॥
अष्टाधिकं शतं मन्त्री शालीभिर्दिनशो हुनेत्। स तु संवत्सरात् सम्यग् व्रीहिपूर्णगृहो भवेत् ॥३५॥
अनेन जुहुयादाज्यं सहस्रं प्रत्यहं बुधः। तेन स्वर्णसमृद्धिः स्यादञ्जलिन्याः प्रसूनकैः ॥३६॥
सहस्रं स्वादुसंपृक्तैर्वाससां वृद्धिरिष्यते। लाजाहोमाच्च कन्याप्तिरुत्पलैः श्रीर्भवत्यलम् ॥३७॥
विवादक्षेत्रमासाद्य तस्य जन्मदिने शुभे। तत्रासीनो जपेन्मन्त्रमष्टोत्तरसहस्रकम् ॥३८॥
एवं कृतवतस्तस्य भूमिवादो विनश्यति।

तस्य वादिनः। जन्मदिने जन्मनक्षत्रदिने।

आत्मानं मेरुसदृशं वराहं चिन्तयेद् बुधः। अङ्गारवारे यत्क्षेत्रं जपन् सप्तप्रदक्षिणम् ॥३९॥
कृत्वा मृदं तु गृह्णीयात्तस्य क्षेत्रं भविष्यति। नित्यं भूमिं स्पृशन् मन्त्री जपेदष्टसहस्रकम् ॥४०॥
विन्दते महतीं भूतिं शमयेत् सर्वकण्टकम्। भृगुवारे तथा प्रोक्तो भौमवारे विशेषतः ॥४१॥
जपेत् प्रतिष्ठाकामस्तु महतीं भूमिमाप्नुयात्। नित्यमष्टसहस्रं तु यो जपेद्धरिमर्चयेत् ॥४२॥
महतीं श्रियमाप्नोति महाराजो भवत्यलम्। लक्षहोमजपान्ते स्याद् गव्यैश्चैव सपायसैः ॥४३॥

सप्तद्वीपानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा। दधिमध्वाज्यसिक्ताश्च चतुरङ्गलसंमिता: ॥४४॥
गुडूचीरष्टसाहस्त्रं हुनेद् व्याधिर्विनश्यति। आम्रपर्णैर्हुतैर्नित्यं ज्वरशान्तिर्भविष्यति ॥४५॥
गृहीत्वा हस्तयोर्नीरं जपेदक्षरसंख्यया। मुखे सुप्त: क्षिपेन्नित्यं मुखश्रीस्तस्य वर्धते ॥४६॥
अक्षरसंख्यया मूलमन्त्राक्षरसंख्यया।

वराह मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब वराह मन्त्र के अर्चन का विधान क्रम से कहा जा रहा है। तैंतीस अक्षरों का वराह का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुवस्व:पतये भूपतित्वं मे देहि दापय स्वाहा।

प्रात:कृत्य से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भार्गवाय ऋषये नम:, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नम:, हृदये श्रीवराहदेवतायै नम:। तदनन्तर सर्वाभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार पञ्चाङ्ग न्यास करे—एकशृङ्गाय हृदयाय नम:, व्योमोल्काय शिरसे स्वाहा, तेजोधिपतये शिखायै वषट्, विश्वरूपाय कवचाय हुं, महादंष्ट्राय अस्त्राय फट्। तदनन्तर मूल मन्त्र से हाथों को मलकर अंगूठे से कनिष्ठा तक की अंगुलियों में एवं नेत्ररहित हृदयादि में पञ्चाङ्ग मन्त्रों से ही न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

जान्वो: पदावधि सुवर्णनिभं च नाभेराजानु चन्द्रधवलं च गलाद् हृदन्तम्।
वह्निप्रभं शशिनिभं शिरसो गलान्तं मौलिस्थलाद्वियत एन्दुनिभं च कान्तम्॥
संविभ्रतं करतलैररिशङ्खखड्गान् खेटं गदां तदनु शक्तिवराभयानि।
सर्वंसहाधरणशोभिसदेकदंष्ट्रमाद्यं वराहमनिशं प्रभजस्व चित्ते॥

तदनन्तर नील जीमूत के समान पृथ्वी को धारण करने वाले वराह का ध्यान करे। समुद्र के ऊपर श्वेत दाँतों पर पर्वत को उठाये वराह का ध्यान करे। पृथ्वीमण्डल पर स्वर्णाभ स्वच्छ वराह का ध्यान करे। वरुणमण्डल में अग्निशिखा के समान वराह का ध्यान करे। आकाश में कृष्णवर्ण वराह का ध्यान करे। दाँतों पर पर्वत, जंगल एवं झाड़ियों सहित पृथ्वी को धारण किये वराह का ध्यान करे। उनके हुंकार में सरस्वती का, श्वास में वायु का, दोनों बाहुओं में चन्द्र-सूर्य का, पेट में अष्टवसुओं का, पैरों में ब्रह्मा का, हृदय में हरि का एवं मुख में शंकर का ध्यान करे। इस प्रकार विविध रूपों वाले वराह का ध्यान करके पुष्पोपचार तक पूजा करके देव के दाँत में—वसुधायै नम: एवं अष्टदल केसरों में देव के आगे से चारो दिशाओं में हृदय से कवच तक की पूजा करे। तदनन्तर अग्रादि कोणों में पूर्व-ईशान के मध्य में एवं नैर्ऋत्य-वायव्य मध्य में आयुधों की पूजा करे। अष्टदल में देव के आगे से आरम्भ करके चक्राय नम:, शङ्खाय नम:, खड्गाय नम:, खेटाय नम:, गदायै नम:, शक्त्यै नम:, वराय नम:, अभयाय नम: से पूजा करके लोकपालों आदि की पूजा पूर्ववत् करे।

जितेन्द्रिय साधक नियम से रहकर एक लाख मन्त्रजप करे। दशांश हवन त्रिमधुर-सिक्त कमल से करे। तदनन्तर तर्पण, मार्जन एवं ब्राह्मणभोजन करावे। एक मास तक समय बेल वृक्ष का स्पर्श करके प्रतिदिन मन्त्र का एक हजार जप करके दशांश हवन करे तो पुरश्चरण पूरा होता है। इसके ध्यान से अर्थलाभ, जप से भूमि एवं जप-पूजा-हवन से धन-धान्य, पृथ्वी एवं लक्ष्मी की निस्सन्देह रूप से प्राप्ति होती है। भूमण्डल में सदा ध्यान करने से भूमि मिलती है। वारुण मण्डल में पूजा जप से श्रेष्ठ होता है। अग्नि मण्डल में शान्ति होती है। वायु मण्डल में वश्य और उच्चाटन होता है। द्युमण्डल में जप ध्यान से शत्रु-भूत-ग्रह-क्ष्वेडादि से रक्षा होती है। सिंहस्थ शुक्ल पक्ष में रविवार को शुभ उजले पत्थर पर पञ्चगव्य छींटकर दश हजार जप उत्तरमुख होकर करके खेत में उसे गाड़ दे। उस पत्थर को तो शत्रु का निरोध होता है एवं उसके खेत का नाश हो जाता है। मंगलवार को सूर्यमण्डल के मध्य में ध्यान करके एकाग्रता से मन्त्र जप करे। वैरी के रोकने पर भी उसके खेत से मिट्टी लाकर उसका तीन भाग करे। एक भाग से चुल्हा लीपे। पाक पात्र में दूसरे भाग को लगावे और तीसरे भाग को दूध में डालकर उसमें चावल मिलाकर संस्कृत आग में खीर बनावे। तदनन्तर देव की पूजा धूप-दीपादि से करके उस खीर में गोघृत मिलाकर एक सौ आठ हवन करे। स्थिर वुद्धि से आठ मंगलवार में इस प्रकार की क्रिया करे तो शत्रु द्वारा हस्तगत खेत थोड़े ही दिनों में उसे वापस मिल जाता है। मंगलवार के प्रथम प्रहर दिन में पूर्ववत् मिट्टी लाकर पूर्ववत् खीर बनाकर उसी प्रकार से हवन करे एवं क्षेत्रपाल को बलि प्रदान करे तो क्षेत्रसम्बन्धी विरोध शीघ्र नष्ट हो जाता है। सात दिनों तक ऐसा करने से डाकिनी-

सम्बन्धी विकृति का नाश होता है। उसी प्रकार दूध में मिट्टी मिलाकर आज्यसहित एक हजार आठ हवन करे तो डेढ़ महीने में बहुत समृद्धि के साथ भूमि मिलती है। अमलतास की समिधा से दश हजार हवन करे तो सभी समृद्धियों के साथ पर्याप्त जमीन मिलती है। प्रतिदिन शालि चावल से एक सौ आठ हवन वर्ष भर तक करने से घर चावल से भर जाता है। आज्यमिश्रित शालि चावल के हवन से सोने की समृद्धि होती है। अंजली के फूलों में त्रिमधुर मिलाकर एक हजार हवन करने से वस्त्रों में वृद्धि होती है। लावा के हवन से विवाह होता है। उत्पलों के हवन से सम्पत्ति मिलती है। खेत के सम्बन्ध में विवाद होने पर विवादी के जन्म नक्षत्र वाले दिन में उस खेत में बैठकर एक हजार आठ मन्त्र का जप करे तो भूमि-विवाद का नाश होता है।

स्वयं को पहाड़ के समान वराह रूप में चिन्तन करके मंगलवार के दिन जिस खेत में बैठकर जप करने बाद सात प्रदक्षिणा करके उसकी मिट्टी को अपने हाथ में लेता है, वह क्षेत्र उसका हो जाता है। भूमि को स्पर्श करके नित्य एक हजार आठ जप करे तो बहुत धन मिलता है और सभी कष्टों से मुक्ति मिलती है। शुक्रवार को और विशेष कर मंगलवार को मन्त्र का जप प्रतिष्ठा की कामना से करे तो बहुत क्षेत्र मिलता है। इसके नित्य एक हजार आठ जप से जो हरि का अर्चन करता है, उसे महाराजा के समान श्री एवं सम्पत्ति मिलती है। एक लाख जप के बाद पञ्चगव्य-मिश्रित पायस के हवन से सातों द्वीपों की प्राप्ति होती है। दही, मधु, गोघृत-सिक्त चार अंगुल लम्बे गुरुच के टुकड़ों से हवन करने पर सभी रोगों का नाश होता है। आम के पत्तों से नित्य हवन करने पर ज्वर शान्त होता है। हाथ में जल लेकर मन्त्राक्षरों की संख्या के बराबर जप करके सोने के समय नित्य अपने मुख पर छींटा मारे तो मुख के कान्ति की वृद्धि होती है।

यन्त्ररचनाप्रकारः

ससाध्यं षट्कोणे प्रणवगतबीजं त्वरिमनुं षडस्त्रिष्वङ्गानि प्रविलिखतु संधिष्वथ सुधीः ।
द्विशो ह्यष्टार्णार्णुं निगमदलमूले दलगतान् मनोरर्णानष्टौ समधिकमथान्त्ये बहिरथो ॥४७॥

वसुमितदले किञ्जल्केषु स्वरान् द्विश आलिखेद्
दलमनु मनोर्वर्णान् वेदैर्मितानधिकोऽन्तिमे ।
विकृतिविवरे किञ्जल्केऽथो लिपिं द्विश आलिखेद्
दलमनु मनोर्वर्णानन्तेऽन्तिमं बहिरावृतम् ॥४८॥
वेदादिक्षितिकोलबीजमनुभिः साध्याख्यया संपुटै-
स्तद्बाह्ये मनुवर्णदर्भितलसत्साध्याख्यया चावृतम् ।
भूबिम्बावृतमश्रिगर्भविलसत्साध्याख्यभूबीजकं
शूलेषु क्षितिकोलबीजलसितं यन्त्रं वराहस्य तत् ॥४९॥
लाक्षाकर्पूरकृष्णागुरुमलयजसद्रोचनाकुङ्कुमैस्त-
त्संपिष्टैर्गोमयाद्भिः शुभतदिवसे संलिखेच्चारुहैम्या ।
लेखन्या स्वर्णपट्टे रजतजफलके राज्यमाग्रामलाभ-
स्ताम्रे स्वर्णं निजेष्टं पिचुतरुजदले भूफलं क्षौमपट्टे ॥५०॥
भूर्जे संसारयात्रा भवति च नितरां साधु जप्तं च यन्त्रं
संपाताज्याभिषिक्तं निजहितफलदं राशिवर्षे धृतं तत् ।
स्वं ध्यात्वा कोलरूपं तदपि च निखनेत् साध्यदेशे वराहं
त्वावाह्याङ्गानि दिक्षु प्रयजतु च भवेत् क्षुद्ररोगैर्विमुक्तः ॥५१॥ इति।

अस्यार्थः—आदौ षट्कोणं कृत्वा प्रणवं विलिख्य, तस्योदरे हूमिति वराहबीजं तत्र साध्यनाम चालिख्य, तस्य षट्सु कोणेषु स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन वक्ष्यमाणसुदर्शनषडक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरमालिख्य, षट्कोणसन्धिषु सुदर्शनष-ड्वर्णस्य षडङ्गमन्त्रानालिख्य, तद्बहिश्चतुर्दलकमलं कृत्वा तत्केसरेषु द्विर्द्विर्नारायणाष्टाक्षरमन्त्रार्णानालिख्य, वराहानुष्टुभ-

मन्त्रस्य वर्णांश्चतुष्पत्रेषु प्रतिपत्रमष्टावष्टावालिख्य, अन्तिमदलेऽन्त्यवर्णमालिख्य, तद्बहिरष्टदलकमलं कृत्वा तत्केसरस्थाने स्वरान् द्वन्द्वशो विलिख्य, अष्टदलेषु वराहमन्त्रवर्णांश्चतुरो२ विलिख्यान्त्यवर्णमन्त्यदले विलिख्य, (तद्बहिः षोडशदलं पद्मं विलिख्य, तत्केसरेषु द्विशः कादिसान्तान् वर्णानालिख्य, दलमध्येषु मूलमन्त्रार्णान् द्वन्द्वशः संलिख्य अन्तिमार्णमन्तिमदले विलिख्य), तद्बहिर्वृत्तचतुष्टयं कृत्वा वीथीत्रयं विरच्य, सर्वाभ्यन्तरवीथ्यां साध्याक्षरेण संपुटितप्रणवेन संवेष्ट्य, द्वितीयवीथ्यां ग्लौं इति धराबीजेन तथैव संवेष्ट्य, तृतीयवीथ्यां हूँ इति वराहबीजेन साध्यसंपुटितेन संवेष्ट्य, तद्बहिश्च पुनर्वृत्तं कृत्वा तद्वीथ्यां मूलमन्त्रार्णविदर्भितसाध्याख्ययावेष्ट्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा, तत्कोणेषु ग्लौं इति भूबीजं साध्याख्यागर्भितं विलिख्य, चतुरस्रस्थरेखाचतुष्काद्यष्टकेषु त्रिशूलाष्टकं कृत्वा, तेषु शूलेषु वराहबीजं वसुधाबीजं च लिखेत्, एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। श्रीकेरलीये यन्त्रसारे—

कर्णिकायां कोलगर्भं तारं साध्यसमन्वितम्। चक्रमन्त्रं कोणषट्के षडङ्गानि च सन्धिषु ॥१॥
अष्टपत्रे केसरोद्यदष्टार्णद्वयवर्णके। चतुरश्चतुरो वर्णान् कोलमन्त्रस्य चाष्टमे ॥२॥
पञ्च चालिख्य बाह्ये च पत्रे षोडशसंज्ञके। क्षेत्रस्येत्यादिसूक्तस्याप्यर्धमर्धमृचां लिखेत् ॥३॥
धरामन्त्रेण संवेष्ट्य बाह्ये मातृकयापि च। भूपुराश्रिषु भूबीजं दिक्षु हूँबीजमालिखेत् ॥४॥
क्षेत्रस्येत्यादिसूक्तस्य यन्त्रमेतच्छुभे दिने। ताम्रपट्टे समालिख्य स्वर्णसूच्या यथाविधि ॥५॥
स्थापितं भवने यद्वा क्षेत्रे वा नगरेऽपि वा। देशे वा तत्र वर्धन्ते दिनशः सर्वसंपदः ॥६॥
गजाश्वधेनुमहिषीवृषमेषखरादिभिः । धनधान्यधराध्यक्षवासोरत्नविभूषणैः ॥७॥
आह्लादयन्ती विभवैरन्यैश्च स्यात् सदा रमा। इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां षट्कोणमध्ये प्रणवोदरे ससाध्यं वाराहबीजं विलिख्य, षट्कोणेषु सुदर्शनषडर्णं, तत्सन्धिषु सुदर्शनमन्त्रस्य षडङ्गमन्त्रान्, अष्टदलकेसरेषु नारायणाष्टाक्षरस्य वक्ष्यमाणवाराहाष्टाक्षरस्य चैकैकमक्षरं, दलेषु वराहमन्त्रस्य चत्वारि चत्वार्यक्षराणि, सर्वान्त्यदले पञ्चाक्षराणि, तद्बहिःस्थषोडशदलेषु 'क्षेत्रस्य पतिना' इत्यादिसूक्तस्य ऋचामर्धमर्धं, बहिर्वृत्तत्रयान्तरालयोरभ्यन्तरान्तराले वेष्टनत्वेन च धरामन्त्रं, बाह्यान्तराले मातृकां, चतुरस्रकोणेषु भूबीजं, दिक्षु वराहबीजं च लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयामसि। गामश्वं पोषयित्वा स नो मृळातीदृशे ॥१॥ क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मिं धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व। मधुश्चुतं घृतमिव सुपूतमृतस्य नः पतयो मृळयन्तु॥२॥ मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्। क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान्नो अस्त्वरिष्यन्तो अन्वेनं चरेम॥३॥ शुनं वाहाः शुनं नरः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वरत्रा बध्यन्तां शुनमष्ट्रामुदिङ्गय॥४॥ शुनासीराविमां वाचं जुषेथां यद्दिवि चक्रथुः पयः। तेनेमामुप सिञ्चतम्॥५॥ अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा। यथा नः सुभगासपि यथा नः सुफलासपि॥६॥ इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषानु यच्छतु। सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समाम्॥७॥ शुनं नः फाला वि कृषन्तु भूमिं शुनं कीनाशा अभि यन्तु वाहैः। शुनं पर्जन्यो मधुना पयोभिः शुनासीरा शुनमस्मासु धत्तं ॥८॥ (४.५७)

क्षेत्रस्य पतिनेति सूक्तस्य। वामदेव ऋषिः। पुरउष्णिगनुष्टुप् त्रिष्टुभः छान्दांसि। क्षेत्रस्य पतिर्देवता।

पहले षट्कोण बनाकर उसके मध्य में ॐ लिखे। ॐ के उदर में वराहवीज 'ग्लौं' के साथ साध्यनाम लिखे। छः कोणों में अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से सुदर्शन मन्त्र 'सहस्रार हुं फट्' के एक-एक अक्षर को लिखे। षट्कोण की सन्धियों में सुदर्शन षड्वर्ण के षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर दलों के केसरों में नारायण के अष्टाक्षर 'ॐ नमो नारायणाय' मन्त्र के दो-दो अक्षरों को लिखे। वराह के अनुष्टुप् मन्त्र के आठ-आठ अक्षरों को चारों पत्रों में लिखे। अन्तिम दल में अन्तिम वर्ण लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसके केसर में दो स्वरों को लिखे। आठ दलों में वराह मन्त्र के चार-चार वर्णों को लिखे। अन्तिम वर्ण को अन्तिम दल में लिखे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर उनके केसरों में 'क' से 'स' तक के दो-दो वर्णों को लिखे। दलों के मध्य में मूल मन्त्र के दो-दो वर्णों को लिखे। उसके बाहर चार

वृत्त बनाकर उनसे बनी तीन वीथियों में से आभ्यन्तर पहली वीथि में प्रणव-सम्पुटित साध्य नाम के अक्षरों को लिखे। द्वितीय वीथि में धरा बीज 'ग्लौं' लिखकर वेष्टित करे। तीसरी वीथि में वराह बीज से सम्पुटित साध्य नाम वर्णों को लिखे। उसके बाहर फिर वृत्त बनाकर उसकी वीथि में मूल मन्त्र के वर्णों से विदर्भित साध्य नामाक्षरों को लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनाकर उसके कोणों में साध्य नामगर्भित भूबीज 'ग्लौं' लिखे। चतुरस्र के चारों कोणों के बाहर आठ रेखाओं से त्रिशूल बनाये। उन शूलों में वराहबीज और वसुधाबीज लिखे। लाह, कपूर, काला अगर, मलय चन्दन, गोरोचन, कुङ्कुम को पञ्चगव्य से पीसकर घोल बनावे। उस घोल से सोने के कलम से सोने के पत्र पर या चाँदीफलक पर यन्त्र लिखने से ग्रामसहित राज्य का लाभ होता है। ताम्र पत्र पर लिखने से सोना मिलता है। पिचु वृक्ष के पत्ते पर लिखने से इष्ट-प्राप्ति होती है। रेशमी वस्त्र पर लिखने से भूफल मिलता है। भोजपत्र पर लिखने से यात्रा होती है। मन्त्र जप कर यन्त्र पर घृत की धार गिराने से अपना सभी प्रकार का हित-साधन होता है। इस यन्त्र को बारह वर्षों तक धारण करे। अपने को वराह रूप का मानकर यन्त्र को साध्य क्षेत्र में गाड़ दे। वराह का ध्यान करके दिशाओं में अंगों की पूजा करे तो वह क्षुद्र रोगों से मुक्त हो जाता है।

केरलीय यन्त्रसार मे कहा गया है कि पहले षट्कोण बनाकर उसके बीच में 'ॐ' के उदर में साध्य नाम के साथ वराह बीज लिखे। छः कोणों में सुदर्शन षड्वर्ण लिखे। उसकी सन्धियों में सुदर्शन मन्त्र के षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर दलों के केसरों मे नारायण के अष्टाक्षर और वराह के अष्टाक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षरों को लिखे। दलो में वराह मन्त्र के चार-चार वर्णों को लिखे। अन्तिम दल में पाँच अक्षर लिखे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर दलों में 'क्षेत्रस्य पतिना' इत्यादि सूक्त की आधी-आधी ऋचाओं को लिखे। उसके तीन वृत्तों के दो अन्तरालों में से अन्दर से पहली वीथि में धरा मन्त्र लिखकर वेष्टित करे। वाह्य अन्तराल में मातृकाओं को लिखकर वेष्टित करे। चतुरस्र के कोणों में ग्लौं लिखे। पूर्वादि दिशाओं मे वराहबीज लिखे। क्षेत्रस्य पतिना इत्यादि सूक्तों के ऋषि वामदेव, छन्द उष्णिक्-अनुष्टुप् एवं त्रिष्टुप् तथा देवता क्षेत्रपति हैं।

वराहबीजवर्णनम्

वैखानसपञ्चरात्रे—

तिथिस्वरयुतं व्योम वामकर्णविभूषितम्। वराहबीजमुदितं सर्वसंपत्प्रदायकम्॥१॥

तिथिस्वरो बिन्दुः। व्योम हकारः। वामकर्णः ऊकारः। सारसंग्रहे—'हयग्रीव ऋषिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुप् च देवता। वराहो दीर्घयुक्तेन बीजेनैवाङ्गकल्पनम्। ध्यानपूजादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत्' इति। महासंमोहनतन्त्रे— 'नाभिर्वामश्रवः सर्गी तस्य बीजमिहोच्यते' इति। नाभिर्भकारः। वामश्रवः ऊकारः। सर्गो विसर्गस्तने भूः इत्युद्धृतम्। अस्य प्राग्वदेव करषडङ्गध्यानपूजादिकं ज्ञेयम्। यथा संप्रदाये जपः।

वराहबीज-वर्णन—वैखानस पञ्चरात्र के अनुसार वराहबीज 'हूं' है। सारसंग्रह के अनुसार इसके ऋषि हयग्रीव, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता वराह हैं। हां हीं हूं हैं हौं हः से अंगन्यास आदि किया जाता है। ध्यान पूजादि पूर्ववत् होते हैं। महासम्मोहनतन्त्र के अनुसार वराहबीज 'भू' है। इसका भी पूजा ध्यान न्यास आदि पूर्ववत् हैं। सम्प्रदायानुसार इसका जप किया जाता है।

वराहमन्त्रान्तरस्तत्प्रयोगविधिश्च

तथा—

अष्टाक्षरे महामन्त्रे वेदादिः प्रथमाक्षरम्। द्वितीयं व्याहृतिस्तस्माद्वराहाय हृदन्तता॥१॥

वेदादिः प्रणवः। व्याहृतिर्भूः। हृन्नमः।

ऋषिर्ब्रह्मा च जगती छन्दो वराह एव च। देवताङ्गानि च पदैः समस्तेन च कल्पयेत्॥२॥

कृष्णाङ्गं त्वतिनीलवक्त्रनलिनं पद्मस्थितं स्वाङ्कगक्षोणीशक्तिमुदारबाहुभिरथो शङ्खं गदामम्बुजम्। चक्रं विभ्रतमुग्रकान्तिमनिशं देवं वराहं भजे भूलक्ष्मीरतिकान्तिभिः परिवृतं चर्मासिसंदीप्तिभिः॥३॥

वामोर्ध्वमारभ्य दक्षिणोर्ध्वपर्यन्तमायुधध्यानम्। जपपूजादिकं सर्वमस्य वराहमन्त्रवदेव ज्ञेयम्। अथ प्रयोगः—तत्र मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे जगतीछन्दसे नमः। हृदये श्रीवराहदेवतायै नमः। इति विन्यस्य, ॐहृदयाय नमः। भूः शिरसे०। वराहाय शिखा०। नमः कवचं०। ॐभूर्वराहाय नमः अस्त्रं। इति पञ्चाङ्गं प्राग्वद्विन्यस्य ध्यानादि शेषं सर्वं प्रागुक्तवराहानुष्टुभविधिना कुर्यादिति।

एवं मनुं यः प्रजपेत् स भवेच्च धरापतिः। अन्ते विष्णोः परं नित्यं पदमाप्नोत्यसंशयः ॥४॥ इति।

सारसंग्रहे—

ध्रुवं नमः-पदं ब्रूयाद्भगवत्यै वदेत्ततः। धरण्यै-पदमुच्चार्य धरणि स्याद्धराधरे ॥१॥
एकोनविंशत्यर्णात्मा स्वाहान्तो मनुरीरितः। धराहृदयसंज्ञोऽयं भूपतित्वप्रदायकः ॥२॥

ध्रुवः प्रणवः। अन्यानि पदानि स्वरूपाणि। अत्र सन्धिस्तेन ॐ नमो भगवत्यै इत्यादि।

तथा—

ऋषिर्वराह आख्यातो निचृच्छन्दश्च देवता। पृथिवी सर्वजननी दृष्टादृष्टफलप्रदा ॥३॥
त्रिभिर्वेदैस्त्रिभिर्भूतैर्द्वाभ्यां द्वाभ्यां तथा भवेत्। मूलमन्त्रभवैर्वर्णैः षडङ्गानि सजातिभिः ॥४॥
इन्दीवरयुगं शालिमञ्जरीं दधती शुकम्। धरा पद्मासना ध्येया श्यामा तन्वी सुभूषिता ॥५॥

वामोर्ध्वादितदधोन्तमायुधध्यानम्।

पूजा तु वैष्णवे पीठे तद्विधानमुदीर्यते। आदावङ्गानि संपूज्य दिग्दलेषु ततो यजेत् ॥६॥
भुवं वह्निं जलं वायुं तत्कलाः कोणपत्रगाः। इन्द्रादीन् पूजयेद्बाह्ये वज्रादीनि ततः परम् ॥७॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वराहऋषये नमः। मुखे निचृच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीधरण्यै देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृजाञ्जलिरुक्त्वा, ॐनमः हृदयाय०। भगवत्यै शिरसे०। धरण्यै शिखा०। धरणि कवचं०। धराधरे नेत्रं०। स्वाहा अस्त्रं। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यानादियोगपीठ(कला)नवशक्तिपूजान्ते वैष्णवपीठमन्त्रस्थाने सौं वसुन्धराय योगपीठाय नमः' इति पीठं संपूज्यावाहनाद्यङ्गार्चान्ते दिग्दलेषु—भुवे नमः। वह्नये०। जलाय०। वायवे०। विदिग्दलेषु—निवृत्त्यै नमः। विद्यायै०। प्रतिष्ठायै०। शान्त्यै०। इति संपूज्येन्द्राद्यर्चादिकं प्राग्वत् कुर्यादिति।

तथा—

दशायुतं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः। हविषा घृतसिक्तेन तर्पयेदभिषेचयेत् ॥८॥
ब्राह्माणान् भोजयेत् पश्चान्मन्त्री मन्त्रस्य सिद्धये। विधिनानेन संसिद्धे मनौ काम्यानि साधयेत् ॥९॥
रक्तोत्पलानि जुहुयात् स्वाद्वक्तानि सहस्रकम्। भुवमिष्टामवाप्नोति नीलोत्पलहुतात् तथा ॥१०॥
प्रियङ्गुपुष्पहोमेन मधुराक्तेन मन्त्रवित्। वसुधान्यधराश्री(स्त्री)णां सत्यं भवति भाजनम् ॥११॥
मधुरार्द्रतरां हुत्वा नूतनां शालिमञ्जरीम्। धरापतिर्भवेन्मन्त्री मण्डलेन न संशयः ॥१२॥
प्रातर्भृगुदिने मन्त्री साध्यक्षेत्रान्मृदं हरेत्। शुद्धतोये समालोड्य तां च तत्र पचेच्चरुम् ॥१३॥
अग्नौ दुग्धघृताभ्यक्तं जुहुयात् तद्यथाविधि। मासषट्कं भृगोवरिष्वेवं कृत्वा लभेद्धराम् ॥१४॥

वाराहं भजति मनुं युतं धराया मन्त्रेण प्रजपहुतार्चनादिभिर्यः।
तस्य द्राक् सकलमहीपतित्वमुच्चैरैश्वर्यं भवति च धान्यवीर्यवृद्धिः ॥१५॥ इति।

श्रीयन्त्रसारे—

मध्ये तारं वसुपुरयुगाश्रिष्वथो कोलबीजं पत्रेष्वष्टस्वपि गुणमितान् मन्त्रवर्णान् क्रमेण।
आवेष्ट्यार्णैः किटिमनुभवैर्मातृकार्णैश्च यन्त्रं भूगेहस्थं वितरति धरास्वर्णधान्यादिकानि ॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टकोणगर्भमष्टदलं पद्मं कृत्वाष्टकोणमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्याष्टकोणेषु वाराहबीजं विलिख्याष्टदलेषु धरामन्त्रस्य प्रणवविधुराणि त्रीणि तीण्यक्षराणि विलिख्य, बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वाभ्यन्तरवीथ्यां पूर्वोक्तवराहमन्त्रार्णान् विलिख्य, बाह्यवीथीं मातृकावर्णैः संवेष्ट्य बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्, एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। श्रीयन्त्रसारे धरामन्त्रविशेष उक्तः। यथा—'हृदयं भगवत्यै च धरण्यै च धरण्यथ। धरे द्वयं वह्निवधूर्मन्त्रः प्रोक्तोऽखिलार्थदः। तारमायाधराबीजैः पुटितस्तत्त्ववर्णकः' इति। माया ह्रीं। धरा ग्लौं। प्रणवानन्तरं बीजद्वयं, पश्चादुक्तमन्त्रः। पुनर्वैपरीत्येन वीजद्वयम् अन्ते प्रणवः। तत्त्ववर्णश्चतुर्विंशत्यर्णः।

अन्य वराह मन्त्र—वराह का एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ भूः वराहाय नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द जगती एवं देवता वराह हैं। मन्त्र के चार पदों ॐ, भूः, वराहाय, नमः और पूरे मन्त्र से इसका पञ्चाङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

कृष्णाङ्गं त्वतिनीलवक्त्रनलिनं पद्मस्थितं स्वाङ्कगक्षोणीशक्तिमुदारबाहुभिरथो शङ्खं गदामम्बुजम्।
चक्रं विभ्रतमुग्रकान्तिमनिशं देवं वराहं भजे भूलक्ष्मीरतिकान्तिभिः परिवृतं चर्मासिसंदीप्तिभिः।।

इसके जप-पूजादि भी वराह मन्त्र के समान ही होते हैं। मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्राह्मणे ऋषये नमः, मुखे जगती छन्दसे नमः, हृदये श्रीवराहदेवतायै नमः। अंग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ हृदयाय नमः, भूः शिरसे स्वाहा, वराहाय शिखायै वषट्, नमः कवचाय हुम्, ॐ भूर्वराहाय नमः अस्त्राय फट्। विधियाँ शेष पूर्वोक्त वराह अनुष्टुप् के समान होती हैं। इस मन्त्र का जो जप करता है वह भूपति होता है और अन्त में विष्णु का परम पद प्राप्त करता है।

वराह का अन्य मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि वराह का उन्तीस अक्षरों का धराहृदय मन्त्र है—ॐ नमो भगवत्यै धरण्यै धरणिधराधरे स्वाहा। यह धराहृदय नामक मन्त्र भूपतित्व-प्रदायक है। इसके ऋषि वराह, छन्द निचृद् और देवता दृष्ट एवं अदृष्ट फलों को देने वाली धरा है। मूल मन्त्र के ३,७,३,२,२,२ अक्षरों से इसका षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

इन्दीवरयुगं शालिमञ्जरीं दधती शुकम्। धरा पद्मासना ध्येया श्यामा तन्वी सुभूषिता।।

अब वैष्णव पीठ पर इसकी पूजा का विधान कहा जा रहा है। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋत्यादि न्यास करे—शिरसि वराह ऋषये नमः। मुखे निचृच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीधरण्यै देवतायै नमः। तदनन्तर समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ नमः हृदयाय नमः। भगवत्यै शिरसे स्वाहा, धरण्यै शिखायै वषट्। धरणि कवचाय हुम्, धराधरे नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास एवं षडङ्ग न्यास करके कमलद्वय एवं शालिमञ्जरी को धारण करने वाली, पद्मासन पर आसीन, आभूषणों से भूषित श्यामवर्णा धरा का ध्यान कर मानस पूजा आदि करके योग पीठ की नव शक्तियों की पूजा के बाद वैष्णव पीठ पर मन्त्र स्थान में 'सौं वसुन्धराय योगपीठाय नमः' से पीठपूजा करके आवाहनादि अंगपूजा करने के उपरान्त अष्टदल कमल में भुवे नमः, वह्नये नमः, जलाय नमः, वायवे नमः से पूर्वादि दलों में पूजा के बाद कोण दलों में निवृत्त्यै नमः, विद्यायै नमः, प्रतिष्ठायै नमः, शान्त्यै नमः आदि से पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि की पूजा पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन घृतसिक्त हविष्य से करे। तर्पण-मार्जन करे। मन्त्रसिद्धि के लिये ब्राह्मणों को भोजन कराये। सिद्ध मन्त्र से विधिवत् मनोकामना का साधन करे। त्रिस्वाद-सिक्त लाल कमल से एक हजार हवन करे तो इच्छित भूमि प्राप्त होती है। नीले कमल के हवन से भी यही फल होता है। मधुराक्त प्रियङ्गु के फूलों से हवन करने पर आठ प्रकार के अन्न, धरा, स्त्री प्राप्त होती है। यह सत्य है। मधुर से सिक्त नवीन शालिमञ्जरी के हवन से साधक चालीस दिनों में जमीन का स्वामी हो जाता है। शुक्रवार को प्रातः साध्य क्षेत्र की मिट्टी लाकर उसे शुद्ध जल में मिलाकर उससे खीर बनावे। उसमें दूध और घी मिलाकर यथाविधि अग्नि में हवन करे। छः महीनों तक प्रत्येक शुक्रवार को ऐसा करने से भूमि

प्राप्त होती है। धरायुक्त वराह मन्त्र का जो जप-हवन-अर्चन से उपासना करता है, उसे सकल महीपतित्व एवं उच्च ऐश्वर्य प्राप्त होता है तथा उसके धान्य एवं वीर्य की वृद्धि होती है।

श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि पहले अष्टकोण बनाकर उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। अष्टकोण के मध्य में साध्य नाम के साथ ॐ लिखे। अष्टकोण में वराह के अष्टाक्षर मन्त्र के अक्षरों को प्रत्येक कोण में लिखे। अष्टदल में धरामन्त्र के ॐ को छोड़कर तीन-तीन अक्षरों को लिखे। इसके बाहर तीन वृत्त बनाकर आभ्यन्तर वीथि में पूर्वोक्त वराह मन्त्र के वर्णों को लिखे। बाह्य वीथि में मातृका वर्णों को लिखकर वेष्टित करे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। इस मन्त्र से धरा, सोना, धान्य की प्राप्ति होती है। श्रीयन्त्रसार धरा का इस प्रकार कहा गया है—'ॐ ह्रीं ग्लौं नमो भगवत्यै धरण्यै धरणिधरे धरे स्वाहा ग्लौं ह्रीं ॐ। चौबीस अक्षरों का यह मन्त्र सर्वार्थदायक है।

सुदर्शनमन्त्रकथनम्

सारसंग्रहे—

अथ सम्यक् प्रवक्ष्यामि सुदर्शनमनूत्तमम्। येन सिध्यन्ति सकलाः साधकानां मनोरथाः ॥१॥
यात् सप्तमं तदन्त्यं च भृग्वग्नी दीर्घसंयुतौ। यान्त्यं व्योम दक्षकर्णयुक् पान्त्यं केवलश्च टः ॥२॥
वेदाद्याद्यश्चक्रमन्त्रः सप्तवर्ण उदाहृतः।

यात् सप्तमं सकारः। तदन्त्यं हकारः। भृगुः सकारः अग्नी रेफः। दीर्घ आकारः, तेन स्रा। यान्त्यं रेफः। व्योम हकारः, अं अनुस्वारः, दक्षकर्ण उकारः, तेन हुं। पान्त्यं फकारः। केवलः टः, विस्वरः। वेदाद्याद्यः प्रणवाद्यः।

तथा—

ऋषिः प्रोक्तो ह्यहिर्बुन्ध्योऽनुष्टुप् छन्दश्च देवता। सुदर्शनात्मा च महाविष्णुर्मुनिभिरीरितः ॥३॥
चक्रायान्तैराविसुधीसज्वालाशब्दकैः पृथक्। षडङ्गमनवो ह्यस्य जातियुक्ता द्विठान्तकाः ॥४॥
ऐन्द्र्याद्यधोर्ध्वक्रमशश्चक्रेणेति ततो वदेत्। वदेद्बध्नामि हृदयं ङेन्तं चक्रपदं शिरः ॥५॥
दिशामपि दशानां स्याद्बन्ध्योऽनेनाणुनात्र च। त्रैलोक्यं प्रणवाद्यं च रक्षयुग्मं तनुत्रकम् ॥६॥
अस्त्रशीर्षयुतो मन्त्रो ह्यग्निप्राकारसंज्ञकः। अनेन मनुना स्वस्य परितोऽग्निमयं बुधः ॥७॥
प्राकारं परिकल्प्याथ न्यासानन्यान् समाचरेत्। शुभ्रारक्तासिताभं तु प्रणवं शिरसि न्यसेत् ॥८॥
भ्रूमध्याननहृद्गुह्यजानुपद्द्वन्द्वसन्धिषु। इतरान्वह्नितुल्याभान् वर्णान्मन्त्री प्रविन्यसेत् ॥९॥

दिग्बन्धादिमन्त्राः प्रयोगे एव स्पष्टीक्रियन्ते। पद् द्वन्द्वसन्धिर्गुल्फः। 'जानुगुह्येषु विन्यसेत्' इति कपिलवचनात्।

रथाङ्गदरसद्गदाब्जमुसलं धनुःपाशकौ सृणिं दधतमर्कसप्रभरुचिं कराम्भोरुहैः।
स्वदेहरुचिभिर्जगन्मनसि भासयन्तं स्मरेद् हरिं रथपदाह्वयं विकटभीमदंष्ट्राननम् ॥१०॥

रथाङ्गं चक्रं। दरः शङ्खः। सृणिरङ्कुशः। दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये, तदाद्यधःस्थयोरन्ये, तदाद्यधःस्थयोरपरे, तदाद्यधः-स्थयोरितरे, इत्यायुधध्यानम्।

तथा—

पूजयेद्वैष्णवे पीठे गन्धपुष्पादिभिस्ततः। मूलेन मूर्तिं संकल्प्य तत्रावाह्य च पूर्ववत् ॥११॥
अङ्गानि चक्राद्यस्त्राणि लक्ष्म्याद्या लोकपालकान्। तदायुधानि च यजेत् क्रमाद् देशिकसत्तमः ॥१२॥
रथाङ्गं च दरश्चैव गदाब्जे मुसलं तथा। धनुः पाशाङ्कुशौ प्रोक्ताः पीतरक्तसितासिताः ॥१३॥
द्विशश्च शक्तयोऽभ्यर्च्या विष्णुसांनिध्यकारिकाः। दर्शयेच्चक्रगायत्र्या ततो मुद्रां च मन्त्रवित् ॥१४॥

मुद्रां चक्राराच्चक्रमुद्राम्।

सुदर्शनाय विवदेत्ततश्च विद्महे महा। ज्वालाय धीमहि ततस्तन्नश्चक्रं प्रचोदयात् ॥१५॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि अहिर्बुध्न्याय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये श्रीसुदर्शनाय महाविष्णवे देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममेष्टार्थे जपे विनियोगः। इति प्राग्वदुक्त्वा, आचक्राय स्वाहा हृदयाय०। विचक्राय स्वाहा शिरसे०। सुचक्राय स्वाहा शिखा०। धीचक्राय स्वाहा कवच०। सचक्राय स्वाहा० नेत्र०। ज्वालाचक्राय स्वाहा अस्त्रम्० इति मन्त्रैः करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ऐंद्रीं चक्रेण बध्नामि नमश्चकाय स्वाहा। आग्नेयीं चक्रेण बध्नामि नमश्चक्राय स्वाहा। इत्यादियुक्त्या दशदिग्बन्धनं दक्षकरतर्जन्यङ्गुष्ठोत्थशब्देन विधाय, ॐ त्रैलोक्यं रक्ष २ हुं फट् स्वाहा, इति मन्त्रेण प्राग्वदग्निप्राकारं कृत्वा, शिरसि ॐनमः। भ्रूमध्ये सं नमः। मुखे हं नमः। हृदि स्रां नमः। गुह्ये रं नमः। जानुनोः हुं नमः। गुल्फयोः फट् नमः। इति विन्यस्य ध्यानादिप्राणप्रतिष्ठान्ते वैष्णवमुद्राः प्रदर्श्य, 'ॐसुदर्शनाय विद्महे महाज्वालाय धीमहि तन्नश्चक्रं प्रचोदयात्' इति गायत्र्या पुनश्चक्रमुद्रां प्रदर्श्यासनाद्यङ्गार्चान्तेऽष्टदलेषु—चक्राय नमः। शङ्खाय०। गदायै०। पद्माय०। मुसलाय०। धनुषे०। पाशाय०। अङ्कुशाय० इति संपूज्य, दलाग्रेषु हयग्रीवपूजोक्तलक्ष्म्याद्यष्टशक्तीः संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति।

तथा—

जपेद् द्वादशलक्षं तु तत्सहस्रं हुनेत् तिलैः। सर्षपैर्बिल्वदोग्धान्नयुतैर्मन्त्री यथाविधि ॥१६॥

बिल्वैर्बिल्वपत्रैः। 'सर्षपैर्बिल्वपत्रैश्च' इति प्रयोगसारवचनात्। एकैकद्रव्यैश्चतुःशताधिकसहस्रसंख्याको होमः। तिलादिद्रव्यचतुष्टये त्रिमधुयोगः कार्यः। 'त्रिमधुसंयुतैः' इति प्रयोगसारात्।

तथा—

तर्पणादि ततः कृत्वा कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम्। सिद्ध मनौ विदध्याच्च प्रयोगानिष्टदायकान्॥१७॥

सुदर्शन मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब मैं उत्तम सुदर्शन मन्त्र कहता हूँ, जिससे साधक के सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं। मन्त्र है—ॐ सहस्रार हूं फट्। इस सप्ताक्षर मन्त्र के ऋषि अहिर्बुध्न्य, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता सुदर्शनात्मा महाविष्णु हैं।

प्रातःकृत्यादि से योग पीठन्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अहिर्बुध्न्याय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्री सुदर्शनाय महाविष्णवे देवतायै नमः। तदनन्तर सर्वाभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। धीचक्राय स्वाहा कवचाय हुम्, सचक्राय स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् ज्वाला चक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे।

तदनन्तर ऐन्द्रीं चक्रेण बध्नामि नमः चक्राय स्वाहा। आग्नेयीं चक्रेण बध्नामि नमस्चक्राय स्वाहा० इत्यादि मन्त्रों से दशो दिशाओं को अग्नि की चहारदिवारी से वेष्टित करे। दाहिने हाथ के अंगूठे और तर्जनी को मिलाकर चुटकी बजाये। इसके बाद ॐ त्रैलोक्यं रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा मन्त्र से पूर्ववत् अपने चारो ओर अग्निप्राकार बनाकर इस प्रकार मन्त्रवर्ण न्यास करे—शिर पर ॐ नमः, भ्रूमध्य में सं नमः, मुख में हं नमः, हृदय में स्रां नमः। गुह्य में रं नमः, जानुओं में: हुं नमः, गुल्फों में फट् नमः। इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् प्राण-प्रतिष्ठा करे। वैष्णव मुद्रा दिखावे। तब 'ॐ सुदर्शनाय विद्महे महाज्वालाय धीमहि तन्नश्चक्रं प्रचोदयात्'—तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

रथाङ्गदरसद्गदाब्जमुसलं धनुःपाशकौ सृणिं दधतमर्कसप्रभरुचिं कराम्भोरुहैः।
स्वदेहरुचिभिर्जगन्मनसि भासयन्तं स्मरेद् हरिं रथपदाह्वयं विकटभीमदंष्ट्राननम्।।

इस गायत्री मन्त्र से फिर चक्र मुद्रा दिखावे। अंगों की पूजा करे। अष्टदल पद्म के दलों में चक्राय नमः, शङ्खाय नमः, गदायै नमः, पद्माय नमः, मुसलाय नमः, धनुषे नमः, पाशाय नमः, अंकुशाय से पूजा करके दलों के अग्रभाग में हयग्रीवोक्त लक्ष्मी आदि आठ शक्तियों की पूजा करे। लोकेशों की पूजा करे। शेष सब पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

पूजन के बाद बारह लाख मन्त्र-जप करे एवं बारह हजार हवन तिल सरसों बेल पत्र दोग्धान्न मिलाकर यथाविधि करे। एक-एक द्रव्य से अलग-अलग हवन चौदह-चौदह सौ करे। तिलादि द्रव्यचतुष्टय में त्रिमधुर मिलाकर हवन करे। इसके बाद तर्पण मार्जन ब्राह्मण भोजन कराकर सिद्ध मन्त्र से इष्टदायक प्रयोगों को करे।

सुदर्शनयन्त्ररचनार्चनादि

चक्रयुग्मं लिखेन्मन्त्री सौम्ययाम्यगतं क्रमात्। आलिखेत् प्रणवं मध्ये षट्कोणेष्वणुवर्णकान् ॥१८॥
चक्रयुग्मं षट्कोणद्वयम्।

पीताभां कर्णिकां कुर्याद्रक्तारं श्याममन्तरम्। सितां नेमिं शिखिशिखापरीतं पार्थिवावृतम् ॥१९॥
तत्र सौम्ये च कलशं शोणाम्भ:पूर्णमत्र च। चक्राह्वयं समावाह्य हरिं सम्यक् प्रपूज्य च ॥२०॥
याम्ये कुर्याद्धोमकर्म षट्त्रिंशच्छतसंमितैः। आज्यापामार्गकसमिदक्षताराजिकातिलैः ॥२१॥
हविषा पञ्चगव्यैश्च हुनेदाज्यप्लुतैः क्रमात्। प्रतिद्रव्यस्य संपातान् कुम्भतोये विनिक्षिपेत् ॥२२॥
(प्रस्थार्धान्नकृतं पिण्डं सम्यक् कुम्भोदके सुधीः। याम्याशायामुपावेश्य साध्यं नीराज्य तत्र च ॥२३॥
सद्रव्यं तं घटमाराद्राशावष्टमके क्षिपेत्।) तत्सामग्र्यादिकमपि क्षिपेत् तद्दक्षभागके ॥२४॥
ततो बलिं हरेद्धीमान् हुतशिष्टान्नकेन च। मन्त्रेणानेन हृदयं पठेद्विष्णुगणे ततः ॥२५॥
वदेद्भ्योऽन्ते सर्वशान्तिकरेभ्योऽन्ते बलिं हरेत्। प्रतिगृह्णन्तु शान्त्यै च हृदयं तदनन्तरम् ॥२६॥
विप्रान् संभोज्य गुरवे दक्षिणां च प्रकल्पयेत्। ज्वरादिरोगसंघातान् प्रयोगोऽयं विनाशयेत् ॥२७॥
अपस्माररुजं चैव पिशाचग्रहवैकृतम्। रक्षोभूतादिपीडां च नाशयेन्मङ्क्ष्वयं विधिः ॥२८॥ इति।

अस्यार्थः—सुशुभे स्थाने गोमयोपलिप्ते दक्षिणोत्तरविभागेन हस्तान्तराले षट्कोणद्वयं वृत्तवेष्टितं बहिश्चतुरस्रावृतं च कृत्वा, तन्मध्यं दीक्षोक्तपीतरजसापूर्य षट्कोणोदरं रक्तेनापूर्य, तदन्तरालषट्कं श्यामरजसापूर्य रेखाः सर्वाश्च तेनापूर्य, तन्मध्ये प्रणवं विलिख्य, स्वाग्रादिषट्कोणके मूलमन्त्रस्य द्वितीयार्णादिवर्णषट्कं विलिख्य, (तत्रोत्तरदिग्गतचक्रे कुङ्कुमादिमिश्ररक्तजलपूर्णं कुम्भं दीक्षाविधानोक्तप्रकारेण संस्थाप्य) तत्र पीठपूजापुरःसरं सुदर्शनं सम्यगावाह्य, पञ्चोपचारकैः साङ्गावरणं संपूज्य, दक्षिणदिग्गतचक्रे दीक्षोक्तविधानेन नित्यहोमोक्तविधिना वा वैष्णवाग्निं संस्थाप्य प्रोक्तद्रव्यैः प्रतिद्रव्यं हुतशेषं (षट्त्रिंशदधिकं शतं प्रत्याहुति प्रतिद्रव्यं) स्रुवलग्नं कुम्भतोये संपातयञ्जुहुयात्। ततो होमं समाप्य कुम्भे पिण्डं प्रस्थार्धान्नकृतं निधाय, साध्यं स्वदक्षभागे समुपवेश्य तं कुम्भमुद्धृत्य साध्यस्योपरि त्रिःपरिभ्राम्योक्तस्थाने दूरे तं घटं निक्षिप्य, सामग्र्यादि सर्वं तद् दक्षभागे निक्षिप्य, हुतशिष्टान्नेन 'नमो विष्णुगणेभ्यः सर्वशान्तिकरेभ्यो बलिं प्रतिगृह्णन्तु शान्त्यै नमः' इति बलिं दत्त्वा स्वगृहमागच्छेत्। ततो यजमानो ब्राह्मणानन्नादिभिः परितोष्य स्वगुरुं प्रयोगकर्तारं गोभूहिरण्यवस्त्रादिभिः सम्यक् परितोषयेदुक्तफलभाग् भवेत्।

तथा—

स्तनजद्रुमसंभूतैः फलकैः पञ्जरं शुभम्। कृत्वा मन्त्री पञ्चगव्यैः पूरयेत् साध्यमत्र च ॥२९॥
निवेशयेच्छुद्धवस्त्रं शुद्धाङ्गं तं स्पृशञ्जपेत्। मनुं कृशानुं वह्न्यादिदिक्षु संस्थाप्य मन्त्रवित् ॥३०॥
विप्रवर्य्यैः कारयित्वा होमं पूर्वोदितैः क्रमात्। द्रव्यैस्तांस्तोषयेद्विप्रान् यजमानो गुरुं तथा ॥३१॥
धनधान्यादिकैर्नत्वा सन्तोष्य प्रीणयेत् तथा। एष योगः सर्वरोगापमृत्युद्रोहनाशकः ॥३२॥
गव्यैः समस्तैः क्षीरद्रुचर्मोत्थैश्च कषायकैः। एभिः संपूरितैः कुम्भैर्जप्तैः संपातसंयुतैः ॥३३॥
साध्यं ग्रहाविष्टमनेन सिञ्चेदुग्राभिचारातुरमुग्रपीडम्।
स्वस्थो भवेत् तेन नरोऽतिमङ्क्षु भानोर्दिने साधु सुसाधितैस्तैः ॥३४॥

सुदर्शन यन्त्र—शुभ स्थान को गोबर से लीपकर उस पर एक हाथ दूरी पर दक्षिण-उत्तर में एक-एक मण्डल बनावे।

पहले षट्कोण बनाकर उसके बाहर वृत्त बनावे और उसके बाहर चतुरस्र बनावे। उनके मध्य को पीले चूर्ण से भरे। षट्कोण के उदर को लाल चर्ण से भरे। उसके छः अन्तराल को काले चूर्ण से भरे। सभी रेखाओं को काले चूर्ण से भरकर उनके मध्य में ॐ लिखे। षट्कोणों में अपने आगे से मूल मन्त्र के 'सहस्रार हूं फट्' के एक-एक अक्षर को लिखे। उत्तर में स्थित चक्र में घड़ा रखकर उसमें कुंकुम मिलाकर लाल जल भरकर उसे दीक्षाविधान से स्थापित करे। उसमें पीठपूजा के बाद सुदर्शन का आवाहन करे। अंग-आवरणसहित पञ्चोपचार पूजा करे। दक्षिण में अंकित चक्र में दीक्षोक्त विधान से अथवा नित्य हवन विधि से वैष्णवाग्नि की स्थापना करके हवन करे। हवनीय द्रव्य में आज्य, अपामार्ग की समिधा, राई, तिल को पञ्चगव्य एवं आज्य से प्लुत करके प्रत्येक से एक सौ छत्तीस एक सौ छत्तीस बार हवन करे। प्रति द्रव्य के स्रुवलग्न हुतशेष को कुम्भ मे टपकावे। हवन-समापन के बाद आधा प्रस्थ अन्न पिण्ड कुम्भ के जल में मिलावे। साध्य को अपने दाहिने भाग में बिठाकर हाथों में कुम्भ उठाकर साध्य के ऊपर तीन बार घुमाकर कुछ दूरी पर रखे। सामग्रियों को उसके दाहिने भाग में रखे। हुत शिष्ट अन्न से—'नमो विष्णुगणेभ्यः सर्वशान्तिकरेभ्यो बलिं गृह्णन्तु शान्त्यै नमः' कहकर बलि प्रदान करे। तब घर पर आकर यजमान ब्राह्मणों को अन्नादि से सन्तुष्ट करे। अपने गुरु और प्रयोगकर्ताओं को गाय, सोना, वस्त्रादि देकर सन्तुष्ट करे। इससे ज्वरादि रोगसमूह का नाश होता है एवं अपस्मार, रोग, पिशाच, ग्रह, पीड़ा, राक्षस, भूत आदि की पीड़ा का नाश होता है।

दूध वाले वृक्ष की लकड़ी के पटरे पर साध्य का पञ्जर बनाकर उसे पञ्चगव्य से भरे। उसे सुन्दर वस्त्र पहनाकर उसके शुद्ध अङ्ग का स्पर्श किए हुए मन्त्र का जप करे। अग्निकोण में अग्नि स्थापित करके मन्त्रज्ञ विप्रवरों से पूर्वोक्त क्रम के द्रव्यों से हवन करवाये। यजमान ब्राह्मणों और गुरु को धन-धान्य देकर प्रणाम करके सन्तुष्ट करे। यह विधान सभी रोगों और अपमृत्यु द्रोह का नाशक है।

दूध वाले वृक्ष की छाल को पञ्चगव्य में डालकर काढ़ा बनावे। इसे कुम्भ में डालकर उसमें घी के बूँद डाले और उसे स्पर्श करके मन्त्र का जप करे। ग्रहाविष्ट साध्य को इससे स्नान करावे तो अभिचारजनित उग्र पीड़ा नष्ट होती है। रोगी स्वस्थ हो जाता है। यह प्रयोग रविवार को साधित करे।

योषां संस्नापयेत् तैश्च सुखेन प्रसवो भवेत्। घृतपक्वं पञ्चगव्ये संजप्तममुनाणुना ॥३५॥
ग्रहपीडानिरुद्धानां गर्भिणीनां हितावहम्। मनुं जपेद् दशशतं पञ्चगव्यं स्पृशन् सुधीः ॥३६॥
पद्मपत्रे ब्रह्मवृक्षपत्रे बिल्वफलेऽपि वा। तन्न्यस्य तत्स्वीयगृहे निखनेच्च परस्य वा ॥३७॥
रक्षा भवति तद्गेहे संपद्वृद्धिश्च जायते। पलाशस्तनजद्रुत्वक्चन्दनं गुग्गुलं तथा ॥३८॥
घुसृणं च हरिद्रा च रोचना बिल्वराजिका। अपामार्गतिलादूर्वा विष्णुक्रान्ता तुलस्यपि ॥३९॥
कृष्णा च तुलसी प्रोक्ता यवोऽर्कद्रुम एव च। सहदेवी तथा लक्ष्मीकुशागोमयसद्वचाः ॥४०॥
कमलं रोचना पञ्चगव्ये संक्वाथयेन्मुहुः। सिद्धेऽग्नौ भस्म यावत् स्यादेतत् सर्वेष्टदायकम् ॥४१॥

सिद्धे संस्कृते।

संजप्तं मनुनानेन सम्यक् च शिरसा धृतम्। सर्वभूतग्रहव्याधिकृत्यादुःखादिवारणम् ॥४२॥
द्रोहोन्मादरिपुत्राससर्वपापहरं मतम्। आपन्नाशकमेतत् स्यात् वश्यदं शिवदं परम् ॥४३॥
फलत्रययुतैः कल्कैः पञ्चगव्ये पचेद् घृतम्। प्रस्थं च कल्कद्रव्याणि घनं शुण्ठी निशा तथा ॥४४॥

घनं मुस्ता।

चित्रकैलामधोर्यष्टिर्वचा पाठा वृषा तथा। मार्द्वीका च बिडङ्गं च मञ्जिष्ठा दारुरोहिणी ॥४५॥
मनुना तेन संजप्तं वन्ध्यापुत्रप्रदायकम्। भूतप्रेतपिशाचादिभयघ्नं नात्र संशयः ॥४६॥
पञ्चगव्याज्यमेतत् स्याद्गर्भरक्षाकरं परम्। गुटिकां च पुरोः कृत्वा सहस्राष्टं हुनेत् ततः ॥४७॥

पुरोः गुग्गुलोः।

दिवसत्रितयं वापि चतुर्दिवसमेव च। भवेत् सर्वोपद्रवाणां नाशो मङ्क्षु गदस्य च ॥४८॥
अपामार्गसमिद्भिश्च हुनेदयुतसंख्यया। भूतज्वरभयव्याधिकृत्यापस्मारनाशनम् ॥४९॥
घृताक्तैः कमलैर्हुत्वा श्रीवृद्धिं लभते नरः। आज्याक्ताभिश्च दूर्वाभिर्होमो दीर्घायुषे भवेत् ॥५०॥
पलाशभूरुट्समिद्भिर्मेधावृद्धिर्भवेत् किल। वस्त्रार्थी श्वेतकुमुदैराज्याक्तैर्जुहुयान्नरः ॥५१॥
पशूनामृद्धिमृच्छेत स हुनेत् केवलं घृतैः। उदुम्बरसमिद्धोमात् पुत्रलाभो भवत्यलम् ॥५२॥
अष्टोत्तरसहस्रं च हुनेदश्वत्थजैस्तथा। समिद्भिरेकवर्षं मुक्तयेऽयं विधिः स्मृतः ॥५३॥
चक्रमध्यस्थितं स्वं च चिन्तयंश्च मनुं जपेत्। एकोऽपि दुर्जयो युद्धे मर्त्यो भवति मन्त्रवित् ॥५४॥
कल्पान्ताग्निनिभं चक्रं वैरिणो यस्य मूर्धनि। स्मरेत् सप्तदिनं तस्य ज्वलनप्रतिमो ज्वरः ॥५५॥
भवेत् त्रिंशद्दिनैश्चात्र प्राप्नोति मरणं ध्रुवम्। सकारं स्वरसंवीतं याहीतिपदवेष्टितम् ॥५६॥
संस्मरेद्यस्य शीर्षेऽथ तस्योच्चाटो दशाहतः। मण्ढलान्मरणं याति शान्तं काकनिभं रिपोः ॥५७॥
मूर्ध्नि स्मरेच्च सप्ताहादुच्चाटो वा मृतिर्भवेत्। शरच्छशाङ्कप्रतिमं सुधाधाराभिवर्षणम् ॥५८॥
सकारं संस्मरेन्मूर्ध्नि स जीवेच्छरदां शतम्। वह्निगेहयुगे आद्या(टान्ता)न् सप्त मध्ये षडश्रिषु ॥५९॥
मन्त्रार्णानथ तेष्वेव लिखेद्यन्त्रमिदं शुभम्। आपन्निवारणं सम्यग् भूतप्रेतभयापहम् ॥६०॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं विलिख्य तन्मध्ये षट्कोणेष्वपि ठकारमालिख्य तेषु ठकारेषु मन्त्रार्णानेकैकशो विलिखेत् मध्ये साध्यनाम चेति संप्रदायः। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

गर्भवती स्त्री को उपर्युक्त कुम्भ के जल से स्नान कराने पर सुखपूर्वक प्रसव होता है। पञ्चगव्य में पके घी को इस मन्त्र से मन्त्रित करके ग्रहों से पीड़ित और गर्भवतियों को दे तो हितकारक होता है। पञ्चगव्य को स्पर्श करके एक हजार मन्त्र-जप करके उसे कमल के पत्ते पर या पलाश के पत्ते पर या बेल के फल पर रखकर अपने घर में या दूसरे के घर में गाड़ने से उस घर की रक्षा होती है और सम्पत्ति की वृद्धि होती है। पलाश के दूध और छाल, चन्दन, गुग्गुल, घुसृण, हल्दी, राई, गोरोचन, बेल, अपामार्ग, तिल, दूब, विष्णुकान्ता, तुलसी, कृष्ण तुलसी, यव, अकवन, सहदेई, लक्ष्मी, कुश, गोबर, वच, कमल, रोचन को पञ्चगव्य में मिलाकर क्वाथ बनावे। उसे तब तक पकावे, जब तक सब सूख कर भस्ममात्र न रह जाय। यह भस्म सभी अभीष्टों को पूरा करने वाला होता है। इस भस्म को इस मन्त्र से मन्त्रित करके शिर पर धारण करने से सभी भूत-ग्रह-व्याधि-कृत्या-दुःखों आदि का निवारण होता है। द्रोह, उन्माद, शत्रुभय और सभी पापों का नाश होता है। यह आपत्ति का नाशक, वश्यकर और हितकर है। आँवल हर्रे बहेरा के कल्क को पञ्चगव्य में पकावे। एक प्रस्थ घी, कल्क द्रव्य, मुस्ता, सोठ, हल्दी, चित्रक, इलायची, मधुयष्टि, वच, पाठा, वृषा, मार्द्वीका, विडङ्ग, मजीठ, दारु, रोहिणी को मिलाकर मन्त्रित करे। उसे वन्ध्या को खिलावे तो उसे पुत्र होता है। भूत-प्रेत-पिशाचादि के भय का यह नाशक है। पञ्चगव्य में गाय का घी मिलाकर सेवन करने से गर्भ की रक्षा होती है। गुग्गुल की गोली बनाकर एक हजार आठ हवन तीन दिन या चार दिनों तक करने से सभी उपद्रवों तथा रोगों का नाश होता है। चिड़चिड़ा की समिधा से दश हजार हवन करे तो भूतज्वर, भय, व्याधि, कृत्या, मृगी रोग का नाश होता है। घृताक्त कमल के हवन से श्री की वृद्धि होती है। गोघृताक्त दूर्वा के हवन से आयु लम्बी होती है। पलाश भूरुट समिधा से हवन करने पर मेधा की वृद्धि होती है। वस्त्र चाहने वाला आज्याक्त श्वेत कुसुम से हवन करे। पशुओं की वृद्धि का इच्छुक केवल घी से हवन करे। गूलर की समिध से हवन करने पर पुत्रलाभ होता है। मोक्षकामी एक वर्ष तक पीपल की समिधा से नित्य एक हजार आठ हवन करे एवं अपने को चक्र में स्थित मानकर एक मन्त्र का जप करे तो युद्ध में वह दुर्जय होता है। जिस शत्रु के शिर पर कल्पान्त अग्नि चक्र का चिन्तन सात दिनों तक किया जाता है, वह बुखार की ज्वाला से जलने लगता है और एक महीने में मर जाता है। सं सां सिं सीं सें सैं सों सौं सं सः के साथ याहि से वेष्टित करके जिसके शिर का चिन्तन किया जाता है, उसका उच्चाटन दश दिनों में हो जाता है एवं चालीस दिनों में उसकी मृत्यु हो जाती है। कौए के वर्ण की शत्रु के मूर्धा पर शान्त का चिन्तन करने से एक सप्ताह में उसका उच्चाटन या मृत्यु

होती है। जिसके शिर पर शरत् चन्द्र प्रतिमा से अमृतधारा की वर्षा करते सकार का चिन्तन किया जाता है, वह सौ वर्षों तक जीवित रहता है।

यन्त्रान्तराणां वर्णनम्

तथा—

वह्निगेहयुगे साध्यं लिखेत् तारगठाद्यकम्(ठार्णगम्) ।
षट्सु कोणेषु मन्त्रार्णांस्तत्सन्धिष्वङ्गमन्त्रकान् ॥६१॥
ततः षोडशपत्रं स्यात् षोडशार्णाणुसंयुतान् । वेष्टितं भूपुरेणाथ कृतसंपातमुत्तमम् ॥६२॥
गर्भिणीगर्भरक्षार्थं हितं परमदुर्लभम् । उन्मादग्रहभूतादीनभिचारांश्च नाशयेत् ॥६३॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणमध्ये ठकारं तन्मध्ये प्रणवं ससाध्यमालिख्य, षट्कोणेषु शिष्टार्णानालिख्य, षट्कोणसन्धिष्वङ्गमन्त्रानालिख्य, तद्बहिः षोडशदलं पद्मं कृत्वा, तद्दलेषु षोडशाक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरमालिख्य बहिश्चतुरस्रेण वेष्टयेदुक्तफलदं भवति।

तथा—

षट्कोणे प्रणवगतं च कर्म मध्ये मन्त्रार्णान् दहनयुगस्य कोणकेषु ।
अङ्गाणून् विलिखतु सन्धिषूक्तमेतच्चौरादिग्रहभयनाशकं च यन्त्रम् ॥६४॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य कोणेषु शिष्टवर्णान् सन्धिष्वङ्गमन्त्रांश्च लिखेत्, एतदुक्तफलदं भवति।

तथा—

कृशानुगृहयुग्मके लिख ससाध्यतारं लिखेत् षडश्रिषु मनुं च सन्धिविवरे तथाङ्गानि च ।
स्वरद्वयसुकेसरं वसुदलं लिखाष्टार्णयुग् लिपिद्वयसुकेसरं विकृतिवर्णयुक्सद्दलम् ॥६५॥
हक्षाभ्यां स्वाख्यया वीतं पाशाङ्कुशवृतं त्रिधा । चक्रयन्त्रमिदं प्रोक्तं सर्वामयनिवारणम् ॥६६॥
सर्वभीतिप्रशमनं क्षुद्रचौरविनाशनम् । इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं विलिख्य तन्मध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, षट्कोणेषु मन्त्रार्णास्तत्सन्धिषु अङ्ग-मन्त्रांश्चालिख्य, तद्बहिरष्टदलकमलं कृत्वा, तत्केसरेषु षोडशस्वरान् सबिन्दुकानालिख्य तद्दलेषु नारायणाष्टाक्षरवर्णान् सबिन्दुकानेकैकशो विलिख्य, तद्बहिः षोडशदलपद्मं कृत्वा तत्केसरेषु कादिसान्तान् सबिन्दुकान् द्वन्द्वशो विलिख्य, तत्पत्रेषु वक्ष्यमाणसुदर्शनषोडशाक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, पद्माद्बहिःसप्तवृत्तानि कृत्वा वीथीषट्कं परिकल्प्य, तास्वभ्यन्तरगतासु तिसृषु हकारक्षकारयोर्मध्ये साध्यनामाक्षराणि कृत्वा संवेष्ट्य, बाह्यासु तिसृषु पाशाङ्कुशबीजाभ्यां वेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

षट्कोण बनाकर उसके मध्य में 'ठ' तथा कोनों में भी 'ठ'कार लिखे। उन ठकारों के मध्य में साध्य नाम के साथ एक-एक मन्त्र वर्ण को लिखे तो यह यन्त्र आपत् निवारक और भूत-प्रेत सम्बन्धी भय का नाशक होता है। षट्कोण के मध्य में 'ठ' लिखे। उसमें साध्य नाम के साथ ॐ लिखे। छः कोणों में मन्त्र के शेष छः अक्षरों को लिखे। कोणों की सन्धियों में अंगमन्त्रों को लिखे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनाकर दलों में षोडशाक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसे वेष्टित करे। उस पर हुतशेष का सम्पात करे। तब यह दुर्लभ यन्त्र गर्भिणी की रक्षा के लिये परम हितकर होता है एवं इससे उन्माद-ग्रह-भूतादि अभिचारों का नाश होता है।

षट्कोण मध्य में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। कोणों में मन्त्र के शेष छः वर्णों को लिखे। कोणसन्धियों में षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। इससे जो यन्त्र बनता है, वह चौरादि ग्रह एवं भय का नाशक होता है।

षट्कोण बनाकर उसके मध्य में साध्य सहित 'ॐ' लिखे। छः कोणों में मन्त्र के शेष छः अक्षरों को लिखे। कोणसन्धियों में अंगमन्त्रों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। उसके केसर में सानुस्वार सोलह स्वरों को लिखे। आठ पत्रों मे नारायण मन्त्र के आठ अक्षरों को सानुस्वार लिखे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर दलों के केसरों में क से स तक के बत्तीस अक्षरों को दो-दो करके लिखे। दलों में सुदर्शन षोडशाक्षर मन्त्र—'ॐ नमो भगवते महासुदर्शनाय हु फट्' के एक-एक अक्षर को लिखे। इसके बाहर सात वृत्त बनाकर छः वीथियों में से अन्दर से तीन वीथियों मे 'ह' 'क्ष' के मध्य मे साध्य नाम के अक्षरों को लिखकर वेष्टित करे। इसके बाद वाले तीन वीथियों को पाश-अंकुश बीजो से वेष्टित करे। यह यन्त्र सभी रोगों का नाशक, सभी भयों का शमन करने वाला एवं क्षुद्र चोरों का विनाशक होता है।

षोडशार्णमन्त्रविधिः

तथा—

तारं हृद्भगव प्रोक्त्वा ते महासुपदं वदेत्। दर्शनाय हुमस्त्रान्तः षोडशार्णो मनूत्तमः॥६७॥

तारं प्रणवः। हृन्नमः। अस्त्रं फट्। अन्यानि पदानि स्वरूपाणि। अत्र सन्धिः ॐ नमो भगवते इति।

यन्त्रेषु लिखितो ह्येष सर्वाभीष्टफलप्रदः। अष्ट रेखा लिखेत् ताश्च युगशः संप्रवर्धयेत्॥६८॥
अष्टार्णान्तरितान् पादान् हृषीकेशमनोर्लिखेत्। चतुष्कोष्ठे मध्यकोष्ठत्रितये साध्यनामयुक्॥६९॥
चक्रमन्त्रं लिखेन्मन्त्री भवेत् तत्सप्तकोष्ठके। यन्त्रं भूर्जे क्षौमपट्टे कोमले कर्पटेऽपि वा॥७०॥
सम्यक् च गुलिकीकृत्य लाक्षाभिः सम्यगावृतम्। कृतसंपातपातं च सर्वापन्नाशनं स्मृतम्॥७१॥ इति।

अयमर्थः—प्राक्प्रत्यगायता अष्टौ रेखाः कृत्वा रेखात्रितयं त्रितयमन्तरित्वा सर्वरेखाग्राणि बध्नीयात्। एवं कृते कोष्ठसप्तकं जायते। तत्राभ्यन्तरे कोष्ठत्रयं विहाय पार्श्वद्वयवर्तिकोष्ठचतुष्टये नारायणाष्टाक्षरमन्त्रवर्णद्वयमध्यस्थं 'स्थाने हृषीकेश तव' इति श्लोकस्य चरणचतुष्टयं स्ववामभागमारभ्य दक्षिणान्तमालिख्य, मध्यकोष्ठत्रये साध्याख्यां कर्मसहितां सुदर्शनमन्त्रवर्णद्वयान्तःस्थितामालिखेत्। यथा अमुं देवदत्तं यज्ञदत्तस्य वशं कुरु २ हुं इत्याद्यभ्यूह्य लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

षोडशाक्षर मन्त्र—सोलह अक्षरों का सुदर्शन मन्त्र इस प्रकार है—ॐ नमो भगवते महासुदर्शनाय हुं फट्। इस मन्त्र को यन्त्र पर लिखने से सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। पूर्व से पश्चिम तक आठ रेखा खींचे। तीन-तीन रेखाओं को अन्तरित करके सभी रेखाओं को बाँधे। ऐसा करने से सात कोष्ठ बनते हैं। अन्दर से तीन कोष्ठों को छोड़कर दोनों पार्श्ववर्ती चार कोष्ठों में नारायण अष्टाक्षर मन्त्र के दो-दो अक्षरों के मध्य में 'स्थाने हृषीकेश तव' श्लोक के चार पादों को अपने वाम भाग से दक्षिण के अन्त तक लिखे। मध्य के तीन कोष्ठों में साध्य नाम कर्म के साथ सुदर्शन मन्त्र के दो-दो वर्णों को लिखे। जैसे—'अमुं देवदत्तं यज्ञदत्तस्य वशं कुरु कुरु हुं' इत्यादि। इस यन्त्र को भोजपत्र पर या रेशमी वस्त्र पर या कोमल कर्पट पर लिखकर सम्यक् गोली बनावे, उसमें सभी ओर से लाह लपेटे, हवन के समय हुतशेष के बूँदों को उसपर टपकावे। यह यन्त्र सभी आपदाओं का नाशक होता है।

हृषीकेशमन्त्रयन्त्रादि

तथा—

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्याथ जगत्प्र च। हृष्यत्यनुरशब्दान्ते ज्यते च पदमुच्चरेत्॥७२॥
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति च पदं वदेत्। सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः प्रकीर्तयते॥७३॥
हृषीकेशमनुः प्रोक्तः सर्वरक्षाकरः शुभः।

मन्त्रोद्धारः सुगमः। श्रीयन्त्रसारे—

षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं कोणेषु षट्स्वपि। षट्कोणकर्णिकामध्ये तारं कोणेषु षट्स्वपि।
ऋतुपञ्चर्तुपञ्चर्तुपञ्चषट्पञ्चसंख्यकान् । ऋतुपञ्चर्तुपञ्चर्तुपञ्चषट्पञ्चसंख्यकान् ।

अष्टाक्षरमनोर्वर्णानिकमेकं विलिख्य च। अष्टाक्षरमनोर्वर्णानिकमेकं विलिख्य च।
गीतात्रिष्टुव् यन्त्रमिदं सर्वरक्षाकरं परम्। इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं तारं विलिख्य, षट्कोणेषु सुदर्शनषडक्षराक्षराणि, षट्कोणसन्धिषु आचक्रादीन् षडङ्गमन्त्रान्, तद्बहिरष्टदलकेसरेषु नारायणाष्टाक्षरवर्णाष्टकं, अष्टदलेषु स्थाने हृषीकेश तवेति श्लोकमन्त्रस्य षट्पञ्चषट्पञ्चषट्पञ्चषट्पञ्चक्रमेण वर्णान् विभज्य विलिख्य, बहिर्वृत्तयोरन्तराले मातृकार्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्रं कुर्यादुक्तफलदं भवति।

तथा—

तारं हृत् स्याद्भगवते महा प्रोक्त्वा च ङेयुतम्। सुदर्शनपदं तद्वन्महाचक्राय वै महा ॥१॥
ज्वालायोक्त्वा महादीप्तरूपायेति च सर्वतः। रक्षयुग्मं मां पदान्ते महान्ते च बलाय च ॥२॥
स्वाहान्तश्चक्रमन्त्रोऽयं गदितः सर्वकर्मसु। रक्षाकरः प्रसिद्धोऽयं क्रियमाणेषु कर्मसु ॥३॥
अस्यार्चनादिकं सर्वं मन्त्री पूर्ववदाचरेत्। इति।

तारं प्रणवः। हृन्नमः। भगवते इत्यनेन सन्धिः। नमो भगवते इति। ङेयुतं सुदर्शनपदं सुदर्शनाय। रक्षयुग्मं मां पदान्ते मां रक्षरक्षेति। अन्यानि पदानि स्वरूपाणि।

हृषीकेश मन्त्र—हृषीकेश मन्त्र है—स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति च सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः। यह हृषीकेश मन्त्र समस्त प्रकार से रक्षा करने वाला एवं कल्याणकारक है।

श्रीयन्त्रसार के अनुसार षट्कोण बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। छः कोणों में सुदर्शन मन्त्र के छः अक्षरों को लिखे। षट्कोण की सन्धियों में आचक्रादि षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल के केसरों में नारायण अष्टाक्षर के आठ वर्णों को लिखे। आठों दलों में हृषीकेश श्लोक मन्त्र के अक्षरों को ६,५,६,५,६,५,६,५ के क्रम से लिखे। इस श्लोक में कुल ४४ अक्षर हैं। इसके बाहर वृत्तों के अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र सर्वरक्षाकर होता है।

अन्य सुदर्शन मन्त्र—सुदर्शन का एक अन्य चौवालीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते महासुदर्शनाय महाचक्राय महाज्वालाय दीप्तरूपाय सर्वतः रक्ष रक्ष मां महाबलाय स्वाहा। यह मन्त्र सभी क्रियमाण कर्मों में साधक की रक्षा करता है। इसकी पूजा आदि सब कुछ पूर्ववत् होते हैं।

श्रीकरमन्त्रोद्धारः

सारसंग्रहे—

अथ प्रवक्ष्यामि मनुं श्रीकरं सार्थनामकम्। येन प्रजप्तमात्रेण शक्रो लेभे श्रियं पराम् ॥१॥
धृतिः शुद्धियुगं तुष्टियुगं प्रज्ञा च टान्तयुक्। रमा बिन्दुवियुक्ता च जयाग्निर्भृगुलान्तकौ ॥२॥
सदीर्घौ कान्तिमद्व्योमेत्यष्टार्णः श्रीकरो मनुः। प्रणवाद्यं रमाद्यं वा केचनेच्छन्ति सूरयः ॥३॥

धृतिरुकारः। शुद्धियुगं तकारद्वयं, तुष्टियुतमिकारयुक्तं, तेन त्ति। प्रज्ञा षकारः, टान्तयुक् ठकारयुक्तं, तेन ष्ठ। रमा बिन्दुवियुक्ता श्री। जया ककारः। अग्नी रेफः। भृगुलान्तकौ सकारवकारौ, सदीर्घावाकारयुक्तौ, तेन स्वा। कान्तिमद् व्योम अकारयुक्तो हकारस्तेन हा इति।

श्रीकर मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब मैं श्रीकर नामक मन्त्र को कहता हूँ, जिसका जप करके इन्द्र ने श्रीसम्पदा प्राप्त की थी। मन्त्र है—उत्तिष्ठ श्रीकर स्वाहा। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। कोई इसके पहले ॐ लगाकर जप करते हैं तो कोई श्रीं लगाकर।

श्रीकरमन्त्रन्यासविधिस्तत्प्रयोगश्च

तथा—

वामदेव ऋषिः पंक्तिश्छन्दो विष्णुश्च देवता। हृद्ग्रीषययुगं हुं च हुमन्तं त्रासय-द्वयम् ॥४॥
शिरः शिखा च वर्मान्तं प्रमर्दययुगं मतम्। बर्म प्रध्वंसययुगं वर्मान्तं रक्षयद्वयम् ॥५॥
हुमन्तमस्त्रं संप्रोक्तं पञ्चाङ्गानि मनोः क्रमात्। अष्टाङ्गानि न्यसेन्मन्त्रवर्णैर्मन्त्री यथाविधि ॥६॥
पञ्चाङ्गनेत्रजठरपृष्ठेषु क्रमतो न्यसेत्। विदध्यात् करयोर्न्यासं मन्त्रार्णैरष्टभिः सुधीः ॥७॥
दक्षतर्जन्यादिका च यावत् स्याद्वामतर्जनी। सृष्टिरेतद्वैपरीत्यं संहारो गदितः स्थितिः ॥८॥
दक्षान्यतर्जनीपूर्वा कनिष्ठायुग्मकान्तिका। कामबाणानङ्गुलीषु ह्यङ्गुष्ठादिष्वनङ्गकान् ॥९॥
न्यसेद् बाणार्णपुटितमातृकां विन्यसेत् सुधीः। अष्टौ तत्त्वानि विन्यसेच्छरीरे देशिकोत्तमः ॥१०॥
प्रकृतिमहदहंकृत्याकाशानिलवह्निनीरभूम्याख्यैः। मन्त्रार्णयुतैः पदान्धुहृदास्यकहृद्हृदयसकलतनुषु ॥११॥
न्यसेत् संहारयुक्तोऽयं सर्गस्तद्विपरीतकः। तारसंपुटमूलेन त्रिशो न्यसेत् तनौ बुधः ॥१२॥
काक्ष्यास्यहृन्नाभिगुह्यजानुपादेषु विन्यसेत्। एषा सृष्टिश्च नाभ्याद्या हृदन्ता स्थितिरीरिता ॥१३॥
सर्गव्युत्क्रमतश्चापि संहारो मन्त्रिभिर्मतः। मूर्ध्नि मध्यातर्जनी स्यान्नेयेऽङ्गुष्ठस्त्वनामया ॥१४॥
वक्त्रेऽङ्गुष्ठस्तर्जनी च हृद्यङ्गुष्ठकनिष्ठिके। नाभावङ्गुष्ठवर्ज्याश्चाङ्गुलयो गुह्यजानुषु ॥१५॥
साङ्गुष्ठाः पादयुग्मे च न्यसेन्मन्त्रार्णकांस्तनौ।

न्यासेष्वयमङ्गुलिनियमो वैष्णवमन्त्रेषु। यत्र सृष्टिस्थितिसंहारन्यास उक्तस्तत्र सर्वत्र च ज्ञेयः।

द्व्यष्टवारं समावृत्त्या देशिको यतमानसः। मूलाधारसहृद्वक्त्रकरपन्मूलनाभिषु ॥१६॥
गलतुन्दहृदि कुचपार्श्वद्वन्द्वे सपृष्ठके। आस्यनेत्रश्रोत्रघोणाहस्ताग्रे मणिबन्धके ॥१७॥
कूर्परांसे तृतीय स्याच्चतुर्थी च तथा भवेत्। पादाग्रकगुल्फजानुनितम्बद्वयकेषु च ॥१८॥
दोःपादसन्धिशाखासु चतुरावृत्तयः स्मृताः। करपादाङ्गुलीयुग्ममध्ये न्यासद्वयं भवेत् ॥१९॥
मूर्धाक्षिकण्ठहृदयजठरोरुपदद्वये। हृदि न्यसेत् सानिलेषु धातुषु क्रमतः सुधीः ॥२०॥
गण्डांसस्तनपार्श्वस्फिगूरुजङ्घाङ्घ्रिषु द्वयम्। प्रथमार्णं पादमूले परं पादाग्रजानुषु ॥२१॥
गुदाण्डगुह्यकन्देऽन्यं पार्श्वनाभौ चतुर्थकम्। वक्षःपृष्ठहृदंसेऽन्यं कण्ठवक्त्रनसान्तरे ॥२२॥
श्रोत्रनेत्रद्वये चान्यं ललाटेऽष्टममीरितम्। शिरोनेत्रादिगदितस्थानेष्वाप्रपदं न्यसेत् ॥२३॥
ततस्तनौ मूलमनुं व्यापयेन्मूर्तिपञ्जरम्। विप्रादिकांश्चतुर्वणान् आस्यहस्तोरुपत्सु च ॥२४॥ इति।

शारदातिलके (१७.६६) तु—मुखे न्यसेद् ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीदिमं मनुम्। बाहू राजन्यः कृतोऽयं न्यस्तव्यो बाहुयुग्मके॥१॥ ऊरु तदस्य यद्वैश्य इममूरुद्वये न्यसेत्। पदद्वये न्यसेन्मन्त्रं पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥२॥ इति।

न्यसेदाभरणानीह त्वायुधानि च देशिकः। ततः सञ्चिन्तयेद्विष्णुं श्रीकरं हृदयाम्बुजे ॥२५॥

'लोलकल्लोले'त्यादि बृहद् ध्यानं प्रागेवोक्तम् (पूर्वार्धे एकादशे श्वासे)। अत्र वामाद्यधःस्थयोर्गदाकमले, तदाद्यूर्ध्वयोः शंखचक्रे, इति हेतिध्यानम्।

एवं ध्यात्वा मुकुन्दं तं पीठे पूर्वोदिते यजेत्। मूर्तिं मूलेन संकल्प्य तस्यामावाह्य मन्त्रवित् ॥२६॥
अङ्गानि कर्णिकायां च पूजयेन्मन्त्रवित्तमः। दिग्दलेषु च संपूज्याः श्री रतिश्च तथा धृतिः ॥२७॥
कान्तिश्च वर्णभेदैस्तु रक्तश्वेतासितादिभिः। मूर्तीर्यजेद्विदिक्पत्रेष्विन्द्रादींस्तद्बहिः क्रमात् ॥२८॥
वज्रादींश्च यजेत् पश्चाच्छीकरार्चा समीरिता। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वामदेवाय ऋषये

नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीकराय देवतायै नमः। इति विन्यस्य ममेष्टसिद्धये विनियोग इति प्राग्वदुक्त्वा, भीषय २ हुं हृदयाय नमः। त्रासय २ हुं शिरसे०। प्रमर्दय २ हुं शिखा०। प्रध्वंसय २ हुं कवचं०। रक्षय २ हुं अस्त्रं। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान् प्राग्वद्विन्यस्य, हृदये उं नमः। शिरसि त्तिं नमः। शिखायां ष्ठं नमः। कवचस्थाने श्रीं नमः। अस्त्रस्थाने कं नमः। नेत्रयोः रं नमः। इति नेत्रान्तं षडङ्गेषु विन्यस्य, उदरे स्वां नमः। पृष्ठे हां नमः। इत्यष्टाङ्गं विन्यस्य, (दक्ष)तर्जन्यां उं नमः। मध्यमायां त्तिं०। अनामिकायां ष्ठं०। कनिष्ठिकायां श्रीं०। (वाम)कनिष्ठायां कं०। अनामिकायां रं०। मध्यमायां स्वां०। तर्जन्यां हां नमः। इति सृष्टिः। वामतर्जनीमारभ्य दक्षतर्जनीपर्यन्तं संहारः। दक्षतर्जन्यां उं नमः। मध्यमायां त्तिं०। अनामिकायां ष्ठं०। कनिष्ठायां श्रीं०। वामतर्जन्यां कं०। मध्यमायां रं०। अनामिकायां स्वां०। कनिष्ठायां हां नमः। इति स्थितिन्यासः। अत्र प्रथमतः संहारन्यासं कृत्वा ततः सृष्टिस्थितिन्यासौ कार्यौ। अङ्गुष्ठयोः द्रां द्राविण्यै नमः। तर्जन्योः द्रीं क्षोभिण्यै०। मध्यमयोः क्लीं वशीकरिण्यै०। अनामिकायोः ब्लूं आकर्षिण्यै०। कनिष्ठयोः सः मोहिन्यै०। अङ्गुष्ठयोः ह्रीं कामाय नमः। तर्जन्योः क्लीं मन्मथाय०। मध्यमयोः ऐं कन्दर्पाय०। अनामिकयोः ब्लूं करध्वजाय०। कनिष्ठयोः स्त्रीं मीनकेतवे०। द्रांद्रींक्लींब्लूंसः अं सःब्लूंक्लींद्रींद्रां नमः। एवं रीत्या मातृकां विन्यस्य, पादयोः हांपृथिवीतत्त्वाय नमः। लिङ्गे स्वांजलतत्त्वात्मने नमः। हृदि रंअग्नितत्त्वात्मने नमः। मुखे कंवायुतत्त्वात्मने०। शिरसि श्रींआकाशतत्त्वात्मने नमः। हृदि ष्ठंअहङ्कारतत्त्वात्मने०। हृदये त्तिंमहत्तत्त्वात्मने०। सर्वाङ्गे उंप्रकृतितत्त्वात्मने नमः। इति संहारन्यासः। ततः सर्वाङ्गे—उंप्रकृतितत्त्वा०। हृदये त्तिंमहत्तत्त्वा०। हृदि ष्ठंअहङ्कारतत्त्वा०। शिरसि श्रींआकाशतत्त्वा०। मुखे कंवायुतत्त्वा०। हृदि रंअग्नितत्त्वात्मने०। लिङ्गे स्वांजलतत्त्वात्मने०। पादयोः हांपृथिवीतत्त्वा०। इति सृष्टिन्यासः। अत्रापि उंनमः। परायेत्यादिना न्यासे प्राग्वद्योजनीयम्। ततः प्रणवसंपुटितमूलमन्त्रेण त्रिर्व्यापकन्यासं कृत्वा, ततः पादयोः उंनमः। जानुनोः त्तिं०। गुह्ये ष्ठंनमः। नाभौ श्रीं०। हृदि कं०। मुखे रं०। नेत्रयोः स्वां०। शिरसि हां०। शिरसि उंनमः। नेत्रयोः त्तिं०। मुखे ष्ठं०। हृदि श्रीं०। नाभौ कं०। गुह्ये रं०। जानुनोः स्वां०। पादयोः हांनमः। नाभौ उंनमः। गुह्ये त्तिं०। जानुनोः ष्ठं०। पादयोः श्रीं०। शिरसि कं०। नेत्रयोः रं०। मुखे स्वां०। हृदि हांनमः। अत्र न्यासे प्रमाणोक्ताङ्गुलयो ग्राह्याः। (१) मूलाधारे उंनमः। हृदि त्तिं०। मुखे ष्ठं०। दक्षबाहुमूले श्रीं०। वामे कं०। दक्षोरुमूले रं०। वामे स्वां०। नाभौ हां०। (२) गले उंनमः। उदरे त्तिं०। हृदि ष्ठं०। दक्षस्तने श्रीं०। वामे कं०। दक्षपार्श्वे रं०।वामे स्वां०। पृष्ठे हां०। (३) मुखे उंनमः। नेत्रयोः त्तिं०। श्रोत्रयोः ष्ठं०। नसोः श्रीं०। हस्ताग्रयोः कं०। मणिबन्धयोः रं०। कूर्परयोः स्वां०। अंसयोः हां०। (४) दक्षपादाग्रे उंनमः। वामे त्तिंनमः। दक्षगुल्फे ष्ठं०। वामे श्रीं०। दक्षजानुनि कं०। वामे रं०। दक्षनितम्बे स्वां०। वामे हां०। (५) दक्षदोर्मूले उंनमः। मध्ये त्तिं०। मणिबन्धे ष्ठं०। अङ्गुष्ठादिपञ्चाङ्गुलीषु एवं पञ्चवर्णान् न्यसेत्। (६) एवं वामदोर्मूलादिषु न्यसेत्। (७) एवं दक्षोरुमूल-जानुगुल्फपञ्चाङ्गुलीषु न्यसेत्। (८) एवं वामोरुमूलादिषु। (९) दक्षकराङ्गुष्ठतर्जन्योर्मध्यमामारभ्य वामाङ्गुष्ठतर्जन्योर्म- ध्यमावधि त्वष्टसु स्थानेषु न्यसेत्। (१०) एवं पादयोरङ्गुल्यन्तरालेषु। (११) मूर्ध्नि उं नमः। नेत्रयोः त्तिं०। कण्ठे ष्ठं०। हृदि श्रीं०। उदरे कं०। उरुद्वये रं०। जानुनोः स्वां०। पादयोः हां०। (१२) हृद्येव त्वचि उं०। रक्ते त्तिं०। मांसे ष्ठं०। मेदसि श्रीं०। अस्थ्नि कं। मज्जायां रं०। शुक्रे स्वां०। प्राणे हांनमः। (१३) दक्षगण्डे उंनमः। दक्षांसे त्तिं०। दक्षस्तने ष्ठं०। दक्षपार्श्वे श्रीं०। दक्षस्फिजि कं०। दक्षोरौ रं०। दक्षजङ्घायां स्वां०। दक्षपादे हां०। (१४) एवं वामगण्डादि। (१५) पादतलयोः उंनमः। पादाग्रजानुषु त्तिं०। गुदवृषणगुह्यमूलेषु ष्ठं०। पार्श्वद्वयनाभिषु श्रीं०। वक्षःपृष्ठहृदंसेषु कं०। कण्ठवक्त्रनासासु रं०। श्रोत्रनेत्रेषु स्वां०। ललाटे हां०। (१६) शिरसि उंनमः। नेत्रयोः त्तिं०। मुखे ष्ठं। हृदये श्रीं०। नाभौ कं०। गुह्ये रं०। जानुनोः स्वां०। पादयोः हां नमः। इति षोडशधा मूलमन्त्राक्षराणि विन्यस्य मूलेन व्यापकं कृत्वा प्रागुक्तमूर्तिपञ्जरन्यासं कृत्वा, मुखे ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीन्नमः। हस्तयोः बाहू राजन्यः कृतः०। ऊर्वोः उरु तदस्य यद्वैश्यः। पादयोः पद्भ्यां शूद्रो अजायत०। इति विन्यस्य, शिरसि किरीटाय नमः। कर्णयोः मकरकुण्डलाय नमः। गले कौस्तुभाय ग्रैवेयाय०। वक्षसि श्रीवत्साय हाराय०। बाहुषु अङ्गदेभ्यो

केयूरेभ्यो नमः। कट्यां मणिमेखलायै० पीताम्बराय० इति विन्यस्य, वामदक्षोर्ध्वहस्तयोः शङ्खाय०। चक्राय०। वामदक्षाधोहस्तयोः गदायै०। पद्माय०। इति विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते कर्णिकायामेवाङ्गानि संपूज्य, दिग्दलेषु श्रियै नमः। रत्यै। धृत्यै०। कान्त्यै० इति संपूज्य, विदिग्दलेषु पूर्वोक्तवासुदेवादिचतुर्मूर्तीः संपूज्य लोकपालार्चादि प्राग्वत् कुर्यादिति।

तथा—

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं नियमस्थो जितेन्द्रियः। जुहुयात् तद्दशांशेन बिल्वदुग्धद्रुतर्पणैः ॥२९॥

तर्पणैः समिद्भिः।

अब्जैर्दुग्धान्नसुघृतैस्तर्पणादि ततश्चरेत्। गुरुं सन्तोष्य वित्ताद्यैः सिद्धमन्त्रो भवेद् ध्रुवम् ॥३०॥

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। तदनन्तर विविध न्यासों को इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः, हृदये श्रीकराय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार अंग न्यास पञ्चाङ्ग मन्त्रों से इस प्रकार करे—भीषय भीषय हुं हृदयाय नमः, त्रासय त्रासय हुं शिरसे स्वाहा, प्रमर्दय प्रमर्दय हुं शिखायै वषट्, ध्वंसय ध्वंसय हुं कवचाय हुं, रक्षय रक्षय हु अस्त्राय फट्। तदनन्तर मन्त्रवर्ण न्यास इस प्रकार करे—हृदय में उं नमः, शिर पर त्तिं नमः, शिखा में ष्ठं नमः, कवचस्थान में श्रीं नमः, अस्त्रस्थान में कं नमः, नेत्रों में रं नमः—इस प्रकार नेत्र तक छः अंगों में न्यास करने के बाद उदर में स्वां नमः, पीठ में हां नमः करके अष्टाङ्ग न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार सृष्टिन्यास करे—दक्ष तर्जनी में उं नमः, मध्यमा में त्रिं नमः, अनामिका में ष्ठं नमः, कनिष्ठा में श्रीं नमः, वाम कनिष्ठा में कं नमः, अनामिका में रं नमः, मध्यमा में स्वां नमः, तर्जनी में हां नमः, वाम तर्जनी से प्रारम्भ करके दक्ष तर्जनी तक का संहार न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार स्थिति न्यास करे—दक्ष तर्जनी में उं नमः, मध्यमा में त्तिं नमः, अनामिका में ष्ठं नमः, कनिष्ठा में श्रीं नमः, वाम तर्जनी में कं नमः, मध्यमा में रं नमः, अनामिका में स्वां नमः एवं कनिष्ठा में हां नमः। यहाँ पर पहले संहार न्यास करके तब सृष्टि-स्थिति न्यास करना चाहिये।

बाणन्यास—अंगूठों में द्रां द्राविण्यै नमः, तर्जनियों में द्रीं क्षोभिण्यै नमः, मध्यमाओं में क्लीं वशीकरिण्यै नमः, अनामिकाओं में ब्लूं आकर्षिण्यै नमः, कनिष्ठिकाओं में सः मोहिन्यै नमः।

कामन्यास—अंगूठों में ह्रीं कामाय नमः, तर्जनियों में क्लीं मन्मथाय नमः, मध्यमाओं में ऐं कन्दर्पाय नमः, अनामिकाओं में ब्लूं मकरध्वजाय नमः, कनिष्ठिकाओं में स्त्रीं मीनकेतवे नमः। तदनन्तर द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अं सः क्लूं क्लीं द्रीं द्रां नमः—इस प्रकार मातृका न्यास करके इस प्रकार संहार न्यास करे—

पैरों में हां पृथिवीतत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में स्वां जलतत्त्वात्मने नमः, हृदय में रं अग्नितत्त्वात्मने नमः, मुख में कं वायुतत्त्वात्मने नमः, शिर पर श्रीं आकाशतत्त्वात्मने नमः, हृदय में ष्ठं अहंकारतत्त्वात्मने नमः, हृदय में त्तिं महत्तत्त्वात्मने नमः, सर्वांग में उं प्रकृतितत्त्वात्मने नमः।

सृष्टिन्यास—सर्वांग में उं प्रकृतितत्त्वात्मने नमः, हृदय में त्तिं महत् तत्त्वात्मने नमः, हृदय में ष्ठं अहंकारतत्त्वात्मने नमः, शिर पर श्रीं आकाशतत्त्वात्मने नमः, मुख में कं वायुतत्त्वात्मने नमः, हृदय में रं अग्नितत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में स्वां जलतत्त्वात्मने नमः, पैरों में हां पृथिवीतत्त्वात्मने नमः।

यहाँ भी 'ॐ नमः पराय' इत्यादि न्यास में पूर्ववत् जोड़े। तब प्रणव सम्पुटित मूल मन्त्र से तीन व्यापक न्यास करके इस प्रकार न्यास करे—पैरों में उं नमः, जानुओं में त्तिं नमः, गुह्य में ष्ठं नमः, नाभि में श्रीं नमः, हृदय में कं नमः, मुख में रं नमः, नेत्रों में स्वां नमः, शिर पर हां नमः। शिर पर उं नमः, नेत्रों में त्रिं नमः, मुख में ष्ठं नमः, हृदय मे श्रीं नमः, नाभि में कं नमः, गुह्य में रं नमः, जानुओं में स्वां नमः, पैरों में हां नमः। नाभि में उं नमः, गुह्य में त्तिं नमः, जानुओं में ष्ठं नमः, पैरों में श्रीं नमः, शिर पर कं नमः, नेत्रों में रं नमः, मुख में स्वां नमः, हृदय में हां नमः। इस न्यास में प्रमाणोक्त अंगुलियाँ ग्राह्य हैं। तदनन्तर सोलह प्रकार से मूल मन्त्र के अक्षरों का न्यास करे—

१. मूलाधार में उं नमः, हृदय में त्तिं नमः, मुख में ष्ठं नमः, दक्ष बाहुमूल में श्रीं नमः, वाम बाहुमूल में कं नमः, दक्ष ऊरुमूल में रं नमः, वाम ऊरुमूल में स्वां नमः, नाभि में हां नमः।

२. गले मे उं नमः, उदर में त्तिं नमः, हृदय में ष्ठं नमः, दक्ष स्तन मे श्रीं नमः, वाम स्थन में कं नमः, दक्ष पार्श्व में रं नमः, वाम पार्श्व में स्वां नमः, पृष्ठ में हां नमः।

३. मुख में उं नमः, नेत्रों में त्तिं नमः, कानों में ष्ठं नमः, नासिका छिद्रों में श्रीं नमः, हाथों के आगे कं नमः, दोनों मणिबन्धों में रं नमः, कूर्परों में स्वां नमः, कन्धों पर हां नमः।

४. दाहिने पैर के आगे उं नमः, बाँयें पैर के आगे त्तिं नमः, दक्ष गुल्फ में ष्ठं नमः, वाम गुल्फ में श्रीं नमः, दक्ष जानु में कं नमः, वाम जानु में रं नमः, दक्ष नितम्ब में स्वां नमः, वाम नितम्ब में हां नमः।

५. दक्ष बाहुमूल में उं नमः, मध्य में त्तिं नमः, मणिबन्ध में ष्ठं नमः। अंगुठादि पाँच अंगुलियों में भी इसी प्रकार पाँच वर्णों का न्यास करे।

६. इसी प्रकार वाम हस्त के मूलादि में न्यास करे।

७. इसी प्रकार दक्ष ऊरुमूल, जानु, गुल्फ एवं पाँचों अंगुलियों में न्यास करे।

८. इसी प्रकार वाम ऊरुमूल जानु, गुल्फों एवं पाँचों अंगुलियों में न्यास करे।

९. दक्ष करांगुष्ठ तर्जनी मध्यमा से लेकर वाम करांगुष्ठ तर्जनी मध्यमा तक आठ स्थानों में न्यास करे।

१०. इसी प्रकार पैरों की अंगुलियों के अन्तराल में न्यास करे।

११. मूर्धा में उं नमः, नेत्रों में त्तिं नमः, कण्ठ में ष्ठं नमः, हृदय में श्रीं नमः, उदर में कं नमः, दोनों ऊरुओं में रं नमः, जानुओं में स्वां नमः, पैरों में हां नमः।

१२. हृदय के समान ही त्वचा में उं नमः, रक्त में त्तिं नमः, मांस में ष्ठं नमः, मेद में श्रीं नमः, अस्थि में कं नमः, मज्जा में रं नमः, शुक्र में स्वां नमः, प्राण में हां नमः।

१३. दक्षगण्ड में उं नमः, दक्षांस में त्तिं नमः, दक्ष स्तन में ष्ठं नमः, दक्ष पार्श्व में श्रीं नमः, दक्ष स्फिक् में कं नमः, दक्ष ऊरु में रं नमः, दक्ष जंघा में स्वां नमः, दक्ष पाद में हां नमः।

१४. इसी प्रकार वाम गण्डादि आठ स्थानों में वर्ण न्यास करे।

१५. पादतलों में उं नमः, पादाग्र एवं जानुओं में त्तिं नमः, गुदा वृषण गुह्य मूल में ष्ठं नमः, दोनों पार्श्व एवं नाभि में श्रीं नमः, वक्ष पृष्ठ हृदय कन्धों में कं नमः, कण्ठ मुख नासिका में रं नमः, कान एवं आँख में स्वां नमः, ललाट में हां नमः।

१६. शिर पर उं नमः, नेत्रों में त्तिं नमः, मुख में ष्ठं नमः, हृदय में श्रीं नमः, नाभि में कं नमः, गुह्य में रं नमः, जानुओं में स्वां नमः, पैरों में हां नमः।

इस प्रकार सोलह बार मूल मन्त्राक्षरों का न्यास करके मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके पूर्वोक्त मूर्ति पञ्जर न्यास करके मुख में—ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीन्नमः, हाथों में—बाहू राजन्यः कृतः नमः, ऊरुओं में—ऊरु तदस्य यद्वैश्यः नमः, पैरों में—पद्भ्यां शूद्रो अजायत नमः—इस प्रकार न्यास करके शिर पर—किरीटाय नमः, कानों में—मकरकुण्डलाय नमः, गले में—कौस्तुभाय ग्रैवेयाय नमः, वक्ष में—श्रीवत्साय हाराय नमः, बाहुओं में—अंगदेभ्यो केयूरेभ्यो नमः, कमर में—मणिमेखलायै नमः, पीताम्बराय नमः इस प्रकार न्यास करे। तदनन्तर वाम दक्ष ऊपर वाले हाथ में शङ्खाय नमः, चक्राय नमः, वाम दक्ष नीचे वाले हाथ में गदायै नमः, पद्माय नमः से न्यास करे। इसके बाद श्रीकर विष्णु का हृदय में ध्यान करने के बाद पुष्पोपचार तक की पूजा के बाद कर्णिका में अंगपूजा करके पूर्वादि दलों में श्रियै नमः, रत्यै नमः, धृत्यै नमः, कान्त्यै नमः से पूजन करके कोणदलों में पूर्वोक्त वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध—इस चतुमूर्ति की पूजा करे। चतुरस्र में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करके पूजा का समापन करे।

तदनन्तर साधक नियमस्थ जितेन्द्रिय होकर आठ लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन बेल एवं दूध के वृक्षों की समिधा से करे। कमल, दूध, अन्न, घी से तर्पण करे। गुरु को धन आदि देकर सन्तुष्ट करे तो मन्त्र अवश्य सिद्ध होता है।

होमद्रव्यविधि:

ततः कुर्वीत मन्त्रज्ञः प्रयोगानिष्टसिद्धये। दुग्धाप्लुतैः सरसिजैरयुते जुहुयाच्छ्रिये ॥३१॥
अयुते अयुतद्वयम्।

मधुरत्रयसंयुक्तैः पलाशकुसुमैर्हुनेत्। मेधावी जायते शीघ्रं यशसे च तिलैर्हुनेत् ॥३२॥
कान्त्यै प्रजुहुयाद्धीमान् केवलाज्येन मन्त्रवित्। पयःप्लुतगुडूच्याश्च खण्डैः प्रजुहुयाद् बुधः ॥३३॥
दीर्घमायुरवाप्नोति ह्यरोगी मन्त्रवित्तमः। त्रिस्वादुयुक्तं लवणं हुनेन्निशि सहस्रकम् ॥३४॥
अष्टाधिकं च मासेन सोऽमरस्त्रीर्वशं नयेत्। का कथा मर्त्ययोषासु वाङ्मात्रवशगासु च ॥३५॥
दशपुष्पदारुभस्म संजप्तं मनुनामुना। त्रिसहस्रं धृतं मूर्ध्नां पापरोगहरं परम् ॥३६॥
जनतावश्यकृदेतत् प्रथितं सर्वकामदम्। घृताक्तदूर्वाचरुभ्यां हुनेदयुतसंख्यया ॥३७॥
भुञ्जीयाद् हुतशिष्टं च चरुं दद्याच्च दक्षिणाम्। गुरवे तर्पयेद्विप्रान् वस्त्रालङ्करणैः शुभैः ॥३८॥
शापापमृत्युरोगादि नश्यत्यायुश्च विन्दति। उत्क्षिप्तबाहुः पुरुषः प्रत्यहं रविबिम्बके ॥३९॥
न्यस्तदृष्टिश्चाष्टशतं जपेत् प्राप्नोत्यतन्द्रितः। महाधनाढ्यमचिरादन्नाद्यं पशुकादिकम् ॥४०॥
दुग्धमध्ये प्रातरमुं रमेशं तर्पयेद्बुधः। अष्टाधिकं सहस्रं तु स लभेदचिराद्धनम् ॥४१॥
सुमृष्टमन्नं च वने लभते भृत्यवर्गयुक्। वश्याकर्षणसंमोहस्तम्भोच्चाटनमारणम् ॥४२॥
कुर्यादनेन मनुना यथाद्रव्यैः सुशोभनैः। किं बहूक्तेन मनुना निखिलं साधयेत् सुधीः ॥४३॥
य एवं श्रीकरं विष्णुं भजेद्भक्तियुतो नरः। भुक्त्वेह सकलान् भोगान् याति विष्णोः परं पदम् ॥४४॥ इति।

तदनन्तर मन्त्रज्ञ इष्टसिद्धि के लिये प्रयोगों को करे। श्री की प्राप्ति के लिये दुग्धसिक्त कमल से दश हजार हवन करे। मधुरत्रय-संयुक्त पलाशफूलों के हवन से साधक मेधावी होता है। तिल के हवन से यश मिलता है। केवल गोघृत से हवन करने पर कान्ति की वृद्धि होती है। दीर्घ आयु एवं आरोग्य के लिये दूध सिक्त गुरुच के टुकड़ों से हवन करे। त्रिमधुरयुक्त नमक से एक हजार आठ हवन रात में एक महीने तक करने से सुराङ्गना वश में होती है। फिर मानवी स्त्रियों के लिये क्या कहा जाय, वे केवल कहने मात्र से ही वश में हो जाती हैं। दश फूल और दारुभस्म को तीन हजार जप से मन्त्रित करके मूर्धा में लगावे तो सभी पाप एवं रोग नष्ट होते हैं। घृताक्त दूर्वा और चरु के दश हजार हवन से जनता वश में होती है एवं सभी मनोरथ पूरे होते हैं। हुतशिष्ट चरु को स्वयं भक्षण करे और गुरु को दक्षिणा देकर ब्राह्मणों को वस्त्रालङ्कार देकर तृप्त करे। इससे शाप-अपमृत्यु-रोगादि का नाश होता है और आयु बढ़ती है।

वाँह उठाकर साधक प्रतिदिन सूर्यबिम्ब को देखते हुए एकाग्रता से इस मन्त्र का एक सौ आठ जप करे तो अल्प काल में वह महाधनाढ्य और अन्नादि पशुओं से युक्त होता है। साधक प्रातः दूध में रमेश का तर्पण एक हजार आठ बार करे तो अल्प काल में धन प्राप्त करता है। उसे मनचाहे अन्न और नौकर मिलते हैं। इस मन्त्र से वश्य, आकर्षण, सम्मोहन, स्तम्भन, उच्चाटन, मारण आदि कर्मसाधन उपयुक्त द्रव्यों से होता है। बहुत क्या कहा जाय, इससे साधक सब कुछ सिद्ध कर सकता है। जो श्रीकर विष्णु का भजन भक्ति से करता है, वह मनुष्य संसार में सभी भोगों को भोगकर अन्त में विष्णु का परमपद प्राप्त करता है।

श्रीमच्चरणमन्त्र:

तथा—

श्रीमन्नारायणस्य तदनु चरणौ शरणं स्यात्प्रपद्ये। ङेन्तं श्रीमच्चरणमपि च नमस्तत्त्ववर्णोऽयमुक्तः ॥४५॥

'श्रीमन्नारायणस्य चरणौ प्रपद्ये श्रीमच्चरणाय नमः' (२४)। (तत्त्ववर्णश्चतुर्विंशतिवर्णः ।।)

तथा—

ऋष्याद्याः पूर्वमुक्तासमशरमनुना पञ्च चाङ्गानि कुर्यात्।
पूजाहोमादि सर्वं समुदितविधिना मुक्तिदो मन्त्र एषः ।।४६।।

असमशरमनुना कामबीजेन, तेन क्लांक्लींक्लूंक्लैंक्लौंक्लः इति।

चरण मन्त्र—चौबीस अक्षरों का चरण मन्त्र है—श्रीमन्नारायणस्य चरणौ शरणं प्रपद्ये श्रीमच्चरणाय नमः। इसके ऋष्यादि पूर्वोक्त ही हैं। कामवीज क्लां क्लीं क्लूं क्लैं क्लौं क्लः से न्यास करे।

श्रीपुरुषोत्तममन्त्रः

संमोहनतन्त्रे—

अथ वक्ष्ये महादेवि मन्त्रं श्रीपुरुषोत्तमम्। धर्मार्थसुखमोक्षाप्तिफलदं योषितां नृणाम्।।१।।
प्रवरं मन्त्ररत्नं ते सर्वतन्त्रेषु गोपितम्। अतिगुह्यतमं देवि दौर्भाग्यव्याधिनाशनम्।।२।।
दारिद्र्यनाशकं देवि जरामरणनाशकम्। शोकभीतिहरं देवि मन्त्रं त्रैलोक्यमोहनम्।।३।।
वश्याकर्षणविद्वेषमारणोच्चाटकारकम्। स्तम्भकारकमन्तर्धिबिलसिद्धिकरं परम्।।४।।
शत्रुभिः परिभूतैश्च सर्वविघ्नैरुपद्रुतैः। हतार्थैः क्लिष्टसंसारवासिभिर्दुःखितैर्जनैः ।।५।।
भर्तृराजाभिभूतैश्च विघ्नार्तैः पुत्रकाङ्क्षिभिः। भृत्यार्थिभिश्च संग्रामे विजयाकाङ्क्षिभिर्जनैः ।।६।।
योषाभिश्चैव संसेव्यं मन्त्रं श्रीसुखमोक्षदम्। शृणु सम्यक् समासेन सर्वलोकसुखप्रदम्।।७।।
मायारमातारमारबीजानि हृदयं वदेत्। लोहितं कर्णयुक्तं च वदेद्वह्निमुना तथा।।८।।
षोत्तमाप्रतिरूपं च लक्ष्मीपदमतः परम्। निवाससकलं प्रोक्त्वा जगत्क्षोभणमुच्चरेत्।।९।।
सर्वस्त्रीहृदयान्ते विदारणस्त्रिभुतो वनम्। मनोन्मादकरान्ते च स्वग्र्यनन्तौ सुरं वदेत्।।१०।।
मनुजं सुन्दरीं चैव जनमुक्त्वा मनांसि च। तापयेति द्विरुच्चार्य वदेद् दीपय शोषय।।११।।
मारय स्तम्भय द्रावयाकर्षय पदं द्विशः। आवेशय च परमं सुभगं सर्वमुच्चरेत्।।१२।।
सौभाग्यान्ते करपदं सर्वकामप्रदेति च। अलक्ष्मीर्हनयुग्मं च चक्रेण गदया पुनः।।१३।।
खड्गेन सर्वबाणैश्च भिन्दयुग्मं ततो वदेत्। पाशेन बन्धद्वितयमङ्कुशेन द्विताडय।।१४।।
तुरुयुग्मं च किं तिष्ठसि तावद्यावदीरयेत्। समीहितं च मे सिद्धं भवति क्लीं सवर्म च।।१५।।
अस्त्रहृच्छक्तिमामारप्रणवांश्च समुच्चरेत्। पुरुषोत्तममन्त्रोऽयं प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः ।।१६।।
पूर्वबीजेन मायान्तेनान्त्यबीजेन चोचिरे। आचार्याः केचनेत्युक्त्वा ह्यावेशय-पदद्वयम्।।१७।।
मोहय-द्वितयं ब्रूयुस्तम्भयद्वयतः परम्। हुं मादौ क्लींच नेच्छन्ति तथा परमपूर्वतः ।।१८।।
समस्तशब्दं प्रोचुश्चालक्ष्मीस्थानेऽमुकं पदम्। इति।

माया ह्रीं, रमा श्रीं, तारः प्रणवः, मारः क्लीं, हृदयं नमः, लोहितः पकारः, कर्ण उ तेन पु, वह्नी रेफ उना उकारेण तेन रु, षोत्तमाप्रतिरूपं स्वरूपं, लक्ष्मी स्वरूपं, निवाससकल स्वरूपं, जगत्क्षोभण स्वरूपं, सर्वस्त्रीहृदय स्वरूपं, विदारण त्रिभुवनमनोन्मादकर स्वरूपं, सु स्वरूपं, अग्नी रेफः, अनन्त आ तेन रा, सुर स्वरूपं, मनुजसुन्दरीजन स्वरूपं, मनांसि स्वरूपं, तापयेति द्विस्तापय तापय, दीपय शोषय मारय स्तम्भय द्रावयाकर्षय, द्विशस्तत्पदानि द्विर्द्विरुच्चरेदित्यर्थः। आवेशय स्वरूपं, चकाराद्द्विः। परमसुभगसर्व स्वरूपं, सौभाग्यकर स्वरूपं, सर्वकामप्रद स्वरूपं, अलक्ष्मीः स्वरूपं, हनयुग्मं हनहन, चक्रेण गदया स्वरूपं, खड्गेन सर्वबाणैश्च स्वरूपं, भिन्दयुग्मं भिन्दभिन्द, पाशेन स्वरूपं, बन्धद्वितयं बन्धबन्ध, अङ्कुशेन स्वरूपं, द्विस्ताडय ताडय ताडय, तुरुयुग्मं

तुरुतुरु, किं तिष्ठसि तावद्यावत् स्वरूपं, समीहितं मे सिद्धं भवति स्वरूपं, क्लीं स्वरूपं, वर्म हुं, अस्त्रं फट्, हृन्नमः, शक्तिः ह्रीं, मा श्रीं, मारः क्लीं, प्रणवः ॐ।

तथा—

जैमिनिर्मुनिरस्योक्तश्छन्दोऽमितमितीरितम् । त्रैलोक्यमोहनतनुर्देवता पुरुषोत्तमः ॥१९॥
षडङ्गानि मनोर्देवि नेत्रान्तानि प्रकल्पयेत् । हुंफडन्तानि च शिवे तारमारादिकानि च ॥२०॥
वदेत् पूर्वं च पुरुषोत्तमं त्रिभुवनं वदेत् । मनोन्मादकरं हृच्च सकलान्ते जगत्पदम् ॥२१॥
क्षोभणं प्रवदेल्लक्ष्मीदयितेति शिरो मतम् । मन्मथोक्तं वदेन्माङ्गजकामान्ते च दीपनः ॥२२॥
शिखामन्त्रश्च परमं वदेत् सुभगशब्दतः । सर्वसौभाग्यकरतो वदेदप्रतिरूपकः ॥२३॥
केशव स्मरयुग्वर्म सुरासुरपदं वदेत् । मनुजान्ते सुन्दरी च हृदयान्ते विदारणा ॥२४॥
सर्वप्रहरणान्ते च धरसर्वपदं वदेत् । कामिकं हनयुग्मं च हृदयान्ते च बन्धना ॥२५॥
न्याकर्षयाकर्षयाथ वदेच्चाथ महाबलम् । अस्त्रमन्त्रस्त्रिभुवनेश्वरसर्वजनं वदेत् ॥२६॥
मनांसि हनयुग्मं च दारय-द्वन्द्वतश्च मे । वशमानययुग्मं च नेत्रमन्त्र उदाहृतः ॥२७॥
विन्यस्यैवं षडङ्गानि द्वादशाङ्गानि विन्यसेत् । हृदाद्युदरपृष्ठेषु करपृष्ठोरुजानुषु ॥२८॥
पादे च कुर्यान्मन्त्रस्य पदानि द्वादशैव तु । शक्तिश्रीमारबीजानि संबुद्ध्यन्तान्यणोर्न्यसेत् ॥२९॥
तारादीनि हृदाद्यानि परायेत्यस्य चोर्ध्वगम् । मूर्तयो द्वादश तथा पुरुषाद्याः परेश्वरि ॥३०॥
आत्मङेन्ताः नमोन्ताश्च पुरुषः सत्यकाच्युतौ । चत्वारो वासुदेवाद्यास्तद्वन्नारायणः शिवे ॥३१॥
ब्रह्मविष्णुनृसिंहाश्च वराहो द्वादशः स्मृतः । ततो व्यापकमन्त्रेण व्यापकं विन्यसेत् तनौ ॥३२॥
त्रैलोक्यमोहनपदं हृषीकेशाप्रतीति च । रूप मन्मथ सर्वस्त्रीहृदयाकर्षणं वदेत् ॥३३॥
आगच्छ हृदयं चैव व्यापकाणुः समीरितः । आयुधानां च मनवो वक्ष्यन्ते क्रमशः शिवे ॥३४॥
वेदादिमारबीजाद्याः सर्वे मन्त्राः महेश्वरि । सुदर्शनमहाचक्रराजान्ते दहयुग्मकम् ॥३५॥
सर्वदुष्टभयं ब्रूयात् कुरु छिन्द द्विभिन्दयुक् । भूयो विदारय-द्वन्द्वं परमन्त्रान् ग्रसद्वयम् ॥३६॥
भक्षयद्वयं भूतानि त्रासय द्विर्हुमस्त्रकम् । स्वाहा चक्राय हृदयं चक्रमन्त्र उदाहृतः ॥३७॥

अस्त्रं फट्, हृदयं नमः। सुगममन्यत्।

वदेज्जलचरायेति द्विठः शङ्खमनुः प्रिये । हुंफडन्तः खड्ग तीक्ष्ण भिन्दयुग्मं वदेत्ततः ॥३८॥
खड्गमन्त्रो महेशानि धनुर्मन्त्रं शृणु प्रिये । शार्ङ्गाय सशरायाथ हुंफडन्तो गदामनुः ॥३९॥
कौमोदकि महाशब्दबाले सर्वासुरान्तकि । प्रसीद हुंफट् स्वाहान्तः संवर्तकपदं वदेत् ॥४०॥
मुसलं पोथयद्वन्द्वं हुंफट् स्वाहान्तको मनुः । मुसलस्याङ्कुशस्याणुरङ्कुशं कचयुग्मकम् ॥४१॥
हुंफट् स्वाहान्तकः प्रोक्तः पाश बन्धयुगं वदेत् । आकर्षययुगं हुंफट् स्वाहान्तः पाशमन्त्रकः ॥४२॥
एवमायुधमन्त्रास्ते मया प्रोक्ता महेश्वरि । पक्षिराजायाग्निवधूः पक्षिराजमनुर्मतः ॥४३॥
त्रैलोक्यमोहनायाथ विद्महेऽन्ते स्मराय च । धीमहीति ततस्तन्नो वदेद्विष्णुः प्रचोदयात् ॥४४॥
पुरुषोत्तमगायत्री जपार्चासु विशिष्यते । ततः कराङ्गुलिष्वेतान् बाणान् कामांश्च विन्यसेत् ॥४५॥
द्रामाद्यां द्राविणीं देवि द्रींमाद्यां क्षोभिणीमपि । क्लींवशीकरिणीं भद्रे ब्लूंबीजाद्यां महेश्वरि ॥४६॥
आकर्षिणीं महेशानि सर्गान्तभृगुपूर्वकम् । संमोहिनीं क्रमादेवं बाणन्यासोऽयमीरितः ॥४७॥
काममन्मथकन्दर्प-मकरध्वजसंज्ञकाः । मीनकेतुर्महेशानि पञ्चमः परिकीर्तितः ॥४८॥
पराबीजं मध्यबाणं वाग्भवं परमेश्वरि । तुर्यबाणं ततश्चैव स्त्रीबीजं च क्रमात् प्रिये ॥४९॥
कामबीजप्रपुटितां मातृकां विन्यसेत् प्रिये । विन्यसेन्मारमालां तु वर्णानानाभि मन्त्रवित् ॥५०॥

चत्वारिंशन्मातृकां च ततः पञ्च न्यसेत्सुधीः। जठरे हृदये कण्ठे वक्त्रे नसि ततः प्रिये ॥५१॥
त्रीनर्णान् व्यापयेद् देहे समस्तेन सकृत्तथा। व्यापकं विन्यसेद् देहे कामांश्चैव सशक्तिकान् ॥५२॥
कन्दर्पमातृकापूर्वान् मातृकावत् प्रविन्यसेत्। दाडिमीकुसुमाभांश्च वामाङ्के शक्तिसंयुतान् ॥५३॥
सौम्यान् रक्ताम्बरान् सर्वान् पुष्पबाणेक्षुकार्मुकान्। बिभ्राणान् सर्वभूषाढ्यान् मन्त्री कामान् स्मरेत्प्रिये ॥५४॥
शक्तयः कुङ्कुमनिभाः सर्वाभरणभूषिताः। नीलोत्पलकरा ध्येयास्त्रैलोक्याकर्षणक्षमाः ॥५५॥
न्यसेत् कामरती पश्चात् कामदं च सुरेश्वरि। प्रीतिं च कामिनीकान्तौ कान्तिमान् मोहिनीयुतः ॥५६॥
कामगः कमला तद्वत् कामबाणो विलासिनी। कामकल्पलते तद्वत् कामुकश्यामले तथा ॥५७॥
कामवर्धनसंयुक्ता विज्ञेया च शुचिस्मिता। रामश्च विस्मिताक्षी च विशालाक्षीयुतो रमः ॥५८॥
रमणो लेलिहाना च रतिनाथदिगम्बरे। रतिप्रियश्च रामा च रात्रिनाथश्च कुब्जिका ॥५९॥
रमाकान्तयुता कान्ता रममाणश्च नित्यया। निशाचरश्च कल्याणी नन्दको भोगिनीयुतः ॥६०॥
नन्दनः कामदायुक्तो नन्दी चापि सुलोचना। सुलोपिन्या युतो देवि तथा नन्दयिता पुनः ॥६१॥
पञ्चबाणश्च मर्दिन्या कलहप्रियया युतः। विज्ञश्चैव महादेवि रतिपूर्वसखा प्रिये ॥६२॥
पुष्पधन्वा वराक्षी च सुमुख्या च महाधनुः। भ्रामणो नलिनीयुक्तो भ्रमणो जटिनीयुतः ॥६३॥
(भ्रममाणश्च पालिन्या भ्रमश्च शिवया युतः। भ्रान्तमुग्ध ततो देवि भ्रामको रमया युतः) ॥६४॥
भृङ्गो भ्रमा ततः पश्चाद् भ्रान्तचारश्च लोलया। भ्रमावहश्चञ्चला च मोहनो दीर्घजिह्वया ॥६५॥
रतिप्रियामोहकौ च लोलाक्ष्या मोह एव च। मोहवर्धनभृङ्गिन्यौ मदनः पाटलायुतः ॥६६॥
मन्मथो मदनायुक्तो मातङ्गो मालया युतः। भृङ्गनायकहंसिन्यौ गायनो विश्वतोमुखी ॥६७॥
जगदानन्दिनीयुक्तो गीतिज्ञस्तदनन्तरम्। नर्तको रमणीयुक्तो खेलकः कान्तिसंयुतः ॥६८॥
उन्मत्तः कलकण्ठी च मत्तकश्च वृकोदरी। विलासिमेघश्यामे च सोन्मत्तो लोभर्वधनः ॥६९॥
तत्त्वन्यासं ततः कुर्यात् पार्श्वद्वययुतेषु च। नाभिगुह्यगुदेषु स्यात् पादसन्ध्यङ्गुलीषु च ॥७०॥
अर्काभमारबीजस्य न्यासः सर्वसमृद्धिदः। द्वादशाक्षरमन्त्रस्य न्यासत्रयमथो बुधः ॥७१॥
कुर्यात् संहारसृष्टी च स्थितिश्चैव प्रकीर्तिता। मूर्तिपञ्जरविन्यासं कुर्यान्मन्त्री समाहितः ॥७२॥
पूर्वोदिताया गायत्र्या वर्णान् न्यसेत्तनौ बुधः। कभालदृग्द्वन्द्वदोःपत्संध्यग्रेषु तनौ च सः ॥७३॥
षडङ्गं द्वादशाङ्गं च बाणानङ्गान् प्रविन्यसेत्। श्रीं स्वां श्रिये नमस्त्वेष श्रियो मन्त्र उदाहृतः ॥७४॥
सव्योरौ विन्यसेदेवं मन्त्रं देवेशि मन्त्रवित्। लक्ष्म्याद्याः पुष्टिपर्यन्ता ङेयुताश्च हृदन्तिका ॥७५॥
हृस्वत्रयक्लीबबिन्दुवर्ज्यस्वरयुतो भृगुः। लान्तयुक् सेन्दुखण्डः स्वबीजन्यासं महेश्वरि ॥७६॥
न्यस्तव्या बीजपूर्वास्ताः कास्यकण्ठेषु गुह्यके। ककुद्धृन्नाभिसर्वाङ्गे व्यापकाणुं न्यसेत् प्रिये ॥७७॥
ऋष्यादिकं च विन्यस्य भूषणानि न्यसेत् प्रिये। आयुधाणून् यथास्थानं तत्तन्मुद्राभिरद्रिजे ॥७८॥
विन्यसेन्मन्त्रिवर्योऽसौ श्रीवत्सं कौस्तुभं तथा। वनमालां मारबीजैर्यथास्थानं न्यसेत् प्रिये ॥७९॥
ऊर्ध्वाङ्गुष्ठौ मिथः श्लिष्टौ मुष्टिं मूर्ध्नि नियोजयेत्। त्रैलोक्यमोहनाख्येयं मुद्रैनां मूर्ध्नि विन्यसेत् ॥८०॥
एवं न्यस्तशरीरोऽसौ ध्यायेच्छ्रीपुरुषोत्तमम्। उद्यानं संस्मरेदादौ सर्वपुष्पोपशोभितम् ॥८१॥
अनल्पकल्पविटपिमञ्जरीराजिराजितम्। मञ्जरीसुरभिपूरपूरिताशामुखं प्रिये ॥८२॥
निरन्तरपरिभ्रान्तमधुव्रतकदम्बकम्। आमोदपण्यस्थानाभमिन्द्रियाणां सुखप्रदम् ॥८३॥
आत्मयोनेरिव प्रायो मनोज्ञं जननस्थलम्। शृङ्गारलक्ष्म्या इव सत्केलिसद्म मनोरमम् ॥८४॥
रते रतिसुखप्रायमृतूनां जन्मभूरिव। उपमानं मनोज्ञानां नेत्रसाफल्यकारकम् ॥८५॥
आश्चर्यभूतवस्तूनां दृष्टान्तं केवलं प्रिये। अस्मिन् कल्पद्रुमं देवि स्मरेन्मन्त्री समाहितः ॥८६॥

लसन्महाबीजमणिमयमूलमनोरमम् । प्रत्यग्रवज्राश्ममयप्रकाण्डविलसत्तनुम् ॥८७॥
प्रोल्लासिजाम्बूनदवद्दीर्घशाखमकृत्रिमम् । हरिन्मणिप्रौढदलं लसद्विद्रुमपल्लवम् ॥८८॥
अनर्घ्यमणिपुष्पं च मुक्तारुचिरकेसरम् । निपीय पीयूषनिभं मधु पुष्पोधरोद्भूतम् ॥८९॥
रागाज्जरामतीतैस्तैः षट्पदानां समूहकैः । निजायोषित्सहायैश्च गीयमानं विलासिभिः ॥९०॥
शाखाभुजैरर्थिजनव्रजायाशु धनव्रजम् । प्रयच्छन्तं स्रवत्तोयधाराः पुष्परसोद्भवाः ॥९१॥
दानाम्बुधाराश्रियमुद्वहन्तीव च यस्य तम् । विवर्तमानरुचिरभ्रमराल्यक्षिमालकम् ॥९२॥
मूर्ध्ना घोरातपोद्द्योतसेवितैः सुमनोजलैः । स्नातं तथा तपस्यन्तं नेतुं प्रत्यक्षतामिव ॥९३॥
श्रीमन्तमम्बुजाक्षं तं तस्य मूले मनोहरे । माणिक्यकुट्टिमोद्भूतभूतले पीठमुत्तमम् ॥९४॥
अरुणाम्बुजमध्यस्थमस्मिन् प्रद्योतनप्रभम् । गरुडं पक्षिराजं तत्स्कन्धारूढमथास्य तम् ॥९५॥
स्मरेद् रथाङ्गपाणिं तु सूर्यकोटिसमप्रभम् । लावण्यपरिपूर्णोद्यन्नवयौवनकोमलम् ॥९६॥
अङ्गसौन्दर्यशोभोच्चधिक्कृताङ्गजदर्पकम् । मन्दान्दोलितरक्ताक्षं कामबाणौघविह्वलम् ॥९७॥
मणिभूषणदीप्ताङ्गं दिव्यगन्धाम्बरावृतम् । प्रभयारुणया विश्वं रञ्जयन्तं महेश्वरि ॥९८॥
यक्षगन्धर्वदेवौघकामिनीशतसेवितम् । नीलकुञ्चितकेशौघविलसत्सुप्रसूनकम् ॥९९॥
माध्वीकलोलुपालीनां हृद्यनादमनोरमम् । कन्दर्पचापविलसच्चटुलालिसदृग् भ्रुवम् ॥१००॥
पद्मपत्रविशालाक्षं लोकनैः कामिनीजनम् । मोहयन्तं महारत्नमौलिद्युतिविराजितम् ॥१०१॥
उल्लसद्विद्रुमशिलाशकलारुणिताधरम् । पक्वबिम्बाधरं देवि नासावंशमनोरमम् ॥१०२॥
आलोलकुण्डलरुचा समुद्योतिकपोलकम् । विलसत्कल्पपुष्पौघदामभूषितसद्गलम् ॥१०३॥
वाह्वष्टकं तथा ध्यायेत् क्वणत्कङ्कणमण्डितम् । अशोकपल्लवाकारविलसद्विद्रुमोपमाः ॥१०४॥
कराद्यङ्गुलयो ध्येया नानारत्नाङ्गुलीयकाः । दक्षिणाधःकरे चक्रं चिन्तयेदर्कभास्वरम् ॥१०५॥
खड्गं तथोपरितने मुसलं च तदुत्तरे । तथोर्ध्वदक्षिणे हस्ते चिन्तयेद्रुचिराङ्कुशम् ॥१०६॥
वामोर्ध्वे चिन्तयेत् पाशं तदधः शङ्खमेव च । सशरं च धनुर्वामे गदां ध्यायेदधः करे ॥१०७॥
वक्षःस्थलं हरेर्ध्यायेल्लक्ष्मीकुचविमर्दितम् । श्रीवत्सकौस्तुभोद्भासि विशालकमनीयकम् ॥१०८॥
मनोरमसमुद्द्योतिवनमालास्वलंकृतम् । गम्भीरदक्षिणावर्तनाभिमण्डलमण्डितम् ॥१०९॥
हेमाभपीतवस्त्रेण संशोभि जघनं स्मरेत् । आरक्तनखरत्नैश्च स्वङ्गुलीयैर्विराजितौ ॥११०॥
रक्तोत्पलनिभौ पादौ चिह्नितौ ध्वजवारिजैः । सुनूपुरौ हरेर्ध्यायेज् ज्ञानैश्वर्यप्रदायकौ ॥१११॥
वामोरौ संस्थितां ध्यायेल्लक्ष्मीं स्वर्णसमप्रभाम् । क्वणन्नूपुरपादाब्जां बृहद्रत्ननितम्बिनीम् ॥११२॥
तनुमध्यां घनोत्तुङ्गचारुपीनपयोधराम् । रणत्कङ्कणबाह्वग्रां नानारत्नाङ्गुलीयकाम् ॥११३॥
विद्रुमारुणविम्बोष्ठीं नीलोत्पलविलोचनाम् । दीर्घालिकान्तिमत् स्निग्धनीलकुञ्चितमूर्द्धजाम् ॥११४॥
मुक्तामालां शिरोभागाद्दधानां लोलकुण्डलाम् । कण्ठात् स्तनयुगं यावन्मुक्तादामविराजिताम् ॥११५॥
क्षीराब्धिफेनरुचिरे वसानां श्वेतवाससी । दक्षेण बाहुना देवं गाढमालिङ्ग्य संस्थिताम् ॥११६॥
प्रियाङ्गसङ्गमान्मंक्षु जातरोमाञ्चकञ्चुकाम् । देवस्यास्यं समालोक्य स्मरबाणविमोहिताम् ॥११७॥
दक्षिणे देवदेवस्य गद्यपद्यमयीं गिरम् । वदन्तीं भारतीं ध्यायेद्वीणापुस्तकधारिणीम् ॥११८॥
सितचन्दनलिप्ताङ्गीं पीनोन्नतपयोधराम् । विशाललोचनां देवीं मुक्ताहारविभूषिताम् ॥११९॥
सृजन्तीं लोचनैर्भावान् विष्णौ देवीं शुचिस्मिताम् । विद्यासौभाग्यलाभाय ध्यायेदेवं परां गिराम् ॥१२०॥
परितो वासुदेवाद्या ध्यातव्या मूर्तयो हरेः । श्यामशुक्लारुणापीताः क्रमशः सर्वभूषणाः ॥१२१॥
लक्ष्म्याद्याः शक्तयो ध्येया रणत्कङ्कणबाहुकाः । सितचामरधारिण्यो मुक्ताहारसुमध्यमाः ॥१२२॥

क्वनन् नूपुरपादाब्जाः पीनोत्तुङ्गपयोधराः । त्रैलोक्यमोहनं देवं वीक्षमाणाः स्मरार्दिताः ॥१२३॥
गौर्यौ लक्ष्मीसरस्वत्यौ रतिप्रीती तथारुणे । शशाङ्कधवले ज्ञेये कान्तिकीर्ती हरिप्रिये ॥१२४॥
तुष्टिपुष्टी तथा श्यामे ध्यातव्ये हरिवल्लभे । नरेन्द्रदेवदैत्यानां प्रमदाः स्मरविह्वलाः ॥१२५॥
गृहीत्वा चन्दनादीनि हेमरत्नस्रजः शिवे । आयान्त्यः परितो ध्येया देवदर्शनलालसाः ॥१२६॥
हेमप्रसूनमालाभिश्चन्दनैर्विविधैः शुभैः । त्रैलोक्यमोहनं देवं पूजयन्त्यो निरन्तरम् ॥१२७॥
ऋषयः सिद्धगन्धर्वमनुजा मनुजाधिपाः । स्तुवन्तः परितो ध्येया हरिं सर्वप्रियं प्रिये ॥१२८॥
इन्द्राद्यैर्लोकपालैश्च समन्तात् परिवारितम् । आब्रह्मभुवनान्तःस्थसर्वलोकैः प्रपूजितम् ॥१२९॥
कोटियोजनविस्तीर्णे हेमरत्नविनिर्मिते । मनःप्रीतिकरे देवि साधकाभीष्टदायके ॥१३०॥
धर्माद्यैर्निर्मिते देवि मण्डलत्रितयान्विते । विमलादिसुशक्तिस्थे योगपीठे महाप्रभे ॥१३१॥
आसीनं चिन्तयेद्देवं सर्वसत्त्वविमोहनम् । भुवनानि महादेवि भासयन्तं निजत्विषा ॥१३२॥
किन्नरोरगगन्धर्वचारणैः खेचरव्रजैः । गीयमानगुणब्रावं सर्ववाञ्छितसिद्धिदम् ॥१३३॥
सुपर्णाय-पदं प्रोक्त्वा विद्महे-पदमीरयेत् । पक्षराजाय धीशब्दं महि तन्नो-पदं वदेत् ॥१३४॥
गरुडः-शब्दमुच्चार्य प्रवदेच्च प्रचोदयात् । गायत्र्येषा समाख्याता सिद्धिदा मूलमन्त्रतः ॥१३५॥
मूर्तिं प्रकल्प्य देवेशं पूजयेच्चन्दनादिभिः । सर्वादिकं च भूषान्तमर्चयित्वा रमां ततः ॥१३६॥
ऊरौ दक्षेतरे चेष्ट्वा ह्यङ्गानि पूजयेत् ततः । वर्मान्तिकानि चाशासु विदिक्ष्वस्त्रं पुरो दिशाम् ॥१३७॥
दलेषु लक्ष्म्यादिकाश्च पूर्वाद्याशासु संयजेत् । दरचक्रगदाचारुमुसलानि विदिक्ष्वथ ॥१३८॥
शार्ङ्गखड्गाङ्कुशोद्द्योतिपाशान् आशाधिपांस्तथा । वज्रादीनि ततो बाह्ये कुमुदाद्यान् बहिर्यजेत् ॥१३९॥
ततो दत्त्वा धूपदीपौ पूजयेच्च मनोः पदैः । देवि द्वादशभिः पुष्पैः मारबीजस्य चोर्ध्वगम् ॥१४०॥
त्रैलोक्यमोहनायेति युतैर्ङेहृदयान्तकैः । पञ्चभिश्चाथ पुरुषोत्तमाद्यैः पूजयेत् क्रमात् ॥१४१॥
शक्तिश्रीमारबीजाद्यैर्ङेयुक्तैश्च नमोऽन्तकैः । पुरुषोत्तमसंज्ञश्च हृषीकेशाह्वयः प्रिये ॥१४२॥
विष्णुश्रीधररामाश्च ज्ञेयाः पञ्चापि ते क्रमात् । षडावरणसंयुक्तं पुरुषोत्तमपूजनम् ॥१४३॥
यः करोति भवेत् सोऽथ भाजनं सर्वसंपदाम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि जैमिनये ऋषये नमः। मुखे अमिताय च्छन्दसे नमः। हृदये श्रीपुरुषोत्तमाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐक्लीं पुरुषोत्तम त्रिभुवनमनोन्मादकर हुं फट् हृदयाय नमः। रँ सकलजगत्क्षोभण लक्ष्मीदयित हुं फट् शिरसे स्वाहा। रँ मन्मथोत्तमाङ्ग कामदीपन हुं फट् शिखायै वषट्। रँ परमसुभग सर्वसौभाग्यकराप्रतिरूपक केशव स्मर हुं फट् कवचाय हुं। रँ सुरासुरमनुजसुन्दरीहृदयविदारण सर्वप्रहरणधर सर्वकामिक हन २ हृदयबन्धनान्याकर्षय २ महाबल हुं फट् अस्त्राय फट्। रँ त्रिभुवनेश्वर सर्वजनमनांसि हन २ दारय २ मे वशमानय २ हुं फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। इति नेत्रान्तषडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य नेत्रमन्त्रं कनिष्ठयोर्विन्यस्य, हृदाद्यस्त्रान्तं विन्यस्य पश्चान्नेत्रे न्यसेदिति नेत्रान्तं षडङ्गानि विन्यस्य, हृदये ॐ नमः ह्रीं पराय पुरुषात्मने नमः। शिरसि ॐनमः श्रीं पराय सत्यात्मने नमः। शिखायां ॐ नमः क्लीं परायाच्युतात्मने नमः। कवचस्थाने ॐ नमः पुरुषोत्तम पराय वासुदेवात्मने नमः। अस्त्रस्थाने ॐ नमोऽप्रतिरूप पराय संकर्षणात्मने नमः। नेत्रयोः ॐलक्ष्मीनिवास पराय प्रद्युम्नात्मने नमः। उदरे ॐनमः सकलजगत्क्षोभण पराय (अनिरुद्धात्मने नमः। पृष्ठे ॐनमः सर्वस्त्रीहृदयविदारण पराय नारायणात्मने नमः। करयोः ॐनमः त्रिभुवनमनोन्मादकर पराय) ब्रह्मणे नमः। ऊर्वोः ॐ नमः परमसुभग पराय विष्णवात्मने नमः। जानुनोः ॐ नमः सौभाग्यकर पराय नृसिंहात्मने नमः। पादयोः ॐनमः सर्वकामप्रद पराय वराहात्मने नमः। 'त्रैलोक्यमोहनहृषीकेशाप्रतिरूपमन्मथ—सर्वस्त्रीहृदयाकर्षणागच्छ नमः' इति व्यापकं विन्यस्य, श्रीकरप्रकरणोक्तवत्

पञ्चबाणान् पञ्चकामांश्च विन्यस्य, क्लींअंक्लीं नमः इत्यादि मातृकां विन्यस्य, अग्रे वक्ष्यमाणकाममालामन्त्रस्य वर्णेषु चत्वारिंशद्वर्णानादितः 'शिरोवदनवृत्तेत्यादि' मातृकावर्णन्यासस्थानेषु नाभिपर्यन्तेषु विन्यस्यावशिष्टाक्षरेषु पञ्चवर्णानुदरहृदयकण्ठमुखनासिकासु विन्यस्याक्षरत्रयं पृथक्सर्वाङ्गे व्यापकत्वेन विन्यस्य, संपूर्णमालामन्त्रेण सकृद्व्यापकं विन्यस्य, क्लींअं कामाय रत्यै नमः। क्लीं आं कामदाय प्रीत्यै नमः। क्लींइं कान्ताय कामिन्यै नमः। क्लीं ईं कान्तिमते मोहिन्यै नमः। क्लींउं कामगाय कमलायै नमः। क्लींऊं कामचाराय विलासिन्यै नमः। क्लींऋं कामिने कल्पलतायै०। एवं ॠं कामुकाय श्यामलायै०। ऌं कामवर्धनाय शुचिस्मितायै०। ॡं कामाय विस्मिताक्ष्यै०। एं रमाय विशालाक्ष्यै०। ऐं रमणाय लेलिहानायै०। ओं रतिनाथाय दिगम्बरायै०। औं रतिप्रियाय रामायै०। अं रात्रिनाथाय कुब्जिकायै०। अः रमाकान्ताय कान्तायै०। कं रममाणाय नित्यायै०। खं निशाचराय कल्याण्यै०। गं नन्दकाय भोगिन्यै०। घं नन्दनाय कामदायै०। ङं नन्दिने सुलोचनायै०। चं नन्दयित्रे सुलापिन्यै०। छं पञ्चबाणाय मर्दिन्यै०। जं रतिसखाय कलाप्रियायै०। झं पुष्पधन्वने वराक्ष्यै०। ञं महाधनुषे सुमुख्यै०। टं भ्रामणाय नलिन्यै०। ठं भ्रमणाय जटिन्यै०। डं भ्रममाणाय पालिन्यै०। ढं भ्रमाय शिवायै०। णं भ्रान्ताय मुग्धायै०। तं भ्रामकाय रमायै०। थं भृङ्गाय भ्रमायै०। दं भ्रान्तचाराय लोलायै०। धं भ्रमावहाय चञ्चलायै०। नं मोहनाय दीर्घजिह्वायै०। पं मोहकाय रतिप्रियायै०। फं मोहाय लोलाक्ष्यै०। बं मोहवर्धकाय भृङ्गिन्यै०। भं मदनाय पाटलायै०। मं मन्मथाय मदनायै०। यं मातङ्गाय मालायै०। रं भृङ्गनायकाय हंसिन्यै०। लं गायनाय विश्वतोमुख्यै०। वं गीतिज्ञाय जगदानन्दिन्यै०। शं नर्तकाय रमण्यै०। षं खेलकाय कान्त्यै०। सं उन्मत्तकाय कलकण्ठ्यै०। हं मत्तकाय वृकोदर्यै०। ळं विलासिने मेघश्यामायै०। क्षं लोभवर्धनायोन्मत्तायै०। इति मातृकास्थानेषु विन्यस्य, ततःश्रीकरप्रकरणोक्तानि द्वादशतत्त्वानि संहारक्रमेण विन्यस्य, पार्श्वद्वयनाभिगुह्यगुदोरुमूलद्वयजानुद्वयगुल्फद्वयाङ्गुलीषु क्लींनमः इति कामबीजं प्रतिस्थानं विन्यस्य, पूर्वं वासुदेवप्रकरणोक्तप्रकारांस्तत्तन्मन्त्राक्षरन्यासान् संहारसृष्टिस्थितिक्रमेण विन्यस्याष्टाक्षरप्रकरणोक्त-मूर्तिपञ्जरन्यासं कृत्वा, शिरसि त्रैंनमः। ललाटे लोंनमः। दक्षनेत्रे क्यंनमः। वामे मोंनमः। दक्षदोर्मूले हंनमः। मध्ये नांनमः। मणिबन्धे यंनमः। अङ्गुलिमूले विंनमः। अग्रे द्मंनमः। वामदोर्मूले हेंनमः। मध्ये स्मंनमः। मणिबन्धे रांनमः। अङ्गुलिमूले यंनमः। अग्रे धींनमः। दक्षोरुमूले मंनमः। जानुनि हिंनमः। गुल्फे तंनमः। अङ्गुलिमूले न्नोंनमः। अग्रे विंनमः। वामोरुमूले ष्णुंनमः। जानुनि प्रंनमः। गुल्फे चोंनमः। अङ्गुलिमूले दंनमः। अग्रे यात् नमः। ततः प्रागुक्त-षडङ्गद्वादशाङ्गबाणकामन्यासान्विधाय, वामे श्रींस्वां श्रिये नमः इति विन्यस्य, शिरसि स्वां लक्ष्म्यै०, मुखे स्वां सरस्वत्यै०। कण्ठे स्वूं रत्यै०। गुह्ये स्वें प्रीत्यै०। ककुदि स्वैं कान्त्यै०। हृदि स्वों कीर्त्यै०। नाभौ स्वौं तुष्ट्यै०। सर्वाङ्गे स्वः पुष्ट्यै०। ततः प्राग्वद् व्यापकमन्त्रेण व्यापकं विन्यस्य, पुनरपि ऋष्यादिन्यासं विधाय, वक्षसि क्लीं श्रीवत्साय नमः। कण्ठे क्लीं कौस्तुभाय नमः। स्कन्धादिपादान्तं क्लीं वनमालायै नमः। दक्षिणाधःकरे ॐक्लीं सुदर्शनमहाचक्रराज दह २ सर्वदुष्टभयं कुरु २ छिन्द २ भिन्द २ विदारय २ परमन्त्रान् ग्रस २ भक्षय २ भूतानि त्रासय २ हुंफट् स्वाहा चक्राय नमः। इति विन्यस्य, तदूर्ध्वहस्ते ॐक्लीं खड्ग तीक्ष्ण भिन्द २ हुं फट् स्वाहा खड्गाय नमः। तदूर्ध्वे ॐक्लीं संवर्तकमुसल पोथय २ हुं फट् स्वाहा मुसलाय नमः। तदूर्ध्वे दक्षिणहस्ते ॐक्लींक्रों कच कच हुं फट् स्वाहा अङ्कुशाय नमः। वामोर्ध्वे ॐक्रीं पाश बन्ध २ हुं फट् स्वाहा पाशाय नमः। तदधः ॐ क्लीं जलचराय स्वाहा शङ्खाय नमः। तदधः ॐक्लीं शार्ङ्गाय सशराय हुं फट् धनुषे नमः। तदधः ॐक्लीं कौमोदकि महाबले सर्वासुरान्तकि प्रसीद २ मर्दय २ हुं फट् गदायै नमः। ततस्त्रैलोक्यमोहिनीमुद्रां कामबीजमुच्चरन् मूर्ध्नि विन्यस्योक्तविधिना ध्यात्वा मानसपूजादियोगपीठार्चान्ते पक्षिराजाय स्वाहा। इति गरुडं संपूज्य, आवाहनादिपुष्पोपचारान्ते देवस्य वामोरौ 'श्रीं श्रियै नमः' इति लक्ष्मीं संपूज्य, अष्टदलकेसरेषु देवाग्रादि चतुर्दिक्षु हृदाद्यङ्गचतुष्टयं कोणेष्वस्त्रं पुरतो नेत्रमिति षड-ङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु लक्ष्म्याद्यष्टशक्तीः प्रागुक्ताः संपूज्य, दिग्दलाग्रेषु शङ्खाय नमः। चक्राय०। गदायै०। मुसलाय०। कोणदलाग्रेषु शार्ङ्गाय नमः। खड्गाय०। अङ्कुशाय०। पाशाय०। इति संपूज्य लोकपालान् वज्रादींश्च

संपूज्य बहि: पूर्वोक्तान् कुमुदादीन् संपूज्य, धूपदीपौ समर्प्य, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय ह्रीं पराय पुरुषात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय श्रीं पराय सत्यात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय क्लीं परायाच्युतात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय पुरुषोत्तमाय पराय वासुदेवात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनायाप्रतिरूपाय क्लीं पराय संकर्षणात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय लक्ष्मीनिवासाय पराय प्रद्युम्नात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सकलजगत्क्षोभणाय परायानिरुद्धात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सर्वस्त्रीहृदयविदारणाय पराय नारायणात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय त्रिभुवन-मनोन्मादकराय पराय ब्रह्मात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय परमसुभगाय पराय विष्ण्वात्मने नमः। क्लीं त्रैलो-क्यमोहनाय सर्वसौभाग्यकराय पराय नृसिंहात्मने नमः। क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सर्वकामप्रदाय पराय वराहात्मने नमः। ह्रींश्रींक्लीं पुरुषोत्तमाय नमः। ह्रींश्रींक्लीं हृषीकेशाय नमः। ह्रींश्रींक्लीं विष्णवे नमः। ह्रींश्रींक्लीं श्रीधराय नमः। ह्रींश्रींक्लीं रामाय नमः। इति देवं संपूज्य नैवेद्यसमर्पणादि शेषं समापयेत्।

तथा—

एवं संपूज्य विधिवल्लक्षसंख्यं जपेन्मनुम्। तद्दशांशं हुनेत् कुण्डे अर्धराकेशसन्निभे ॥१४४॥
पलाशपुष्पैर्मनुना तद्गायत्र्याथवा प्रिये। तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत् ततः ॥१४५॥
एवं सिद्धमनुर्देवि काम्यकर्माणि साधयेत्।

अत्र लक्षजपः कृतयुगपरः। 'एवं ध्यात्वा चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्री समाहितः' इति सारसंग्रहवचनात्।

पुरुषोत्तम मन्त्र—सम्मोहन तन्त्र में ईश्वर ने कहा है कि हे महादेवि! अब मैं श्री पुरुषोत्तम मन्त्र को कहता हूँ। यह नर-नारियों को धर्म, अर्थ, सुख, मोक्ष देने वाला है। सर्वश्रेष्ठ यह मन्त्ररत्न सभी तन्त्रों में गोपित है। अतिगुह्यतम यह मन्त्र दुर्भाग्य और रोग का विनाशक है। दारिद्र्यनाशक, जरा-मरणनाशक, शोक-भयहर यह मन्त्र तीनों लोकों को मोहित करने वाला है। यह वश्य, आकर्षण, विद्वेषण, मारण एवं उच्चाटनकारक है। स्तम्भनकारक यह मन्त्र अन्तर्धि-बिल-सिद्धिकारक है। इससे शत्रु पराभूत होते हैं। सभी विघ्नों का तुरन्त नाश होता है। क्लिष्ट संसारी दुःखी लोगों का यह हितकारक है। स्वामी राजा से अभिभूत, विघ्नों से व्याकुल, पुत्रकामी, भृत्यार्थी, युद्ध में विजय के इच्छुक लोग और स्त्रियाँ भी इस मन्त्र की आराधना से सुख प्राप्त कर सकती हैं एवं दुःखों से छुटकारा पा सकती हैं। अब एकाग्रता से सर्वलोक-सुखप्रद इस मन्त्र को सुनो।

पुरुषोत्तम का मन्त्र है—ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं नमः पुरुषोत्तम अप्रतिरूपं लक्ष्मी निवास सकल जगत् क्षोभण सर्व स्त्री हृदय विदारण, त्रिभुवनमदोन्मादकर सुरासुरमनुजसुन्दरीजनमनांसि तापय-तापय, दीपय-दीपय, शोषय-शोषय, मारय-मारय, स्तम्भय-स्तम्भय, मोहय-मोहय, द्रावय-द्रावय, आकर्षय-आकर्षय समस्तपरमसुभगसर्वसौभाग्यकरं सर्वकामप्रदं अमुकं हन हन चक्रेण गदया खड्गेन सर्वबाणैश्च भिन्द-भिन्द, पाशेन बन्ध-बन्ध, अंकुशेन ताड़य-ताड़य, तुरु-तुरु, किं तिष्ठसि तावत् यावत् समीहितं मे सिद्धं भवति हूं फट् नमः ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ। इस पुरुषोत्तम मन्त्र को सभी समृद्धियों का दायक कहा गया है। इसके ऋषि जैमिनि, छन्द अमित एवं देवता त्रैलोक्यमोहन पुरुषोत्तम हैं।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि जैमिनये ऋषये नमः, मुखे अमिताय छन्दसे नमः, हृदये श्रीपुरुषोत्तमाय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ क्लीं पुरुषोत्तम त्रिभुवनमनोन्मादकर हुं फट् हृदयाय नमः, ॐ क्लीं सकलज-गत्क्षोभण लक्ष्मीदयित हुं फट् शिरसे स्वाहा, ॐ क्लीं मन्मथोत्तमाङ्गज कामदीपन हुं फट् शिखायै वषट्, ॐ क्लीं परमसुभग सर्वसौभाग्यकराप्रतिरूपक केशव स्मर हुं फट् कवचाय हुं, ॐ क्लीं सुरासुरमनुजसुन्दरीहृदयविदारण सर्वप्रहरणधर सर्वकामिक हन हन हृदयबन्धनान्याकर्षय आकर्षय महाबल हुं फट् अस्त्राय फट्, ॐ क्लीं त्रिभुवनेश्वर सर्वजनमनांसि हन हन दारय दारय मे वशमानय वशमानय हुं फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। इसी प्रकार अंगूठों से करतल-करपृष्ठ तक कर न्यास करके हृदय में ॐ नमः ह्रीं पराय पुरुषात्मने नमः, शिर पर ॐ नमः श्रीं पराय सत्यात्मने नमः, शिखा में ॐ नमः क्लीं परायाच्युतात्मने नमः, कवचस्थान में ॐ नमः पुरुषोत्तमपराय वासुदेवात्मने नमः, अस्त्रस्थान में ॐ नमो अप्रतिरूप पराय सङ्कर्षणात्मने नमः, नेत्रों

में ॐ लक्ष्मीनिवासपराय प्रद्युम्नात्मने नम:, उदर में ॐ नम: सकलजगत्क्षोभण पराय अनिरुद्धात्मने नम:, पृष्ठ में ॐ नम: सर्वस्त्रीहृदयविदारणपराय नारायणात्मने नम:, हाथों में ॐ नम: त्रिभुवनमनोन्मादकरपराय ब्रह्मणे नम:, ऊरुओं में ॐ नम: परम-सुभगपराय विष्ण्वात्मने नम:, जानुओं में ॐ नम: सौभाग्यकरपराय नृसिंहात्मने नम:, पैरों में ॐ नम: सर्वकामप्रदपराय वराहा-त्मने नम:—इस प्रकार न्यास करके 'त्रैलोक्यमोहनहृषीकेश अप्रतिरूपमन्मथसर्वस्त्रीहृदयाकर्षणागच्छ नम:' से व्यापक न्यास करे।

तदनन्तर श्रीकर प्रकरणोक्तवत् पञ्च बाणों और पञ्च कामदेवों का न्यास करके क्लीं अं क्लीं नम:, क्लीं आं क्लीं नम: इत्यादि के रूप में मातृका न्यास करे। काममालामन्त्र के चौवालीस वर्णों का क्रमश: शिर मुख इत्यादि में मातृका वर्ण न्यास स्थानों से नाभिस्थान तक करे। अवशिष्ट पाँच वर्णों से उदर, हृदय, कण्ठ, मुख नासिकाछिद्रों में न्यास करे। तीन अक्षरों से सर्वांग में व्यापक न्यास करे। सम्पूर्ण मालामन्त्र से एक बार पुन: व्यापक न्यास करके इस प्रकार कामयुगल न्यास करे—

क्लीं अं कामाय रत्यै नम:। क्लीं आं कामदाय प्रीत्यै नम:। क्लीं इं कान्ताय कामिन्यै नम:। क्लीं ईं कान्तिमते मोहिन्यै नम:। क्लीं उं कामगाय कमलायै नम:। क्लीं ऊं कामचाराय विलासिन्यै नम:। क्लीं ऋं कामिने कल्पलतायै नम:। क्लीं ॠं कामुकाय श्यामलायै नम:। क्लीं ऌं कामवर्धनाय शुचिस्मितायै नम:। क्लीं ॡं कामाय विस्मिताक्ष्यै नम:। क्लीं एं रमाय विशालाक्ष्यै नम:। क्लीं ऐं रमणाय लेलिहानायै नम:। क्लीं ओं रतिनाथाय दिगम्बरायै नम:। क्लीं औं रतिप्रियायै रामायै नम:। क्लीं अं रात्रिनाथाय कुब्जिकायै नम:। क्लीं अ: रमाकान्ताय कान्तायै नम:। क्लीं कं रममाणाय नित्यायै नम:। क्लीं खं निशाचराय कल्याण्यै नम:। क्लीं गं नन्दकाय भोगिन्यै नम:। क्लीं घं नन्दनाय कामदायै नम:। क्लीं ङं नन्दिने सुलोचनायै नम:। क्लीं चं नन्दयित्रे सुलापिन्यै नम:। क्लीं छं पञ्चबाणाय मर्दिन्यै नम:। क्लीं जं रतिसखाय कलाप्रियायै नम:। क्लीं झं पुष्पधन्वने वराक्ष्यै नम:। क्लीं ञं महाधनुषे सुमुख्यै नम:। क्लीं टं भ्रामणाय नलिन्यै नम:। क्लीं ठं भ्रमणाय जटिन्यै नम:। क्लीं डं भ्रममाणाय पालिन्यै नम:। क्लीं ढं भ्रमाय शिवायै नम:। क्लीं णं भ्रान्ताय मुग्धायै नम:। क्लीं तं भ्रामकाय रमायै नम:। क्लीं थं भृंगाय भ्रमायै नम:। क्लीं दं भ्रान्तचाराय लोलायै नम:। क्लीं धं भ्रमावहाय चंचलायै नम:। क्लीं नं मोहनाय दीर्घजिह्वायै नम:। क्लीं पं मोहकाय रतिप्रियायै नम:। क्लीं फं मोहाय लोलाक्ष्यै नम:। क्लीं बं मोहवर्धकाय भृङ्गिन्यै नम:। क्लीं भं मदनाय पाटलायै नम:। क्लीं मं मन्मथाय मदनायै नम:। क्लीं यं मातङ्गाय मालायै नम:। क्लीं रं भृंगनायकाय हंसिन्यै नम:। क्लीं लं गायनाय विश्वतोमुख्यै नम:। क्लीं वं गीतिज्ञाय जगदानन्दिन्यै नम:। क्लीं शं नर्तकाय रमण्यै नम:। क्लीं षं खेलकाय कान्त्यै नम:। क्लीं सं उन्मत्तकाय कलकण्ठ्यै नम:। क्लीं हं मत्तकाय वृकोदर्यै नम:। क्लीं ळं विलासिने मेघश्यामायै नम:। क्लीं क्षं लोमवर्धनाय उन्मत्तायै नम:।

तदनन्तर श्रीकर प्रकरणोक्त बारह तत्त्वों का न्यास संहारक्रम से दोनों पार्श्वों नाभि गुह्य गुदा दोनों उरुमूलों दोनों जानुओं दोनों गुल्फों एवं अंगुलियों में करे। प्रत्येक स्थान में 'क्लीं नम:' से न्यास करे। वासुदेव प्रकरणोक्त प्रकार से उन-उन स्थानों में अक्षर न्यास संहार-सृष्टि-स्थितिक्रम से करे। अष्टाक्षर प्रकरणोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास करे। तब गायत्री न्यास करे—शिर पर त्रैं नम:, ललाट में लों नम:, दक्ष नेत्र में क्यं नम:, वाम नेत्र में मों नम:, दक्ष बाहुमूल में हं नम:, मध्य में नां नम:, मणिबन्ध में यं नम:, अंगुलिमूल में विं नम:, आगे द्मं नम:, वाम करमूल में हें नम:, मध्य में स्मं नम:, मणिबन्ध में रां नम:, अंगुलिमूल में यं नम:, आगे धीं नम:, दक्ष ऊरुमूल में मं नम:, जानु में हिं नम:, गुल्फ में तं नम:, अंगुलिमूल में न्नों नम:, आगे विं नम:, वाम ऊरुमूल में ष्णुं नम:, जानु में प्रं नम:, गुल्फ में चों नम:, अंगुलिमूल में दं नम:, आगे यात् नम:।

तदनन्तर पूर्वोक्त षडङ्ग द्वादशांग, बाण, काम न्यासों को करे। तब वाम भाग में श्रीं स्वां श्रिये नम: से न्यास करके शिर पर स्वां लक्ष्म्यै नम:, मुख में स्वीं सरस्वत्यै नम:, कण्ठ में स्वूं रत्यै नम:, गुह्य में स्वें प्रीत्यै नम:, ककुद में स्वैं कान्त्यै नम:, हृदय में स्वों कीर्त्यै नम:, नाभि में स्वौं तुष्ट्यै नम:, सर्वांग में स्व: पुष्ट्यै नम:—इस प्रकार से न्यास करके पूर्ववत् व्यापक मन्त्र से व्यापक न्यास करे। फिर से ऋष्यादि न्यास के बाद वक्ष में क्लीं श्रीवत्साय नम:, कण्ठ में क्लीं कौस्तुभाय नम:, कन्धों से पैर तक क्लीं वनमालायै नम:, दाहिने हाथ में नीचे ओं क्लीं सुदर्शनमहाचक्राय दह दह सर्वदुष्टभयं कुरु कुरु छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द विदारय विदारय पर मन्त्रान् ग्रस ग्रस भक्षय भक्षय भूतानि त्रासय त्रासय हुं फट् स्वाहा चक्राय नम:—इससे न्यास

करके उसके ऊपर वाले हाथ में ॐ क्लीं खड्ग तीक्ष्ण भिन्द भिन्द हुं फट् स्वाहा खड्गाय नमः से न्यास करे। उसके ऊपर ॐ क्लीं संवर्तकमुसल पोथय पोथय हुं फट् स्वाहा मुसलाय नमः, उसके ऊपर दक्षिण हस्त में ॐ क्लीं क्रों कच कच हुं फट् स्वाहा अंकुशाय नमः, बाँयें हाथ मे ऊपर ॐ क्रीं पांश ब्रन्ध बन्ध हुं फट् स्वाहा पाशाय नमः, उसके नीचे ॐ क्ली जलचराय स्वाहा शङ्खाय नमः, उसके नीचे ॐ क्लीं शार्ङ्गाय सशराय हुं फट् धनुषे नमः, उसके नीचे ॐ क्लीं कौमोदकि महावले सर्वासुरान्तकि प्रसीद प्रसीद मर्दय मर्दय हुं फट् गदायै नमः से न्यास करे। तदनन्तर त्रैलोक्य मोहिनी मुद्रा के साथ कामवीज क्लीं कहकर मूर्धा पर न्यास करके मूलोक्त विधि से ध्यान करे। मानस पूजा, योगपीठ न्यास के बाद 'पक्षिराजाय स्वाहा' मन्त्र से गरुड़ की पूजा करे। तत्पश्चात् देव का आवाहनादि पुष्पोपचार पूजा के बाद देव के बाँयें ऊरु में 'श्रीं श्रियै नमः' से लक्ष्मी की पूजा करे। अष्टदल केसर में देव के आगे से पूर्वादि चारो दिशाओं में अंगचतुष्टय, कोनों में अस्त्र, सामने नेत्रों की पूजा करे। अष्टदल में लक्ष्म्यादि पूर्वोक्त अष्ट शक्तियों की पूजा करे। चारो दिशाओं के दलाग्रों में शङ्खाय नमः, चक्राय नमः, गदायै नमः, मुसलाय नमः एवं कोण दलों में शार्ङ्गाय नमः, खड्गाय नमः, अंकुशाय नमः तथा पाशाय नमः से पूजा करे। दश लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा करे। इसके बाहर पूर्वोक्त कुमुदादि दिग्गजों की पूजा करे। धूप, दीप समर्पित करे। क्लीं त्रैलोक्य मोहनाय ह्रीं पराय पुरुषात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय श्रीं पराय सत्यात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय क्लीं परायाच्युतात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय पुरुषोत्तमाय पराय वासुदेवात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनायाप्रतिरूपाय क्लीं पराय सङ्कर्षणात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय लक्ष्मीनिवासाय पराय प्रद्युम्नात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सकलजगत्क्षोभणाय पराय अनिरुद्धात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सर्वस्त्रीहृदयविदारणाय पराय नारायणात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय त्रिभुवनमनोन्मादकराय पराय ब्रह्मात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय परमसुभगाय पराय विष्ण्वात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सर्वसौभाग्यकराय पराय नृसिंहात्मने नमः, क्लीं त्रैलोक्यमोहनाय सर्वकामप्रदाय पराय वराहात्मने नमः, ह्रीं श्रीं क्लीं पुरुषोत्तमाय नमः, ह्रीं श्रीं क्लीं हृषीकेशाय नमः, ह्रीं श्रीं क्लीं विष्णवे नमः, ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीधराय नमः, ह्रीं श्रीं क्लीं रामाय नमः—इस प्रकार से देव की पूजा के बाद नैवेद्य समर्पणादि करके शेष विधियों का समापन करे। पुरुषोत्तम की छः आवरणों की यह पूजा जो करता है, वह सभी सम्पदाओं का स्वामी होता है। इस प्रकार की पूजा के बाद विधिवत् एक लाख मन्त्र-जप करे। इसका दशांश हवन चन्द्रार्ध कुण्ड में पलाश के फूलों से मूल मन्त्र से या इसके गायत्री मन्त्र से करे। तर्पण मार्जन के बाद ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मों का साधन करे।

यजनद्रव्यविधानम्

सारसंग्रहे—

श्रीफलैः कमलैर्वापि हुनेदर्कसहस्रकम्। अकिञ्चनोऽपि मनुजो धनाधिपसमो भवेत्॥१॥
यो जपेदयुतं प्रातस्तस्याधिर्नाशमेति च। ज्योतिष्मतीतैलवरं जुहुयाद् व्याधिमुक्तये॥२॥

ज्योतिष्मती तेजोवती।

अष्टाधिकसहस्रं च भवेद् बुद्धिकरं ततः। सौभाग्यमतुलं चैव लभते स मनोज्ञताम्॥३॥
अष्टाधिकशतं जप्त्वा सम्यगञ्जलिनीं शुभाम्। समूलकाण्डां शिरसा धारयेन्मन्त्रवित्तमः॥४॥
सर्वलोकप्रियतमो भवेन्नियतमाशु सः। अश्वमारप्रसूनैश्च संपूज्य पुरुषोत्तमम्॥५॥
अष्टाधिकसहस्रं च कुमुदैर्जुहुयात् ततः। राजानो वशगाः सर्वे भवन्त्येव सुनिश्चितम्॥६॥
दिवसैश्च त्रिदशभिः किङ्करा एव नान्यथा। मालतीपुष्पहोमेन वैश्यान् वशयतेऽचिरात्॥७॥
पलाशकुसुमैर्हुत्वा विप्रान् शीघ्रं वशं नयेत्। अभिकांक्षति यां योषां तस्या नामयुतं मनुम्॥८॥
जपेल्लक्षं प्रतिदिनं चाष्टाधिकसहस्रकम्। (दिनादौ वशगा भूत्वा तत्रायात्येव नान्यथा॥९॥
चोरापहृतवित्तस्तु ह्यष्टाधिकसहस्रकम्।) अश्वत्थोत्थसमिद्भिश्च निशि नित्यं त्रिपक्षकम्॥१०॥
अथवा कटुतैलेन त्रिपक्षान्तं हुनेत् क्रमात्। अथवाणुं दशशतं प्रजपेन्मनुजोऽन्वहम्॥११॥
चौर एत्य धनं दत्त्वा प्रणम्य प्रतिगच्छति। सहस्रजप्तममुना मनुना मनुजास्थि च॥१२॥

निखातं शत्रुसदने शत्रुमुच्चाटयेद् ध्रुवम्। राजिकाष्टशतं जप्त्वा निखातं शत्रुमन्दिरे ॥१३॥
हयारिकुसुमं वापि पक्षयोरुभयोरपि। शुक्लं रक्तं केशयुक्तं रिपुमुच्चाटयेद् ध्रुवम् ॥१४॥
षण्मासं जुहुयाद्रात्रौ कलिद्रमसमिद्वरैः। रिपुर्निधनमायाति ह्यष्टाधिकसहस्रतः ॥१५॥
मासषट्कं हुनेद्वेत्रसमिद्भिश्च सहस्रकम्। (तेजोवत्याः सह तैलैर्हुनेदष्टसहस्रकम्) ॥१६॥
तेजोवत्या ज्योतिष्मत्याः।

शत्रुर्मरणमाप्नोति ह्यर्वाङ् मासचतुष्टयात्। मन्त्री विविक्ते भूदेशे जपहोमार्चनारतः ॥१७॥
अङ्कोलाज्यं सहस्रं च हुनेन्मासत्रयावधि। ततः कुर्वंश्च मध्याह्ने पावकाच्चन्द्रसन्निभा ॥१८॥
प्रादुर्भवेच्च गुटिकां तां जप्त्वाभ्यर्च्य धारयेत्। आनने वाथ शिरसि स भवेत् खेचरस्तदा ॥१९॥
अदृश्यः सिद्धसंघैश्च भवेत् साधकसत्तमः। आज्याक्ताभिश्च दूर्वाभिर्होमो भयविनाशनः ॥२०॥
यस्य नामयुतं मन्त्रं प्रजपेत् पूर्वसंख्यया। शमयेदापदस्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥२१॥
इमं मन्त्रं जपेद्भूयः समस्तैश्वर्यवान् भवेत्। इति।

महासंमोहनतन्त्रे—
दारिद्र्यशोकादिमहाभयरोगापमृत्युहृत्। दौर्भाग्यशापपरिभूतिहरः परिकीर्तितः ॥१॥
श्रीकीर्तिकान्तिधनदो धर्मकामार्थमोक्षदः। किं बहूक्तेन मन्त्रोऽयं कामधेनुरिवोत्तमः ॥२॥
इत्थं सुरासुरव्रातनरोरगसुचारणैः। सिद्धगन्धर्वयक्षैश्च सकलैश्च महर्षिभिः ॥३॥
सेवितं मन्त्रवर्यस्य संक्षेपाच्च विधानकम्। पुरुषोत्तमदेवस्य गदितं च मया प्रिये ॥४॥
गोपनीयं प्रयत्नेन भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्। इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि श्रीफल या कमल से बारह हजार हवन करने से दरिद्र मनुष्य भी धनाधिप के समान हो जाता हैं। जो प्रात:काल में इसके मन्त्र का दश हजार जप करता है, उसके रोग नष्ट होते हैं। व्याधि से मुक्ति के लिये ज्योतिष्मती के तेल से हवन करे। इसके एक हजार आठ जप से बुद्धि बढ़ती है एवं अतुल्य सौभाग्य तथा मनोज्ञता की प्राप्ति होती है। अञ्जलिनी को एक सौ आठ मन्त्रजप से मन्त्रित करके जड़ सहित उसे शिर पर धारण करे तो सभी लोकों का प्रियतम होता है। पुरुषोत्तम की पूजा कनैल के फूलों से करके एक हजार आठ हवन कुमुद के फूलों से करे तो सभी राजा साधक के वश में हो जाते हैं। एक मास इस प्रकार करने से देवता भी उसके किङ्कर के समान होते हैं। मालतीपुष्पों के हवन से अल्प काल में वैश्य वश में होते हैं। पलाश फूलों से हवन करने पर ब्राह्मण शीघ्र वश में होते हैं। जिस स्त्री को पाने की इच्छा हो, उस स्त्री का नाम जोड़कर एक लाख मन्त्र जप प्रतिदिन एक हजार आठ जप को करते हुये पूरा करे। इस प्रकार एक सौ दिन में वशीभूत होकर वह स्त्री आती है। चोरों से चुरायी गयी वस्तु भी वापस मिलती है। पैंतालीस दिनों तक रात में पीपल की समिधा से हवन करे अथवा कडुआ तेल से पैंतालीस दिनों तक हवन करे अथवा प्रतिदिन एक हजार मन्त्रजप करे तो चोर चुराया धन लौटाकर प्रणाम करके जाता है। मनुष्य की हड्डी को एक हजार मन्त्र जप से मन्त्रित करके शत्रु के घर में गाड़ दे तो उसका उच्चाटन होता है। एक सौ आठ जप से राई को मन्त्रित करके शत्रु के घर में गाड़ दे अथवा कनैल के फूलों को दोनों पक्षों में मन्त्रित करके शत्रु के केश के साथ गाड़ दे तो भी उसका उच्चाटन होता है। छ: महीनों तक रात में कलिद्रुम की समिधा से एक हजार आठ हवन करे तो शत्रु की मृत्यु होती है। छ: महीनों तक वेंत की समिधा से एक हजार हवन करे तो अथवा तेजोवती तेल के साथ एक हजार आठ हवन चार माह तक करे तो शत्रु मर जाता है। निर्जन स्थान में जप करके अङ्कोल आज्य से एक हजार हवन तीन महीनों तक करे तो मध्याह्न में चन्द्रमा के समान अग्नि से गुटिका मिलती है। इसे मुख में या शिर पर धारण करने से साधक आकाशगामी हो जाता है एवं वह सिद्धसङ्घों से अदृश्य हो जाता है। गोघृतसिक्त दूब के हवन से भय का नाश होता हैं। जिसका नाम जोड़कर पूर्व संख्या में मन्त्रजप किया जाता है, उसकी सभी आपदाओं का शमन होता है। इस मन्त्र के जप से सभी ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं।

हृषीकेश मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार हृषीकेश का सर्वार्थ साधक अष्टाक्षर मन्त्र है—'क्लीं हृषीकेशाय नम:। इस मन्त्र के ऋषि, ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता सुरासुरों से नमस्कृत हृषीकेश हैं। छ: दीर्घ क्लीं से इसका षडङ्ग न्यास किया जाता है। शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी, शुभ्र वर्ण वाले, आभूषणों से भूषित, गरुड़ पर आसीन, सर्वत्र व्यापक विष्णु का इस मन्त्र की आराधना में ध्यान किया जाता है।

प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नम:। हृदये श्री हृषीकेशाय देवतायै नम:। तदनन्तर अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके क्लां क्लीं क्लूं क्लैं क्लौं क्ल: से षडङ्ग न्यास एवं करन्यास के बाद पूर्वोक्त ध्यान करे। तदनन्तर अंगपूजा करके देव के वक्ष के दाँयें भाग में श्रीवत्साय नम:, वाम भाग में कौस्तुभाय नम:, ग्रीवा में वनमालायै नम:, देवमूर्ति में मुकुन्दाय नम:, कमल-कर्णिका में पक्षिराजाय नम:, कर्णिका के ऊपर पंकजनाभाय नम:, अष्टदल में पुरुषोत्तमाय नम:, लक्ष्मीनिवासाय नम:. सकलजगन्नाथाय नम:, जगत् क्षोभणाय नम:, सर्वस्त्रीहृदयमनोन्मादनाय नम:, त्रिभुवनमनोन्मादकाय नम:। सर्वसौभाग्यदाय नम:, सर्वकामप्रदाय नम:—इस प्रकार देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से पूजा करने के बाद देव के बाँयीं गोद में श्रीं श्रियै नम:, देवता के चारो ओर सर्वदेवताभ्यो नम: से पूजन करके भूपुर में लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा पूर्ववत् करे। तब पूजा का समापन करे।

वर्णलक्ष के नियमानुसार आठ लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन आज्याक्त सुन्दर विकसित कमलों से करे। तर्पण, मार्जन, ब्राह्मणभोजन कराये। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से अपने इष्ट का साधन करे। भाग मिले जल से तर्पण सर्वकामप्रद होता है। पूर्वोक्त हृषीकेश मन्त्र भी ऐसा करने से सिद्ध होता है। हृषीकेश के एक अन्य मन्त्र के ऋषि अर्जुन, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता हृषीकेश हैं। क्लां क्लीं इत्यादि से इसका अंगन्यास किया जाता है। ध्यान-पूजादि पूर्ववत् होते हैं।

श्रीधरमन्त्र:

सारसंग्रहे—

रमारुद्धं मारबीजं श्रीधराय ततो वदेत्। त्रैलोक्यमोहनायेति नत्यन्त: षोडशाक्षर: ॥१॥

मारबीजं कामबीजं, तद्रमाबीजेन रुद्धं व्याप्तं, तेन श्रींक्लींश्रीं इति। नत्यन्तो नमोन्त:।

तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्रं छन्द ईरितम्। देवता श्रीधर: प्रोक्त: सर्वदेवौघवन्दित: ॥२॥

श्रीबीजेन षडङ्गानि कुर्याद् दीर्घयुजा सुधी:।

दुग्धाब्धौ सकलर्तुसेवितवने द्वीपे च कल्पद्रुमं तस्याध: कमलोरुपीठविलसत्पक्षीन्द्ररम्यासने।
बिभ्राणां करपङ्कजैररिदरौ सम्यग् गदामम्बुजं स्वर्णाभं मुकुटोल्लसन्मणिरुचा दीप्तं भजे श्रीधरम् ॥३॥

जपपूजादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत्।

पूर्ववत् हृषीकेशवत्।

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतै:। तर्पणादि तत: कुर्यात् पूर्ववत् साधकोत्तम: ॥४॥
तत: सिद्धे मनौ मन्त्री काम्यकर्म समाचरेत्। सुगन्धै: श्वेतपुष्पैश्च होमो लक्ष्मीकर: शुभ: ॥५॥
श्रीकराद्युदितान् योगान् विदध्यात्तत्र साधक:। ध्यानपूजाजपाद्यैर्यो भजते श्रीधरं नर: ॥६॥
पुत्रपौत्रैश्वर्यकीर्ती: प्राप्नोत्यखिलसंपद:। अपुत्र: परमं विष्णोर्धाम संविशते पुन: ॥७॥ इति।

श्रीधरमन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार षोडशाक्षर श्रीधर मन्त्र का स्वरूप है—श्री क्लीं श्रीं श्रीधराय त्रैलोक्यमोहनाय नम:। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता सर्वदेववन्दित श्रीधर हैं। श्रां श्रीं श्रूं श्रैं श्रौं श्र: से इसका कराङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

दुग्धाब्धौ सकलर्तुसेवितवने द्वीपे च कल्पद्रुमं तस्याध: कमलोरुपीठविलसत्पक्षीन्द्ररम्यासने।
बिभ्राणां करपङ्कजैररिदरौ सम्यग् गदामम्बुजं स्वर्णाभं मुकुटोल्लसन्मणिरुचा दीप्तं भजे श्रीधरम्।।

इसके जप-पूजादि सभी कुछ पूर्ववत् अर्थात् हृषीकेश मन्त्र के समान होते हैं। मन्त्रसिद्धि के लिये एक लाख मन्त्र-जप, दशांश हवन घी से एवं तर्पण पूर्ववत् किया जाता है। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से काम्य प्रयोग किया जाता है। सुगन्धित उजले फूलों के हवन से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। श्रीकर मन्त्र में कथित योगों को करके ध्यान-पूजा-जपादि से जो नर श्रीधर का पूजन करता है, उसे पुत्र, पौत्र, ऐश्वर्य, कीर्ति और अखिल सम्पदा की प्राप्ति होती है और अन्त में विष्णु के परम धाम में उसका निवास होता है।

अच्युतादिमन्त्रविधिस्तत्प्रयोगविधिश्च

तथा—

अच्युतानन्दगोविन्द-पदं ङेन्तं समुच्चरेत्। हृदन्तोऽयं मनु: प्रोक्तो रुद्रसंख्याक्षर: पुन: ।।१।।
अथवैते त्रयो मन्त्रा: प्रोच्यन्ते सर्वकामदा:। अच्युताय नमो ह्येकोऽनन्ताय नम इत्यपि ।।२।।
गोविन्दाय नम: प्रोक्तस्तृतीयो देशिकोत्तमै:। समुदायैकमन्त्रस्य ऋषि: शौनक ईरित: ।।३।।
विराट् छन्दो देवता च परमात्मा हरि: स्मृत:। षडङ्गविधिरुक्तो हि द्विरुक्तैर्मन्त्रनामभि: ।।४।।
मन्त्रत्रितयपक्षे तु देवता छन्द इत्युभे। पूर्वोक्ते च मुनि: प्रोक्त: सम्यक् पराशरस्तथा ।।५।।
व्यासश्च नारदश्चैव मन्त्रवर्णै: षडङ्गकम्। शङ्खचक्रधरं देवं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ।।६।।
सर्वायुधैरुपेतं तं गरुडोपरि संस्थितम्। सनकादिमुनीन्द्रैस्तु सर्वदेवैरुपासितम् ।।७।।
श्रीभूमिसहितं देवमुद्यदादित्यसंनिभम्। प्रातरुद्यत्सहस्रांशुमण्डलोपमकुण्डलम् ।।८।।
सर्वलोकस्य रक्षार्थमनन्तं नित्यमेव हि। अभयं वरदं देवं धारयन्तं मुदान्वितम् ।।९।।
पूर्वोदिते यजेत् पीठे वैष्णवे तूक्तवर्त्मना। देवमावाह्य मन्त्राङ्गै: प्रथमावृतिरिष्यते ।।१०।।
चक्राद्यैश्च द्वितीया स्यात्तृतीया सनकादिभि:। सनक: स्यात्ततस्तद्वत् सनन्दनसनातनौ ।।११।।
सनत्कुमारश्च पराशरो व्यासश्च नारद:। शौनकोऽष्टम एवं स्याच्चतुर्थी लोकपालकै: ।।१२।।
तदायुधै: पञ्चमी स्यादेवं पूजा समीरिता। इति।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि शौनकाय ऋषये नम:। मुखे विराजे छन्दसे नम:। हृदि हरये परमात्मने देवतायै नम: इति विन्यस्य, विनियोगमुक्त्वा, ॐअच्युताय हृदयाय नम:। ॐअनन्ताय शिरसे०। ॐगोविन्दाय शिखा०। ॐअच्युताय कवचाय०। ॐअनन्ताय नेत्र०। ॐगोविन्दाय अस्त्रा०। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यानाद्यङ्गार्चान्ते अष्टदलेषु प्रागुक्तचक्राद्यायुधाष्टकं संपूज्य, द्वितीयाष्टदले—सनकाय नम:। सनन्दनाय०। सनातनाय०। सनत्कुमाराय०। पराशराय०। व्यासाय०। नारदाय०। शौनकाय०। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति।

तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतै:। तर्पणं स्वाभिषेकं च कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम् ।।१३।।
एवं कृतवतस्तस्य रोगनाशो भविष्यति। कन्यार्थी लोजहोमेन लक्ष्म्यर्थी बिल्वहोमत: ।।१४।।
वस्त्रार्थी पुष्पहोमेन ह्यारोग्यार्थी तिलैर्हुतै:। तत्तत्फलमवाप्नोति मन्त्रविन्नात्र संशय: ।।१५।।
रविवारे जले स्थित्वा नाभिमात्रे जपेद् बुध:। अष्टोत्तरसहस्रं तु ज्वरनाशो भविष्यति ।।१६।।
विवाहार्थी जपेन्मासं शशिमण्डलमण्डनम्। देवं ध्यायेल्लभेत् कन्यां शोभनां च कुटुम्बिनीम् ।।१७।।
जपहोमार्चनाभिर्यो भजेन्मन्त्रं समाहित:। भुक्त्वेह सकलान् भोगान् याति विष्णो: परं पदम् ।।१८।। इति।

अच्युतानन्त गोविन्द मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार एकादशाक्षर मन्त्र इस प्रकार है—अच्युतानन्तगोविन्दाय नम:।

पुन: प्रत्येक नाम से अलग-अलग सर्वकामद तीन मन्त्र बनते हैं—१. अच्युताय नमः, २. अनन्ताय नमः, ३. गोविन्दाय नमः। इसके न्यास आदि इस प्रकार होते हैं—

ऋष्यादि न्यास—शिरसि शौनकाय ऋषये नमः, मुखे विराजे छन्दसे नमः, हृदि हरये परमात्मने देवतायै नमः। ऋष्यादि न्यास करने के पश्चात् अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग किया जाता है।

हृदयादि न्यास—ॐ अच्युताय हृदयाय नमः, ॐ अनन्ताय शिरसे स्वाहा, ॐ गोविन्दाय शिखायै वषट्, ॐ अच्युताय कवचाय हुं, ॐ अनन्ताय नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ गोविन्दाय अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी किया जाता है। अन्य तीन मन्त्रों के छन्द एवं देवता पूर्ववत् है; मात्र ऋषि भिन्न-भिन्न हैं। प्रथम मन्त्र के ऋषि पराशर, द्वितीय के व्यास और तृतीय के ऋषि नारद हैं। मन्त्रवर्णों से इनका षडङ्ग न्यास किया जाता है; जैसे—अं हृदयाय नमः, अं हृदयाय नमः, गों हृदयाय नमः इत्यादि। तदनन्तर शंख-चक्र धारण करने वाले, चार भुजाओं वाले, किरीट धारण करने वाले, समस्त आयुधों से समन्वित, गरुड के ऊपर स्थित, सनकादि मुनियों एवं समस्त देवों द्वारा उपसित, उगते सूर्य के सदृश, प्रात:कालीन सूर्यमण्डल के सदृश कुण्डल धारण करने वाले, समस्त लोक की रक्षा अभय धारण करने वाले, वर प्रदान करने वाले, सदा प्रसन्नमुख अनन्त का नित्य ध्यान करे।

इसका पूजा यन्त्र दो अष्टदल कमल और भूपुर से बनावे। प्रथम आवरण में कर्णिका में अंग पूजा करे। द्वितीयावरण में प्रथम अष्टदल में चक्रादि आठ आयुधों की पूजा करे। तृतीयावरण में द्वितीय अष्टदल में सनकाय नमः, सनन्दनाय नमः, सनातनाय नमः, सनत्कुमाराय नमः, पराशराय नमः, व्यासाय नमः, नारदाय नमः, शौनकाय नमः से पूजन करके चतुर्थ आवरण में लोकेशो की पूजा करे एवं पञ्चम आवरण में उनके आयुधों की पूजा करे।

सिद्धि के लिये एक लाख मन्त्र-जप के बाद उसका दशांश घी से हवन करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। ऐसा करने से रोगों का नाश होता है। विवाहार्थी लावा से हवन करे। धनार्थी बेल से हवन करे। वस्त्रार्थी फूलों से और आरोग्यार्थी तिल से हवन करे। ऐसा करके मन्त्रज्ञ तत्तत् फल को प्राप्त करता है; इसमें कोई संशय नहीं है। रविवार को नाभि तक जल में खड़े होकर एक हजार आठ जप करने से बुखार छूट जाता है। विवाहार्थी चन्द्रमण्डल में देव का ध्यान करके एक महीने तक जप करे तो उसे अच्छे कुल की सुन्दर पत्नी मिलती है। जो मनुष्य एकाग्र होकर जप-होम-अर्चन से देवता का भजन करता है, वह सभी भोगों को भोगकर अन्त में विष्णु के परम पद को प्राप्त करता है।

नृसिंहमन्त्रोद्धारः

अथ नृसिंहमन्त्रः। सारसंग्रहे—

अथ वक्ष्ये समासेन नरसिंहमनोः शुभम्। विधानं सजपध्यानं पूजाहोमादिभेदतः ॥१॥
संसारार्तिप्रशमनं दुःखदारिद्र्यनाशनम्। सर्वरोगहरं मृत्युनाशनं मोक्षदायकम् ॥२॥
विष्णुः शार्ङ्गी वह्निबिन्दुयुतो नीरं त्रिमूर्तियुक्। वह्निबिन्दुयुतः कालो व्योम दीर्घयुतं जलम् ॥३॥
सनेत्रं देशिकैः प्रोक्तं तदन्ते कर्णबिन्दुयुक्। शान्तो ढान्तनिविष्टश्च चतृतीयो जलान्वितः ॥४॥
मांसं बिन्दुयुतं प्रोक्तं तद्वत् णान्तं (सर्व) च पूतना। सद्ययुक्ता सकर्णोऽथ कालः कान्तः सबिन्दुयुक् ॥५॥
त्रिविक्रमयुता दीर्घा भृगुः नेत्रेन्दुसंयुतः। व्योम बिन्दुयुतं नाभित्रिमूर्तिः श्वेत एव च ॥६॥
ढान्तो बिन्दुयुतो नाभिस्ततृतीयरबिन्दुयुक्। कालस्त्रिविक्रमयुतः पूतना वालिकर्णयुक् ॥७॥
त्रिविक्रमयुतः सूर्यः शुद्धिः कर्णयबिन्दुयुक्। दीर्घा कालोऽनन्तयुतो रविर्वायुसमन्वितः ॥८॥
व्योम बिन्दुयुतं प्रोक्तो मन्त्रो द्वात्रिंशदक्षरः। वेदादिमायापुटितं केचिदाहुर्मनीषिणः ॥९॥ इति।

विष्णुः उ। शार्ङ्गी ग, वह्निः र, बिन्दुः अं, ताभ्यां युक्तस्तेन ग्रं। नीरं व, त्रिमूर्तिः ई, तेन वी। वह्निः र, बिन्दुः अं, तेन रं। कालो म। व्योम ह, दीर्घः आ, तेन हा। जलं व, सनेत्रं इयुतं, तेन वि। शान्तः ष, ढान्तो ण, कर्ण उ,

बिन्दुः अं, तैः ष्णुं। चतृतीयो ज, जलं व, तेन ज्व। मांसं ल, बिन्दुः अं, तेन लं। णान्तं त, तद्वत् बिन्दुमत्तेन तं। सर्व स्वरूपं। पूतना त, सद्य ओ, तेन तो। कालो म, कर्ण उ, तेन मु। (कान्तः) ख, बिन्दुरनुस्वारस्तेन खं। त्रिविक्रम ऋ, तद्युता दीर्घा न तेन नृ। भृगुः स, नेत्रे इ, इन्दुरनुस्वारस्तेन सिं। व्योम ह, बिन्दुयुतं तेन हं। नाभिः भ, त्रिमूर्तिः ई, तेन भी। श्वेतः ष। ढान्तो ण, बिन्दुः अं, तेन णं। नाभिः भ। ततृतीयं द, रस्वरूपं, बिन्दुः अं, तेन द्रं। कालो म, त्रिविक्रम ऋ, तेन मृ। पूतना त, वाली य, कर्ण उ, तेन त्यु। त्रिविक्रमः ऋ, सूर्यः म, तेन मृ। शुद्धिः त, कर्ण उ, य स्वरूपं, बिन्दुः अं, तेन त्युं। दीर्घा न। कालो म, अनन्त आ, तेन मा। रविः म, वायुः य, तेन म्य। व्योम ह, बिन्दुः अं, तेन हं इति। स्पष्टं तु—'उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्' इति।

तथा—

ब्रह्मा ऋषिः समुद्दिष्टोऽनुष्टुप् छन्द उदाहृतम्। देवता नरसिंहोऽथ सुरासुरनमस्कृतः ॥१०॥
वेदैश्चतुर्भिर्वसुभिः षड्भिः षड्भिश्च वेदकैः। षडङ्गमुक्तं मन्त्रार्णैः केचित् षड्दीर्घमायया ॥११॥
सहितैरङ्गमिच्छन्ति परे पञ्चाङ्गमूचिरे। पादैः सर्वेण मन्त्रेण वर्णन्यासमथाचरेत् ॥१२॥

पञ्चाङ्गं तु श्रुतिसंमतम्। तथा वेदे चाथर्वणीये नृसिंहतापनीये—'तस्य हि पञ्चाङ्गानि भवन्ति। चत्वारः पादाश्चत्वार्यङ्गानि भवन्ति सप्रणवं सर्वमेव भवतीति' इति।

तथा—

शीर्षेऽलिके नेत्रयुग्मे आस्यदोष्पादसन्धिषु। अग्रयुक्तेषु कण्ठे च हृदि नाभौ च पार्श्वके ॥१३॥
पृष्ठे ककुदि विन्यस्येत् क्रमान्मन्त्रार्णकान् सुधीः। नृसिंहसांनिध्यकरो न्यासो दशविधस्त्विह ॥१४॥
संप्रोच्यते तत्र पूर्वमङ्गुलीन्यास उच्यते। दशाङ्गुलीनां प्रत्येकं पर्वाणां त्रितयेषु च ॥१५॥
त्रिंशद्वर्णान् क्रमान्न्यस्य शिष्टौ द्वौ तलयोर्न्यसेत्। द्वितीयमक्षरन्यासं देहे कुर्याद्विचक्षणः ॥१६॥
ब्रह्मरन्ध्रे च शिरसि भाले भ्रूमध्यके ततः। नयने नयनाधश्च कपोले कर्णमूलयोः ॥१७॥
दन्तपंक्त्योश्च चिबुके उत्तरोष्ठेऽधरोष्ठके। कण्ठे नाभौ भुजे दक्षे वामे च हृदये तनौ ॥१८॥
अन्यं दक्षे करतले वामे चापि कटौ तथा। मेढ्रे चोरौ तथा जानुजङ्घागुल्फेषु मन्त्रवित् ॥१९॥
पादाङ्गुलीषु च ततो बाह्वोरङ्गुलिषु क्रमात्। पर्वसंधिषु सद्रोमकूपेषु क्रमतो न्यसेत् ॥२०॥
रक्तास्थिमज्जासु तथा न्यसेद्वर्णान् क्रमात् सुधीः। तृतीयो वर्णविन्यासः प्रोच्यते सर्वकामदः ॥२१॥
पादे गुल्फे च जङ्घायां जान्वोरूरौ तथा कटौ। नाभौ हृदि न्यसेद् बाह्वोः कण्ठे च चिबुके ततः ॥२२॥
दन्ते चोष्ठे कपोले च कर्णास्ये च तथा नसि। नेत्रे च मूर्धनि तथा मन्त्री वर्णान् समाहितः ॥२३॥
चतुर्थोऽयं पदन्यास उच्यते भुक्तिमुक्तिदः। शिखायां मूर्ध्नि नासायां नेत्रे श्रोत्रे तथा मुखे ॥२४॥
हृदि नाभौ कटौ जान्वोः पादयोः क्रमतो न्यसेत्। चतुरक्षरसंज्ञोऽयं न्यासः पञ्चम उच्यते ॥२५॥
नासाग्रे नयने श्रोत्रे नाभौ हृदि च मूर्धनि। बाह्वोश्चरणयोर्न्यस्येच्चतुरर्णक्रमाद् बुधः ॥२६॥
षष्ठः पादैश्च विन्यासो मन्त्रविद्भिः प्रकीर्तितः। मूर्ध्नि वक्षसि नाभौ च सर्वाङ्गे क्रमतो न्यसेत् ॥२७॥
(सप्तमः स्यादथ न्यासो मूर्धादि-हृदयावधि। पादादि-हृदयान्तं च न्यस्येदर्धद्वयं मनोः ॥२८॥
उग्रादिरष्टमो न्यासो विद्वद्भिर्गदितः शुभः। उग्राद्युग्रादि च पुनः पदानीह नमाम्यहम् ॥२९॥
इत्यन्तकानि नवसु स्थानेषु क्रमतो न्यसेत्।) मुखे शिरसि नासायां चक्षुषोः श्रोत्रयोस्तथा ॥३०॥
के शिखास्थान के तद्वत् हृदि नाभौ ततो न्यसेत्। कट्यादि-पादपर्यन्तं क्रमात् न्यस्येद्यथाविधि ॥३१॥
वीराख्यो नवमो न्यासः प्रोच्यते सर्वकामदः। वीरादिकानि पूर्वोक्तपदानि नव विन्यसेत् ॥३२॥
नमाम्यहं-पदान्तानि पूर्वोक्तस्थान एव च। नृसिंहाख्यश्च दशमः प्रोच्यते न्यास उत्तमः ॥३३॥
नृसिंहपदपूर्वाणि पदान्युग्रादिकानि च। स्थानेषूक्तेषु विन्यस्य नवसु क्रमशः सुधीः ॥३४॥

मूलाधारे षडङ्गानि विन्यसेन्मन्त्रवित्तमः । मूलाधारात्तथा नाभौ न्यस्येद्वर्णत्रयं बुधः ।।३५।।
नाभेर्हृदयपर्यन्तं न्यस्येद् वर्णचतुष्टयम् । हृदो भ्रूमध्यपर्यन्तं न्यस्येद् वर्णचतुष्टयम् ।।३६।।
वर्णद्वयं पादयुगे शिष्टं वर्णद्वयं न्यसेत् । मूर्धादि-पादपर्यन्तं चिन्तयेन्नृहरिं विभुम् ।।३७।।

नृसिंहं भजे जानुविन्यस्तबाहुं त्रिनेत्रं भुजप्रोल्लसच्चक्रशङ्खम् ।
कृशानूपमज्योतिषा ग्रस्तदैत्यं शिरःशोभिदंष्ट्रासुदीप्तद्विजिह्वम् ।।३८।।

इति ध्यानम्। दक्षवामयोश्चक्रशङ्खौ।

यजेत् पूर्वोदिते पीठे वैष्णवे प्रोक्तवर्त्मना । मूलेन मूर्तिं संकल्प्य देवमावाह्य मन्त्रवित् ।।३९।।
तस्यां मूर्तौ विधानेन नृसिंहं पूजयेत् ततः । वामाङ्के नृहरेः पूज्या लक्ष्मीर्भूषणभूषिता ।।४०।।
वामे पद्मधरा दक्षबाहुना नृहरिं विभुम् । आश्लिष्यन्ती शान्तमूर्तिस्ततोऽङ्गानि प्रपूजयेत् ।।४१।।
पूजयेद् दिक्षु पक्षीन्द्रं तथा शर्वमनन्तकम् । भवं कमलपूर्वं च विदिक्षु च यजेच्छ्रियम् ।।४२।।
ह्रियं तुष्टिं च पुष्टिं च द्वितीयावृतिरीरिता । ततोऽष्टभिर्नृसिंहैश्च तृतीयावृतिरिष्यते ।।४३।।
शङ्खिनं चक्रिणं स्वर्णवर्णं श्यामलवाससम् । नृसिंहं स्तम्भनायेति दले प्राच्यां प्रपूजयेत् ।।४४।।
धृताम्बुजगदाशङ्खचक्रं वश्यक्रियाक्षमम् । सिन्दूरारुणमाग्नेये पूजयेद् दक्षिणे ततः ।।४५।।
आन्त्रमालां शङ्खचक्रे गदां खड्गं च बिभ्रतम् । भिन्नदैत्यहृदं कृष्णं त्रिनेत्रं मारणक्षमम् ।।४६।।
विद्वेषोच्चाटनकरं नीलोत्पलसमप्रभम् । शङ्खचक्रगदालोहदण्डं निर्ऋतिजे दले ।।४७।।
प्रतीच्यां शङ्खचक्रासिपाशान्वितकराम्बुजम् । शक्तियुक्तं जपापुष्पनिभमाकर्षणक्षमम् ।।४८।।
(वायवीये तु शवलं शङ्खचक्रे गदाभये । बिभ्राणं पुष्टिदं नेत्रत्रितयालंकृताननम् ।।४९।।
उदग्दले नृसिंहं तं पाञ्चजन्यं सुदर्शनम् ।) गदानिधी च बिभ्राणां लक्ष्म्या युक्तं निधिप्रदम् ।।५०।।
विद्यामूर्तिमुदक्पूर्वे क्षीराभं पीतवाससम् । पाशाङ्कुशधरोद्बाहुशङ्खचक्रधरं विभुम् ।।५१।।
हृत्सरोरुहमध्यस्थं चन्द्रपुञ्जसुनिर्मलम् । लक्ष्म्या युक्तं नारसिंहं पूजयेत् साधकः सदा ।।५२।।
चक्रं खड्गं महापद्मं मुसलं देवदक्षिणे । शङ्खं खेटं गदां शार्ङ्गं पूजयेद् देववामतः ।।५३।।
एभिश्चतुर्थावृतिः स्याल्लक्ष्म्यादिभिरनन्तरम् । लक्ष्म्यीं दक्षिणतस्तुष्टिं वामे तत्रैव कौस्तुभम् ।।५४।।
श्रीवत्सं दक्षिणे मध्ये वनमालां च पूजयेत् । पीताम्बरं ब्रह्मसूत्रं नाभिपद्मं किरीटकम् ।।५५।।
भूषणानि च सर्वाणि पुरोभागे प्रपूजयेत् । षष्ठी श्रद्धादिभिः प्रोक्ता श्रद्धा मेधा च कामिका ।।५६।।
भीमा मा चैव सभया चकान्द्री (?) दीप्तिरष्टमी । लाकेशैः सप्तमी प्रोक्ता वज्राद्यैरष्टमी मता ।।५७।।

एवं संपूज्य विधिवत् साधकोऽभीष्टमाप्नुयात्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, उग्रं वीरं हृदयाय नमः। महाविष्णुं शिरसे०। ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखा०। नृसिंहं भीषणं कवचाय०। भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय०। नमाम्यहं अस्त्राय० इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ॐ उं नमः शिरसि। एवं ग्रं ललाटे। वीं दक्षनेत्रे। रं वामनेत्रे। मं मुखे। हां दक्षदोर्मूले। विं कूर्परे। ष्णुं मणिबन्धे। ज्वं अङ्गुलिमूले। लं अग्रे। तं वामदोर्मूले। सं कूर्परे। वँ मणिबन्धे। तों अङ्गुलिमूले। मुं अग्रे। खं दक्षोरुमूले। नृं जानुनि। सिं गुल्फे। हं अङ्गुलिमूले। भीं अग्रे। षं वामोरुमूले। णं जानुनि। भं गुल्फे। द्रं अङ्गुलिमूले। मृं अग्रे। त्युं कण्ठे। मृं हृदि। त्युं नाभौ। नं दक्षपार्श्वे। मां वामे। म्यं पृष्ठे। हं ककुदि। (१) दक्षकराङ्गुष्ठमूलादिपर्वत्रये उंग्रंवीं०। तर्जनीपर्वत्रये रंमंहां०। मध्यमापर्वत्रये विंष्णुंज्वं०। अनामापर्वत्रये लंतंसं०। कनिष्ठापर्वत्रये वँतोंमुं०। वामकनिष्ठापर्वत्रये खंनृंसिं। अनामापर्वत्रये हंभींषं०। मध्यमा पर्वत्रये णंभंद्रं०। तर्जनीपर्वत्रये मृंत्युंमृं०। तदङ्गुष्ठपर्वत्रये त्युंनंमां०। दक्षकरतले म्यं०। वामे हं०। (२) ब्रह्मरन्ध्रे उंनमः। शिरसि ग्रं०। भाले वीं०।

भ्रूमध्ये रं०। नेत्रयो: मं०। नेत्राध: हां०। कपोलयो: विं०। कर्णमूलयो: ष्णुं। दन्तपंक्त्यो: ज्वं०। चिबुके लं०। उत्तरोष्ठे तं०। अधरोष्ठे सं०। कण्ठे र्वं०। नाभौ तों०। दक्षभुजे मुं०। वामे खं०। हृदये नृं०। सर्वाङ्गे सिं०। दक्षकरतले हं०। वामे भीं०। कटौ षं०। लिङ्गे णं०। ऊर्वो: भं०। जानुनो: द्रं०। जङ्घयो: मृं०। गुल्फयो: त्युं०। पादाङ्गुलीषु मृं०। कराङ्गलीषु त्युं०। सर्वाङ्गरोमकूपेषु नं०। रक्ते मां०। अस्थ्नि म्यं०। मज्जासु हं०। (३) दक्षपादे उंनम:। वामे ग्रं०। दक्षगुल्फे वीं०। वामे रं०। दक्षजङ्घायां मं०। वामजङ्घायां हां०। दक्षजानुनि विं०। वामे ष्णुं०। दक्षोरौ ज्वं०। वामे लं०। दक्षकटौ तं। वामे सं०। नाभौ र्वं०। हृदि तों०। दक्षकरे मुं०। वामे खं०। कण्ठे नृं०। चिबुके सिं०। ऊर्ध्वदन्तेषु हं०। अधोदन्तेषु भीं०। ओष्ठे षं०। अधरोष्ठे णं०। दक्षकपोले भं०। वामे द्रं०। दक्षकर्णे मृं०। वामे त्युं०। मुखे मृं०। दक्षनसि त्युं०। वामे नं०। दक्षनेत्रे मां०। वामे म्यं०। मूर्ध्नि: हंनम:। (४) उग्रंनम: शिखायां। वीरं मूर्ध्नि। महाविष्णुं नासायां। ज्वलन्तं नेत्रयो:। सर्वतोमुखं श्रोत्रयो:। नृसिंहं मुखे। भीषणं हृदि। भद्रं नाभौ। मृत्युमृत्युं कटौ। नमामि जानुनो:। अहं पादयो:। (५) उग्रंवीरं नम: नासाग्रे। महाविष्णुं नेत्रयो:। ज्वलन्तं स श्रोत्रयो:। र्वतोमुखं नाभौ। नृसिंहं भी हृदि। षणं भद्रं मूर्ध्नि। मृत्युमृत्युं बाह्वो:। नमाम्यहं पादयो:। (६) ॐउग्रं वीरं महाविष्णुं नमो मूर्ध्नि। ज्वलन्तं सर्वतोमुखं नमो वक्षसि। नृसिंहं भीषणं भद्रं नमो नाभौ। मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: सर्वाङ्गे। (७) मूर्धादि उग्रंवीरमित्यादि पूर्वार्धं नाभ्यन्तं न्यस्येत्। नाभ्यादिपादान्तं नृसिंहमित्युत्तरार्धं न्यसेत्। (८) उग्रमुग्रं नमाम्यहं नमो मुखे। उग्रं वीरं नमाम्यहं नम: शिरसि। उग्रं महाविष्णुं नमाम्यहं नमो नासायाम्। उग्रं ज्वलन्तं नमाम्यहं नमश्चक्षुषो:। उग्रं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: श्रोत्रयो:। उग्रं नृसिंहं नमाम्यहं नमो ब्रह्मरन्ध्रे। उग्रं भीषणं नमाम्यहं नमो हृदि। उग्रं भद्रं नमाम्यहं नमो नाभौ। उग्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: कट्यादिपादद्वयाग्रान्तम्। (९) वीरमुग्रं नमाम्यहं नमो मुखे। वीरं वीरं नमाम्यहं नम: शिरसि। वीरं महाविष्णुं नमो नासायां। वीरं ज्वलन्तं नमाम्यहं नमश्चक्षुषो:। वीरं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: श्रोत्रयो:। वीरं नृसिंहं नमाम्यहं नमो ब्रह्मरन्ध्रे। वीरं भीषणं नमाम्यहं नमो हृदये। वीरं भद्रं नमाम्यहं नमो नाभौ। वीरं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: कट्यादिपादान्तं। (१०) नृसिंहमुग्रं नमाम्यहं नम: मुखे। नृसिंहं वीरं नमाम्यहं नम: शिरसि। नृसिंहं महाविष्णुं नमो नासायां। नृसिंहं ज्वलन्तं नमाम्यहं नम: चक्षुषो:। नृसिंहं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: श्रोत्रयो:। नृसिंहं नृसिंहं नमाम्यहं नम: ब्रह्मरन्ध्रे। नृसिंहं भीषणं नमाम्यहं नमो हृदये। नृसिंहं भद्रं नमाम्यहं नमो नाभौ। नृसिंहं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: कट्यादिपादान्तं। ततो मूलषडङ्गानि विन्यस्य ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते, देवस्य वामाङ्के श्रींलक्ष्म्यै नम: इति लक्ष्मीं संपूज्य, तत: प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य दिग्दलेषु देवाग्रादि—पक्षीन्द्राय नम:। शर्वाय०। अनन्ताय०। कमलभवाय०। विदिग्दलेषु—श्रियै नम:। ह्रियै०। तुष्ट्यै०। पुष्ट्यै०। द्वितीयाष्टदले—देवाग्रादि—स्तम्भननृसिंहाय नम:। वश्यनृसिंहाय नम:। मारणनृसिंहाय नम:। विद्वेषोच्चाटननृसिंहाय नम:। आकर्षणनृसिंहाय नम:। तुष्टिदनृसिंहाय नम:। निधिप्रदनृसिंहाय नम:। विद्यामूर्तिनृसिंहाय नम: इति संपूज्य, दलाग्रेषु देवस्य दक्षिणस्थेषु—चक्राय नम:। खड्गाय०। पद्माय०। मुसलाय०। वामस्थेषु—शङ्खाय नम:। खेटाय०। गदायै०। शार्ङ्गाय०। इत्युपर्युपरिभावेन संपूज्य, पुनर्देवस्यैव दक्षिणे लक्ष्म्यै नम:। वामे तुष्ट्यै०। वामे कौस्तुभाय०। दक्षिणे श्रीवत्साय०। मध्ये वनमालायै०। देवाग्रे ब्रह्मसूत्राय०। पीताम्बराय०। नाभिपद्माय०। किरीटाय०। सर्वभूषणेभ्यो०। तृतीयेऽष्टदले—श्रद्धायै नम:। मेधायै०। कामिकायै०। भीमायै०। मायै०। भवायै०। चक्रास्यै०। दीप्त्यै० इति संपूज्य लोकेशार्चादिसर्वं समापयेदिति। वैखानसपञ्चरात्रे—

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रिय:। तद्दशांशेन जुहुयाद् घृताक्तहविषाऽनले ॥१॥

एष कृतयुगपर:।

द्वात्रिंशल्लक्षमानेन जपेन्मन्त्रं जितेन्द्रिय:। तत्सहस्रं प्रजुहुयाद् घृताक्तहविषा तत: ॥१॥

इति सारसंग्रहात्। अत्र शतांशो होम उक्त:। एष विकल्प:। बाहुल्यादशक्तपरो वा।

तथा—

तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणाराधनं तथा। कुर्यात् संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगानाचरेत् ततः ॥१॥

नृसिंहमन्त्र—सारसंग्रह में ईश्वर ने कहा है कि अब मैं नृसिंह के शुभ मन्त्र का विधान जप-ध्यान-पूजा-होमसहित कहता हूँ। यह संसार के दुःखों का नाशक, दुःख एवं दारिद्र्य का विनाशक, सर्वरोगहर, मृत्युनाशक एवं मोक्षदायक है। बत्तीस अक्षरों का नृसिंह मन्त्र है—

उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्।।

इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता सुरासुरनमस्कृत नृसिंह हैं। मन्त्र के ४,४,८,६,६,४ अक्षरों से षडङ्ग न्यास किया जाता है। कुछ लोग ह्रां ह्रीं से भी न्यास कहते हैं, कुछ पञ्चाङ्ग न्यास, कहते हैं। मन्त्रपदों से और मन्त्रवर्णों से न्यास करना चाहिये।

इसके न्यास एवं पूजन इस प्रकार के होते हैं—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः, हृदये श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः। ऋष्यादि न्यास करने के बाद पूर्ववत् विनियोग बोल करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—उग्रं वीरं हृदयाय नमः, महाविष्णुं शिरसे स्वाहा, ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखायै वषट्, नृसिंहं भीषणं कवचाय हुम्, भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट्, नमाम्यहं अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करके पुनः इस प्रकार न्यास करे—ॐ उं नमः (शिर), ॐ ग्रं नमः (ललाट), ॐ वीं नमः (दक्ष नेत्र), ॐ रं नमः (वाम नेत्र), ॐ मं नमः (मुख), ॐ हां नमः (दक्ष बाहुमूल), ॐ विं नमः (कूर्पर), ॐ ष्णुं नमः (मणिबन्ध), ॐ ज्वं नमः (अङ्गुलिमूल), ॐ लं नमः (आगे), ॐ तं नमः (वाम बाहुमूल), ॐ सं नमः (कूर्पर), ॐ र्वं नमः (मणिबन्ध), ॐ तों नमः (अङ्गुलिमूल), ॐ मुं नमः (आगे), ॐ खं नमः (दक्ष ऊरुमूल), ॐ नृं नमः (दोनों जानु), ॐ सिं नमः (गुल्फ)। ॐ हं नमः (अङ्गुलिमूल), ॐ भीं नमः (आगे), ॐ षं नमः (वाम ऊरुमूल), ॐ णं नमः (दोनों जानु), ॐ भं नमः (गुल्फ), ॐ द्रं नमः (अङ्गुलिमूल), ॐ मृं नमः (आगे), ॐ त्युं नमः (कण्ठ), ॐ मृं नमः (हृदय), ॐ त्युं नमः (नाभि), ॐ नं नमः (दक्ष पार्श्व), ॐ मां नमः (वाम पार्श्व), ॐ म्यं नमः (पृष्ठ), ॐ हं नमः (ककुद)।

(१) दाहिने अंगूठे के तीन पर्व में—उंग्रं वीं नमः, तर्जनी के तीन पर्वों में—रं मंहां नमः, मध्यमा के तीन पर्व में—विंष्णुं ज्वं नमः, अनामा के तीन पर्व में—लंतं सं नमः, कनिष्ठा के तीन पर्व में—र्वंतों मुं नमः, वाम कनिष्ठा के तीन पर्व में—खं नृंसिं नमः, अनामा के तीन पर्व में—हं भीषं नमः, मध्यमा के तीन पर्व में—णं भंद्रं नमः, तर्जनी के तीन पर्व में—मृंत्युं मृं नमः, वाम अङ्गुष्ठ के तीन पर्व में—त्युं नंमां नमः, दक्ष करतल में—म्यं नमः, वाम करतल में—हं नमः।

(२) ब्रह्मरन्ध्र में—उं नमः, शिर पर—ग्रं नमः, भाल में वीं नमः, भ्रूमध्य में—रं नमः, नेत्रों में—मं नमः, नेत्र के नीचे—हां नमः, गालो पर—विं नमः, दोनों कर्णमूल में—ष्णुं नमः, दन्तपंक्तियों में—ज्वं नमः, चिबुक में लं नमः, ऊपरी होठ में—तं नमः, नीचे वाले होठ में—सं नमः, कण्ठ में र्वं नमः, नभि में—तों नमः, दक्ष भुजा में—मुं नमः, वाम भुजा में—खं नमः, हृदय में—नृं नमः, सर्वाङ्ग में—सिं नमः, दक्ष करतल में—हं नमः, वाम करतल में—भीं नमः, कमर में—षं नमः, लिङ्ग में—णं नमः, ऊरुओं में—भं नमः, जानुओं में—द्रं नमः, जङ्घाओं में—मृं नमः, गुल्फों में—त्युं नमः, पैर की अंगुलियों में—मृं नमः, हाथ की अंगुलियों में—त्युं नमः, सम्पूर्ण अंग के रोमकूपों में—नं नमः, रक्त में—मां नमः, अस्थि में म्यं नमः, मज्जा में—हं नमः।

(३) दक्ष पाद में—उं नमः, वाम पाद में—ग्रं नमः, दक्ष गुल्फ में—वीं नमः, वाम गुल्फ में—रं नमः, दाहिनी जङ्घा में—मं नमः, बाँयें जङ्घा में—हां नमः, दाहिने जानु में—विं नमः, वाम जानु में—ष्णुं नमः, दक्ष ऊरु में—ज्वं नमः, वाम ऊरु में—लं नमः, दाहिनी कमर में—तं नमः, बाँयें कमर में—सं नमः, नाभि में—र्वं नमः, हृदय में—तों नमः, दाहिने हाथ में—मुं नमः, बाँयें हाथ में—खं नमः, कण्ठ में—नृं नमः, चिबुक में—सिं नमः, ऊपरी दाँतों में—हं नमः, नीचले दाँतों में—भीं नमः, ऊपरी होठ में—षं नमः, नीचले होठ में—णं नमः, दाहिने गाल में—भं नमः, बाँयें गाल में—द्रं नमः, दाहिने कान में—मृं नमः, बाँयें कान में—त्युं नमः, मुख में—मृं नमः, दाँई नासिका में—त्युं नमः, बाँयीं नासिका में—नं नमः, दक्ष नेत्र में—मां नमः, बाँयें नेत्र में—म्यं नमः, मूर्धा में—हं नमः।

(४) उग्रं नम: (शिखा), वीरं नम: (मूर्धा), महाविष्णुं नम: (नासिका), ज्वलन्तं नम: (दोनों नेत्र), सर्वतोमुखं नम: (दोनों कान), नृसिंहं नम: (मुख), भीषणं नम: (हृदय), भद्रं नम: (नभि), मृत्युमृत्युं नम: (कमर), नमामि नम: (दोनों जानु) अहं नम: (दोनों पैर)।

(५) उग्रंवीरं नम: (नासिका के अग्रभाग), महाविष्णुं नम: (दोनों नेत्र), ज्वलन्तं स नम: (दोनों कान), र्वतोमुखं नम: (नाभि), नृसिंहं भी नम: (हृदय), षणं भद्रं नम: (मूर्धा), मृत्युमृत्युं नम: (दोनों बाहु), नमाम्यहं नम: (दोनों पैर)।

(६) ॐउग्रं वीरं महाविष्णुं नम: (मूर्धा), ज्वलन्तं सर्वतोमुखं नम: (वक्ष), नृसिंहं भीषणं भद्रं नम: (नभि), मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: (सर्वाङ्ग)।

(७) मूर्धा से आरम्भ कर नाभि तक 'उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखं' का न्यास करे एवं नाभि से पादान्त तक 'नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं' का न्यास करे।

(८) उग्रमुग्रं नमाम्यहं नम: (मुख), उग्रं वीरं नमाम्यहं नम: (शिर), उग्रं महाविष्णुं नमाम्यहं नम: (नासिका), उग्रं ज्वलन्तं नमाम्यहं नम: (दोनों आँख), उग्रं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: (दोनों कान), उग्रं नृसिंहं नमाम्यहं नम: (ब्रह्मरन्ध्र), उग्रं भीषणं नमाम्यहं नम: (हृदय), उग्रं भद्रं नमाम्यहं नम: (नाभि), उग्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: (कमर से लेकर दोनों पैर तक)।

(९) वीरमुग्रं नमाम्यहं नम: (मुख), वीरं वीरं नमाम्यहं नम: (शिर), वीरं महाविष्णुं नम: (नासिका), वीरं ज्वलन्तं नमाम्यहं नम: (दोनों नेत्र), वीरं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: (दोनों कान), वीरं नृसिंहं नमाम्यहं नम: (ब्रह्मरन्ध्र), वीरं भीषणं नमाम्यहं नम: (हृदय), वीरं भद्रं नमाम्यहं नम: (नाभि), वीरं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: (कमर से पैर तक)।

(१०) नृसिंहमुग्रं नमाम्यहं नम: (मुख), नृसिंहं वीरं नमाम्यहं नम: (शिर), नृसिंहं महाविष्णुं नम: (नासिका), नृसिंहं ज्वलन्तं नमाम्यहं नम: (दोनों नेत्र), नृसिंहं सर्वतोमुखं नमाम्यहं नम: (दोनों कान), नृसिंहं नृसिंहं नमाम्यहं नम: (ब्रह्मरन्ध्र)। नृसिंहं भीषणं नमाम्यहं नम: (हृदय), नृसिंहं भद्रं नमाम्यहं नम: (नाभि), नृसिंहं मृत्युमृत्युं नमाम्यहं नम: (कमर से पैर तक)।

तदनन्तर मूल मन्त्र से षडङ्ग न्यास करके ध्यान करने के बाद पुष्पोपचार से पूजा करके देवता के वाम अंक में 'श्रीं लक्ष्म्यै नम:' मन्त्र से लक्ष्मी की पूजा कर पूर्ववत् षडङ्ग पूजन करके दिग्दलों में देवता के आगे से इस प्रकार न्यास करे— पक्षीन्द्राय नम:, शर्वाय नम:, अनन्ताय नम:, कमलभवाय नम:। कोणदलों में—श्रियै नम:, ह्रियै नम:, तुष्ट्यै नम:, पुष्ट्यै नम:।

द्वितीय अष्टदल में देवता के आगे से इस प्रकार न्यास करे—स्तम्भननृसिंहाय नम:, वश्यनृसिंहाय नम:, मारणनृसिंहाय नम:, विद्वेषोच्चाटननृसिंहाय नम:, आकर्षणनृसिंहाय नम:, तुष्टिदनृसिंहाय नम:, निधिप्रदनृसिंहाय नम:, विद्यामूर्तिनृसिंहाय नम:।

इस प्रकार पूजन करके दलाग्र में देवता के दाहिने से इस प्रकार न्यास करे—चक्राय नम:, खड्गाय नम:, पद्माय नम:, मुसलाय नम:। पुन: देवता के बाँयें से इस प्रकार न्यास करे—शङ्खाय नम:, खेटाय नम:, गदायै नम:, शार्ङ्गाय नम:, इस प्रकार पूजन करके पुन: देवता के ही दक्षिण भाग में लक्ष्म्यै नम:, वाम भाग में तुष्ट्यै नम:, वाम भाग में कौस्तुभाय नम:, दक्षिण भाग में श्रीवत्साय नम:, मध्य में वनमालायै नम: से न्यास करके देवता के आगे इस प्रकार न्यास करे—ब्रह्मसूत्राय नम:, पीताम्बराय नम:, नाभिपद्माय नम:, किरीटाय नम:, सर्वभूषणेभ्यो नम:।

तृतीय अष्टदल में श्रद्धायै नम:, मेधायै नम:, कामिकायै नम:, भीमायै नम:, मायै नम:, भवायै नम:, चक्रास्यै नम:, दीप्त्यै नम:—इस प्रकार पूजन करने के बाद लोकपालों तथा उनके आयुधों आदि की पूजा करके पूजा का समापन करे।

वैखानसपञ्चरात्र में कहा गया है कि दीक्षा लेकर जितेन्द्रिय रहकर आठ लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन घृताक्त हवि से करे। जप की उक्त संख्या सतयुग के लिये कही गई है। कलियुग में चौगुना बत्तीस लाख जप होता है। तदनन्तर बत्तीस हजार हवन घृताक्त हविष्यान्न से करे। किसी के मत से शतांश हवन करना चाहिये। अत: विस्तार करने में समर्थ होने पर बत्तीस हजार हवन करे अन्यथा शतांश हवन करे—यही निहितार्थ है।

तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। तदनन्तर सिद्ध मन्त्र से प्रयोगों का साधन करे।

काम्यप्रयोगे ध्यानभेदः

काम्यप्रयोगसिद्ध्यर्थं ध्यानभेदोऽत्र कथ्यते।

समुद्यत्सहस्रार्कभासं त्रिनेत्रं प्रभाभीषणं वज्रतुल्यं क्षरन्तम्।
कृशानुं ह्यनेकैर्भुजैर्भीषणाङ्गं स्वहस्ताग्रजोद्भिन्नदैत्यं भजे तम्॥२॥

क्रूरकर्मादिविषये स्मरेद् देवं भयानकम्। विश्वरूपमयं ध्यानं नृहरेः प्रोच्यतेऽधुना॥३॥
नृसिंहं तं महाभीमं कालानलसमप्रभम्। अन्त्रमालाधरं रौद्रं कण्ठहारेण शोभितम्॥४॥
नागयज्ञोपवीतं च पञ्चाननसुशोभितम्। चन्द्रमौलिं नीलकण्ठं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्॥५॥
भुजैः परिघसंकाशैर्दशभिः परिशोभितम्। अक्षसूत्रं गदां पद्मं शङ्खं गोक्षीरसन्निभम्॥६॥
धनुश्च मुसलं चैव बिभ्राणं चक्रमुत्तमम्। खड्गं च शूलं बाणं च नृहरिं रुद्ररूपिणम्॥७॥
इन्द्रगोपकनीलाभं स्वर्णाभं चन्द्रसन्निभम्। पूर्वादि चोत्तरं यावदूर्ध्वास्यं सर्ववर्णकम्॥८॥
एवमुग्रं हरिं ध्यायेत् सर्वव्याधिनिवृत्तये। सर्वमृत्युहरं दिव्यं स्मरणात् सर्वसिद्धये॥९॥
ध्येयो यदा महत्कर्म तदा षोडशहस्तवान्। नृसिंहः सर्वलोकेशः सर्वाभरणभूषितः॥१०॥
द्वौ विदारणकर्मादौ द्वौ चान्त्रोद्धरणोत्थितौ। शङ्खचक्रधरावन्यावन्यौ बाणधनुर्धरौ॥११॥
खड्गखेटधरावन्यौ द्वौ गदापद्मधारिणौ। पाशाङ्कुशधरावन्यौ द्वौ रिपोर्मुकुटार्पितौ॥१२॥
इति षोडशदोर्दण्डमण्डितं नृहरिं विभुम्। ध्यायेदम्बुदनीलाभमुग्रकर्मण्यनन्यधीः॥१३॥
ध्येयो महत्तमे कार्ये दशषड्विंशहस्तवान्। नृहरिः सर्वभूषाढ्यः सर्वसिद्धिकरः प्रभुः॥१४॥
दक्षिणे चक्रखड्गौ च परशुं पाशमेव च। हलं च मुसलाभीती ह्यङ्कुशं बाहुपङ्कजैः॥१५॥
पट्टिशं भिन्दिपालं च खेटतोमरमुद्गरान्। वामभागे करैः शङ्खं खड्गं पाशं च शूलकम्॥१६॥
अग्निं च वरदं शक्तिं कुण्डिकां दधतं परैः। कार्मुकं तर्जनीं मुद्रां गदाडमरुसर्पकान्॥१७॥
करद्वन्द्वैः क्रमाच्छत्रोर्जानुमस्तकपत्तलम्। ऊर्ध्वीकृताभ्यां हस्ताभ्यामन्त्रमालाधरं हरिम्॥१८॥
अधःस्थिताभ्यां हस्ताभ्यां हिरण्यकविदारणम्। प्रियङ्करं च भक्तानां दैत्यानां च भयङ्करम्॥१९॥
नृसिंहं संस्मरेद् दिव्यं महामृत्युभयापहम्।
अथोच्यते ध्यानमन्यन्मुखरोगहरं परम्। विषरोगहरं मृत्युहरं शत्रुभयापहम्॥२०॥

स्वर्णौघाभे सुपर्णे स्थितमतिसुमुखं कोटिपूर्णेन्दुवर्णं
विद्युन्मालासदृग्भिस्त्रिभिरतिसुदशं पीतवस्त्रं सुभूषम्।
हस्तोद्यच्चक्रशङ्खाभयवरमखिलक्ष्वेडरोगापमृत्यून्
स्वैर्ध्वानैर्ध्वंसयन्तं सुरनुतमनिशं संस्मरेच्छ्रीनृसिंहम्॥२१॥

इति ध्यानम्।

काम्य कर्म में ध्यानभेद—क्रूरकर्मों में भगवान् नृसिंह के भयंकर रूप का इस प्रकार ध्यान करे—
समुद्यत्सहस्रार्कभासं त्रिनेत्रं प्रभाभीषणं वज्रतुल्यं क्षरन्तम्। कृशानुं ह्यनेकैर्भुजैर्भीषणाङ्गं स्वहस्ताग्रजोद्भिन्नदैत्यं भजे तम्॥

समस्त व्याधियों की निवृत्ति करने वाला, समस्त प्रकार की मृत्युओं का हरण करने वाला, स्मरण-मात्र से समस्त सिद्धियाँ देने वाला भगवान् नृसिंह का विश्वरूपमय ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—

नृसिंहं तं महाभीमं कालानलसमप्रभम्। अन्त्रमालाधरं रौद्रं कण्ठहारेण शोभितम्॥
नागयज्ञोपवीतं च पञ्चाननसुशोभितम्। चन्द्रमौलिं नीलकण्ठं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्॥
भुजैः परिघसंकाशैर्दशभिः परिशोभितम्। अक्षसूत्रं गदां पद्मं शङ्खं गोक्षीरसन्निभम्॥
धनुश्च मुसलं चैव बिभ्राणं चक्रमुत्तमम्। खड्गं च शूलं बाणं च नृहरिं रुद्ररूपिणम्॥
इन्द्रगोपकनीलाभं स्वर्णाभं चन्द्रसन्निभम्। पूर्वादि चोत्तरं यावदूर्ध्वास्यं सर्ववर्णकम्॥

समस्त महनीय कार्यों में सोलह हाथ वाले भगवान् नृसिंह का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

ध्येयो यदा महत्कर्म तदा षोडशहस्तवान्। नृसिंह: सर्वलोकेश: सर्वाभरणभूषित:।।
द्वौ विदारणकर्मादौ द्वौ चान्त्रोद्धरणोत्थितौ। शङ्खचक्रधरावन्यावन्यौ बाणधनुर्धरौ।।
खड्गखेटधरावन्यौ द्वौ गदापद्मधारिणौ। पाशाङ्कुशधरावन्यौ द्वौ रिपोर्मुकुटार्पितौ।।
इति षोडशदोर्दण्डमण्डितं नृहरिं विभुम्। ध्यायेदम्बुदनीलाभमुग्रकर्मण्यनन्यधी:।।

महान् मृत्युभय को दूर करने वाला छत्तीस हाथों वाले नृसिंह का ध्यान इस प्रकार है—

नृहरि: सर्वभूषाढ्य: सर्वसिद्धिकर: प्रभु:। दक्षिणे चक्रखड्गौ च परशुं पाशमेव च।।
हलं च मुसलाभीती ह्यङ्कुशं बाहुपङ्कजै:। पट्टिशं भिन्दिपालं च खेटतोमरमुद्गरान्।।
वामभागे करै: शङ्खं खड्गं पाशं च शूलकम्। अग्निं च वरदं शक्तिं कुण्डिकां दधतं परै:।।
कार्मुकं तर्जनीं मुद्रां गदाडमरुसर्पकान्। करद्वन्द्वै: क्रमाच्छत्रोर्जानुमस्तकपत्तलम्।।
ऊर्ध्वीकृताभ्यां हस्ताभ्यामन्त्रमालाधरं हरिम्। अध:स्थिताभ्यां हस्ताभ्यां हिरण्यकविदारणम्।।
प्रियङ्करं च भक्तानां दैत्यानां च भयङ्करम्।

सभी प्रकार के मुखरोगों को दूर करने वाले, विषसम्बन्धी रोग का हरण करने वाला, मृत्यु को हरण करने वाला एवं शत्रुभय को दूर करने वाला नृसिंह का ध्यान इस प्रकार है—

स्वर्णौघाभे सुपर्णे स्थितमतिरुङ्मुखं कोटिपूर्णेन्दुवर्णं विद्युन्मालासदृग्भिस्त्रिभिरतिसुदृशं पीतवस्त्रं सुभूषम्।
हस्तोद्यच्चक्रशङ्खाभयवरमखिलक्ष्वेडरोगापमृत्यून् स्वैर्ध्वानैर्ध्वंसयन्तं सुरनुतमनिशं संस्मरेच्छ्रीनृसिंहम्।।

होमद्रव्यविनियोग:

तथा—

लक्ष्मीकामस्त्रिमधुरै: सुगन्धै: कुसुमैर्हुनेत्। अयुतं मधुनाज्यैश्च दरिद्रो न भवेत् कुले।।२२।।
उडुम्बरसमिद्धोमाद् धान्यसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्। अपूपलक्षहोमेन धनदेन समो भवेत्।।२३।।
क्रुद्धस्य संनिधौ राज्ञो जपेदष्टोत्तरं शतम्। सद्यो नैर्मल्यमाप्नोति प्रसादं चाधिगच्छति।।२४।।
कुन्दप्रसूनहोमेन शर्मोदयमवाप्स्यति। मधूकपुष्पहोमेन चेष्टसिद्धिर्भविष्यति।।२५।।
तुलसीपत्रहोमेन कीर्तिर्भवति नान्यथा। सक्तुहोमेन शालीनां वशीकरणमुत्तमम्।।२६।।
हरिद्राखण्डहोमेन स्तम्भनं भवति ध्रुवम्। कदलीफलहोमेन सर्वविघ्न: प्रणश्यति।।२७।।
दधिमध्वाज्यसिक्ताश्च गुडूचीश्चतुरङ्गुला। जुहुयादयुतं योऽसौ शतं जीवति वत्सरान्।।२८।।
शनैश्चरदिनेऽश्वत्थं स्पृष्ट्वा चाष्टोत्तरं शतम्। जपेज्जित्वा सोऽपमृत्युं शतं वर्षाणि जीवति।।२९।।
श्रीप्रसूनै: प्रजुहुयात् तत्काष्ठैर्ज्वलितेऽनले। सहस्रमात्रेण ततो लक्ष्मीं प्राप्नोति निश्चितम्।।३०।।
दूर्वाहोमादरोगी स्याल्लक्ष्मीवान् श्रीफलैस्तथा। अनेन मनुना जप्ता अन्वहं च सिता वचा।।३१।।
अशिता प्रातरुत्थाय वाक्सिद्धिं सा प्रयच्छति। जले नृसिंहं संपूज्य चन्दनेन च तत्र च।।३२।।
अष्टोत्तरशतं नित्यं दूर्वाभिर्जुहुयात् सुधी:। क्षुद्रभूतज्वरास्तस्य नश्यन्त्येवोपसर्गजा:।।३३।।
रात्रौ दृष्टे तु दु:स्वप्ने मन्त्री स्नात्वा मनुं जपेत्। सुस्वप्नो जायते तस्य यदि निद्रां न गच्छति।।३४।।
कान्तारे व्याघ्रचौरादिसंकुले च मनुं जपेत्। रक्षां करोति भूतेभ्य इतरेभ्योऽपि मन्त्रिण:।।३५।।
मनुनानेन संजप्तं तस्य नाशयति क्षणात्। क्ष्वेडग्रहमहारोगान् घोरं वाथाभिचारकम्।।३६।।
गदोन्मादमहोत्पातभये पुंसां स्मरेन्मनुम्। तदुद्भवं महादु:खं नाशमेति सुमन्त्रिण:।।३७।।
क्रूरं नृसिंहं संस्मृत्य शत्रुं च मृगशावकम्। कन्धरायां गृहीत्वा तं निक्षिप्तं दिक्षु चिन्तयेत्।।३८।।
सबान्धवस्य झटिति ह्युच्चाटो भवति ध्रुवम्। कृत्वा करैश्च युगपत् पातितं हरिणा स्वयम्।।३९।।
नखरैर्दार्यमाणं तं संस्मरेत्त्रिशितै: शरै:। अष्टाधिकशतं चामुं जपेन् मनुमनन्यधी:।।४०।।

मण्डलस्यैष मध्ये स्याद्रिपुर्वैवस्वतातिथिः। कलिद्रुमभवैः काष्ठैः सम्यक्संदीपितेऽनले ॥४१॥
रिपुसङ्घक्षयकरं नृसिंहं चन्दनादिभिः। समभ्यर्च्य प्रजुहुयाच्छरान् साग्रान् समूलकान् ॥४२॥
सहस्रमेकं च मनुं भक्षयन् शत्रुमुत्कटम्। जपन् शरान् विनिक्षिप्य शत्रुसेनां विनाशयेत् ॥४३॥
जुहुयात् सप्तदिवसं ततो राज्ञश्चमूं सुधीः। सुदिने च शुभे लग्ने शत्रुसैन्यजिगीषया ॥४४॥
प्रस्थापयेत्तां सुदृढां दंसितां बलिभिर्वरैः। तदग्रे चिन्तयेद् देवं नृसिंहं शत्रुसञ्चयम् ॥४५॥
भक्षयन्तं जपेन्मन्त्री कुर्यादायाति सा चमूः। यावत्तावद्रिपूञ्जित्वा सर्वान् राजश्रिया सह ॥४६॥
आगच्छेद्भूपतिः शूरः पश्चान्मन्त्रिणमादरात्। तोषयेत् क्षेत्रवसुभिर्वस्त्रालङ्करणैः शुभैः ॥४७॥
मन्त्रिणो यदि सन्तोषो च भवेद्भूपतेस्तदा। अनर्थः सुमहानेव जायते दुःसहो भृशम् ॥४८॥
तस्माद् गुरुं समभ्यर्चेत् तोषयेन्न तु दूषयेत्।

काम्य हवन-हेतु द्रव्य—धन की कामना से त्रिमधुर-मिश्रित सुगन्धित फूलों से हवन करे। मधु-गोघृत-मिश्रित फूलों से दश हजार हवन करने से साधक के कुल में कोई दरिद्र नहीं होता। गूलर की समिधा के हवन से धान्य मिलता है। एक लाख पूओं के हवन से साधक कुबेर के समान धनी होता है। क्रुद्ध राजा के निकट इस मन्त्र का एक सौ आठ जप करे तो वह सौम्य होकर प्रसन्न हो जाता है। कुन्दकुसुमों के हवन से सुख मिलता है। महुआ के फूलों के हवन से इष्टसिद्धि होती है। तुलसीपत्र के हवन से कीर्ति मिलती है। सत्तू के हवन से धान्य वश में होते हैं। हल्दी के टुकड़ों से हवन करने पर स्तम्भन होता है। केला फलों के हवन से सभी विघ्नों का नाश होता है। दधि, मधु, गोघृत-सिक्त चार अंगुल के गुरुचखण्डों से दश हजार हवन करने से साधक सौ वर्षों तक जीवित रहता है। शनिवार को पीपल का स्पर्श किए हुए जो एक सौ आठ जप करता है, वह अपमृत्यु को जीतकर सौ वर्षों तक जीवित रहता है। लवङ्ग की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में जो लवङ्ग से एक हजार हवन करता है, उसे धन मिलता है। दूर्वा के हवन से रोगी निरोग होता है। श्रीफल के हवन से लक्ष्मीवान होता है। प्रतिदिन सबेरे जो इस मन्त्र से अभिमन्त्रित श्वेत वचा खाता है, उसे वाक्सिद्धि मिलती है। जल में चन्दन से नृसिंह की पूजा प्रतिदिन करके जो एक सौ आठ हवन दूर्वा से करता है, उसके उपसर्गज क्षुद्र भूतज्वरों का नाश होता है। रात में खराब स्वप्न देखने पर-साधक स्नान करके इस मन्त्र का जप करे और सो जाय तो उसे अच्छे स्वप्न दिखायी पड़ते हैं। व्याघ्र एवं चोरों से पूर्ण जंगल में इस मन्त्र का जप करे तो भूतों से उसकी रक्षा होती है। इस मन्त्र के जप से मन्त्री दूसरों के भूतों को भी नष्ट कर सकता है। श्वास नली रोग, ग्रहजनित महारोग, घोर अभिचार, मदोन्माद, महा उत्पात के भय से उत्पन्न महादुःखों का नाश मन्त्री इस मन्त्र के जप से कर सकता है।

क्रूर नृसिंह का स्मरण करके शत्रु को मृगशावक मानकर उसके कन्धों को पकड़कर दूर फेंक देने की भावना करे तो सपरिवार उसका उच्चाटन होता है। ऐसा ध्यान करे कि स्वयं हरि अपने हाथों से शत्रु को पकड़कर नखों से उसे चीर रहे हैं और एक सौ आठ मन्त्र का चालीस दिनों तक जप करे तो शत्रु यमलोक चला जाता है। बहेड़े की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में शत्रुओं का नाश करने वाले नृसिंह की पूजा चन्दनादि से करके मूल एवं अग्रभाग सहित शरकण्डों से एक हजार हवन करे तो शत्रु की मृत्यु होती है। अभिमन्त्रित शरकण्डों को शत्रुसेना में फेंक दे तो सेना का नाश हो जाता है। शुभ दिन लग्न में शत्रुसेना को जीतने की इच्छा से शरकण्डों को मजबूती से स्थापित करके बलि प्रदान करे, उसके आगे चिन्तन करे कि नृसिंह शत्रुसेना को खा रहे हैं। मन्त्री तब तक मन्त्रजप करे जब तक राज्यश्रीसहित सेना को जीत न लिया जाय। जीतने के बाद राजा जप करने वालों को आदरसहित भूमि-धन-वस्त्र-अलंकार से सन्तुष्ट करे। यदि मान्त्रिक सन्तुष्ट नहीं होते हैं तब महान् दुःसह अनर्थ होता है। इसलिये गुरु को सदैव सन्तुष्ट रखे, उन्हें दोष न दे।

यन्त्ररचनाप्रकारः

कृशानुगेहयुग्मके विलिख्य तारमध्यगम्। नृसिंहमस्य कोणके सुदर्शनं मनुं तथा ॥४९॥
स्वशक्तिवेष्टितं बहिस्तथाष्टपत्रपद्मके। वसून्मितार्णवर्णकांश्च मायया बहिर्युतम् ॥५०॥
ततः पतङ्गपत्रके च वासुदेवसन्मनुम्। लिखेत् सुवेष्ट्य मायया च षोडशारके स्वरान् ॥५१॥

बहिश्च शक्तिवेष्टितं ततो ह्यनुष्टुभापि तत्। दले तदर्णसंयुते च शक्तिवेष्टितं बहि: ॥५२॥ (बहिर्वृत्तमध्ये)।

ततः पूर्वभागे लिखेत् कादिवर्गाष्टकं दक्षिणे झादिकान् रूद्रसंख्यान्।
लिखेत् पश्चिमे नादिकान् द्वादशार्णान् द्वयं पार्श्वयुग्मं लिखेद्यन्त्रमेतत् ॥५३॥
वरं साधितं होमसंपातपूजाजपाद्यैर्युतं स्वात्मसन्तर्पणैश्च।
शुभं सच्चतुर्वर्गवाञ्छाफलौघप्रदं नारसिंहं महाचक्रमेतत् ॥५४॥ इति।

अस्यार्थः—आदौ षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये प्रणवोदरे ससाध्यं नृसिंहबीजमालिख्य, षट्कोणेषु सुदर्शनषडक्षरस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तयोरन्तराले निरन्तरं मायाबीजेन संवेष्ट्य, तद्बहिरष्टपत्रेषु नारायणाष्टाक्षराणि विलिख्य, तद्बहि: प्राग्वन्मायया संवेष्ट्य, द्वादशदलेषु वासुदेवद्वादशाक्षराणि आलिख्य, बहिर्मायेयावेष्ट्य, तद् बहि: षोडशदलेषु षोडश स्वरान् सबिन्दुकान् विलिख्य, बहि: प्राग्वन्माययावेष्ट्य: तद्बहिर्द्वात्रिंशद् दलेषु मूलमन्त्रार्णान् विलिख्य, प्राग्वच्छक्त्या संवेष्ट्य, तद्बहिर्वृत्तं कृत्वा तदन्तराले पूर्वभागे कंखंगंघंङंचंछंजं—इत्यष्टवर्णानालिख्य, तद्दक्षिणान्तराले झंञंटंठंडंढंणंतंथंदंधं—इत्येकादशवर्णानालिख्य, तत्पश्चिमान्तराले नंपंफंबंभंमंयंरंलंवंशंषं—इति विलिख्य, तदुत्तरान्तराले संहं—इति विलिख्य, तत्पार्श्वयोर्दक्षे ळं वामे क्षं इति विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—

प्राक्प्रत्यङ्नवरेखाश्च पञ्च स्युर्दक्षिणोत्तरम्। द्वात्रिंशत्प्रतिमान्येवं जायन्ते कोष्ठकानि ॥५५॥
तस्याग्रिमगता रेखा: फणाकाराश्च कारयेत्। लिखेन्नृसिंहबीजं च द्वात्रिंशत्कोष्ठकेषु च ॥५६॥
मन्त्रराजं समालिख्य ह्यधो रेखाश्च वर्धयेत्। पुच्छाकाराश्च तास्तत्र साध्यनाम लिखेत् सुधी: ॥५७॥
संपातयेद् होमशिष्टै: सर्वरोगादिनाशनम्। इति।

अस्यार्थः—तत्र प्राक्प्रत्यक् नव रेखा दक्षिणोत्तरं पञ्च रेखाश्च कृत्वा, ताभिर्द्वात्रिंशत्कोष्ठानि निष्पाद्य, तस्य पूर्वाग्रनवरेखाभि: पञ्च फणान् कृत्वा, तेषु फणेषु नृसिंहबीजं विलिख्य, द्वात्रिंशत्कोष्ठेषु पङ्क्त्याकारेणेशानकोष्ठादिक्रमेण मूलमन्त्रस्य द्वात्रिंशद्वर्णानालिख्य, अधोगतनवरेखा: पञ्च पुच्छाकारेण वर्धयित्वा तेषु पुच्छेषु साध्यनाम लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—

अष्टपत्रे कर्णिकायां साध्याख्याकर्मसंयुतम्। नृसिंहबीजं विलिखेदष्टपत्रेषु संलिखेत् ॥५८॥
चतुर्वर्णप्रमाणेन मन्त्रराजं सुसाधितम्। यन्त्रं क्षुद्रामयघ्नं च सर्वरक्षाकरं परम् ॥५९॥

अस्यार्थः—अष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां ससाध्यं नृसिंहबीजं विलिख्य, अष्टसु दलेषु मन्त्राक्षराणि चत्वारि २ विलिख्य विनियुञ्ज्यात्। एतदुक्तफलदं भवति। तथा—

ससाध्यनिजबीजयुग्वसुदले मनोर्वर्णकांश्चतुष्परिमितांल्लिखेल्लिपिवृतं बहि: कारयेत्।
स्वबीजयुतकोणयुक् क्षितिपुरद्वयेनावृतं रिपुग्रहविषव्रजामयहरं च लक्ष्मीप्रदम् ॥६०॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां ससाध्यं नृसिंहबीजं विलिख्य, तद्दलेषु मूलमन्त्रार्णांश्चतुरश्चतुरो विलिख्य, बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तदन्तरालवीथ्यां सबिन्दुकान् मातृकार्णान् विलिख्य, तद्बहिरष्टकोणं कृत्वा तत्कोणेषु नृसिंहबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

एतद्यन्त्रयुतं सम्यङ्मण्डलं लक्षणान्वितम्। रम्यं नवपदं कृत्वा कलशान् स्थापयेत् सुधी: ॥६१॥
नव संशोभनांस्तत्र कषायोदकपूरितान्। वस्त्रायुग्मसमायुक्तानावाह्य नृहरिं विभुम् ॥६२॥
संपूजयेच्चन्दनाद्यै: शान्तकायं मनोरमम्। पूर्वादिषु स्तम्भनादीन् यजेन्मन्त्री समाहित: ॥६३॥
अष्टाधिकं ततो मन्त्रं सहस्रं प्रजपेत् सुधी: । एवं जलै: साधितैस्तैर्नरं मन्त्रं त्रिरुच्चरन् ॥६४॥
अभिषिञ्चेन्मृत्युमुखादवश्यं स निवर्तते। ग्रहाभिचारभूतादिभयं नश्यति तत्क्षणात् ॥६५॥
भोजयेद् देवताबुद्ध्या भूदेवांस्तोषयेदपि। प्राणप्रदात्रे गुरवे वित्तशाठ्यविवर्जितम् ॥६६॥

स्वकीयार्थानुरूप्येण प्रदद्याद् दक्षिणां नरः। स त्वैहिकीं लभेत्सिद्धिं परत्रापि च मोदते ॥६७॥ इति।

पुरुषार्थचतुष्टय-साधक यन्त्र—पहले षट्कोण बनावे। उसके मध्य में ॐ के उदर में साध्यसहित नृसिंहबीज लिखे। छः कोणों में सुदर्शन षडक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में 'ह्रीं' लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर दलों में अष्टाक्षर नारायण मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसे बाहर से पूर्ववत् 'ह्रीं' से वेष्टित करे। उसके बाहर द्वादश दल कमल बनाकर दलों में द्वादशाक्षर वासुदेव मन्त्र के एक-एक अक्षर लिखे। उसे बाहर से 'ह्रीं' से वेष्टित करे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर दलों में सानुस्वार सोलह स्वरों को लिखे। उसे बाहर से पूर्ववत् 'ह्रीं' से वेष्टित करे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनाकर दलों में द्वात्रिंशाक्षर नृसिंह मन्त्र के एक-एक वर्ण को लिखे। उसे पूर्ववत् 'ह्रीं' से वेष्टित करे। उसके बाहर वृत्त बनाकर अन्तराल के पूर्वभाग में कं खं गं घं ङं चं छं जं—इन आठ वर्णों को लिखे। दक्षिण अन्तराल में झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं—इन ग्यारह वर्णों को लिखे। पश्चिम अन्तराल में नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं लिखे। उत्तर भाग में अन्तराल में सं हं लिखे। उसके दक्ष पार्श्व में ळं और वाम पार्श्व में क्षं लिखे। इस श्रेष्ठ यन्त्र को होम सम्पात पूजा जप तर्पण मार्जन से सिद्ध करने पर पुरुषार्थ-चतुष्टय के साथ-साथ समस्त कामनाओं की प्राप्ति होती है। यह नृसिंह का महाचक्र है।

रोगविनाशक नृसिंह कोष्ठ यन्त्र—पूरब से पश्चिम नव रेखा एवं दक्षिण से उत्तर पाँच रेखा खींचे तो बत्तीस कोष्ठ बनते हैं। इन रेखाओं के अग्रभागों को बढ़ाकर पाँच फणाकार सर्प बनावे। उनमें नृसिंह बीजों को लिखे। बत्तीस कोष्ठों में द्वात्रिंशाक्षर नृसिंह मन्त्र के एक-एक अक्षर लिखे। अधोगत नव रेखा में से पाँच को पूँछ के आकार में बढ़ावे। उन पूछों में साध्य नाम लिखे। इस यन्त्र पर होम सम्पात करे तो सभी रोगों का नाश होता है।

सर्वरक्षाकर यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर कर्णिका में साध्य नाम के साथ नृसिंह बीज 'क्ष्रौं' लिखे। आठ दलों में नृसिंह मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। चतुर्वर्ण के अनुसार मन्त्रराज को सिद्ध करे तो यह यन्त्र क्षुद्र रोगों का विनाशक एवं सर्वरक्षाकर होता है।

लक्ष्मीप्रद यन्त्र—अष्टदल बनाकर कर्णिका में साध्य नाम के साथ नृसिंहबीज लिखे। दलों में मूल मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में सानुस्वार मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर अष्टकोण बनाकर कोणों में नृसिंहबीज लिखे। साधन करने पर यह यन्त्र लक्ष्मीप्रद होता है।

ग्रहाभिचार भूतादि भयनाशक प्रयोग—सम्यक् लक्षणान्वित मण्डल में नव यन्त्र बनावे। उनमें नव कलश स्थापित करे। नव कलशों को सुशोभित करके उनमें काषाय जल भरे। दो-दो वस्त्र लपेटे। उनमें शान्त शरीर वाले, मनोरम नृसिंह का आवाहन करके पूर्वादि दिशाओं के स्तम्भों में चन्दन आदि से यजन करे। एक हजार आठ मन्त्र जप करे। इस साधित जल से मरणासन्न मनुष्य का अभिषेक तीन बार मन्त्र बोलकर करे तो वह मृत्युमुख से बाहर हो जाता है। इसके प्रभाव से तत्क्षण ग्रहाभिचार भूतादि भयों का नाश हो जाता है। देवताबुद्धि से ब्राह्मणों को भोजन करावे, प्राणदान दने वाले गुरु को वित्तशाठ्य से रहित होकर अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा प्रदान करे। इससे साधक ऐहिक सुख भोग कर परलोक में भी आनन्दित रहता है।

एकाक्षरमन्त्रविधिः

तथा मन्त्रान्तरम्—

वर्णान्त्याग्नी सभुवनौ बिन्दुनादोत्तमाङ्कौ। नृसिंहबीजमाख्यातं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥१॥
हृल्लेखासंपुटं केचित् संगिरन्ते मनुं त्विमम्।

वर्णान्त्यः क्षकारः, अग्नी रेफः, भुवनं औकारः, बिन्दुरनुस्वारः, नादोऽर्धचन्द्रः, एभिः क्ष्रौं इति नृसिंह-बीजं भवति। तथा—

ऋषिरत्रिश्च गायत्री छन्दः श्रीनृहरेः शुभः। देवता दीर्घयुग् बीजेनैवाङ्गं प्रकल्पयेत् ॥२॥
क्षांक्षीं इत्यादि षडङ्गकम्।

ध्यानार्चाजपहोमादि सर्वं पूर्ववदाचरेत्। एकलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ॥३॥
तद्दशांशं हुनेत् सम्यग्घृताक्तैः पायसैः शुभैः। तर्पयेच्छुद्धसलिलैः कृत्वा चात्माभिषेचनम् ॥४॥
ब्राह्मणान् सम्यगाराध्य सिद्धमन्त्रः समाचरेत्। मन्त्रराजोदितान् सर्वान् प्रयोगानत्र साधकः ॥५॥
अष्टाधिकसहस्रेण जप्तैश्च कलशोदकैः। विषार्तमभिषिञ्चेत मुच्यते हि विषेण सः ॥६॥
मुच्यतेऽन्यैश्च सर्पाद्यैर्लूतामूषकजैरपि। बहुपाद्वृश्चिकोत्थैश्च विषैर्मुक्तो भवेद् ध्रुवम् ॥७॥
अनेन मनुना जप्तं भस्माष्टोत्तरकं शतम्। शिरोऽक्षिकर्णहृत्कुक्षिकण्ठरोगान् विनाशयेत् ॥८॥
विसर्पिणीं वमिं हिक्कां ज्वरं चैव विनाशयेत्। मन्त्रौषधाभिचारादिसंभूतांश्च विकारकान् ॥९॥
शमयेद्भस्म संजप्तं नात्र कार्या विचारणा। मृत्युस्थाने लिखेन्मन्त्रंससाध्यं च दहन्निव ॥१०॥
क्रूरेण चक्षुषा मन्त्रं जपेदष्टदिनावधि। अष्टाधिकं सहस्रं च म्रियते रिपुरस्य तु ॥११॥
वश्यमाकृष्टिविद्वेषमोहोच्चाटादिकानि च। कुर्यादयुतजापेन तत्तदर्हेण कर्मणा ॥१२॥
एवमेकाक्षरो मन्त्रः प्रोक्तः सर्वसमृद्धिदः। इति।

नृसिंह का एकाक्षर मन्त्र—भगवान् नृसिंह का बीजस्वरूप एकाक्षर मन्त्र है—'क्ष्रौं'। इसके ऋषि अत्रि, छन्द गायत्री एवं देवता नृसिंह हैं। क्ष्रां क्ष्रीं क्ष्रूं इत्यादि से इसका अंगन्यास आदि किया जाता है। इसका ध्यान अर्चन जप होमादि पूर्ववत् होता है। हविष्याशी जितेन्द्रिय साधक एक लाख मन्त्र-जप करे। उसका दशांश हवन घृताक्त पायस से करे। शुद्ध जल से तर्पण-मार्जन करे। ब्राह्मणों को भोजन कराये। तदनन्तर इस सिद्ध मन्त्रराज से पूर्वोक्त सभी प्रयोगों को करे। कलश जल को इस मन्त्र के एक हजार आठ जप से मन्त्रित करके विषार्त को स्नान कराने से विष का प्रभाव नष्ट हो जाता है। इससे सर्पादि एवं लूता, मूषक, वृश्चिक के विष से मुक्त हो जाता है। इस मन्त्र के एक सौ आठ जप से मन्त्रित भस्म को शिर, आँखों, कानों, हृदय, कुक्षियों और कण्ठ में लगाने से सभी रोगों का नाश होता है। इस भस्म से विसर्पिणी, वमन, हिचकी, ज्वर का नाश होता है। मन्त्रित भस्म से मन्त्रौषधाभिचारादि से उत्पन्न विकारों का शमन होता है। शत्रु के मृत्युस्थान में साध्य नामसहित मन्त्र लिखे। क्रोध से ज्वलित दृष्टि से देखते हुए आठ दिनों तक इस मन्त्र का एक हजार आठ जप करे तो शत्रु की मृत्यु हो जाती है। वश्य आकर्षण विद्वेषण मोहन उच्चाटनादि में दश हजार जप के साथ आवश्यक कर्म करना चाहिये। इस एकाक्षर मन्त्र को सर्वसमृद्धिदायक कहा गया है।

षडक्षरमन्त्रविधानन्तत्प्रयोगश्च

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

षडक्षरस्य मन्त्रस्य विधानमभिधीयते। पाशबीजं शक्तिबीजं स्वबीजाङ्कुशबीजके ॥१॥
कवचास्त्रान्तिकः प्रोक्तः षडर्णो नृहरेर्मनुः।

पाशः आं, शक्तिः ह्रीं, स्वबीजं नृसिंहबीजं क्ष्रौं, अङ्कुशः क्रों, कवचं हुं, अस्त्रं फट्।

ऋष्याद्या ब्रह्मपङ्क्तिश्रीनृसिंहाः संप्रकीर्तिताः। मन्त्रार्णैरङ्गषट्कं स्यात्ततो देवं विचिन्तयेत् ॥२॥

पायात् क्रोधप्रदीप्तः स्वविकृतवदनः शोणवर्णश्च नाभे-
रूर्ध्वे चन्द्रौघदीप्तिः रविशशिहुतभुग् नेत्र उग्रोरुदंष्ट्रः।
हस्ताब्जैश्चक्रशङ्खौ गुणसृणिकुलिशान् सद्गदां दारणाख्यां
बिभ्राणो भीमकायो विविधमणिगणैर्भूषितो वो नृसिंहः ॥३॥

दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये। तदाद्यधःस्थयोरन्ये। तदाद्यधःस्थयोरपरे। सर्वाधःस्थाभ्यां दारणामुद्रा। तस्या लक्षणं तु वैखानसपञ्चरात्रे—'मिथः संश्लिष्टसन्मुख्योऽङ्गुलय ऋज्वधोमुखाः। स्वस्थानसरलाङ्गुष्ठा मुद्रैषा दारणाभिधा'। इति।

पूर्वोदिते शुभे पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत्। तस्यां मूर्तौ समावाह्य देवं सर्वोपचारकैः ॥४॥
संपूज्यावरणं पश्चात् क्रमतः परिपूजयेत्। पुराङ्गानि समभ्यर्च्य ह्यायुधानि प्रपूजयेत् ॥५॥
अरिं शङ्खं गुणं चैव सृणिं च कुलिशं गदाम्। खड्गं खेटं समभ्यर्च्य लोकपालान् बहिर्यजेत् ॥६॥

वज्रादीनि ततो बाह्ये पूजयेद् गन्धपुष्पकैः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि—ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे—पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदये—श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, मूलषडर्णैः षडङ्गानि विन्यस्य ध्यानाद्यङ्गार्चान्तेऽष्टदलेषु—चक्राय नमः। शङ्खाय०। पाशाय०। अङ्कुशाय०। वज्राय०। गदायै०। खड्गाय०। खेटाय०। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं केवलेन घृतेन च। जुहुयात् तद् दशांशेन तर्पणादि ततश्चरेत्॥७॥
एवं संसिद्धमन्त्रस्तु प्रयोगान् साधयेत् ततः। तत्तत्कल्पोदितान् स्वार्थं परार्थं वाणुवित्तमः॥८॥
अपामार्गसमिद्भिश्च प्लुताभिः पञ्चगव्यकैः। जुहुयाच्च सहस्रैकं सप्ताहं भूतशान्त्ये॥९॥
गुडूचीसमिधो दुग्धलोलितास्त्रिसहस्रकम्। चतुर्दिनं प्रजुहुयाज् ज्वरशान्तिर्भविष्यति॥१०॥
रक्तोत्पलैः प्रत्यहं यो मधुरत्रयलोलितैः। (सहस्रसंख्यं जुहुयात् मासेनेष्टमवाप्नुयात्॥११॥
मन्त्रं जपेद्वत्सरेण धनधान्यसमृद्धियुक्। प्रफुल्लैररुणाम्भोजैर्मधुरत्रयलोलितैः) ॥१२॥
सहस्रद्वादशमितं लक्ष्मीवाञ्जायते भुवि। सर्वलोकप्रियः साध्यो भवेन्नैवात्र संशयः॥१३॥
प्रातस्त्रिमधुरोपेतलाजाभिः पक्षमात्रकम्। सहस्रं जुहुयात् कन्यां कन्यार्थी लभतेऽचिरात्॥१४॥
वरार्थिनी लभेताशु वरं सर्वमनोहरम्। तिलराजी(:) त्वपामार्गपायसाज्यैर्हुनेत् सुधीः॥१५॥
स दीर्घायुरवाप्नोति वियुक्तः सकलैर्गदैः। कलत्रपुत्रादियुतो धनधान्यसमन्वितः॥१६॥

नृसिंह षडक्षर मन्त्र—भगवान् नृसिंह का षडक्षर मन्त्र है—आं ह्रीं क्ष्रौं क्रों हुं फट्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः से इसका ऋष्यादि न्यास करके स्वाभीष्ट सिद्धि के लिये विनियोग किया जाता है। तदनन्तर मन्त्र के छः वर्णों से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

पायात् क्रोधप्रदीप्तः स्वविकृतवदनः शोणवर्णश्च नाभेरूर्ध्वे चन्द्रौघदीप्तिः रविशशिहुतभुग् नेत्र उग्रोरुदंष्ट्रः।
हस्ताब्जैश्चक्रशङ्खौ गुणसृणिकुलिशान् सद्गदां दारणाख्यां बिभ्राणो भीमकायो विविधमणिगणैर्भूषितो वो नृसिंहः॥

पूजन यन्त्र अष्टदल कमल एवं भूपुर से बनाकर कर्णिका में अंग-पूजा करे। अष्टदल में चक्राय नमः, शङ्खाय नमः, पाशाय नमः, अंकुशाय नमः, वज्राय नमः, गदायै नमः, खड्गाय नमः, खेटाय नमः से आयुधों की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और बाहर में उनके वज्रादि आयुधों को पूजा गन्ध-पुष्पादि से करे।

तदनन्तर छः लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन केवल घी से करे। तर्पण-मार्जनादि करे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से प्रयोगों का साधन अपने लिये या दूसरों के लिये करे। भूतशान्ति के लिये एक सप्ताह तक पञ्चगव्य-सिक्त अपामार्ग की समिधा से एक हजार हवन करे। ज्वरशान्ति के लिये दुग्ध लोलित गुरुच की समिधा से तीन हजार हवन चार दिनों तक करे। मधुरत्रय लोलित लाल कमल से एक माह तक एक हजार हवन करे तो अभीष्ट की प्राप्ति होती है। एक वर्ष तक जप करे तो धन-धान्य-समृद्धि से युक्त होता है। मधुरत्रय से लोलित विकसित लाल कमलों से बारह हजार हवन करे तो साधक संसार में लक्ष्मीवान होता है और सबों का प्रिय होता है। प्रतिदिन प्रातः त्रिमधुरोपेत लावा से पन्द्रह दिनों तक हवन करने से अल्प काल में ही विवाहार्थी का विवाह होता है। इस हवन से कन्या को भी सुन्दर वर मिलता है। तिल, राई, अपामार्ग, पायस में गोघृत मिलाकर हवन करने से सभी रोगों से रहित दीर्घ आयु मिलती है एवं वह पत्नी, पुत्र, धन-धान्य से युक्त रहता है।

यन्त्रान्तरम्

शिखिगेहयुगोदरे लिखेद् भुवनेशीमथ साध्यसंयुताम्।
विलिखाश्रिषु मूलमन्त्रकं वसुपत्रे स्वरकेसरे चतुः॥१७॥
मनुराजसदर्णकांल्लिखेल्लिपिसंवीतमथो बहिः पुनः।
वसुधापुरसंवृतं बहिस्त्वथ चिन्तामणिकोणमञ्जुलम्॥१८॥

नृहरेरथ यन्त्रमुत्तमं लिखितं भूर्जदले शिरोधृतम्।
विषरोगरिपुग्रहादिकं भयभूतज्वरमाशु नाशयेत् ॥१९॥ इति।

अस्यार्थः—तत्र षट्कोणमध्ये हृल्लेखां ससाध्यामालिख्य, तत्कोणेषु मूलमन्त्रस्य षडक्षराण्यालिख्य, तद् बाह्येऽष्टदलमूलेषु द्वन्द्वशः स्वरानालिख्य, दलेषु मन्त्रराजस्य वर्णांश्चतुरश्चतुरो विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले सबिन्दुकान् कादिक्षान्तानालिख्य, तद् बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु वक्ष्यमाणशैवचिन्तामणिबीजं विलिखेत्। एतदुक्तफलदं भवति।

षट्कोण के मध्य में साध्य नाम के साथ ह्रीं लिखे। उसके छः कोणों में मूल मन्त्र के छः अक्षरों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल के मूल में दो-दो स्वरों को लिखे। दलों में मन्त्रराज के चार-चार अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में क से क्ष तक के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके कोणों में वक्ष्यमाण शैव चिन्तामणि बीजों को लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर शिर पर धारण करने से विष-रोग-शत्रु-ग्रहादि जन्य भय एवं भूत ज्वर का शीघ्र नाश होता है।

तथा मन्त्रान्तरम्—

तारं नृसिंहबीजं हृद् ङेयुतं भगवत्पदम्। ङेयुतो नरसिंहः स्याज्ज्वालामाली च ङेयुतः ॥१॥
ङेयुक् च दीर्घदंष्ट्रः स्यादग्निनेत्रश्च ङेयुतः। सर्वरक्षोघ्नाय-पदं स्सर्वभूतविनाशना ॥२॥
य सर्वज्वर च (वि)प्रोक्त्वा नाशनाय दहद्वयम्। पच-रक्षयुगं हुंफट् वह्निजायावधिर्मनुः ॥३॥
सप्त (अष्ट) षष्ट्यक्षरः प्रोक्तो ज्वालामालीति विश्रुतः।

तारः प्रणवः। नृसिंहबीजं क्ष्रौं। हृन्नमः। वह्निजाया स्वाहा। सुगममन्यत्।

ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्रं देवता हरिः। नृसिंहरूपी मन्त्रार्णैः षडङ्गानि प्रविन्यसेत् ॥४॥
त्रयोदशदशस्थाण्वष्टादशर्काब्धिभिः क्रमात्। षडङ्गानि मनोः कुर्याज्जातियुक्तानि मन्त्रवित् ॥५॥

स्थाणवः एकादश। अर्का द्वादश। अब्धयश्चत्वारः। ध्यानम्—

उद्यत्कालानलाभं प्रलयहुतवहोद्दीप्तदंष्ट्रोत्कटास्यं
विद्युद्दामाभिरामप्रचुरघनसटाटोपभीमं त्रिनेत्रम्।
हस्ताब्जैः शङ्खचक्रे दधतमसिवरं खेटकं श्रीनृसिंहं
वन्दे दैत्यान्तकं तं मुनिसुरनिकरैः स्तूयमानं सदैव ॥६॥

वामोर्ध्वादितदधोन्तमायुधध्यानम्। असिवरं खड्गश्रेष्ठम्।

पूर्वोदिते यजेत् पीठे नृहरिं सर्वकामदम्। षडक्षरोक्तविधिना सर्वदेवौघवन्दितम् ॥७॥

ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय हृदयाय नमः। ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राय शिरः०। अग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय शिखा०। सर्वभूतविनाशनाय सर्वज्वरविनाशनाय कवचाय०। दह २ पच २ रक्ष २ नेत्रत्रयाय०। हुंफट् स्वाहा अस्त्राय०। इति करषडङ्गन्यासः। प्रयोगः सुगमः। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत्ततः। कपिलासर्पिषा वह्नौ तर्पणादि विधाय च ॥८॥
मन्त्रराजवदेवात्र प्रयोगान् साधयेत् ततः। विशेषतः क्षुद्रभूतज्वरनाशकरः परः ॥९॥
बहूदितेनात्र च किं जपन् मनुं मनुष्यवर्यो च इहात्तभोगकः।
स निग्रहानुग्रहशक्तिमान् भवेत् परत्र विष्णोः पदमेति शाश्वतम् ॥१०॥ इति।

ज्वालामाली मन्त्र—नृसिंह का छियासठ अक्षरों का ज्वालामाली मन्त्र इस प्रकार है—ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय ज्वालामालिने दीर्घदंष्ट्राय अग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशनाय सर्वज्वरविनाशनाय दह दह पच पच रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि प्रजापति, छन्द गायत्री एवं देवता नृसिंहरूपी हरि हैं। मन्त्र के १३, १०, ११, १८, १२, ४ अक्षरों से षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार इनका ध्यान किया जाता है—

उद्यत्कालानलाभं प्रलयहुतवहोद्दीप्तदंष्ट्रोत्कटास्यं विद्युद्दामाभिरामप्रचुरघनसटाटोपभीमं त्रिनेत्रम्।
हस्ताब्जैः शङ्खचक्रे दधतमसिवरं खेटकं श्रीनृसिंहं वन्दे दैत्यान्तकं तं मुनिसुरनिकरैः स्तूयमानं सदैव।।

पूर्वोक्त पीठ पर सभी देवों से वन्दित एवं सर्वकामप्रद नृसिंह की पूजा षड्क्षरोक्त विधि से करे षडङ्ग न्यास इस प्रकार करे—ॐ श्रौं नमो भगवते नरसिंहाय हृदयाय नमः, ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राय शिरसे स्वाहा, अग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय शिखायै वषट्, सर्वभूतविनाशनाय सर्वज्वरविनाशनाय कवचाय हुम्, दह दह पच पच रक्ष रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्, हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। सिद्धि के लिये इस मन्त्र का एक लाख जप करे। दशांश हवन कपिला गाय के घी से अग्नि में करे। तर्पणादि करे। तदनन्तर मन्त्रराज के समान प्रयोग की साधना करे। यह मन्त्र विशेष रूप से यह क्षुद्र भूत एवं ज्वर का नाशक है। जो मनुष्य पर इस मन्त्र का जप करना है वह ऐहिक सुखों को भोगते हुए निग्रह-अनुग्रह करने में समर्थ होता है और अन्त में विष्णु के परम शाश्वत पद को प्राप्त करता है।

सप्रयोगं लक्ष्मीनृसिंहविधानम्

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

अथ लक्ष्मीनृसिंहस्य विधानमभिधीयते। सर्वापत्तारकं दिव्यं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ।।१।।
प्रणवः श्रीशक्तिलक्ष्मीबीजानि जयशब्दतः। लक्ष्मीप्रियपदं ङेन्तं नित्यप्रमुदितं वदेत् ।।२।।
चेतसे प्रवदेल्लक्ष्मीश्रितार्धं ङेन्तदेहकम्। रमाशक्तिरमायुग्हृत् स्यात् त्रयस्त्रिंशदर्णकः ।।३।।
लक्ष्मीनृसिंहमन्त्रोऽयं जपतां सर्वकामदः।

प्रणव ॐ। श्रीबीजं श्रीं। शक्तिर्भुवनेश्वरीबीजं। लक्ष्मीः श्रीं। जय स्वरूपं। लक्ष्मीप्रियं ङेन्तं लक्ष्मीप्रियाय। नित्यप्रमुदितचेतसे स्वरूपं। लक्ष्मीश्रितार्ध स्वरूपं। ङेन्तदेहकं देहाय। प्रणवरहितं बीजत्रयं। हृन्नमः। तथा—

ऋषिः प्रजापतिश्छन्दोऽनुष्टुब् लक्ष्मीनृसिंहकः। देवता निजबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ।।४।।

निजबीजेन नृसिंहबीजेन।

पुरस्तात् केशवः पातु चक्री जाम्बूनदप्रभः। पश्चान्नारायणः शङ्खी नीलजीमूतसन्निभः ।।५।।
इन्दीवरदलश्यामो वामपार्श्वे गदाधरः। गोविन्दो दक्षिणे पार्श्वे धन्वी चन्द्रप्रभो महान् ।।६।।
उत्तरे हलधृग्विष्णुः पद्मकिञ्जल्कसन्निभः। आग्नेय्यामरबिन्दाभो मुसली मधुसूदनः ।।७।।
त्रिविक्रमः खड्गपाणिर्नैर्ऋत्यां ज्वलनप्रभः। वायव्यां वामनो वज्री वरुणादित्यदीप्तिमान् ।।८।।
ऐशान्यां पुण्डरीकाक्षः श्रीधरः पट्टिशायुधः। विद्युत्प्रभो हृषीकेशो ह्यवाच्यां दिशि मुद्गरी ।।९।।
हृत्पद्मे पद्मनाभो च सहस्रार्कसमप्रभः। सर्वायुधः सर्वशक्तिः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ।।१०।।
इन्द्रगोपकसङ्काशः पाशहस्तोऽपराजितः। सबाह्याभ्यन्तरं देहं व्याप्य दामोदरः स्थितः ।।११।।
एवं सर्वत्र निच्छिदं नामद्वादशपञ्जरम्। प्रविष्टोऽहं न मे किञ्चिद्भयमस्ति कदाचन ।।१२।।
इति न्यासं विधायादौ लक्ष्मीनरहरिं स्मरेत्।

सर्पेन्द्रभोगनिलयः सुफणातपत्रो विद्युच्छशाङ्करुचिरः परमो नृसिंहः।
आलिङ्गितश्च रमयावतु दिव्यभूषो हस्तैर्दरारिकमलाभयदान् दधानः ।।१३।।

दक्षाधःकरमारभ्य वामाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्।

देवमावाह्य पूर्वोक्ते पीठे सम्यक् प्रपूजयेत्। प्रथमाङ्गावृतिः प्रोक्ता द्वितीया शक्तिभिः स्मृता ।।१४।।
भास्वती भास्करी चित्रा द्युतिरुन्मीलनी तथा। रमा कान्तिर्धृतिश्चेति शक्तयोऽष्टौ रमापतेः ।।१५।।
तृतीयावृतिरिन्द्राद्यैश्चतुर्थी च तदायुधैः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि—प्रजापतये ऋषये नमः। मुखे—अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदये—श्रीलक्ष्मीनृसिंहाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, प्रागवद्विनियोगमुक्त्वा,

क्षांक्ष्रीं इत्यादिना करषडङ्गन्यासं विधाय, पूर्वोक्तश्लोकैर्नामद्वादशपञ्जरन्यासं कृत्वा ध्यानाद्यङ्गार्चान्तेऽष्टसु दलेषु— भास्वत्यै नमः। भास्कर्यै०। चित्रायै०। द्युत्यै०। उन्मीलन्त्यै०। रमायै०। कान्त्यै०। धृत्यै०। इति संपूज्य लोकेशार्चादि प्राग्वत् कुर्यात्। तथा—

षष्ट्युत्तरत्रिलक्षं तु प्रजपेत् तत्सहस्रकम्। मध्वक्तमल्लिकापुष्पैर्जुहुयान्मन्त्रवित्तमः ॥१६॥
अभ्यर्च्य सलिले देवं तर्पयेन्मनुना ततः। अभिषिञ्चेत् स्वमूर्धानं ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥१७॥
ततः प्रयोगान् कुर्वीत साधको निजवाञ्छितान्। मल्लिकाकुसुमैर्होमः सर्वकाम्यकरः शुभः ॥१८॥ इति।

तथा मन्त्रान्तरम्—

तारो लक्ष्मीनृसिंहः स्यात् ङेन्तः श्रीपूर्वकः परः। मन्त्रो लक्ष्मीनृसिंहस्याष्टार्णोऽयं समुदीरितः ॥१॥

लक्ष्मीनृसिंहो ङेन्तः श्रीपूर्वकः श्रीलक्ष्मीनृसिंहायेति। तथा—

ऋषिः प्रजापतिश्छन्दोऽनुष्टुब् देवो विशारदः। नृसिंहश्च स्वबीजेन दीर्घयुक्तेन मन्त्रवित् ॥२॥
षडङ्गानि मनोरस्य विदध्यात् प्रोक्तवर्त्मना। ध्यानपूजादिकं सर्वं षडक्षरवदीरितम् ॥३॥
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः। पायसैर्जुहुयान्मन्त्री तर्पणादि ततश्चरेत् ॥४॥ इति।

तथा मन्त्रान्तरम्—

जयशब्दं द्विरुच्चार्य श्रीनृसिंहेति चोच्चरेत्। अष्टार्णो मनुराख्यातो ऋष्याद्यं पूर्ववच्चरेत् ॥१॥

पूर्ववत् पूर्वोक्ताष्टाक्षरवत्। अर्थात्पूजा च षडर्णवत्।

तथा मन्त्रान्तरम्—

वदेद्बीजं ङेन्तमत्स्यं बीजं ङेन्तं च कूर्मकम्। बीजं ङेन्तं च वाराहं बीजं ङेन्तं नृसिंहकम् ॥१॥
बीजं ङेन्तं वामनयुक् त्रिर्बीजं ङेन्तरामयुक्। बीजं कृष्णाय बीजं स्यात्कल्किने जययुग्मकम् ॥२॥
शालग्रामाग्निवासिने दिव्यसिंहस्वयम्भुयुक्। पुरुषो ङेयुतो हृत्स्वबीजान्त्योऽयं मनुर्मतः ॥३॥

नृसिंहबीजं मत्स्याय। पुनर्नृसिंहबीजं कूर्माय। इत्यादि त्रिरिति त्रिवारं बीजं रामाय। पुनर्बीजं रामाय। पुनर्बीजं रामायेति हृन्नमः।

ऋष्याद्या अत्र्यतिच्छन्दोनृसिंहा गदिताः क्रमात्। षड्दीर्घयुक्स्वबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥४॥
मन्त्रराजवदेवास्य ध्यानपूजादिकं भवेत्। अङ्गान्ते चाथ मत्स्यादिकावतारांश्च पूजयेत् ॥५॥ इति।

अथ प्रयोगः—प्रातःकृत्यादिप्राणायामत्रयं विधाय अत्रिऋषये नमः शिरसे। अतिच्छन्दसे छन्दसे नमो मुखे। श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः हृदये। इति विन्यस्य, प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, क्षांक्ष्रीं इत्यादिना षडङ्गन्यासः। अङ्गपूजानन्तरं ॐमत्स्याय नमः। कूर्माय०। इत्यादिभिः पूजयेत्।

तथा—

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं साज्येन हविषा ततः। जुहुयात् तद्दशांशेन तर्पणादि ततश्चरेत् ॥६॥
काम्यकर्माणि चान्यानि मन्त्रराजवदेव हि।

लक्ष्मी नृसिंह मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार तैंतीस अक्षरों का लक्ष्मी नृसिंह मन्त्र है—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं जय लक्ष्मीप्रियाय नित्यप्रमुदितचेतसे लक्ष्मीश्रितार्धदेहाय श्रीं ह्रीं श्रीं नमः।

इसके ऋषि प्रजापति, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता लक्ष्मीनृसिंह हैं। क्षां क्षीं इत्यादि से षडङ्ग करने के पश्चात् बारह नामों वाले कवच का पाठ करे—

पुरस्तात् केशवः पातु चक्री जाम्बूनदप्रभः। पश्चान्नारायणः शङ्खी नीलजीमूतसन्निभः।।
इन्दीवरदलश्यामो वामपार्श्वं गदाधरः। गोविन्दो दक्षिणे पार्श्वे धन्वी चन्द्रप्रभो महान्।।

उत्तरे हलधृग्विष्णुः पद्मकिञ्जल्कसन्निभः। आग्नेय्यामरबिन्दाभो मुसली मधुसूदनः।।
त्रिविक्रमः खड्गपाणिर्नैर्ऋत्यां ज्वलनप्रभः। वायव्यां वामनो वज्री वरुणादित्यदीप्तिमान्।।
ऐशान्यां पुण्डरीकाक्षः श्रीधरः पट्टिशायुधः। विद्युत्प्रभो हृषीकेशो ह्यवाच्यां दिशि मुद्गरी।।
हृत्पद्मे पद्मनाभो च सहस्रार्कसमप्रभः। सर्वायुधः सर्वशक्तिः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः।।
इन्द्रगोपकसङ्काशः पाशहस्तोऽपराजितः। सबाह्याभ्यन्तरं देहं व्याप्य दामोदरः स्थितः।।
एवं सर्वत्र निच्छिदं नामद्वादशपञ्जरम्। प्रविष्टोऽहं न मे किञ्चिद्भयमस्ति कदाचन।।

इस प्रकार कवच न्यास करने के बाद निम्नवत् ध्यान करे—

सर्पेन्द्रभोगनिलयः सुफणातपत्रो विद्युच्छशाङ्करुचिरः परमो नृसिंहः।
आलिङ्गितश्च रमयावतु दिव्यभूषो हस्तैर्दरारिकमलाभयदान् दधानः।।

तदनन्तर पूर्वोक्त पीठ पर देव का आवाहन करके सम्यक् पूजन करे। प्रथम आवरण में अंगपूजन करे। अष्टदल में द्वितीय आवरण में इन शक्तियों की पूजा करे—भास्वत्यै नमः, भास्कर्यै नमः, चित्रायै नमः, द्युत्यै नमः, उन्मीलन्त्यै नमः, रमायै नमः, कान्त्यै नमः, धृत्यै नमः। तृतीय आवरण में लोकपालों की पूजा भूपुर में करे। उसके बाहर आयुधों की पूजा करे।

तीन लाख साठ हजार मन्त्र-जप करे। दशांश हवन मध्वक्त मल्लिका फूलों से करे। जल से तर्पण करे। अपने मूर्धा पर मार्जन करे। ब्राह्मणों को भोजन कराये। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से वांछित प्रयोग करे। मल्लिका से हवन समस्त कार्यों में पूर्णता प्रदान करने वाला होता है।

मन्त्रान्तर—लक्ष्मीनृसिंह का एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ श्रीलक्ष्मीनृसिंहाय। पूर्ववत् ही इसका षडङ्ग न्यास किया जाता है। ध्यान-पूजादि सभी षडक्षर मन्त्र के समान ही होते हैं। वर्णलक्ष के अनुसार आठ लाख जप किया जाता है। दशांश हवन घृतप्लुत पायस से करने के पश्चात् तर्पण-मार्जन आदि किया जाता है।

मन्त्रान्तर—एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—जय जय श्रीनृसिंह। इस मन्त्र के पूजनादि सब कुछ पूर्वोक्त षडक्षर मन्त्र के समान होते हैं।

मन्त्रान्तर—लक्ष्मी नृसिंह का एक अन्य मन्त्र है—क्ष्रौं मत्स्याय क्ष्रौं कूर्माय क्ष्रौं वाराहाय क्ष्रौं नृसिंहाय क्ष्रौं वामनाय क्ष्रौं रामाय क्ष्रौं कृष्णाय क्ष्रौं कल्किने जय जय शालग्रामाग्निवासिने दिव्यसिंहस्वयम्भुपुरुषाय नमः क्ष्रौं।

इसके ऋषि अत्रि, छन्द अतिच्छन्द एवं देवता नृसिंह हैं। क्षां क्षीं इत्यादि से षडङ्ग किया जाता है। ध्यान-पूजादि मन्त्रराज के समान है। पहले अंगपूजा कर तब मत्स्यादि अवतारों की पूजा करे। दश हजार मन्त्र जप करे। दशांश हवन हविष्य से करे। तर्पण करे। तदनन्तर मन्त्रराज के समान ही काम्य कर्म करे।

वीरनृसिंहमन्त्रः

१. अथ वीरनृसिंहस्य मन्त्रः संप्रोच्यतेऽधुना ।।७।।

प्रणवो हृद्भगवते वीरसिंहाययोर्नृ च। ज्वालामालापिनद्धाङ्गायाग्निनेत्राय सर्वभू ।।८।।
तविनाशनाय-पदं दहयुग्मं पचद्वयम्। रक्षयुग्मं शक्तियुक्तमस्त्रानलवधूस्तथा ।।९।।) इति।

वीरसिंहाययोर्नृ चेति वीरपदसिंहायपदयोर्मध्ये नृ इत्यर्थः। तेन वीरनृसिंहायेति। एवमग्रेऽपि। शक्तियुग्मं मायाबीजद्वयं। सुगममन्यत्।

तथा—

२. मन्त्रान्तरमथो वच्मि तस्यैवाशु फलप्रदम्। प्रणवो हृद्भगवते वीरसिंहाययोर्नृ च ।।१।।
ङेन्तं ज्वालामालिपदं दीप्तदंष्ट्रं च ङेयुतम्। अग्निनेत्राय सर्वान्ते रक्षोघ्नाय पदं वदेत् ।।२।।
सर्वभूतविनाशान्ते नायान्ते सर्वशब्दतः। ज्वरं विनाशयेति स्याद्धनयुग्मं दहद्वयम् ।।३।।

पचद्वयं बन्धयुग्मं रक्षयुग्मं वदेत् ततः। वर्मास्त्राग्निवधूर्वीरनृसिंहस्य मनुर्मतः ॥४॥
३. अथ मन्त्रान्तरं तस्य वक्ष्यते सर्वकामदम्। अग्निनेत्रायान्तकं तु पूर्वमन्त्र उदाहृतः ॥५॥
ततो वदेत् सर्वभूतविनाशाय ततो वदेत्। सर्वज्वरविनाश च नाय सर्व च दोषवि ॥६॥
नाशनाय हनद्वन्द्वं दहयुक् पचयुग्मकम्। बन्धरक्षयुगं पश्चान्मायाहुंफट् द्विठावधिः ॥७॥
एतन्मन्त्रत्रयस्यापि विधानं पूर्वमीरितम्।

पूर्वमीरितं मन्त्रराजोक्तम्। मन्त्रान्तरम्—

तारं नृसिंहबीजं च महासिंहाययोर्नृ च। हृदन्तो दशवर्णः स्यान्नृसिंहमनुरुत्तमः ॥१॥
ऋषिश्च वामदेवाख्यो विराट् छन्द उदाहृतम्। नृसिंहो देवता चास्य सर्वदेवौघवन्दितः ॥२॥
षड्दीर्घयुक्स्वबीजेन षडङ्गन्यासमाचरेत्। ध्यानपूजादिकं सर्वमस्य पूर्ववदाचरेत् ॥३॥

पूर्ववदिति अष्टाक्षरलक्ष्मीनृसिंहवत्। आदिपदेन पुरश्चरणतद्धोमद्रव्यादिकं गृह्यते। तदा तत्र वर्णलक्षमित्युक्तेरत्रापि वर्णलक्षं दशलक्षं प्रोष्यते। मन्त्रान्तरम्—

तारं नृसिंहबीजं हृद् ङेन्तं च भगवत्पदम्। नरसिंहाय मन्त्रोऽयं त्रयोदशभिरक्षरैः ॥१॥
वामदेवो मुनिः प्रोक्तो जगती च्छन्द ईरितम्। देवता नरसिंहोऽत्र स्वबीजेनाङ्गकल्पनम् ॥२॥
ध्यानपूजाजपार्चादि षडक्षरवदीरितम्।

१. वीर नृसिंह मन्त्र—ॐ नमो भगवते वीरनृसिंहाय ज्वालामालापिनदांगाय अग्निनेत्राय सर्वभूतविनाशाय दह दह पच पच रक्ष रक्ष ह्रीं हुं फट् स्वाहा।

२. सद्यः फल देने वाला वीर नृसिंह मन्त्र है—ॐ नमो भगवते वीरनृसिंहाय ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राय अग्निनेत्राय सर्वरक्षोघ्नाय सर्वभूतविनाशनाय सर्वज्वरं विनाशाय हन हन दह दह पच पच बन्ध बन्ध रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा।

३. सर्वकामद वीर नृसिंह मन्त्र है—ॐ नमो भगवते वीरनृसिंहाय ज्वालामालिने दीप्तदंष्ट्राय अग्निनेत्राय सर्वभूतविनाशाय सर्वज्वरविनाशनाय सर्वदोषविनाशनाय हन हन दह दह पच पच बन्ध बन्ध रक्ष रक्ष ह्रीं हुं फट् स्वाहा। इस तीनों मन्त्रों का विधान पूर्ववत् ही है अर्थात् मन्त्रराज के समान ही पूजादि करने चाहिये।

मन्त्रान्तर—एक अन्य दशाक्षर मन्त्र है—ॐ क्ष्रौं महानृसिंहाय नमः। इसके ऋषि वामदेव, छन्द विराट् एवं देवता नृसिंह हैं। क्ष्रां क्ष्रीं इत्यादि से इसका अंग न्यास किया जाता है। ध्यान-पूजादि अष्टाक्षर नृसिंह मन्त्र के समान होते हैं। वर्णलक्ष नियम के अनुसार दश लाख मन्त्रजप किया जाता है।

मन्त्रान्तर—एक अन्य तेरह अक्षरों का मन्त्र है—ॐ क्ष्रौं नमो भगवते नरसिंहाय। इसके ऋषि वामदेव, छन्द जगती एवं देवता नरसिंह हैं। क्ष्रां क्ष्रीं इत्यादि से अंगन्यास करके षडक्षर मन्त्र के समान ध्यान-पूजा-जपार्चा आदि होते हैं।

सप्रयोगः सुदर्शननृसिंहमन्त्रः

तारं सहस्रारपदं ज्वालान्ते वर्तिने पदम् ॥३॥
नृसिंहबीजं हनयुग् हुंफट् स्वाहान्तिको मनुः। एकोनविंशत्यर्णोऽयं नृहरेश्चक्रसंज्ञकः ॥४॥

तारः प्रणवः। नृसिंहबीजं पूर्वोक्तं। हनयुक् हनहनेति।

तथा—

ऋषिर्जयन्त आख्यातश्छन्दो गायत्रमिष्यते। सुदर्शननृसिंहोऽस्य देवता परिकीर्तिता ॥५॥
चक्रराजाय हृत् प्रोक्तं ज्वालाचक्राय वै शिरः। जगच्चक्राय च शिखा कवचं त्वस्य संमतम् ॥६॥
असुरान्तकचक्राय ह्यस्त्राणुश्च महापरम्। सुदर्शनायेति मनुः पञ्चाङ्गं समुदीरितम् ॥७॥

चक्रासनस्य मध्यस्थकालाग्निसदृशद्युतिम्। चतुर्भुजं विवृत्तास्यं चतुश्चक्रधरं हरिम् ॥८॥
कोटिभास्वन्महद्वर्णं त्रिनेत्रं चोग्रविग्रहम्। ध्यायेत् समस्तदुःखौघज्वरभूतविनाशनम् ॥९॥
पूर्वोक्ते वैष्णवे पीठे पूजयेदुक्तवर्त्मना । अङ्गानि पूजयेद् दिक्षु जयाद्याः पूजयेत् क्रमात् ॥१०॥
जया च विजया पश्चादजिता चापराजिता। विदिक्षु पूजयेत् पश्चान्मदनां मोदिनीं तथा ॥११॥
सहाख्यां सिद्धिसंज्ञां च पुरतः पूजयेत्ततः। कृष्णाभौ सितदंष्ट्रौ तौ (!) द्वितीयावृतिरीरिता ॥१२॥
अङ्गा(इन्द्रा)दिभिस्तृतीया स्याद्वज्रादिभिरनन्तरम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा शिरसि—जयन्ताय ऋषये नमः। मुखे—गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये—श्रीसुदर्शननृसिंहाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, चक्रराजाय हृदयाय नमः। ज्वालाचक्राय शिरसे०। जगच्चक्राय शिखा०। असुरान्तकचक्राय कवचाय०। महासुदर्शनाय अस्त्राय०। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान्मूलाभिमृष्टकराङ्गुलीषु विन्यस्य, नेत्रवर्जं हृदयादिपञ्चाङ्गेषु विन्यस्य ध्यानादिपुष्पोपचारान्तेऽङ्गानि संपूज्य, दिग्दलेषु—जयायै नमः। विजयायै०। अजितायै०। अपराजितायै०। विदिग्दलेषु—मदनायै०। मोदिन्यै०। सहायै०। सिद्ध्यै० इति संपूज्य, लोकेशार्चादि प्राग्वत् कुर्यात्।

तथा—
रविलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं शुभैस्तिलैः। हुनेत् पुष्पैस्तर्पयेच्च चत्वारिंशत्सहस्रकम् ॥१३॥
आज्येन जुहुयान्मन्त्री सहस्रं च नमस्क्रियाम्। तर्पणादि ततः कुर्यात् पूर्वोक्तविधिना सुधीः ॥१४॥
ततः सिद्धमनुर्मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत्।

तिलैः पुष्पैः घृतैश्च प्रतिद्रव्यं चत्वारिंशत्सहस्रमित्यर्थः। रविलक्षं द्वादशलक्षम्।

तथा—
ब्राह्मणो जप्तुमिच्छेत्तु कुशानास्तीर्य भूतले। तस्मिन् देशे समाराध्य सुदर्शननृसिंहकम् ॥१५॥
मन्त्रं सहस्रमावृत्य हुनेद् देवस्य संनिधौ। सहस्रं मूलमन्त्रेण ह्यपामार्गसमिद्वरैः ॥१६॥
तद्भस्मतिलकं कृत्वा निर्गच्छेच्छत्रुसान्निधौ। दासवत् कुरुते शत्रून् स सद्यो नात्र संशयः ॥१७॥
अथ शत्रुमनुस्मृत्य तर्पणं चापि कारयेत्। अयुतं जयमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥१८॥
अथोदुम्बरपीठे तु देवदेवं निवेशयेत्। तस्याग्रे वर्तुले कुण्डे होतव्या खादिरी समित् ॥१९॥
अयुतं यो घृताक्तां तु मध्वक्तां वा जितेन्द्रियः। जयमाप्नोति स वादे नित्यं परशुरामवत् ॥२०॥
तज्जप्तहाटकं पट्टं रचयित्वा तु चक्रकम्। तेनाङ्गुलीयकं कृत्वा जपहोमादिसाधितम् ॥२१॥
धारयेद् दक्षिणे हस्ते मृत्युं रोगाञ्जयेदरीन्। राज्ञः सकाशात् पूजां च लभते धारयन् सदा ॥२२॥
जलं त्रिसप्तजप्तं तु सर्वोदरगदान्तकम्। पूर्वं नवशिफानिष्कत्रयं लवणसंयुतम् ॥२३॥
स्पृष्ट्वा जप्तं तप्तजले गुल्मशूलादि मासतः। मासमेकं प्रतिदिनं दूर्वाहोमं सहस्रकम् ॥२४॥
कृत्वा संपूजयेद् देवं राजयक्ष्मा प्रणश्यति। तिलैर्वा मधुना वापि तादृग्होमः प्रमेहनुत् ॥२५॥
नेत्ररोगः सहस्रेण पद्महोमेन नश्यति। त्रिसप्तजप्ततोयेन क्षालनं नेत्ररोगनुत् ॥२६॥
दशधा जप्ततोयेन करकेणैव सेचयेत्। तावत् सुमन्त्रितेनापि नवनीतेन लेपनात् ॥२७॥
सप्ताहं वार्धसप्ताहं नाशयन्ति विसर्पकान्। अपामार्गेण जुहुयान्नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥२८॥
जप्त्वा तावन्नमस्कारं कुर्यान्मासमतन्द्रितः। अपस्मारादिकानन्यान् ग्रहान् सर्वान् विनाशयेत् ॥२९॥
शुद्धाद्भिः पूरितं कुम्भं चन्द्रमण्डलमध्यगम्। सुदर्शननृसिंहं तु सुधाविग्रहधारिणम् ॥३०॥
यथावच्चिन्तयेत् तत्र पूजयेच्चोपचारकैः। जप्त्वा शतं सहस्रं वा दष्टं तेनैव सेचयेत् ॥३१॥
तथा स्पृशेद्वामहस्ते ह्यम्भः स्पर्शाद्विषं हरेत्।

मन्त्रान्तर—एक अन्य भगवान् नृसिंह चक्र उन्तीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ सहस्रारज्वालावर्तिने क्ष्रौं हन हन हुं फट् स्वाहा। इसके ऋषि जयन्त, छन्द गायत्री एवं देवता सुदर्शन नृसिंह हैं। इसका अंगन्यास इस प्रकार किया जाता है—चक्रराजाय हृदयाय नमः, ज्वालाचक्राय शिरसे स्वाहा, जगच्चक्राय शिखायै वषट्, असुरान्तचक्राय कवचाय हुं, महासुदर्शनाय अस्त्राय फट्। इस प्रकार पञ्चाग न्यास करने के बाद निम्नवत् ध्यान करे—

चक्रासनस्य मध्यस्थकालाग्निसदृशद्युतिम्। चतुर्भुजं विवृत्तास्यं चतुश्चक्रधरं हरिम्।।
कोटिभास्वन्महद्वर्णं त्रिनेत्रं चोग्रविग्रहम्। ध्यायेत् समस्तदुःखौघज्वरभूतविनाशनम्।।

पूर्वोक्त वैष्णव पीठ पर उक्त मार्ग से पूजा करे। अष्टदल पद्म कर्णिका में अंगों की पूजा करे। अष्टदल में शक्तियों की पूजा इस प्रकार करे—जयायै नमः, विजयायै नमः, अजितायै नमः, अपराजितायै नमः। कोण दिशाओं में मदनायै नमः, मोदिन्यै नमः, सहायै नमः, सिद्ध्यै नमः से पूजा करे। भूपुर में लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा पूर्ववत् करे।

बारह लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन में तिल, पुष्प एवं घृत से चालीस-चालीस हजार अलग-अलग हवन करे। तदनन्तर नमस्कार करके पूर्वोक्त विधि से तर्पण करे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मों का साधन करे।

जपेच्छु ब्राह्मण भूमि पर कुशासन बिछाकर सुदर्शन नृसिंह का आराधन करके एक हजार जप के बाद देवता के निकट अपामार्ग की समिधा से मूल मन्त्र से एक हजार हवन करे। उसके भस्म का तिलक लगाकर शत्रु के निकट जाय तो शत्रु उसका दास हो जाता है। शत्रु और मन्त्र का स्मरण करके दश हजार तर्पण करे तो शत्रु पर विजय प्राप्त होती है। गूलर के पीठ पर देवदेव को स्थापित करके उसके आगे वर्तुल कुण्ड में खैर की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में खैर की समिधा को घृताक्त या मधुसिक्त करके दश हजार हवन करे तो विवाद में प्रतिदिन वह परशुराम के समान विजय प्राप्त करता है। मन्त्र जप करके सोने के पत्र पर चक्र बनावे। उस स्वर्णपत्र से निर्मित अंगूठी को जप-हवन से सिद्ध करे। उसे दाहिने हाथ में धारण करे तो मृत्यु रोग एवं शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। साथ ही उसे धारण करने वाले को राजा से सदा सत्कार प्राप्त होता है। इक्कीस जप से मन्त्रित जल को पीने से पेट के सभी रोगों का नाश हो जाता है। नमक मिश्रित तीन निष्क शिफा को स्पर्श करके जप करे। उसे गरम जल में मिलाकर पान करे तो एक महीने में गुल्म शूल आदि नष्ट होते हैं। एक महीने तक प्रतिदिन दूब से एक हजार हवन करके देव की पूजा करे तो राजयक्ष्मा का नाश होता है। तिल या मधु से उसी प्रकार हवन करने से प्रमेह रोग ठीक होता है। एक हजार कमल के हवन से नेत्ररोग नष्ट होता है। इक्कीस जप से मन्त्रित जल से आँखों को धोने से नेत्ररोग का नाश होता है। दश जप से मन्त्रित जल को करक में लेकर स्नान करे। उतने ही जप से मन्त्रित मक्खन के लेप से एक सप्ताह या आधे सप्ताह में विसर्प का नाश होता है। अपामार्ग से एक सौ आठ हवन नित्य करे। उतने ही जप से नमस्कार करे तो अपस्मार एवं अन्य ग्रहजनित रोग नष्ट होते हैं। कुम्भ में शुद्ध जल भरे। उस कलश में चन्द्रमण्डल में सुदर्शन नृसिंह के अमृत रूप का ध्यान करते हुये उपचारों से पूजा करे। एक सौ या एक हजार मन्त्र जप करे। सर्पविष से पीड़ित को उस जल से स्नान करावे। पीड़ित का बाँयें हाथ से स्पर्श करे तो विष का प्रभाव खत्म हो जाता है।

तद्यन्त्रोद्धारः

पद्मं पङ्क्तिदलं हनद्वययुतं मध्ये ससाध्यं ध्रुवे मन्त्रार्णान् द्विश आलिखेद् दलमनुप्रान्तेऽन्तिमं तद्बहिः ।
षट्कोणे निजबीजमग्निसदनं ज्वालापरीतं लिखेद् दीप्तं जापहुतादिसाधितमिदं रक्षाकरं शत्रुहृत् ॥३२॥ इति।

अस्यार्थः—त्रिकोणाभ्यन्तरे षट्कोणं तदन्तर्दशदलकमलं च कृत्वा तत्कर्णिकायां प्रणवमध्ये 'अमुकं हन २' इति शत्रुनाम विलिख्य (दलेषु नवसु मन्त्राक्षराणि द्वन्द्वशोऽष्टादश विलिख्य) दशमदलेऽन्त्यमक्षरं मन्त्रस्य विलिख्य षट्कोणेषु नृसिंहबीजं विलिख्य तद्बहिर्भूपुरत्रयं कुर्यात्। जपहोमपूजादिभिः साधितमेतद्यन्त्रं शत्रुनाशनं रक्षाकरं च भवतीति।

त्रिकोण के बाहर षट्कोण उसके बाहर दशदल कमल बनावे, मध्य में ॐ के मध्य में 'अमुकं हन हन' के स्थान पर शत्रुनाम लिखे। दश दल के नव दलों में मन्त्र के दो-दो अक्षर लिखे। दशवें दल में अन्तिम अक्षर लिखे। षट्कोण में

नृसिंह बीज लिखे। उसके बाहर तीन भूपुर बनाकर जप-पूजा-हवन करे। इस प्रकार से सिद्ध यन्त्र शत्रुनाशक एवं रक्षाकारक होता है।

षडर्णराममन्त्रस्तत्प्रभावश्च

अथ श्रीराममन्त्राः। सारसंग्रहे—

अथ राममनून् वक्ष्ये श्रेष्ठान् वैष्णवतन्त्रके। तत्रादौ मन्त्रराजस्तु षडर्णः प्रोच्यतेऽधुना ॥१॥
गाणपत्येषु सौरेषु शाक्तशैवेष्वभीष्टदः। वैष्णवेष्वपि सर्वेषु राममन्त्रः फलाधिकः ॥२॥
गाणपत्यादिमन्त्रेषु कोटिकोटिगुणाधिकाः। मन्त्रास्तेष्वप्यनायासफलदोऽयं षडक्षरः ॥३॥
षडक्षरोऽयं मन्त्रस्तु सर्वाघौघविनाशनः। मन्त्रराज इति प्रोक्तः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥४॥
दैनन्दिनं च दुरितं पक्षमासर्तुवर्षजम्। सर्वं दहति निःशेषमूर्णाचलमिवानलः ॥५॥
ब्रह्महत्यासहस्राणि ज्ञानाज्ञानकृतानि च। स्वर्णस्तेयसुरापानगुरुतल्पायुतानि च ॥६॥
सर्वाण्यपि शमं यान्ति मन्त्रराजानुकीर्तनात्। ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं हत्वापि कल्मषम् ॥७॥
सञ्चिनोति नरो मोहाद्भूयस्तदपि नाशयेत्। ग्रामारण्यपशुघ्नत्वसञ्चितं दुरितं च यत् ॥८॥
निःशेषं नाशयत्येव रामात्मा मन्त्रराजकः। मद्यपानेन यत् पापं तदप्याशु विनाशयेत् ॥९॥
अभक्षभक्षणोत्पन्नं मिथ्याज्ञानसमुद्भवम्। सर्वं विलीयते राममन्त्रस्यास्यैव कीर्तनात् ॥१०॥
श्रोत्रियस्वर्णहरणाच्चैनो यदुपगच्छति। रत्नादेरपहारेण तदप्याशु विनाशयेत् ॥११॥
गत्वा तु मातरं मोहादगम्यां वापि योषितम्। उपास्यानेन मन्त्रेण रामं तदपि नाशयेत् ॥१२॥
महापातकयुक्तानां सङ्गत्या सञ्चितं च यत्। नाशयेत्तत्कथालापशयनासनभोजनैः ॥१३॥
पितृमातृवधोत्पन्नं बुद्धिपूर्वमघं च यत्। निःशेषं नाशयत्येव कालत्रयसमुद्भवम् ॥१४॥
तदनुष्ठानमात्रेण सर्वमेव प्रलीयते। यत् प्रयागादितीर्थेषु प्रायश्चित्तादिकैरपि ॥१५॥
नैवापनुद्यते पापं तदप्याशु विनाशयेत्। कृच्छ्रैस्तप्तपराकाद्यैर्नानाचान्द्रायणैरपि ॥१६॥
पापं च नापनोद्यं यत् तदस्याशु विनाशयेत्। आत्मतुल्यसुवर्णादिदानैर्बहुविधैरपि ॥१७॥
किञ्चिदप्यपरिक्षीणं पापं तदपि नाशयेत्। भूतप्रेतपिशाचाद्याः कूष्माण्डग्रहराक्षसाः ॥१८॥
दूरादेव पलायन्ते मन्त्रराजप्रभावतः। मालिन्यमपि साङ्कर्यं यच्च यावच्च दूषणम् ॥१९॥
सर्वं विलयमाप्नोति मन्त्रराजानुकीर्तनात्। अब्रह्मचर्यदोषाश्च नियमातिक्रमोद्भवाः ॥२०॥
स्त्रीणां च पुरुषाणां स्युर्मन्त्रेणानेन नाशिताः। शान्तः प्रसन्नो वरदोऽक्रोधनो भक्तवत्सलः ॥२१॥
मन्त्रराजसमो मन्त्रो जगत्स्वपि न विद्यते। सकामानां भुक्तिदोऽयं निष्कामाणां च मुक्तिदः ॥२२॥
नृणामुभयकामानां भुक्तिमुक्तिप्रदायकः। रात्यभीष्टं महीसंस्थो राजते वा महीस्थितः ॥२३॥
अथवा राक्षसा यस्मान्मरणं यान्ति सर्वतः। इत्यादि।

अत्रैव षडक्षरमन्त्रप्रभावकथनं सर्वेषामपि राममन्त्राणां साधारणं बोद्धव्यम्। अथात्रैकाक्षरमारभ्य, क्रमेण सर्वे मन्त्रा उद्ध्रियन्ते।

राममन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब वैष्णव तन्त्र के श्रेष्ठ राममन्त्र को कहता हूँ। सबसे पहले षडक्षर मन्त्रराज को कहता हूँ। इससे गाणपत्यों, सौरों, शाक्तों और शैवों को भी अभीष्ट सिद्ध होता है। वैष्णव मन्त्रों में भी राममन्त्र से सर्वाधिक फल मिलता है। गाणपत्यादि मन्त्रों से करोड़ गुना अधिक फल इस मन्त्र से मिलता है। यह षडक्षर मन्त्र सभी पापों के समूह का विनाशक है, सबों में उत्तम होने से ही इसे मन्त्र राज कहते हैं। यह दैनिक पाक्षिक मासिक सभी पापों का नाश वैसे ही करता है, जैसे रूई के पहाड़ को आग जला देता है। हजारों ब्रह्महत्या, ज्ञात-अज्ञात कर्म, सोने की चोरी, सुरापान, गुरु की शय्या पर शयन आदि के पापों का नाश इस मन्त्रराज के जप से हो जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हत्या के

पापों का नाश होता है। ग्राम्य, जंगली, पशुओं के वध से सञ्चित पाप का यह राम मन्त्रराज नाश कर देता है। मद्यपान के पापों को भी नष्ट करता है। अभक्ष्य भक्षण, मिथ्या ज्ञान से उत्पन्न पापों का नाश राममन्त्र के कीर्तन से होता है। ब्राह्मण के सोना एवं रत्नों को छीन लेने से जो पाप होते हैं, उनका नाश राममन्त्र जप से होता है। मातृगमन, अगम्य स्त्री के साथ समागम से उत्पन्न पापों का नाश राममन्त्र की उपासना से होता है। महापापियों की संगति से सञ्चित पापों का नाश रामकथा और खाते-पीते-सोते राम का नाम लेने से हो जाता है। जानकर की गई माता-पिता हत्या के पाप एवं तीनों काल से उत्पन्न पापों का नाश राम नाम लेने से होता है। इसके अनुष्ठानमात्र से ही सबों का नाश हो जाता है। प्रयागादि तीर्थों में प्रायश्चित्त करने पर भी जिन पापों का नाश नहीं होता, उनका भी नाश इस मन्त्रोपासना से होता है। कृच्छ्र व्रत, अनेकों चान्द्रायण व्रतों से भी जिन पापों का नाश नहीं होता, उनका भी नाश रामोपासना से तुरन्त होता है। अपने बराबर सुवर्णदान से भी जो पाप नष्ट नहीं होते, उनका भी नाश राम के नाम से हो जाता है। इस मन्त्रराज के प्रभाव से भूत प्रेत पिशाच कुष्माण्ड ग्रह राक्षस उपासक को दूर से देखते ही भाग जाते हैं। मलिनता, साङ्कर्य आदि दोष भी मन्त्रराज के कीर्तन से नष्ट हो जाते हैं। ब्रह्मचर्य के अतिक्रमण से उत्पन्न स्त्री-पुरुषों के दोष इस मन्त्र गान से नष्ट हो जाते हैं।

इस संसार में इस मन्त्रराज के समान शान्त, प्रसन्न, वरद, अक्रोधन, भक्तवत्सल दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। सकामियों को भोगप्रद और निष्कामियों को यह मोक्षप्रद है। यह मनुष्यों के भोग-मोक्ष की कामनाओं को पूरा करने वाला है। षडक्षर मन्त्र का कथित यह प्रभाव सभी रामभक्तों का है। आगे राम के एकाक्षर मन्त्र से आरम्भ करके समस्त मन्त्रों को उद्धृत किया जाता है।

तत्र श्रीस्कन्दयामले—

वह्निस्थं शयनं विष्णोरर्धचन्द्रविभूषितम्। एकाक्षरो मनुः प्रोक्तो मन्त्रराजसुरद्रुमः ॥१॥

वह्नी रेफः। विष्णोः शयनमनन्तः आ। अर्धचन्द्रोऽनुस्वारस्तेन रां। अस्यार्थस्तत्रैव—

रेफोऽग्निरहमेवोक्तो विष्णुः सोमा म उच्यते। मध्यगस्त्वावयोर्ब्रह्मा रविराकार उच्यते ॥२॥

ज्योतींषि सकलीकृत्य त्रीण्याकाशो विभुः स्वयम्। नादोऽपि धत्ते सन्मात्रं त्वामेव परमेश्वरीम्॥३॥ इति।

सारसंग्रहे—

मूर्तिपञ्जरनामानं तत्त्वन्यासं च कारयेत्। ब्रह्मा मुनिः स्याद्गायत्रं छन्दो रामोऽस्य देवता ॥१॥

दीर्घार्धेन्दुयुजाङ्गानि कुर्याद् वह्न्यात्मना मनोः।

(वह्न्यात्मना रेफेण।)

सरयूतीरमन्दारवेदिकापङ्कजासने। श्यामं वीरासनासीनं ज्ञानमुद्रोपशोभितम् ॥२॥

वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम्। अवेक्षमाणमात्मानमात्मन्यमिततेजसम् ॥३॥

शुद्धस्फटिकसङ्काशं केवलं मोक्षकाङ्क्षया। चिन्तयेत् परमात्मानं भानुलक्षं जपेन्मनुम् ॥४॥

भानुलक्षं द्वादशलक्षम्।

तथा—

वह्निर्नारायणेनाढ्यो जाठरः केवलोऽपि च। एकाक्षरोक्तमृष्यादि स्यादाद्येन षडङ्गकम् ॥१॥

केवल इत्यनेन दीर्घराहित्यमुक्तं न तु व्यञ्जनमात्रम्। इति।

तथा—

तारमायारमानङ्गवाक्स्वबीजैश्च षड्विधः। अक्षरो मन्त्रराजः स्यात् सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥१॥

तारः प्रणवः। माया भुवनेश्वरीबीजं। रमा श्रीबीजं। अनङ्गः कामबीजं। वाग्वाणीबीजं। स्वमुक्तरामबीजं इति।

तथा—

द्व्यक्षरश्चन्द्रभद्रान्तो द्विविधश्चतुरक्षरः। ऋष्यादि पूर्ववज् ज्ञेयमेतेषां च विचक्षणैः ॥२॥

तथा—'सप्रतिष्ठौ रमौ वायुर्हृत्पञ्चार्णो मनुः स्मृतः'। प्रतिष्ठा आ। रमौ रेफमकारौ। वायुर्यकारः। हृन्नमः।

विश्वामित्रो मुनिः प्रोक्तः पङ्क्तिश्छन्दोऽस्य देवता। रामभद्रो बीजशक्ती प्रथमार्णनती क्रमात्॥३॥
भ्रूमध्ये हृदि नाभ्यन्त्वोः पादयोर्विन्यसेन्मनुम्। षडङ्गं पूर्ववद्यद्वा मन्त्रार्णैर्मनुनास्त्रकम्॥४॥
मध्येवनं कल्पतरोर्मूले पुष्पलतासने। लक्ष्मणेन प्रगुणितसव्यांसतूणसायकम्॥५॥
अवेक्ष्यमाणं जानक्या कृतव्यजनमीश्वरम्। जटाभारलसच्छीर्षं श्यामं मुनिगणावृतम्॥६॥
लक्ष्मणेन धृतच्छत्रमथवा पुष्पकोपरि। दशास्यमथनं शान्तं ससुग्रीवविभीषणम्॥७॥
विजयार्थी विशेषेण वर्णलक्षं जपेन्मनुम्। इति।

तथा—
स्वकामशक्तिवाग्लक्ष्मीताराद्यः पञ्चवर्णकः। षडक्षरः षड्विधः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदः॥८॥
पञ्चाशन्मातृकामन्त्रवर्णप्रत्येकपूर्वकः। लक्ष्मीवाङ्मन्मथादिश्च तारादिः स्यादनेकधा॥९॥
श्रीमायामन्मथैकैकबीजाद्यन्तगतो मनुः। चतुर्वर्णः स एव स्यात् षड्वर्णो वाञ्छितप्रदः॥१०॥
स्वाहान्तो हुंफडन्तो वा नत्यन्तो वा भवेदयम्।

स चतुर्वर्णो यः पूर्वमुक्तो रामभद्ररामचन्द्र इत्येवंरूपो द्विविधः। पञ्चाशद्वर्णपूर्वो बीजपूर्वश्च षडक्षरः। तेन श्रींअंरामचन्द्र श्रींआंरामचन्द्रेत्यादि पञ्चाशत्। एवं वाग्बीजादिः पञ्चाशत्। कामबीजादिः पञ्चाशत्। तारादि पञ्चाशत्। इति शतद्वयम्। एवं श्रींअंरामभद्रेत्यादि, तेन चतुःशतम्। अगस्त्योऽपि (८ अध्या०)—

रामित्येकाक्षरो मन्त्रो राम इत्यपरो मनुः। चन्द्रान्तश्चैव भद्रान्तः पुनर्द्वेधा विभिद्यते॥१॥
पञ्चाशन्मातृकामन्त्रवर्णप्रत्येकपूर्वकम्। लक्ष्मीवाङ्मन्मथादिश्च सर्वत्र प्रणवादिकः॥२॥

श्रीमायेत्यादिः पूर्वोक्तो यो नमोन्तः षड्विधः स स्वाहान्तः षड्विधः, हुंफडन्तः षट्प्रकारः। एवमष्टादश भेदाः। तेनाष्टादशाधिकचतुःशतसंख्यश्चतुरक्षरपञ्चाक्षराभ्यामुत्पन्नाः षडक्षरभेदा इति।

तथा—
ब्रह्मा संमोहनः शक्तिर्दक्षिणामूर्तिरेव च। अगस्त्यः श्रीशिवः प्रोक्ता मनुयोऽनुक्रमादिमे॥३॥
छन्दो गायत्रसंज्ञं च श्रीरामो देवता मता। अथवा कामबीजादेर्विश्वामित्रो मुनिर्मनोः॥४॥
छन्दो देव्यादिगायत्री रामभद्रोऽस्य देवता। बीजशक्ती यथापूर्वं षड्वर्णान् विन्यसेन्मनोः॥५॥

श्रीबीजयुक्तद्व्याधिकशतस्यागस्त्यऋषिर्विश्वामित्रो वा। कामबीजयुक्तद्व्यधिकशतस्य संमोहनो विश्वामित्रो वा। एवं वाग्बीजयुक्तस्य दक्षिणामूर्तिर्विश्वामित्रो वा। (एवं तारादेः शिवो विश्वामित्रो वा।) एतेन स्वबीजयुक्तस्य ब्रह्मैव। मायायुक्तस्य शतद्वयस्य शक्तिरेव। तथा स्वाहान्तानां षण्णां हुंफडन्तानां षण्णां च विश्वामित्र एवेति संभूय द्वादशाधिकशतमन्त्राणां स एवेति।

तथा—
ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये हृन्नाभ्यन्धुषु पादयोः। बीजैः षड्दीर्घयुक्तैर्वा मन्त्रार्णैर्वा षडङ्गकम्॥६॥
ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले सुवर्णमयमण्डपे। पुष्पकाख्यविमानान्तःसिंहासनपरिच्छदे॥७॥
पद्मे वसुदले देवमिन्द्रनीलमणिप्रभम्। वीरासनसमासीनं व्याख्यामुद्रोपशोभितम्॥८॥
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम्। सर्वाभरणसंपन्नं वर्णलक्षं जपेन्मनुम्॥९॥
वर्णलक्षं षड्लक्षम्।

एकाक्षर राम मन्त्र—श्रीस्कन्दयामल के अनुसार राम का एकाक्षर मन्त्र 'रां' बनता है। सारसंग्रह में कहा गया है कि मूर्तिपञ्जर नामों से इसका तत्त्वन्यास करे। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता राम हैं। रां रीं रूं इत्यादि से षडङ्ग

न्यास करे। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

सरयूतीरमन्दारवेदिकापङ्कजासने। श्यामं वीरासनासीनं ज्ञानमुद्रोपशोभितम्।।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम्। अवेक्षमाणमात्मानमात्मन्यमिततेजसम्।।
शुद्धस्फटिकसङ्काशं केवलं मोक्षकाङ्क्षया। चिन्तयेत् परमात्मानं भानुलक्षं जपेन्मनुम्।।

बारह लाख मन्त्र जप से इसका पुरश्चरण होता है।

दूसरा मन्त्र 'राम' है। इसके ऋषि आदि एकाक्षर के समान ही हैं। आद्य से इसका षडङ्ग न्यास होता है।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं रां—राम का यह षडक्षर मन्त्र सभी अभीष्टों को देने वाला है। साथ ही रामचन्द्र एवं रामभद्र—ये दो चतुरक्षर मन्त्र भी हैं। इन सबके ऋष्यादि पूर्ववत् हैं। रामाय नमः—यह राम का पञ्चाक्षर मन्त्र है। इसके ऋषि विश्वामित्र, छन्द पंक्ति, देवता रामभद्र, रां बीज और नमः शक्ति है। मन्त्राक्षरों का न्यास भ्रूमध्य हृदय नाभि पैरों में करे। पूर्ववत् षडङ्ग करे, पूरे मन्त्र से अस्त्र न्यास करे। तब इस प्रकार ध्यान करे—

मध्येवनं कल्पतरोर्मूले पुष्पलतासने। लक्ष्मणेन प्रगुणितसव्यांसतूणसायकम्।।
अवेक्ष्यमाणं जानक्या कृतव्यजनमीश्वरम्। जटाभारलसच्छीर्षं श्यामं मुनिगणावृतम्।।
लक्ष्मणेन धृतच्छत्रमथवा पुष्पकोपरि। दशास्यमथनं शान्तं ससुग्रीवविभीषणम्।।

विजय की कामना के लिये इन सबका वर्णलक्ष मन्त्रजप करे।

१. रां रामाय नमः, २. क्लीं रामाय नमः, ३. ह्रीं रामाय नमः, ४. ऐं रामाय नमः, ५. श्रीं रामाय नमः, ६. ॐ रामाय नमः—ये छः मन्त्र चतुर्वर्ग-फलदायक हैं।

श्रीं अं रामचन्द्र, श्री आं रामचन्द्र इत्यादि पचास; ऐं अं रामचन्द्र, ऐं आं रामचन्द्र इत्यादि पचास; क्लीं अं रामचन्द्र, क्लीं आं रामचन्द्र इत्यादि पचास; ॐ अं रामचन्द्र, ॐ आं रामचन्द्र इत्यादि पचास—ये कुल दो सौ एवं इसी प्रकार श्री अं रामभद्र इत्यादि दो सौ मिलाकर कुल चार सौ मन्त्र होते हैं। अगस्त्य ने भी कहा है कि 'रां' एकाक्षर मन्त्र है। 'राम' द्व्यक्षर है। 'रामचन्द्र' एवं 'रामभद्र' चतुरक्षर मन्त्र हैं। श्रीं-ह्रीं पूर्वक जो मन्त्र हैं, उनके नमोन्त छः, स्वाहान्त छः, हुंफडन्त छः—इस प्रकार कुल १८ भेद हैं। इससे कुल मन्त्र संख्या ४१८ है। श्रीं बीज युक्त दो सौ मन्त्रों के ऋषि अगस्त्य या विश्वामित्र हैं। क्लीं बीज युक्त दो सौ के ऋषि सम्मोहन या विश्वामित्र हैं। ऐं बीज युक्त के ऋषि दक्षिणामूर्ति या विश्वामित्र हैं। ॐ युक्त के ऋषि शिव या विश्वामित्र हैं। ये सभी रां बीज युक्त ब्रह्म हैं। ह्रीं युक्त दो सौ शक्ति हैं। स्वाहान्त छः एवं हुं फड़न्त छः के विश्वामित्र ऋषि हैं इस प्रकार दो सौ बारह मन्त्र हैं।

मन्त्रवर्णों का न्यास ब्रह्मरन्ध्र, भ्रूमध्य, हृदय, नाभि, पैरों में करे। षड्दीर्घ स्वरयुक्त बीज से या मन्त्रवर्णों से षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले सुवर्णमयमण्डपे। पुष्पकाख्यविमानान्तःसिंहासनपरिच्छदे।।
पद्मे वसुदले देवमिन्द्रनीलमणिप्रभम्। वीरासनसमासीनं व्याख्यामुद्रोपशोभितम्।।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं सीतालक्ष्मणसंयुतम्। सर्वाभरणसंपन्नं वर्णलक्षं जपेन्मनुम्।।

वर्णलक्ष मन्त्रजप करे अर्थात् छः लाख मन्त्रजप करे।

मन्त्रान्तरम्—

रामश्च चन्द्रभद्रान्तो ङेन्तो नतियुतो द्विधा। तारादिसहितः सोऽपि मन्त्रस्त्वष्टाक्षरः स्मृतः ।।१०।।

तारादयः षट् प्रागुक्तास्तैः सहितः स द्विविधः सप्ताक्षरस्तेनाष्टाक्षरो द्वादशप्रकारः। 'ताराद्यन्तर्गतः सोऽपि नवार्णः स्यादेनकधा'। स सप्तार्ण एव तारादिषण्मध्यगतैरेकैकेन संपुटितः। तेन नवार्णोऽपि द्वादशविधः।

तारं रामश्चतुर्थ्यन्तः क्रोधास्त्रं वह्निवल्लभा। अष्टार्णोऽयं परो मन्त्र ऋष्यादि स्यात् षडर्णवत् ।।११।।

क्रोधः हुं। अस्त्रं फट्। वह्निवल्लभा स्वाहा। मन्त्रान्तरम्—

गुणबीजं वदेन्मायां हृद्रामाय पुनश्च ताम्। शिवोमाराममन्त्रोऽयं वस्वर्णः स्ववसुप्रदः ॥१२॥

गुणबीजं प्रणवः। माया भुवनेशीबीजं। हृन्नमः। तां मायां। स्ववसुप्रदो भुक्तिमुक्तिप्रदः।

ऋषिः सदाशिवः प्रोक्तो गायत्री छन्द उच्यते। शिवोमारामचन्द्रोऽस्य देवता परिकीर्तिता ॥१३॥
दीर्घया माययाङ्गानि तारपञ्चार्णयुक्तया।

ॐनमोरामाय ह्रां हृदयाय नमः। ॐनमोरामाय ह्रीं शिरसे इत्यादि प्रयोगः। ध्यानम्—

रामं त्रिनेत्रं सोमार्धधारिणं शूलिनं वरम्। भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गं कपर्दिनमुपास्महे ॥१४॥
रामाभिरामां सौन्दर्यसीमां सोमावतंसिनीम्। पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरां ध्यायेत् त्रिलोचनाम् ॥१५॥
ध्यायन्नेवं वर्णलक्षं जपेत् त्रिमधुराप्लुतैः। बिल्वपत्रैः फलैः पुष्पैस्तिलैर्वा पङ्कजैर्हुनेत् ॥१६॥

दशांशमिति शेषः। मन्त्रान्तरम्—

जानकीवल्लभं ङेन्तं स्वाहान्तश्च हुमादिकः। दशाक्षरोऽयं मन्त्रः स्याद्वसिष्ठोऽस्य मुनिः स्वराट् ॥१७॥
छन्दश्च देवता रामः सीतापाणिपरिग्रहः। आद्यं बीजं द्विठः शक्तिः कामेनाङ्गक्रिया मता ॥१८॥

द्विठः स्वाहाकारः। कामेन षड्दीर्घयुक्तेन।

तथा—

शिरोललाटभ्रूमध्यतालुकण्ठेषु हृद्यपि। नाभ्यन्धुजानुपादेषु दशार्णान् विन्यसेन्मनोः ॥१९॥
अयोध्यानगरे रत्नचित्रे सौवर्णमण्डपे। मन्दारपुष्पैराबद्धविताने तोरणाञ्चिते ॥२०॥
सिंहासने समारूढं पुष्पकोपरि राघवम्। रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः ॥२१॥
संस्तूयमानं मुनिभिः प्रह्वैश्च परिसेवितम्। सीतालंकृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपशोभितम् ॥२२॥
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम्। ध्यायन्नेवं जपेन्मन्त्रं वर्णलक्षमनन्यधीः ॥२३॥

वर्णलक्षं दशलक्षम्।

तथा मन्त्रान्तरम्—

रामं ङेन्तं धनुष्पाणयेऽन्ते स्याद्वह्निसुन्दरी। दशाक्षरोऽयं मन्त्रः स्यान्मुनिर्ब्रह्मा विराट् स्मृतम् ॥२४॥
छन्दोऽस्य देवता प्रोक्तो रामो राक्षसमर्दनः। आद्यो बीजं द्विठः शक्तिस्तेनैवाङ्गानि पूर्ववत् ॥२५॥

आद्यः रां इति। तेनैव कामेन।

वर्णन्यासं तथा ध्यानं पौरश्चरणिकं विधिम्। दशाक्षरोक्तवत् कुर्याच्चापबाणधरं स्मरेत् ॥२६॥
ॐहृद्भगवते रामचन्द्रभद्रौ च ङेयुतौ। अर्कार्णो द्विविधो ह्यस्य ऋषिध्यानादि पूर्ववत् ॥२७॥

रामेति स्वरूपम्। पूर्ववत् दशाक्षरवत्।

तथा—

श्रीपूर्वं जयमध्यस्थं तद्द्विधं रामनाम च। त्रयोदशार्ण ऋष्यादि पूर्ववत् सर्वकामदः ॥२८॥

श्रीरामजयरामजयरामजय (१३)।

पदत्रयैर्द्विरावृत्तैरङ्गं ध्यानं दशार्णवत्। सतारं हृद्भगवते रामो ङेन्तं महा ततः ॥२९॥
पुरुषाय-पदं पश्चात् हृदन्तोऽष्टादशाक्षरः। विश्वामित्रो मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता मनोः ॥३०॥
दशास्यदर्पदलनो रामभद्रः प्रकीर्तितः। तारं बीजं नमः शक्तिः षडङ्गं कल्पयेत्ततः ॥३१॥
मूलमन्त्रं कोसलेन्द्रं सत्यसन्धमनन्तरम्। रावणान्तकनामानं सर्वलोकहितं तथा ॥३२॥
स्वादुप्रसन्नवदनं चतुर्थ्या नमसा वदेत्।

मूलमन्त्रेण हृत्। कोशलेन्द्राय नमः शिरः। सत्यसन्धाय नमः शिखा। रावणान्तकाय नमः कवचं। सर्वलोकहिताय नमः नेत्रं। स्वादुप्रसन्नवदनाय नमः अस्त्रं। ध्यानम्—

नन्दिग्रामस्योपवने भरतायतनाञ्चिते। रम्ये सुगन्धिपुष्पाढ्यैर्वृक्षवृन्दैश्च शोभिते॥३३॥
निशानभेरीपटहशङ्खतूर्यादिनिःस्वने। प्रवृत्तनृत्ये परितो जयमङ्गलभाषिते॥३५॥
पाटीरघुसृणोशीरकर्पूरागरुगन्धिते। नानाकुसुमसौरभ्यवाहिगन्धवहाञ्चिते॥३५॥
देवगन्धर्वनारीभिर्गायन्तीभिरलंकृते। सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरि राघवम्॥३६॥
सौमित्रिसीतासहितं जटामुकुटशोभितम्। चापबाणधरं श्यामं ससुग्रीवविभीषणम्॥३७॥
हत्वा रावणमायान्तं कृतत्रैलोक्यरक्षणम्। रामचन्द्रं हृदि ध्यायन् दशलक्षं जपेन्मनुम्॥३८॥
(होमपूजाप्रयोगादि सर्वं ज्ञेयं षडर्णवत्।)

मन्त्रान्तर—रामचन्द्राय नमः, रामभद्राय नमः—ये सप्ताक्षर मन्त्र हैं। ॐ रामचन्द्राय नमः, ॐ रामभद्राय नमः—ये दो अष्टाक्षर हैं। ॐ रामाय हुं फट् स्वाहा—यह अष्टाक्षर मन्त्र है। इन सबों के ऋषि षडक्षर मन्त्र के समान ही हैं। ॐ ह्रीं नमः रामाय—यह अष्टाक्षर मन्त्र धनप्रद है। इसके ऋषि सदाशिव, छन्द गायत्री एवं देवता शिव उमा रामचन्द्र हैं। षडङ्ग न्यास ॐ नमो रामाय ह्रां हृदयाय नमः, ॐ नमो रामाय ह्रीं शिरसे स्वाहा इत्यादि से किया जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

रामं त्रिनेत्रं सोमार्धधारिणं शूलिनं वरम्। भस्मोद्धूलितसर्वाङ्गं कपर्दिनमुपास्महे॥
रामाभिरामां सौन्दर्यसीमां सोमावतंसिनीम्। पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरां ध्यायेत् त्रिलोचनाम्॥

वर्णलक्ष जप करे। त्रिमधुराक्त बेल पत्र-फल, पुष्प, तिल या कमल से हवन दशांश करे।

मन्त्रान्तर—हूं जानकीवल्लभाय स्वाहा। इस दशाक्षर मन्त्र के ऋषि वसिष्ठ, छन्द स्वराट् एवं देवता सीतापति राम हैं। हुं बीज एवं स्वाहा शक्ति है। क्लां क्लीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास किया जाता है। मन्त्र के दश वर्णों को शिर ललाट भ्रूमध्य तालु कण्ठ हृदय नाभि ऊरु जानु पैरों में न्यस्त किया जाता है। तब इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

अयोध्यानगरे रत्नचित्रे सौवर्णमण्डपे। मन्दारपुष्पैराबद्धविताने तोरणाञ्चिते॥
सिंहासने समारूढं पुष्पकोपरि राघवम्। रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः॥
संस्तूयमानं मुनिभिः प्रह्वैश्च परिसेवितम्। सीतालंकृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपशोभितम्॥
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम्।

ध्यान के बाद एकाग्र मन से वर्णलक्ष मन्त्रजप करे।

मन्त्रान्तर—रामाय धनुष्पाणये स्वाहा। इस दशाक्षर मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द विराट्, देवता राक्षसमर्दन राम हैं। रां बीज एवं स्वाहा शक्ति है। क्लां क्लीं इत्यादि से पूर्ववत् अंगन्यास करे। वर्ण न्यास ध्यान पुरश्चरण विधि दशाक्षर मन्त्र के समान किया जाता है। धनुष-बाणधारी का स्मरण किया जाता है।

मन्त्रान्तर—ॐ नमो भगवते रामचन्द्राय एवं ॐ नमो भगवते रामभद्राय। द्वादशाक्षर इन दो मन्त्रों के ऋषि ध्यानादि दशाक्षर मन्त्र के समान होते हैं।

मन्त्रान्तर—श्री राम जय राम जय राम जय। इस त्रयोदशाक्षर मन्त्र के ऋष्यादि दशाक्षर मन्त्र के समान हैं। यह सर्व कामप्रद मन्त्र है। श्री, राम, जय इन तीन पदों की दो आवृति से अंग न्यास किया जाता है। इसका ध्यान दशाक्षर मन्त्र के समान है।

मन्त्रान्तर—ॐ नमो भगवते रामाय महापुरुषाय नमः। यह अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र है। इसके ऋषि विश्वामित्र, छन्द गायत्री, देवता रावण के गर्व का नाश करने वाले रामभद्र हैं। ॐ बीज एवं नमः शक्ति है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया

जाता है—मूल मन्त्र से हृदयाय नमः, कोशलेन्द्राय नमः शिरसे स्वाहा, सत्यसन्धाय नमः शिखायै वषट्, रावणान्तकाय नमः कवचाय हुं, सर्वलोकहिताय नमः नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वादु प्रसन्नवदनाय नमः अस्त्राय फट्। इनका ध्यान इस प्रकार है—

नन्दिग्रामस्योपवने भरतायतनाञ्चिते। रम्ये सुगन्धिपुष्पाढ्यैर्वृक्षवृन्दैश्च शोभिते।।
निशानभेरीपटहशङ्खतूर्यादिनिःस्वने। प्रवृत्तनृत्ये परितो जयमङ्गलभाषिते।।
पाटीरघुसृणोशीरकर्पूरागरुगन्धिते। नानाकुसुमसौरभ्यवाहिगन्धवहाञ्चिते।।
देवगन्धर्वनारीभिर्गायन्तीभिरलंकृते। सिंहासनसमारूढं पुष्पकोपरि राघवम्।।
सौमित्रिसीतासहितं जटामुकुटशोभितम्। चापबाणधरं श्यामं ससुग्रीवविभीषणम्।।
हत्वा रावणमायान्तं कृतत्रैलोक्यरक्षणम्।

दश लाख मन्त्रजप से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता है। होम-पूजा-प्रयोगादि षडक्षर मन्त्र के समान हैं।

तथा—

रामभद्रं महेपूर्वं ष्वासाग्निश्च घुतः परम्। वीरं नृपोत्तमपदं दशास्यन्तक मां ततः ।।३९।।
ततो रक्ष ततो देहि पश्चाद् दापय मे श्रियम्।

अग्नी रेफः। श्लोकरूपो मन्त्रः।

द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो विश्वामित्रो मुनिर्मनोः। छन्दोऽनुष्टुब् देवता च रामभद्रः प्रकीर्तितः ।।४०।।
चतुष्करणवेदाब्धिवस्वर्णैरङ्गकल्पना।

करणानि चत्वारि। वेदाश्चत्वारः। अब्धयश्चत्वारः। वसवोऽष्टौ। रामभद्र हृत्। महेष्वासो शिरः। रघुवीर शिखा। नृपोत्तम कवचं। दशास्यान्तक मां रक्ष नेत्रं। देहि दापय मे श्रियं अस्त्रम्।

मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रोत्रगण्डयुग्मे सनासिके। आस्यदोःसन्धियुगले स्तनहृन्नाभिमण्डले ।।४१।।
कट्यां मेढ्रे पार्श्वपादसन्धिष्वर्णान् न्यसेन्मनोः। पूर्वोक्तं ध्यानमत्रापि त्रिलक्षं नियतो जपेत् ।।४२।।

दृशोर्वर्णद्वयं, गण्डयोश्च, द्विवचनयुग्मपदाभ्याम्। दोष्यत्सन्धयः षोडशः।

पीतं वा चिन्तयेद्रामं धनार्थं यो मनुं जपेत्। सतारं हृद्भगवते चतुर्थ्या रघुनन्दनम् ।।४३।।
रक्षोघ्नविशदं तद्वन्मधुरेति वदेत्ततः। प्रसन्नवदनं ङेन्तं वदेदमिततेजसे ।।४४।।
बलरामौ चतुर्थ्यन्तौ विष्णुं ङेन्तं नतिं ततः। प्रोक्तो मालामनुः सप्तचत्वारिंशद्भिरक्षरैः ।।४५।।
अमिततेजसे. इत्यत्र पूर्वपदेन च सन्धिरक्षरसंख्यानुपपत्तेः।

तथा—

मुनिः पितामहश्छन्दः स्यादनुष्टुप् च देवता। राज्याभिषिक्तो रामश्च बीजशक्ती यथा पुरा ।।४६।।

यथा पुरा तारनती। 'सप्तर्तुसप्तदशषड्रुद्रसंख्यैः षडङ्गकम्'। ॐनमो भगवते हृत्। रघुनन्दनाय शिरः। रक्षोघ्नविशदाय शिखा। मधुरप्रसन्नवदनाय कवचं। अमिततेजसे नेत्रं। बलाय रामाय विष्णवे नमोऽस्त्रम्।

शिरस्याननवृत्ते च भ्रूमध्येऽक्षिद्वयोरपि। श्रोत्रयोर्घ्राणयोश्चैव गण्डयोरोष्ठयोरपि ।।४७।।
दन्तयोरास्यदेशे च दोष्यत्संध्यग्रकेषु च। कण्ठे हृदि स्तनद्वन्द्वे पार्श्वयोः पृष्ठयोस्ततः ।।४८।।
जठरे नाभ्यधिष्ठाने गुह्ये वर्णान् प्रविन्यसेत्। ध्यानं दशाक्षरप्रोक्तं लक्षमेकं जपेन्मनुम् ।।४९।।
बिल्वैः प्रसूनैः पत्रैर्वा फलैस्त्रिमधुराप्लुतैः। मधुरत्रययुक्तेन पायसेनाथवाम्बुजैः ।।५०।।
होमं दशांशतः कुर्यात्तथा सर्वत्र तर्पणम्।

बत्तीस अक्षरों का मन्त्र है—रामभद्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम दशास्यान्तक मां रक्ष देहि दापय मे श्रियम्। इसके ऋषि विश्वामित्र, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता रामभद्र हैं। मन्त्र के चार चार चार चार आठ आठ वर्णो से अंग न्यास किया जाता है;

जैसे—रामभद्र हृदयाय नमः, महेश्वासः शिरसे स्वाहा, रघुवीर शिखायै वषट्, नृपोत्तम कवचाय हुम्, दशास्यान्तक मां रक्ष नेत्रत्रयाय वौषट्, देहि दापय मे श्रियम् अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्ण न्यास—मूर्धा, भाल, आँखों, कानों, कपोलों, नासाछिद्रों, मुख, दो सन्धि, गला, स्तनों, हृदय, नाभि, कटि, लिङ्ग, पार्श्वों एवं पैरों में करे। पूर्वोक्त रूप में ध्यान करे। तीन लाख मन्त्र जप करे। धनार्थी पीत वर्ण के राम का ध्यान करे।

मन्त्रान्तर—सैंतालीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते रघुनन्दनाय रक्षोघ्नविशदाय मधुरप्रसन्नवदनाय अमिततेजसे बलाय रामाय विष्णवे नमः। इसके ऋषि पितामह ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता राज्याभिषिक्त राम हैं। बीज ॐ एवं शक्ति नमः है। षडङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—ॐ नमो भगवते हृदयाय नमः, रघुनन्दनाय शिरसे स्वाहा, रक्षोघ्नविशदाय शिखायै वषट्। मधुरप्रसन्नवदनाय कवचाय हुम्, अमिततेजसे नेत्रत्रयाय वौषट्, बलाय रामाय विष्णवे नमः अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्ण न्यास शिर, मुखमण्डल, भ्रूमध्य, नेत्रद्वय, श्रोत्रद्वय, घ्राणद्वय, गण्डद्वय, ओष्ठद्वय, दन्त, मुख, बाहु एवं पैर की सन्धियों, कण्ठ-हृदय, स्तनद्वय, पार्श्वद्वय, पृष्ठ, जठर, नाभि-अधिष्ठान, गुह्य में किया जाता है। दशाक्षर मन्त्र के ध्यान के समान ध्यान करके एक लाख मन्त्रजप करना चाहिये। दशांश हवन बेलफूलों, बेलपत्रों या फलों को त्रिमधुराक्त करके करे अथवा मधुरत्रययुक्त पायस या कमल से करके अन्त में तर्पण किया जाता है।

सीतालक्ष्मणमन्त्रः

रमा सीता चतुर्थ्यन्ता स्वाहान्तोऽयं षडक्षरः ॥५१॥
सीतामन्त्रश्च कथितः स्वतन्त्रोऽङ्गपरोऽपि च। जनकोऽस्य ऋषिश्छन्दो गायत्रं देवता मनोः ॥५२॥
सीताभगवती प्रोक्ता श्रीबीजं शक्तिरन्त्यकौ। दीर्घस्वरयुजा स्वेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥५३॥
पूजयेद्वैष्णवे पीठे ध्यायेद्राघवसंयुताम्। स्वर्णाभामम्बुजकरां रामालोकनतत्पराम् ॥५४॥
वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रमिष्टार्थं साधयेत् ततः। रेफपूर्वं समुद्धृत्य सेन्दु लक्ष्मणसंयुतम् ॥५५॥
ङेन्तोऽयं लक्ष्मणमनुर्नमसा च समन्वितः। अगस्त्य ऋषिरस्याथ गायत्रं छन्द उच्यते ॥५६॥
लक्ष्मणो देवता प्रोक्तो लंबीजं शक्तिरस्य हि। नमः स्याद्विनियोगो हि पुरुषार्थचतुष्टये ॥५७॥
रेफपूर्वं लकारम्।

तथा—

द्विभुजं स्वर्णरुचिरतनुं पद्मनिभेक्षणम्। धनुर्बाणकरं रामसेवासंसक्तमानसम् ॥५८॥
पूजा तु वैष्णवे पीठे साङ्गावरणवर्जिता। सप्तलक्षं पुरश्चर्या ततः सिद्धीस्तु साधयेत् ॥५९॥
भरतस्यैवमेव स्याच्छत्रुघ्नस्याप्ययं विधिः। आदौ वाप्यन्ततो वापि पूजायां राघवस्य तु ॥६०॥
एतेषामपि कर्तव्या भुक्तिं मुक्तिमभीप्सुभिः। अङ्गत्वेनोदिता ह्येते प्राधान्येनापि सुन्दरि ॥६१॥
वदेद् दाशरथायेति विद्महे च पदं ततः। सीतापदं समुद्धृत्य वल्लभाय ततो वदेत् ॥६२॥
धीमहीत्यपि तन्नोऽथ ततो रामः प्रचोदयात्। एषा स्याद्रामगायत्री भक्तानां भुक्तिमुक्तिदा ॥६३॥
जन्मप्रभृति यत् पापं दशभिर्याति संक्षयम्। पुराकृतं शतेनैव सहस्रेण जपेन वा ॥६४॥
पुरश्चरणमस्याश्च चतुर्लक्षजपावधि। यच्च यावच्च पूजादि सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥६५॥
तारादिरेषा गायत्री मुक्तिमेव प्रयच्छति। (मायादिरपि वैदुष्यं रमादिश्च श्रियं पराम् ॥६६॥
मदनेनापि संयुक्ता संमोहयति मेदिनीम्। अनयाराधितो रामः सर्वाभीष्टं प्रयच्छति ॥६७॥)

सीतामन्त्र—श्रीसीतायै स्वाहा—यह सीता का षडक्षर मन्त्र है। यह सीतामन्त्र स्वतन्त्र और अंगपरक दोनों है। इसके ऋषि जनक, छन्द गायत्री एवं देवता भगवती सीता हैं। श्री बीज एवं स्वाहा शक्ति है। श्रां श्रीं श्रूं इत्यादि से षडङ्ग न्यास किया जाता है। स्वर्णवर्ण की, हाथों में कमल धारण किये, राम को देखने में तत्पर सीता का राघवेन्द्र के साथ इनका ध्यान करके

वैष्णव पीठ पर पूजा करे। वर्ण लक्ष के अनुसार छ: लाख जप करे। तब इष्ट-साधन करे।

लक्ष्मणमन्त्र—लं लक्ष्मणाय नम:—यह लक्ष्मण का मन्त्र है। इसके ऋषि अगस्त्य, छन्द गायत्री, देवता लक्ष्मण, बीज लं एवं शक्ति नम: है। पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि के लिये इसका विनियोग होता है। ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

द्विभुजं स्वर्णरुचिरतनुं पद्मनिभेक्षणम्। धनुर्बाणकरं रामसेवासंसक्तमानसम्।।

वैष्णव पीठ पर अंग सहित पूजा करे। इसमें आवरण पूजा वर्जित है। सात लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। तब सिद्ध मन्त्र से इष्टसाधन करे। भरत और शत्रुघ्न की पूजा भी इसी प्रकार करे। इनकी पूजा राघव के पहले या बाद में करे। भोग-मोक्ष के इच्छुकों को इनकी पूजा अवश्य करनी चाहिये। क्योंकि ये प्रधान देवता के अंग कहे गये हैं।

रामगायत्री—दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो राम: प्रचोदयात्। यह रामगायत्री भक्तों को भोग-मोक्ष-दायक है। प्रतिदिन इस गायत्री के १० जप से जन्म से लेकर अब तक किए गये पापों का नाश होता है। १०० या १००० जप से पूर्व जन्म के पाप नष्ट होते हैं। चार लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। पूजादि सभी पूर्ववत् होते हैं। इस गायत्री के पहले ॐ लगाकर जप करने से मुक्ति, ह्रीं सहित जप से धन-प्राप्ति, श्रीं सहित जप से श्रीलाभ और क्लीं सहित जप से सारे संसार का मोहन होता है। इस मन्त्र की आराधना करने से राम सभी अभीष्ट प्रदान करते हैं।

पूजाविधिस्तत्प्रयोगश्च

पूजयेद्वैष्णवे पीठे मूर्तिं मूलेन कल्पयेत्। श्रीसीतायै द्विठान्तेन सीतां पार्श्वगतां यजेत्।।६८।।

पार्श्वं वामं। 'वामभागे' समासीनामिति वचनात्।

ततो दक्षिणकोणाग्रे सखायं लक्ष्मणं यजेत्। वामपार्श्वे त्रिकोणस्य शार्ङ्गं दक्षिणत: शरान्।।६९।।

वामादि किञ्चिदग्रे। 'अग्रपार्श्वद्वये शार्ङ्गशरानङ्गानि तद्बहि'रिति सारसंग्रहात्।

तथा—

अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च पूजयेत्। केसरेषु षडङ्गानि प्रथमावृतिरीरिता।।७०।।
द्वितीयात्मादिभि: प्रोक्ता चतुर्भिश्च सशक्तिकै:। आत्मा चैवान्तरात्मा च परमात्मा तृतीयक:।।७१।।
ज्ञानात्मा चेति दिक्पत्रेष्वाग्नेयादिदलेष्वथ। निवृत्तिं च प्रतिष्ठां च विद्यां शान्तिं यजेत् क्रमात्।।७२।।
तृतीया वासुदेवाद्यैर्दलमध्येषु चेरिता। वासुदेव: संकर्षण: प्रद्युम्नश्चानिरुद्धक:।।७३।।
श्रीश्च शान्तिस्तथा प्रीतिश्चतुर्थी च रति: स्मृता। दिग्विदिक्क्रमत: पूज्या गन्धपुष्पादिभि: प्रिये।।७४।।
चतुर्थी वायुपुत्राद्यै: पत्राग्रे पूर्वत: क्रमात्। हनुमन्तं ससुग्रीवं भरतं सविभीषणम्।।७५।।
लक्ष्मणाङ्गदशत्रुघ्नान् जाम्बवन्तं तदग्रत:। आञ्जनेयं च देवाग्रे वाचयन्तं च पुस्तकम्।।७६।।
दक्षान्ययोश्च भरतशत्रुघ्नावात्तचामरौ। धारयन्तं च पाणिभ्यां छत्रं पृष्ठे च लक्ष्मणम्।।७७।।
सृष्ट्यादिमन्त्रिण: पूर्वदिक्क्रमेण कृताञ्जलीन्। सृष्टिं जयन्तं विजयं सुराष्ट्रं राष्ट्रवर्धनम्।।७८।।
अकोपं धर्मपालाख्यं सुमन्तं च क्रमाद्यजेत्। वसिष्ठं वामदेवं च जाबालिं गौतमं तथा।।७९।।
भरद्वाजं कश्यपं च कौशिकं वाल्मिकं तथा। नारदं सनकं चैव सनातनमत: परम्।।८०।।
सनत्कुमारं च यजेद् द्वादशारे विचक्षण:। नीलं नलं सुषेणं च मैन्दं च शरभं तत:।।८१।।
द्विविधं चन्दनगवाक्षौ किरीटं च कुण्डलम्। श्रीवत्सं कौस्तुभं शङ्खं चक्रं गदां च पद्मकम्।।८२।।
षोडशाब्जेऽर्चयेत् पूर्वदिक्क्रमेण कृताञ्जलीन्। ध्रुवो ध्वरश्च सोमश्च आपश्चैवानिलोऽनल:।।८३।।
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोऽष्टौ प्रकीर्तिता:। वीरभद्रश्च शंभुश्च गिरीशश्च महायशा:।।८४।।
अजैकपादहिर्बुध्न्य: पिनाकी चापराजित:। भुवनाधीश्वरश्चैव कपाली च दिशांपति:।।८५।।
स्थाणुर्भगश्च भगवान् रुद्राश्चैकादश स्मृता:। वरुण: सूर्यवेदाङ्गौ भानुरिन्द्रो रविस्तथा।।८६।।

गभस्तिश्च यमः स्वर्णरिताश्चाथ दिवाकरः। मित्रो विष्णुरिति प्रोक्ता आदित्या द्वादश क्रमात् ॥८७॥
धातारमन्ते प्रयजेद् द्वात्रिंशदुदिता इमे। ध्रुवाद्यैरष्टमी ज्ञेया द्वात्रिंशद् दलपद्मके ॥८८॥
इन्द्राद्यैर्भूगृहे बाह्ये नवमावरणं यजेत्। तदस्त्रैर्वज्रशक्त्याद्यैर्दशमावरणं स्मृतम् ॥८९॥
अङ्गैरात्मादिभिर्वासुदेवाद्यैर्वायुजादिभिः। सृष्ट्यादिभिर्लोकपालैस्तदस्त्रैर्वा यजेत् प्रभुम् ॥९०॥
यद्वाङ्गैर्वायुपुत्राद्यैः सृष्ट्याद्यैश्च दिशाधिपैः। तदस्त्रैश्च यजेद् देवं संक्षेपार्चा समीरिता ॥९१॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, इत्यादि गङ्गामन्त्रजपान्ते ॐनमो भगवते रघुनन्दनाय रक्षोघ्नविशदाय मधुरप्रसन्नवदनाय अमिततेजसे बलाय रामाय विष्णवे नमः। इति मन्त्रेणाष्टवारमभिमन्त्र्योक्तविधिना स्नानादिकं कृत्वा, सन्ध्यावन्दनेऽप्यघमर्षणानन्तरं पुनर्जलमादाय 'हुंजानकीवल्लभाय स्वाहा' इति मन्त्रेण जलमभिमन्त्र्य, तज्जलं पीत्वाचमनादितर्पणान्तं कृत्वा, प्राणायामादिपूर्वकं 'दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्' इति रामगायत्रीं यथाशक्ति जपित्वा, मूलमन्त्रजपादि परतत्त्वान्तं योगपीठन्यासं कृत्वा, मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीरामदेवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, रां हृदयाय नमः। रीं शिरसे स्वाहा। रूं शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुं। रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। रः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, शिरसि रांनमः। भ्रूमध्ये रांनमः। हृदि मांनमः। नाभौ यंनमः। गुह्ये नंनमः। पादयोः मंनमः। इति विन्यस्य, प्रागुक्तमूर्तिपञ्जरन्यासं तत्त्वन्यासं च विधाय, ध्यानादिमानसपूजान्ते सुवर्णादिपट्टे कुङ्कुमादिना त्रिकोणगर्भमष्टदलपद्मं कृत्वा, तद्बहिः पुनरष्टदलं तद्बहिर्द्वादशदलं तद्बहिः षोडशदलं तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलं तद्बहिश्चतुर्द्वारयुतं चतुरस्त्रत्रयमिति पूजाचक्रं कृत्वा, पुरतः संस्थाप्याभ्यर्च्यार्घ्यादिपूजना-दिपुष्पोपचारान्ते, देवस्य वामभागे—श्रींसीतायै स्वाहा सीतायै नमः इति सीतां संपूज्य, दक्षिणभागे—लं लक्ष्मणाय नमः। इति संपूज्य, किंचिद् देवस्य वामाग्रे—शार्ङ्गाय नमः। दक्षिणाग्रे—ॐशरेभ्यो नमः। इति प्रधानार्चां कृत्वा प्राग्वदङ्गानि संपूज्य, अष्टदलमूलेषु दिक्षु—ॐआं आत्मने नमः। ॐअं अन्तरात्मने नमः। ॐपं परमात्मने नमः। ॐह्रीं ज्ञानात्मने नमः। कोणेषु—ॐनिवृत्त्यै नमः। प्रतिष्ठायै०। विद्यायै०। शान्त्यै०। ततो दलमध्येषु दिक्षु—ॐवासुदेवाय नमः। सङ्कर्षणाय०। प्रद्युम्नाय०। अनिरुद्धाय०। विदिक्षु—श्रियै नमः। शान्त्यै०। प्रीत्यै०। रत्यै०। द्वितीयाष्टदलाग्रेषु—हनुमते नमः। सुग्रीवाय०। भरताय०। विभीषणाय०। लक्ष्मणाय०। अङ्गदाय०। शत्रुघ्नाय०। जाम्बवते०। अग्रेष्वेव—सृष्टये नमः। जयन्ताय०। विजयाय०। सुराष्ट्राय०। राष्ट्रवर्धनाय०। अकोपाय०। धर्मपालाय०। सुमन्त्राय०। द्वादशदलेषु—वसिष्ठाय नमः। वामदेवाय०। जाबालये०। गौतमाय०। भरद्वाजाय। कश्यपाय०। कौशिकाय०। वाल्मीकये०। नारदाय०। सनकाय०। सनातनाय०। सनत्कुमाराय०। षोडशदलेषु—नीलाय नमः। नलाय०। सुषेणाय०। मैन्दाय०। शरभाय०। द्विविधाय०। चन्दनाय०। गवाक्षाय०। किरीटाय०। कुण्डलाय०। श्रीवत्साय०। कौस्तुभाय०। शंखाय०। चक्राय०। गदायै०। पद्माय०। ततो द्वात्रिंशद् दलेषु—ध्रुवाय नमः। ध्वराय०। सोमाय०। आपाय०। अनिलाय०। अनलाय०। प्रत्यूषाय०। प्रभासाय०। वीरभद्राय०। शम्भवे०। गिरीशाय०। अजैकपदे०। अहिर्बुध्न्याय०। पिनाकिने०। भुवनाधीश्वराय०। कपालिने०। दिक्पतये०। स्थाणवे०। भगाय०। वरुणाय०। सूर्याय०। वेदाङ्गाय०। भानवे०। इन्द्राय०। रवये०। गभस्तये०। यमाय०। स्वर्णरितसे०। दिवाकराय०। मित्राय०। विष्णवे०। धात्रे नमः। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यात्। मन्त्रान्तराणां न्यासध्यानादिविशेषः। अर्चनं तु समानमेव। सारसंग्रहे तु द्वात्रिंशद् देवतानां पूजानन्तरम्—

वषट्कारं च पुरतः प्रयजेत् सगुणत्रयम्। ततो मेषादिराशींश्च यजेन्नागाष्टकं ततः ॥१॥
अनन्तो वासुकिः स्थाणुः कार्कोटः पद्म एव च। महापद्मस्तथा शङ्खः कुलिकश्चाष्टमः स्मृतः ॥२॥

इत्यावरणान्तरमुक्तम्। एते चतुर्विंशतिसंख्यकाः द्वात्रिंशद्दलपद्माद्बहिश्चतुर्विंशतिदलपङ्कजेषु पूज्याः। अधिकस्याधिकं फलमिति।

तथा—

षट्सहस्त्रं सहस्त्रं च त्रिशतं शतमेव वा। प्रत्यहं प्रजपेन्मन्त्री नोचेत् प्राप्नोत्यधोगतिम्॥१॥ इति।

तथा सारसंग्रहे—

षड्लक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद् दशांशतः। कमलैर्मधुराभ्यक्तैरेधितेऽग्नौ सुपूजिते॥१॥
तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैः शीतलैश्चन्द्रवासितैः। अभिषिक्तः समभ्यर्च्य ब्राह्मणान् भोजनादिभिः॥२॥

चन्द्रः कर्पूरः।

गुरुमभ्यर्च्य विभवैस्तोषयेद् भक्तिसंयुतः। तदाज्ञयाथ कुर्वीत प्रयोगान् निजवाञ्छितान्॥३॥

पूजन—प्रातःकृत्य से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। गंगामन्त्र जप के बाद ॐ 'नमो भगवते रघुनन्दनाय रक्षोघ्नविशदाय मधुरप्रसन्नवदनाय अमिततेजसे बलाय रामाय विष्णवे नमः' मन्त्र के आठ जप से मन्त्रित जल से स्नान करके सन्ध्या-वन्दनादि करे। अघमर्षण करे। फिर जल लेकर 'हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा' से जल को मन्त्रित करे। उस जल में से थोड़ा पीकर आचमन-तर्पण करे। प्राणायाम के बाद 'दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्'—इस रामगायत्री का जप यथाशक्ति करे। मूल मन्त्र का जप करे। परतत्त्व तक योगपीठ न्यास करे। मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीरामदेवतायै नमः। समस्त अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करे।

षडङ्ग न्यास—रां हृदयाय नमः, रीं शिरसे स्वाहा, रूं शिखायै वषट्, रैं कवचाय हुं, रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, रः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास करे। तदनन्तर मन्त्रन्यास करे—शिर पर रां नमः, भ्रूमध्य में रां नमः, हृदय में मां नमः, नाभि में यं नमः, गुह्य में नं नमः, पैरों में मं नमः, पूर्वोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास एवं तत्त्वन्यास करके ध्यान-मानस पूजा करे।

सुवर्णादि पट्ट पर कुङ्कुमादि से त्रिकोण के अन्दर अष्टदल पद्म बनावे। उसके बाहर फिर अष्टदल बनावे। उसके बाहर द्वादश दल कमल बनावे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनावे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनाकर पूजायन्त्र बनावे। यन्त्र को अपने आगे स्थापित करके अर्चन करे। अर्घ्यादि से पुष्पोपचार तक देव की पूजा करे। देव के वाम भाग में 'श्रीसीतायै स्वाहा सीतायै नमः' मन्त्र से सीता की पूजा करे। देव के दक्षिण भाग में लं लक्ष्मणाय नमः से लक्ष्मण की पूजा करे। देव के कुछ वामाग्र में शार्ङ्गाय नमः, दक्षिणाग्र में ॐ शरेभ्यो नमः, इस प्रकार प्रधान अर्चन के बाद पूर्ववत् अंगपूजन करे।

अष्टदल मूल में पूर्वादि दिशाओं में ॐ आं आत्मने नमः, ॐ अं अन्तरात्मने नमः, ॐ पं परमात्मने नमः, ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः; कोणों में ॐ निवृत्त्यै नमः, प्रतिष्ठायै नमः, विद्यायै नमः, शान्त्यै नमः से पूजन करे। अष्टदल के मध्य में दिशाओं में ॐ वासुदेवाय नमः, संकर्षणाय नमः, प्रद्युम्नाय नमः, अनिरुद्धाय नमः एवं कोणों में श्रियै नमः, शान्त्यै नमः, प्रीत्यै नमः तथा रत्यै नमः से पूजन करे।

द्वितीय अष्टदलाग्रों में हनुमते नमः, सुग्रीवाय नमः, भरताय नमः, विभीषणाय नमः, लक्ष्मणाय नमः, अंगदाय नमः, शत्रुघ्नाय नमः, जाम्बवते नमः से पूजन करे। दलों के आगे सृष्टये नमः, जयन्ताय नमः, विजयाय नमः, सुराष्ट्राय नमः, राष्ट्रवर्धनाय अकोपाय नमः, धर्मपालाय नमः, सुमन्त्राय नमः से पूजन करे।

द्वादश दलों में वसिष्ठाय नमः, वामदेवाय नमः, जाबालये नमः, गौतमाय नमः, भरद्वाजाय नमः, कश्यपाय नमः, कौशिकाय नमः, वाल्मीकये नमः, नारदाय नमः, सनकाय नमः, सनातनाय नमः एवं सनत्कुमाराय नमः से पूजन करे।

षोडश दलों में नीलाय नमः, नलाय नमः, सुषेणाय नमः, मैन्दाय नमः, शरभाय नमः, द्विविधाय नमः, चन्दनाय नमः, गवाक्षाय नमः, किरीटाय नमः, कुण्डलाय नमः, श्रीवत्साय नमः, कौस्तुभाय नमः, शङ्खाय नमः, चक्राय नमः, गदायै नमः, पद्मायै नमः से पूजन करे।

बत्तीस दल कमल में ध्रुवाय नमः, ध्वराय नमः, सोमाय नमः, आपाय नमः, अनिलाय नमः, अनलाय नमः, प्रत्यूषाय नमः, प्रभासाय नमः, वीरभद्राय नमः, शम्भवे नमः, गिरीशाय नमः, अजैकपदे नमः, अहिर्बुध्न्याय नमः, पिनाकिने नमः, भुवनाधीश्वराय नमः, कपालिने नमः, दिक्पतये नमः, स्थाणवे नमः, भगाय नमः, वरुणाय नमः, सूर्याय नमः, वेदांगाय नमः, भानवे नमः, इन्द्राय नमः, रवये नमः, गभस्तये नमः, यमाय नमः, स्वर्णरितसे नमः, दिवाकराय नमः, मित्राय नमः, विष्णवे नमः, धात्रे नमः से पूजा करे। पूर्ववत् इन्द्रादि लोकपालों और आयुधों की पूजा चतुरस्र में करे। मन्त्रान्तरों के अनुष्ठान की भी यही विधि है, केवल ध्यान एवं न्यास आदि अलग-अलग हैं। अर्चन सबका एक समान है। सारसंग्रह में कहा गया है कि उपर्युक्त बत्तीस देवताओं की पूजा के बाद वषट्कार एवं गुणत्रय की पूजा करे। मेषादि १२ राशियों तथा अनन्त, वासुकि, स्थाणु, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शङ्ख एवं कुलिक—इन आठ बागों की पूजा बत्तीसदल के बाहर चौबीस दल पद्म बनाकर उसके दलों में करे। प्रतिदिन छः हजार, एक हजार, तीन सौ या एक सौ जप करे। इससे कम जप करने पर अधोगति प्राप्त होती है।

सारसंग्रह में ही कहा गया है कि छः लाख मन्त्रजप करे। दशांश हवन मधुराक्त कमलों से प्रज्वलित अग्नि में करे। शुद्ध शीतल कपूर चन्दन से गन्धित जल से तर्पण-मार्जन करे। ब्राह्मणों को भोजन करावे। गुरु की पूजा करके भक्तिपूर्वक धन आदि देकर उन्हें सन्तुष्ट करे एवं उसकी आज्ञा से निज वांछित प्रयोगो को साधित करे।

काम्यप्रयोगविधिः

धनाय कमलैर्जातीपुष्पैश्चन्द्रनलोलितैः। जुहुयाद् धनाधिपवननीलोत्पलहुतेन च ॥४॥
वशयेद्विश्वमखिलं बिल्वपुष्पैर्धनाप्तये। (हुतं दीर्घायुषे दूर्वारक्ताब्जैर्धनप्राप्तये) ॥५॥
आधाय कुण्डे विधिवदग्निं पूर्वोक्तवर्त्मना। तत्र देवं समावाह्य पूजयेदुपचारकैः ॥६॥
पञ्चभिर्वा षोडशभिः पूजोपकरणैः पृथक्। पलाशाश्वत्थखदिरोदुम्बराम्रद्रुमेन्धनैः ॥७॥
(अग्निं प्रज्वालयेत्सम्यक् कर्पूरैरथवेन्धनैः) । तत्र संपूजयेत्सम्यग् राघवं प्रोक्तवर्त्मना ॥८॥
लक्षं तदर्धमथवा जपित्वा तद्दशांशतः। तिलैर्वा कमलैर्हुत्वा यद्यदिष्टं तदाप्नुयात् ॥९॥
बिल्वप्रसूनैरैश्वर्यमेधितेऽग्नौ हुतैर्भवेत्। पलाशकुसुमैर्हुत्वा मेधावी वेदविद् भवेत् ॥१०॥
दूर्वाभिश्च गुडूचीभिः प्रत्येकमपि वा हुतैः। निरामयश्च दीर्घायुर्भवत्येव न संशयः ॥११॥
ध्यात्वाथ मन्मथं रामं सीतामपि रतिं स्मरेत्। सर्ववश्यं प्रयोगेषु जपहोमादिकर्मसु ॥१२॥
रामं नवोढया सार्धं स्मरन्नाराध्य भक्तिः। उपैति सदृशीं कन्यां लाजाहोमेन साधकः ॥१३॥
रामं विधिवदाराध्य ज्वलितेऽग्नौ प्रयोगवित्। मधुरत्रययुक्तेन पायसेन हुनेत् सुधीः ॥१४॥
सर्वाधिपत्यं वैदुष्यं भवेदेव न संशयः। तिलैश्च तण्डुलैराज्यैर्हुत्वा लोकस्य पूजनम् ॥१५॥
आराध्य वत्सरं यावत्षट्सहस्रं दिने दिने। जपेच्च जुहुयादग्नौ तद्दशांशं घृतान्धसा ॥१६॥
अयमेवान्नदो लोके सर्वेषामपि जायते। बिल्वप्रसूनैः कुमुदैस्तथा बिल्वदलैरपि ॥१७॥
हुत्वा तु स लभेल्लक्ष्मीराचिरान्मन्त्रसाधकः। आराध्य रामं चण्डांशुमण्डले वत्सरात् सुधीः ॥१८॥
उदयाद्यावदस्तं स्याज्जपेन्मन्त्रमनन्यधीः। फलं भवति तस्याशु देवानामपि दुर्लभम् ॥१९॥
वैदुष्येणाधिपत्येन नराणामुत्तमो भवेत्। पूर्णिमायां निशीथिन्यामुदयास्तमयं विधोः ॥२०॥
संवत्सरं प्रकुर्वीत जपहोमादिकं बुधः। रात्रौ जपेद् दिवा होमं कुर्यादेवापरेऽहनि ॥२१॥
ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु व्रतमेतत् समापयेत्। सोमसूर्यादिकं यस्तु व्रतं कुर्वीत मानवः ॥२२॥
भुक्तिं मुक्तिं च लभते इह लोके परत्र च। रक्तपद्मैश्च बन्धूकैस्तथा रक्तोत्पलैरपि ॥२३॥
अभीष्टलोकवश्यार्थं जुहुयादर्चितेऽनले। राज्यैश्वर्योपभोगार्थं जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥२४॥
पद्मैर्बिल्वप्रसूनैर्वा दशांशं जुहुयात् सुधीः। समुद्रतीरे गोष्ठे वा लक्षजापी पयोव्रतः ॥२५॥
पायसेनाज्ययुक्तेन हुत्वा विद्यानिधिर्भवेत्। मन्त्रवित् स्वाधिपत्याय शाकाहारो जलान्तरे ॥२६॥
जपेल्लक्षं च जुहुयाद्बिल्वपत्रैर्दशांशतः। तदेव पुनरायाति स्वाधिपत्यं न संशयः ॥२७॥

उपोष्य गङ्गादिजलान्तरस्थो रामं समाराध्य जपेच्च लक्षम्।
हुत्वा दशांशं कमलैस्तिलैर्वा जपाप्रसूनैर्मधुरत्रयाक्तैः ॥२८॥
राजश्रियं विन्दति मन्दभाग्यो ह्यमुष्य राज्यं च सदा स्थिरं स्यात्।
रामं समाराध्य च यो हुनेच्च राज्यश्रियं विन्दति सेन्दुखण्डैः ॥२९॥

धन के लिये कमल एवं जातीपुष्प को चन्दन से लोलित करके हवन करे। नीलोत्पल के हवन से कुबेर के समान धनी होता है। बिल्वपुष्प के हवन से सारे संसार को वश में करता है। दीर्घ आयु एवं धन के लिये दूर्वा और लाल कमल से हवन करे। कुण्ड में विधिवत् अग्नि स्थापित करके पूर्वोक्त मार्ग से आवाहन करके पञ्चोपचार या षोडशोपचार से पूजा करे। पलाश में पीपल, खैर, गूलर, आम की लकड़ी में कपूर से अग्नि प्रज्वलित कर उसमें राघव की पूजा पूर्वोक्त विधि से करे। एक लाख या पचास हजार जप करके जप का दशांश हवन तिल अथवा कमल से करे तो अपना अभीष्ट प्राप्त करता है। बिल्वपुष्प से हवन करने पर ऐश्वर्य प्राप्त करता है। पलाश के फूलों से हवन करने पर मेधावी एवं वेदज्ञ होता है। दूर्वा या गुडूची के हवन से निरोग और दीर्घायु होता है। कामदेवरूपी राम एवं सीतारूपी रति का ध्यान करते हुये समस्त वशीकरण प्रयोगों में जप-होम आदि करना चाहिये। नवोढ़ा सीता के साथ राम का स्मरण करके भक्ति से पूजा करके लावा के हवन से साधक का विवाह सुन्दर कन्या से होता है। प्रयोगवित् प्रज्वलित अग्नि में राम की आराधना विधिवत् करके मधुरत्रययुक्त पायस से हवन करे तो सर्वाधिपत्य और विद्वत्ता प्राप्त करता है। आज्यमिश्रित तिल तण्डुल से हवन करने पर लोकपूज्य होता है। एक वर्ष तक प्रतिदिन छः हजार जप के बाद दशांश हवन घी एवं समिधा से करे तो सबों का अन्नदाता बन जाता है। बिल्वप्रसून, कुमुद, बेलपत्रों से हवन करने पर थोड़े ही दिनों में साधक लक्ष्मीवान हो जाता है। सूर्यमण्डल में उदय से अस्त तक राम की आराधना करके एक वर्ष तक जप करे तो देवों को भी दुर्लभ फल प्राप्त होता है और वह विद्वानों का अधिपति होकर मनुष्यों में श्रेष्ठ गिना जाता है। पूर्णिमा या अन्य तिथियों में उदय से अस्त तक एक वर्ष तक रात में जप और दिन मे हवन करे। ब्राह्मणों को भोजन कराकर व्रत को समाप्त करे। जो मनुष्य सूर्य सोमादि व्रत करता है, उसे इस संसार में भोग मिलता है और अन्त में मुक्ति मिलती है। लाल कमल, बन्धूक, लाल कुमुद से हवन अर्चित अग्नि में करे तो अभीष्ट लोक वश मे होता है। राज्य ऐश्वर्य के लिये एकाग्रता से एक लाख जप करे। कमल या विल्वफूल से हवन दशांश करे। समुद्रतट या गोशाला में दुग्धाहार पर रहकर आज्ययुक्त पायस से हवन करे तो विद्यानिधि होता है। मन्त्रज्ञानी स्वाधिपत्य के लिये शाकाहारी रहकर जल में एक लाख जप करे। दशांश हवन बेलपत्रों से करे तो उसे स्वाधिपत्य प्राप्त होता है। उपवास करके गंगादि नदी के जल में खड़ा होकर एक लाख जप करे एवं मधुरत्रयाक्त कमल तिल प्रजाप्रसून से दशांश हवन करे तो राज्यश्री प्राप्त होती है तथा मन्दभाग्य का भी राज्य स्थिर रहता है। राम की आराधना करके कपूर से हवन करने पर राज्यश्री प्राप्त होती है।

वैशाखे राघवं सूर्ये पश्यन्ननिमिषेक्षणः। निराहारो जपेल्लक्षं मौनी पञ्चाग्निमध्यतः ॥३०॥
दशांशं कमलैर्हुत्वा सर्वभोगो भवेद् ध्रुवम्। माघमासे जले स्थित्वा कन्दमूलफलाशनः ॥३१॥
जपेल्लक्षं च जुहुयात् पायसेनार्चितेऽनले। दशांशं पुत्रपौत्राद्यैरुपेतः प्राप्नुयाच्छ्रियम् ॥३२॥
श्रीरामसदृशः पुत्रः पौत्रोऽप्यस्य प्रजायते। बलिष्ठैः शत्रुभिर्मन्त्री परिभूतोऽथ मानवः ॥३३॥
तदा हनहनेत्युक्त्वा मायान्ते वा रणे यजेत्। ध्यात्वा रघुपतिं क्रुद्धं कालानलमिवापरम् ॥३४॥
(आकर्णसशराकृष्टकोदण्डभुजमण्डितम् ।) रणाङ्गने रिपूञ्जित्वां तीक्ष्णमार्गणवृष्टिभिः ॥३५॥
संहरन्तं महावीरमुग्रमैन्द्ररथस्थितम्। लक्ष्मणादिमहावीरैर्युतं हनुमदादिभिः ॥३६॥
कोटिकोटिमहावीरैः शैलवृक्षकरोद्धतैः। वज्रीकरणहुंकारमोंकारसुमहारवैः ॥३७॥
नदद्भिरपि धावद्भिः समरेऽरिगणं प्रति। एवं ध्यात्वा निराहारो मारणाय रिपोः पुनः ॥३८॥
जुहुयाच्छाल्मलीपुष्पैर्दशांशं मन्त्रसाधकः। अत्यन्तं तु समृद्धोऽपि न शत्रुरवशिष्यते ॥३९॥

वैरिणं रावणं ध्यात्वा तथात्मानं रघूद्वहम् । विधाय पूर्ववत् सर्वमनायासेन मारयेत् ॥४०॥
सीताहरणशोकाच्च स्तब्धीभूतमचेतसम् । जपेद्रघुपतिं ध्यायन्निराहारो जले वसन् ॥४१॥
दशांशं च तिलैर्हुत्वा स्तम्भयेच्छत्रुसंहतिम् । निधाय वायुबीजान्ते तन्नाम भ्रामयेति च ॥४२॥
जपेन्नक्तं निराहारो जुहुयाच्च तिलैरपि । रामं ध्यात्वा विषण्णं तु सीतान्वेषणकातरम् ॥४३॥
भ्रामयत्यचिरं साक्षाद्धेमाद्रिमपि वैरिणम् । समुद्रतीरे लङ्कायां हेमप्राकारसन्निधौ ॥४४॥
सुग्रीवादिभिरन्यैश्च दैवतैर्नारदादिभिः । उपास्यमानं सदसि ध्यात्वा देवं सलक्ष्मणम् ॥४५॥
विभीषणायागताय ध्यात्वैनं शरणार्थिने । वरदं तं जपेल्लक्षं जुहुयात् पङ्कजैरपि ॥४६॥
स्वस्थानमानयेच्छीघ्रं राजानमथवा प्रभुम् । निमील्य चक्षुषी स्नेहादुपलभ्य पुनः पुनः ॥४७॥
प्रमोहयन्तं सहसा विराधान्मारुतिप्रियम् । रामं ध्यात्वा जपेल्लक्षं हुत्वा रक्ताम्बुजैरपि ॥४८॥
संमोहयति वेगेन राजानमपि वा प्रभुम् । तारादिर्मुक्तये ह्येष रमादिर्भुक्तये तथा ॥४९॥
वाक्सिद्धये च वाग्बीजं प्रणवान्ते नियोजयेत् । मान्मथं सर्ववश्याय वदेत्तत्त्रितयं पुनः ॥५०॥
तारान्ते चैव तन्मन्त्री सर्वार्थं विनियोजयेत्। इति।

वैशाख में सूर्यमण्डल में राम को देखते हुए निराहार एवं मौन रहकर पञ्चाग्नि मध्य में बैठकर एक लाख जप करे। दशांश हवन कमल से करे तो सभी भोग प्राप्त होते हैं। माघ माह में कन्द मूल फल खाकर जल में खड़े होकर एक लाख जप करे। अर्चित अग्नि में दशांश हवन पायस से करे तो पुत्र पौत्रों से युक्त होकर धनवान होता हैं। इससे श्री राम के समान पुत्र और पौत्र बलिष्ठ होकर शत्रुओं को पराभूत करते हैं। युद्ध के समय मायान्त हन हन कहकर, दूसरे कालानल के समान क्रुद्ध राम को कान तक धनुष-बाण खीचते हुए ध्यान करके मन्त्रजप करे तो युद्धभूमि में बाणवृष्टि से रथस्थित बलशाली शत्रु को भी जीत लेता है। हनुमदादि महावीरों और लक्ष्मण से युक्त राम करोड़ों महावीरों के बीच में हैं, महावीरों के हाथों में पत्थर और वृक्ष हैं, वे सभी वज्र के समान हुंकार और कोलाहल कर रहे हैं एवं युद्ध में शत्रु की ओर दौड़ रहे हैं। इस प्रकार का ध्यान करके निराहार रहकर शत्रु के विनाश के लिये जप का दशांश हवन सेमर के फूलों से करे। इससे अत्यन्त बलवान शत्रु भी मार दिया जाता है। वैरी को रावण और अपने को राम मानकर पूर्ववत् हवनादि करे तो वह अनायास ही शत्रु को मार गिराता है। सीताहरण के शोक से स्तब्धीभूत अचेत रघुपति को ध्यान करके निराहार रहकर जल में खड़े होकर जप करे। जप का दशांश हवन तिल से करे तो शत्रु स्तम्भित होता है। सीता अन्वेषण से कातर दुःखी राम का ध्यान करे तो हेमाद्रि के समान शत्रु भी तुरन्त भ्रमित होने लगता है। समुद्रतट पर लंका में स्वर्णघेरे के निकट सुग्रीवादि अन्य देवता नारदादि से उपास्यमान राम का ध्यान लक्ष्मणसहित करते हुये उनके समीप शरणार्थी विभीषण को राम द्वारा वर देते हुए ध्यान करके एक लाख जप करे। कमल से हवन करे तो प्रभु राजा को भी साधक के समीप ले आते हैं। आँखों को बन्द करके बार-बार स्नेहाभिभूत हो तो मारुति प्रिय राम विराध के समान बलवान को भी मोहित करते हैं। राम का ध्यान करके एक लाख जप करे। लाल कमल से हवन करे तो प्रभु राजाओं को भी शीघ्र मोहित करते हैं। मुक्ति के लिये ॐ लगाकर, भोग के लिये श्रीं लगाकर, वाक्सिद्धि के लिये मन्त्र के पहले ऐं और बाद मे ॐ लगाकर, सर्व वश्य के लिये क्लीं लगाकर जप किया जाता है। श्रीं ऐं क्लीं ॐ लगाकर मन्त्रजप से सर्वार्थ सिद्ध होते हैं।

यन्त्रोद्धारप्रकार:

स्कन्दयामले—

आदौ विरच्य षट्कोणं तन्मध्ये बीजमालिखेत् । तद्बीजान्तरधः साध्यं साधकाख्यां तदूर्ध्वतः ॥१॥
षष्ठ्या(साध्या)धः साधकं कर्म मध्ये तत्पार्श्वयोः क्रियाम्। रमाबीजं च तस्यान्तस्तत्सर्वं वेष्टयेत्ततः ॥२॥
संमुखाभ्यां तु ताराभ्यां कोणेष्वङ्गमनूँल्लिखेत् । षट्कोणपार्श्वयोर्मायाश्रीबीजेऽग्रेषु मन्मथम् ॥३॥
षट्सन्धिषु च हुंबीजं तत्सर्वं वेष्टयेत् ततः । वाग्भवेन बहिः पद्ममष्टपत्रं सकेसरम् ॥४॥

केसरेषु स्वरान् वर्णान् पत्रेषु विलिखेत् क्रमात् । पत्राग्रेषु लिखेन्मालामन्त्रवर्णान् ऋतून्मितान् ॥५॥
पञ्च चान्त्यदले बाह्ये पुनरष्टदलाम्बुजम् । तत्केसरेषु श्रीबीजं दलेष्वष्टाक्षराणि च ॥६॥
नारायणमनोर्बाह्ये पद्मं द्वादशभिर्दलैः । तत्केसरेषु चत्वारि चत्वारि विलिखेत् क्रमात् ॥७॥
अकारादिक्षकारान्तान् मातृकार्णान् सबिन्दुकान् । शिष्टानन्ते तद्दलेषु विलिखेत् परमेश्वरि ॥८॥
वासुदेवमनोर्वर्णान् द्वादशैकैकशः क्रमात् । बहिः षोडशपत्रं च मायाबीजाढ्यकेसरम् ॥९॥
तत्पत्रेषु च वर्मास्त्रहृदन्तान् द्वादशार्णकान् । विलिख्य तत्सन्धिषु तु वायुपुत्रादिबीजकान् ॥१०॥
द्वात्रिंशद्दलसंयुक्तं पद्मं कृत्वाथ तद्बहिः । तन्मूलेषु लिखेच्छक्तिश्रीमारबीजकानि च ॥११॥
रामानुष्टुभमन्त्रार्णान् नृसिंहानुष्टुभार्णकान् । दलेष्वैकैकशो देवि विलिखेत्तदनन्तरम् ॥१२॥
पत्राग्रेषु च मन्त्रज्ञो वषडित्यक्षरद्वयम् । बहिर्भूपुरमालिख्य वज्राष्टकविराजितम् ॥१३॥
नृसिंहबीजं तद् दिक्षु वाराहं कोणकेषु च । लिखेच्छ्रीरामयन्त्रं हि सर्वयन्त्रोत्तमं प्रिये ॥१४॥
साधितं जपहोमाभ्यां होमसंपातसेकतः । धृतं शिरसि वा बाहावायुरारोग्यदं नृणाम् ॥१५॥
रक्षाकरं महेशानि महदैश्वर्यवर्धनम् । वन्ध्यानामपि नारीणां पुत्रदं सुखदं परम् ॥१६॥
भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव गोपनीयं सुरेश्वरि । यस्मै कस्मै न देयं च त्रिबु लोकेषु दुर्लभम् ॥१७॥
किं बहूक्तेन देवेशि सर्वदं नात्र संशयः । इति।

अस्यायमर्थः—षट्कोणं कृत्वा, तन्मध्ये श्रीरामबीजं विलिख्य, (तन्मध्ये साध्यनाम विलिख्य) तत्सर्वमन्योन्याभिमुखप्रणवाभ्यां संवेष्ट्य षट्सु कोणेषु षडङ्गमन्त्रानालिख्य, षट्कोणपार्श्वयोर्वामे मायां दक्षिणे श्रीबीजं च विलिख्य, तत्कोणाग्रेषु कामबीजं विलिख्य, षट्कोणसन्धिषु हुंबीजमालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तदन्तरालवीथ्यां वाग्भवबीजानि निरन्तरं (वृत्ता)कारेण विलिख्य, तद्बाह्येऽष्टदलं कृत्वा तत्केसरेषु द्वन्द्वशः (षोडश) स्वरान् विलिख्य, तद्दलेषु कचटतपयशळाख्यानष्टवर्गानालिख्य, तत्पत्राग्रेषु पूर्वोक्तमालामन्त्रवर्णान् षट्षट् समालिख्यान्तिमे पञ्चवर्णानालिख्य, तद्बहिः पुनरष्टदलपद्मं कृत्वा, तत्केसरेषु श्रीबीजं, दलेषु नारायणाष्टाक्षराणि विलिख्य, तद्बहिर्द्वादशदलकमलं कृत्वा, तत्केसरेषु मातृकार्णांश्चतुरश्चतुर आलिख्य, तद्दलेषु वासुदेवद्वादशाक्षराणि एकैकशो विलिख्य, तद्बहिः षोडशदलकेसरेषु मायाबीजं प्रतिकेसरं विलिख्य, दलेषु पूर्वोक्तद्वादशाक्षराणि द्वादशदलेषु विलिख्यावशिष्टदलचतुष्टये 'हुं फट् नमः' इति वर्णचतुष्टयं प्रतिदलमेकैकं विलिख्य, तद्दलान्तरालेषु प्रागुक्तहनुमदाद्यष्टकसृष्ट्याद्यष्टकयोर्नामाद्यक्षराणि सबिन्दूनि लिखित्वा, तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलेषु पूर्वोक्तश्लोकरूपद्वात्रिंशदक्षररामामन्त्रार्णान् नृसिंहद्वात्रिंशदक्षरवर्णांश्चैकैकशो विलिख्य, तत्केसरेषु प्रतिकेसरं शक्तिश्रीकामबीजानि विलिख्य, पत्राग्रेषु प्रत्यग्रं वषडिति विलिख्य, तद्बहिश्चतुरस्रं वज्राष्टकयुतं कृत्वा तत्र दिक्षु प्रोक्तनृसिंहबीजं, विदिक्षु वाराहबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

सारसंग्रहे—

दहनपुरयुगे च कामबीजे विलिखतु साध्यसमन्वितं च बीजम् ।
वृतमिदमणुवर्णकैश्च शिष्टैस्तदनु दशाक्षरमन्त्रवर्णवीतम् ॥१॥
षडपि च हृदयादि मुख्यकोणेषु लिखतु शक्तिरमे च कोणपार्श्वे ।
कवचमनुमथो लिखेत्तदग्रे वसुदलकेसरगान् द्विशः स्वरांश्च ॥२॥
ऋतुपरिमितवर्णकांश्च मालामनुसुभगांश्च तदन्तिमेऽन्तिमांश्च ।
कमुखलिपिवृतं धरापुरस्थं दिशि नृहरेश्च वराहबीजमस्रे ॥३॥

जपहोमादिना सम्यक् साधितं यन्त्रमुत्तमम् । सर्वेष्टफलदं मोक्षदायकं श्रीकरं परम् ॥४॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं विरच्य तन्मध्ये कामबीजोदरे श्रीरामबीजं प्राग्वत् ससाध्यं विलिख्य, अवशिष्टमूल-

मन्त्रवर्णैरावेष्ट्य, तद्बहिश्च 'हुंजानकीवल्लभाय स्वाहा' इति मन्त्रेणावेष्ट्य, षट्कोणेषु प्राग्वत् षडङ्गमन्त्रानालिख्य, षट्कोणपार्श्वयोर्वामदक्षिणयो: शक्तिबीजं मायाबीजं चैकैकशो विलिख्य, कोणाग्रेषु हुं इत्यालिख्य, बहिरष्टदलकमलं हुत्वा तत्केसरेषु द्वन्द्वश: स्वरानालिख्य, तद्दलेषु प्राग्वन्मालामन्त्रवर्णानालिख्य, बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तदन्तरालवीथ्यां कादिक्षान्तवर्णै: सबिन्दुकैरावेष्ट्य, बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तस्य दिक्षु नृसिंहबीजं कोणेषु वराहबीजं च लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

तथा—

षट्कोणे प्रणवं च साध्यसहितं मूलाणुमश्रिष्वथो
सन्धिष्वङ्गमनूंश्च शक्तिमदनौ षट्कोणपार्श्वे लिखेत्।
किञ्जल्केषु कला द्विशश्च दलगं मालाणुषड्वर्णकं
चान्त्यं चान्त्यदले दशार्णमनुना काद्यैर्वृतं भूस्थितम् ॥५॥
दिशि विदिशि नृसिंहवराहकौ लिखतु भूर्जदले कनकोद्भवे।
राजतेऽथ च सुसाधितमुत्तमं विभवकीर्तिरमाविजयप्रदम् ॥६॥ इति।

अस्यार्थ:—तत्र षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, कोणषट्के मूलमन्त्रस्य षडर्णानालिख्य, षट्कोणसन्धिषु षडङ्गमन्त्रानालिख्य, षट्कोणपार्श्वयो: शक्तिबीजं स्ववामे दक्षिणे कामबीजं विलिख्य, बहिरष्टदलकमलं कृत्वा, तत्केसरेषु द्वन्द्वश: स्वरान् दलेषु प्राग्वन्मालामन्त्रवर्णांश्च विलिख्य, तद् बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वाभ्यन्तरवीथ्यां दक्षाक्षरमन्त्रेण पूर्वोक्तेनावेष्ट्य, बाह्यवीथ्यां कादिक्षान्तवर्णैरावेष्ट्य, बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तस्य दिक्षु नृसिंहबीजं, विदिक्षु वराहबीजं च विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवतीति।

यन्त्रोद्धारप्रकार—स्कन्दयामल में कहा गया है कि षट्कोण बनाकर उसके मध्य में 'रां' लिखे। 'रां' के मध्य में साध्य नाम लिखे। उनको अन्योन्याभिमुख ॐ से वेष्टित करे। छहों कोणों में षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। षट्कोण के वाम भाग में 'ह्रीं' लिखे। दक्ष भाग में 'श्रीं' लिखे। षट्कोणाग्रों में 'क्लीं' लिखे। षट्कोण की सन्धियों में 'हुं' लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में वृत्ताकार 'ऐं' लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर दल के केसरों में सोलह स्वरों को दो-दो करके लिखे। उसके दलों में कचटतपयशल अष्ट वर्गों को लिखे। दलाग्रों में माला मन्त्र के छ:-छ: अक्षरों को लिखे। अन्तिम पाँच वर्णों को अन्तिम दलाग्र में लिखे। उसके बाहर फिर अष्टदल बनाकर केसरों में 'श्रीं' लिखे। दलों में नारायण अष्टाक्षर मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाहर द्वादशदल कमल बनाकर केसरों में चार-चार मातृका वर्णों को लिखे। दलों में वासुदेव द्वादशाक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर प्रत्येक केसर में 'ह्रीं' लिखे। दलों में पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्र के बारह अक्षरों को लिखे। शेष चार दलों में 'हुं' फट् नम: के चार वर्णों के एक-एक अक्षर को लिखे। दलों के अन्तराल में पूर्वोक्त हनुमान अष्टाक्षर, सृष्ट्याद्यष्टाक्षर, नामाद्य अष्टाक्षर सानुस्वार लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल के दलों में बत्तीस अक्षरों के राममन्त्र के वर्णो को लिखे। नृसिंह के बत्तीस वर्णों वाले मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके केसरों में प्रति केसर 'क्लीं' लिखे। पत्राग्रों के प्रति अग्र में वषट् लिखे। उसके बाहर चतुरस्र वज्राष्टक युक्त बनाकर दिशाओं में प्रोक्त नृसिंह बीज को लिखे। कोणों में वराहबीज लिखे। यह श्रीराम यन्त्र सभी यन्त्र में उत्तम होता है। जप होम सम्पात घृत बूदों को शिर में लगाने से मनुष्यों को आरोग्य मिलता है। यह रक्षाकर एवं महा ऐश्वर्यवर्द्धक है। वन्ध्या स्त्रियों को पुत्र सुखदायक होता है। भुक्ति-मुक्तिप्रद यह यन्त्र परम गोपनीय है। तीनों लोकों में दुर्लभ इस यन्त्र को जिस किसी को नहीं देना चाहिये। यह यन्त्र निस्सन्देह रूप से सब कुछ देने वाला है।

यन्त्रान्तर—सारसंग्रह में कहा गया है कि षट्कोण बनाकर उसके बीच में 'क्लीं' के उदर में साध्य नाम के साथ 'रां' लिखे। अवशिष्ट मूल मन्त्र वर्णो से उसे वेष्टित करे। उसके बाहर 'हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा' के वर्णो को लिखकर वेष्टित करे। षट्कोणों में पूर्ववत् षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। षट्कोण के वाम-दक्षिण पार्श्वों में एक-एक शक्तिबीज और मायाबीज लिखे।

कोणाग्रों में 'हुं' लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। उसके दलों में पूर्ववत् मालामन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में क से क्ष तक के वर्णों को लिखकर उसे वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर पूर्वादि दिशाओं में नृसिंह बीज और कोणों में वराह बीज लिखे। जप-होम से सम्यक् साधित यह उत्तम यन्त्र सर्वार्थदायक, मोक्षदायक और धनदायक होता है।

यन्त्रान्तर—षट्कोण बनाकर उसमें साध्य नाम के साथ ॐ लिखे। छहों कोणों में मूल मन्त्र के वर्णों को लिखे। कोणसन्धियों में षडङ्ग मन्त्र लिखे। षट्कोण के वाम भाग में 'ह्रीं' और दक्ष भाग में 'क्लीं' लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसके केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। दलों में पूर्ववत् माला मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाहर तीन वृत्त बनाकर आभ्यन्तर वीथि में दशाक्षर मन्त्र वर्णों को लिखकर वेष्टित करे। बाह्य वीथि में कादि क्षान्त वर्णों को लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर दिशाओं में नृसिंह बीज एवं विदिशाओं में वराहबीज लिखे। इस यन्त्र को भोजपत्र या सोने के पत्र या चाँदी के पत्र पर लिखकर सुसाधित करे तो यह धन, वैभव, कीर्ति और विजयप्रद होता है।

रामानुस्मृतिः

अथ रामानुस्मृतिः।

श्रीब्रह्मोवाच

वन्दे रामं जगद्वन्द्यं सुन्दरास्यं शुचिस्मितम्। कन्दर्पकोटिलावण्यं कामितार्थप्रदायकम्॥१॥
भास्वत्किरीटकटककटिसूत्रोपशोभितम्। विशाललोचनं भ्राजत्तरुणारुणकुण्डलम्॥२॥
नीलजीमूतसङ्काशं नीलालकवृताननम्। ज्ञानमुद्रालसद्दक्षबाहुं ज्ञानमयं विभुम्॥३॥
वामजानुपरिन्यस्तवामाम्बुजकरं हरिम्। वीरासने समासीनं विद्युत्पुञ्जनिभाम्बरम्॥४॥
कोटिसूर्यप्रतीकाशं कोमलावयवोज्ज्वलम्। जानकीलक्ष्मणाभ्यां च वामदक्षिणशोभितम्॥५॥
हनुमद्रविपुत्रादिकपिमुख्यैर्निषेवितम्। दिव्यरत्नसमायुक्तसिंहासनगतं प्रभुम्॥६॥
प्रत्यहं प्रातरुत्थाय ध्यात्वैवं राघवं हृदि। एभिः षोडशभिर्नामपदैः स्तुत्वा नमेद्धरिम्॥७॥
नमो रामाय शुद्धाय बुद्धाय परमात्मने। विशुद्धज्ञानदेहाय रघुनाथाय ते नमः॥८॥
नमो रावणहन्त्रे ते नमो वालिविनाशिने। नमो वैकुण्ठनाथाय नमो विष्णुस्वरूपिणे॥९॥
नमो यज्ञस्वरूपाय यज्ञभोक्त्रे नमोऽस्तु ते। योगिध्येयाय योगाय परमानन्दरूपिणे॥१०॥
शङ्करप्रियमित्राय जानक्याः पतये नमः। य इदं प्रातरुत्थाय भक्तिश्रद्धासमन्वितः॥११॥
षोडशैतानि नामानि रामचन्द्राय नित्यशः। पठेद्विद्वान् स्मरेन्नाम स एव स्याद्रघूत्तमः॥१२॥
श्रीरामभक्तिरतुला भवत्येव हि सर्वदा। जगत्पूज्यः सुखं जीवेद् रामभद्रप्रसादतः॥१३॥
मरणे समनुप्राप्ते श्रीरामः सीतया सह। हृदि संदृश्यते तस्य साक्षात् सौमित्रिणा सह॥१४॥
नित्यं चापररात्रेषु रामस्येमां समाहितः। मुच्यतेऽनुस्मृतिं जप्त्वा मृत्युदारिद्र्यपातकैः॥१५॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे रामानुस्मृतिः सम्पूर्णा

रामानुस्मृति—ब्रह्माण्ड पुराण में ब्रह्मा ने श्रीराम की स्तुति करते हुये कहा है कि संसार द्वारा वन्दनीय, सुन्दर मुख वाले, मुस्कानयुक्त, करोड़ों कन्दर्प-सदृश प्रभा वाले, अभीष्ट-प्रदायक, देदीप्यमान किरीट, कटक एवं करधनी से सुशोभित, बड़ी-बड़ी आँखों वाले, लाल कुण्डलों से सुशोभित, नीलजीमूत के समान नीले अलकों से सुशोभित मुख वाले, दाहिने हाथ में ज्ञान एवं मुद्रा धारण करने वाले, वाम जानु पर बाँयें करकमलों को रखे हुये, वीरासन पर आसीन, विपुत्पुञ्ज के समान वस्त्र वाले, करोड़ों सूर्य के समान प्रकाशमान, उज्ज्वल सुकोमल अंगों वाले, बाँयें एवं दाँयें क्रमशः सीता एवं लक्ष्मण से सुशोभित, हनुमान आदि प्रमुख वानरों से सेवित, दिव्य रत्नजटित सिंहासन पर विराजमान प्रभु श्रीराम की मैं वन्दना करता हूँ। प्रतिदिन प्रातः उठकर हृदय में श्रीराम का इस प्रकार का ध्यान करके राम, शुद्ध बुद्ध, परमात्मा, विशुद्धज्ञानदेह, रघुनाथ,

रावणहन्ता, बालिविनाशन, वैकुण्ठनाथ, विष्णु, यज्ञ, यज्ञभोक्ता, योगिध्येय, योग, परमानन्द, शंकरप्रियमित्र, जानकीपति—इन सोलह नामों का जो प्रातः उठकर श्रद्धा-भक्ति पूर्वक इन नामों का नित्य पाठ से स्मरण करता है, वह उत्तम रामभक्त होता है। उसे अतुल्य रामभक्ति प्राप्त होती है। रामभद्र के प्रसाद से वह जगत्पूज्य होकर सुख से जीवित रहता है। देहान्त होने पर राम-सीता के लोक में जाता है। उसके हृदय में लक्ष्मणसहित राम का वास नित्य रहता है। इसके स्मरण से मृत्यु, दारिद्र्य एवं पापों का नाश होता है।

हनुमन्मन्त्रप्रभावः

अथ हनुमन्मन्त्राः। सारसंग्रहे—

आञ्जनेयमनुर्लोके भुक्तिमुक्त्येकसाधनम्। प्रकाशितः शङ्करेण लोकानां हितमिच्छता ॥१॥
भूतप्रेतपिशाचादिडाकिनीब्रह्मराक्षसाः। दृष्ट्वावशाः पलायन्ते मन्त्रानुष्ठानतत्परान् ॥२॥
चतुष्षष्टिं ह्यपस्मारान् षड्विंशतिमतिग्रहान्। शतं शिशुग्रहांस्तद्वत् त्रिषष्टिं ब्रह्मराक्षसान् ॥३॥
गन्धर्वान् द्वादश तथा भूतान्नानाविधान् ग्रहान्। सप्तधा राजयक्ष्माणं तथा चाष्टविधं ज्वरम् ॥४॥
चतुर्विंशद्विधं घोरमन्यान् दंशानसंख्यकान्। डाकिनीत्यादिकानन्यान् स्मरणादेव नाशयेत् ॥५॥
गुटिकां पादलेपं च रसं चैव रसायनम्। खड्गं सदञ्जनं चैव खेचरं पादुकादिकान् ॥६॥
विद्वेषणं मारणं च वश्यमाकर्षणं तथा। उच्चाटनं मोहनं च सप्तद्वीपाधिपत्यकम् ॥७॥
विद्याधराणां सर्वेषां चक्रवर्ती न संशयः।

हनुमान के मन्त्र का प्रभाव—सारसंग्रह में कहा गया है कि श्री हनुमान के मन्त्र इस संसार में भुक्ति-मुक्ति का साधन हैं। लोककल्याण के लिये शंकर द्वारा यह प्रकाशित है। इनके मन्त्र के अनुष्ठान में तत्पर मनुष्य को देखकर भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, ब्रह्मराक्षस आदि भाग जाते हैं। चौंसठ अपस्मार, छब्बीस अतिग्रह, एक सौ शिशु ग्रह, तिरसठ ब्रह्मराक्षस, बारह गन्धर्व, भूत एवं नानाविध ग्रह, सात राजयक्ष्मा, आठ ज्वर, चौबीस प्रकार के अन्य घोर, असंख्य दंश, डाकिनी इत्यादि इसके समरण से ही नष्ट हो जाते हैं। गुटिका, पादलेप, रस, रसायन, खड्ग, अञ्जन, आकाशगमन, पादुका, विद्वेषण, मारण, वश्य, आकर्षण, उच्चाटन, मोहन, सातों द्वीपों का आधिपत्य, सभी विद्याधरों में चक्रवर्तित्व—ये सभी इन मन्त्रों से प्राप्त होते हैं। हनुमान का अष्टादशाक्षर मन्त्र है—नमो भगवते आंजनेयाय महाबलाय स्वाहा। इसे सर्वसिद्धिकर कहा गया है।

हनुमन्मन्त्रमालामन्त्रविधानम्

(प्रधानश्चाङ्गभूतोऽयं मन्त्रराजो ह्यनुत्तमः ॥८॥

पूर्वं नमःपदमुक्त्वा ततो भगवते-पदं। आञ्जनेय-पदं ङेन्तं महाबलपदं ततः ॥९॥
वह्निजायान्त एवायं मन्त्रो हनुमतः परः। सर्वसिद्धिकरः प्रोक्तो मन्त्रश्चाष्टादशाक्षरः ॥१०॥
मालाख्योऽपरमन्त्रोऽपि मारुतेः सर्वसिद्धिदः।) प्रणवं पूर्वमुच्चार्य नमो भगवते पदम् ॥११॥
ङेन्तं प्रस्फुटसंयुक्तं पराक्रमपदं वदेत्। तथाक्रान्तपदोपेतं दिङ्मण्डलमुदीरयेत् ॥१२॥
यशोवितानधवलीकृतजगत्पदं वदेत्। त्रितयाय-पदं वज्रदेहरुद्रावतारतः ॥१३॥
संबुद्ध्यन्तं पदं लङ्कापुरीदहनमीरयेत्। उदधिलङ्घनं चापि दशग्रीवकृतान्तकम् ॥१४॥
सीताश्वासनशब्दं च ह्यञ्जनागर्भसं-पदम्। भूतान्ते रामलक्ष्म स्यात् णानन्दकरमीरयेत् ॥१५॥
कपिसैन्यप्रा-पदान्ते कारसुग्रीवसा-पदम्। ध्यारणान्ते पर्व-पदं तोत्पाटन-पदं वदेत् ॥१६॥
बालब्रह्म-पदं चारिणे गभीर-पदं वदेत्। शब्दसर्वग्रहं प्रोक्त्वा विनाशनमथोच्चरेत् ॥१७॥
सर्वज्वरहरं डाकिनीविध्वंसनमीरयेत्। ततस्तारं समुच्चार्य महामायां त्रिरुच्चरेत् ॥१८॥
एहि सर्वविषं पश्चाद् हर सर्वबलं पदम्। क्षोभयान्ते च मे सर्वकार्याणि साधयद्वयम् ॥१९॥
वर्मास्त्राग्न्यङ्गनान्तोऽयं हनुमन्मन्त्र ईरितः। ऋषिरीश्वर एव स्यादनुष्टुप् छन्द उच्यते ॥२०॥

**हनुमान् देवता प्रोक्तः सर्वाभीष्टफलप्रदः। नमो भवगते चाञ्जनेयायानेन हृन्मतम्॥२१॥
रुद्रमूर्तय इत्येवं शिरोमन्त्र उदाहृतः। ङेन्तो वायुसुतश्चायं शिखामन्त्र उदाहृतः॥२२॥
अग्निगर्भाय च ततः कवचाणुरयं मतः। (रामदूताय च पुनर्नेत्रमन्त्रः समीरितः॥२३॥
ब्रह्मास्त्रतो निवारान्ते णायेत्यस्त्रमनुर्मतः। एवं षडङ्गं च सुधीः कृत्वा ध्यायेदनन्यधीः)॥२४॥
स्फटिकाभं स्वर्णाकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्भोजं स्मरेन्मुहुः॥२५॥
पूजां तु वैष्णवे पीठे शैवे वा विदधीत वै। आवृतानि विना नित्यं वरिष्ठैश्चन्दनादिभिः॥२६॥
अयुतं च पुरश्चर्या रामस्याग्रे शिवस्य वा।**

'द्रव्यानुक्तौ घृतं होमे' इति कपिलवचनात् घृतेनैव दशांशो होमः। तर्पणमार्जनादि च। नमो भगवते आञ्जनेयाय हृत्। रुद्रमूर्तये शिरः। वायुसुताय शिखा। अग्निगर्भाय कवचं। रामदूताय नेत्रं। ब्रह्मास्त्रनिवारणाय अस्त्रं। इति करषडङ्गन्यासः।

हनुमान का यह मालामन्त्र भी सर्वसिद्धि-प्रदायक है—ॐ नमो भगवते प्रस्फुटपराक्रम-पदाक्रान्त-दिङ्मण्डल यशोवितान धवलीकृत जगत्त्रितयाय वज्रदेह-रुद्रावतार-लंकापुरी-दहन, उदधिलङ्घन, दशग्रीवकृतान्तक, सीताश्वासन, अंजनागर्भसम्भूत, राम लक्ष्मणानन्दकरं कपिसैन्यप्राकार, सुग्रीव, साधारण, पर्वतोत्पाटन, बाल ब्रह्मचारिणे, गभीरशब्द, सर्वग्रहविनाशन, सर्वज्वरहरे डाकिनीविध्वंसन ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं एहि सर्वविषहरं सर्वबलं क्षोभय मे सर्वकार्याणि साधय साधय हूं फट् स्वाहा।

इसके ऋषि ईश्वर, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता सर्वाभीष्ट-फलप्रद हनुमान इसका न्यास इस प्रकार होता है—नमो भगवते आंजनेयाय हृदयाय नमः। रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा। वायुसुताय शिखायै वषट्। अग्निगर्भाय कवचाय हुं। रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट्। ब्रह्मास्त्रतो निवारणाय अस्त्राय फट्। षडङ्ग न्यास के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

स्फटिकाभं स्वर्णाकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम्। कुण्डलद्वयसंशोभिमुखाम्भोजं स्मरेन्मुहुः॥

वैष्णव या शैव पीठ पर आवरणपूजा के बिना चन्दनादि से पूजा करे। राम या शिव के आगे दश हजार जप से पुरश्चरण करे। दशांश हवन घी से करे।

विनियोगविधिः

**तथा—
जितेन्द्रियस्तु नक्ताशी हनुमद्ध्यानतत्परः। क्षुद्ररोगनिवृत्त्यर्थमष्टोत्तरशतं सुधीः॥२७॥
जप्त्वा त्रिदिनमेकान्ते तेभ्यो मुच्येत तत्क्षणात्। क्षुद्रभूतप्रशान्त्यर्थं शतमष्टोत्तरं पुनः॥२८॥
दिनत्रयमथो जप्त्वा भूतानां मुच्यते भयात्। भूतप्रेतपिशाचादिशान्तयेऽष्टोत्तरं शतम्॥२९॥
जप्त्वैव तत्क्षणान्मुक्तो भवेदेवं न संशयः। महारोगादिशान्त्यर्थमष्टोत्तरसहस्त्रकम्॥३०॥
जप्त्वा तस्मात् प्रमुच्येत निशीथे नियताशनः। जयाभिकाङ्क्षिणां राज्ञामस्मादन्यो न वर्तते॥३१॥
ध्यायेत चाक्षहन्तारमयुतं नियताशनः। जपन्नियतमाश्वेव जयेद् दुर्जयमप्यरिम्॥३२॥
सम्यक् च रामसुग्रीवसन्धातारं स्मरन् सुधीः। अयुतेन च विच्छिन्नं सन्धिमाप्नोत्यसंशयम्॥३३॥
लङ्कायाः दाहकं ध्यायञ्जपेदयुतमञ्जसा। शत्रुराष्ट्रं दहेदेव दुग्धाब्धावपि संस्थितम्॥३४॥
जयार्थं रिपुसङ्घानामस्मादन्यो न विद्यते। यस्तु गेहे हनूमन्तं सर्वदैव प्रपूजयेत्॥३५॥
मन्दिरे मन्त्रिणस्तस्य भवेल्लक्ष्मीरचञ्चला। दीर्घमायुर्भवेदेव सर्वत्र विजयी भवेत्॥३६॥ इति।**

क्षुद्र रोग-निवारण के लिये जितेन्द्रिय केवल रात में भोजन करके हनुमान के ध्यान में तत्पर रहकर एक सौ आठ मन्त्रजप तीन दिनों तक करे तो रोग से मुक्त होता है। क्षुद्र भूतों की शान्ति के लिये तीन दिनों तक एक सौ आठ जप करे तो भूतों का भय नहीं रहता। एक सौ आठ जप से भूत-प्रेत-पिशाचादि से तुरन्त छुटकारा हो जाता है। महारोग की शान्ति के लिये एक हजार आठ जप नियत भोजन करके रात में करे तो निरोग हो जाता है। जयाकांक्षी राजा के लिये इससे बढ़कर

कोई दूसरा मन्त्र नहीं है। नियत भोजन करके अक्षय कुमार को मारने वाले हनुमान जी का ध्यान करके दश हजार जप करे तो दुर्जय शत्रु पर भी विजय प्राप्त होती है। राम और सुग्रीव को मिलाने वाले हनुमान का ध्यान करके दश हजार मन्त्रजप करे तो सन्धि हो जाती है। लंका को जलाने वाले हनुमान का ध्यान करके दश हजार जप करे तो दूध के सागर में संस्थित शत्रुराष्ट्र भी जल जाता है। शत्रुसङ्घों पर जीत के लिये इससे बढ़कर कोई दूसरा मन्त्र नहीं है। जिस घर में सदैव हनुमान की पूजा होती है, उस घर में अचञ्चला लक्ष्मी का वास होता है, दीर्घायु होती है और सर्वत्र विजय मिलती है।

यन्त्रोद्धारवर्णनम्

श्रीयन्त्रसारे—

मध्ये तारं स्वरयुगलसत्केसरे चाष्टपत्रे मन्त्रस्यार्णान् जलनिधिमितान् अन्तरालिख्य कार्णैः ।
वीतं मालामनुवरवृतं भूपुरस्थं हनूमद्यन्त्रं चौरग्रहकृमिगदध्वंसि रक्षाकरं च ॥१॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदलपद्मं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, तत्केसरेषु स्वरान् द्विश आलिख्य, दलेषु वक्ष्यमाणहनुमन्मन्त्रार्णांश्चतुरश्चतुरो विलिख्य, बहिर्वृत्तयोरन्तराले ककारादिक्षकारान्तवर्णैरावेष्ट्य, बहिः पुनर्वृत्तयोरन्तराले वीथ्यां वक्ष्यमाणहनुमन्मालामन्त्रेण संवेष्ट्य बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। ॐनमो भगवते पवनात्मजाय राघवप्राणसमाय लक्ष्मणप्राणदात्रे सीतादुःखविनाशनाय रावणदर्पघ्नाय सर्वदुष्टविनाशनाय रिपुचौरव्याघ्रवराहकृमिपतङ्गादिदुष्टसत्त्वविनाशनाय हुंफट् स्वाहा। अयं दलेषु लेख्यो मन्त्रः।

पूजन यन्त्र—श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में ॐ के गर्भ में साध्य नाम लिखे। कमल दल के केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। दलों में हनुमान मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। इससे बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में 'क' से 'क्ष' तक के वर्णों को लिखे। पुन: वीथि में ही हनुमान माला मन्त्र को लिखे। बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र चोर, ग्रह, कृमि रोग का विनाशक है। माला मन्त्र है—ॐ नमो भगवते पवनात्माजाय राघवप्राणसमाय लक्ष्मण-प्राणदात्रे सीतादु:खविनाशनाय रावणदर्पघ्नाय सर्वदुष्टविनाशनाय रिपुचौरव्याघ्रवराहकृमिपतङ्गादिदुष्टसत्त्वविनाशनाय हुं फट् स्वाहा।

हनुमत्स्तुतिः

अथ हनुमत्स्तुतिः—

नमो हनुमते तुभ्यं नमो मारुतसूनवे। नमः श्रीरामभक्ताय श्यामश्यामाय ते नमः ॥१॥
नमो वानरबीजाय सुग्रीवसख्यकारिणे। लङ्काविदाहनार्थाय हेलासागरतारिणे ॥२॥
सीताशोकविनाशाय राममुद्राधराय च। रावणादिकुलच्छेदकारिणे ते नमो नमः ॥३॥
मेघनादवरध्वंसकारिणे भयहारिणे। वायुपुत्राय वीराय आकाशोदरगामिने ॥४॥
वनपालशिरश्छेत्रे लङ्काप्रासादभञ्जिने। ज्वलत्कृशानुवर्णाय दीर्घलाङ्गूलधारिणे ॥५॥
सौमित्रिजयदात्रे च रामभक्ताय ते नमः। अक्षस्य वधकर्त्रे च ब्रह्मशक्तिनिवारिणे ॥६॥
संयुगे च महाशक्तिवातक्षेपविनाशिने। रक्षोघ्नाय रिपुघ्नाय भूतघ्नाय नमो नमः ॥७॥
ऋक्षवानरवीरैकप्राणदात्रे नमो नमः। परसैन्यबलघ्नाय शस्त्रौघघ्नाय ते नमः ॥८॥
विषघ्नाय द्विष(द्)घ्नाय वरघ्नाय नमो नमः। महारिपुभयघ्नाय भक्तत्राणैककारिणे ॥९॥
परप्रेरितमन्त्राणां यन्त्राणां स्तम्भकारिणे। पयःपाषाणतरणकारणाय नमो नमः ॥१०॥
बालार्कमण्डलग्रासकारिणे भयतारिणे। नखायुधाय भीमाय दशायुधधराय च ॥११॥
रिपुमानविनाशाय रामाज्ञालोकधारिणे। प्रतिग्रामस्थितायाथ रक्षोबलवधार्थिने ॥१२॥
करालशैलशस्त्राय द्रुमशस्त्राय ते नमः। बालैकब्रह्मचर्याय रुद्रमूर्तिधराय च ॥१३॥
पिशङ्गाङ्गाय सर्वाय वज्रदेहाय ते नमः। कौपीनवाससे तुभ्यं रामभक्तिरताय च ॥१४॥
दक्षिणाशाभास्कराय सतां चन्द्रोदयात्मने। कृत्याकृत्यविषघ्नाय सर्वक्लेशहराय च ॥१५॥

स्वाम्याज्ञापार्थसंग्रामसख्ये सज्जयदायिने। भक्तानां दिव्यवादेषु संग्रामे जयदायिने ॥१६॥
किङ्किला-बुम्बुका-घोरघोरशब्दकराय च। सर्वोग्रव्याधिसंस्तम्भकारिणे वनचारिणे ॥१७॥
सदा वनफलाहारसंतृप्ताय विशेषतः। महार्णवशिलाबद्धसेतुबन्धाय ते नमः ॥१८॥
वादे विवादे संग्रामे भये घोरे महावने। सिंहव्याघ्रतस्करेषु पठन् स्तोत्रं भयं नहि ॥१९॥
दिव्यभूतभये व्याधौ विषे स्थावरजङ्गमे। राजशत्रुभये चोग्रे तथा ग्रहभयेषु च ॥२०॥
जलसर्पमहावृष्टौ दुर्भिक्षे व्रणसंप्लवे। पठन् स्तोत्रं प्रमुच्येत भयेभ्यः सर्वतो नरः ॥२१॥
तस्य क्वापि भयं नास्ति हनुमत्स्तवपाठनात्(तः)। एककालं त्रिकालं वा पठन्नित्यमिमं स्तवम् ॥२२॥
सर्वान् कामानवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा। विभीषणकृतं स्तोत्रं तार्क्ष्येण समुदीरितम् ॥२३॥
ये पठिष्यन्ति भक्त्या वै सिद्धयस्तत्करे स्थिताः।

इति हनुमत्स्तुतिः

श्लोक १ से १९ तक पठित हनुमत्स्तोत्र का जो पाठ करता है, उसे वाद-विवाद, संग्राम, भय, घोर जंगल में सिंह, व्याघ्र, तस्कर, संकट होने आदि का कोई भय नहीं रहता। दिव्य भूतों का भय, रोग, स्थावर-जंगम विष, राजशत्रु-भय, उग्र ग्रहों के भय, जल, सर्प, ग्हावृष्टि-दुर्भिक्ष, व्रण, संप्लव होने पर इस स्तोत्र का पाठ करने से भय नहीं रहते। जो हनुमत्स्तोत्र पाठ करता है, उसे कहीं भी भय नहीं रहता। एक काल या त्रिकाल में इस स्तोत्र का पाठ जो करता है, उसकी सभी इच्छाएँ पूरी होती हैं। यह विभीषणकृत स्तोत्र गरुड़ द्वारा कथित है। जो इसका पाठ करता है, उसके हाथ में सिद्धियाँ रहती हैं।

गोपालमन्त्रः

अथ गोपालमन्त्रः। श्रीसारसंग्रहे—

श्रीगोपालमनुं वक्ष्ये सर्वसंपत्प्रदायकम्। ग्रहरोगविषारिघ्नं व्याधिदारिद्र्यनाशनम् ॥१॥
पुत्रमित्रकलत्रादिभोगमोक्षफलप्रदम्। विद्याविभवदं नृणां विशिष्टकविताकरम् ॥२॥
समस्तवनिताचित्तराजवश्यकरं परम्। पञ्चान्तकोऽधरान्तान्तो लोहितोऽथ त्रिमूर्तियुक् ॥३॥
चतुराननमेषौ च खड्गीशश्च ततः परम्। पिनाकीशद्वयं भूयो द्विरण्डेशश्च दीर्घवान् ॥४॥
वाली चन्द्रसुधादीर्घा नकुलीशश्च कान्तियुक्। मन्त्रो दशाक्षरः प्रोक्तो गोपालस्य महात्मनः ॥५॥
विष्णुपादाम्बुजद्वन्द्वभक्तिवृद्धिकरः परः। इति।

पञ्चान्तको ग, अधरान्तं ओ, अन्ते यस्य स तेन गो। लोहितः पकारः, त्रिमूर्ति ई, तेन पी। चतुराननो ज। मेषो न। खड्गीशो व। पिनाकीशद्वयं ल्ल। द्विरण्डेशो भ, दीर्घ आ, तेन भा। वाली य। चन्द्रः स, सुधा व, दीर्घ आ, तेन स्वा। नकुलीशो ह, कान्तिः आ, तेन हा।

गोपाल मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब मैं सर्वसम्पत्प्रदायक श्री गोपालमन्त्र को कहता हूँ। यह ग्रह रोग विष शत्रु व्याधि दारिद्र्य का विनाशक है। पुत्र-मित्र-कलत्रादि एवं भोग-मोक्ष-फलप्रद है। विद्या-वैभव विशिष्ट से युक्त कर साधक को यह कविता करने वाला बनाता है। सभी वनिता के चित्त और राजा का यह वश्यकर है। दशाक्षर गोपाल मन्त्र है— गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। गोपाल का यह दशाक्षर मन्त्र विष्णु के दोनों चरण-कमलों में भक्ति बढ़ाने वाला हैं।

गोपालमन्त्रार्थकथनम्

तथा—

गोपायत्यखिलं लोकं गोपयेत् पुरुषं परम्। तेन गोपी समाख्याता प्रकृतिर्मूलकारणम् ॥६॥
यतोऽपि जायते विश्वं जनशब्देन गद्यते। आश्रयत्वेन वै गोपीजनयोः प्रेरणादयम् ॥७॥
वल्लभः प्रोच्यते तज्ज्ञैर्नित्यानन्दं महोऽद्भुतम्। स्वाहाशब्देन चात्मानं महसे प्रापयाम्यहम् ॥८॥

उत्पाद्योत्पादकाधीशो विष्णुर्वै परमात्मना। मन्त्रार्थो विष्णवे तत्त्वं साधकस्य भवेद् ध्रुवम् ॥९॥
विश्वरक्षणसामर्थ्यसंघातो वा निगद्यते। गोपीजनपदेनास्य स्वात्माभिन्नस्य वल्लभ: ॥१०॥
प्रभु: प्रिय इति ख्यातं स्वाहार्थ: पूर्ववद्भवेत्। गोपाङ्गनाप्रियायास्मै स्वात्मानं च स्वकीयकम् ॥११॥
जुहोमि सगुणे ब्रह्मणीत्थं मन्त्रनिरुक्तय: ।

सारे संसार को गोपित करने वाला एवं परम पुरुष का गोपनकर्ता होने से यह गोपी कहलाता है। यह प्रकृति का मूल कारण है। विश्व के उत्पादक होने से इसे 'जन' कहा जाता है। आश्रयत्व से गोपीजन प्रेरणाप्रद है। महा अद्भुत नित्यानन्द देने वाले को वल्लभ कहते हैं। स्वाहा शब्द से आत्मा को महत् की प्राप्ति होती है। उत्पाद्य और उत्पादकों के स्वामी विष्णु ही परमात्मा हैं। मन्त्रार्थ से साधक को वैष्णव तत्त्व का निश्चित ज्ञान होता है। विश्वरक्षण सामर्थ्य का निष्पादन होता है। इसके गोपीजन पद से अपने से भिन्न का प्रेम निष्पन्न होता है। प्रभु प्रिय के रूप में ख्यात हैं। अपने आत्मा के समान प्रिय को गोपाङ्गना कहते हैं। सगुण ब्रह्म के लिये हवन किया जाता है।

अर्चनक्रम:

नारदोऽस्य मुनि: प्रोक्तो विराट् छन्द उदीरितम् ॥१२॥
देवता नन्दपुत्रोऽत्र कृष्णो दैत्यविघातकृत्। कलमायाशिरोभिस्तु बीजं मन्त्रस्य कीर्तितम् ॥१३॥
शक्ति: स्वाहा समाख्याता मन्त्रवर्यस्य देशिकै: । धर्मार्थकाममोक्षाप्तौ विनियोगो भवेदिति ॥१४॥
कृष्ण: प्रकृतिरित्युक्तो दुर्गाधिष्ठातृदेवता। आचक्रेण विचक्रेण सुचक्रेण तत: परम् ॥१५॥
त्रैलोक्यरक्षणाद्येन चक्रेण तदनन्तरम्। असुरान्तकचक्रेण चतुर्थ्यन्तैस्तु पञ्चभि: ॥१६॥
स्वाहान्तैर्जातिसंयुक्तै: पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत्। हृदये शीर्षके चैव शिखायां कवचे तथा ॥१७॥
अस्त्रे पार्श्वद्वये कट्यां पृष्ठे मूर्धनि च क्रमात्। मन्त्रार्णान् विन्यसेन्मन्त्री बिन्द्वन्तान् नमसा युतान् ॥१८॥
करयोर्मध्यत: पृष्ठे तयो: पार्श्वे च मन्त्रवित्। प्रणवाद्यं तदन्तं च व्यापयेद् दशवर्णकम् ॥१९॥
(दशवर्णकं समस्तमूलमन्त्रम् ।)

ध्रुवसंपुटितैर्वर्णैर्दशभिश्च नमोयुतै: । दशाङ्गुलिषु विन्यस्येत् त्रिपर्वव्याप्तितो बुध: ॥२०॥
दक्षिणाङ्गुष्ठमारभ्य वामाङ्गुष्ठावधि न्यसेत्। हस्तगा सृष्टिराख्याता युग्माङ्गुष्ठादिका स्थिति: ॥२१॥
वामाङ्गुष्ठादिको न्यासो दक्षाङ्गुष्ठावधिर्भवेत्। संहारो मुनिभि: प्रोक्त: करन्यासत्रयं त्विदम् ॥२२॥
करयुगे दशाङ्गं च पञ्चाङ्गं पूर्ववन्न्यसेत्। मन्त्रसंपुटितैर्वर्णैर्मातृकाया न्यसेत् तत: ॥२३॥
दशतत्त्वानि विन्यस्येन्मन्त्रवर्णै: सह क्रमात्। अनुलोमेन मन्त्रार्णान् संहारो योजयेद् बुध: ॥२४॥
मन्त्रवर्णांस्तथा सृष्टौ प्रतिलोमेन योजयेत्। उद्धार: पूर्ववज् ज्ञेयो न्यासं वच्मि तु सांप्रतम् ॥२५॥
पृथिवीजलतेजांसि वायुराकाशकं तथा। अहंकारो महत्तत्त्वं प्रकृति: पुरुष: पर: ॥२६॥
नामानि दशतत्त्वानां स्थानेष्वेषु प्रविन्यसेत्। पादयुग्मे शिवे वक्षोमुखयोर्मस्तके न्यसेत् ॥२७॥
तत्त्वयुग्मं ततो मध्ये सर्वाङ्गे तत् त्रयं न्यसेत्। तद्विपर्ययतो न्यासो गुप्तस्तत्त्वदशात्मक: ॥२८॥
सर्वगोपालमन्त्रेषु विहित: शीघ्रसिद्धये। मस्तकादि तु पादान्तं कराभ्यां व्यापकं न्यसेत् ॥२९॥
वेदादिपुटितं मन्त्रं त्रिवारं मन्त्रवित्तम: । मस्तके नयने कर्णनासिकाननहृत्सु च ॥३०॥
तुन्दान्धुजानुपादेषु मन्त्रार्णान् विन्यसेत् क्रमात्। सृष्टिन्यासस्त्वयं प्रोक्त: स्थितिन्यासं समाचरेत् ॥३१॥
हृदयादिमुखान्तोऽसौ सृष्टेस्तु विपरीतक: । संहार: कथितो न्यास एवं न्यासत्रयं भवेत् ॥३२॥
मूलाधारे ध्वजे नाभौ हृदयेऽथ गले मुखे। अंसयोरूरुयुग्मे च न्यास एक: प्रकीर्तित: ॥३३॥
स्कन्धदेशे च नाभौ च कुक्षौ हृदि कुचे तथा। पार्श्वयुग्मे च पृष्ठे च श्रोणियुग्मे द्वितीयक: ॥३४॥

मस्तकाननयोरक्ष्णोः कर्णयोर्नासिकाद्वये । गण्डयोश्च तृतीयः स्याद् दक्षहस्तस्य सन्धिषु ॥३५॥
तदग्राङ्गुलिषु प्रोक्तश्चतुर्थो न्यास उत्तमः । इत्थं वामकरे दक्षवामयोः पादयोरपि ॥३६॥
न्यासत्रयं समाख्यातं मस्तके तदनन्तरम् । तत्पूर्वादिषु दिग्भागेषु संपूर्णे शिरस्यथ ॥३७॥
बाहुयुग्मे सक्थियुग्मेऽथाष्टमः परिकीर्तितः । मस्तके नयने चास्ये कण्ठे हृदि च तुन्दके ॥३८॥
मूलाधारे च लिङ्गे च जानुनि प्रपदे पुनः । नवमो न्यास आख्यातः कर्णयोर्गण्डयोस्तथा ॥३९॥
अंसयोः स्तनयोः पार्श्वयोः स्फिचोश्चोरुयुग्मके । जानुनोर्जङ्घयोरङ्घ्र्योर्दशमो न्यास ईरितः ॥४०॥
एषु स्थानेषु मन्त्रार्णान् न्यसेन्मन्त्री मुहुर्मुहुः । विभूतिपञ्जरन्यासो दशावृत्तिमयो मनोः ॥४१॥
आयुरारोग्यधर्मार्थकीर्तिकान्त्यादिकारकः । नरनारीनरेन्द्राणां वश्यकर्मणि शस्यते ॥४२॥
भुक्तिदो मुक्तिदो भक्तिप्रदो विष्णोः पदाम्बुजे । कुर्यान्मन्त्री ततो न्यासं पूर्ववन्मूर्तिपञ्जरम् ॥४३॥
पुनः सृष्टिस्थितिन्यासं दशाङ्गन्यासमाचरेत् । पञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा च मुन्यादिन्यासमाचरेत् ॥४४॥
वक्ष्यमाणास्ततो मुद्रा दर्शयेद्भावतत्परः । एवं कृत्वा विधानेन मन्त्री मन्त्रकलेवरम् ॥४५॥
विश्वोत्पत्तिस्थितिध्वंसनिधानं त्वादिवर्जितम् । त्रय्यन्ते बोधितं नित्यं कृष्णं ध्यायेज्जगत्पतिम् ॥४६॥
पूर्वं वृन्दावनं रम्यं स्मरेन्मन्त्री सुसंयतः । नानाकुसुमसंशोभि पुष्पप्रचयशालिभिः ॥४७॥
नवीनपल्लवोद्रेकफलसंपत्तिभिस्तथा । लसद्विशिष्टसच्छाखाशालीभिः सर्वतो वृतम् ॥४८॥
निर्गच्छन्मञ्जरीसंघलतासंहतिसेवितम् । (भ्रमरोत्तमसंघैश्च गुञ्जद्भिर्मुखरीकृतम्)॥४९॥
मधुपैः कृतझङ्कारैः पक्षिभिश्च सुखावहम् । कीरव्रजगिरा व्याप्तं पारावतरुताकुलम् ॥५०॥
कोकिलप्रमुखानां च सुनादैर्व्याप्तदिङ्मुखम् । नृत्यन्मयूरसंघातसेवितं च दिवानिशम् ॥५१॥
वायुभिर्विकचत्पद्ममध्यकिञ्जल्कसङ्गिभिः । पुष्पान्तरान्तरुद्धूतरजोभिश्च सुवासितैः ॥५२॥
आदित्यतनयायाश्च लहरीकणशीतलैः । मन्मथानलसन्दीप्तवल्लवीचीरकम्पनैः ॥५३॥
सर्वदाध्युषितं सम्यगस्मिन् कल्पतरुं स्मरेत् । नूतनान् पल्लवांस्तस्य वैद्रुमांस्तदनन्तरम् ॥५४॥
पत्रजालं मारकतं प्रसूनकलिका अपि । वज्रमुक्तादिकांश्चैव पद्मरागफलोज्ज्वलम् ॥५५॥
ऋतुभिः सेवितं सर्वैरेकदाभीष्टसिद्धिदम् । स्वर्णशाखाग्रसंयुक्तं महोच्छ्रायशिखान्वितम् ॥५६॥
दिव्यामृतौघवर्षेण स्रवन्तं विश्वमञ्जसा । उद्यत्प्रद्योतनप्रख्यामधोऽस्य वरमेदिनीम् ॥५७॥
ज्वलद्रत्नसमाबद्धां पुष्परेणुविभूषिताम् । षडूर्मिरहितां मन्त्री चिन्तयेदिष्टसिद्धये ॥५८॥
माणिक्यकुट्टिमं तत्र योगपीठं विचिन्तयेत् । पद्ममष्टदलं तत्र यथोक्तं रक्तवर्णकम् ॥५९॥
तस्य मध्ये सुखासीनं कृष्णं ध्यायेदनन्यधीः । उद्यदादित्यसङ्काशं प्रसन्नवदनं विभुम् ॥६०॥
इन्द्रनीलमणिप्रख्यस्निग्धदीर्घशिरोरुहम् । मायूरेण सुपिच्छेन राजमानोत्तमाङ्गकम् ॥६१॥
भ्रमराक्रान्तकल्पद्रुपुष्पसंशोभिमस्तकम् । संफुल्लनूतनोत्पन्नकर्णपूरीकृतोत्पलम् ॥६२॥
कुटिलालकविभ्राजल्ललाटमृदुपट्टिकम् । गोरोचनासमासक्ततिलकं चोन्नतभ्रुवम् ॥६३॥
अकलङ्कशरद्राकाचन्द्रबिम्बाद्भुताननम् । कुशेशयदलाकारसुन्दरायतलोचनम् ॥६४॥
अनर्घमणिसन्दीप्तमकराकारकुण्डलम् । कपोलस्थललावण्यविजितस्वच्छदर्पणम् ॥६५॥
अगस्त्यकुसुमाकाराद्भुतोन्नतसुनासिकम् । जितविद्रुमसौन्दर्यपक्वबिम्बफलाधरम् ॥६६॥
दाडिमीबीजसंकाशदन्तपङ्क्तिविराजितम् । धवलीकृतदिक्चक्रमीषद्धास्यद्विजांशुना ॥६७॥
आरण्यपल्लवैः पुष्पैः कृतग्रैवेयसंपदम् । अतिरम्यत्रिरेखाङ्कम्बुसुन्दरकन्धरम् ॥६८॥
मधुलोलुपभृङ्गालीसङ्गतैश्च सुगन्धिभिः । अम्लानैः कल्पवृक्षस्य प्रसूनप्रचयैः शुभैः ॥६९॥
कृतदामलसत्स्कन्धं मुक्ताहारविभूषितम् । कौस्तुभप्रभया दीप्तविशालोन्नतवक्षसम् ॥७०॥

श्रीवत्साङ्काङ्कितोरस्कमुन्नतस्कन्धशालिनम् । महापरिघसङ्काशजानुलम्बिमहाभुजम् ॥७१॥
वलित्रितयसंशोभिकिञ्चिद्बन्धुरितोदरम् । दक्षिणावर्तसंयुक्तनाभीपल्वलमण्डितम् ॥७२॥
षट्पदप्रमदापंक्तिशोभिरोमावलीभुवम् । अनेकरत्नसंबद्धवलयाङ्गदमुद्रिकम् ॥७३॥
ग्रैवेयौदरिकाबन्धतुलाकोटिसुमण्डितम् । क्षुद्रघण्टिकया बद्धकटिदेशविभूषितम् ॥७४॥
दिव्योत्तमाङ्गलेपेन भूषिताशेषगात्रकम् । पीताम्बरधरं सम्यगूरुजानुमनोहरम् ॥७५॥
मयूरगलसङ्काशजङ्घायुगलमण्डितम् । लसत्प्रपदशोभाभिर्निरस्तकच्छपश्रियम् ॥७६॥
माणिक्यमुकुराकारनखराजिविराजितम् । सुष्ठुशोणाङ्गुलीपत्रविकासिचरणाम्बुजम् ॥७७॥
चक्रशङ्खलसत्पद्मसीराङ्कुशगदादिभि: । कुलिशप्रमुखैश्चिह्नैरङ्कितारक्तपत्तलम् ॥७८॥
सौन्दर्यनिधिसंभाररचितं विलसच्छ्रिया । सम्यग्विजितकन्दर्पगात्रशोभामनोहरम् ॥७९॥
मुखाम्बुजसमासक्तवंशच्छिद्रार्पिताङ्गुलिम् । तदुत्थदिव्यसद्रागश्रवणाहृतमानसम् ॥८०॥
अपाङ्गै: प्राणिजातं तु मोहयन्तमनारतम् । परमानन्दसन्दोहसंपूर्णीकृतमानसम् ॥८१॥
मुखपद्मसमासक्तस्वान्तनेत्राभिरावृतम् । गोभिरूधोभराक्रान्तमन्दयानाभिरेव च ॥८२॥
कवलीकृतसंत्यक्तघासलेशाभिरप्यथ । भूमिस्पृष्टमहास्थूलवालधीभिर्निरन्तरम् ॥८३॥
प्रस्नुतस्तनपानेन संभृताननिर्गतै: । डिण्डीरपिण्डसंयुक्तै: दुग्धैर्दृष्टिमनोहरै: ॥८४॥
वंशवादनसङ्गीतगीताकर्णनलालसै: । उत्तम्भितीकृतश्रोत्रपुटयुग्मैश्च तर्णकै: ॥८५॥
किंविषाणाङ्कुरोद्भूतिजातकण्डूतिमस्तकै: । परस्परविमर्दार्थं खुरघृष्टमहीतलै: ॥८६॥
स्निग्धैर्गुरुभिरुत्पुच्छै: सुशोभिगलकम्बलै: । वत्सवत्सीसमूहैश्च संवृतं तदनन्तरम् ॥८७॥
कृतहुंभाशब्दजालैर्गुरुदीर्घककुद्वरै: । उच्चकर्णपुटापीतवेणुशब्दसुधारसै: ॥८८॥
कृतौद्धत्यैर्वृषैर्वीतं महाविवृतनासिकै: । विद्यास्वभाववर्णादिक्रीडनेपथ्यधारणै: ॥८९॥
समानतां गतैर्गोपैवर्य:साम्ययुतैरपि । वंशवादनशीलैश्च रम्यरागकृतश्रमै: ॥९०॥
वल्लकीकांस्यतालादिधृतसारसमस्वरै: । वलद्बाहुलताक्षेपं नृत्यद्भिर्भावगर्भितम् ॥९१॥
जङ्घिकाकटिदेशेषु किङ्किणीजालमण्डितै: । इतस्ततश्चलद्भिश्च मञ्जुभाषणतत्परै: ॥९२॥
मधुराकृतिभिर्बालैरस्पष्टाद्भुतभाषणै: । शार्दूलनखसंक्लृप्तगलाकल्पैर्वृतं तथा ॥९३॥

ततो गोपपुरन्ध्रीणां स्मरेद् वृन्दं समाहित: ।

तद्वंशहृद्यस्वनधीररागनि:ष्यन्दपीयूषरसावसेकात् ।
सञ्जातबोधाङ्गजभूरुहस्य श्रीकोरकाकारविशिष्टरूढै: ॥९४॥
रोमोद्गमैर्भूषितदेहकानां तन्मन्दहासामृतमानसानाम् ।
संपर्कतो वृद्धसुरागवाचां रागैस्तरङ्गैरिव रागवार्द्धे: ॥९५॥
प्रस्वेदजालै: समतां गतैस्तै: संभूषिताशेषशरीरकाणाम् ।
तद् भ्रूधनु:प्रेरिततीक्ष्णदृष्टि-पञ्चेषुपञ्चेषुसमूलवर्षै: ॥९६॥
संभिन्नबन्धाच्छिथिलीकृताङ्गसञ्जातकम्पाद्भुतवेदनानाम् ।
तद्गात्रलावण्यसुधारसौघपाने सतृष्णेक्षणपङ्कजानाम् ॥९७॥
सस्नेहसालस्यवलत्सुरम्यसाह्लादभावाद्भुतलोचनानाम् ।
धम्मिल्लशैथिल्यवशात् पतत्सु प्रफुल्लपुष्पेषु परागलुब्धै: ॥९८॥
धीरं सुगुञ्जद्भिरनेकभृङ्गैरासादितानां मधुराकृतीनाम् ।
मनोजवेगोन्मदमानसानां मदस्खलद्वाग्विभवाद्भुतानाम् ॥९९॥
शैथिल्यसंजातसुनीविकानां श्रोणीभरैर्दृष्टिपथं गतानाम् ।

मृदुस्खलितपादाब्जधीररम्यगतैरपि । मुखरीकृतदिक्कानां चरणामृतशब्दतः ॥१००॥
निमीलन्नेत्रपद्मानां चलदोष्ठयुजां मुहुः । ओष्ठम्लानिं वहन्तीनां दीर्घनिःश्वासयोगतः ॥१०१॥
अनेकप्राभृतासक्तहस्तपद्मयुजां तथा । पङ्क्तिभिर्वेष्टितं सम्यक् पूर्वतश्च ततो बहिः ॥१०२॥
एतासां नेत्रपद्मानां मालाभिर्भूषिताङ्गकम् । महानन्दनिभं सर्वविलासभुवनं प्रभुम् ॥१०३॥
वल्लवीवल्लवगवां देववृन्दं बहिः स्मरेत् । संमुखे देवदेवस्य काङ्क्षन्तं धनसञ्चयम् ॥१०४॥
ब्रह्मेशाखण्डलश्रेष्ठं स्तुतिं कुर्वाणमादरात् । ऋषिसङ्घं तथा दक्षे वेदाध्ययनतत्परम् ॥१०५॥
धर्मार्थिनः स्मरेत्पश्चात् सनकप्रमुखांस्तथा । योगीन्द्रान् ध्याननिष्ठांस्तान् निःश्रेयसफलार्थिनः ॥१०६॥
सस्त्रीकान् वामभागे च यक्षगन्धर्वकिन्नरान् । सिद्धविद्याधरांश्चापि चारणान् साप्सरोगणान् ॥१०७॥
गीतनर्तनवाद्यादीन् कुर्वतः कामतत्परान् । चन्द्रकर्पूरकुन्दाभं काशपुष्पनिभं मुनिम् ॥१०८॥
मन्त्रतन्त्रप्रवक्तारं विद्युद्दामसदृग् जटम् । विष्णुपादाम्बुजद्वन्द्वे भक्तिमिच्छन्तमद्वयम् ॥१०९॥
त्यक्तान्यसर्वसङ्गं तं वेदवेदार्थपारगम् । अनेकश्रुतिसंपन्नसप्तरागसमन्वितम् ॥११०॥
ग्रामत्रयीसमासक्तमूर्च्छनाभिर्यथाविधि । सम्यग्जाताभिरारागाद् गायन्तं कृष्णवेणुकम् ॥१११॥
आकाशे नारदं ध्यायेन्मुनिवर्यं गतस्मयम् । ध्यात्वैवं परमात्मानं नन्दपुत्रं विशालधीः ॥११२॥
यजेत् पूर्वोदिते पीठे वैष्णवे नवशक्तिके । पूर्वमर्घ्यादिभिर्मन्त्री मानसैरुपचारकैः ॥११३॥
सर्वैः पूज्यतमं कृष्णमिष्ट्वा भक्तिपरायणः । स्वीये देहमये पीठे भगवन्तं पुरोक्तवत् ॥११४॥
ततो बहिःस्थितैर्द्रव्यैः पूजयेत् साधकोत्तमः । तत्साधनविधिः सम्यक् प्रोच्यते मन्त्रसिद्धिदः ॥११५॥
मूलमन्त्रेण मन्त्रज्ञो मूर्तिमस्य प्रकल्पयेत् । तत्रावाह्य यजेद् देवं सर्वावरणसंयुतम् ॥११६॥
आसनादिविभूषान्तान् उपचारान् प्रकल्प्य तु । न्यासोक्तक्रमतः पश्चाद् गन्धाद्यैर्देवमर्चयेत् ॥११७॥
सृष्ट्या स्थित्या च संपूज्या पञ्चाङ्गं च दशाङ्गकम् । वेणुं प्रपूजयेत्पश्चाद् वनमालामनन्तरम् ॥११८॥
श्रीवत्सं कौस्तुभं मन्त्री देहे कृष्णस्य पूजयेत् । मूलेन चात्मपूजादावावृतीः पूजयेत्ततः ॥११९॥
कर्णिकायां चतुर्दिक्षु देवस्य परितोऽर्चयेत् । दामं सुदामनामानं वसुदामं च किङ्किणीम् ॥१२०॥

चकाराच्चतुर्थोऽपि दामशब्दान्तः। 'वसुदामं समभ्यर्च्य किङ्किणीदाममर्चयेत्' इति त्रैलोक्यसंमोहनतन्त्र-वचनात्।

तेजोरूपधरा ह्येते केसरेष्वङ्गपूजनम् । रुक्मिणीप्रमुखा ह्यष्टौ पत्रेषु महिषीर्यजेत् ॥१२१॥
कमलं चार्घ्यपात्रं च करयोर्दक्षिणान्ययोः । बिभ्रतीर्दिव्यशुक्लाभवस्त्रलेपादिभिर्युताः ॥१२२॥
रुक्मिणीसत्यभामे द्वे नाग्निजित्यपरा मता । सुनन्दा मित्रविन्दा चापरा चापि सुलक्ष्मणा ॥१२३॥
सुशीलान्या जाम्बवती स्वर्णमारकतप्रभाः । द्विश एवं क्रमाज् ज्ञेयाः सर्वा एता मनीषिभिः ॥१२४॥
स्तनभारनता नानारत्नजालविभूषणाः । पत्राग्रेषु ततः पूज्या वसुदेवश्च देवकी ॥१२५॥
नन्दगोपो यशोदा च बलभद्रः सुभद्रिका । गोपाला गोपिकाः कृष्णमुखासक्तहृदीक्षणाः ॥१२६॥
स्वर्णाभो वसुदेवस्तु शुक्लो नन्दः प्रकीर्तितः । ज्ञानमुद्रां धारयन्तौ दक्षे वामेऽभयं तथा ॥१२७॥
दिव्यवस्त्रानुलेपादिपुष्पालङ्कारसंयुते । रक्तश्यामनिभे तद्वन्मातरौ दक्षिणे करे ॥१२८॥
वरं वामे वहन्त्यौ तु पात्रे च पायसामृतम् । मुक्ताहारधरे रत्नकुण्डलादिविभूषिते ॥१२९॥
बलभद्रस्तु कुन्दाभो मुसली हलसंयुतः । नीलाम्बरो मदोन्मत्तश्चञ्चलश्चैककुण्डलः ॥१३०॥
श्यामा तन्वी सुभद्राख्या चारुभूषणभूषिता । पीताम्बरा च युवती बिभ्राणा वरदाभये ॥१३१॥
गोपाला वंशवीणादिदलशृङ्गलसत्कराः । नानोपायनहस्ताब्जा गोपपत्न्यः सुभूषिताः ॥१३२॥
तद्बहिः पञ्च संपूज्याः कल्पवृक्षा इमे बुधैः । मन्दारः प्रथमो ज्ञेयः सन्तानस्तदनन्तरम् ॥१३३॥

पारिजाताह्वयः पश्चात् कल्पवृक्ष इतीरितः । हरिचन्दननामा तु मध्ये दिक्षु च संस्थिताः ॥१३४॥
दीर्घनमबृहच्छाखाः साधकेष्टफलप्रदाः । (तद्बाह्ये लोकपालांस्तु वज्रादीन् पूजयेत्ततः ॥१३५॥
आवृतीरित्थमभ्यर्च्य गन्धपुष्पे निवेद्य च । धूपदीपौ समर्प्याथ नैवेद्यं च निवेदयेत् ॥१३६॥)
पूर्वोक्तविधिना सम्यक् संस्कृतं भक्तितत्परः । शर्करादधिसंयुक्तं सघृतं गोपयो हविः ॥१३७॥
नारिकेलगुडापूपनवनीतसितोपलम् । मोचाफलं सोपदंशं सक्षौद्रं रुचिरं शुचिः ॥१३८॥
ततः संकल्प्य नैवेद्यं ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य च । प्राणादिपञ्चवायूनां मुद्रा दक्षेण दर्शयेत् ॥१३९॥
अङ्गुष्ठाभ्यामनामे द्वे स्पृष्ट्वा पाणितलद्वये । नैवेद्यस्य ततो मुद्रां दर्शयेन्मन्त्रमुच्चरन् ॥१४०॥
लाङ्गलीजलसद्यान्तशिरोभिः सहितो नतिः । परायेति समुच्चार्य ब्रह्मात्मपदमुच्चरेत् ॥१४१॥
नेऽनिरुद्धं चतुर्थ्यन्तं निवेद्यं कल्पया-पदम् । निवेद्यदानमन्त्रोऽयं म्यन्तो विंशतिवर्णकः ॥१४२॥

लाङ्गली ठकारः। जलं व। सद्यान्त औ। शिरो बिन्दुः एतैः ठ्वौं इति। नतिर्नमः। पराय स्वरूपं। ब्रह्मात्म स्वरूपं। नेऽनिरुद्धं चतुर्थ्यन्तं तेन नेऽनिरुद्धाय। निवेद्यं स्वरूपं। कल्पया स्वरूपं। म्यन्तो मि—इत्यक्षरान्तस्तेन कल्पयामि।

तथा—

समर्प्यैवं निवेद्यं हि कुर्यादन्यत् पुरोक्तवत् । ततश्चन्दनपङ्केन स्वीयदेहं विभूषयेत् ॥१४३॥
मूलमन्त्रेण मन्त्रज्ञो मूर्तिपञ्जरमन्त्रकैः । ललाटादिषु कुर्वीत तिलकानि ह्यनामया ॥१४४॥
कुर्यात् पुष्पाञ्जलीन् पञ्च तुलसीपुष्पतो बुधः । मूलमन्त्रं समुच्चार्य पादपद्मद्वये विभोः ॥१४५॥
करवीरद्वयेनाथ मध्यदेहे प्रकल्पयेत् । अम्भोजयुग्मतः पश्चादुत्तमाङ्गे निवेदयेत् ॥१४६॥
एभिः सर्वैः सर्वगात्रे तावतः कुसुमाञ्जलीन् । देवस्य दक्षिणे दद्याच्छुक्लपुष्पाणि मन्त्रवित् ॥१४७॥
रक्तपुष्पाणि वामे तच्छ्वेतरक्तपटीरकैः । सप्तावरणसंयुक्तमित्थं कृष्णस्य पूजनम् ॥१४८॥
सर्वसंपत्करं पुंसां भोगमोक्षफलप्रदम् । अङ्गैरिन्द्रादिभिर्वज्रप्रमुखैरावृतित्रयम् ॥१४९॥
पूजयेदथवा ह्येवं संक्षेपात् साधकोत्तमः । एवं गन्धादिभिः सम्यक् पूजयित्वा विधानवित् ॥१५०॥
अष्टौ कृष्णान् यजेत् पश्चात् सुगन्धिकुसुमादिभिः । कृष्णश्च वासुदेवश्च नारायण इतीरितः ॥१५१॥
देवकीनन्दनश्चाथ यदुश्रेष्ठस्ततः परम् । वार्ष्णेयश्चासुरक्रान्तभारहारी ततो भवेत् ॥१५२॥
धर्मसंस्थापकस्त्वन्यो ङेनमोन्ता ध्रुवादिकाः । एतैरेव विधातव्या कृष्णार्चाप्यथवा बुधैः ॥१५३॥
भवाब्धेः पारमिच्छद्भिः सर्वसंपत्तिसिद्धये । मूलमन्त्रं यथाशक्ति जपित्वा तं जपं बुधः॥१५४॥
समर्पयेदर्घ्यजलैर्गन्धपुष्पाक्षतान्वितैः । ततो नानाविधैः स्तोत्रैः स्तुत्वा देवं विशालधीः ॥१५५॥
प्रणम्यान्तर्हृदम्भोजमुद्वास्य प्रजपेत् ततः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे विराट्छन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। (गुह्ये क्लींबीजाय०। पादयोः स्वाहाशक्तये०। सर्वाङ्गे कृष्णाय प्रकृतये नमः। हृदि श्रीदुर्गायै अधिष्ठात्र्यै देवतायै नमः)। इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, मूलमन्त्रेण करयोर्व्यापकं कृत्वा, आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं करयोर्विन्यस्य, हृदयादिकवचान्तं देहे चाङ्गचतुष्टयं विन्यस्यास्त्रमन्त्रेण तालत्रयं दशदिग्बन्धनं च कृत्वा, हृदि गोंनमः। शिरसि पींनमः। शिखायां जंनमः। कवचस्थाने नंनमः। अस्त्रस्थाने वंनमः। दक्षपार्श्वे ल्लंनमः। वामे भांनमः। कट्यां यंनमः। पृष्ठे स्वांनमः। मूर्ध्नि हांनमः। ततो गोपीजनवल्लभाय स्वाहा इति करतलयोः पृष्ठयोः करपार्श्वयोश्च प्रत्येकं मन्त्रमुच्चरन् व्यापकं कृत्वा, वामाङ्गुष्ठे

ॐगोंॐ नमः। तर्जन्यां ॐपींॐनमः। मध्यमायां ॐजंॐ नमः। अनामायां ॐनंॐनमः। कनिष्ठिकायां ॐवंॐनमः। दक्षकनिष्ठिकायां ॐल्लंॐनमः। अनामायां ॐभांॐनमः। मध्यमायां ॐयंॐनमः। तर्जन्यां ॐस्वांॐनमः। अङ्गुष्ठे ॐहांॐ नमः। इति संहारेण प्रथमं विन्यस्य, पुनर्दक्षाङ्गुष्ठादिवामाङ्गुष्ठपर्यन्तं दशवर्णानुक्तप्रकारेण सृष्ट्या विन्यस्य, अङ्गुष्ठद्वयमारभ्य दक्षवामक्रमेण कनिष्ठाद्वयपर्यन्तं स्थित्या, वामाङ्गुष्ठमारभ्य दक्षाङ्गुष्ठान्तं संहृत्या सबिन्दुविसर्गान् विन्यस्य, कराङ्गुलिषु(ष्ठादि)दशाङ्गं पञ्चाङ्गं च प्राग्वद्विन्यस्य मूलमुच्चार्य, अं पुनर्वैपरीत्येन मूलं नमः। मूलं० पुनः आं विपरीतं मूलं नमः। इत्यादियुक्त्या मातृकां विन्यस्य, (१) पादयोः गोंनमः पराय पृथिवी-तत्त्वात्मने नमः।लिङ्गे पींनमः पराय अप्तत्त्वात्मने नमः। वक्षसि जंनमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः। मुखे नंनमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः। शिरसि वंनमः परायाकाशतत्त्वत्मने नमः। हृदि ल्लंनमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः। भांनमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। सर्वाङ्गे यंनमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। स्वांनमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः। हांनमः पराय परतत्त्वात्मने नमः। (२) सर्वाङ्गे हांनमः पराय परतत्त्वात्मने नमः। स्वांनमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः। यंनमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। हृदि भांनमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। ल्लंनमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः। शिरसि वंनमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः। मुखे नंनमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः। वक्षसि जंनमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः। लिङ्गे पींनमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः। पादयोः गोंनमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः। इति तत्त्वानि विन्यस्य, ततः प्रणवपुटितमूलेन मस्तकादिपादान्तं त्रिर्व्यापकं विन्यस्य, (३) पादयोः गोंनमः। जानुनोः पींनमः। लिङ्गे जंनमः। जठरे नंनमः। हृदि वंनमः। मुखे ल्लंनमः। नासायां भांनमः। कर्णयोः यंनमः। नेत्रयोः स्वांनमः। शिरसि हांनमः। (४) शिरसि गों०। नेत्रयोः पीं०। कर्णयोः जं०। नासायां नं०। मुखे वं०। हृदि ल्लं०। जठरे भां०। लिङ्गे यं०। जानुनोः स्वां०। पादयोः हांनमः। (५) हृदि गोंनमः। उदरे पीं०। लिङ्गे जं०। जानुनोः नं०। पादयोः वं०। शिरसि ल्लं०। नेत्रयोः भां०। कर्णयोः यं०। नासायां स्वां०। मुखे हां०। (१) मूलाधारे गोंनमः। लिङ्गे पीं०। नाभौ जं०। हृदि नं०। गले वं०। मुखे ल्लं०। दक्षांसे भां०। वामे यं०। दक्षोरौ स्वां०। वामोरौ हां०। (२) स्कन्धयोः गोंनमः। नाभौ पीं०। कुक्षौ जं०। हृदि नं०। कुचद्वये वं०। दक्षपार्श्वे ल्लं०। वामपार्श्वे भां०। पृष्ठे यं०। दक्षश्रोण्यां स्वां०। वामे हांनमः। (३) मस्तके गोंनमः। मुखे पीं०। दक्षनेत्रे जं०। वामे नं०। दक्षकर्णे वं०। वामे ल्लं०। दक्षनसि भां०। वामे यं०। दक्षगण्डे स्वां०। वामे हांनमः। (४) दक्षदोर्मूले गोंनमः। तन्मध्ये पीं०। मणिबन्धे जं०। अङ्गुलिमूले नं०। अग्रे वं०। अङ्गुष्ठे ल्लं०। तर्जन्यां भां०। मध्यमायां यं०। अनामायां स्वां०। कनिष्ठायां हांनमः। (५) एवं वामबाहुमूले इत्यादि। (६) दक्षोरुमूले गौनमः। जानुनि पीं०। गुल्फे जं०। अङ्गुलिमूले नं०। तदग्रे वं०। अङ्गुष्ठे ल्लं०। तर्जन्यां भां०। मध्यमायां यं०। अनामायां स्वां०। कनिष्ठायां हांनमः। (७) एवं वामोरुमूले इत्यादि। (८) शिरसि गोंनमः। तत्पूर्वभागे पीं०। तद्दक्षे जं०। तत्पृष्ठे नं०। तद्वामे वं०। सर्वशिरसि ल्लं। दक्षबाहौ भां०। वामे यं०। दक्षसक्थनि स्वां०। वामे हांनमः। (९) मस्तके गोंनमः। नयने पीं०। मुखे जं०। कण्ठे नं०। हृदि वं०। उदरे ल्लं०। मूलाधारे भां०। लिङ्गे यं०। जानुनोः स्वां०। प्रपदयोः हांनमः। (१०) कर्णयोः गोंनमः। गण्डयोः पीं०। अंसयोः जं०। स्तनयोः नं०। पार्श्वयोः वं०। स्फिचोः ल्लं०। ऊर्वोः भां०। जानुनोः यं०। जङ्घयोः स्वां०। पादयोः हांनमः। ततः पूर्वोक्तं मूर्तिपञ्जरन्यासं कृत्वा पुनः सृष्टिस्थितिन्यासौ दशाङ्गपञ्चाङ्गन्यासौ ऋष्यादिन्यासं च कृत्वा मुद्राविरचनादि (पाद्यादिपात्रस्थापनान्ते स्वात्मानं गन्धाद्यैरलंकृत्य मूर्तिपञ्जरन्यासक्रमेण ललाटादिद्वादश-स्थानेष्वनामया तिलकानि कृत्वा शेषं पूर्ववत् विधाय पीठपूजादि) पुष्पोपचारान्ते देवस्य देहे न्यासोक्तस्थानेषु सृष्टिस्थितिन्यासक्रमेण दशाङ्गानि पञ्चाङ्गानि च संपूज्य, मुखे वेणवे नमः। स्कन्धयोः वनमालायै नमः। वक्षसि श्रीवत्साय नमः। गले कौस्तुभाय नमः। ततो विभूतिपञ्जरन्यासक्रमेण देवस्य देहे संपूज्य, कर्णिकायां देवादिप्रादक्षिण्येन ॐदामाय नमः। ॐसुदामाय०। ॐवसुदामाय०। ॐकिङ्किणीदामाय०। केसरेषु पञ्चाङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु देवाग्रादि रुक्मिण्यै नमः। सत्यभामायै०। नाग्नजित्यै०। सुनन्दायै०। मित्रविन्दायै०। सुलक्ष्मणायै०। सुशीलायै०।

जाम्बवत्यै०। दलाग्रेषु—वसुदेवाय नमः। देवक्यै०। नन्दगोपाय०। यशोदायै०। बलभद्राय०। सुभद्रायै०। गोपालेभ्यो०। गोपिकाभ्यो नमः। पद्ममध्ये—मन्दाराय नमः। पद्माद्बहिर्देवाग्रे—सन्तानाय नमः। पारिजाताय०। कल्पवृक्षाय०। हरिचन्दनाय नमः। इति प्रादक्षिण्येन देवाग्रादितः चतुर्दिक्षु संपूज्य, लोकपालान् वज्रादीनि च समभ्यर्च्य, धूपदीपौ समर्प्य (देवस्य पुरतः प्राग्वन्नैवेद्यं निधाय संस्कृत्य पाद्याचमनीये दत्त्वा, देवं गन्धादिभिः संपूज्यापोशानं दत्त्वा ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य) प्राणादिपञ्चमुद्रास्तत्तन्मन्त्रेण प्रदर्श्य, करद्वयेन नैवेद्यमुद्रां बद्ध्वा 'ॐनमः पराय ब्रह्मात्मनेऽनिरुद्धाय निवेद्यं कल्पयामि' इति नैवेद्यं समर्प्य, तत्कालं ध्यानादिप्रसन्नार्चान्ते मूलमुच्चार्य 'श्रीकृष्णाय नमः' इति देवस्य चरणयोः शुक्लकृष्णैस्तुलसीदलैः पञ्चधा संपूज्य, देवस्य हृदये पञ्चधा श्वेतरक्तकरवीरपुष्पैः, देवस्य शिरसि पञ्चधा सितरक्तपद्मैर्देवस्य सर्वगात्रे श्वेतकृष्णतुलसीभिः श्वेतरक्तकमलैः श्वेतरक्तकरवीरैरन्यैश्च पञ्च पुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा, पुनर्मूलमुच्चार्य श्रीकृष्णाय नमः। एवं श्रीवासुदेवाय०। श्रीनाराणाय०। श्रीदेवकीनन्दनाय०। श्रीयदुश्रेष्ठाय०। श्रीवार्ष्णेयाय०। श्रीअसुराक्रान्तभूभारहारिणे०। श्रीधर्मसंस्थापकाय नमः। इत्यष्टौ कृष्णान् संपूज्य राजोपचारादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

ध्यात्वैवं परमात्मानं नन्दपुत्रं विशालधीः। पूर्वोक्तविधिना सम्यग् दीक्षितः प्रजपेन्मनुम् ॥१५६॥
मन्त्रार्थं चिन्तयेन्मन्त्री नियमस्थो जितेन्द्रियः। चत्वारिंशत्सहस्राणि श्वेतपद्माक्षमालया ॥१५७॥
पश्चान्मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं दशलक्षं जपेत् सुधीः। लक्षं हुनेद्रक्तपुष्पैः सितासर्पिर्मधुप्लुतैः ॥१५८॥
शर्करामधुयुक्तेन हविर्द्रव्येण वा हुनेत्। तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैश्चन्द्रचन्दनवासितैः ॥१५९॥
आत्माभिषेकं कृत्वाथ भूदेवान् भोजयेत्ततः। नानाविधैर्भक्ष्यभोज्यैस्ताम्बूलैश्च सुदक्षिणैः ॥१६०॥
ततो निजगुरुं सम्यक् प्रणिपत्य यथाविधि। धनधान्याम्बराद्यैश्च वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥१६१॥
तोषयेत् परया भक्त्या निजकार्यस्य सिद्धये। ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् निजवाञ्छितान् ॥१६२॥
कुर्याद्भक्तियुतः सम्यक् नित्यनैमित्तिके रतः। इति।

प्रयोगस्त्वग्रे वक्ष्यते।

प्रातःकृत्यादि योगपीठ न्यास तक करने के पश्चात् मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदाय ऋषये नमः, मुखे विराट् छन्दसे नमः, हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः, गुह्ये क्लीं बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः, सर्वांगे कृष्णाय प्रकृतये नमः, हृदि श्री दुर्गायै अधिष्ठात्र्यै देवतायै नमः। तदनन्तर चतुर्विध पुरुषार्थ-सिद्धि के लिये हाथ जोड़कर विनियोग करे। तत्पश्चात् मूल मन्त्र से हाथों में व्यापक न्यास करे। तब इस प्रकार पञ्चाङ्ग न्यास करे—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः, विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा, सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्, त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं, असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्। पञ्चाङ्ग मन्त्रों से अंगूठे से कनिष्ठा तक अंगुलियों में न्यास करे। हृदय से कवच तक शरीर के चार अंगों में इन्हीं से न्यास करे। अस्त्र मन्त्र से तीन ताली बजाकर दशो दिशाओं का बन्धन करे। तदनन्तर मन्त्रवर्ण न्यास इस प्रकार करे—हृदय में गों नमः, शिर पर पीं नमः, शिखा में जं नमः, कवचस्थान में नं नमः, अस्त्रस्थान में वं नमः, दक्ष पार्श्व में ल्लं नमः, वाम पार्श्व में भां नमः, कमर में यं नमः, पृष्ठ में स्वां नमः, मूर्धा हां नमः। तदनन्तर गोपीजनवल्लभाय स्वाहा से क्रमशः करतल, करपृष्ठ एवं करपार्श्व में व्यापक न्यास करे।

संहार न्यास—वामांगुष्ठ में ॐ गों ॐ नमः, तर्जनी में ॐ पीं ॐ नमः, मध्यमा में ॐ जं ॐ नमः, अनामा में ॐ नं ॐ नमः, कनिष्ठा में ॐ वं ॐ नमः, दक्ष कनिष्ठिका में ॐ ल्लं ॐ नमः, अनामा में ॐ भां ॐ नमः, मध्यमा में ॐ यं ॐ नमः, तर्जनियों में ॐ स्वां ॐ नमः, अंगुष्ठ में ॐ हां ॐ नमः। यह संहार न्यास है। पुनः दाहिने अंगूठे से बाँयों अंगूठे तक दश वर्णो का न्यास उक्त प्रकार से करे। यही सृष्टि न्यास होता है। तदनन्तर दोनों अंगूठों से प्रारम्भ करके दक्ष वाम क्रम से दोनों कनिष्ठाओं तक वर्णन्यास करे। यह स्थिति न्यास कहलाता है।

तत्पश्चात् वामांगुष्ठ से दक्षांगुष्ठ तक संहतिपूर्वक बिन्दुः विसर्गसहित वर्णो से न्यास करे। कराङ्गुलियों में दशाङ्ग एवं पञ्चाङ्ग न्यास करे। मूल मन्त्र बोलकर अं विपरीतं मूलं नमः। मूल आं विपरीतं मूलं नमः। इस प्रकार से मातृकान्यास करे।

तत्त्वन्यास—१. पैरों में गों नमः परायपृथ्वी तत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः, वक्ष पर जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः, मुख में नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः, शिर पर वं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमः, हृदय में ल्लं नम पराय अहंकारतत्त्वात्मने नमः-भां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः, सर्वाङ्ग में यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः-स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः-हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः।

२. सर्वांग में हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः, स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः-यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः, हृदय में भां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः-ल्लं नमः पराय अहंकारतत्त्वात्मने नमः, शिर पर वं नमः पराय आकाश-तत्त्वात्मने नमः, मुख में नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः, वक्ष पर जं नमः पराय अग्नितत्त्वात्मने नमः, लिङ्ग में पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः, पैरों में गों नमः पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः—इस प्रकार तत्त्वन्यास करने के बाद प्रणव, सम्पुटित मूल मन्त्र से शिर से पैर तक तीन बार व्यापक न्यास करे।

३. पैरों में गों नमः, जानुओं में पीं नमः, लिङ्ग में जं नमः, जठर में नं नमः, हृदय में वं नमः, मुख में ल्लं नमः, नासिका में भां नमः, कानों में यं नमः, नेत्रों में स्वां नमः, शिर पर हां नमः।

४. शिर पर गों नमः, नेत्रों में पीं नमः, कानो में जं नमः, नासिका में नं नमः, मुख में वं नमः, हृदय में ल्लं नमः, जठर में भां नमः, लिङ्ग में यं नमः, जानुओ में स्वां नमः, पैरों में हां नमः।

५. हृदय में गों नमः, उदर में पीं नमः, लिङ्ग में जं नमः, जानुओं में नं नमः, पैरों में वं नमः, शिर पर ल्लं नमः, नेत्रों में भां नमः, कानों में यं नमः, नासिका में स्वां नमः, मुख में हां नमः।

१. मूलाधार में गों नमः, लिङ्ग में पीं नमः, नाभि में जं नमः, हृदय में नं नमः, गले में वं नमः, मुख में ल्लं नमः, दक्षांस में भां नमः, वामांस में यं नमः, दक्ष ऊरु में स्वां नमः, वाम ऊरु में हां नमः। २. स्कन्ध में गों नमः, नाभि में पीं नमः, कुक्षि में जं नमः, हृदय में नं नमः, कुचद्वय में वं नमः, दक्ष पार्श्व ल्लं नमः, वाम पार्श्व भां नमः, पृष्ठ में यं नमः, दक्ष कर्ण में स्वां नमः, वाम कर्ण में हां नमः। ३. मस्तक में गों नमः, मुख में पीं नमः, दक्ष नेत्र में जं नमः, वाम नेत्र नं नमः, दक्ष कर्ण में वं नमः, वाम में ल्लं नमः, दक्ष नासिका में भां नमः, वाम नासिका में यं नमः, दक्ष गण्ड में स्वां नमः, वाम गण्ड में हां नमः। ४. दक्ष बाहुमूल में गो नमः, मध्य में पीं नमः, मणिबन्ध में जं नमः, अंगुलिमूल में नं नमः, आगे वं नमः, अंगुष्ठ मे ल्लं नमः, तर्जनी में भां नमः, मध्यमा में यं नमः, अनामा में स्वां नमः, कनिष्ठिका में हां नमः। ५. इसी प्रकार वाम बाहुमूल इत्यादि में भी न्यास करे। ६. दक्ष ऊरुमूल में गों नमः, जानु में पीं नमः, गुल्फ में जं नमः, अंगुलिमूल में नं नमः, उसके आगे वं नमः, अंगुष्ठ में ल्लं नमः, तर्जनी में भां नमः, मध्यमा में यं नमः, अनामा में स्वां नमः, कनिष्ठा में हां नमः। ७. इसी प्रकार वाम ऊरुमूल इत्यादि में भी न्यास करे। ८. शिर पर गों नमः, उसके पूर्व भाग में पीं नमः, उसके दाँयें जं नमः, उसके पीछे नं नमः, उसके बाँयें वं नमः, समस्त मस्तक में ल्लं नमः, दक्ष बाहु में भां नमः, वाम बाहु में यं नमः, दक्ष सक्थि में स्वां नमः, वाम सक्थि में हां नमः। ९. मस्तक में गों नमः, नयन में पीं नमः, मुख में जं नमः, कण्ठ में नं नमः, हृदय में वं नमः, उदर में ल्लं नमः, मूलाधार में भां नमः, लिङ्ग में यं नमः, जानु में स्वां नमः, पैरों में हां नमः। १०. कानों में गों नमः, गालों पर पीं नमः, कंधों पर जं नमः, स्तनों पर नं नमः, पार्श्वों में वं नमः। स्फिचों में ल्लं नमः, ऊरुओं मे भां नमः, जानुओं में यं नमः, जंघाओं में स्वां नमः, पैरों में हां नमः।

इसके बाद पूर्वोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास करे। पुनः सृष्टि-स्थिति न्यास, दशांग-पञ्चाग न्यास एवं ऋष्यादि न्यास करके मुद्राविरचनादि करे। पाद्यादि पात्रस्थापन के बाद अपने को गन्धादि से अलंकृत करे। मूर्तिपञ्जर न्यास क्रम से ललाटादि बारह स्थानों में अनामिका से तिलक लगावे। शेष पूर्ववत् करने के बाद पीठपूजादि करे। पुष्पोपचार तक देव की पूजा करे। देव के देह में न्यासोत्तर स्थानों में सृष्टि-स्थिति न्यास क्रम से दशांग-पञ्चाङ्ग की पूजा करके मुखे वेणवे नमः। स्कन्धयोः वनमालायै नमः। वक्षसि श्रीवत्साय नमः। गले कौस्तुभाय नमः से पूजा करे। तब विभूतिपञ्जर न्यासक्रम से देव के देह में पूजा करके अष्टदल की कर्णिका में देवादि के प्रदक्षिण क्रम से ॐ दामाय नमः, ॐ सुदामाय नमः, ॐ वसुदामाय नमः, ॐ किङ्किणी-

दामाय नम: से पूजन करके केसर में पाँचों अंगों की पूजा करे। आठ दलों में देव के आगे से रुक्मिण्यै नम:, सत्यभामायै नम:, नाग्नजित्यै नम:, सुनन्दायै नम:, मित्रविन्दाय नम:, सुलक्ष्मणायै नम:, सुशीलायै नम:, जाम्बवत्यै नम: से पूजा करे। दलों के अग्रभाग में वसुदेवाय नम:, देवक्यै नम:, नन्दगोपाय नम:, यशोदायै नम:, बलभद्राय नम:, सुभद्रायै नम:, गोपालेभ्यो नम:, गोपिकाभ्यो नम: से पूजन करे। कमल के मध्य में मन्दाराय नम:। पद्म से बाहर देव के आगे—सन्तानाय नम:, पारिजाताय नम:, कल्पवृक्षाय नम:, हरिचन्दनाय नम: से पूजा करे। तब इन्द्रादि लोकपालों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। धूप-दीप देकर देव के सामने पूर्ववत नैवेद्य रखे। पाद्य आचनीय प्रदान करे। देव की गन्धादि से पूजा करे। आपोशन देकर ग्रास मुद्रा दिखावे। मन्त्रपूर्वक प्राणादि पञ्च मुद्रा दिखावे। दोनों हाथों से नैवेद्य मुद्रा बनाकर 'ॐ नम: पराय ब्रह्मात्मने अनिरुद्धाय निवेद्यं कल्पायामि' कहकर नैवेद्य समर्पित करे। उसी समय ध्यानादि के बाद मूल मन्त्र का उच्चारण कर श्रीकृष्णाय नम: कहकर देव के चरणों में शुक्ल-कृष्ण तुलसीदल से पाँच बार पूजा करे। देव के हृदय में उजले-लाल कनैल फूलों से पाँच बार पूजा करे। देव के शिर पर उजले-लाल कमल पाँच बार चढ़ावे। देव के सारे शरीर में श्वेत-कृष्ण तुलसी, श्वेत-रक्त कनैल और अन्य फूलों से पाँच पुष्पाञ्जलि देवे। फिर मूल मन्त्र बोलकर श्रीकृष्णाय नम:, श्रीवासुदेवाय नम:, श्रीनारायणाय नम:, श्रीदेवकीनन्दनाय नम:, श्रीयदुश्रेष्ठाय नम:, श्रीवार्ष्णेयाय नम:, श्री असुराक्रान्तभूभारहारिणे नम:, श्रीधर्मसंस्थापकाय नम:—इन आठ कृष्णों की पूजा के बाद पूर्ववत् राजोपचारादि समर्पण करे।

कृष्ण की यह पूजा सात आवरणों की होती है यह समस्त सम्पत्तिदायक एवं भोग-मोक्ष को देने वाला है। भवसागर से पार जाने के इच्छुकों को सभी सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये मूल मन्त्र का जप यथाशक्ति करना चाहिये। जप का समर्पण गन्ध-पुष्पाक्षतसमन्वित जल से करे। तब नाना प्रकार के स्तोत्रों से भगवान् की स्तुति कर उन्हें प्रणाम करके अपने हृदय कमल में उद्वास करके जप करे।

विद्वान् सम्यक् रूप से दीक्षित होकर नन्दपुत्र परमात्मा का ध्यान करके मन्त्र जप करे। नियमस्थ जितेन्द्रिय होकर मन्त्रार्थ का चिन्तन करे। श्वेत पद्माक्ष की माला से चौवालीस हजार मन्त्र जप करे। इसके बाद मन्त्रसिद्धि के लिये दश लाख जप करे। शक्कर सर्पि मधु से प्लुत लाल फूलों से हवन एक लाख करे। अथवा शक्कर, मधुयुक्त हवि द्रव्य से हवन करे। चन्दनवासित शुद्ध जल से तर्पण करे। अपना मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। नाना प्रकार के भक्ष्य-भोज्य भोजन कराकर ताम्बूल और दक्षिणा देवे। तब अपने गुरु को यथाविधि प्रणाम करके धन-धान्य-वस्त्र आदि देकर सन्तुष्ट करे। इसमें वित्तशाठ्य न करे। यह सब परा भक्ति से निज कार्य सिद्धि के लिये करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से मन्त्री अपना वांछित सिद्ध करे एवं भक्तिपूर्वक नित्य-नैमित्तिक कर्मों को करे।

श्रीकृष्णमन्त्र:

अथ श्रीकृष्णमन्त्र:। सारसंग्रहे—

अथो वदामि कृष्णस्य मन्त्ररत्नं सुगोपितम्। त्रैलोक्यख्यातसामर्थ्यं नारदाद्यैरुपासितम्॥१॥
धर्मार्थकाममोक्षार्थकरं वश्यादिसाधनम्। अज्ञानेन्धनकालाग्निं योगैश्वर्यफलप्रदम्॥२॥
अकालमृत्युसंहारि दुरदृष्टनिवारणम्। गलग्रहमहारोगभूतराक्षसनाशनम्॥३॥
संग्रामे जयदं नृणामरण्ये चाभयप्रदम्। भृत्यदासीगजाश्वादिरथधेनुधनावहम्॥४॥
क्षेत्रपुत्रकलत्रादितेज:कान्तियशस्करम्। धैर्य्यगाम्भीर्यशौर्यादिमर्यादाप्रतिभाकरम्॥५॥
ब्रह्माण्डक्षोभजनकं सिद्ध्यष्टकसमृद्धिदम्। किमत्र बहुनोक्तेन सर्वदं नात्र संशय:॥६॥
चक्री पुरन्दरारूढस्त्रिमूर्तीन्दुसमन्वित:। बीजमाद्यं भवेदेतत् क्रोधीशाधस्त्रिविक्रम:॥७॥
श्वेतो नरकजित् कान्तिर्वायु: शार्ङ्गी तु सद्ययुक्। अमृताक्षीन्दव: पश्चादत्रिर्दीर्घयुतस्तत:॥८॥
वायुर्दशाक्षरश्चाष्टादशार्णोऽयं मनूत्तम:। सत्ताभिधायक: शब्द: कृषीति समुदाहृत:॥९॥
आनन्दार्थो णकारोऽपि कृष्णस्तस्मात्तदर्थक:। कर्षणात् पापजातस्य भक्तानां कृष्ण उच्यते॥१०॥

मन्त्रात्मकशरीरस्य तद्वर्णत्वाच्च देशिकैः। गोशब्दवाचकत्वातु ज्ञानं तत्तेन लभ्यते ॥११॥
वेत्ति शब्दमशेषं वा गोविन्दो गोविचारणात्। दशार्ण एवं तुर्यार्णस्तदर्थश्चापि पूर्ववत् ॥१२॥

चक्री ककारः, पुरन्दरो लकारः, त्रिमूर्तिरीकारः, इन्दुः बिन्दुः, तैः क्लीं इति कामबीजमुद्धृतम्। क्रोधीशः ककारः। त्रिविक्रमः ऋकारः। तेन कृ। श्वेतः ष, नरकजित् णकारः। कान्तिराकारस्तेन ष्णा। वायुः यकारः। शार्ङ्गी गकारः। सद्य ओकारः। तेन गो इति। अमृतं वकारः, अक्षि इकारः, इन्दुः बिन्दुस्तेन विं। अत्रिर्दकारः, दीर्घा आकारः, तेन दा। वायुर्यकारः। दशाक्षरः पूर्वोक्तगोपालदशाक्षरः।

श्रीकृष्ण मन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब श्री कृष्ण के सुगोपित मन्त्र को कहता हूँ। इसका सामर्थ्य त्रैलोक्य में विख्यात है। नारदादि ने इसकी उपासना की है। यह धर्मार्थ-काम-मोक्ष वशीकरण आदि का साधक है। अज्ञान रूपी इन्धन के लिये कालरूपी अग्नि है। योग एवं ऐश्वर्य देने वाला है। अकाल मृत्यु को हरण करने वाला दुरदृष्ट का निवारक है। गल-ग्रह, महा रोग, भूत एवं राक्षस का नाशक है। संग्राम में विजय देने वाला जंगल में मनुष्यों को अभय देने वाला है। नौकर, दाई, हाथी, घोड़ा, रथ, गाय, धन आदि देने वाला है। क्षेत्र-पुत्र-कलत्र-तेज-कान्ति-यशस्कर है। धैर्य गाम्भार्य शौर्यादि मर्यादा प्रतिभा कारक है। ब्रह्माण्ड में क्षोभ उत्पन्न करने वाला एवं आठ सिद्धियों से युक्त करने वाला है। बहुत क्या कहा जाय, यह सब कुछ देने वाला है।

कृष्णमन्त्र इस प्रकार का है—क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। इसमें अट्ठारह अक्षर हैं। इसमें कृष् शव्द सत्ताभिधायक है। कृष्ण का णकार आनन्दार्थक है। इस प्रकार कृष्ण शब्द का अर्थ सत्तारूपी आनन्द का वाचक है। ये भक्तों के पापों का कर्षण करते हैं, इसलिये इन्हें कृष्ण कहते हैं। मन्त्रात्मक शरीर में स्थित उसके वर्णो के वाचक गो शब्द ज्ञानलाभ कराता है। सम्पूर्ण शब्दराशि के ज्ञाता को गोविन्द कहते हैं। गोविचार से सभी शब्दों को जान लेता है।

श्रीकृष्णमन्त्रप्रयोगः

नारदो मुनिराख्यातो गायत्रं छन्द ईरितम्। श्रीकृष्णो देवता प्रोक्तो बीजशक्त्यादि पूर्ववत् ॥१३॥
अन्तःकरणवेदाब्धिचतुर्भिर्युगलेन च। मूलमन्त्रविभक्तार्णैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥१४॥ इति।

सनत्कुमारकल्पे तु—'मन्त्रस्यास्य ऋषिर्ब्रह्मा गायत्रं छन्द उच्यते। गोपवेशधरो विष्णुर्देवता परिकीर्तितः॥१॥ वर्णैनैकेन हृदयं त्रिभिर्वर्णैः शिरो मतम्। चतुर्भिश्च शिखा प्रोक्ता तावद्भिः कवचं मतम्॥२॥ नेत्रं तथा चतुर्वर्णैर्द्वाभ्यामस्त्रं तथा मुने' इत्युक्तम्। अत्र यथागुरूपदेशं शरणमिति।

पञ्चाङ्गानि न्यसेत् पश्चादङ्गुलीषु करद्वये। मूलमन्त्रेण सर्वाङ्गे त्रिवारं व्यापकं न्यसेत् ॥१५॥
ध्रुवं व्यापय्य चान्ते तु मन्त्रार्णन्यासमाचरेत्। के ललाटे भ्रुवोर्मध्ये कर्णयोर्नेत्रयोर्नसोः ॥१६॥
मुखे ग्रीवाहृदोर्नाभौ कट्योर्लिङ्गे ततः परम्। जानुयुग्मे पदद्वन्द्वे न्यसेदेकैकमक्षरम् ॥१७॥
वेदादिं मस्तके न्यस्य पदान् पञ्च प्रविन्यसेत्। शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु मनुवित्तमः ॥१८॥
पञ्चाङ्गानि पुनर्न्यस्य मुन्यादिन्यासमाचरेत्। न्यासान्तरादिकं सर्वं दशवर्णोक्तवद्भवेत् ॥१९॥
ध्यानं चोक्तप्रकारेण पूजनं च तथा भवेत्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, बीजशक्त्यादिन्यासं पूर्ववत् कुर्यादिति। क्लींकृष्णाय हृदयाय नमः। गोविन्दाय शिरसे०। गोपीजन शिखायै०। वल्लभाय कवचाय०। स्वाहा अस्त्राय०। इति पञ्चाङ्गमन्त्रान् प्राग्वद्विन्यस्य, मूलमन्त्रेण प्राग्वद् व्यापकं त्रिः कृत्वा सकृत् प्रणवेन व्यापकं विन्यस्य, शिरसि क्लींनमः। ललाटे कृं नमः। भ्रूमध्ये ष्णां नमः। दक्षकर्णे यं नमः। वामे गों नमः। दक्षनेत्रे विं नमः। वामे दां नमः। दक्षनसि यं नमः। वामे गों नमः। मुखे पीं नमः। ग्रीवायां जं नमः। हृदि नं नमः। नाभौ वं नमः। दक्षकटौ ल्लं

नम:। वामे भां नम:। लिङ्गे यं नम:। जानुनो: स्वां नम:। पादयो: हांनम:। शिरसि ॐ नम:। इति प्रणवं च विन्यस्य, शिरसि क्लींनम:। मुखे कृष्णाय नम:। हृदि गोविन्दाय नम:। गुह्ये गोपीजनवल्लभाय नम:। पादयो स्वाहा नम:। इति विन्यस्य पञ्चाङ्गन्यासं कृत्वा, दशाक्षरोक्तान् न्यासांश्च विधाय ध्यानादिसर्वं दशाक्षरोक्तवत् कुर्यादिति।

तथा—

अयुतद्वयसंख्यातमधिकारार्थमादरात् । पञ्चलक्षं जपेत् पश्चाद् दशांशं पूर्ववद्धुनेत् ॥२०॥
तर्पणादि ततः सर्वं पूर्वोक्तविधिना चरेत्।

प्रयोग—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूलमन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदाय ऋषये नम:, मुखे गायत्री छन्दसे नम:। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नम:। तदनन्तर पूर्ववत् बीजशक्त्यादि न्यास करे।

पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार करे—क्लीं कृष्णाय हृदयाय नम:, गोविन्दाय शिरसे स्वाहा, गोपीजन शिखायै वषट्, वल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। पूर्ववत् मूल मन्त्र से तीन व्यापक न्यास करके प्रणव से व्यापक न्यास करे। तब मन्त्रवर्ण न्यास इस प्रकार करे—शिर पर क्लीं नम:, ललाट में कृं नम:, भ्रूमध्य में ष्णां नम:, दक्ष कर्ण में यं नम:, वाम कर्ण में गों नम:, दक्ष नेत्र में विं नम:, वाम नेत्र में दां नम:, दक्ष नासिका में यं नम:, वाम नासिका में गों नम:, मुख में पीं नम:, ग्रीवा में जं नम:, हृदय में नं नम:, नाभि में वं नम:, कमर के दाहिने ल्लं नम:, कमर के बाँयें भां नम:, लिङ्ग में यं नम:, जानुओं में स्वां नम:, पैरों में हां नम:, शिर पर ॐ नम:, शिर पर क्लीं नम:, मुख में कृष्णाय नम:, हृदय में गोविन्दाय: गुह्य में गोपीजनवल्लभाय नम:, पैरों में स्वाहा नम:। तब पञ्चाङ्ग न्यास एवं दशाक्षरोक्त न्यास करके ध्यानादि सब कुछ दशाक्षर के समान करे। आदरपूर्वक अधिकार के लिये बीस हजार जप के बाद पाँच लाख मन्त्र जप करे। पूर्ववत् दशांश हवन करे। पूर्वोक्त विधि से तर्पणादि करे।

श्रीकृष्णमन्त्रस्य त्रिकालार्चाविधानम्

अथ साधितमन्त्रस्य साधकस्य फलाप्तये ॥२१॥

त्रिकालार्चाविधिं वक्ष्ये गोविन्दस्य जगत्पतेः। उक्ते वृन्दावने रम्ये स्वर्णभूमौ तु मण्डपम् ॥२२॥
रम्यं रत्नमयं दिव्यं स्मरेत् कल्पतरोरधः। नानारत्नस्थले मध्ये रत्नसिंहासने शुभे ॥२३॥
यथोक्तपद्ममध्यस्थं वासुदेवं विचिन्तयेत्। इन्द्रनीलनिभं कान्तं शिशुं सुमधुराकृतिम् ॥२४॥
स्निग्धवक्त्रललाटान्तलोलमूर्धजसंचयम् । भृङ्गसंघसमासक्तपद्मसुन्दरसन्मुखम् ॥२५॥
इन्दीवरदलाकारशोभिनेत्रद्वयान्वितम् । चलत्कुण्डलसंशोभिपृथुगण्डसुमण्डितम् ॥२६॥
रक्ताधरं सुनासं च हसन्तं हृष्टमानसम्। नारारत्नगणाकीर्णकण्ठाभरणभूषितम् ॥२७॥
गोधूलिधूसरोरस्कं शार्दूलनखधारिणम्। विशिष्टपुष्टसद्देहं स्वर्णनेपथ्यदीपितम् ॥२८॥
कटिदेशलसज्जङ्घाद्वयबन्धमनोरमम् । रत्नकाञ्चनसंछिन्नकिङ्किणीजालमालया ॥२९॥
तिरस्कुर्वन्तमत्यर्थं बन्धूकप्रसवश्रियम्। अत्यन्तारुणासच्छाखहस्तपादाब्जशोभया ॥३०॥
पयः सान्द्रद्रुतं पिण्डं नवनीतं नवं शुभम्। दक्षिणोतरयोः पाण्योर्वहन्तं स्वादु सस्पृहम् ॥३१॥
पृथिव्युद्वेगकर्तॄणां दैत्यानां दुष्टचेतसाम्। पूतनाशकटादीनां विनाशाय कृतोद्यमम् ॥३२॥
गोपीगोपालधेनूनां समूहेनावृतं सदा। आखण्डलमुखैर्देवैः सेवितं कामतत्परैः ॥३३॥
प्रातरेवंविधं कृष्णं ध्यात्वा सुस्थिरमानसः। प्रागुक्त एव पीठे तु हरिं सपूजयेत् प्रभुम् ॥३४॥
अङ्गावरणमाद्यं स्याद् द्वितीयं लोकपालकैः। वज्रादिभिस्तृतीयं च पूजयित्वा प्रसन्नधीः ॥३५॥
पक्वरम्भाफलं खण्डं नवनीतं हविर्दधि। मेलयित्वा तु नैवेद्यं निवेद्य प्रीणयेत् विभुम् ॥३६॥

उषस्येवं विधानेन श्रद्धाभक्तिसमन्वितः। श्रीकृष्णं पूजयेद् यस्तु पूजोपकरणैः शुभैः ।।३७।।
ऐहिकीं सर्वसंपत्तिं प्रागेव प्राप्नुयात्तु सः। देहान्तं विष्णुसायुज्यं प्रयाति नियतं कृती ।।३८।।
प्रगे प्रत्यहमेवं हि पूजयित्वा नरो हरिम्। गव्यं दधि निवेद्यास्मै गुडयुक्तमथापि वा ।।३९।।
तद् बुद्ध्या शुद्धनीरेण तर्पयेत्तु मुखे हरेः। अष्टोत्तरसहस्रं तु मूलमन्त्रं जपेत्ततः ।।४०।।
तद्बुद्ध्या गोदधिबुद्ध्या।

मध्यन्दिने यजेच्चातिसुन्दराकृतिमद्भुतम्। देवर्षिदेवसिद्धौघैः सेवितं खेचरैस्तथा ।।४१।।
गवां गोपालगोपीनां समूहैः परितो वृतम्। नीलाम्बुवाहसत्कान्तिविशिष्टाङ्गश्रियं विभुम् ।।४२।।
नीलकण्ठस्य सत्पिच्छैः केशभारैः सुमण्डितम्। उन्नतभ्रूलतं देवं पद्मपत्रनिभेक्षणम् ।।४३।।
पूर्णचन्द्रलसद्वक्त्रं रत्नकुण्डलमण्डितम्। गण्डमण्डलसंशोभिसुघोणं सस्मिताननम् ।।४४।।
पीतवस्त्रधरं चारुमुक्ताहारविभूषितम्। काञ्चीकटककेयूरमुद्रिकानूपुरादिभिः ।।४५।।
अलंकृतशरीरं तमङ्गरागपिशङ्गितम्। मुक्तामाणिक्यसञ्छन्नवनमालाद्भुतांसकम् ।।४६।।
कामबाणप्रविद्धाङ्गं वेणुवादनतत्परम्। हस्ते च बिभ्रतं वेणुं वामे शङ्खं सुवेत्रकम् ।।४७।।
अभिरामतरं वक्षोरत्नश्रेष्ठमभीष्टदम्। ध्यात्वैवं विधिना देवं पूजयेदिष्टसिद्धये ।।४८।।
दामाद्यैरङ्गकैश्चापि महिषीभिश्च तत्परम्। वासुदेवादिभिः पश्चात् कल्पवृक्षैरनन्तरम् ।।४९।।
इन्द्राद्यैश्च तदस्त्रैश्च सप्तावरणसंयुतम्। अर्चयित्वा तु गोविन्दं विधिवत् साधकोत्तमः ।।५०।।
नैवेद्यं काञ्चने पात्रे पूर्वोक्तं विनिवेदयेत्। अष्टाधिकं शतं पश्चाद्धुनेत् स्वादु पयोन्धसा ।।५१।।
पयसा दुग्धेन युतं यदन्धो भक्तं तेनेत्यर्थः।

शर्कराघृतयुक्तेन बलिं पश्चात् प्रकल्पयेत्। देवर्षियतिसङ्घेभ्यो ह्युपदेवेभ्य आदरात् ।।५२।।
स्वस्वदिक्क्रमतो विद्वान् भक्तियुक्तः प्रसन्नधीः।

उपदेवा गन्धर्वयक्षादयः 'स्वस्वदिक्क्रमतो ध्याने देवानेवं बहिः स्मरेत्। संमुखे देवदेवस्ये'त्युक्तदिक् क्रमेण बलिं पायसादिभिः। तन्निवेदनप्रकारस्तु—देवाग्रादिचतुर्दिक्षु पायसादिकं पात्रेषु साधारेषु निधाय 'देवेभ्य एष गन्धो नमः' इत्यादिगन्धादिपञ्चोपचारैः संपूज्य, स्वहस्ते जलमाधाय 'देवेभ्य एष बलिर्नमः' इति बलिमुत्सृज्य, पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा प्रणमेदिति। एवमृषिभ्यो यतिभ्यो गन्धर्वादिभ्यश्च बलिं संपूज्य दद्यात्।

तथा—
नवनीतहविर्बुद्ध्या तोयैः संतर्प्य तन्मुखे। सहस्रं शतमानं वा संपूज्य साष्टकं जपेत् ।।५३।।
साष्टकमिति शतं सहस्रं चेत्यत्रापि संबध्यते।

मध्याह्ने कृष्णमेवं यः पूजयेद्भक्तितत्परः। गीर्वाणवृन्दवन्द्योऽसौ संमतः सर्वजन्तुषु ।।५४।।
आयुर्बुद्धीन्दिराकान्तिसुभगत्वादिसंयुतः। सत्सन्ततिसुहृद्वर्गपशुक्षेत्रधनादिभिः ।।५५।।
सर्वैश्वर्यसमेतोऽत्र सुखं भुक्त्वा हरिं व्रजेत्। अपराह्णार्चने भेदमङ्गीकुर्वन्ति तद्विदः ।।५६।।

इस प्रकार से साधित मन्त्र से साधक को फल की प्राप्ति के लिये गोविन्द के त्रिकाल अर्चन की विधि कहता हूँ।

उक्ते वृन्दावने रम्ये स्वर्णभूमौ तु मण्डपम्। रम्यं रत्नमयं दिव्यं स्मरेत् कल्पतरोरधः।।
नानारत्नस्थले मध्ये रत्नसिंहासने शुभे। यथोक्तपद्ममध्यस्थं वासुदेवं विचिन्तयेत्।।
इन्द्रनीलनिभं कान्तं शिशुं सुमधुराकृतिम्। स्निग्धवक्त्रललाटान्तलोलमूर्धजसंचयम्।।
भृङ्गसंघसमासक्तपद्मसुन्दरसन्मुखम्। इन्दीवरदलाकारशोभिनेत्रद्वयान्वितम्।।
चलत्कुण्डलसंशोभिपृथुगण्डसुमण्डितम्। रक्ताधरं सुनासं च हसन्तं हृष्टमानसम्।।

नारारत्नगणाकीर्णकण्ठाभरणभूषितम्। गोधूलिधूसरोरस्कं शार्दूलनखधारिणम्।।
विशिष्टपुष्टसद्देहं स्वर्णनेपथ्यदीपितम्। कटिदेशलसज्जङ्घाद्वयबन्धमनोरमम्।।
रत्नकाञ्चनसंछिन्नकिङ्किणीजालमालया। तिरस्कुर्वन्तमत्यर्थं बन्धूकप्रसवश्रियम्।।
अत्यन्तारुणासच्छाखहस्तपादाब्जशोभया। पय: सान्द्रद्रुतं पिण्डं नवनीतं नवं शुभम्।।
दक्षिणोतरयो: पाण्योर्वहन्तं स्वादु सस्पृहम्। पृथिव्युद्वेगकर्तृणां दैत्यानां दुष्टचेतसाम्।।
पूतनाशकटादीनां विनाशाय कृतोद्यमम्। गोपीगोपालधेनूनां समूहेनावृतं सदा।।
आखण्डलमुखैर्देवै: सेवितं कामतत्परै:।

इस प्रकार प्रात:काल में श्रीकृष्ण का ध्यान करके सुस्थिर मन से पूर्वोक्त पीठ पर प्रभु हरि की पूजा करे। प्रथम आवरण में षडङ्ग पूजा करे। द्वितीय आवरण में लोकपालों की और तृतीय आवरण में वज्रादि आयुधों की पूजा करे। नैवेद्य में पका केला, खाण्ड, मक्खन, हवि, दही को मिलाकर निवेदित करे। उषा काल में विधिवत् श्रद्धा-भक्ति से श्रीकृष्ण की पूजा जो शुभ उपचारों से करता है, उसे पूर्ववत् सभी सांसारिक सम्पत्ति प्राप्त होती है एवं देहान्त होने पर विष्णु का सायुज्य प्राप्त होता है। जो प्रतिदिन प्रात:काल में हरि की पूजा में गव्य दहीं गुड़ नैवेद्य अर्पित करता है, शुद्ध जल को दूध, दही मानकर हरि के मुख में तर्पण करता है, एक हजार आठ मूल मन्त्र का जप करता है, उसे पूर्वोक्त फल मिलते हैं।

मध्य दिवस की पूजा में श्रीकृष्ण का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

मध्यन्दिने यजेच्चातिसुन्दराकृतिमद्भुतम्। देवर्षिदेवसिद्धौघै: सेवितं खेचरैस्तथा।।
गवां गोपालगोपीनां समूहै: परितो वृतम्। नीलाम्बुवाहसत्कान्तिविशिष्टाङ्गश्रियं विभुम्।।
नीलकण्ठस्य सत्पिच्छै: केशभारै: सुमण्डितम्। उद्गतभ्रूलतं देवं पद्मपत्रनिभेक्षणम्।।
पूर्णचन्द्रलसद्वक्त्रं रत्नकुण्डलमण्डितम्। गण्डमण्डलसंशोभिसुघोणं सस्मिताननम्।।
पीतवस्त्रधरं चारुमुक्ताहारविभूषितम्। काञ्चीकटककेयूरमुद्रिकानूपुरादिभि:।।
अलंकृतशरीरं तमङ्गरागपिशङ्गितम्। मुक्तामाणिक्यसञ्छन्नवनमालाद्भुतांसकम्।।
कामबाणप्रविद्धाङ्गं वेणुवादनतत्परम्। हस्ते च बिभ्रतं वेणुं वामे शङ्खं सुवेत्रकम्।।
अभिरामतरं वक्षोरत्नश्रेष्ठमभीष्टदम्।

इस प्रकार का ध्यान करके अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति के लिये देव की पूजा सात आवरणों में करे। प्रथम आवरण में अंगों, द्वितीय में दामादि सखा, तृतीय में आठ पटरानियों, चतुर्थ में वासुदेवादि, पञ्चम में कल्पवृक्षादि, षष्ठ में इन्द्रादि लोकपालों और अष्टम आवरण में उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। विधिवत् गोविन्द का अर्चन करके सोने के पात्र में पूर्वोक्त नैवेद्य समर्पित करे। इसके बाद दूध और हवि से एक सौ आठ बार हवन करे। तब शक्कर और घी से बलि देव ऋषि यतिसंघ उपदेवों को उनकी दिशा के अनुसार प्रदान करे। उपदेवों में गन्धर्व-यक्षादि आते हैं। बलि निवेदन का प्रकार है कि देव के आगे चारो दिशाओं में पायसपूर्ण पात्रों को आधार पर रखकर 'देवेभ्यो एष गन्धो नम:' से गन्धादि पञ्चोपचार से पूजा कर अपने हाथ में जल लेकर 'देवेभ्य: एष बलि: नम:' कहकर बलि प्रदान करे। पुष्पाञ्जलि देकर प्रणाम करे। इसी प्रकार ऋषियों, यतियों, गन्धर्वादिकों का पूजन कर बलि प्रदान करे। जल को मक्खन मानकर मुख में तर्पण करे। पूजन के बाद एक हजार आठ या एक सौ आठ जप करे। मध्याह्न में कृष्ण की ऐसी पूजा में तत्पर मनुष्य देवतावृन्द से वन्दित एवं सभी जीवों का प्रिय होता है। आयु वृद्धि लक्ष्मी कान्ति सुभगत्वादि से संयुक्त रहता है। उसे सन्तति, मित्र, पशु, क्षेत्र, धनादि प्राप्त होते हैं एवं संसार में समस्त ऐश्वर्यों को भोगकर अन्त में वह वैकुण्ठ लोक में जाता है। इस अपराह्न पूजा में कुछ लोग भेद भी कहते हैं।

संध्यायामूचिरे केचिद् रात्रावेवापरे तथा। अष्टादशाक्षरान्मन्त्रान् संध्याकाले समर्चनम् ।।५७।।
यामिन्यां सर्वसंपत्तेर्दशार्णमनुना यदि। कालद्वयेऽपि मन्त्राभ्यां पूजने केऽपि संमता: ।।५८।।
संध्यायां द्वारकामध्ये रम्यारामाश्रिते शुभे। गृहै: षोडशसाहस्रै: सर्वत: परिवेष्टिते ।।५९।।
पद्मेन्दीवरकह्लारसंभृतै: सुजलाशयै:। हंसादिपक्षिभिर्व्याप्तै: संवृतेऽद्भुतमन्दिरे ।।६०।।

उद्यदादित्यसंकाशे चित्रितेऽद्भुतमण्डपे। (कोमलास्तरणे दिव्यस्वर्णपङ्कजमण्डिते ॥६१॥)
सूपविष्टं परात्मानं कृष्णं ध्यायन्समाहितः। नारदादिमुनिश्रेष्ठैः संवृतं मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥६२॥
अद्वैतार्थविचारेण मुनिवर्येभ्य एव तु। आत्मरूपं परं तेजो दिशन्तं मन्त्रगौरवात् ॥६३॥
नीलेन्दीवरसत्कान्तिं शान्तिमूर्तिगुणालयम्। सरोजदलसंकाशनेत्रं मकरकुण्डलम् ॥६४॥
स्निग्धालकाग्रसंबद्धमुकुटाद्भुतमस्तकम्। अत्यन्तमधुराकारं प्रसन्नमुखपङ्कजम् ॥६५॥
श्रीवत्साङ्कितवक्षस्कं वनमालाविभूषितम्। कौस्तुभप्रभया दीप्तकुङ्कुमारुणवक्षसम् ॥६६॥
वनमालालंकृतांसं पीतवस्त्रावृतं प्रभुम्। नूपुराङ्गदहारादिकटिसूत्रादिभूषितम् ॥६७॥
दूरीकृतधराभारं प्रसन्नहृदयं विभुम्। दरारिसगदापद्मधारिणं सुचतुर्भुजम् ॥६८॥
इत्थं संचिन्त्य देवेशं गोविन्दं सम्यगर्चयेत्। अङ्गैरष्टप्रियाभिश्च प्रथमावरणद्वयम् ॥६९॥
ततो नारदनामानं पर्वतं जिष्णुमेव च। निशटं चोद्धवं चैव दारुकं तदनन्तरम् ॥७०॥
विश्वक्सेनं ततो मन्त्री शैनेयं पूजयेत्ततः। पूर्वादिपूजितैरेतैस्तृतीयावरणं भवेत् ॥७१॥
अग्रे गरुडमाराध्य लोकपालान् प्रपूजयेत्। तदस्त्राणि च तद्बाह्ये पञ्चावरणमर्चनम् ॥७२॥
नैवेद्यं पायसं दत्त्वा सम्यक् पूजावसानके। खण्डाक्तक्षीरसद्बुद्ध्या नीरैः कृष्णं प्रतर्पयेत् ॥७३॥
अष्टोत्तरशतं पश्चाज्जपेत् कृष्णं विचिन्तयन्। सर्वार्चासु हुनेन्मन्त्री मध्याह्ने वा यथाविधि ॥७४॥

अष्टोत्तरशतमिति तर्पणजपयोः संबध्यते।

अवसानार्घ्यविध्यन्तं विधाय स्तुतिमारभेत्। नत्वा निवेद्य चात्मानं विसृज्य स्वहृदि प्रभुम् ॥७६॥
न्यस्य देवमयो भूत्वा स्वात्मानं पूजयेत्ततः। संध्याकाले हरिं त्वेवं प्रत्यहं योऽर्चयेद् बुधः ॥७७॥
इह भोगान् बहून् भुक्त्वा व्रजेदन्ते च सद्गतिम्। नन्दात्मजं यजेद्रात्रौ कामाकुलितचेतसम् ॥७८॥
रासक्रीडासमाक्रान्तवल्लवीचक्रवेष्टितम्। वितस्त्युच्चं सुवृत्तं च स्थूलं चिक्कणमद्भुतम् ॥७९॥
निखातं शङ्कुमाक्रम्य पादाभ्यां च परस्परम्। भ्रमिर्गृहीतहस्तैर्या रासगोष्ठी तु सा भवेत् ॥८०॥
स्थलपङ्कजपुष्पाणां मध्यरेणुयुतेन च। रिङ्गत्तरङ्गबिन्दूनां समूहार्द्रेण वायुना ॥८१॥
कालिन्दीसैकते शुभ्रे शीतले तापहारिणी। कामबाणप्रविद्धाङ्गदिव्यस्त्रीकोटिकोटिभिः ॥८२॥
संवृते चन्द्रकिरणसमुद्द्योतितदिङ्मुखे। चलद्भृङ्गाङ्गनाशब्दवाचालितदिगन्तरे ॥८३॥
सिद्धगन्धर्वदेवौघयक्षकिन्नरपन्नगैः। विद्याधरैः सपत्नीकैर्विमानेषु कृतासनैः ॥८४॥
आकाशे संचरद्भिस्तैः पुष्पवर्षकृतोद्धवे। परस्पराबद्धहस्तसुन्दरीजालनिर्मिते ॥८५॥
रासक्रीडाविधौ रत्नशङ्कुगं परमेश्वरम्। एतद्देहसमाक्लृप्तदिव्यानेककलेवरम् ॥८६॥
नारीणां युग्मयोर्देवं प्रत्येकं चान्तरा गतम्। तत्तत्कण्ठं समालम्ब्य बाहुद्वन्द्वविराजितम् ॥८७॥
आत्मसंबद्धसंजातकामानलसुदीपनात्। रोमोद्गमसमाक्रान्तगात्रवल्लीयुजां मुहुः ॥८८॥
भ्रमन्तमाभी रज्यन्तं महामणिपरिष्कृतेः। कृतचारुस्वनैः सर्वालङ्कारैर्हृदयङ्गमम् ॥८९॥
इत्थं पृथक् शरीरं तं संयुतं मणिभिर्यथा। हिरण्यरचितैः सम्यक् सक्तं मारकतं तथा ॥९०॥
मणिशङ्कौ सुविस्तीर्णे रक्तपद्मगतं प्रभुम्। अतसीसूनसङ्काशं यौवनश्रीसमन्वितम् ॥९१॥
तदानीं फुल्लरक्तारविन्दच्छदविलोचनम्। नूतनैर्विविधैश्चारुपल्लवैर्नवगुच्छकैः ॥९२॥
शितिकण्ठशिखण्डैश्च बद्धमूर्धजसंचयम्। सद् भ्रुवं चन्द्रसङ्काशसुन्दराननपङ्कजम् ॥९३॥
(रत्नकुण्डलसंशोभिगण्डमण्डलमण्डितम्)। पक्वबिम्बफलाकाररक्ताधरविराजितम् ॥९४॥
नानारत्नसमाक्लृप्तसर्वभूषणभूषितम्। स्वर्णवर्णलसद्वस्त्रविभ्रमश्रीगृहं परम् ॥९५॥
नवप्रवालरुचिरहस्तपादतलं विभुम्। भ्रमरालीलसत्सूनमाल्यशोभिभुजद्वयम् ॥९६॥

अङ्गनाकुचसंश्लेषलग्नकुङ्कुमवक्षसम् । महोक्षचारुगमनं वंशवादनसादरम् ।।९७।।
अनङ्गबाणसंविद्धं सर्वलोकैकसद्गतिम् । ध्यात्वेत्थं प्रोक्तसत्पीठे लक्ष्मीकान्तं प्रपूजयेत् ।।९८।।
अङ्गैरावरणं पूर्वं मिथुनैस्तदनन्तरम् । केशवाद्याः पुरा प्रोक्ताः षोडश स्वरमूर्तयः ।।९९।।
कीर्त्यादिशक्तिसहिता लक्ष्मीमन्मथपूर्विकाः । प्रत्येकं स्वरसंयुक्ता मिथुनानि भवन्ति हि ।।१००।।
श्रींक्लींअं केशवाय कीर्त्यै नमः इत्यादि प्रयोगः।

सायंकालीन पूजा—यह पूजा कुछ लोग सन्ध्या में करते हैं और कुछ रात में करते हैं। अष्टाक्षर मन्त्र का अर्चन सन्ध्या में करना चाहिये। कुछ के मत से समस्त सम्पत्तियों की प्राप्ति के लिये रात में दशाक्षर मन्त्र की पूजा करनी चाहिये। किसी के मत प्रात: सायं दोनों बार पूजन करना चाहिये। सन्ध्या के पूजन में द्वारका मध्य में चारो ओर से कमल-इन्दीवर-कल्हारयुक्त एवं हंस आदि पक्षियों से व्याप्त सोलह हजार जलाशयों से सुशोभित एवं दिव्यांगनाओं के निवासभूत भवन में या उदीयमान सूर्य के समान चित्रित मण्डप में दिव्य स्वर्ण कमल-मण्डित कोमल आस्तरण पर अवस्थित श्रीकृष्ण का एकाग्रता से इस प्रकार ध्यान करे—

नारदादिमुनिश्रेष्ठैः संवृतं मोक्षकाङ्क्षिभिः। अद्वैतार्थविचारेण मुनिवर्येभ्य एव तु।।
आत्मरूपं परं तेजो दिशन्तं मन्त्रगौरवात्। नीलेन्दीवरसत्कान्तिं शान्तिमूर्तिगुणालयम्।।
सरोजदलसंकाशनेत्रं मकरकुण्डलम्। स्निग्धालकाग्रसंबद्धमुकुटाद्भुतमस्तकम्।।
अत्यन्तमधुराकारं प्रसन्नमुखपङ्कजम्। श्रीवत्साङ्कितवक्षस्कं वनमालाविभूषितम्।।
कौस्तुभप्रभया दीप्तकुङ्कुमारुणवक्षसम्। वनमालालंकृतांसं पीतवस्त्रावृतं प्रभुम्।।
नूपुराङ्गदहारादिकटिसूत्रादिभूषितम्। दूरीकृतधराभारं प्रसन्नहृदयं विभुम्।।
दरारिसगदापद्मधारिणं सुचतुर्भुजम्।

इस प्रकार ध्यान करके देवेश गोविन्द का अर्चन करे। प्रथम आवरण में अंगपूजन एवं द्वितीय में रुक्मिणी आदि पटरानियों का पूजन करे। तृतीय आवरण में नारद, पर्वत, जिष्णु, निशट, उद्धव, दारुक, विश्वक्सेन और शैनेय की पूजा करे। देव के आगे गरुड़ की पूजा करे। चतुर्थ आवरण में लोकपालों की पूजा और पञ्चम आवरण में आयुधों की पूजा करे। पायस का नैवेद्य चढ़ावे। जल को खण्डाक्त दूध मानकर कृष्ण का एक सौ आठ जप से तर्पण करे। कृष्ण का ध्यान करके एक सौ आठ जप करे। सभी अर्चाओं में साधक मध्याह्न में यथाविधि हवन करे। अन्त में अर्घ्य देकर स्तुति करे। प्रणाम करके पूजा समर्पण करे। अपने हृदय में प्रभु का विसर्जन करे। न्यास करके अपने को देवमय मानकर अपनी पूजा करे। सन्ध्या काल में प्रतिदिन हरि का ऐसा पूजन जो करता है, वह बहुविध सांसारिक भोगों को भोगकर अन्त में सद्गति प्राप्त करता है।

कामाकुल नन्दपुत्र कृष्ण का ध्यान करके रात में पूजा करे। कामाकुल कृष्ण का ध्यान इस प्रकार होता है—

रासक्रीडासमाक्रान्तवल्लवीचक्रवेष्टितम्। वितस्त्युच्चं सुवृत्तं च स्थूलं चिक्कणमद्भुतम्।।
निखातं शङ्कुमाक्रम्य पादाभ्यां च परस्परम्। भ्रमिर्गृहीतहस्तैर्या रासगोष्ठी तु सा भवेत्।।
स्थलपङ्कजपुष्पाणां मध्यरेणुयुतेन च। रिङ्गत्तरङ्गबिन्दूनां समूहार्द्रेण वायुना।।
कालिन्दीसैकते शुभ्रे शीतले तापहारिणी। कामबाणप्रविद्धाङ्गदिव्यस्त्रीकोटिकोटिभिः।।
संवृते चन्द्रकिरणसमुद्द्योतितदिङ्मुखे। चलद्भृङ्गाङ्गनाशब्दवाचालितदिगन्तरे।।
सिद्धगन्धर्वदेवौघयक्षकिन्नरपन्नगैः। विद्याधरैः सपत्नीकैर्विमानेषु कृतासनैः।।
आकाशे संचरद्भिस्तैः पुष्पवर्षकृतोद्भवे। परस्पराबद्धहस्तसुन्दरीजालनिर्मिते।।
रासक्रीडाविधौ रत्नशङ्कुगं परमेश्वरम्। एतद्देहसमाक्लृप्तदिव्यानेककलेवरम्।।
नारीणां युग्मयोर्देवं प्रत्येकं चान्तरा गतम्। तत्तत्कण्ठं समालम्ब्य बाहुद्वन्द्वविराजितम्।।
आत्मसंबद्धसंजातकामानलसुदीपनात्। रोमोद्गमसमाक्रान्तगात्रवल्लीयुजां मुहुः।।

भ्रमन्तमाभी रज्यन्तं महामणिपरिष्कृते:। कृतचारुस्वनै: सर्वालङ्कारैर्हृदयङ्गमम्।।
इत्थं पृथक् शरीरं तं संयुतं मणिभिर्यथा। हिरण्यरचितै: सम्यक् सक्तं मारकतं तथा।।
मणिशङ्कौ सुविस्तीर्णे रक्तपद्मगतं प्रभुम्। अतसीसूनसङ्काशं यौवनश्रीसमन्वितम्।।
तदानीं फुल्लरक्तारविन्दच्छदविलोचनम्। नूतनैर्विविधैश्चारुपल्लवैर्नवगुच्छकै:।।
शितिकण्ठशिखण्डैश्च बद्धमूर्धजसंचयम्। सद् भ्रुवं चन्द्रसङ्काशसुन्दराननपङ्कजम्।।
(रत्नकुण्डलसंशोभिगण्डमण्डलमण्डितम्) ।पक्वबिम्बफलाकाररक्ताधरविराजितम् ।।
नानारत्नसमाक्लृप्तसर्वभूषणभूषितम्। स्वर्णवर्णलसद्वस्त्रविभ्रमश्रीगृहं परम्।।
नवप्रवालरुचिरहस्तपादतलं विभुम्। भ्रमरालीलसत्सूनमाल्यशोभिभुजद्वयम्।।
अङ्गनाकुचसंश्लेषलग्नकुङ्कुमवक्षसम्। महोक्षचारुगमनं वंशवादनसादरम्।।

ऐसा ध्यान करके पूर्वोक्त सत्पीठ पर लक्ष्मीकान्त की पूजा करे। प्रथम आवरण में अंगों की पूजा करे। द्वितीय आवरण में केशवादि-कीर्त्यादि सहित सोलह स्वरमूर्तियों की पूजा श्रीं क्लीं अं केशवाय कीर्त्यै नम: इत्यादि के रूप में करे।

रासगोष्ठीलक्षणम्

षोडशारदलेष्वर्च्या रासक्रीडनतत्परा:। इन्द्रादीन् पूजयेद्बाह्ये वज्रादींश्च तत: परम्।।१०१।।
इत्थमावरणैर्युक्तं चतुर्भि: पूजयेत् प्रभुम्। तत: सुक्वथितं दुग्धं सितशर्करया युतम्।।१०२।।
राजते भाजने सम्यक् संस्कृत्य विनिवेदयेत्। कांस्यपात्रेषु नैवेद्यं स्वरसंख्येषु कल्पयेत्।।१०३।।
प्रत्येकं मिथुनेभ्यश्च पयस्तादृक् च वैभवात्। अन्यत् सर्वं यथापूर्वं कृत्वा पूजां समापयेत्।।१०४।।
रात्रावेवं विधिं यो वै भजेल्लोकवशंकर:। इन्दिरामन्दिरं भूयात् सर्वाराध्य: स मुक्तिभाक्।।१०५।।
रात्रावह्नो विरामे वा प्रत्यहं यस्तु पूजयेत्। तुल्यं फलं समाप्नोति भवाब्धे: पारगो भवेत्।।१०६।।

इत्थं मन्त्रकलेवरं कमलजाजानिं तु कालत्रये
भक्त्याभ्यर्चयतीह य: स नियतं भूलोकभर्ता भवेत्।
धर्मे नित्यमतिर्महार्हविभव: कामान् यथेष्टान् भजे-
दन्ते विष्णुपुरं प्रयाति परमं सिद्धौघसंसेवितम्।।१०७।।

रासक्रीड़ा में रत युगलों की पूजा षोडशदल में करे। इसके बाहर चतुरस्र में इन्द्रादि दश लोकपालों की पूजा तृतीय आवरण में करे। चतुर्थ आवरण में वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। इन चार आवरण से युक्त पूजन करे। तब मिश्री शक्करयुक्त दूध को चाँदी के पात्र में रखकर संस्कृत करके प्रभु को निवेदित करे। सोलह कांस्य पात्रों में प्रत्येक जोड़ियों को उसी प्रकार का दूध निवेदित करे। और सब कुछ यथापूर्व करके पूजा समाप्त करे। लोकवशंकर की पूजा जो रात में करता है, उसके घर में लक्ष्मी का निवास होता है एवं वह सर्वाराध्य होता है और अन्त में मुक्ति प्राप्त करता है। रात में या या सायंकाल प्रतिदिन जो ऐसी पूजा करता है, दोनों को समान फल प्राप्त होते हैं और पूजक भवसागर के पार हो जाता है। इस प्रकार मन्त्र से का लक्ष्मी-कृष्ण जो तीनों कालों में पूजा करता है, वह भूलोक का स्वामी होता है। उसकी मति नित्य धर्म में रहती है। वैभव के साथ उसके यथेष्ट कामनाओं की पूर्ति होती है एवं अन्त में परम सिद्धौघ-सेवित वैकुण्ठ में जाता है।

अर्चान्ते तर्पणविधि:

अर्चान्ते देवदेवस्य तर्पणानां विधिं ब्रुवे। पुरोक्तानां च काम्यानां साधकेष्टफलप्रदम्।।१०८।।
पूजनव्यतिरेकेऽपि तत्फलं लभ्यते बुधै:। पीठाणुभिस्तर्पणादौ सकृन्मूलेन चैकश:।।१०९।।
तत्रावाह्य यजेद् देवं जलैरेवोपचारकै:। धेनुमुद्रां प्रदर्श्यात्र स्मृत्वा तर्पणसाधनम्।।११०।।
तद्धिया जलमादाय स्वर्णपात्रीकृतेन तु। सम्यगञ्जलिना देवं तर्पयेन्मूलमुच्चरन्।।१११।।
त्रिकालं तर्पयेन्नित्यमष्टाविंशतिसंख्यया। तत्तत्कालोचितान् पश्चात्तर्पयेत् परिवारकान्।।११२।।

एकैकवारं मन्त्रज्ञो मूलेनापि प्रतर्पयेत्। क्षौद्रयुक्तं दधि प्रातर्नवनीतयुतं हवि: ॥११३॥
अह्नो मध्ये समाख्यातं सन्ध्यायां दुग्धमुत्तमम् । सितोपलविमिश्रं तु तर्पणद्रव्यमीरितम् ॥११४॥
वाक्यं तु पूर्ववद्विद्यादन्यत्सर्वं तथा भवेत्। तत्प्रसादजलै: पश्चात् सिञ्चेदात्मानमात्मवित् ॥११५॥
मूलमन्त्राभिसञ्जप्तं जलं मन्त्री पिबेत्तत:। हरिमुद्वास्य मन्त्रज्ञो जपेन्मन्त्रं तु तन्मय: ॥११६॥
काम्यतर्पणवस्तूनि ततो वक्ष्यामि यानि तु। भजेदुक्तप्रकारेषु समालम्ब्यैकमादरात् ॥११७॥
सकृज्जलेन् सन्तर्प्य दुग्धैर्वारचतुष्टयम्। पश्चात् षोडशभिर्द्रव्यैश्चतस्रस्त्वेकश: क्रमात् ॥११८॥
आवृतीस्तर्पयेन्मन्त्री मूलमन्त्रेण संयुत:। चतुर्वारं पुन: क्षीरैरेकवारं जलेन च ॥११९॥
अन्यद् दुग्धाम्बुना दद्याद्भूयश्च ससितोपलम्। प्रातरेवं तर्पयेद्यश्चतु:सप्ततिसंख्यया ॥१२०॥
कृष्णं प्रतिदिनं विद्वान् श्रद्धाभक्तिश्च तत्पर:। तस्य मण्डलमात्रेण वाञ्छितं भवति ध्रुवम् ॥१२१॥
पायसं दधिभक्तं च तिलतण्डुलमेव च। गुडभक्तं च दुग्धं च दध्यतो नवनीतकम् ॥१२२॥
घृतं च कदली मोचा ततश्चैव रजस्वला। मोचमोदकपूपाश्च पृथुकाश्चैव लाजका: ॥१२३॥
द्रव्याणि षोडशैतानि कथयन्ति मनीषिण:।

मोचा रजस्वला मोचश्च कदलीभेदा एव, तेन चत्वार: कदलीभेदा एव ज्ञेया:।

अपरं तर्पणं वक्ष्ये तुल्यं पूर्वेण यत्फलम्। धारोष्णक्वथिते दुग्धे दधिदध्युत्थके पुन: ॥१२४॥
सर्पिषि पायसं चैव मत्स्यण्डी क्षौद्रमेव च। पञ्चासृतं नवैतानि द्वादशावृत्ति तर्पयेत् ॥१२५॥

धारोष्णं तत्कालं दुग्ध्वानीतम्। मत्स्यण्डी खण्डशर्कराविशेष:।

प्रत्येकं द्रव्यतस्त्वेतैरष्टोत्तरशतं विदु:। तर्पणानि विधानेन कृतानि यशसे तथा ॥१२६॥
लोकसंवलनार्थं च कथितानि मनीषिभि:। खण्डमिश्रितधारोष्णदुग्धबुद्ध्या जलै: शुभै: ॥१२७॥
कृष्णं संतर्प्य गच्छेद्यो ग्रामं वा नगरं तथा। (स तु नानारसोद्भूतं भक्ष्यं भोज्यं च विन्दति ॥१२८॥
वस्वन्नं वस्त्रधान्यादि मनोभीष्टं च यद्भवेत्। तर्पणं यावदाख्यातं जपस्तावानिह स्मृत:) ॥१२९॥
इह संतर्पणादेव फलमाप्नोति वाञ्छितम्। भिक्षुको ब्राह्मणो नित्यं स्वयं गोविन्दरूपधृक् ॥१३०॥
भूत्वा नानाविधैर्भावैरेभिरन्यैर्मुहुर्मुहु:। मनोभि: सह गोपीनां दधिदुग्धघृतादिकम् ॥१३१॥
बलाद् गृह्णन्नलं भिक्षामाप्नोति महतीं द्रुतम्।

तर्पण-विधि—पूजन के बाद तर्पण-विधि कहता हूँ, जो पूर्वोक्त काम्य कर्मों में साधक को वांछित फल देता है। पूजन में व्यतिरेक होने पर भी तर्पण से वह फल मिलता है। पीठ पर मूल मन्त्र से जलबिन्दु द्वारा तर्पण करे। उसमें देव का आवाहन करके केवल जल से पूजा करे। धेनुमुद्रा दिखाकर तर्पण-सामग्री का स्मरण करे। उसी के समान जल को मानकर स्वर्णपात्र में जल लेकर मूल मन्त्र बोलते हुए अञ्जलि से देव का तर्पण करे। तीनों समय में अट्ठाईस-अट्ठाईस बार तर्पण करे। उस काल में देवता के परिवार का भी तर्पण एक-एक बार मूल मन्त्र बोलकर करे। सबेरे दूध-मधु से, मक्खन खीर से दोपहर में और शाम में दूध में मिश्री मिलाकर तर्पण करे। ये ही तर्पण द्रव्य कहे गये हैं। तर्पण मन्त्र पूर्ववत् ही है। अन्य पूजन यथावत् होता है। उस प्रसाद जल से अपना मार्जन करे। तदनन्तर मूल मन्त्र से मन्त्रित जल का पान करे। हरि को उद्वासित करके तन्मय होकर मन्त्र का जप करे।

अव काम्य तर्पण के द्रव्यों को कहता हूँ। पूर्वोक्त क्रियाओं को करके आदरपूर्वक भजन करे। जल से तर्पण के बाद चार बार दूध से तर्पण करे। इसके बाद सोलह द्रव्यों से प्रत्येक का चार-चार बार तर्पण करे। मूल मन्त्र से आवरण तर्पण चार-चार बार करे। पुन: दूध से और जल से तर्पण करे। दूसरों को दूध, जल और मिश्री से तर्पण करे। प्रात:काल में चौहत्तर तर्पण कृष्ण का प्रतिदिन करे। ऐसा करने से चालीस दिनों में वांछित की प्राप्ति होती है। मनीषियों के अनुसार तर्पण के सोलह

द्रव्य निम्नलिखित हैं—पायस, दही-भात, तिल, तण्डुल, गुड़भात, दूध, दही, मक्खन, घी, केला, मोचा, रजस्वला, मोचमोदक, पूआ, पृथुक, लावा। मोचा, रजस्वला एवं मोच—ये तीनों केला के भेद हैं। इस प्रकार केला के चार भेद कहे गये हैं।

अन्य तर्पण इस प्रकार किया जाता है—धारोष्ण क्वथित दूध, दही, मट्ठा, गोघृत, पायस, शक्कर, मधु, पञ्चामृत—इन नव द्रव्यों से बारह बार तर्पण करे। प्रत्येक द्रव्य से एक सौ आठ तर्पण करे। विधिवत् तर्पण करने से यश मिलता है। मनीषियों ने लोकसंवलन के लिये इन्हें कहा है। खण्डमिश्रित धारोष्ण दूध के रूप में जल को मानकर तर्पण करके जो ग्राम या नगर में जाता है, उसे नाना रसोद्भूत भक्ष्य-भोज्य अन्न, धन, वस्त्र, धान्य एवं अभीष्ट प्राप्त होते हैं जितना तर्पण करे, उतना ही जप करे। इस प्रकार के तर्पण से वांछित फल मिलता है। भिक्षुक ब्राह्मण नित्य स्वयं गोविन्दस्वरूप होकर नाना प्रकार के अन्य भावों से गोपियों से दही, दूध बलपूर्वक लेने की भावना करे तो बहुत भिक्षा मिलती है।

गोपालयन्त्रोद्धारः

षट्कोणान्तर्लिखेत् कामं साध्याख्याकर्मसंयुतम् ॥१३२॥

षडक्षरमनोर्वर्णान् षट्सु कोणेषु संलिखेत्। पद्मं दशदलं बाह्ये रचयेल्लक्षणान्वितम् ॥१३३॥
विंशत्यर्णमनोर्वर्णान् किञ्जल्केषु द्विशो लिखेत्। कोणेषु मदनाक्रान्तभूगृहं रचयेत्ततः ॥१३४॥
रोचनालिखितं ह्येतत्सम्यक् स्वर्णशलाकया। हेमपट्टे विधानेन गुलिकीकृत्य पूजितम् ॥१३५॥
सम्यक् संपातसंसिक्तं मन्त्रितं मूलमन्त्रतः। गोपालयन्त्रमेतद्धि पुण्यवद्भिः करे धृतम् ॥१३६॥
त्रैलोक्यवश्यकर्मादौ समर्थं चातिगोपितम्। कीर्त्यादिवर्धनं राज्यपुत्रपौत्रधनप्रदम् ॥१३७॥
कान्तिरक्षाकरं नृणां सर्वसौभाग्यदायकम्। अपस्मारमतिभ्रंशमोहमूर्च्छाज्वरादिभिः ॥१३८॥
राक्षसोन्मादभूताद्यैः पीडितानां च मस्तके। एतद्यन्त्रं स्मरेन्मन्त्रं जपेन्नश्यति तत्क्षणात् ॥१३९॥

अस्यार्थः—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, तत्कोणेषु वक्ष्यमाणगोपालषडक्षर-मन्त्रार्णानेकैकशो विलिख्य, तद्बहिर्दशदलपद्मं कृत्वा, तत्केसरेषु वक्ष्यमाणगोपालविंशत्यक्षरमन्त्रार्णान् (द्विद्विशो आलिख्य दलेषु पूर्वोक्तदशाक्षरवर्णानेकैकशो) विलिख्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तत्कोणेषु कामबीजं लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

गोपाल यन्त्र—षट्कोण बनाकर उसके मध्य में क्लीं के गर्भ में साध्य नाम-कर्म लिखे। षडक्षर मन्त्र के वर्णों को कोणों में लिखे। इसके बाहर दश दल कमल बनावे। दलों के किंजल्क में विंशाक्षर मन्त्र के दो-दो वर्णों को लिखे। इसके बाहर भूपुर बनाकर कोणों में कामबीज क्लीं लिखे।

गोरोचन से सोने की लेखनी से सुनहले कपड़े पर इस यन्त्र को लिखकर गोली बनाकर पूजा करे। सम्यक् होम-सम्पात से सिक्त करके मूल मन्त्र से मन्त्रित करके ताबीज में भरकर हाथ में धारण करे तो पुण्यवृद्धि होती है। इससे साधक तीनों लोकों को वश में कर सकता है। उसके कीर्ति की वृद्धि होती है। राज्य, पुत्र, पौत्र एवं धन प्राप्त होते हैं। मनुष्यों के कान्ति की रक्षा होती है। सभी सौभाग्य मिलते हैं। अपस्मार मतिभ्रंश मोह मूर्च्छा ज्वरादि से या राक्षस उन्माद भूतादि से पीडितों के मस्तक पर इस यन्त्र का स्मरण करके मन्त्र का जप करे तो इन सभी कष्टों से छुटकारा मिल जाता है।

मन्त्रान्तरवर्णनम्

तथा—

कामो ब्रह्मा भारभूतिः ष्णावायुर्नमसान्वितः। षडर्णो मनुराख्यातः सर्वसंपत्प्रदायकः ॥१४०॥

कामस्तद्बीजं, ब्रह्मा क, भारभूतिः ऋ, तेन कृ। ष्णा स्वरूपं। वायुर्य। नमसा नमःशब्देन। तथा—'माया-लक्ष्मीपुरोऽष्टादशार्णो विंशाक्षरो मनुः'। माया भुवनेश्वरीबीजं। लक्ष्मीः श्रींबीजं। एतद्बीजद्वयादिः पूर्वोक्ताष्टादशाक्षरो विंशत्यर्णमन्त्रः।

श्रीकृष्ण के अन्य मन्त्र—'क्लीं कृष्णाय नम:'—यह षडक्षर मन्त्र है। 'ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा'—यह विंशाक्षर मन्त्र है। ये दोनों मन्त्र समस्त सम्पत्तियों को देने वाले हैं।

काम्यकर्मसु विनियोगविधानम्

सारसंग्रहे—

अथ काम्यानि कर्माणि वक्ष्यन्ते मन्त्रयोर्द्वयो: । देवकीतनयं कृष्णं तदानीं जातमद्भुतम् ।।१।।
शङ्खचक्रगदापद्मधारिणं गगनप्रभम् । पीतवस्त्रलसद्गात्रशोभिसर्वाङ्गसुन्दरम् ।।२।।
एवं संचिन्त्य संजप्य रात्रिशेषे दशायुतम् । त्रिमध्वक्तैर्दशांशं तु किंशुकप्रसवैर्हुनेत् ।।३।।
मन्त्रयोरेकतो मन्त्री य: करोतीत्थमादरात् । वीर्य्यं प्रज्ञां स्मृतिं प्राप्य कवीनामग्रणीर्भवेत् ।।४।।
त्यक्तदिव्याद्भुताङ्गं तं मातृक्रोडगतं शिशुम् । चलत्पादकरन्यासं चिन्तयन्नयुतं जपेत् ।।५।।
तावत्संख्यं हुनेदग्नौ घृतेनैव सुसाधक: । स लभेत् परमां भक्तिमास्तिक: शान्तचेतन: ।।६।।
रुदन्तं बालशयने गोपीभिर्दोलितं शिशुम् । ध्यात्वा क्षीरधिया तोयैस्तर्पयँल्लभतेऽशनम् ।।७।।
क्षुद्रबालग्रहप्रेतस्मृतिनाशादिभीतिषु । पिबन्तं पूतनास्तन्यं ग्रस्तस्य शिरसि स्मरन् ।।८।।
शतं साग्रं जपेन्मन्त्रं रुदतीं पूतनां तथा । सप्राणचूषणाशेषच्छिन्नमर्मकलेवराम् ।।९।।
तदानीं प्रकटीभूय प्रोक्ता नश्यन्ति राक्षसा: । हुनेत् सुखरमञ्जर्या: समिधस्त्वर्चितेऽनले ।।१०।।
पञ्चगव्योक्षिता: सम्यक् पूतनावैरिणो मुखे । पाययेद्धुतशिष्टं तु द्रव्यै: पीतनरं तत: ।।११।।
सहस्रमन्त्रितैस्तोयै: कुम्भगैरभिषेचयेत् । ग्रहपीडानिवृत्त्यर्थं दु:खौघध्वंसनाय च ।।१२।।
स्वकीयचरणोत्क्षिप्तशकटं भावयन् मनुम् । अयुतं प्रजपेत् सर्वविघ्नसङ्घ: शममियात् ।।१३।।
नीलगात्रं स्वहस्ताभ्यां नवनीतं नवं हवि: । दधानं किङ्किणीसङ्गतरक्षुनखभूषणम् ।।१४।।
एवं ध्यात्वा हुनेन्मन्त्री दूर्वाकाण्डत्रिकै: शुभै: । दुग्धाज्यलोलितैर्लक्षं तावन्मन्त्रं जपेद्बुध: ।।१५।।
गुरुं सन्तोष्य वसुभिस्तर्पयेच्च द्विजोत्तमान् । आधिव्याधिविनिर्मुक्तो दीर्घजीवी भवेत्तु स: ।।१६।।
बाहुभ्यां बकमादाय पाटयन्तं हि तुण्डयो: । कृष्णं ध्यायंस्तु बालानां भये स्पृष्ट्वा जपेन्मनुम् ।।१७।।
अभिमन्त्रिततैलेन लिम्पेत्तदुपशान्तये । गोगणं साधु रक्षन्तं चारयन्तमितस्तत: ।।१८।।
वेणुं धमन्तं गोविन्दं ध्यायेत्पूर्वोदितं फलम् । महासर्पगरप्राप्तौ चिन्तयन् दष्टमस्तके ।।१९।।
कालीयस्य फणामध्ये नृत्यन्तं कृष्णमञ्जसा । सुधादृष्ट्याभिवीक्ष(वर्ष)न्तं तद्गात्रं प्रजपेन्मनुम् ।।२०।।
वामहस्तस्य तर्जन्या तर्जयन् मन्त्रिसत्तम: । सुखीकरोति विषिणं कालदष्टमपि क्षणात् ।।२१।।
कालीयमर्दनं कृष्णं ध्यात्वा कुम्भे प्रपूजयेत् । अष्टोत्तरशतं जप्त्वा स्नापयेत्तज्जलेन यम् ।।२२।।
कालकूटविषग्रस्त: सुखीभवति सेचनात् । गोवर्धनगिरिं वामबाहुदण्डेन बिभ्रतम् ।।२३।।
दक्षहस्तसुशाखाभिर्वेणुयोजितसन्मुखम् । कृष्णं सञ्चिन्तयेन्मन्त्रं गच्छन् छत्रमृते जपन् ।।२४।।
भीतिदास्तं न बाधन्ते विद्युद्वर्षणवायव: । व्यर्थमेघौघमायान्तं वासवं चिन्तयन् हुनेत् ।।२५।।
अयुतं लवणै: शुद्धैरनावृष्टिर्भवेद्ध्रुवम् ।

काम्य कर्म—सारसंग्रह के अनुसार काम्य कर्म में श्रीकृष्ण का ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—

देवकीतनयं कृष्णं तदानीं जातमद्भुतम्। शङ्खचक्रगदापद्मधारिणं गगनप्रभम्।।
पीतवस्त्रलसद्गात्रशोभिसर्वागसुन्दरम्।

ऐसा ध्यान करके रात्रि शेष होने तक एक लाख जप करे। त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से दश हजार हवन करे। जो आदरसहित मन्त्र से ऐक्य स्थापित करता है, उसे वीर्य-प्रज्ञा-स्मृति प्राप्त होती है और वह कवियों में अग्रणी होता है। दिव्य अद्भुत अंगों का त्याग कर माता के गोद में स्थित एवं पैर तथा हाथ के सहारे चलते हुये शिशुरूप कृष्ण का ध्यान

करके दश हजार जप करे और साधक उतना ही हवन अग्नि में घी से करे तो उसे परमा भक्ति प्राप्त होती है और वह आस्तिक शान्त मन वाला होता है। सोते हुये बालक के रोने पर गोपियाँ उसे हिला रही हैं—ऐसा ध्यान करके जल को दूध मानकर तर्पण करे तो भोजन प्राप्त होता है।

क्षुद्र बालग्रह, प्रेत, स्मृति-नाशादि में पीड़ित के शिर पर हाथ रखकर पूतना का स्तनपान करते बालक कृष्ण का ध्यान करके एक सौ आठ मन्त्र जप करे। रोती हुई पूतना को प्राणों को चूसकर उसके कलेवर को छिन्न-भिन्न करने वाले कृष्ण के रूप का ध्यान करने से राक्षसों का नाश होता है। संस्कृत अग्नि में सुखरमञ्जरी से हवन करे। पूतना से पीड़ित को पञ्चगव्य से उक्षित करके हुतशिष्ट को पिलावे तब हजार जप से मन्त्रित जल से नहलावे तो ग्रहपीड़ा निवृत्त होकर दुःख समूह का नाश होता है। अपने पैरों से शकट को उलटने वाले बाल कृष्ण का ध्यान करके दश हजार मन्त्र जप करे तो सभी विघ्नसमूहों का नाश होता है।

नीले शरीर वाले बालक कृष्ण नूतन नवनीत को खा रहे हैं एवं हार-नुपूर आदि से सुशोभित हैं—इस रूप का ध्यान करके तीन-तीन दूर्वाकाण्डों को दूध एवं गोघृत से लोलित करके एक लाख हवन करे और उतने ही मन्त्र का जप करे तथा गुरु को और ब्राह्मणों को धनादि से सन्तुष्ट करके तर्पण करे तो आधि-व्याधि से मुक्त होकर दीर्घजीवी होता है।

बकासुर को मारते हुए कृष्ण का ध्यान करके भयभीत बालक का स्पर्श करके मन्त्रजप करे एवं उसके शरीर में जप से मन्त्रित तेल लगवाये तो शान्ति होती है। चरती हुई गायों की रक्षा करते हुए मुरली बजाते कृष्ण का ध्यान करके मन्त्र जप करने से भी पूर्वोक्त फल प्राप्त होता है। महा सर्प के विष से पीड़ित मनुष्य के शिर पर ध्यान करे कि कालीय नाग के फणों पर कृष्ण नाच रहे हैं एवं अपनी अमृतदृष्टि से देखकर पीड़ित के शरीर पर अमृत की वर्षा कर रहे हैं। पीड़ित का स्पर्श बाँयीं तर्जनी से करके मन्त्र जप करे तो कालदष्ट भी क्षण में ही विषपीड़ा से मुक्त होकर सुखी हो जाता है। कालीय नाग का मर्दन करने वाले कृष्ण का ध्यान करके कुम्भ जल को एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे। उस जल से कालकूट विषग्रस्त को स्नान करावे तो वह सुखी हो जाता है। गोवर्धन पर्वत को वाम बाहु दण्ड पर रखकर दक्ष हाथ से वेणु वादन कर रहे हैं, कृष्ण का ऐसा ध्यान करके गोवर्धन छत्र के नीचे अपने को मानकर जप करे तो विद्युत् वर्षण एवं वायु का भय उसे नहीं होता। बादल वर्षा व्यर्थ होने पर इन्द्र के आने का ध्यान करके दश हजार हवन नमक से करे तो वर्षा रुक-थम जाती है।

कलिन्दतनयातोये विहारनिरतं मुदा ॥२६॥
मज्जनोन्मज्जनाद्यैश्च तरलैः जलसेचनैः। गोपाङ्गनामूहेन सिच्यसमानं मुहुर्मुहुः ॥२७॥
कृष्णं संचिन्त्य मन्त्रज्ञो वेतसोत्थैः समिद्वरैः। हुनेदयुतसंख्याकैः क्षीराक्तैर्यो यथाविधि ॥२८॥
भूयसीं वृष्टिमिष्टं हि कुर्यादसमयेऽपि सः। एवमेव स्मरन् कृष्णं पीडितस्य तु मस्तके ॥२९॥
मोहनार्तिगरस्फोटभूतराक्षसपन्नगैः। मन्त्रं जपेत्तदानीं स सुखीभवति नान्यथा ॥३०॥
वैनतेयगतं कृष्णं सप्रद्युम्नं बलान्वितम्। आत्मज्वरपराभूतज्वरेण स्तुतमादरात् ॥३१॥
एवं ध्यात्वा ज्वराक्रान्तमस्तके संजपेन्मनुम्। महाघोरज्वरो दुष्टस्तदानीं नाशमाप्नुयात् ॥३२॥
एवं ध्यात्वानले कृष्णमभ्यर्च्याङ्गादिसंयुतम्। गुडूचीशकलैर्हुत्वा क्षीराक्तैरयुतं बुधः ॥३३॥
क्रूरज्वरमशक्यं च नाशयेन्नात्र संशयः। तीक्ष्णबाणप्रविद्धाङ्गभीष्मपीडाहरं हरिम् ॥३४॥
ध्यात्वा जपेत्स्पृशन्नार्तं पाणिभ्यां स सुखी भवेत्। कृष्णं सांदीपनेः पुत्रप्रदं ध्यात्वायुतं हुनेत् ॥३५॥
दुग्धाप्लुतैर्गुडूचीनां शकलैरर्चितेऽनले। अपमृत्युर्विनश्येत कृत्याः क्रूरा अपि क्षणात् ॥३६॥
कृष्णं पुत्रान् प्रयच्छन्तं द्विजाय मृतसूनवे। ध्यात्वा पार्थयुतं लक्षं जपेत् पुत्रसमृद्धये ॥३७॥
पुत्रजीवोत्थकाष्ठेन ज्वलिते हव्यवाहने। फलैस्तदीयैर्जुहुयादयुतं मधुराप्लुतैः ॥३८॥
पुत्रान् बहूनरोगान् स लभते चिरजीविनः। (दुग्धवृक्षत्वचां क्वाथैः घटमापूर्य रात्रिषु ॥३९॥
पूजयित्वायुतं जप्त्वा प्रातर्योषां पतिव्रताम्। अभिषिच्य विधानज्ञो घृतं जप्तं च पाययेत् ॥४०॥

नित्यकर्मोदितेनैवं स पुत्रान् बुद्धिशालिनः । वन्ध्यापि सा समाप्नोति नीरुजो दीर्घजीविनः ॥४१॥
बोधिपत्रपुटे तोयं जप्तमष्टोत्तरं शतम् । मौनं कृत्वा पिबेन्नारी प्राग्वर्षात् सा सुतं लभते ॥४२॥
कृत्यां क्रूरां महाभीमां काशिराजेन योजिताम् । पराजित्यात्मचक्रेण काशीं तद्भववह्निना ॥४३॥
शेषेण भस्मीकुर्वन्तं कृष्णं सम्यग् विचिन्तयन् । जुहुयान्निशि सिद्धार्थैः स्वीयतैलविलोलितैः ॥४४॥
एवं कृते तु सप्ताहं वैरिणा केनचित्कृता । कृत्या भूयस्तमेवाशु नाशयेन्नात्र संशयः ॥४५॥
आश्रमे रुचिरे दिव्ये बदरीवृक्षभूषिते । सूपविष्टं स्पृशन्तं च हस्ताम्बुजयुगेन च ॥४६॥
घण्टाकर्णस्य सर्वाङ्गं स्मृत्वा गोविन्दमादरात् । मधुराक्तैस्तिलैर्लक्षं जुहुयादेधितेऽनले ॥४७॥
अशेषपापनाशार्यं पुष्ट्यर्थं वा जपेत्ततः । रुक्मिणं बलभद्रं च दीव्यन्तं चाक्षकर्मणा ॥४८॥
ध्यायन् कृष्णं द्वेषयन्तं होमयेद् गुलिकाः शुभाः । गोमयोत्थाः क्षणाद् द्वेषः प्रीतये जायते ध्रुवम् ॥४९॥
खगेश्वरसमारूढं कुर्वन्तं बाणवर्षणम् । धावमानं रिपुगणमनुधावन्तमाशुगम् ॥५०॥
जपेत् सप्तसहस्राणि कृष्णं ध्यात्वा मनुं बुधः । सप्ताहाद्वैरिणो भूयादुच्चाटो देशतो ध्रुवम् ॥५१॥
कपित्थफलसंपातने वने वत्सकं क्षिपन् । कृष्णो ध्येयोऽयुतं जप्यो मनुरुच्चटाकृद्रिपोः ॥५२॥

यमुना-जल में प्रसन्नतापूर्वक विहार करते हुये, नानाविध स्नान करती गोपियों से बार-बार जलक्रीड़ा करते कृष्ण का ध्यान करके वेत की समिधा को क्षीराक्त करके दश हजार हवन करे तो असमय में भी भारी वर्षा होती है। कृष्ण के ऐसे ही रूप का ध्यान करके विषार्त, मोहार्त, चेचक, भूत, राक्षस, सर्प से दुःखी मनुष्य के मस्तक पर दश हजार जप करे तो पीड़ित पीड़ामुक्त हाकर सुखी होता है।

बलवान प्रद्युम्न के साथ गरुड़ पर आसीन एवं आत्मज्वर तथा पराभूत ज्वर से आदरपूर्वक स्तुत कृष्ण का ध्यान करके ज्वराक्रान्त के मस्तक पर हाथ रखकर मन्त्र जप करे तो अत्यन्त घोर ज्वर का नाश होता है। इसी प्रकार का ध्यान करके अंगों सहित कृष्ण का अर्चन करके क्षीराक्त गुडूची-खण्डों से दश हजार हवन करे तो क्रूर ज्वर का नाश होता है।

तीक्ष्ण बाणों से विद्ध अंगों वाले भीष्म की पीड़ा का हरण करने वाले कृष्ण का ध्यान करके आर्त का स्पर्श करके जप करे तो बुखार छूट जाता है और पीड़ित सुखी होता है। सांदीपन को पुत्र देने वाले कृष्ण का ध्यान करके अर्चित अग्नि में दुग्धसिक्त गुडूची-खण्डों से दश हजार हवन करे तो क्रूर कृत्या एवं अपमृत्यु का भी नाश हो जाता है।

ब्राह्मण को मृत पुत्र देते हुए अर्जुन सहित कृष्ण का ध्यान करके एक लाख जप करे तो पुत्र समृद्धियुक्त होता हैं। पुत्रजीवा के काष्ठ से ज्वलित अग्नि में पुत्रजीवा के फलों को मधुराप्लुत करके हवन करे तो बहुत रोगों से ग्रस्त पुत्रों को दीर्घायु प्राप्त होती है। दुग्ध वृक्ष की छाल से क्वाथ बनाकर घड़े में भरकर रात में पूजा करे, प्रातःकाल में पतिव्रता स्त्री को उस जल से नहलाये एवं घी को अभिमन्त्रित करके उसे पिलाये।

इस प्रकार नित्य करे तो वन्ध्या को भी बुद्धिमान, निरोगी एवं दीर्घजीवी पुत्र प्राप्त होता है। पीपलपत्र के देने में जल रखकर उसे एक सौ आठ जप से मन्त्रित करे। उसे जिस स्त्री को पिला दे, उसे एक वर्ष में पुत्र उत्पन्न होता है। काशिराज द्वारा प्रेषित अतिभयंकर क्रूर कत्या को अपने चक्र से पराजित कर उसी चक्र की अग्नि से काशी को भस्मीभूत करने वाले कृष्ण का ध्यान करते हुये सरसों के तेल से लोलित सरसों से रात में हवन करे तो एक सप्ताह में शत्रुकृत कृत्या का नाश हो जाता है। वेर के वृक्ष से घिरे आश्रम में बैठकर घण्टाकर्ण के अंगों का अपने करकमलों से स्पर्श करते गोविन्द का आदरपूर्वक ध्यान करके मधुराक्त तिल से एक लाख हवन करे। अपने सभी पापों के नाश के लिये तथा पुष्टि के लिये जप करे तो उसके पापों का नाश होता है एवं पुष्टि होती है। रुक्मी एवं बलभद्र में जूये के समय द्वेष उत्पन्न करने वाले कृष्ण का ध्यान कर गोबर की गोली से हवन करे तो दो मित्रों में तत्काल द्वेष हो जाता है।

गरुड़ पर सवार कृष्ण की बाणवर्षा से शत्रु भाग रहे हैं और वे उनका पीछा कर रहे हैं—इस प्रकार का ध्यान कर

मन्त्र का सात हजार जप करे तो एक सप्ताह में वैरियों का उच्चाटन हो जाता है। वन में कपित्थवृक्षों के झुण्ड़ में बछड़ों को छिपाने वाले कृष्ण का ध्यान कर दस हजार मन्त्रजप करे तो वैरियों का उच्चाटन हो जाता है।

ध्यायन् स्वं कंसमथनं स्वेन मञ्चादधः कृतम्। वैरिणं कंसरूपं च कर्षन्तं प्राणवर्जितम्॥५३॥
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं हुनेद्वा तत्समं बुधः। समिद्भिर्जन्मनक्षत्रतरूणां तस्य मन्त्रवित्॥५४॥
शत्रुर्निधनमाप्नोति सुधाभक्षोऽपि नान्यथा। कलिद्रुमसमिद्वर्यैर्निम्बतैलप्लुतैर्हुनेत् ॥५५॥
यामिन्यामयुतं स्वस्थो रिपुर्यमपुरं व्रजेत्। कार्पासबीजचूर्णानि निशानिम्बदलानि च॥५६॥
ऐरण्डतैलसिक्तानि हुनेत् त्रिकटुकानि च। रात्रौ श्मशानभूमिस्थो रिपुनाशाय मान्त्रिकः॥५७॥
मारणं निन्दितं कर्म यदि कुर्वीत साधकः। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं यावद्वा हविषा हुनेत्॥५८॥
मन्त्री तत्पापनाशाय शान्तचेता दृढव्रतः। पुरन्दरमुखाञ्जित्वा हरन्तं सुरपादपम्॥५९॥
कृष्णं ध्यायञ्जपेल्लक्षं सर्वतो जयमाप्नुयात्। व्याख्यानमुद्रया कृष्णं गीतार्थं फाल्गुनाय च॥६०॥
कथयन्तं रथारूढं भावयन् प्रजपेन्मनुम्। धर्मवृद्धिर्भवेत् तस्य योगसिद्धिश्च जायते॥६१॥
त्रिस्वादुयुक्तैर्लक्षं यः किंशुकप्रसवैर्हुनेत्। महाकविः स वादीन्द्रो वेदवेदाङ्गपारगः॥६२॥
कोटिभास्करसङ्काशं विश्वरूपशरीरिणम्। तप्तहाटकसत्कान्तिमग्नीषोमशरीरिणम् ॥६३॥
सूर्यानलस्फुरद्वक्त्रचरणाम्बुजमण्डितम्। विविधानेकसद्धेतिं दिव्यनेपथ्यधारिणम्॥६४॥
जगद्व्योमान्तरालेषु व्याप्तं कृष्णं विचिन्तयन्। मन्त्रश्रेष्ठं जपेत् सम्यक् सहस्रं साष्टकं बुधः॥६५॥
देशगेहपुरग्रामवास्तुस्वात्मसु रक्षणम्। भवेद् दशार्णमन्त्रेण तद्वदष्टादशार्णतः॥६६॥
उक्तानेतान् प्रयोगांस्तु यदृच्छातः समाचरेत्।

कंस को मंच से गिराकर उसके प्राणों को खींचने वाले कृष्ण का ध्यान कर दश हजार मन्त्रजप करे एवं शत्रु के जन्मनक्षत्र की समिधा से दश हजार हवन करे तो अमृत पीने वाला शत्रु भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। नीम के तेल से प्लुत वहेड़े की समिधा से रात में दस हजार हवन करे तो स्वस्थ शत्रु भी यमलोक चला जाता है। कपास बीजचूर्ण, हल्दीचूर्ण एवं नीम की पत्तियों को एरण्ड के तेल से सिक्त कर त्रिकटु मिलाकर रात्रि में श्मशान भूमि में बैठकर शत्रुनाश के लिये निन्दित मारण कर्म-हेतु दश हजार जप के साथ दश हजार हवन करने से शत्रु की मृत्यु हो जाती है। इस पाप के नाश के लिये शान्त चित्त से दृढ़व्रत होकर 'इन्द्र को जीतकर कल्पवृक्ष लाने वाले' कृष्ण का ध्यान करके एक लाख जप करे तो पापों से मुक्त होकर वह सर्वत्र विजयी होता है। व्याख्यान मुद्रा द्वारा रथारुढ़ होकर अर्जुन के गीता का उपदेश करते कृष्ण का ध्यान कर मन्त्रजप करे तो उसके धर्म की वृद्धि होती है और वह योगसिद्ध होता है। त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से हवन करने से वह महाकवि, वादीन्द्र और वेद-वेदाङ्गपारग होता है। करोड़ों सूर्य के समान, विश्वरूप शरीर वाले, दीप्यमान स्वर्ण-सदृश कान्ति वाले, अग्नी-षोम का शरीर वाले, सूर्य एवं वायु के समान स्फुटित मुख एवं चरणकमल वाले, अनेक हेतियों से युक्त एवं दिव्य वेषधारी कृष्ण का ध्यान करके मन्त्रश्रेष्ठ का एक हजार आठ जप करे। इससे देश गेह नगर ग्राम वास्तु आत्मरक्षण होता है। दशाक्षर और अष्टादशाक्षर मन्त्र से भी यह फल प्राप्त होता है। इन सभी प्रयोगों को इच्छानुसार एवं आवश्यकतानुसार करना चाहिये।

वश्यकर्माधुना वक्ष्ये मन्त्रद्वयत आदरात्॥६७॥
यत् कृत्वा विधिना मन्त्री सर्वलोकप्रियो भवेत्। अरण्योद्भवसत्पुष्पैर्विकचैररुणैः शुभैः॥६८॥
मध्याह्नोक्तविधानेन पूजयित्वा गृहे हरिम्। प्रत्यहं दशवर्णं यः सहस्रं साष्टकं जपेत्॥६९॥
मण्डलाद् द्विजमुख्यानां चक्रं तस्य वशी भवेत्। मालतीकुसुमैः श्रेष्ठैर्गोपवेषं यथा पुरा॥७०॥
कृष्णमभ्यर्च्य नृपतीन् वशं नयति दासवत्। क्रीडन्तं रक्तकुसुमैरश्वमारसमुद्भवैः॥७१॥
वैश्यान् नीलोत्पलैः शूद्रानिष्ट्वा गायन्तमच्युतम्। तण्डुलैः शुक्लपुष्पैश्च घृताक्तैश्च सहस्रकम्॥७२॥

अन्वहं सप्तरात्रं तु हुत्वा तद्भस्म धारयेत्। अलिके धारणान्नारी स्वपुमांसं वशं नयेत् ॥७३॥
पुरुषश्च तथा नारीं दासीकुर्यान्न संशयः। पुष्पताम्बूलवासांसि कज्जलालेपनादिकम् ॥७४॥
एकेन मन्त्रयेन्मन्त्री सहस्रमभिमन्त्र्य च। दद्यादेभ्यः सदा ते स्युः किङ्करा मरणान्तिकम् ॥७५॥
आपणे व्यवहारादौ विवादे राजवेश्मसु। परिषद्यकर्मादौ शतं साग्रं जपेत्तु यः ॥७६॥
तत्र यद्वचनं ब्रूयात्तेनैव स जयी भवेत्। सूपविष्टं कदम्बाधो वल्लवीभिः सहाच्युतम् ॥७७॥
हृद्यगानरतं ध्यात्वा हुत्वा त्रिमधुराप्लुतैः। अपामार्गसमिच्छ्रेष्ठैस्त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥७८॥

अब इन दो मन्त्रों से होने वाले वश्य कर्म को कहता हूँ, जिसे करने से मन्त्री सभी लोकों का प्रिय होता है। जंगल में उत्पन्न विकसित लाल फूलों से मध्याह्नोक्त विधान से घर में कृष्ण की पूजा करके प्रतिदिन जो दशाक्षर मन्त्र का एक हजार आठ जप करता है, चालीस दिनों में द्विजमुख्यों का संघ उसके वश में होता है। पूर्वोक्त श्रेष्ठ गोप के वेश में कृष्ण का मालती फूल से पूजा करने पर राजा दासवत् वश में होते हैं।

लाल कनैल के फूलों से क्रीड़ारत कृष्ण को वैश्य द्वारा और नीलोत्पल से शूद्र द्वारा पूजन कर अच्युत गायन करते हुए उजले फूलों और चावल को घृताक्त करके सात रात तक प्रत्येक रात में एक हजार हवन करे। उस भस्म से स्त्री के ललाट में तिलक लगावे तो वह अपने पति को वश में कर लेती है। उसी प्रकार पुरुष भी स्त्री को दासी के समान वश में कर लेता है। पान फूल वस्त्र काजल लेप भस्म को एक हजार जप से मन्त्रित करके जिसे देता है, वह आजीवन उसके वश में किङ्कर के समान हो जाता है।

दुकान में, व्यवहारादि विवाद में, राजमहल में, परिषद, यज्ञकर्मादि में यदि एक सौ जप करके जो भी बोलता है उसी से वह जयी होता है। कदम्ब के नीचे गोपियों के साथ बैठकर गायन करते कृष्ण का हृदय में ध्यान करके त्रिमधुराक्त अपामार्ग की समिधाओं से हवन करे तो तीनों लोकों को वश में कर लेता है।

रासक्रीडारतं कृष्णं ध्यात्वा मन्त्रं दशाक्षरम्। जपेत् सहस्रं नित्यं यो मासमात्रेण साधकः ॥७९॥
इष्टां कन्यामवाप्नोति दुर्लभामपि नान्यथा। अत्युच्चकुन्द(ञ्ज)मारूढं कृष्णं ध्यात्वा सहस्रकम् ॥८०॥
सायं जप्यात्तु या कन्या प्रत्यहं मण्डलाद्धि सा। मन्त्रस्यास्य प्रभावेन वाञ्छितं वृणुयाद्वरम् ॥८१॥
गोपीहस्तसरोजानि धृत्वा नृत्यन्तमञ्जसा। कृष्णं सञ्चिन्त्य मन्त्रं यो जपेदष्टादशाक्षरम् ॥८२॥
लक्षं मधुप्लुतैर्वापि चूर्णैर्लाजसमुद्भवैः। हुत्वायुतं जपेत्तावत् कन्यामिष्टां लभेत सः ॥८३॥
अष्टादशार्णमन्त्रेण पलाशसमिधोऽयुतम्। मधुप्लुतैः कुशैर्वापि हुनेद्वा तिलतण्डुलैः ॥८४॥
वशीभवन्ति भूदेवा दत्त्वा सर्वस्वमादरात्। कृतमालप्रसूनैश्च कुरण्टकुसुमैरपि ॥८५॥
हुत्वा वशीकरोत्येवं भूपालान् सपरिच्छदान्। वकुलोद्भवसत्पुष्पैः पाटलोत्थैश्च तैरपि ॥८६॥
अक्षजैर्विट्तुरीयौ च स्वायत्तौ कुरुते क्षणात्। नूतनोत्फुल्लसत्पद्मैः सुगन्धैररुणोत्पलैः ॥८७॥
मध्वक्तैश्चम्पकैर्वापि पाटलोत्थैः प्रसूनकैः। हुत्वायुतं क्रमेणैव वशयेद् वर्णयोषितः ॥८८॥
अश्वमारप्रसूनैर्यो मध्वक्तैः प्रत्यहं हुनेत्। रात्रौ सहस्रसंख्यातैः सप्तरात्रमतन्द्रितः ॥८९॥
पण्याङ्गनानां साहस्रं चारुयौवनगर्वितम्। पञ्चबाणप्रविद्धाङ्गं दासीकुर्यान्न संशयः ॥९०॥
सिद्धार्थैर्लवणोपेतैर्मध्वक्तैस्त्रिसहस्रकम्। होमं प्रकुर्वतो रात्राविन्द्रोऽपि द्राग्वशी भवेत् ॥९१॥
श्रीवृक्षस्य फलैः पत्रैस्तत्फलैश्च प्रसूनकैः। त्रिस्वादुसंयुतैर्होमात् पद्मैस्तण्डुलसंयुतैः ॥९२॥
प्रत्येकद्रव्यतो लक्ष्मीं वशीकुर्यान्निजालये। वासांसि वल्लवस्त्रीणां मनोभिः सह केशवम् ॥९३॥
समादाय कदम्बं तु समारूढं तु चिन्तयन्। जप्यात् सहस्रमानं यो रात्रौ स दशभिर्दिनैः ॥९४॥
शचीमप्यानयन्मन्त्री शीघ्रमेव न संशयः। किं बहूक्तेन मन्त्राभ्यामेताभ्यां सदृशोऽपरः ॥९५॥
नास्ति वश्ये तथाकृष्टौ देवदानवयोषिताम्। चन्द्रकुन्दसुगौराङ्गं रक्तपद्मदलेक्षणम् ॥९६॥

अरिकम्बू गदापद्मे बाहुदण्डैस्तु बिभ्रतम्। दिव्यैश्च मण्डनालेपैः पद्मदाम्ना च भूषितम्॥९७॥
पीताम्बरलसद्गात्रं तरुणं मुनिसेवितम्। विकचत्पद्ममध्यस्थं ध्यात्वा नन्दात्मजं प्रभुम्॥९८॥
स्वहृत्पद्मगतं देवं पुराणपुरुषं नवम्। नीलमेघानिभं वापि द्रुतहेमद्युतिं तु वा॥९९॥
जपेदेकतरं मन्त्री ध्रुवाभ्यां पुटितं कृती। लक्षद्वादशकं सम्यक् तत्सहस्रं समिद्वरैः॥१००॥
दुग्धाप्लुतैर्हुनेन्मन्त्री पयोद्रुमसमुद्भवैः। मध्वाज्यलोलितेनापि हविषा वा जितेन्द्रियः॥१०१॥
पश्चाद्विश्वाधिपं नित्यचिदानन्दकलेवरम्। भवान्धकारतरणिं स्वीयहृत्सरसीरुहे॥१०२॥
आत्माभेदेन सञ्चिन्त्य प्रत्यहं परमेश्वरम्। त्रिसहस्रं जपेन्मन्त्री यजेत् सांध्योक्तवर्त्मना॥१०३॥
विधिमेनं भजेद्यस्तु श्रद्धाभक्तिसमन्वितः। संसाराब्धिं महाभीमं जरामृत्युमहाह्रयैः॥१०४॥
अत्युच्चैर्लहरीजालैर्विषयग्राहसंयुतम्। समुल्लङ्घ्य परं तेजो जीवन् विष्णोर्निरञ्जनम्॥१०५॥
उच्चरंस्तस्य नामानि पिबंस्तस्य कथामृतम्। आकारांस्तस्य च ध्यायन् तत्पादाब्जं नमन्नपि॥१०६॥
भक्त्या परमयोपेतो जीवन्मुक्तः स कथ्यते।

रास क्रीड़ारत कृष्ण का ध्यान करके दशाक्षर मन्त्र का जप एक हजार नित्य करे तो एक महीने में साधक दुर्लभ इष्ट कन्या को भी प्राप्त कर लेता है। विशाल कुन्द पर सवार कृष्ण का ध्यान करके कन्या यदि चालीस दिनों तक प्रतिदिन शाम में मन्त्र का एक हजार जप करे तो इस मन्त्र के प्रभाव से वांछित वर से उसका विवाह होता है।

गोपी के हाथों को पकड़कर नाचते हुए कृष्ण का ध्यान करके अष्टादशाक्षर मन्त्र का एक लाख जप करे एवं मध्यवक्त लावा चूर्ण से दश हजार हवन करके तब तक जप करे, जब तक इच्छित कन्या की प्राप्ति न हो जाय। ऐसा करने से उसे वह कन्या मिल जाती है।

अट्ठारह अक्षरों के मन्त्र से पलाश-समिधा की ज्वलित अग्नि में मध्वक्त कुश या तिल चावल से दश हजार हवन करे तो सभी ब्राह्मण अपना सर्वस्व देकर वश में हो जाते हैं। कृतमालपुष्प और कुरण्टक-फूलों से हवन करने पर राजा अपने दरबारियों के साथ वश में होते हैं। मौलसिरी-गुलाब-अकवन के फूलों से हवन करने पर भी वे वश में होते हैं। नव विकसित श्वेत पद्म, सुगन्धित लाल कमल या मध्वक्त चम्पा और गुलाव के फूलों से क्रमशः हवन करने पर साधक अपने वर्ण की स्त्री को वश में कर लेता है। मध्वक्त कनैल के फूलों से प्रतिदिन रात में एक हजार हवन करे तो सुन्दर, यौवनगर्विता एक हजार वैश्य कन्याएँ कामविह्वल होकर दासी हो जाती हैं।

मध्वक्त सरसों-नमक के मिश्रण से रात्रि में तीन हजार हवन करने पर इन्द्र भी तुरन्त वश में होते हैं। त्रिमधुराक्त बेल के फल-पत्र-फूल में कमल एवं चावल को मिलाकर या प्रत्येक द्रव्य से अलग-अलग हवन करने पर साधक लक्ष्मी को अपने घर में रहने के लिय विवश कर लेता है। गोपियों के वस्त्र को लेकर कदम्ब पर बैठे कृष्ण का ध्यान करके एक हजार जप दश रातों में करने से साधक के पास शची भी शीघ्र चली आती है। बहुत क्या कहा जाय, इन मन्त्रों के समान देव-दानव-सुन्दरियों के वश्य एवं आकर्षण के लिये दूसरा कोई मन्त्र नहीं है।

चन्द्रकिरणों के सदृश गौर वर्ण अंग वाले, लाल कमल-सदृश आँखों वाले, चक्र-शंख-गदा-पद्म को धारण करने वाले, दिव्य लेपों एवं पद्माक्ष की माला से भूषित, पीत वस्त्रधारी, युवा, मुनियों से सेवित, कमलकुड्मलों के मध्य में अवस्थित कृष्ण के रूप का ध्यान अपने हृदय कमल में करके अथवा नव-नील मेघ के समान अथवा द्रुत हेम द्युति-सदृश पुराण पुरुष का ध्यान करके ॐ से सम्पुटित मन्त्र का जप बारह लाख करे। बारह हजार हवन दूध मधु आज्य लोलित पयोद्रुम की समिधा से या हवि से जितेन्द्रिय होकर करे। इसके बाद नित्य चिदानन्द कलेवर विश्वेश्वर का ध्यान करके तीन हजार मन्त्र जप करे। सन्ध्योक्त मार्ग से विधिवत् श्रद्धा-भक्ति से भजन करे तो अति भयंकर जरा-मृत्युरूपी किनारों वालो अत्यन्त ऊँचे लहरों वाले, विषयरूपी ग्राहों से संयुक्त संसाररूपी समुद्र को पार करके जीव निरंजन विष्णु के परम तेज में मिल जाता है। उसके नामों का उच्चारण करते हुये, उसके कथामृत का पान करते हुये एवं उसके रूप का ध्यान करते चरण कमल में नमन करे तो परम भक्ति से युक्त होकर जीवनमुक्त हो जाता है।

यन्त्रराजोद्धारनिर्णय:

पिण्डं वह्निपुटे सुवृत्तविवरे संलिख्य तत्कोणगान्
षड्वर्णान् पुनरङ्गपञ्चकलसतसन्धीन् दलेष्वष्टसु।
अष्टार्णान् वसुयुग्मवर्णसुमनुं तत्संख्यपत्रस्थितं
बाह्येऽष्टादशपत्रपद्मलसितान् तत्संख्यवर्णाँल्लिखेत् ॥१०७॥
पद्मं तत्त्वदलं तत: प्रतिदलं गायत्रिवर्णाँल्लिखेत्
संवेष्ट्य स्मरबीजत: पुनरथो त्रिंशद् द्विपत्राम्बुजम्।
तत्रानुष्टुभवर्णकाननुदलं वीतं च पिण्डेन तत्
पञ्चाशल्लिपिभि: क्रमेण च पुन: पाशाङ्कुशाभ्यां वृतम् ॥१०८॥
सर्वं वृत्तेन संवीतं यन्त्रमेतत् प्रकल्पितम्। यन्त्रराजमिति ख्यातं सर्वविश्वप्रमोहनम् ॥१०९॥
कामधर्मार्थफलदं शत्रुदस्युनिवारणम्। कीर्तिकान्तिधनारोग्यरक्षाश्रीविजयप्रदम् ॥११०॥
पुत्रपौत्रप्रदं लोके भूतवेतालनाशनम्। लिखितं भूर्जपत्रादौ पूजितं चाभिमन्त्रितम् ॥१११॥
धारितं सर्वकामानां वृद्धिदं नात्र संशय:। इति।

अस्यार्थ:—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये वृत्तं विलिख्य, तस्योदरे पिण्डं गोपालैकाक्षरं बीजं विलिख्य, तन्मध्ये साध्यनाम स्फुटं कृत्वा, षट्कोणेषु पूर्वोक्तषडर्णमन्त्रवर्णानेकैकशो विलिख्य, तत्सन्धिषु 'आचक्राय स्वाहा' इत्यादिपूर्वोक्तपञ्चाङ्गमन्त्रानालिख्य, तद्बाह्येऽष्टदलकमलं कृत्वा तद्दलेषु वक्ष्यमाणकृष्णाष्टाक्षरवर्णानालिख्य, (तद्बहि: षोडशदलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु वक्ष्यमाणकृष्णषोडशार्णमन्त्रवर्णान् विलिख्य, तद्बहिरष्टादशदलं कृत्वा तद्दलेषु पूर्वोक्ताष्टादशाक्षरमन्त्रवर्णानालिख्य) तद्बाह्ये चतुर्विंशतिदलं पद्मं कृत्वा तद्दलेषु वक्ष्यमाणकृष्णगायत्रीवर्णानालिख्य, तद्बलिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तदन्तरालवीथ्यां कामबीजेन संवेष्ट्य, तद्बहिर्द्वात्रिंशद् दलं पद्मं कृत्वा तद्दलेषु वक्ष्यमाणगोपालानुष्टुभवर्णानालिख्य, तद्बहिर्वृत्तचतुष्टयमालिख्य, वीथीत्रयं निष्पाद्याभ्यन्तरवीथ्यां पिण्डगोपालमन्त्रेणावेष्ट्य, द्वितीयवीथ्यां मातृकावर्णैरावेष्ट्य, तृतीयवीथ्यां पाशाङ्कुशबीजाभ्यां निरन्तरं संवेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तविधिना साधितं धृतमुक्तफलदं भवति। तथा—काम: कृष्णाय गोविन्दो ङेयुग्वस्वक्षरो मनु:'। 'कामं कामबीजं क्लीं। कृष्णाय स्वरूपं। गोविन्दो ङेयुक् गोविन्दाय। वस्वक्षरोऽष्टाक्षर:। तथा—'तारं नम: पदं कृष्णं चतुर्थ्यन्तं वदेत्तत:। ङेन्तं च देवकीपुत्रं वर्मास्त्रान्तं द्विठान्तक:। मनु: षोडशवर्णोऽयं षोडशारे प्रकल्पित:।' तारं प्रणवं। नम: स्वरूपं। कृष्णं चतुर्थ्यन्तं कृष्णायै। ङेन्तं देवकीपुत्रं देवकीपुत्राय। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। द्विठ: स्वाहा।

षट्कोण बनाकर उसके मध्य में वृत्त बनावे। उसके उदर में क्लीं लिखे। क्लीं के गर्भ में साध्य नाम लिखे। छ: कोणों में 'क्लीं कृष्णाय नम:' के छ: अक्षरों में से एक-एक अक्षर लिखे। कोणों की सन्धियों में 'आचक्राय स्वाहा' इत्यादि पूर्वोक्त पञ्चाङ्ग मन्त्रों को लिखे। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। उसके दलों में 'श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा'—इस अष्टाक्षर मन्त्र के अक्षरों को एक-एक करके लिखे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनावे। उसके दलों में 'ॐ नमो कृष्णायदेवकीपुत्राय हुं फट् स्वाहा'—षोडशाक्षर मन्त्र के एक-एक वर्णों को लिखे। उसके बाहर अष्टादश दल कमल बनाकर दलों में पूर्वोक्त 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा'—इस अट्ठारह अक्षरों के मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर चतुर्विंश दल कमल बनाकर दलों में कृष्णगायत्री 'दामोदराय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्न: कृष्ण: प्रचोदयात्' के एक-एक अक्षर लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल को 'क्लीं' लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर बत्तीश दल कमल बनाकर उसके दलों में गोपाल अनुष्टुप् मन्त्र 'ग्लौं क्लीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालवपुषे श्यामलाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के एक-एक अक्षर लिखे। उसके बाहर चार वृत्त बनावे। उनमें निर्मित तीन वीथियों में भीतर से पहली वीथी में पिण्डगोपाल मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के अक्षरों को लिखकर वेष्टित करे। द्वितीय वीथि में मातृका वर्णों को लिखकर

वेष्टित करे। इस यन्त्र को यन्त्रराज कहते हैं। यह समस्त विश्व को मोहित करने वाला, लोक में काम-धर्म एवं अर्थ प्रदान करने वाला, शत्रुओं एवं दस्युओं का निवारक, कीर्ति-कान्ति-धन-आरोग्य-रक्षा-श्री एवं विजय देने वाला, पुत्र-पौत्र प्रदान करने वाला एवं भूत-वेताल का नाश करने वाला है। इसे भोजपत्र पर लिखकर पूजा करके अभिमन्त्रित करके धारण करे तो सभी मनोकामनायें पूरी होती हैं।

गोपालगायत्री

तथा—

दामोदरं चतुर्थ्यन्तं विद्महे तदनन्तरम्। वासुदेवास्य चेत्यन्ते धीमहीति पदं वदेत् ॥११२॥
तन्नः कृष्ण इति प्रोक्त्वा पुनर्ब्रूयात् प्रचोदयात्। गायत्रीयं समाख्याता गोपालस्य जगत्पतेः ॥११३॥

दामोदरं चतुर्थ्यन्तं दामोदराय। सुगममन्यत्।

गोपाल गायत्री—गोपालगायत्री का स्वरूप इस प्रकार होता है—दामोदराय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।

द्वात्रिंशाक्षरमन्त्रः

तथा—

पिण्डमारहृदन्तेऽपि ङेयुतं भगवत्पदम्। नन्दपुत्रपदं ज्ञेयं बालतो वपुषे तथा ॥११४॥
श्यामलाय पदस्यान्ते दशवर्णमनुं वदेत्। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रस्तत्संख्यदलकल्पितः ॥११५॥

पिण्डं ग्लौंबीजं। मारः कामबीजं। हृन्नमः। ङेयुतं भगवत्पदं भगवते। नन्दपुत्रं ङेन्तं नन्दपुत्राय। बालवपुषे स्वरूपं। श्यामलाय स्वरूपम्। दशवर्णमनुः प्रोक्तगोपालदशाक्षरमन्त्रः। एतन्मन्त्रचतुष्टयं यन्त्रे लेख्यम्।

द्वात्रिंशाक्षर मन्त्र—बत्तीस अक्षरों का कृष्ण का मन्त्र इस प्रकार है—ग्लौं क्लीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालवपुषे श्यामलाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

यन्त्रान्तरोद्धारः

तथा—

षट्कोणे पिण्डबीजं द्विनवलिपिवृतं कोणषट्के षडर्णं
दिक्पत्राब्जे दशार्णं विलिखतु च ततो वेष्टितं मारबीजैः।
किञ्जल्केषु स्वराढ्यं द्विवसुदललसत्षोडशार्णं च पद्मं
कादीन् किञ्जल्कसंख्यान् रददललिखितानुष्टुबर्णं च पद्मम् ॥११६॥

पाशाङ्कुशावृतं बाह्ये भूबिम्बद्वितयाश्रिषु। वस्वर्णमन्त्रसंयुक्तं कृष्णयन्त्रमिदं विदुः ॥११७॥
रक्षाकृद् घोरमारिघ्नं चतुर्वर्गफलप्रदम्। इति।

अस्यार्थः—षट्कोणमध्ये पिण्डबीजं ससाध्यं विलिख्य, तद्बीजमष्टादशाक्षरमन्त्रेण संवेष्ट्य, षट्कोणेषु प्रोक्तषडक्षरमन्त्रवर्णान् विलिख्य, तद्बहिर्दशदलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु पूर्वोक्तगोपालमन्त्रस्य दशाक्षराण्यालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तयोरन्तरालवीथ्यां कामबीजैर्निरन्तरं संवेष्ट्य, तद्बहिः षोडशदलकमलं कृत्वा तत्केसरेषु (षोडशस्वरान् तद्दलेषु प्रोक्तषोडशाक्षरमन्त्रवर्णांश्चालिख्य, तद्बहिर्द्वात्रिंशद् दलकमलं कृत्वा तत्केसरेषु) कादिसान्तात् वर्णानालिख्य तद्दलेषु प्रोक्तद्वात्रिंशदक्षरमन्त्रवर्णानालिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले पाशाङ्कुशबीजाभ्यामावेष्ट्य, तद्बहिः संपुटितचतुरस्र-द्वयात्मकमष्टकोणं कृत्वा तत्कोणेषु प्रोक्ताष्टाक्षरमन्त्रवर्णानेकैकमालिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

तथा—

कृत्वा नवपदं मन्त्री मण्डलं चाब्जशूलकम्। मध्यकोणे लिखेच्छ्लोकं वर्तुलद्वयशोभितम् ॥११८॥

वृत्ताकारेण मन्त्रज्ञो मध्यादिमध्यपश्चिमम्। अष्टार्णं शिष्टकोणेषु द्वादशार्णेन वेष्टितम् ॥११९॥
कृष्णयन्त्रमिति ख्यातं सर्वरक्षाकरं परम्। भूजेपत्रे लिखित्वा तु पूजितं स्थापितानिलम् ॥१२०॥
करेण धारितं नित्यं सर्वेष्टसुखवर्धनम्। द्विजद्रुपट्टिकामध्ये सम्यगालिख्य पूजितम् ॥१२१॥
शालादौ निहितं यन्त्रं गवां वृद्धिकरं सदा। इति।

अस्यार्थः—प्राक्प्रत्यक्सूत्रचतुष्टयं दक्षिणोत्तरसूत्रचतुष्टयं च कृत्वा नवकोष्टयुतं चक्रं विरच्य कोणचतुष्टये शूलचतुष्टयं कृत्वा तन्मध्यकोष्ठमध्ये वर्तुलद्वयं विरच्य तत्र वक्ष्यमाणश्लोकमन्त्राक्षराणि वक्ष्यमाणप्रकारेण लिखेत्। तद्यथा—प्रथमवर्तुले पूर्वार्धं प्रतिलोमतो विलिख्य द्वितीयवर्तुले द्वितीयार्धं तथैव लिखेत्। अवशिष्टकोष्ठेषु पूर्वोक्त-गोपालष्टाक्षर(मन्त्रवर्णानिकमेकं लिखेत्, ततस्तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले पूर्वोक्तद्वादशाक्षर)मन्त्रेण वेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

षट्कोण बनाकर उसके मध्यम में 'क्लीं' लिखकर क्लीं के गर्भ में साध्य नाम लिखे। उसे अट्ठारह अक्षरों के मन्त्र से वेष्टित करे। छ: कोणों में पूर्वोक्त षडक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय नम:' के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दश दल पद्म बनाकर उसके दलों में पूर्वोक्त दशाक्षर गोपाल मन्त्र के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनसे निर्मित अन्तराल में निरन्तर क्लीं लिखकर वेष्टित करे। उसके बाहर षोडशदल कमल बनाकर दल के केसरों में सोलह स्वरों को लिखे। दलों में षोडशाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो कृष्णाय देवकीपुत्राय हुं फट् स्वाहा' के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनाकर दलों के केसरों में 'क' से 'स' तक के बत्तीस वर्णों को लिखे। दलों में प्रोक्त बत्तीस अक्षरों के मन्त्र 'ग्लौं क्लीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालवपुषे श्यामलाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर वृत्तों के अन्तराल में पाश अंकुशबीज 'आं-क्रों' को निरन्तर लिखे। उसके बाहर चतुरस्रद्वय बनाकर कोणों में पूर्वोक्त अष्टाक्षर मन्त्र के वर्णों को लिखे। यह मन्त्र रक्षाकारक, घोर मारी का नाशक एवं चतुर्वर्ग-फलप्रद होता है।

पूर्व से पश्चिम चार रेखा खींचकर एवं दक्षिण से उत्तर चार रेखा खींचकर नवकोष्ठ बनावे। चारों कोणों में चार त्रिशूल बनावे। उसके मध्य कोष्ठ में दो वृत्त बनावे, उनसे अग्रांकित श्लोक मन्त्र 'तसुकी देवदेवेन तवे देवरतो रतम्। तरतो रूढतो ख्याततख्यातो देवकी सुत:' के प्रथम पद को लिखे। द्वितीय वर्तुल में द्वितीयार्ध लिखे। शेष कोष्ठों में पूर्वोक्त गोपाल अष्टाक्षर मन्त्र 'श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा' मन्त्र के एक-एक अक्षरों को लिखे। इसके बाहर वृत्त के अन्तराल को पूर्वोक्त द्वादशाक्षर मन्त्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' के अक्षरों से वेष्टित करे। विख्यात यह यन्त्र सर्वरक्षाकर है। इसे भोजपत्र पर लिखकर पूजित एवं स्थापित करके हाथ में धारण करने से नित्य सभी सुखों की वृद्धि होती है। पीपल की पट्टिका पर लिखकर पूजा करके गोशाला में रखने से गायों की सदा वृद्धि होती है।

श्लोकमन्त्रवर्णनम्

तथा—

तसुकीतिपदं ब्रूयाद् देवदेवेन उच्चरेत्। तवे देवरतो ब्रूयाद्रतं च तरतो वदेत् ॥१२२॥
रूढतो ख्यातशब्दान्ते तख्यातो पदमुच्चरेत्। देवकीसुतशब्दान्तः श्लोकमन्त्रोऽयमीरितः ॥१२३॥

तथचायं मन्त्रः—'तसुकी देवदेवेन तवेदेवरतो रतम्। तरतो रूढतो ख्याततख्यातो देवकीसुत :॥' इति।

तथा—

श्लोकमन्त्रं महेशानि चतुष्षष्टिपदे लिखेत्। राक्षसादि च यद्भूयः सर्वतोभद्रनामकम् ॥१२४॥
यन्त्रं पुष्टिबलारोग्यकीर्तिलक्ष्मीजयप्रदम्। सारजे फलके कृत्वा निखातं गोष्ठमध्यतः ॥१२५॥
दस्युमारीग्रहादिभ्यो रक्षां कुर्याद्गवां सदा। क्षीरगोपपदं प्रोक्त्वा पगोरक्षीति चोद्धरेत् ॥१२६॥
रक्षमाक्षपदं पश्चात् क्षमाक्षरपदं ततः। गोमानो-पदमाख्यातं गगनोमापदं वदेत् ॥१२७॥
गोपक्षगपदं प्रोक्त्वा त्यत्यगक्षपमुच्चरेत्। अयं श्लोकमनुः प्रोक्तो द्वितीयः सर्वसिद्धिदः ॥१२८॥

मन्त्रस्तु यथा—'क्षीरगोप पगोरक्षी रक्षमाक्ष क्षमाक्षर। गोमानोग गनोमागो पक्षगत्य त्यगक्षप॥' इति।

श्लोकमन्त्र—मूलोक्त दो श्लोकों के अनुसार मन्त्र होता है—तसुकी देवदेवेन तवेदेव रतो रतम्। तरतो रूढ़तो ख्याततख्यातो देवकीसुत:।

चौंसठ कोष्ठों का मण्डल बनाकर कोष्ठों में श्लोकमन्त्रों के अक्षरों को लिखे। यह सर्वतोभद्र यन्त्र पुष्टि, बल, आरोग्य, कीर्ति, लक्ष्मी एवं जयप्रद है। चन्दन-फलक पर इस मन्त्र को लिखकर गोशाला में गाड़ दे इसके प्रभाव से डाकुओं से, मारी से, ग्रहादि से गायों की रक्षा होती है।

दूसरा श्लोकमन्त्र है—क्षीरगोप पगोरक्षी रक्षमाक्ष क्षमाक्षर। गोमानोग गनोमागो पक्षगत्य त्यगक्षप। इस द्वितीय श्लोक मन्त्र को समस्त सिद्धियों को देने वाला कहा जाता है।

यन्त्रान्तरनिरूपणम्

केरलीये यन्त्रसारे—

साध्यगर्भं लिखेत् कामं वह्निगेहयुगोदरे। षट्सु कोणेषु षड्वर्णांश्चतुष्पत्राम्बुजे ततः॥१॥
केसरोद्यच्चतुर्वर्णे द्वादशार्णमनोर्लिखेत्। त्रीणि त्रीणि च वर्णानि प्रतिपत्रं ततो बहिः॥२॥
पद्मे दिक्पत्रके राजद्दशार्णमनुकेसरे। विंशत्यर्णमनोर्वर्णान् प्रतिपत्रे द्विशो लिखेत्॥३॥
बहिः षोडशपत्रेषु स्वरोद्यत्केसरेष्वथ। आगावो ह्यस्य सूक्तस्य चार्धमर्धमृचां लिखेत्॥४॥
बहिः संवेष्ट्य काद्यैश्च ततो भूबिम्बमालिखेत्। वाराहबीजं तद्दिक्षु भूबीजं कोणगं लिखेत्॥५॥
गोपालयन्त्रमेतद्धि विधिना स्थापितं गृहे। तत्र गावः पयस्विन्यः सवृषाश्च निरामयाः॥६॥
पीनोध्न्यो बहुरूपाश्च सुशीलाश्च भवन्ति हि। धनधान्यधरारत्नशालिनी तस्य मन्दिरे॥७॥
लक्ष्मीरतिस्थिरा भूत्वा वसेदाभूतसंप्लवम्। इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं विलिख्य तन्मध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, षट्कोणेषु पूर्वोक्तकृष्णषडक्षरमन्त्रार्णानालिख्य, तद्बहिश्चतुर्दलपद्मं कृत्वा तत्केसरेषु 'क्लींकृष्णक्ली' इति मन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य (तद्दलेषु पूर्वोक्तद्वादशाक्षरमन्त्रस्य त्रीणि त्रीण्यक्षराणि आलिख्य तद्बहिर्दशदलपद्मं कृत्वा तत्केसरेषु पूर्वोक्तदशाक्षरमन्त्रार्णान् विलिख्य) तद्दलेषु पूर्वोक्तविंशतिवर्णमन्त्रस्य द्विद्विक्रमाद्विंशतिवर्णालिख्य, तद्बहिः षोडशदलपद्मं कृत्वा तत्केसरेषु षोडश स्वरानालिख्य, तद्दलेषु ऋग्वेदोक्तस्य 'आगावो अग्मन्नुत' इत्येतत्सूक्तस्य प्रतिदलं ऋचामर्धमर्धं विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले ककारादिक्षकारान्तैरावेष्ट्य, तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तस्य चतुर्दिक्षु वराहबीजं कोणेषु भूबीजं चालिखेत्। एतत् यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

तथा—

मध्ये तारं ससाध्यं वसुदलविवरे गव्यसूक्तस्य चर्चा-
मेकामेकां क्रमेण प्रविलिखतु बहिर्वेष्टितं मातृकार्णैः।
आगावो-सूक्तयन्त्रं कुगृहगतमिदं स्थापितं मन्दिरादौ
दद्याद्गोगृष्टिसत्तर्णकवृषमहिषैः संकुलामाशु लक्ष्मीम्॥८॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदमकमलमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, दलेषु वक्ष्यमाण 'आगावो' सूक्तस्यैकैकामृचं विलिख्य, वृत्तयोरन्तराले मातृकयावेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्, यन्त्रमुक्तफलदं भवति। आगावो-सूक्तस्य ऋचस्तु—

आगावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन् सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे। प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः॥१॥ इन्द्रो यज्वने पृणते च शिक्षत्युपेद्ददाति न स्वं मुषायति। भूयो भूयो रयिमिदस्य वर्धयन्नभिन्ने खिल्ये नि दधाति देवयुम्॥२॥ न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति। देवांश्च याभिर्यजते ददाति च

ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह॥३॥ न ता अर्वा रेणुककाटो अश्नुते न संस्कृतत्रमुप यंति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अनु गावो मर्तस्य वि चरन्ति यज्वनः॥४॥ गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः। इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद्धृधा मनसा चिदिन्द्रं॥५॥ यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सु प्रतीकं। भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्बो वय उच्यते सभासु॥६॥ प्रजावतीः सूयवसं रिशंतीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंतीः। मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः॥७॥ उपेदमुपवर्चनमासु गोषूप पृच्यतां। उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये॥८॥ इति।

तथा—

षट्कोणे कर्णिकायां स्मरमथ विलिखेत् कोणपट्के षडर्णं
पत्रेष्वेकैकवर्णं दशसु च दशवर्णस्य बाणैः स्मरस्य।
आवीतं मातृकार्णैरपि च कुगृहगं साधुगोपालयन्त्रं
प्रोक्तं धर्मार्थकामप्रचुरसुखकरं श्रीप्रदं वश्यकारि॥९॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, तत्कोणेषु षडक्षरं विलिख्य तद्बहिर्दशदलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु दशाक्षरमन्त्रवर्णानालिख्य, तद्बहिर्वृत्तान्तराले 'द्रांद्रींक्लींब्लूंस' इति बीजैर्मातृकार्णैश्च वेष्टयित्वा तद्बहिश्चतुरस्त्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवति। प्रचुरसुखं मोक्षः।

तथा—

मारं मध्ये वसुदललसच्छिष्टकृष्णादिवर्णान् द्वौ द्वावन्ते त्रयमथ लिखेत् केसरेषु स्वराणाम्।
द्वौ द्वौ वर्णौ बहिरपि समावेष्टितं मातृकार्णैर्भूगेहस्थं निखिलसुखदं यन्त्रमष्टादशार्णम्॥१०॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकमलमध्ये कामबीजं ससाध्यमालिख्य, तद्दलेषु पूर्वोक्ताष्टादशाक्षरमन्त्रस्य 'कृष्णाय' इत्यादिवर्णेषु चतुर्दशवर्णान् द्विद्विक्रमादालिख्यान्तिमदले वर्णत्रयं विलिख्य, तत्केसरेषु द्वन्द्वशः षोडश स्वरानालिख्य, बहिर्वृत्तान्तरालवीथ्यां कादिक्षान्तवर्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्त्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवति।

यन्त्रान्तर-निरूपण—केरलीय यन्त्रसार में कहा गया है कि षट्कोण बनाकर उसके बीच में साध्य नामसहित 'क्लीं' लिखे। छः कोणों में कृष्ण षडक्षर 'क्लीं कृष्णाय नमः' के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर दल के केसरों में 'क्लीं कृष्ण क्लीं' मन्त्र के एक-एक अक्षर को लिखे।

चार दलों में द्वादशाक्ष मन्त्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' के तीन-तीन अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दश दल कमल बनाकर दलों के केसरों में दशाक्षर मन्त्र 'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के एक-एक अक्षर लिखे। दलों में पूर्वोक्त विंशाक्षर मन्त्र 'ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के दो-दो अक्षरों को लिखे। उसके बाहर षोडश दल कमल बनाकर केसरों में सोलह स्वरों को लिखे।

दलों में मूल में पठित ऋग्वेदोक्त 'आगावो अग्मन्नुत' सूक्त की आधी-आधी ऋचाओं को लिखे। उसके बाहर वृत्तों के अन्तराल में 'क' से 'क्ष' तक के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्त्र बनाकर चारों दिशाओं में वाराहबीज लिखे। कोणों में भू-बीज लिखे। यह यन्त्र जिस घर में विधिवत् स्थापित रहता है, उसमें दूधारु गायें निरोग रहती हैं, स्त्रियाँ सुशीला होती हैं, धन-धान्य से युक्त पृथ्वी होती है, लक्ष्मी उस घर में सदा स्थिर रहती है तथा प्रलयकाल तक बनी रहती है।

अन्य यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। आठों दलों में 'आगावो' सूक्त के एक-एक ऋचा को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्त्र बनावे। इस आगावो यन्त्र को घर में स्थापित करने से गाय-बैल-भैंस की वृद्धि होती है एवं लक्ष्मी से वह घर सदा भरा रहता है।

अन्य यन्त्र—षट्कोण बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम सहित 'क्लीं' लिखे। उसके छः कोणों में षडक्षर मन्त्र

'क्लीं कृष्णाय नमः' के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दश दश कमल बनावे। दशो दलों में दशाक्षर मन्त्र 'गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' के अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः और मातृकाओं को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। निन्दित घर में भी इस साधु गोपाल यन्त्र को रखने से धर्म-अर्थ एवं काम के साथ-साथ बहुत सुख तथा धन मिलता है। यह लक्ष्मी प्रदान करने वाला एवं वश्यकर होता है।

अन्य यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम के साथ 'क्लीं' लिखे। सात दलों में अष्टादशाक्षर मन्त्र के कृष्णाय से लेकर गोपीजनवल्लभा' तक के चौदह वर्णों को दो-दो करके लिखे। आठवें दल में शेष तीन वर्ण 'य स्वाहा' लिखें। दलों के केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। इसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में 'क' से 'क्ष' तक के वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। अट्ठारह अक्षरात्मक यह यन्त्र सभी सुखों का दाता होता है।

मुकुन्दमन्त्रविधानम्

मुकुन्दमन्त्रः सारसंग्रहे—

अथ मन्त्रवरं वक्ष्ये मुकुन्दस्य जगत्पतेः। सर्वसिद्धिकरं लोकवश्यदं कीर्तिपुष्टिदम् ॥१॥
विबिन्दुश्रीर्विषं दीर्घा केवला कर्णयुग् रविः। चन्द्रविष्णुयुतश्चक्री सत्यः कूर्मो हुताशनः ॥२॥
ससद्यान्ता समृद्धिश्च भृगुः सत्यश्च दीर्घवान्। सन्ध्याग्निर्ढान्तवैकुण्ठौ गगनं चेन्दुशेखरम् ॥३॥
शूरोऽग्निसहितः शूरः सत्यो रुद्रेरसंयुतः। अष्टादशाक्षरो मन्त्रो मुकुन्दस्य प्रकीर्तितः ॥४॥
विबिन्दुश्रीर्बिन्दुविधुरं श्रीबीजं श्री...........इति।

विषं म, दीर्घा न, केवला स्वररहिता, तेन न्। कर्ण उ रविः म तेन मु। चन्द्रो बिन्दुः, विष्णुः (उ, चक्री क, तेन कुं। सत्यो द। कूर्मः च। हुताशनो र। सद्यान्त औ, समृद्धिर्ण, तेन चरणौ। भृगुः स। सत्यो द) दीर्घ आ तेन दा। सन्ध्या श। अग्निः र। ढान्तो ण। वैकुण्ठो म। गगनं ह, इन्दुः विन्दुः, तेन हं। शूरः प, अग्नि र, तेन प्र। शूरः प। सत्य द, रुद्र ए, इरो य, तेन द्ये।

तथा—

नारदोऽस्य मुनिः प्रोक्तो गायत्री छन्द उच्यते। मुकुन्दो देवता प्रोक्तः सुरासुरनमस्कृतः ॥५॥
आचक्राद्यैः प्रकुर्वीत पञ्चाङ्गानि विचक्षणः। पूजा तु वैष्णवे पीठे ह्यङ्गेन्द्रादि तदायुधैः ॥६॥
मन्त्रं जपेदर्धलक्षं तद्दशांशं हुनेत्ततः। पलाशपुष्पैः स्वाद्वक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत् ॥७॥
मनुनानेन संजप्तमष्टोत्तरशतं जलम्। दिनादावन्वहं पीत्वा मासषट्कं प्रसन्नधीः ॥८॥
सम्यक्श्रुतिधरो मन्त्री जायते वेदपारगः।

प्रयोगः सुगमः।

मुकुन्द मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार मुकुन्द मन्त्र है—श्रीमन्मुकुन्द चरणौ सदा शरणमहं प्रपद्ये। इस मन्त्र के ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता सुरासुर-नमस्कृत मुकुन्द हैं। पञ्चाङ्ग न्यास आचक्रादि से किया जाता है वैष्णव पीठ पर पूजा तीन आवरणों में होती है। पहला आवरण अंगपूजन, दूसरा इन्द्रादि एवं तीसरा आवरण वज्रादि आयुधों के पूजन से पूर्ण होता है। पचास हजार मन्त्र जप करे। उसका दशांश पाँच हजार हवन पलाशफूलों को त्रिमधुराक्त करके करे। तब तर्पण-मार्जन करे। इस मन्त्र से मन्त्रित जल को छः महीनों तक प्रतिदिन पीने से साधक सम्यक् श्रुतिधर एवं वेदपारग हो जाता है।

बालकृष्णमन्त्रः

तथा—

समस्तेति समुच्चार्य मरुन्नमितमुद्धरेत्। बाललीलापदं प्रोक्त्वा आत्मने हुं समीरयेत् ॥९॥
अस्त्रेण हृदयेनापि युक्तो मन्त्रोऽयमीरितः।

समस्तेति स्वरूपम्। मरुन्नमितस्वरूपम्। बाललीला स्वरूपम्। आत्मने हुं स्वरूपम्। अत्र सन्धिस्तेन लीलात्मने इति मन्त्रे उच्चारः। अस्त्रं फट्। हृदयं नमः। अष्टादशाक्षरोऽयमपि मन्त्रः।

तथा—

नलकूवर आख्यातो मुनिश्छन्द उदाहृतम्। गायत्री बालकृष्णोऽस्य देवता परिकीर्तितः ॥१०॥
पञ्चाङ्गानि पुरोक्तानि ध्यानं पूर्वोदितं भवेत्। पूजा चाङ्गेन्द्रवज्राद्यैः पुरश्चर्यादि पूर्ववत् ॥११॥
जपादिकर्मभिर्मन्त्रः सेवितः सर्वसिद्धिदः।

ध्यानं मातुरङ्कगतरूपं ध्येयम्।

बाल कृष्ण मन्त्र—अट्ठारह अक्षरों का बाल कृष्ण का मन्त्र है—समस्त मरुन्नमितबाललीलात्मने हुं फट् नमः। इसके ऋषि नलकूबर, छन्द गायत्री एवं देवता बाल कृष्ण हैं, पूर्वोक्त प्रकार से पञ्चाङ्ग न्यास करे। पूर्ववत् ध्यान करे। तीन आवरणों की पूजा अंग, इन्द्र, वज्रादि से करे। पुरश्चरणादि पूर्ववत् करे। जपादि कर्म से सेवित यह मन्त्र सर्वसिद्धि-प्रदायक होता है।

अन्नप्रदमन्त्रः

तथा—

अन्नरूपपदं प्रोक्त्वा रसरूपेति चोच्चरेत्। तुष्टिरूपं च हृद्युग्ममन्नाधिपतये परम् ॥१२॥
ममान्नं च समुच्चार्य प्रयच्छग्निवधूर्मतः। अन्नप्रदोऽयमाख्यातस्त्रिंशद्वर्णो मनूत्तमः ॥१३॥

आदिपदत्रयं स्वरूपम्। हृद्युग्मं नमोद्वयम् अग्रिमपदचतुष्टयं स्वरूपम्। अग्निवधूः स्वाहाकारः। अत्र नमः-पदान्नपदयोर्विसन्धिः 'त्रिंशद्वर्ण' इत्युक्तेः।

तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। अत्रान्नाधिपतिः कृष्णो देवता प्रोच्यते बुधैः ॥१४॥
अन्नदो जायते मन्त्री मन्त्रमेतं भजेत् सदा। द्वादशाक्षरमन्त्रान्ते वर्मास्त्राग्निवधूयुतः ॥१५॥

प्रसिद्धो यो वासुदेवद्वादशाक्षरमन्त्रः पूर्वोक्तः स वर्मास्त्राग्निवध्वन्तो यदा भवति तदा षोडशाक्षमन्त्रः स्यात्। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। अग्निवधूः स्वाहाकारः।

अन्नप्रद मन्त्र—तीस अक्षरों का अन्नप्रद मन्त्र इस प्रकार है—अन्नरूपं रसरूपं तुष्टिरूपं नमो नमो अन्नाधिपतये ममान्नं प्रयच्छ स्वाहा। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता अन्नाधिपति कृष्ण हैं। इस मन्त्र का भजन सदा करने से घर में प्रचुर अन्न भरा रहता है।

मन्त्रान्तरविधिः

षोडशार्णो मनुः प्रोक्तो ब्रह्मा मुनिरुदाहृतः। गायत्रं छन्द इत्युक्तं देवता च निगद्यते ॥१६॥
ग्रहघ्नो देवकीपुत्रो दुष्टग्रहविनाशनः। सर्वग्रहभये घोरे जप्तव्योऽयं मनूत्तमः ॥१७॥
एतेषां मन्त्रवर्याणां पञ्चाङ्गानि दशार्णवत्। अर्चनाङ्गैर्लोकपालैर्वज्राद्यैश्च समीरिता ॥१८॥
तत्तद्विशेषफलदा मन्त्रा एते न संशयः। (तथा-) द्वादशार्णमनोरन्ते पुरुषोत्तमशब्दतः ॥१९॥
आयुर्मे च ततो देहि चतुर्थ्या विष्णुमुच्चरेत्। तादृशं प्रभविष्णुं हृन्मन्त्रो द्वात्रिंशदक्षरः ॥२०॥

द्वादशार्णं वासुदेवद्वादशार्णम्। पुरुषोत्तम स्वरूपम्। आयुर्मे देहि स्वरूपम्। अत्र न सन्धिः। चतुर्थ्या विष्णुं विष्णवे। तादृशं प्रभविष्णुं प्रभविष्णवे। हृन्नमः।

नारदो मुनिरस्य स्याच्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। श्रीकृष्णो देवता प्रोक्तः पञ्चाङ्गविधिरुच्यते ॥२१॥
द्वादशार्णान् समुच्चार्य हृदानन्दात्मने भवेत्। पञ्चार्णान्ते वदेत् प्रीत्यात्मने च शिरसो मनुः ॥२२॥
ज्योतिरात्मन इत्यादौ भूतवर्णा शिखा मता। मायात्मने चतुर्वर्णं कवचं परिकीर्तितम् ॥२३॥
चिदानन्दात्मने पूर्वं द्वाभ्यामस्त्रमुदाहृतम्।

ॐनमो भगवते वासुदेवायानन्दात्मने हृदयाय नमः। पुरुषोत्तमप्रीत्यात्मने शिरसे०। आयुर्मे देहि ज्योतिरारात्मने शिखा०। विष्णवे प्रभविष्णवे मायात्मने कवचाय हुं। नमः चिदात्मने अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गानि प्राग्वद्विन्यसेत्।

अङ्गलोकेशवज्राद्यैरर्चनोक्ता जपेन्मनुम्। लक्षमेकं दशांशेन जुहुयात् पायसैः शुभैः ॥२४॥
दुग्धाज्यसंप्लुतैर्दूर्वात्रितयैरेधितेऽनले । जुहुयाद् दीर्घजीवित्वं लभते नात्र संशयः ॥२५॥

तथा—

ङेन्तं बालवपुः प्रोक्त्वा शिरः सप्तार्णको मनुः। बालानां भयशान्त्यर्थं रक्षार्थं च जपेन्मनुम् ॥२६॥
ङेन्तं बालवपुः बालवपुषे। शिरः स्वाहा।

अन्य मन्त्र—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय हुं फट् स्वाहा—यह षोडशाक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता ग्रहों के विनाशक देवकीपुत्र हैं। दुष्ट ग्रहों के विनाशक इस मन्त्र का घोर ग्रहभय में जप करे। इन मन्त्रों का पञ्चाङ्ग न्यास दशाक्षर मन्त्र के समान होता है। तीन आवरणों की पूजा में अंग, इन्द्रादि एवं व्रजादि की पूजा होती है। ये सभी मन्त्र विशेष फलों को देने वाले हैं।

अन्य मन्त्र—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय पुरुषोत्तम आयुर्मे देहि विष्णवे प्रभविष्णवे नमः—यह मन्त्र बत्तीस अक्षरों का है। इस मन्त्र के ऋषि नारद, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता श्रीकृष्ण हैं। पञ्चांग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ नमो भगवते वासुदेवायानन्दात्मने हृदयाय नमः, पुरुषोत्तमप्रीत्यात्मने शिरसे स्वाहा, आयुर्मे देहि ज्योतिरात्मने शिखायै वषट्, विष्णवे प्रभ-विष्णवे मायात्मने कवचाय हुं, नमः चिदात्मने अस्त्राय फट्। तीन आवरणों की पूजा में अंग, लोकेशों और आयुधों की पूजा होती है। एक लाख मन्त्र जप कर दशांश हवन पायस से करे। दूध गोघृत संप्लुत तीन-तीन दूर्वा से हवन प्रज्वलित अग्नि में करे। इससे दीर्घायु मिलती है।

अन्य मन्त्र—एक अन्य सप्ताक्षर मन्त्र है—बालवपुषे स्वाहा। बालकों के भय की शान्ति और रक्षा के लिये इस मन्त्र का जप किया जाता है।

तथा—

गोपालकपदस्यान्ते वदेद्वेषधराय च। चतुर्थ्या वासुदेवं च कवचास्त्रद्विठान्तकः ॥२७॥
गोपालकवेषधराय स्वरूपं। वासुदेवं चतुर्थ्यन्तं वासुदेवाय। कवचं हुं। अस्त्रं फट्। द्विठः स्वाहा।

अष्टादशाक्षरो मन्त्रो नारदोऽस्य मुनिर्मतः। गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता कृष्ण ईरितः ॥२८॥
आचक्रादिभिरङ्गानि पूजा पूर्वोक्तवर्त्मना। गृहगोपालरक्षादौ प्रशस्तः शान्तिकेऽपि च ॥२९॥
पूर्वोक्तवर्त्मना अङ्गेन्द्रवज्राद्यैः।

कालीयस्य पदं प्रोक्त्वा फणामध्ये ततो वदेत्। दिव्यनृत्यं-पदस्यान्ते करोति तं-पदं ततः ॥३०॥
नमामीति समुच्चार्य देवकीपुत्रमप्यथ। नृत्यराजानमाभाष्य वदेदच्युतमन्ततः ॥३१॥
द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रः सर्वक्ष्वेडनिवारणः।

अयं मन्त्रः—'कालीयस्य फणामध्ये दिव्यनृत्यं करोति तम्। नमामि देवकीपुत्रं नृत्यराजानमच्युतम् ॥' इति श्लोकरूपः।

मुनिर्नारद आख्यातश्छन्दोऽनुष्टुबुदीरितम्। कालीयमर्दनः कृष्णो देवता सर्ववन्दितः ॥३२॥
चतुष्पादैश्च सर्वेण मनुनाङ्गविधिः स्मृतः। अङ्गैरिन्द्रादिभिः पश्चाद्वज्राद्यैरर्चनेरिता ॥३३॥
एकलक्षं जपित्वाग्नौ जुहुयादयुतं घृतैः। विषनाशकरा योगाः कर्तव्या मनुनामुना ॥३४॥
एतन्मन्त्रप्रभावेन नश्यन्ते च महोरगाः। एतन्मन्त्रसमानोऽन्यो विषघ्नो नैव विद्यते ॥३५॥
शुकवृक्षोत्थपञ्चाङ्गैर्गोमूत्रेण सुपेषितैः। निर्मिता गुलिका सम्यग् मन्त्रेणानेन मन्त्रिता ॥३६॥

**नस्यालेपाञ्जनैः पानकर्मणा क्ष्वेडनाशिनी। मुकुन्दाद्येतदन्तानां मन्त्राणां क्रमतो बुधः ॥३७॥
दशार्णाणुप्रयोगांस्तु ध्यानभेदान्न कल्पयेत्।**

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे अष्टाविंश: श्वास:॥२८॥

●

अन्य मन्त्र—गोपालकवेषधराय वासुदेवाय हुं फट् स्वाहा—यह अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र है। इसके ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता कृष्ण हैं। पञ्चाङ्ग न्यास आचक्रादि से किया जाता है। पूर्वोक्त मार्ग से पूजा करे। इस मन्त्र से गृह गायों की रक्षा होती है। शान्ति कर्म में भी यह मन्त्र प्रशस्त कहा गया।

अन्य मन्त्र—श्लोक ३०-३१ के उद्धार करने पर बत्तीस अक्षरों का मन्त्र होता है—

कालीयस्य फणामध्ये दिव्यनृत्यं करोतितम्। नमामि देवकीपुत्रं नृत्यराजानमच्युत्।।

इस श्लोकमन्त्र के ऋषि नारद, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता कालीय का मर्दन करने वाले एवं सभी से वन्दित कृष्ण हैं। पञ्चाङ्ग न्यास मन्त्र के चार पदों और पूरे मन्त्र से होता है। तीन आवरणों में अंग, इन्द्रादि एवं वज्रादि की पूजा होती है। एक लाख मन्त्र जप करके दश हजार हवन घी से करे। इस मन्त्र से विषनाश के लिये प्रयोग करे। इस मन्त्र के प्रभाव से भयंकर सर्पो का नाश होता है। इस मन्त्र के समान विषघ्न दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। सिरस वृक्ष के पञ्चाङ्ग को गोमूत्र में पीसकर गुलिका बनावे। उसे इस मन्त्र से मन्त्रित करे। इसका नस्य, लेप, अंजन एवं पान करने से क्ष्वेड रोग नष्ट होता है। मुकुन्द मन्त्र से लेकर इस मन्त्र तक के प्रयोगों में ध्यानभेद कल्पित न करे।

**इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र के कपिलदेव
नारायण-कृत भाषा-भाष्य में अष्टाविंश श्वास पूर्ण हुआ**

●

अथैकोनत्रिंशः श्वासः

श्रीकान्तमन्त्रस्तत्पूजाप्रकारश्च

अथ श्रीकान्तमन्त्रः। तथा सारसंग्रहे—

मायारमादिकोऽष्टादशार्णो विंशाक्षरो मनुः। एतन्मन्त्रसमानोऽन्यः सिद्धिदो नैव विद्यते ॥१॥
मुनिर्ब्रह्मास्य मन्त्रस्य गायत्री छन्द ईरितम्। श्रीकृष्णो देवता बीजशक्त्याद्युक्तवदीरयेत् ॥२॥
श्रीकान्तस्य प्रवक्ष्यामि ध्यानमत्रोत्तमोत्तमम्। कुबेरादिधनाध्यक्षैः सर्वदा यद्विधीयते ॥३॥
अक्षयस्य धनस्यापि करं संपत्प्रभं(करं) शुभम्। कोटिभास्करसङ्काशैर्द्वारकायां गृहोत्तमैः ॥४॥
बहुभिः कल्पतरुभिर्वेष्टिते रत्नमण्डपे। विद्योतन्मणिवर्यौघस्तम्भद्वारान्तभित्तिके ॥५॥
विकचत्पुष्पमालाभिः सहितानन्तमौक्तिकैः। पुष्परागधराशोभिरत्नद्योरथान्तरे ॥६॥
निरन्तरस्रवद्रत्नसुधाधाराभिवार्षिणः ।अधः कल्पकवृक्षस्य शाखाव्याप्तस्य सर्वतः ॥७॥
ज्वलद्रत्नप्रदीपालिसमुद्योतितदिङ्मुखे ।उद्द्योतद्रविबिम्बाभरत्नसिंहासनाम्बुजे ॥८॥
सूपविष्टं रमाक्रान्तं द्रुतस्वर्णनिभं स्मरेत्। समोद्यद्रविचन्द्रौघविद्युत्कोटिनिभच्छविम् ॥९॥
हृद्याङ्गं सर्वतः सौम्यं नानालङ्कारमण्डितम्। अरिशङ्खगदापद्मधारिणं पीतवाससम् ॥१०॥
स्पृशन्तं कलशं श्च्योतन्मणिधारमहर्निशम्। सव्येन चरणाब्जेन विद्रुमद्युतिकारिणा ॥११॥
रुक्मिणीसत्यभामे द्वे दक्षवामस्थिते प्रभोः। उत्तमाङ्गेऽभिषिञ्चन्त्यौ नानारत्नसुधारया ॥१२॥
लसत्स्वीयकराम्भोजगृहीतघटजातया ।यच्छन्त्यौ नाग्नजित्याह्वसुनन्दे सुघटैस्तयोः ॥१३॥
मित्रविन्दा तथैवान्या परा चैव सुलक्षणा। एतयोर्जाम्बवत्याह्वसुशीले दक्षवामगे ॥१४॥
रत्नधुन्योः समादाय कलशौ रत्नसंभृतौ। अर्पयन्त्यौ विलासेन ध्यातव्ये मन्त्रवित्तमैः ॥१५॥
ततः षोडशसाहस्रमिता नार्यः समन्ततः। स्मर्तव्याः स्वर्णरत्नादिधारायुग्घटसत्कराः ॥१६॥
स्मरेदष्ट निधीन् तासां धनान्यावर्षतो बहिः। वृष्णींश्च तद्बहिर्भूयो देवादीनपि पूर्ववत् ॥१७॥
एवं सञ्चिन्त्य देवेशं ततः पूजां समारभेत्। पुरोदितप्रकारेण पीठन्यासावसानकम् ॥१८॥
कर्म निर्वर्त्य मन्त्रज्ञो मूलमन्त्रेण मन्त्रवित्। प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादिन्यासमाचरेत् ॥१९॥
कराङ्गुलीषु तलयोः षडङ्गन्यासमाचरेत्। व्यापकं मूलमन्त्रेण विन्यस्य करयोः तथा ॥२०॥
पुनः षडङ्गं विन्यस्य देहे देशिकसत्तमः। पुटितां मूलमन्त्रेण मातृकां च प्रविन्यसेत् ॥२१॥

चकारात् पुनः षडङ्गन्यासः उक्तः। 'पुनः षडङ्गं कृत्वा तु मन्त्रवर्णांस्तनौ न्यसेत्' इति सनत्कुमारवचनात्।

संहारवर्त्मना सृष्ट्या दश तत्त्वानि विन्यसेत्। व्यापकं च प्रविन्यस्य मन्त्रार्णन्यासमाचरेत् ॥२२॥
उत्तमाङ्गे ललाटे च भ्रूमध्ये दृक्श्रुतिद्वये। नासिकाननयोश्चैव चिबुक च गले पुनः ॥२३॥
बाहुमूले हृदि स्कन्धे नाभिदेशे शिवे तथा। मूलाधारे कटिद्वन्द्वे जानुयुग्मे च जङ्घयोः॥२४॥
गुल्फयुग्मेक पादयुग्मे न्यसेद्वर्णान् मनोः क्रमात्। सृष्टिन्यासोऽयमाख्यातो हृदयाद्या स्थितिस्तथा ॥२५॥
बाहुमूलान्तिकः प्रोक्तः संहारोऽपि पदादिकः। स्थित्यन्तं पञ्चधा केचिन्न्यस्योक्तं मूर्तिपञ्जरम् ॥२६॥
न्यस्य सृष्टिस्थिती पश्चात् षडङ्गानि प्रविन्यसेत्। त्रिवह्निसागरैर्वेदवेदनेत्रैः क्रमाद्बुधः ॥२७॥

वह्नयस्त्रयः। सागराश्चत्वारः। नेत्रं द्वयम्।

मूलमन्त्रभवैर्वर्णैर्हृदादौ जातिसंयुतैः। दर्शयित्वा किरीटादिमुद्रा दिग्बन्धनं चरेत् ॥२८॥

मूर्तिपञ्जरतो देवं संपूज्याङ्गे निजे ततः। देवस्य बाह्यपूजार्थमुच्यते यन्त्रमुत्तमम् ॥२९॥
गोमयेनोपलिप्तायां पीठं भूमौ प्रविन्यसेत्। पूर्वोक्तगन्धपङ्केन संलिप्याब्जं वसुच्छदम् ॥३०॥
विलिख्य कर्णिकासंस्थमग्निमण्डलसंपुटम्। मादनं साध्यसहितं मन्त्रबीजं निवेशयेत् ॥३१॥
(तदूर्ध्वगैस्ततो वर्णैस्तदेव परिवेष्टयेत्। शक्रराक्षसवायूनां कोणगां कमलां लिखेत् ॥३२॥
अन्येषु च त्रिकोणेषु मायाबीजं प्रकल्पयेत्।) कोणसन्धिषु तद्वर्णान् दलमूलेषु चाग्निशः ॥३३॥
गायत्रीं कामदेवस्य मालाणुं चाष्टपत्रगम्। रसाक्षरक्रमात् पश्चान्मातृकार्णैः प्रवेष्टयेत् ॥३४॥
धरापुरचतुर्दिक्षु रमां मायां च कोणगाम्। विलिख्यैवं महायन्त्रं पट्टे स्वर्णादिजे बुधः ॥३५॥
सम्यक् संजप्य संपूज्य धृतं च मनुजोत्तमैः। करोति लोकपूज्यत्वं राजवश्यं च सर्वदा ॥३६॥

यन्त्रोद्धार: प्रयोगे वक्ष्यते।

कामदेवं चतुर्थ्यन्तं विद्महे तदनन्तरम्। ङेयुतं पुष्पबाणं च प्रवदेद् धीमहीति च ॥३७॥
तन्नोऽन्तेऽनङ्ग इत्युक्त्वा प्रवदेच्च प्रचोदयात्।

कामदेवं चतुर्थ्यन्तं कामदेवाय। विद्महे स्वरूपं। ङेयुतं पुष्पबाणं पुष्पबाणाय। धीमहि स्वरूपं। तन्नोऽनङ्गः स्वरूपं। प्रचोदयात् स्वरूपम्।

गायत्रीयं समाख्याता जपेदेनां प्रयत्नतः। सर्वगोपालमन्त्राणां जपादौ वश्यकारिणी ॥३८॥
हृदन्ते ङेयुतं कामं देवं सर्वजनप्रियम्। तथा सर्वजनस्यान्ते ङेन्तं संमोहनं वदेत् ॥३९॥
ज्वल संवीप्स्य मन्त्रज्ञः प्रज्वलेति प्रभाषयेत्। सर्वान्ते जनशब्दं च षष्ठ्यन्तं हृदयं ततः ॥४०॥
ममेति च समुच्चार्य वशं प्रोक्त्वा कुरुद्वयम्। द्विठान्तो मारमालाणुश्चतुर्विंशद्द्वयाक्षरः ॥४१॥
जपादिसमये चायं कामबीजादिको भवेत्। राजादिसर्वलोकानां परो वश्यकरो मतः ॥४२॥

हृन्नमः। ङेयुतं कामदेवं कामदेवाय। सर्वजनप्रियं तथा सर्वजनप्रियाय। सर्वजन स्वरूपं। ङेन्तं संमोहनं संमोहनाय। ज्वल संवीप्स्य ज्वल ज्वल। प्रज्वल स्वरूपं। सर्व स्वरूपं। जन षष्ठ्यन्तं जनस्य। हृदयं स्वरूपं। मम स्वरूपं। वशं स्वरूपं। कुरुद्वयं कुरु कुरु। द्विठः स्वाहा। चतुर्विंशद्द्वयम् अष्टाचत्वारिंशत्। तथा—

अस्मिन् मन्त्रे पीठपूजां कृत्वा पूर्वोक्तवर्त्मना। तत्र मूर्तिं प्रकल्प्यास्यां कृष्णमावाह्य पूजयेत् ॥४३॥
आसनप्रमुखैर्मन्त्री भूषान्तैरुपचारकैः। मुहुर्न्यासक्रमेणैव पूजयेद्भक्तितत्परः ॥४४॥
आदौ सृष्टिः स्थितिः पश्चात्षडङ्गानि किरीटकम्। कुण्डलद्वितयं भूयो ह्यरिं जलजकं गदाम् ॥४५॥

जलजं शङ्खम्।

पद्मं च वनमालां च श्रीवत्सं कौस्तुभं तथा। चन्दनाक्षतपुष्पाद्यैः पुरोवन्मूलतोऽर्चयेत् ॥४६॥
षट्सु कोणेषु वह्न्यादि षडङ्गानि यजेत् पुरा। वासुदेवादिका मूर्तीः कोणकेसरगा यजेत् ॥४७॥
(शान्तिं श्रियं सरस्वत्या रतिं दिग्दलमूलगाः। ततः पूर्वादिपत्रेषु रुक्मिणीप्रमुखाः यजेत् ॥४८॥
दक्षवामक्रमात् पश्चादेकदैव समर्चयेत्।) षोडशस्त्रीसहस्राणि देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ॥४९॥
दलाग्रस्थास्ततः पूज्या निधयोऽष्टौ क्रमादमी। इन्द्रो नीलो मुकुन्दश्च मकरोऽनङ्गकच्छपौ ॥५०॥
शङ्खपद्मौ च तद्बाह्ये लोकेशायुधपूजनम्। इत्थं संपूज्य गोविन्दं नैवेद्यं हविरर्पयेत् ॥५१॥

हविः पायसम्।

खण्डाज्यदधिभिः पश्चाच्छत्रादीनि निवेदयेत्। स्तुत्वा प्रणम्य चोद्वास्य हरिं सावरणं हृदि ॥५२॥
पुनर्विन्यस्य संपूज्य स्वं जपेच्छक्तितो मनुम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये

नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। गुह्ये क्लींबीजाय नमः (पादयोः स्वाहा शक्तये नमः) इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, ह्रींश्रींक्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा। गोविन्दाय शिखायै वषट्। गोपीजन कवचाय हुं। वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, मूलमन्त्रेण मूर्धादिपादान्तं व्यापकं कृत्वा, मूलपुटितां मातृकां विन्यस्य, संहारसृष्टिक्रमेण दशाक्षरोक्तप्रकारेण दश तत्त्वानि विन्यस्य पुनर्मूलमन्त्रेण प्रणवपुटितेन त्रिर्व्यापकं कृत्वा, पुनः षडङ्गानि विन्यस्य, शिरसि ह्रींनमः। भाले श्रीं०। भ्रुवोर्मध्ये क्लीं०। नेत्रयोः कृं०। श्रोत्रयोः ष्णां०। नासिकायां यं०। मुखे गों०। चिबुके विं०। गले दां०। बाहुमूलयोः यं०। हृदि गों०। उदरे पीं०। नाभौ जं०। लिङ्गे नं०। मूलाधारे वं०। कट्योः ल्लं०। जानुनोः भां०। जङ्घयोः यं०। गुल्फयोः स्वां०। पादयोः हांनमः। एवं सृष्ट्या विन्यस्य, हृदि ह्रींनमः। उदरे श्रीं०। नाभौ क्लीं०। लिङ्गे कृं०। मूलाधारे ष्णां०। कट्यां यं०। जानुनोः गों०। जङ्घयोः विं०। गुल्फयोः दां०। पादयोः यं०। शिरसि गों०। भाले पीं०। भ्रूमध्ये जं०। नेत्रयोः नं०। श्रोत्रयोः वं०। नासिकायां ल्लं०। मुखे भां०। चिबुके यं०। कण्ठे स्वां०। बाहमूले हां नमः। इति स्थित्या विन्यस्य, पादादिमस्तकान्तं संहारेण विन्यस्येत्। एवं क्रमस्तु यतीनां, गृहस्थैस्तु संहारसृष्टिस्थितिक्रमेण कार्याः। वर्णिभिस्तु—स्थितिसंहारसृष्टिक्रमेण कार्य्या इति। ततः पूर्वोक्त-मूर्तिपञ्जरन्यासं कृत्वा, पुनरत्रोक्तप्रकारेण सृष्टिस्थितिन्यासौ कृत्वा षडङ्गानि विन्यस्य, वक्ष्यमाणप्रकारेण वैष्णवमुद्रा दर्शयित्वा, दिग्बन्धं कृत्वा निजेदेहे मूर्तिपञ्जरन्यासक्रमेण देवं संपूज्य, पुरतश्चन्दनादिना पीठे कुङ्कुमादिनाष्टदलं पद्मं विरच्य, तत्कर्णिकायां षट्कोणं कृत्वा, तन्मध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य 'कृष्णाय' इत्यादिभिः सप्तदशभिरक्षरैः कामबीजं संवेष्ट्य, षट्कोणस्य पूर्वनिर्ऋतिवायुकोणेषु श्रीबीजं शिष्टकोणेषु मायाबीजं च विलिख्य, षट्कोणसन्धिषु पूर्वोक्तकृष्णाषडक्षरमन्त्रवर्णानालिख्य, तत्केसरेषु प्रोक्तकामगायत्रीवर्णास्त्रिशस्त्रिश आलिख्य, तद्दलेषु प्रोक्तमकर-ध्वजमालामन्त्रार्णान् षट्षडालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले मातृकार्णैः सबिन्दुभिः संवेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तस्य चतुर्दिक्षु श्रीबीजं कोणेषु मायाबीजं च आलिख्य, तत्र प्राग्वत् पीठपूजां कृत्वा मूर्तिकल्पनादिपुष्पोपचारान्ते देवस्य देहे सृष्टिन्यासक्रमेण स्थितिन्यासक्रमेण च संपूज्य, लयाङ्गत्वेन देवस्य देहे षडङ्गन्यासस्थाने षडङ्गानि संपूज्य, देवस्य शिरसि मूलमुच्चार्य किरीटाय नमः। कर्णयोः कुण्डलाभ्यां नमः। दक्षोर्ध्वहस्ते चक्राय नमः। वामोर्ध्वहस्ते शङ्खाय नमः। वामाधःकरे गदायै नमः। दक्षाधः करे पद्माय नमः। स्कन्धादिपादान्तं (नाभ्यन्तं वा) वनमालायै नमः। वक्षसि श्रीवत्साय०। कण्ठे कौस्तुभाय नमः। इति मूलेनैव संपूज्य, षट्कोणेषु प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, कोणकेसरेषु वासुदेवादिमूर्तीः दिग्गतकेसरेषु शान्त्यादिशक्तीश्च संपूज्य, दलेषु देवस्य दक्षवामक्रमेण रुक्मिण्याद्यष्टमहिषीः संपूज्य, षोडशसहस्रसंख्याभ्यो देवीभ्यो नमः इति देवस्य परितः संपूज्य, दलाग्रेषु—इन्द्राय नमः। नीलाय०। मुकुन्दाय०। मकराय०। अनङ्गाय०। कच्छपाय०। शङ्खाय०। पद्माय०। इति निध्यष्टकं संपूज्य लोकेशार्चादि प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

एवमभ्यर्च्य देवेशं वेदलक्षं जपेन्मनुम्। सर्पिषा जुहुयात् पश्चाद्दशांशं तर्पयेत्ततः ॥५३॥
स्वाभिषेकं विधायाथ ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः। इत्थं साधितमन्त्रस्तु प्रयोगान् विदधीत वै ॥५४॥
पूजायित्वाऽनले कृष्णं श्वेतप्रसूनतण्डुलैः। अयुतं घृतसंयुक्तैर्हुत्वा तद्भस्म धारयेत् ॥५५॥
समस्तधनधान्याप्तिः स्त्रीवश्यं च भवेद् ध्रुवम्। रक्ताब्जैर्लक्षसंख्यं यो हुनेन्मधुरलोलितैः ॥५६॥
गोघृतैर्वापि जुहुयात्तस्य लक्ष्मीः स्थिरा भवेत्। रक्तादिवसनाकाङ्क्षी हुनेत् पुष्पैश्च तादृशैः ॥५७॥
मधुराक्तैर्घृताक्तैर्वाप्यष्टोत्तरसहस्रकम्। मधुना संयुतैः श्वेतकुसुमैरष्टसंयुतम् ॥५८॥
सहस्रमन्वहं हुत्वा मासमात्रेण साधकः। राज्ञः पुरोहितो भूयान्मन्त्रिणो वा न संशयः ॥५९॥
प्रयोगजपहोमादि दशाष्टादशवर्णजम्। मन्त्रेणानेन कुर्वीत ताभ्यां मन्त्रोक्तमादरात् ॥६०॥
न्यासध्यानजपार्चादिहोमतो यो भजेन्मनुम्। रत्नकाञ्चनधान्याद्यैः समृद्धं तस्य मन्दिरम् ॥६१॥

जायते हस्तगा तस्य सकला वसुधाऽचिरम्। पुत्रपौत्रकलत्राद्यैर्भुक्त्वा भोगान् बहून्निह ॥६२॥
अन्ते याति परं धाम वैष्णवं मुनिदुर्लभम्। इति।

श्रीकान्त मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार बीस अक्षरों का श्रीकान्त मन्त्र है—ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। इस मन्त्र के समान सिद्धिदायक दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता श्रीकृष्ण हैं। बीज शक्ति आदि पूर्ववत् होते हैं। श्रीकान्त का कुबेर आदि द्वारा सर्वदा किया जाने वाला ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

अक्षयस्य धनस्यापि करं संपत्प्रभं(करं) शुभम्। कोटिभास्करसङ्काशैर्द्वारकायां गृहोत्तमै:॥
बहुभि: कल्पतरुभिर्वेष्टिते रत्नमण्डपे। विद्योतन्मणिवर्यौघस्तम्भद्वारान्तभित्तिके॥
विकचत्पुष्पमालाभि: सहितानन्तमौक्तिकै:। पुष्परागधराशोभिरत्नद्योरथान्तरे॥
निरन्तरस्रवद्रत्नसुधाधाराभिवार्षिण:। अध: कल्पकवृक्षस्य शाखाव्याप्तस्य सर्वत:॥
ज्वलद्रत्नप्रदीपालिसमुद्योतितदिङ्मुखे। उद्द्योतद्रविबिम्बाभरत्नसिंहासनाम्बुजे॥
सूपविष्टं रमाक्रान्तं द्रुतस्वर्णनिभं स्मरेत्। समोद्यद्रविचन्द्रौघविद्युत्कोटिनिभच्छविम्॥
हृद्याङ्गं सर्वत: सौम्यं नानालङ्कारमण्डितम्। अरिशङ्खगदापद्मधारिणं पीतवाससम्॥
स्पृशन्तं कलशं श्च्योतन्मणिधारमहर्निशम्। सव्येन चरणाब्जेन विद्रुमद्युतिकारिणा॥
रुक्मिणीसत्यभामे द्वे दक्षवामस्थिते प्रभो:। उत्तमाङ्गेऽभिषिञ्चन्त्यौ नानारत्नसुधारया॥
लसत्स्वीयकराम्भोजगृहीतघटजातया। यच्छन्त्यौ नाग्नजित्याह्वसुनन्दे सुघटैस्तयो:॥
मित्रविन्दा तथैवान्या परा चैव सुलक्षणा। एतयोर्जाम्बवत्याह्वसुशीले दक्षवामगे॥
रत्नधुन्यो: समादाय कलशौ रत्नसंभृतौ। अर्पयन्त्यौ विलासेन ध्यातव्ये मन्त्रवित्तमै:॥
तत: षोडशसाहस्रमिता नार्य: समन्तत:। स्मर्तव्या: स्वर्णरत्नादिधारायुग्घटसत्करा:॥

प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:, मुखे गायत्री छन्दसे नम:, हृदये कृष्णाय देवतायै नम:, गुह्ये क्लीं बीजाय नम:, पादयो: स्वाहा शक्तये नम:। मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोग:। षडङ्ग न्यास इस प्रकार करे—ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नम:, कृष्णाय शिरसे स्वाहा, गोविन्दाय शिखायै वषट्, गोपीजन कवचाय हुं, वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। मूल मन्त्र से मूर्धा से पैरों तक व्यापक न्यास करे। मूल-पुटित मातृका न्यास करे। संहार-सृष्टि क्रम से दशाक्षरोक्त प्रकार से दश तत्त्वों का न्यास करे। फिर प्रणव-सम्पुटित मूल मन्त्र से तीन बार व्यापक न्यास करके पुन: षडङ्ग न्यास करे।

सृष्टि मन्त्रवर्ण न्यास—शिर पर ह्रीं नम:, भाल में श्रीं नम:, भौहों के मध्य में क्लीं नम:, नेत्रों में कृं नम:, कानों में ष्णां नम:, नासिका में यं नम:, मुख में गों नम:, चिबुक में विं नम:, गले में न्दां नम:, बाहुमूल में यं नम:, हृदय में गों नम:, उदर में पीं नम:, नाभि में जं नम:, लिङ्ग में नं नम:, मूलाधार में वं नम:, कमर में ल्लं नम:, जानुओं में भां नम:, जंघाओं में यं नम:, गुल्फों में स्वां नम:, पैरों में हां नम:। इस प्रकार से सृष्टि न्यास करने के बाद स्थिति न्यास करे।

स्थिति न्यास—हृदय में ह्रीं नम:, उदर में श्रीं नम:, नाभि में क्लीं नम:, लिङ्ग में कृं नम:, मूलाधार में ष्णं नम:, कमर में यं नम:, जानुओं में गों नम:, जङ्घों में: विं नम:, गुल्फों में दां नम:, पैरों में यं नम:, शिर पर गों नम:, भाल में पीं नम:, भ्रूमध्य में जं नम:, नेत्रों में नं नम:, कानों में वं नम:, नासिका में ल्लं नम:, मुख में भां नम:, चिबुक में यं नम:, कण्ठ में स्वां नम:, बाहुमूल में हां नम:। स्थिति न्यास के बाद पैरों से लेकर मस्तक तक संहार क्रम से न्यास करे। न्यास का यह क्रम यतियों के लिये कहा गया है। गृहस्थों का क्रम संहार-सृष्टि-स्थिति है। अन्य वर्णों के लिये स्थिति-संहार-सृष्टि क्रम है। तब पूर्वोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास करे। पुन: पूर्वोक्त प्रकार से सृष्टि स्थिति न्याम के बाद षडङ्ग न्यास करे। विहित प्रकार से वैष्णव मुद्रा दिखावे। दिग्बन्ध करे। अपने देह में मूर्तिपञ्जर क्रम से देवता का पूजन करे। तब अपने आगे कुङ्कुमादि से अष्टदल कमल

बनाकर उसकी कर्णिका में षट्कोण बनावे। उसके मध्य में साध्य नाम के साथ क्लीं लिखे। तब कृष्णाय से लेकर शेष सत्रह अक्षरों से क्लीं को वेष्टित करे। षट्कोण के पूर्व नैर्ऋत्य वायु कोण में श्रीं बीज लिखे। शेष तीन कोणों मे ह्रीं लिखे। कोणों की सन्धियों में पूर्वोक्त कृष्ण षडक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय नम:' के छ: अक्षरों को लिखे। अष्टदल पद्म के दल केसरों में पूर्वोक्त काम गायत्री 'कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि तन्नोऽनंग: प्रचोदयात्' के तीन-तीन अक्षरों को लिखे। दलों में मकरध्वज मालामन्त्र 'नमो कामदेवाय सर्वजनप्रियाय सर्वजनसंमोहनाय ज्वल ज्वल प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा' के छ: छ: अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसकी चारो दिशाओं में 'श्रीं' और कोणों में 'ह्रीं' लिखे।

पूर्ववत् पीठपूजा करके मूर्ति की कल्पना करे। पुष्पोपचार तक सृष्टि-स्थिति न्यास क्रम से देव के देह में पूजा करे। लयाङ्गक्रम से देव के देह में षडङ्ग न्यासस्थान में षडङ्गों की पूजा करे। मूल मन्त्र कहकर शिर पर किरीटाय नम:, कानों में कुण्डलाभ्यां नम:, दाहिने हाथ में ऊपर चक्राय नम:, बाँयें हाथ में ऊपर शङ्खाय नम:, बाँयें हाथ में नीचे गदायै नम:, दाहिने हाथ में नीचे पद्माय नम:, कन्धों से पैरों तक वनमालायै नम:, वक्ष पर श्रीवत्साय नम:, कण्ठ में कौस्तुभाय नम: से पूजन करके षट्कोणों में पूर्ववत् षडङ्ग पूजन करे। कोण केसरों में वासुदेवादि मूर्ति की एवं दिग्गत केसरों में शान्त्यादि शक्तियों की पूजा करे। दलों में देव के दक्ष-वाम क्रम से रुक्मिणी आदि आठ पटरानियों की पूजा करे। 'षोडशसहस्रसंख्याभ्यो देवीभ्यो नम:' से देव के आगे पूजा करे। दलाग्रों में इन्द्राय नम:, नीलाय नम:, मुकुन्दाय नम:, मकराय नम:, अनङ्गाय नम:, कच्छपाय नम:, शङ्खाय नम:, पद्माय नम:—इस प्रकार अष्ट निधियों की पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि लोकपालों और वज्रादि आयुधों की पूजा करके इस प्रकार की पूजा के बाद हरि को नैवेद्य अर्पित करे। नैवेद्य में खीर मिश्री गोघृत दही अर्पण करे। छत्रादि निवेदन करके स्तुति करे। तब सावरण हरि का उद्वासन अपने हृदय में करे और पुन: न्यास करे। शक्ति के अनुसार जप करे। इस प्रकार देव की पूजा करके चार लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन गोघृत से करे। तर्पण-मार्जन के बाद ब्राह्मणभोजन करावे। ऐसे साधित मन्त्र से प्रयोग करे।

अग्नि में कृष्ण की पूजा करके उजले फूल और चावल-घी से दश हजार हवन करके उसके भस्म को धारण करे तो सभी धन-धान्य की प्राप्ति के साथ स्त्री का वशीकरण होता है। लाल कमल को मधुर-लोलित करके एक लाख हवन करने से लक्ष्मी स्थिर होती है। जिस रंग के वस्त्र की इच्छा हो, उसी रंग के फूलों से हवन करे। मधु से युक्त उजले फूलों से एक हजार आठ हवन प्रतिदिन एक माह तक करने पर साधक राजपुरोहित या मन्त्री हो जाता है। जो दश या अट्ठारह अक्षरों वाले मन्त्र से जप-प्रयोग-होमादि करता है उसे और जो यन्त्रोक्त न्यास-ध्यान-जप-अर्चन-हवन से मन्त्रजप करता है, उसे रत्न, सोना, धन-धान्यादि एवं समृद्धि प्राप्त होती है। उसके वश में सारी पृथ्वी होती है एवं पुत्र-पौत्र-कलत्रादि के साथ भोगों को बहुत दिनों तक वह भोगता है।

पूजायन्त्रविधि:

श्रीयन्त्रसारे—

षट्कोणकर्णिकामध्ये ससाध्यं मदनं लिखेत्। षट्सु कोणेषु षड्वर्णं चतुर्वर्णं चतुर्दले ॥१॥
दशपत्रे केसरोद्यद्दशार्णैकैकवर्णके। विंशत्यर्णमनोर्वर्णान् क्रमाद् द्वौ द्वौ विलिख्य च ॥२॥
मालामन्त्रेण मारस्य बाणैर्मातृकयापि च। वेष्टितं भूपुराश्रिस्थशक्तिश्रीवसुधास्मरम् ॥३॥
विंशत्यर्णमनोर्यन्त्रं प्रोक्तमेतद् यथाविधि। गोपनीयं प्रयत्नेन न देयं यस्य कस्यचित् ॥४॥
धर्मार्थकाममोक्षायु:पुत्रधान्यधराप्रदम्। रक्षाकरं वश्यकारि कान्तिसौभाग्यकीर्तिदम् ॥५॥
किमत्र बहुनोक्तेन काङ्क्षितार्थसुरद्रुमम्। इति।

अस्यार्थ:—षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, षट्कोणेषु षडर्णं विलिख्य, बहि:स्थचतुष्पत्रेषु चतुरक्षरं विलिख्य, तद्बहिर्दशकेसरेषु दशाक्षरं विलिख्य, दशपत्रेषु विंशत्यर्णमन्त्रवर्णान् द्वौ द्वौ विलिख्य, बहिर्वृत्तचतुष्टयं कृत्वा तदन्तरालवीथीत्रयेऽभ्यन्तरवीथ्यां पूर्वोक्तकाममालामन्त्रेण तद्बहिर्वीथ्यां पूर्ववत् पञ्चबाणैस्तद्बहिर्वीथ्यां

मातृकार्णैश्च निरन्तरं संवेष्ट्य, बहि:स्थचतुरस्रकोणेषु प्रतिकोणं शक्तिश्रीवसुधाकामबीजानि लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदम्। पूर्वोक्तं पूजायन्त्रं साधितं धारणयन्त्रं भवति। तदपि यथाविधि (कृष्णं? धृतं) यथोक्तफलदं भवति।

पूजा यन्त्र—श्रीयन्त्रसार के अनुसार षट्कोण बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम के साथ क्लीं लिखे। षट्कोण के कोणों में षडक्षर मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल के दलों में चतुरक्षर मन्त्र के चार वर्णों को लिखे। उसके बाहर दशदल कमल बनाकर दल के केसरों में दशाक्षर मन्त्र के वर्णों को लिखे। दलों में विंशाक्षर मन्त्र के बीस वर्णों के दो-दो अक्षरों को लिखे। इसके बाहर चार वृत्त बनाकर मध्य से पहली वीथि में पूर्वोक्त काममाला मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाद वाली वीथी में पञ्चबाण बीजों को लिखे। उसके बाद वाली वीथि में मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके कोणों प्रतिकोण में 'ह्रीं श्रीं ग्लौं क्लीं' लिखे। यह यन्त्र धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, आयु, पुत्र, धान्य, धराप्रदायक होता है। यह रक्षाकर, वश्यकारी के साथ-साथ कान्ति, सौभाग्य एवं कीर्तिदायक भी है। बहुत क्या कहा जाय; यह यन्त्र कांक्षितार्थ के लिये कल्पवृक्ष के समान है।

मन्त्रान्तराणां विधानम्

सारसंग्रहे—

रमामायास्मरान्तं च चतुर्थ्यां कृष्णमीरयेत्। गोविन्दं ङेयुतं चाथ स्वाहान्तो द्वादशाक्षरः ॥१॥

रमा श्रीबीजं। माया तद्बीजं। स्मरः क्लीं। चतुर्थ्यां कृष्णं कृष्णाय। गोविन्दं ङेयुतं गोविन्दाय, इति। तथा—

मन्त्रे ब्रह्मा मुनिः प्रोक्तो गायत्रं छन्द ईरितम्। श्रीकृष्णो देवता चन्द्रधरेन्द्वग्न्यब्धिनेत्रकैः ॥२॥
मूलमतन्त्रभवैर्वर्णैः षडङ्गानि प्रकल्पयेत्। ध्यानपूजाजपाद्यस्य विंशार्णोक्तवदाचरेत् ॥३॥
कामयन् सर्वसंपत्तिं मन्त्रमेनं भजेद् बुधः।

ॐ श्रीं हृत्। ह्रीं शिरः। क्लीं शिखा। कृष्णाय कवचं। गोविन्दाय नेत्रं। स्वाहा अस्त्रं। तथा—

लक्ष्मीशक्तिमनोजातबीजान्ते दशवर्णकम्। काममायेन्दिरान्तोऽयं षोडशार्णो मनुर्मतः ॥४॥

लक्ष्मीः श्रीबीजं। शक्तिर्मायाबीजं। मनोजातः कामबीजं। दशवर्णाः पूर्वोक्ताः। कामस्तद्बीजं। माया ह्रीं। इन्दिरा श्रीबीजं।

ऋष्यादिकं दशार्णोक्तं पञ्चाङ्गमपि तादृशम्। पूजा विंशाक्षरप्रोक्ता ध्यानं तस्य निगद्यते ॥५॥
वराभयकराब्जाभ्यामालिङ्गन्तं प्रियाङ्कके। अब्जोत्पललसद्धस्ते ताभ्यामालिङ्गितं मुदा ॥६॥
धारयन्तं रथाङ्गं च शङ्खं भव्यकलेवरम्। एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं दशलक्षं समाहितः ॥७॥
तावत्संख्यासहस्राणि हुनेदाज्यमनुत्तमम्। तर्पणाद्यैर्भवेन्मन्त्रः सिद्धः स्वेष्टफलप्रदः ॥८॥
मायाश्रीसहितो मन्त्रो दशार्णो द्वादशाक्षरः। विधानमस्य विज्ञेयं षोडशार्णोक्तवर्त्मना ॥९॥

सुगमम्।

काममायेन्दिरापूर्वो मायाश्रीकामतस्तथा। लक्ष्मीमायास्मराद्यश्च मन्त्रराजो दशाक्षरः ॥१०॥
त्रयोदशाक्षरा मन्त्रास्त्रय एते उदाहृताः। मुन्याद्यङ्गविधिस्त्वेषां पङ्क्त्यर्णोक्तविधानतः ॥११॥
ध्यानं तृतीयमन्त्रे तु दशार्णोक्तमुदाहृतम्। विंशार्णोक्तं द्वितीये तु प्रथमेऽथ निगद्यते ॥१२॥
दरारिचापसद्बाणगुणाङ्कुशकराम्बुजम्। वेणुमादाय हस्ताभ्यां वादयन्तं मुदान्वितम् ॥१३॥
रविमण्डलगं कृष्णं ध्यायेदिष्टफलाप्तये। अङ्गैरिन्द्रादिवज्राद्यैरर्चना सर्वसिद्धिदा ॥१४॥
बाणलक्षं जपित्वाग्नौ दशांशं हविषा हुनेत्। तर्पणादि ततः कुर्यात् सिद्धमन्त्रः समाचरेत् ॥१५॥
कान्तिपुष्टिधनारोग्यकामो मन्त्रैः प्रयोगकान्।

बाणलक्षं पञ्चलक्षम्।

अन्य मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार द्वाद्वशाक्षर मन्त्र है—श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता श्रीकृष्ण हैं। मन्त्र के १,१,१,३,४,२ वर्णों से इसका षडङ्ग न्यास किया जाता है—ध्यान-पूजा-जपादि विंशाक्षर मन्त्र के समान होते हैं। इस मन्त्र की उपासना से सभी इच्छित सम्पत्तियाँ मिलती हैं।

षोडशाक्षर मन्त्र—मूलोक्त श्लोकों का उद्धार करने पर षोडशाक्षर मन्त्र होता है—श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा क्लीं ह्रीं श्रीं। इसके ऋष्यादि पञ्चाङ्ग न्यास दशाक्षर मन्त्र के समान होते हैं। विंशाक्षर मन्त्र के समान इसकी पूजा होती है। ध्यान इस प्रकार किया जाता है--

वराभयकराब्जाभ्यामालिङ्गन्तं प्रियाङ्कके। अब्जोत्पललसद्धस्ते ताभ्यामालिङ्गितं मुदा॥
धारयन्तं रथाङ्गं च शङ्खं भव्यकलेवरम्।

इस प्रकार का ध्यान करके एकाग्रता से दश लाख मन्त्र-जप करे। दश हजार हवन गोघृत से करे। तदनन्तर तर्पणादि करने से सिद्ध यह मन्त्र साधक के इष्ट को प्रदान करने वाला होता है।

द्वादशाक्षर मन्त्र—ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा—यह द्वादशाक्षर मन्त्र है। इसका समस्त पूजा-विधान षोडशाक्षर मन्त्र के समान है।

दशाक्षर मन्त्र—मूलोक्त श्लोकों का उद्धार करने पर दशाक्षर मन्त्र होता है—श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं ह्रीं क्लीं। उपर्युक्त तीन मन्त्रों के ऋष्यादि अंग विधि पंक्त्यर्णोक्त विधान के समान है। तृतीय मन्त्र का ध्यान दशाक्षर के समान होता है एवं द्वितीय मन्त्र का ध्यान विंशाक्षर के समान होता है। प्रथम मन्त्र के लिये सूर्यमण्डल-स्थित कृष्ण का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

दरारिचापसद्बाणगुणाङ्कुशकराम्बुजम्। वेणुमादाय हस्ताभ्यां वादयन्तं मुदान्वितम्॥

इष्ट फल की प्राप्ति के लिये कृष्ण का ध्यान सूर्यमण्डल में करे। तीन आवरणों में अंग इन्द्रादि वज्रादि आयुधों की पूजा करे। पाँच लाख मन्त्र जप करके दशांश हवन हवि से करे। तदनन्तर तर्पणादि करके सिद्धमन्त्र से प्रयोग करे तो कान्ति, पुष्टि, धन एवं आरोग्य प्राप्त होते हैं।

वसुपुत्रदकृष्णमन्त्रविधिः

तथा—

अष्टादशलिपिर्मन्त्रः कामान्तो वसुपुत्रदः। मुनिर्नारद आख्यातो गायत्री छन्द ईरितम्॥१६॥
श्रीकृष्णो देवताङ्गानि षट्दीर्घेण स्मरेण हि।

क्लांक्लीं इत्यादिना षडङ्गकम्।

बालं नीलमुदारकान्तिविभवं हस्ताम्बुजे दक्षिणे
बिभ्राणं परिपक्वदौग्धकवलं नन्दात्मजं सुन्दरम्।
वामे तद्दिनजातमुद्धतरसं दध्युत्थपिण्डं शुभं
वैयाघ्रेण नखेन राजितगलं त्यक्तांशुकं भावयेत्॥१७॥

अङ्गलोकेशवज्राद्यैरर्चनास्य समीरिता। एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमेकलक्षमनन्यधीः॥१८॥
शर्कराघृतयुक्तेन दशांशं हविषा हुनेत्। तर्पणादि ततः कुर्यात् पूर्वोक्तविधिना सुधीः॥१९॥
सरोजमध्यगं कृष्णं पूजयित्वा विधानतः। तस्यैव श्रीमुखाम्भोजे तर्पयेन्मन्त्रमुच्चरन्॥२०॥
गोदुग्धेन सुशुद्धेन सुपक्वैः कदलीफलैः। दध्ना च नवनीतेन पुत्रमाप्नोति वत्सरात्॥२१॥
यद्यदिच्छति तत्सर्वं तर्पणेनैव सिद्ध्यति। इति।

धन-पुत्रप्रद कृष्ण मन्त्र—क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा क्लीं। यह मन्त्र धन एवं पुत्र प्रदान

करने वाला है। इसके ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता श्रीकृष्ण हैं। क्लां क्लीं इत्यादि से इसका षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

बालं नीलमुदारकान्तिविभवं हस्ताम्बुजे दक्षिणे बिभ्राणं परिपक्वदौग्धकवलं नन्दात्मजं सुन्दरम्।
वामे तद्दिनजातमुद्धतरसं दध्युत्थपिण्डं शुभं वैयाघ्रेण नखेन राजितगलं त्यक्तांशुकं भावयेत्॥

तीन आवरणों की पूजा में अंग, लोकेशों एवं वज्रादि आयुधों की पूजा की जाती है। इस प्रकार का ध्यान करके एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन शक्कर-घृतयुक्त हवि से करे। पूर्वोक्त विधि से तर्पणादि करे। कमल में बैठे कृष्ण की विधिवत् पूजा करे। उनके मुखकमल में मन्त्र बोलकर तर्पण करे। गोदुग्ध, पके केले के फल दही, मक्खन का नैवेद्य अर्पित करे। एक वर्ष तक ऐसा करने से साधक को पुत्र प्राप्त होता है। सभी इच्छायें तर्पण से पूरी होती हैं।

वागैश्वर्यप्रदमन्त्र:

तथा—

अधरो बिन्दुमान् कामो ङेयुक् कृष्णश्च मायया। गोविन्दो ङेयुतो लक्ष्मीर्दशार्णस्तदनन्तरम् ॥२२॥
भुगुर्मनुविसर्गाढ्यो द्वाविंशार्णो मनुर्मत:। वागैश्वर्यप्रदो नित्यं साधकानामभीष्टद: ॥२३॥
अष्टादशलिपिप्रोक्तं मुन्याद्यं चाङ्गकल्पनम्।

अधर ऐ, बिन्दुमान् बिन्दुयुक्तस्तेन ऐं। कामस्तद्बीजं। ङेयुक् कृष्ण: कृष्णाय। मायया तद्बीजेन सहेति शेष:। गोविन्दो ङेयुतो गोविन्दाय। लक्ष्मी: श्रीबीजं। दशार्ण: पूर्वोक्त:। भृगु: सकार:, मनु औ, विसर्ग: अ:, तेन सौ:। विंशाक्षरोक्ता सपर्या। ध्यानमुच्यते—

दक्षोर्ध्वे हस्तपद्मे स्फटिकजपवटीं मातृकावर्णरूपां
वामोर्ध्वे सर्वविद्याकलितमभिनवं पुस्तकं संदधान:।
शब्दब्रह्मैकवेणुं करयुगलधृतं वादयञ् श्रेयसे वो
गायन् पीताम्बरोऽसौ भवतु मुररिपु: श्यामल: कोमलाङ्ग: ॥२४॥
मयूरपत्रसंनद्धकेशजालश्रियान्वित:। सर्वज्ञो मुनिवृन्देन सेवित: सर्ववेदिना ॥२५॥
इत्थं संचिन्त्य देवेशं नारीनेपथ्यधारिणम्।

नेपथ्यमलङ्कारस्तेन स्त्रीरूपधारी ध्येय:। 'युवतीवेशलावण्यरमणीयतनुं हरिम्' इति गौतमीयतन्त्रवचनात्। क्लींकृष्णाय हृदयाय०। गोविन्दाय शिरसे०। गोपीजन शिखायै०। वल्लभाय कवचाय०। स्वाहा अस्त्राय०। इति पञ्चाङ्गम्। अन्यत्सुगमम्। तथा—

वेदलक्षं मनुं जप्त्वा किंशुकैर्मधुराप्लुतै:। दशांशं जुहुयादग्नौ साधको मन्त्रसिद्धये ॥२६॥
तर्पणादि तत: कुर्यान्मन्त्री पूर्वोक्तवर्त्मना। मन्त्रमेतं जपेद्यस्तु मन्त्री पूर्वोक्तवर्त्मना ॥२७॥
देवस्यानुग्रहान् तस्य मुखपद्माद्विजृम्भते। गङ्गातरङ्गकल्लोलवाग्विलासमनोहरा ॥२८॥
गद्यपद्यात्मिका सम्यक् प्रचण्डा भारती सदा। अशेषवेदवेदार्थसर्वशास्त्रविशारद: ॥२९॥
राजैश्वर्यं महत् प्राप्य मुक्तिमेति परां कृती। इति।

द्वाविंशाक्षर वागैश्वर्यप्रद मन्त्र—ऐं क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा सौ:। यह वाणीरूपी ऐश्वर्य प्रदान करने वाला मन्त्र है। नित्य साधकों का अभीष्टदायक है। अट्ठारह अक्षरों वाले इस मन्त्र के समान ही इसके भी ऋष्यादि अंगन्यास होते हैं। ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

दक्षोर्ध्वे हस्तपद्मे स्फटिकजपवटीं मातृकावर्णरूपां वामोर्ध्वे सर्वविद्याकलितमभिनवं पुस्तकं संदधान:।
शब्दब्रह्मैकवेणुं करयुगलधृतं वादयञ् श्रेयसे वो गायन् पीताम्बरोऽसौ भवतु मुररिपु: श्यामल: कोमलाङ्ग:॥
मयूरपत्रसंनद्धकेशजालश्रियान्वित:। सर्वज्ञो मुनिवृन्देन सेवित: सर्ववेदिना॥

इस प्रकार ध्यान करके नारी रूपधारी कृष्ण का चिन्तन करे। पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार करे—क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः, गोविन्दाये शिरसे स्वाहा, गोपीजन शिखायै वषट्, वल्लभाय कवचाय हुं, स्वाहास्त्राय फट्। चार लाख मन्त्रजप करे। मधुराप्लुत पलाश के फूलों से दशांश हवन करे तब यह मन्त्र सिद्ध होता हैं। तदनन्तर पूर्वोक्त विधान से तर्पणादि करे। इस मन्त्र का पूर्वोक्त विधान से जो जप करता है, उप पर देव की कृपा होती है। उसके मुख से गंगातरंग के समान मनोहर वाग्विलास निःसृत होता है। गद्य-पद्यात्मिका वाणी सदैव निकलती है। सभी वेद-वेदार्थ एवं सभी शास्त्रों में वह विशारद होता है। महाराजाओं के समान उसे ऐश्वर्य प्राप्त होता है एवं अन्त में मोक्ष मिलता है।

नन्दपुत्रमन्त्रवर्णनम्

तथा—

वेदादिहृदयस्यान्ते ङेयुतं भगवत्पदम्। नन्दपुत्राय नन्दान्ते वपुषे श्री दशाक्षरः ॥३०॥
अष्टाविंशाक्षरो मन्त्रो भजतां कामदो मणिः।

वेदादिः प्रणवः। हृदयं नमः। ङेयुतं भगवत्पदं भगवते। नन्दपुत्राय स्वरूपं। नन्दवपुषे स्वरूपं। श्री स्वरूपं। दशाक्षरः पूर्वोक्तः। तथा—

नारदो मुनिरस्य स्यादुष्णिक् छन्द उदाहृतम्। देवता नन्दपुत्रोऽस्य चिन्तितेष्टफलप्रदः ॥३१॥
आचक्रादिपदैरङ्गपञ्चकं परिकीर्तितम्। रत्नपात्रं करे दक्षे हेमवेत्रं च वामतः ॥३२॥
वहन्तं भावयेत् कृष्णं स्त्रीभ्यामालिङ्गितं मुदा। अङ्गलोकेशवज्राद्यैरर्चना फलसिद्धये ॥३३॥
दशायुतं जपित्वान्ते जुहुयाद् हविषायुतम्। साधिते साधको मन्त्री भवेत् सर्वसमृद्धिमान् ॥३४॥ इति।

तथा—

नन्दपुत्राय शब्दान्ते श्यामलाङ्गाय भाषयेत्। ङेन्तं बालवपुः प्रोक्त्वा चतुर्थ्या कृष्णमीरयेत् ॥३५॥
तारगोविन्दशब्दान्ते दशार्णं च मनुं वदेत्। मन्त्रोऽयं साधुसंप्रोक्तो द्वात्रिंशद्वर्ण उत्तमः ॥३६॥
मुन्याद्या नारदानुष्टुप्कृष्णा अन्यत् पुरोक्तवत्।

पुरोक्तवत् अष्टाविंशाक्षरोक्तवत्। तथा—

प्रणवान्ते रमा माया हृदयं भगवांस्ततः। ङेयुक् च नन्दपुत्राय च्छगलाण्डोऽप्यनन्तयुक् ॥३७॥
(इन्द्रतो वपुषे ब्रूयात् श्यामलाङ्गं च ङेयुतम्।) अष्टादशलिपिर्मन्त्रो द्विचत्वारिंशदर्णवान् ॥३८॥

रमा श्रीबीजं। माया तद्बीजं। ङेयुग्भगवान् भगवते। नन्दपुत्राय स्वरूपं। छगलाण्डो वकारः, अनन्त आ, तेन वा। इन्द्रो ल। वपुषे स्वरूपं। श्यामलाङ्गं ङेयुतं श्यामलाङ्गाय। अष्टादशलिपिः पूर्वोक्तः। तथा—

ब्रह्मानुष्टुप् च कृष्णाख्या मुन्याद्याः कथिता बुधैः। अन्यत् सर्वं पुरोक्तेन विधानेन समं भवेत् ॥३९॥
वह्न्यैकादशभूतेषुधृतिसंख्यैस्तु मन्त्रवित्। मूलमन्त्रभवैर्वर्णैः पञ्चाङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥४०॥

वह्नयस्त्रयः। भूतानि पञ्च। इषवः पञ्च। धृतिरष्टादश। ॐश्रींह्रीं हृदयाय०। नमो भगवते नन्दपुत्राय शिरः०। बालवपुषे शिखा०। श्यामलाङ्गाय कवचाय०। क्लींकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा अस्त्राय०। अन्यदष्टाविंशत्यर्णवत्। 'मन्त्रोऽयं सकलैश्वर्यकाङ्क्षितैकार्थसाधनम्' इति।

अष्टाविंशाक्षर मन्त्र—ॐ नमो भगवते नन्दपुत्राय नन्दवपुषे श्रीगोपीजनवल्लभाय स्वाहा। अनुष्ठान करने पर यह मन्त्र कामप्रद मणिसदृश होता है। इसके ऋषि नारद, छन्द उष्णिक् एवं देवता नन्दपुत्र हैं। पञ्चाङ्ग न्यास आचक्रादि पदों से किया जाता है। दाहिने हाथ में रत्नपात्र एवं बाँयें हाथ में सवर्णदण्ड धारण करने वाले, स्त्रियों द्वारा आलिङ्गित, प्रसन्नमुख कृष्ण का ध्यान किया जाता है।

तीन आवरणों की पूजा में अंगों, लोकेशों और वज्रादि आयुधों की पूजा की जाती है। एक लाख मन्त्र जप करके

दश हजार हवन हवि से किया जाता है। इस मन्त्र को साधित करने से मन्त्री सभी समृद्धियों से युक्त होता है।

बत्तीस अक्षरों का मन्त्र—नन्दपुत्राय श्यामलाङ्गाय बालवपुषे कृष्णाय ॐ गोविन्दगोपीजनवल्लभाय स्वाहा। साधुओं के द्वारा इस बत्तीस अक्षरों के मन्त्र को उत्तम कहा गया है। इसके ऋषि नारद, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता कृष्ण हैं। शेष सभी क्रियायें पूर्वोक्त मन्त्र के समान होती हैं।

बयालीस अक्षरों का मन्त्र—ॐ श्रीं ह्रीं नमो भगवते नन्दपुत्राय बालवपुषे श्यामलाङ्गाय क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता कृष्ण हैं। इसका पूजन-विधान पूर्ववत् होता है। पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ श्रीं ह्रीं हृदयाय नमः, नमो भगवते नन्दपुत्राय शिरसे स्वाहा, बालवपुषे शिखायै वषट्, श्यामलांगाय कवचाय हुं, क्ली कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा अस्त्राय फट्। शेष समस्त पूजन-विधान अट्ठाईस अक्षरों वाले मन्त्र के समान होता है। यह मन्त्र समस्त ऐश्वर्य के साथ-साथ अभीप्सित वस्त्र को देने वाला है।

रुक्मिणीवल्लभमन्त्रः

तथा—

ध्रुवश्च हृदयं चैव चतुर्थ्या भगवत्पदम्। रुक्मिणीवल्लभायान्यत् स्वाहान्तः षोडशाक्षरः ॥४१॥

ध्रुवः प्रणवः। हृदयं नमः। चतुर्थ्या भगवत्पदं भगवते। रुक्मिणीवल्लभाय स्वरूपम्।

मुनिर्नारद आख्यातश्छन्दोऽनुष्टुबुदीरितम्। रुक्मिणीवल्लभः कृष्णो देवता सर्वसिद्धिदः ॥४२॥

भूद्वन्द्वश्रुतिपातालयुग्मार्णैरङ्गकल्पनम्।

(भूः एकः। श्रुतयश्चत्वारः। पातालाः सप्त)।

कलायश्यामलं कृष्णं नानालङ्कारमण्डितम्। पीतकौशेयसद्वस्त्रं स्वर्णवेत्रविभूषितम् ॥४३॥

करपद्मेन दक्षेण शिलष्यन्तं वामपाणिना। चिन्तारत्नवतीं देवीमङ्कगां काञ्चनप्रभाम् ॥४४॥

वामहस्तधृताम्भोजामन्येनालिङ्गितप्रियाम्। अङ्गैर्नारदमुख्यैश्च लोकपालैस्तदायुधैः ॥४५॥

पूजनं धर्मकामार्थनिःश्रेयसफलावहम्। एकलक्षं जपेन्मन्त्रं हुनेन्मधुरलोलितैः ॥४६॥

दशांशं कमलैः पश्चात् तर्पणादि समाचरेत्। महदैश्वर्यवश्यादि काङ्क्षिभिः सेव्यतां मनुः ॥४७॥

ॐहृत्। नमः शिरः। भगवते शिखा। रुविमणीवल्लभाय कवचं। स्वाहा अस्त्रम्।

षोडशाक्षर रुक्मिणीवल्लभ मन्त्र—ॐ नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि नारद, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता रुक्मिणीवल्लभ कृष्ण हैं। इसका पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ हृदयाय नमः, नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्, रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुं, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

कलायश्यामलं कृष्णं नानालङ्कारमण्डितम्। पीतकौशेयसद्वस्त्रं स्वर्णवेत्रविभूषितम्॥
करपद्मेन दक्षेण शिलष्यन्तं वामपाणिना। चिन्तारत्नवतीं देवीमङ्कगां काञ्चनप्रभाम्॥
वामहस्तधृताम्भोजामन्येनालिङ्गितप्रियाम्।

चार आवरणों की पूजा में अंगों, नारदादि मुख्य ऋषियों, लोकपालों और उनके आयुधों की पूजा होती है। इसके पूजन से धर्म, अर्थ, काम और निःश्रेयस् की प्राप्ति होती है। एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन मधुर-लोलित कमलफूलों से करे। तर्पणादि करे। महान् ऐश्वर्य एवं वश्यादि के इच्छुक साधक इस मन्त्र का अनुष्ठान करते हैं।

लीलादण्डमहाविष्णुमन्त्रविधिः

तथा—

वदेल्लीलापदस्यान्ते दण्डगोपीजनं पुनः। संसक्तदोःपदं पश्चाद् दण्डबालपदं वदेत् ॥४८॥

रूपमेघपदं प्रोक्त्वा श्यामं भगपदं वदेत्। वन् विष्णो वह्निवध्वन्त एकोनत्रिंशदक्षरः ॥४९॥

लीलादण्डगोपीजनसंसक्तदोर्दण्डबालरूपमेघश्याम भगवन् विष्णो इति पदानि स्वरूपाणि। वह्निवधूः स्वाहा।

मन्त्रो निखिलसद्वश्यसिद्धिसंपत्प्रदो मतः। नारदोऽस्य मुनिश्छन्दो गायत्री देवता मता ॥५०॥
लीलादण्डमहाविष्णुः सर्वदेवौघवन्दितः। चतुर्दशचतुर्वेदत्र्यक्षरैरङ्गकल्पनम् ॥५१॥

लीलादण्डगोपीजनसंसक्तदोर्दण्ड हृत्। बालरूप शिरः। मेघश्याम शिखा। भगवन् कवचं। विष्णो स्वाहा अस्त्रम्।

वामहस्ताम्बुजस्थेन लीलादण्डेन गोपिकाः। पुराङ्गनाश्च साकूतं मोहयन्तं महाप्रभुम् ॥५२॥
आत्मनः प्रियमित्रस्य स्कन्धन्यस्तान्यहस्तकम्। हतकंसं स्मरेत् कृष्णमप्रमेयपराक्रमम् ॥५३॥
अङ्गैरिन्द्रादिवज्राद्यैरर्चनास्य मतान्वहम्। लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं दशांशं तिलतण्डुलैः ॥५४॥
त्रिमध्वक्तैर्हुनेत् पश्चात्तर्पणादि समाचरेत्। नियमस्थो नरो योऽमुं लीलादण्डमनुं भजेत् ॥५५॥
सुभगः स जगद्वन्द्यो रमाया भवनं भवेत्। इति।

उन्तीस अक्षरों का लीलादण्ड मन्त्र—लीलादण्डगोपीजनसंसक्तदोण्डबालरूपमेघश्याम भगवन् विष्णो स्वाहा। यह मन्त्र सभी सद्वश्यसिद्धि एवं सम्पत्प्रदायक है। इसके ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता लीलादण्ड महाविष्णु हैं। पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार होता है—लीलादण्डगोपीजनसंसक्तदोर्दण्ड हृदयाय नमः, बालरूप शिरसे स्वाहा, मेघश्याम शिखायै वषट्, भगवन् कवचाय हुं, विष्णो स्वाहा अस्त्राय फट्। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

वामहस्ताम्बुजस्थेन लीलादण्डेन गोपिकाः। पुराङ्गनाश्च साकूतं मोहयन्तं महाप्रभुम्॥
आत्मनः प्रियमित्रस्य स्कन्धन्यस्तान्यहस्तकम्। हतकंसं स्मरेत् कृष्णमप्रमेयपराक्रमम्॥

तीन आवरणों की पूजा में अंगों, लोकेशों और वज्रादि आयुधों की पूजा की जाती है। एक लाख मन्त्र जप किया जाता है। दशांश हवन तिल तण्डुल को त्रिमधुरों से लोलित करके किया जाता है। तदनन्तर तर्पण-मार्जन करके नियमस्थ जो मनुष्य इस लीलादण्ड मन्त्र का जप करता है, वह सुभग जगत्पूज्य और लक्ष्मी का निवासस्वरूप होता है।

गोवल्लभहरिमन्त्रविधानम्

तथा—

शार्ङ्गी सद्येन सन्दीप्तो बाल इन्द्रद्वयं तथा। विलोमाद् यतृतीयश्च सानन्तोऽथ समीरणः ॥५६॥
कृशानुदयितोपेतो मन्त्रोऽयं धातुवर्णकः।

शार्ङ्गी ग। सद्य ओ, तेन गो। बाल व। इन्द्रद्वयं ल्ल। विलोमाद्यतृतीयो भ, अनन्त आ, तेन भा। समीरणो य। कृशानुदयिता स्वाहा। धातुवर्णः सप्तार्णः। तथा—

नारदो मुनिरस्य स्यादुष्णिक् छन्दश्च देवता। गोवल्लभो हरिः प्रोक्तो गवां वृद्धिकरः परः ॥५७॥
दशार्णोक्तविधानेन पञ्चाङ्गविधिरीरितः। इन्द्रनीललसत्कान्तिं पीतवाससमच्युतम् ॥५८॥
सर्पारिपिच्छनिकरैः सम्यक्क्लृप्तावतंसकम्। वेणुं वामकरे दक्षे यष्टिं पाशं च बिभ्रतम् ॥५९॥
कपिलाजातमध्यस्थमाह्वयन्तं च ता मुदा। एवं ध्यात्वा यजेत्सम्यक् पीठे पूर्वोदिते शुभे ॥६०॥
आदावङ्गानि संपूज्य पूजयेद्गोगणाष्टकम्। सुवर्णवर्णा प्रथमा द्वितीया गौरपिङ्गला ॥६१॥
तृतीया रक्तपिङ्गाक्षी चतुर्थी गलपिङ्गला। पञ्चमी बभ्रुवर्णा स्यादुत्तमा कपिला गवाम् ॥६२॥
षष्ठी चतुष्कपिङ्गा स्यात्सप्तमी समपिङ्गला। अष्टमी कपिला गोषु विज्ञेया पुच्छपिङ्गला ॥६३॥
पुरन्दरमुखास्तेषामायुधानि ततः परम्। ध्यात्वा मन्त्रं जपेत्सम्यग्वर्णलक्षं जितेन्द्रियः ॥६४॥
तत्सहस्रं हुनेन्मन्त्री गोदुग्धैस्तु पुरोक्तवत्। गोदुग्धैः प्रत्यहं साग्रं सहस्रं जुहुयात्तु यः ॥६५॥
मासार्धेन गवां वृद्धिर्जायते तस्य भूयसी। दशाक्षरोक्तवत् सर्वं विधानं च प्रकल्पयेत् ॥६६॥ इति।

सप्ताक्षर गोवल्लभ मन्त्र—गोवल्लभाय स्वाहा। इसके ऋषि नारद, छन्द उष्णिक् एवं देवता गोवल्लभ हरि हैं। यह मन्त्र गायों की वृद्धि करने वाला हैं। दशाक्षर मन्त्र के समान इसका पञ्चाङ्ग न्यास होता है। ध्यान इस प्रकार कहा गया है—

इन्द्रनीललसत्कान्तिं पीतवाससमच्युतम्। सर्पारिपिच्छनिकरैः सम्यक्क्लृप्तावतंसकम्।।
वेणुं वामकरे दक्षे यष्टिं पाशं च बिभ्रतम्। कपिलाजातमध्यस्थमाह्वयन्तं च ता मुदा।।

इस प्रकार का ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ पर सम्यक् रूप से पूजा करे। अष्टदल कमल बनाकर कर्णिका के मध्य में अंगों की पूजा करे। दलों में आठ गोगणों की पूजा करे। ये आठ हैं—सुवर्णवर्णा, गौरपिङ्गला, रक्तपिङ्गाक्षी, गलपिङ्गला, बभ्रुवर्णा, चतुष्कपिंगा, समपिङ्गला पुच्छपिङ्गला है। इसके बाहर चतुरस्र में इन्द्रादि लोकपालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। सम्यक् ध्यान करके सात लाख मन्त्रजप करे। सात हजार हवन पूर्ववत् गाय के दूध से करे। प्रतिदिन गाय के दूध से एक हजार हवन करे। ऐसा करने से पन्द्रह दिनों में गायों की वृद्धि होती है। दशाक्षर मन्त्र के समान ही इसके अन्य सभी विधान किये जाते हैं।

सप्रयोग: गोविन्दमन्त्र:

तथा—

ब्रूयात् तारहृदोरन्ते चतुर्थ्या भगवत्पदम्। अस्थ्यग्निवामनेत्रान्ते गोविन्दं तादृशं वदेत्।।६७।।
रव्यर्णो मनुराख्यातो नारदोऽस्य मुनिर्भवेत्। गायत्री छन्द इत्युक्तं देवता कृष्ण ईरितः।।६८।।

तारः प्रणवः। हृन्नमः। चतुर्थ्या भगवत्पदं भगवते। अस्ति श। अग्नी र। वामनेत्रं ई, तेन श्री। गोविन्दं तादृशं चतुर्थ्यायुतं तेन गोविन्दाय।

चन्द्रनेत्राब्धिबाणार्णैर्मन्त्रेणाप्यङ्गकल्पनम्। कल्पद्रुमतले रम्ये रत्नसिंहासने शुभे।।६९।।
सर्वलक्षणसन्दीप्तं निविष्टं नन्दनन्दनम्। प्रस्नुतस्तनभारेण गोवृन्देन वृतं स्मरेत्।।७०।।
मेघश्यामतनुं सुपीतवसनं वेत्रं दरं बिभ्रतं हस्ताभ्यां कमलायताक्षमनिशं सौन्दर्यसीमास्पदम्।
देवीधीश्वरहस्तयुग्मविलसत्सौवर्णसत्कुम्भतो निर्यातामृतधारया हरिमहं संसिच्यमानं भजे।।७१।।
दक्षे वेत्रं। वामे शङ्खः इत्यायुधध्यानम्।

संपूज्य वैष्णवं पीठं तत्रावाह्य यजेद्धरिम्। देवस्य दक्षिणे भागे कर्णिकायां तु रुक्मिणीम्।।७२।।
सत्यभामां च तद्वामे वासवं चाग्रदेशतः। सुरभिं पृष्ठतोऽभ्यर्च्य दलमूलेषु मन्त्रवित्।।७३।।
हृदादिकवचान्तानि दिग्दलेषु समर्चयेत्। चत्वार्यङ्गानि कोणेषु सम्यगस्त्रं यजेत् ततः।।७४।।
पूर्वादिपत्रमध्येषु कालिन्दीं रोहिणीं ततः। नाग्नजित्यादिकाश्चापि षट्शक्तीः क्रमशोऽर्चयेत्।।७५।।
तद्वहिर्वह्निकोणादिशिवान्तं सम्यगर्चयेत्। किङ्किणीधामयष्टीस्तु वेणुं पश्चात् पुरोगतौ।।७६।।
श्रीवत्सकौस्तुभौ पूज्यौ वनमालां पुरोऽर्चयेत्। पूर्वादि तद्वहिः शङ्खं गदां चक्रं ततः सुधीः।।७७।।
वसुदेवाभिधं पश्चाद् देवकीं नन्दगोपकम्। यशोदां धेनुगोपालगोपिकाः पूजयेत् ततः।।७८।।
लोकपालांस्तदस्त्राणि कुमुदादींश्च पूजयेत्। उत्तरे तद्वहिः पश्चाद्विष्वक्सेनं विधानतः।।७९।।
कुमुदः प्रथमो ज्ञेयः कुमुदाक्षो द्वितीयकः। पुण्डरीकस्तृतीयश्च वामनस्तदनन्तरम्।।८०।।
शङ्कुकर्णः पञ्चमश्च सर्वनेत्रस्ततः परः। सुमुखः सप्तमः पश्चादष्टमः सुप्रतिष्ठितः।।८१।। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि नारदाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐहृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै०। श्रीगोविन्दाय कवचाय०। ॐनमोभगवते श्रीगोविन्दाय अस्त्राय०। इति पञ्चाङ्गानि प्राग्वद्विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते कर्णिकायां देवस्य दक्षिणे श्रीरुक्मिण्यै नमः। वामे सत्यभामायै नमः। अग्रे इन्द्राय०। पृष्ठे सुरभ्यै नमः। दिग्गतकेसरेषु हृदयादिकवचान्तानि कोणकेसरेषु चास्त्रं संपूज्य, दलेषु

देवाग्रादि—कालिन्द्यै नमः। रोहिण्यै०। नाग्नजित्यै०। सुनन्दायै०। मित्रविन्दायै०। सुलक्ष्मणायै०। जाम्बवत्यै०। सुशीलायै०। अष्टदलाद्बहिः चतुरस्राभ्यन्तरे वह्निकोणादि—किङ्किणीभ्यो नमः। दामभ्यो०। यष्ट्यै०। वेणवे नमः। इति ईशानान्तमभ्यर्च्य, देवाग्रे— श्रीवत्साय नमः। कौस्तुभाय नमः। वनमालायै नमः। चतुरस्रे देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन—शङ्खाय नमः। गदायै नमः। चक्राय नमः। वसुदेवाय नमः। देवक्यै नमः। नन्दगोपाय नमः। यशोदायै नमः। धेनुभ्यो नमः। गोपालेभ्यो नमः। गोपिकाभ्यो नमः। इति संपूज्य, लोकपालांस्तदस्त्राणि च तद्बहिः संपूज्य, तद्बहिः—कुमुदाय नमः। कुमुदाक्षाय नमः। पुण्डरीकाय नमः। वामनाय नमः। शङ्कुकर्णाय नमः। सर्वनेत्राय नमः। सुमुखाय नमः। सुप्रतिष्ठिताय नमः इति। तद्बहिर्देवस्योत्तरे—विष्वक्सेनाय नमः इति संपूज्य, धूपदीपादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

एवं संचिन्त्य देवेशं वर्णलक्षं जपेन्मनुम्। तत्सहस्राणि गोक्षीरैर्जुहुयात् तर्पयेत् ततः ॥८२॥
ब्राह्मणाराधनान्तं तु प्राग्वत् कुर्यादतन्द्रितः। दिनादौ चाथ मध्याह्ने समयत्रितये तथा ॥८३॥
गोष्ठाभ्याशगतं कृष्णमर्चयन् विधिनामुना। भक्त्या परमयोपेतो गोभ्यश्च तृणमर्पयन् ॥८४॥
दीर्घायुर्निर्भयश्चैव धनधान्यधरादिभिः। पुत्रैः पौत्रैश्च सन्मित्रैराढ्योऽन्ते विष्णुमेति च ॥८५॥ इति।

बारह अक्षरों का गोविन्द मन्त्र—ॐ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय। इस मन्त्र के ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता कृष्ण हैं। प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके शिरसि नारद ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः—इस प्रकार ऋषिन्यास करके अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग किया जाता है। तदनन्तर हृदयादि न्यास इस प्रकार होता है—ॐ हृदयाय नमः, नमः शिरसे स्वाहा, भगवते शिखायै वषट्, श्रीगोविन्दाय कवचाय हुं, ॐ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय अस्त्राय फट्। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

कल्पद्रुमतले रम्ये रत्नसिंहासने शुभे। सर्वलक्षणसन्दीप्तं निविष्टं नन्दनन्दनम्॥
प्रस्नुतस्तनभारेण गोवृन्देन वृतं स्मरेत्। मेघश्यामतनुं सुपीतवसनं वेत्रं दरं बिभ्रतं॥
हस्ताभ्यां कमलायताक्षमनिशं सौन्दर्यसीमास्पदम्। देवीधीश्वरहस्तयुग्मविलसत्सौवर्णसत्कुम्भतो॥
निर्यातामृतधारया हरिमहं संसिच्यमानं भजे।

ध्यान के बाद पुष्पोपचार तक पूजा करे। कर्णिका में देव के दक्षिण भाग में रुक्मिण्यै नमः, वामभाग में सत्यभामायै नमः, आगे इन्द्राय नमः एवं पीछे सुरभ्यै नमः से पूजा करे। चारो दिशाओं में हृदय से कवच तक अंगपूजन करे। कोण केसरों में अस्त्रों की पूजा करे। अष्टदल कमल के दलों में देव के आगे से कालिन्द्यै नमः, रोहिण्यै नमः, नाग्नजित्यै नमः, सुनन्दायै नमः, मित्रविन्दायै नमः, सुलक्ष्मणायै नमः, जाम्बवत्यै नमः, सुशीलायै नमः से पूजा करे। अष्टदल के बाहर चतुरस्र में आग्नेयादि कोणों से किंकिणीभ्यो नमः, दामभ्यो नमः, यष्ट्यै नमः, वेणवे नमः से ईशान कोण तक पूजन करके देव के अग्रभाग में श्रीवत्साय नमः, कौस्तुभाय नमः, वनमालायै नमः, चतुरस्र में देव के आगे से प्रदक्षिणक्रम से शङ्खाय नमः, गदायै नमः, चक्राय नमः, वसुदेवाय नमः, देवक्यै नमः, नन्दगोपाय नमः, यशोदायै नमः, धेनुभ्यो नमः, गोपालेभ्यो नमः, गोपिकाभ्यो नमः से पूजा करे। इसके बाद लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। उसके बाहर कुमुदाय नमः, कुमुदाक्षाय नमः, पुण्डरीकाय नमः, वामनाय नमः, शंकुकर्णाय नमः, सर्वनेत्राय नमः, सुमुखाय नमः, सुप्रतिष्ठिताय नमः से पूजा करे। उसके बाहर देव के उत्तर भाग में विश्वक्सेनाय नमः से पूजन करके धूप-दीपादि समर्पित करके पूर्ववत् पूजा करे।

इस प्रकार से देव की पूजा करके बारह लाख मन्त्रजप करे। बारह हजार हवन गाय के दूध से करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणभोजन कराये। दिन में प्रात: मध्याह्न-सायं—तीनों काल में गोशाला में बैठकर इस विधान से कृष्ण की पूजा भक्तिपूर्वक जो करता है, गायों को घास खिलाता है, दीर्घायु, निर्भयता, धन-धान्य, धरादि, पुत्र-पौत्र एवं अच्छे मित्रों से युक्त होकर अन्त में वैकुण्ठ को प्राप्त होता है।

पञ्चाब्दबालकृष्णमन्त्रस्य प्रयोगः

तथा—

स्मृतिराप्यायनीयुक्ता सृष्टिरिन्धिकयान्विता। क्रिया दीर्घा प्रतिष्ठाढ्या वरदा तादृशी मता ॥८६॥
क्षुधा दीर्घा च तन्द्राख्या रसनादीपिता भवेत्। अष्टाक्षरैः समाख्यातो मूलमन्त्रो मनीषिभिः ॥८७॥

स्मृतिः ग, आप्यायनी ओ, तेन गो। सृष्टिः क, इन्धिका उ, तेन कु। क्रिया ल। दीर्घा न, प्रतिष्ठा आ, तेन ना। वरदा थ, तादृशी आकारयुक्ता तेन था। क्षुधा य। दीघी न। तन्द्रा म, रसना विसर्गः, तेन मः। तथा—

ब्रह्मा मुनिस्तु गायत्री च्छन्दो देवो हरिर्मतः। वर्णद्वन्द्वक्रमादङ्गं सकलेनापि कल्पयेत् ॥८८॥
वन्दे नीलकलेवरं रुचिरया कान्त्या महत्या युतं बालं कुन्तलजालरुद्धनयनं पञ्चाब्दिकं चाङ्गने।
धावन्तं रशनासुनूपुरमणिग्रैवेयहाराङ्गदै रादीप्तं सरलं स्तुतं मुनिगणैर्हृष्टं यशोदासुतम् ॥८९॥
श्रीकृष्णं पूजयेन्नित्यं पीठे पूर्वसमीरिते। दिग्विदिक्क्रमतः पूर्वं पूजयेदङ्गपञ्चकम् ॥९०॥
दिक्पत्रेषु यजेन्मूर्तीर्वासुदेवादिकास्ततः। रुक्मिणीं सत्यभामां च लक्ष्मणां तदनन्तरम् ॥९१॥
ततो जाम्बवतीं मन्त्री कोणपत्रेषु पूजयेत्। तद्बहिर्वासवादीनां वज्रादीनां च पूजनम् ॥९२॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य पूर्ववद्विनियोगमुक्त्वा, गोकु हृदयाय नमः। लना शिरसे स्वाहा। थाय शिखायै०। नमः कवचाय०। गोकुलनाथाय नमः अस्त्राय०। इति पञ्चाङ्गानि विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते देवाग्रादिकेसरचतुष्केऽङ्गचतुष्टयं कोणकेसरेषु अस्त्रमिति पञ्चाङ्गानि विन्यस्य, दिग्दलेषु वासुदेवादिमूर्तिचतुष्टयं संपूज्य, कोणपत्रेषु—रुक्मिण्यै नमः। सत्यभामायै नमः। लक्ष्मणायै नमः। जाम्बवत्यै नमः। इति संपूज्य दिगीशार्चादि प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

संपूज्यैवं मनुं जप्त्वा वर्णलक्षं हुनेत्ततः। वसुसाहस्रसंख्यातैः पलाशोत्थसमिद्वरैः ॥९३॥
पायसैरथवाज्याक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत्। मन्त्रमेनं भजन्नित्यमन्वहं श्रद्धयान्वितः ॥९४॥
सर्वैश्वर्यसमृद्धोऽन्ते विष्णुसायुज्यमाप्नुयात्। इति।

अष्टाक्षर पञ्चाब्द बालकृष्ण मन्त्र—पञ्चवर्षीय बालक कृष्ण का अष्टाक्षर मूल मन्त्र है—गोकुलनाथाय नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता हरि हैं। पूर्ववत् योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये कृष्णाय देवतायै नमः। ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः कहकर न्यास करे—गोकु हृदयाय नमः, लना शिरसे स्वाहा, थाय शिखायै वषट्, नमः कवचाय हुं, गोकुलनाथाय नमः, अस्त्राय फट्। पञ्चाङ्ग न्यास के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

वन्दे नीलकलेवरं रुचिरया कान्त्या महत्या युतं बालं कुन्तलजालरुद्धनयनं पञ्चाब्दिकं चाङ्गने।
धावन्तं रशनासुनूपुरमणिग्रैवेयहाराङ्गदै रादीप्तं सरलं स्तुतं मुनिगणैर्हृष्टं यशोदासुतम्॥

इस प्रकार ध्यान करके पुष्पोपचार तक पूजा के बाद केसर में देव के अंगचतुष्टय की एवं कोणों में अस्त्र की पूजा करे। अष्टदल के दिग्दलों में वासुदेवादि मूर्तिचतुष्टय की पूजा करे। कोणपत्रों में रुक्मिण्यै नमः, सत्यभामायै नमः, लक्ष्मणायै नमः, जाम्बवत्यै नमः से पूजन करे। उसके बाहर चतुरस्र में दिगीशों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार की पूजा के बाद आठ लाख जप करे। आठ हजार हवन पलाश की समिधाओं से या आज्याक्त पायस से करे। तर्पण-मार्जनादि करे। श्रद्धापूर्वक इस मन्त्र का नित्य भजन करना चाहिये। इससे सभी ऐश्वर्य एवं समृद्धि मिलती है। साथ ही अन्त में विष्णु का सायुज्य प्राप्त होता है।

सिद्धगोपालमन्त्रविधिः

तथा—

ध्रुवो रमा महामाया कामान्ते ङेयुतं वदेत्। श्रीकृष्णं तादृशं चैव श्रीगोविन्दमपीरयेत् ॥९५॥
श्रीगोपीजनशब्दान्ते वल्लभाय ततो वदेत्। त्रिः श्रीमत्यद्भुतो मन्त्रः सिद्धगोपालसंज्ञकः ॥९६॥

ध्रुवः प्रणवः। रमा श्रीबीजं। महामाया भुवनेशीबीजं। कामः कामबीजं। ङेयुतं श्रीकृष्णं श्रीकृष्णाय। तादृशं गोविन्दं श्रीगोविन्दाय। श्रीगोपीजनवल्लभाय स्वरूपं। त्रिः श्रीं त्रिवारं श्रींबीजं च वदेदित्यर्थः।

सेवितौ वैनतेयेन माधवौ मण्डपस्थितौ। रमन्तौ दिव्यभावेन बलकृष्णौ तु संस्मरेत् ॥९७॥ इति।

सिद्धगोपाल मन्त्र—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीकृष्णाय श्रीगोविन्दाय श्रीगोपीजनवल्लभाय श्रीं श्रीं श्रीं। इस मन्त्र के अनुष्ठान के समय गरुड़ द्वारा सेवित, मण्डपावस्थित, दिव्य भाव से रमण करने वाले बल राम एवं कृष्ण का ध्यान किया जाता है।

एकादिदशार्णान्तमन्त्राः

तथा—

सर्गी तिथीशयुक् चक्री मन्त्र एकाक्षरो भवेत्। द्व्यर्णः कृष्णेति ताराद्यो गुणवर्णोऽयमेव हि ॥९८॥

चक्री ककारः सर्गी विसर्गयुक्तः तिथीशः ऋ, तेन कृः इति मन्त्रः। कृष्ण इति द्व्यर्णः। अयं द्व्यर्णस्ताराद्यः प्रणवाद्यश्चेद् गुणवर्णस्त्र्यक्षरः। ॐकृष्ण इति।

वेदार्णः स चतुर्थ्यन्तः कृष्णाय हृदयान्तकः। (कृष्णाय हृदयं चेति पञ्चार्णोयं मनुर्मतः) ॥९९॥

स त्र्यर्णश्चतुर्थ्यन्तश्चेद्वेदार्णः। ॐकृष्णाय इति। कृष्णाय स्वरूपं। हृन्नमः। एष पञ्चार्णः कृष्णाय नमः इति।

बाणार्णः कामयुग्मान्तः कृष्णायेति परो मनुः। गोपालो ङेयुतो मन्त्रो द्विठान्तोऽयं षडक्षरः ॥१००॥
बाणार्णः पञ्चाक्षरोऽस्य पूर्वेण सम्बन्धः। कामयुग्मं कामबीजद्वयं तयोरन्तर्मध्ये कृष्णाय स्वरूपं। परः पञ्चवर्ण इत्यपरः। क्लींकृष्णायक्लीं इति। गोपालो ङेयुतो गोपालाय। द्विठः स्वाहा। गोपालाय स्वाहा इति।

मारान्ते ङेयुतं कृष्णं षडर्णोऽन्यः शिरोऽन्तकः। ङेन्तः कृष्णश्च गोविन्दस्तादृक् सप्ताक्षरो मनुः ॥१०१॥

मारः कामबीजं। ङेयुतं कृणं कृष्णाय। शिरः स्वाहा। क्लींकृष्णाय स्वाहा इति। ङेन्तः कृष्णः कृष्णाय। गोविन्दस्तादृक् गोविन्दाय। कृष्णाय गोविन्दाय इति।

रमामायास्मरान्ते तु चतुर्थ्या कृष्णमीरयेत्। कामान्तः सप्तवर्णोऽयं द्वितीयः परिकीर्तितः॥१०२॥

रमा श्रीबीजं। माया शक्तिबीजं। स्मरः कामबीजं। चतुर्थ्या कृष्णं कृष्णाय। कामस्तद्बीजं। श्रींह्रींक्लीं कृष्णायक्लीं इति।

कामः कृष्णाय गोविन्दश्चतुर्थ्याष्टाक्षरो मनुः। द्वितीयोऽष्टाक्षरो ङेयुक् दधिभक्षणठद्वयम्॥१०३॥

कामः कामबीजं। कृष्णाय स्वरूपं। गोविन्दश्चतुर्थ्या गोविन्दाय। क्लींकृष्णाय गोविन्दाय इति। ङेयुग् दधिभक्षणः दक्षिभक्षणाय। ठद्वयं स्वाहा।

सुप्रसन्नात्म-शब्दान्ते ने हृद्वस्वर्णकोऽपरः। स्मरः कृष्णाय गोविन्दो ङेन्तोऽनङ्गो नवाक्षरः ॥१०४॥

सुप्रसन्नात्मने स्वरूपं। हृन्नमः। वस्वर्णोऽष्टाक्षरः। स्मरः कामबीजं। कृष्णाय स्वरूपं। गोविन्दो ङेन्तो गोविन्दाय। अनङ्गः कामबीजम्।

अयमेव हृदन्तोऽन्यो विना कामं नवाक्षरः।

हृन्नमः। विना कामं कामद्वयविधुरः।

कामसंपुटितं पिण्डं श्यामलाङ्गश्च ङेयुतः । हृद्युतो दशवर्णाढ्यः सर्वसंपत्समृद्धिदः ॥१०५॥

कामवीजपुटितं पिण्डं ग्लौं इति। श्यामलाङ्गः ङेयुतः श्यामलाङ्गाय हृन्नमः।

बालान्ते वपुषे कृष्णं ङेन्तं स्वाहान्तिकोऽपरः । कामः कृष्णाय बालान्ते वपुषे वह्निवल्लभा ॥१०६॥

बालवपुषे स्वरूपं। कृष्णं ङेन्तं कृष्णाय। अपरोऽन्यो दशाक्षरः। कामः कामबीजं। कृष्णाय स्वरूपं। बालवपुषे स्वरूपं। वह्निवल्लभा स्वाहा। अयमेकादशाक्षरः। तथा—

नारदो मुनिरेतेषां मन्त्राणां छन्द उत्तमम् । सम्यग् देव्यादिका प्रोक्ता गायत्री देवता पुनः ॥१०७॥
बालगोपालसंज्ञोऽत्र सर्वदेवौघवन्दितः । षड्दीर्घयुक्तकामेन षडङ्गविधिरीरितः ॥१०८॥

वन्दे बालं मुकुन्दं सरसिजनिलयं रक्तपद्माभनेत्रं
नीलाम्भोजच्छविं तं कटितटकरणत्किङ्किणीजालनद्धम् ।
हस्ताभ्यां धारयन्तं दधिजमभिनवं पायसं दिक्षु वीतं
गोगोपीगोपवृन्दैः रुरुनखलसितं कण्ठदेशेऽतिरम्ये ॥१०९॥

दधिजं नवनीतम्।

यजेत् पूर्वोदिते पीठे वह्नीशासुरवायुषु । हृदादिकवचान्तानि चत्वार्यङ्गानि साधकः ॥१११॥
दृशं तत्पुरतोऽभ्यर्च्य दिक्ष्वस्त्रं तद्बहिस्ततः । आखण्डलमुखान् देवान् वज्रादींश्च समर्चयेत् ॥११२॥ इति।

प्रयोगस्तु सुगमः। तथा—

विचिन्त्यैनं जपेन्मन्त्रमेकमेकं दशायुतम् । सितोपलघृताक्तेन दशांशं हविषा हुनेत् ॥१०६॥
तर्पयेन्मन्त्रसिद्ध्यर्थं तावन्मन्त्री जितेन्द्रियः । मूलमन्त्रेण मूर्धानमभिषिच्याथ तर्पयेत् ॥१०७॥
ब्राह्मणानन्नपानेन गुरुं वसुभिरादरात् । एवं यो भजते मन्त्रमेषामेकं दिने दिने ॥१०८॥
चतुर्वर्गफलं प्राप्य देवः साक्षात् स जायते ।

मन्त्रान्तर—श्रीकृष्ण का एकाक्षर मन्त्र है—'कृ'। द्व्यक्षर मन्त्र 'कृष्ण' है। त्र्यक्षर मन्त्र 'ॐ कृष्ण' है। चतुरक्षर 'ॐ कृष्णाय' है। 'कृष्णाय नमः' पञ्चाक्षर मन्त्र है। दूसरा पञ्चाक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय क्लीं' है। गोपालाय स्वाहा—षड्क्षर मन्त्र है। दूसरा षडक्षर मन्त्र 'क्लीं कृष्णाय स्वाहा' है। कृष्णाय गोविन्दाय—यह सप्ताक्षर मन्त्र है। दूसरा सप्ताक्षर मन्त्र 'श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं' है। अष्टाक्षर मन्त्र है—'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय'। दूसरा अष्टाक्षर मन्त्र 'दधिभक्षणाय स्वाहा' है। तीसरा अष्टाक्षर मन्त्र 'सुप्रसन्नात्मने नमः' है। 'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं' नवाक्षर मन्त्र है। कृष्णाय गोविन्दाय नमः—दूसरा नवाक्षर मन्त्र है। क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः—दशाक्षर मन्त्र है। बालवपुषे कृष्णाय स्वाहा—दूसरा दशाक्षर मन्त्र है। क्लीं कृष्णाय बाल-वपुषे स्वाहा—एकादशाक्षर मन्त्र है।

इन सभी मन्त्रों के ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता बाल गोपाल हैं। क्लां क्लीं इत्यादि से इनका षडङ्ग न्यास होता है। इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

वन्दे बालं मुकुन्दं सरसिजनिलयं रक्तपद्माभनेत्रं नीलाम्भोजच्छविं तं कटितटकरणत्किङ्किणीजालनद्धम्।
हस्ताभ्यां धारयन्तं दधिजमभिनवं पायसं दिक्षु वीतं गोगोपीगोपवृन्दैः रुरुनखलसितं कण्ठदेशेऽतिरम्ये।।

पूर्वोदित पीठ में अग्नि ईशान नैर्ऋत्य वायव्य में हृदय से कवच तक की पूजा करे। दिशाओं में देव के आगे से अस्त्र पूजा करे। उसके बाहर लोकेशों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। ध्यान के बाद एक लाख मन्त्र जप करे। घृताक्त हविसे दशांश हवन करे। मन्त्रसिद्धि के लिये उनका ही तर्पण करे। मूल मन्त्र से मूर्धा पर सेचन करे। ब्राह्मणों को अन्न-पान से सन्तुष्ट करे। गुरु को धनादि से सन्तुष्ट करे। इस मन्त्र का भजन प्रतिदिन जो इस प्रकार करता है, वह चतुर्वर्ग फल प्राप्त करके साक्षात् देव हो जाता है।

मन्त्रान्तरवचनम्

मन्त्रान्तरमथो वच्मि चतुर्वर्गसमृद्धिदम् ॥१०९॥

कामः कृष्णेति कामश्च मन्त्रः शीघ्रफलप्रदः । मुन्यादींश्च षडङ्गानि विदुरुक्तेन वर्त्मना ॥११०॥

कामः कामबीजं। कृष्ण स्वरूपं। पुनः कामबीजं। वर्त्मना एकाक्षराद्युक्तमार्गेण।

श्रीमद्गीर्वाणभूमीरुहतलविकचाम्भोजसंस्थं मुकुन्दं
शाखाभ्यस्तस्य नम्रप्रमुदितकमलप्रोद्भवानेकरत्नैः ।
संसिक्तं स्वर्णवर्णं निजवपुषि लसत्तेजसा व्याप्तलोकं
वन्देऽहं पायसादं दधिजमभिनवं भक्षयन्तं सुशान्तम् ॥१११॥

अङ्गैरावरणं पूर्वं निधिभिस्तदनन्तरम् । लोकपालैश्च वज्राद्यैः पश्चादावरणद्वयम् ॥११२॥

प्रयोगः सुगमः।

एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं नियतं विजितेन्द्रियः । दशांशं जुहुयादग्नौ श्रीफलैर्मधुराप्लुतैः ॥११३॥
तर्पणादि ततः कुर्यात् पूर्वोक्तं मन्त्रसिद्धये । एवं संपूज्य गोविन्दं तर्पयेत् प्रत्यहं बुधः ॥११४॥
मधुरत्रयसद्बुद्ध्या शुद्धतोयैर्दिनागमे । इति।

मन्त्रान्तर—चतुर्वर्ग समृद्धिदायक मन्त्र है—क्लीं कृष्ण क्लीं। यह शीघ्र फल प्रदान करने वाला है। इसके ऋष्यादि षडङ्ग न्यास एकाक्षर मन्त्र के समान होते हैं। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

श्रीमद्गीर्वाणभूमीरुहतलविकचाम्भोजसंस्थं मुकुन्दं शाखाभ्यस्तस्य नम्रप्रमुदितकमलप्रोद्भवानेकरत्नैः।
संसिक्तं स्वर्णवर्णं निजवपुषि लसत्तेजसा व्याप्तलोकं वन्देऽहं पायसादं दधिजमभिनवं भक्षयन्तं सुशान्तम्॥

पहले अंग पूजा करे, तब निधियों की पूजा करे और तब लोकपालों एवं वज्रादि की पूजा दो आवरणों में करे। पूर्ववत् ध्यान करके जितेन्द्रिय रहकर नियत संख्या में एक लाख जप करे। दशांश हवन मधुराप्लुत श्रीफल से करे। शुद्ध जल को मधुरत्रय मानकर तर्पण करे।

यन्त्रोद्धारः

श्रीयन्त्रसारे—

स्मरं कर्णिकायां षडस्रे षडर्णं चतुष्पत्रराजच्चतुर्वर्णमन्त्रम् ।
वृतं मातृकार्णैर्धरागेहसंस्थं चतुर्वर्णयन्त्रं समस्तार्थदायि ॥१॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणमध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य षट्कोणेषु पूर्वोक्तषडर्णवर्णानालिख्य, बहिश्चतु-(र्दलकमलं कृत्वा तद्)दलेषु चतुरक्षरमन्त्रवर्णानालिख्य, बहिर्वृत्तयोरन्तराले मातृकार्णैः संवेष्ट्य बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतदुक्तफलदं भवति।

यन्त्रोद्धार—श्रीयन्त्रसार में कहा गया है कि षट्कोण में ससाध्य क्लीं लिखकर छः कोणों में पूर्वोक्त षडक्षर मन्त्र के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल के दलों में चतुरक्षर मन्त्र वर्णों को लिखे। इसके बाहर वृत्तों के अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनावे। यह चतुर्वर्ण यन्त्र सर्वार्थदायक है।

मन्त्रान्तरविधानम्

तथा—

अस्यैव कामयोरिन्द्रौ वह्निदीप्तावधो यदि । अन्यो मन्त्रस्तदा ज्ञेयः सर्वश्रेष्ठो मनीषिभिः ॥११५॥

पूर्वोक्तमन्त्रस्य कामबीजद्वयगतलकारयोदधस्ताद्रेफे दत्तेऽन्यो मन्त्रो भवेदित्यर्थः। क्ल्रीं कृष्ण क्ल्रीं। षड्दीर्घभाजा बीजेन तादृशेनाङ्गकल्पना ।

शोणोद्यानगदेववृक्षशिखरे सौवर्णदोलागतं नीलाकुञ्चितमूर्धजं कटितटे सत्किङ्किणीमण्डितम्।
रत्नद्वीपनखप्रकल्पितगलाकल्पं मुदा प्रेङ्खितं गोपीभ्यामतिसुन्दरं मुररिपुं वन्दे यशोदासुतम्॥११६॥
पूर्वोदिते यजेत् पीठे पूर्वोक्तविधिना हरिम्। सम्यगभ्यर्च्य गोविन्दं जपेन्मन्त्री पुरोक्तवत्॥११७॥
मधुराक्तैर्हुनेन्मन्त्री रक्तपद्मैर्दशांशतः। तर्पणं पूर्वसंख्यं स्याद्गुरुं यत्नेन तोषयेत्॥११८॥
मधुरत्रयसंसिक्तामारक्तां शालिमञ्जरीम्। जुहुयान्नित्यशोऽष्टोर्ध्वशतमेकेन मन्त्रयोः॥११९॥
मण्डलात् सर्वशस्याढ्या वसुधा हस्तगा भवेत्। धनधान्यसमृद्ध्या च सङ्कीर्णं मन्दिरं भवेत्॥१२०॥

पूजाहोमजपप्रयोगविधिभिर्मन्त्री य एकं भजेद्
भक्त्या काम इवापरः स युवतीवृन्देन संभाव्यते।
लक्ष्म्यायुश्च यशश्च सर्वविभवान् कामांश्च लब्ध्वा ततो-
ऽप्यन्तेऽनन्तसुखप्रबोधजनकं लोकं व्रजेद्वैष्णवम्॥१२१॥ इति।

'क्लीं कृष्ण क्लीं' मन्त्र को मनीषीगण सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। षड्दीर्घ बीजों से इसका अंगन्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

शोणोद्यानगदेववृक्षशिखरे सौवर्णदोलागतं नीलाकुञ्चितमूर्धजं कटितटे सत्किङ्किणीमण्डितम्।
रत्नद्वीपनखप्रकल्पितगलाकल्पं मुदा प्रेङ्खितं गोपीभ्यामतिसुन्दरं मुररिपुं वन्दे यशोदासुतम्॥

पूर्वोदित पीठ पर विधि से हरि का यजन करे। गोविन्द की सम्यक् पूजा के बाद पुरोक्तवत् मन्त्रजप करे। दशांश हवन मधुराक्त लाल कमलों से करे। पूर्वोक्त संख्या में तर्पण करे। गुरु को सन्तुष्ट करे। मधुरत्रय-संसिक्त शालिमंजरी से नित्य एक सौ आठ हवन करे। ऐसा चालीस दिनों तक करने से सभी फसलों से युक्त भूमि मिलती है। उसका घर धन-धान्य-समृद्धि से भर जाता है। पूजा-होम-जप-प्रयोग विधि से जो साधक इस मन्त्र को भजता है, वह युवतियों के लिये दूसरे कामदेव के समान हो जाता है। इस लोक में लक्ष्मी, आयु, यश, सभी वैभव एवं कामों को पाकर अन्त में अनन्त सुखप्रबोधजनक वैष्णव लोक में प्रस्थान करता है।

सम्मोहनगोपालमन्त्रः

सारसंग्रहे—

अथ गोपालमन्त्राणां वक्ष्ये श्रेष्ठतमं मनुम्। कविताश्रीप्रदं वश्यमोहनादिकरं परम्॥१॥
वाङ्मायाविष्णुपत्न्यन्ते ह्लादिनीन्द्वग्निभूषिता। दीर्घा स्थिरा स्थितिः प्रोक्ता साग्निशान्तिसुधाकराः॥२॥
जयं संवीप्स्य कृष्णं च दीर्घा लोचनशालिनी। रक्तेन्दु कामिकारक्तौ सृष्ट्यग्नी वामदृग्युतौ॥३॥
नन्द्यनन्तायुतो जीवश्चक्री कामिकया युतः। पार्श्वरक्ते रविश्रोत्रे सत्यनेत्रे च कामिका॥४॥
कूर्मो झिण्ठीशसंयुक्तः कामिका च सुधाकरः। झिण्ठीशो नित्यशब्दान्ते पार्श्वाग्नी नेत्रभूषिते॥५॥
वाय्वनन्तौ पुनर्वायुः कृष्णो ङेन्तो रतिप्रियः। दशार्णः सरमामायावाग्भवान्तो मनुर्मतः॥६॥
वैदुष्यवश्यलक्ष्मीदो द्विपञ्चाशद्भिरक्षरैः।

वाक् ऐं। माया ह्रीं। विष्णुपत्नी श्रीं। ह्लादिनी द, अत्र ईकारस्य प्रश्लेषस्तेन ई स्वरूपं, अग्नी र, इन्दुर्बिन्दुः, तेन द्रीं। दीर्घा न, स्थिरा ज, स्थितिः झ, एते वर्णाः पृथक् अग्निना रेफेण शान्त्या ईकारेण सुधाकरेण बिन्दुना च युक्तास्तेन व्रीं ज्रीं झ्रीं। जयं संवीप्स्य जय जय। कृष्णं च चकाराद्वीप्स्य तेन कृष्ण कृष्ण। दीर्घा न, लोचनं इ, तेन नि। रक्त र, इन्दुर्बिन्दुः तेन रं। कामिका त। रक्तं र। सृष्टिः क, अग्नी र, वामदृक् ई, तेन क्री। (नन्दी ड, अनन्त आ, तेन डा। जीवः स। चक्री क, कामिका त, तेन क्त। पार्श्वं प, रक्तं र, तेन प्र।) रवि म, श्रोत्रं उ, तेन मु। सत्य द, नेत्रं इ, तेन दि। कामिका त। कूर्मः च, झिण्ठीश ए, तेन चे। कामिका त। सुधाकरः स, झिण्ठीश ए, तेन से।

नित्य स्वरूपं। पार्श्वं प, अग्नी र, नेत्रं इ, तेन प्रि। वायुः य, अनन्त आ, तेन या। वायुः य। कृष्णो ङेन्तः कृष्णाय। रतिप्रियः क्लीं। दशार्णः पूर्वोक्तगोपालदशाक्षरः। रमा श्रीबीजं। माया तद्बीजं। वाग्भव ऐं। तथा—

आनन्दनारदाख्योऽस्य मुनिश्छन्दो विराड् भवेत्। अमृताद्यं तु संपूर्वो देवता मोहनो हरिः ॥७॥
अष्टभिर्हृदयं वर्णैः शिरो द्वादशभिः स्मृतम्। धातुसंख्यैः शिखा वर्म वस्वर्णैर्नेत्रमात्मना ॥८॥
पङ्क्त्यर्णैरस्त्रमुद्दिष्टं त्रिबीजपुटितैः क्रमात्। एवं मूलभवैर्वर्णैः षडङ्गं समुदीरितम् ॥९॥

धातवः सप्त। वस्वर्णैः अष्टभिः। आत्मना एकेन। पङ्क्त्यर्णैः दशभिः।

एतत्करणमात्रेण लोकसंवननं भवेत्। भूतशुद्ध्यादिकं कृत्वा देहे पीठं प्रकल्प्य च ॥१०॥
हस्तद्वये दशार्णोक्तविधिना न्यासमाचरेत्। षडङ्गं न्यस्य कामानां पञ्चकं च प्रविन्यसेत् ॥११॥
त्रिवारं मूलमनुना व्यापकं च प्रविन्यसेत्। कामसंपुटितान् न्यस्येन्मातृकार्णान् यथापुरा ॥१२॥
दशतत्त्वादिकान् न्यासान् मूर्तिपञ्जरपश्चिमान्। सृष्टिस्थितिषडङ्गानि बाणान् न्यस्येच्च पूर्ववत् ॥१३॥
सर्वमन्यत् पुरोक्तेन विधानेन विधाय वै। साधकः सर्वलोकेशं ध्यायेत् संमोहनं हरिम् ॥१४॥
पुरोत्तमे निजे रम्ये सर्वतोऽम्बुधिमध्यगे। विमलोच्चमहादुर्गगोपुरादिसुवीथिके ॥१५॥
मेघोच्छ्रितसुधाधौतसौधजातसमाकुले। रक्तमन्दिरविस्तीर्णकपाटद्वारमण्डिते ॥१६॥
भूदेवबाहुजविशां वृषलानां गृहोत्तमैः। नानाशिल्पिगृहैश्चापि हस्त्यश्वोष्ट्रखरालयैः ॥१७॥
गोच्छागमहिषादीनामसंख्यातैर्गृहैर्युते। बह्वापणगतानेकसाधुलोकसमाहृतैः ॥१८॥
क्रयविक्रयकार्यार्थं वस्तुसङ्घैश्च मण्डितैः। लोकस्वान्तवशीकारदक्षनारीनिकेतनैः ॥१९॥
दीर्घानेकसुदीर्घिकाजलसमुत्फुल्लाम्बुजान्तः स्रवन्मध्वास्वादकृतादरैर्जलचरैः भृङ्गैश्च हंसैः शुभैः।
कारण्डादिगणै रथाङ्गविहगैरन्यैश्च सर्वैस्तथा संतुष्टैरनिशं प्रियासहचरैः पक्ष्यादिभिः सेविते ॥२०॥
पुल्लानेकसुगन्धिपुष्पनिचयासक्तैर्भ्रमद्भृङ्गकैर्व्याप्तैः कल्पकपादपैरनुदिनं कामान् यथेष्टान् मुहुः।
यच्छद्भिर्मनुजेभ्य आदरपरैः शीतैश्च मन्दानिलैर्लोलत्सर्वशिखैर्वृते मणिमये सन्मण्डपे भास्वरे ॥२१॥
पङ्क्तिभी रत्नदीपानां समुद्द्योतितमध्यके। नानावर्णवितानेन मौक्तिकालम्बिना युते ॥२२॥
बहुवर्णसुपुष्पाभिर्मालाभिः शोभितान्तरे। सम्यक्सुगन्धिना गन्धवारिणा सिक्तभूतले ॥२३॥
मङ्गलस्त्रीसहस्रौघैर्मदाघूर्णितलोचनैः। कामालसगतैर्हस्तपद्मलोलसुचामरैः ॥२४॥
पृथून्नतकुचाभारत्रुट्यत्क्षीणावलग्नकैः। स्रवन्मधुरवाग्गुम्फैरभितः सेवितेऽनिशम् ॥२५॥
निरन्तरं महारत्नधारौघं वर्षतोऽद्भुतम्। परानन्दसुधास्यन्दं स्रवतः स्वस्तरोरधः ॥२६॥
रत्नभूमौ सहस्रार्कभास्वत्सिंहासनाम्बुजे। लक्ष्मीकान्तं समासीनं चिन्तयेदिष्टसिद्धये ॥२७॥
उद्यन्नूतननीलनीरजलसत्कान्तिं जगत्कारणं वक्रस्निग्धसुमूर्धजातकुसुमं माणिक्यमौलिं प्रभुम्।
सम्यक्शोभिललाटनासिकमुदञ्चद्भ्रूलतालङ्कृतं संरक्तायतलोललोचनयुगं रत्नोल्लसत्कुण्डलम् ॥२८॥
श्रीमद्गण्डतलं विनिर्जितलसद्बन्धूकशोणाधरं हासश्रीविशदीकृताखिलदिशं प्रस्विन्नमुग्धाननम्।
स्फूर्जद्रश्मिमहार्घरत्ननिकरप्रत्युप्तभूषागणैर्मुक्ताहारमुखैर्विभूषिततनुं रोगोद्गमालङ्कृतम् ॥२९॥
कर्पूरागरुकुङ्कुमद्रवविलिप्ताङ्गं स्वतः सुन्दरं वृत्तस्थूलसुदीर्घकोमलभुजैर्दिङ्मानसंख्यैर्युतम्।
रक्ताब्जद्युतिपादपद्मयुगलं कामार्तचिन्ताकुलं स्वाङ्कन्यस्तकराम्बुजद्वयमतस्तत्र स्थिताया भृशम् ॥३०॥
रुक्मिण्या लसदूरुयुग्मपिहितं सत्स्वर्णकान्तिं प्रियामालिङ्गन्तममुं कराब्जयुगलेनासक्तभावां दृढम्।
बाहुभ्यां भगवन्तमार्द्रजघनामालिङ्ग्य सम्यक्स्थिताम् रोमाञ्चाञ्चितदेहवल्लिलसितामानन्दभाराहृताम् ॥३१॥
प्रस्वेदच्छद्ममुक्ताभिर्भूषिताङ्गां मनोरमाम्। तस्मिन्नेव समासक्तसर्वेन्द्रियगणां ध्रुवम् ॥३२॥

तरङ्गरहितैरङ्गैर्मज्जन्तीं सुखसागरे। स्वदक्षस्थितयाश्लिष्टं श्यामया सत्यभामया ॥३३॥
दिव्यक्षौमानुलेपाद्यैर्युक्तया सर्वभूषणैः। कामबाणप्रविद्धाङ्ग्या बाहुना परिरब्धया ॥३४॥
(मुखाम्बुजसमासक्तनेत्ररोलम्बया सदा। सर्वाङ्गभव्ययात्यर्थं पद्मद्योतिकराब्जया) ॥३५॥
रक्तया जाम्बवत्या च श्लिष्टं वामस्थया तथा। तामुक्तलक्षणोपेतामालिङ्गन्तं स्वबाहुना ॥३६॥
कालिन्द्या च परीरब्धं पृष्ठदेशस्थया विभुम्। करोद्यत्पद्मया नीलमेघश्यामरुचा ततः ॥३७॥
अनङ्गबाणसंतापभीतया भूषिताङ्ग्या। पद्मं गदां चक्रशङ्खौ चतुर्भिर्दधतं करैः ॥३८॥
करद्वयलसद्वेणुच्छिद्रार्पितमुखाम्बुजम्। चतुर्दिक्षु बहिर्देवैर्मुनिभिः खेचरैर्वृतम् ॥३९॥
सर्वैर्भक्तिरतिप्रेमभावभारानताङ्गकैः। स्तुवद्भिः स्तुतिभिः सम्यक् सेवासंसक्तमानसैः ॥४०॥
चतुर्वर्गप्रदं नित्यं मनोवाचामगोचरम्। स्वतेजसि स्थितं मग्नं महानन्दसुधाम्बुधौ ॥४१॥
इत्थं ध्यात्वा महाविष्णुं सर्वलोकगुरुं परम्। पीठे पूर्वोदिते चैनं पूजयेन्नित्यमादरात् ॥४२॥
विभूतिपञ्जरं न्यासक्रमाद्बाणान्तमर्चयेत्। मूर्तिपञ्जरमभ्यर्च्य पश्चादङ्गावसानकम् ॥४३॥
पूर्वोक्तविधिना सम्यगभ्यर्च्यात्मानमादरात्। विंशाक्षरोक्तसद्यन्त्रे मध्यबीजाद्बहिर्लिखेत् ॥४४॥
जलेन्दुरविजेन्द्राणामाशास्वादौ समाहितः। चतुर्बीजान्यथोक्तानि द्विचत्वारिंशदक्षरैः ॥४५॥
शिष्टैः संवेष्ट्य कोणेषु शम्भुपूर्वाग्निगेषु तु। वाक्शक्तिलक्ष्मीबीजानि संलिख्य तदनन्तरम् ॥४६॥
क्षपाटवरुणेराणां तान्येवाश्रिषु संलिखेत्। शेषं पुरोक्तवत्कृत्वा पीठमभ्यर्च्य तत्र तु ॥४७॥
मूर्तिं मूलेन संकल्प्य तत्रावाह्य हरिं यजेत्। मध्यबीजगतं पश्चादग्रदक्षिणवामयोः ॥४८॥
पृष्ठतश्च समभ्यर्च्य बीजगा रुक्मिणीमुखाः। अङ्गानि षट्सु कोणेषु बाणान् केसरगान्यजेत् ॥४९॥
दलमध्येषु लक्ष्म्याद्यास्तदग्रेषु ध्वजादिकान्। ध्वजं कृष्णाभमग्रे तु पृष्ठगं वारुणे विषम् ॥५०॥
शङ्खपद्मनिधी पूज्यौ शुक्लरक्तौ तु पार्श्वयोः। सर्वदा चाभिवर्षन्तौ धाराभिर्वसुसञ्चयम् ॥५१॥
हेरम्बं शास्तृनामानं दुर्गां च तदनन्तरम्। विष्वक्सेनं च कोणेषु वह्न्यादि परितो यजेत् ॥५२॥
रक्तमारकतप्रख्यदूर्वाकनकवर्णकान्। तद्बहिर्वासवादीनां वज्रादीनां च पूजनम् ॥५३॥
सप्तावरणसंयुक्ता विष्णुपूजा समीरिता। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि आनन्दनारदाय ऋषये नमः। मुखे अमृतविराट्छन्दसे नमः। हृदये श्रीसंमोहनाय कृष्णाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य पूर्ववद्विनियोगमुक्त्वा, ऐंह्रींश्रींद्रींव्रींग्रींझ्रीं जय जय श्रींह्रींऐं हृदयाय नमः। ऐंह्रींश्रीं कृष्णकृष्ण निरन्तरक्रीडासक्त श्रींह्रींऐं शिरसे स्वाहा। ऐंह्रींश्रीं कृष्णाय प्रमुदितचेतसे श्रींह्रींऐं शिखायै वषट्। ऐंह्रींश्रीं नित्यप्रियाय श्रींह्रींऐं कवचाय हुं। ऐंह्रींश्रीं क्लींगोपीवल्लभाय स्वाहा श्रींह्रींऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐंह्रींश्रीं ऐंक्लींश्रीं अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा दशाक्षरमन्त्रोक्तप्रकारेण करन्यासं विधाय, पुनः प्रोक्तषडङ्गानि विन्यस्य, पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चकामन्यासं कृत्वा, मूलेन स्वदेहे त्रिर्व्यापकं विन्यस्य, कामबीजपुटितमातृकावर्णान् स्वदेहे प्राग्वद्विन्यस्य, पूर्वोक्तदशतत्त्वन्यासं कृत्वा, प्रणवपुटितमूलमन्त्रेण त्रिर्व्यापकं कृत्वा, सृष्टिन्यासादिमूर्तिपञ्जरन्यासान्तं दशार्णगोपालमन्त्रप्रकारोक्तवत् कृत्वा, पुनः सृष्टिस्थितिषडङ्गानि विन्यस्य पूर्वोक्तपञ्चबाणन्यासं कृत्वा, पुनश्च ऋष्यादिन्यासं विधाय मुद्राः प्रदर्श्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते विंशत्यक्षर-प्रोक्तयन्त्रे मध्यस्थं बीजं परितस्तस्य पश्चिमोत्तरदक्षिणपूर्वदिक्षु द्रींव्रींग्रींझ्रीं इति विलिख्य, तच्चतुष्टयं शिष्टै-र्द्विचत्वारिंशदक्षरैर्दशबीजरहितैः संवेष्ट्य, षट्कोणेषु ईशानपूर्वाग्नेयदिग्गतकोणेषु ऐंह्रींश्रीं इति विलिख्य (नैर्ऋतिवरुण-वायुदिग्गतकोणेषु पुनस्तान्येव बीजानि विलिख्य, अवशिष्टयन्त्रं पूर्वोक्तमेव विरच्य) पुरतः संस्थाप्य, अर्घ्यस्थापना-दिपीठार्चान्ते मध्यबीजे देवमावाह्यावाहनादिवैष्णवमुद्रादर्शनान्ते न्यासक्रमेण विभूतिपञ्जरादिमूर्तिपञ्जरान्तं संपूज्य, आसनादिपुष्पोपचारान्ते देवाग्रतद्दक्षवामपृष्ठलिखितबीजेषु रुक्मिणीं सत्यभामां जाम्बवतीं कालिन्दीं च संपूज्य,

षट्कोणेषु प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्य, केसरेषु प्राग्वत् पञ्चबाणानभ्यर्च्य, दलाष्टके लक्ष्म्याद्याः प्रागुक्ताः संपूज्य, देवाग्रदलस्याग्रे ध्वजाय नमः। पृष्ठे दलाग्रे विपाय नमः। दक्षदलाग्रे शङ्खनिधये नमः। वामे पद्मनिधये नमः। आग्नेयादिदलाग्रेषु हेरम्बाय नमः। शास्त्रे नमः। दुर्गायै नमः। विश्वक्सेनाय नमः। इति संपूज्य तद्बहिश्चतुरस्रे लोकपालार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

दीक्षितो विधिना मन्त्रं प्राप्यामुं सद्गुरोः कृती। दर्शनं भाषणं स्पर्शं वचनं श्रवणादिकम्॥५४॥
वर्जयेत् प्रजपेल्लक्षं स्त्रीमात्रस्य गुरोरपि। सिताज्यमधुमिश्रेण दशांशं हविषा हुनेत्॥५५॥
हविषा पायसेन।

तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः। मन्त्रमेनं जपेद्यस्तु प्रत्यहं विधिनामुना॥५६॥
तमर्चयन्ति गीर्बाणा लोकानन्दकरश्च सः। दिनादौ शर्करायुक्तदुग्धबुद्ध्या जलैः शुभैः॥५७॥
अन्वहं तर्पयेद्यस्तु शतं साग्रं भवेद् ध्रुवम्। इन्द्रश्रीर्जलबिन्द्वाभा तद्विभूतिमहार्णवे॥५८॥
चन्द्रचन्दनपङ्काक्तमालतीकुसुमैर्नवैः। अयुतं मन्त्रवर्येण यो जुहोति विभावसौ॥५९॥
त्रैलोक्यं तद्वशे तिष्ठेत् ख्यातः कविवरो भवेत्। मन्त्रिणो ध्यानमात्रेण मन्त्रस्यास्य यथाविधि॥६०॥
वश्या भवन्ति सततं स्मरार्ताः सुरयोषितः। जपादिकर्मभिर्नूनमस्मात् किं किं न लभ्यते॥६१॥
स्पर्धां स्वाभाविकीं त्यक्त्वा चित्रमेतत्सुमन्त्रिणाम्। सदेन्दिरासरस्वत्यौ सेवेते भक्तितत्परे॥६२॥
व्याधिदारिद्र्यपापौघज्वरमोहविषादिभिः। जरापमृत्युदौर्भाग्यदुःखादिरहितः सदा॥६३॥
पुत्रपौत्रधनारोग्यवरस्त्रीबान्धवादिभिः। उपेतः सर्वसंपद्भिः यशस्वी दीर्घजीवितः॥६४॥
उपासकोऽस्य मन्त्रस्य भवत्येव न चान्यथा। इति।

सम्मोहन गोपाल मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार श्रेष्ठ, गोपाल मन्त्र कविता, श्रीप्रदवश्य एवं मोहन करने वाला श्रेष्ठ है। मूलोक्त श्लोकों का उद्धार करने पर बावन अक्षरों का यह मन्त्र होता है—ऐ ह्रीं श्रीं द्रीं त्रीं ज्रीं झ्रीं जय जय कृष्ण कृष्ण निरन्तर क्रीड़ासक्त प्रमुदितचेतसे नित्यप्रियाय कृष्णाय क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा श्रीं ह्रीं ऐं। इस मन्त्र के ऋषि आनन्द नारद, छन्द विराट् एवं देवता मोहन हरि हैं। इसका षडङ्ग न्यास आठ वर्णों से हृदय में, बारह वर्णों में शिर में, सात वर्णों से शिखा में, आठ वर्णों से कवच में, एक से नेत्र में और सोलह वर्णों से अस्त्र न्यास करे। ऐसा करने से साधक लोक में विख्यात होता है। तदनन्तर भूतशुद्धि करके शरीर में पीठ की कल्पना करे।

प्रातःकृत्यादि योग पीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे— शिरसि आनन्द नारदाय ऋषये नमः, मुखे अमृतविराट् छन्दसे नमः, हृदये श्रीसम्मोहनाय कृष्णाय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं त्रीं ज्रीं झ्रीं जय जय श्रीं ह्रीं ऐं हृदयाय नमः, ऐं ह्रीं श्रीं कृष्ण कृष्ण निरन्तर क्रीड़ासक्त श्रीं ह्रीं ऐं शिरसे स्वाहा, ऐं ह्रीं श्रीं कृष्णाय प्रमुदितचेतसे श्रीं ह्रीं ऐं शिखायै वषट्, ऐं ह्रीं श्रीं नित्य प्रियाय श्रीं ह्रीं ऐं कवचाय हुं, ऐं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा श्रीं ह्रीं ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐंह्रींश्रीं ऐं क्लीं श्रीं अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। पुनः दशाक्षर मन्त्रोक्त प्रकार से करन्यास करे। पुनः पूर्वोक्त षडङ्ग न्यास करे। पूर्वोक्त प्रकार से पञ्च काम न्यास करे। मूल मन्त्र से अपने देह में तीन व्यापक न्यास करे। पुनः सृष्टि स्थिति षडङ्ग न्यास करे। क्लीं से पुटित मातृका न्यास करे। पूर्वोक्त दश तत्त्वन्यास करे। प्रणवपुटित मूल मन्त्र से तीन बार व्यापक न्यास करे। तब सृष्टि न्यासादि मूर्तिपञ्जर न्यास करे। दशार्ण गोपाल मन्त्रोक्त न्यास करे। पुनः सृष्टि-स्थिति षडङ्ग का न्यास करे। पूर्वोक्त पञ्चवाण न्यास करे। पुनः ऋष्यादि न्यास करके मुद्रा दिखाकर इस प्रकार ध्यान करे—

पुरोत्तमे निजे रम्ये सर्वतोऽम्बुधिमध्यगे। विमलोच्चमहादुर्गगोपुरादिसुवीथिके॥
मेघोच्छ्रितसुधाधौतसौधजातसमाकुले। रक्तमन्दिरविस्तीर्णकपाटद्वारमण्डिते॥
भूदेवबाहुजविशां वृषलानां गृहोत्तमैः। नानाशिल्पिगृहैश्चापि हस्त्यश्वोष्ट्रखरालयैः॥

गोच्छागमहिषादीनामसंख्यातैर्गृहैर्युते । बह्वापणगतानेकसाधुलोकसमाहृतैः ।।
क्रयविक्रयकार्यार्थं वस्तुसङ्घैश्च मण्डितैः। लोकस्वान्तवशीकारदक्षनारीनिकेतनैः।।
दीर्घानेकसुदीर्घिकाजलसमुत्फुल्लाम्बुजान्तः स्रवन्मध्वास्वादकृतादरैर्जलचरैः भृङ्गैश्च हंसैः शुभैः।
कारण्डादिगणै रथाङ्गविहगैरन्यैश्च सर्वैस्तथासंतुष्टैरनिशं प्रियासहचरैः पक्ष्यादिभिः सेविते।।
पुल्लानेकसुगन्धिपुष्पनिचयासक्तैर्भ्रमद्भृङ्गकैर्व्याप्तैः कल्पकपादपैरनुदिनं कामान् यथेष्टान् मुहुः।
यच्छद्भिर्मनुजेभ्य आदरपरैः शीतैश्च मन्दानिलैर्लोलत्सर्वशिखैर्वृते मणिमये सन्मण्डपे भास्वरे।।
पङ्क्तिभी रत्नदीपानां समुद्द्योतितमध्यके। नानावर्णवितानेन मौक्तिकालम्बिना युते।।
बहुवर्णसुपुष्पाभिर्मालाभिः शोभितान्तरे। सम्यक्सुगन्धिना गन्धवारिणा सिक्तभूतले।।
मङ्गलस्त्रीसहस्रौघैर्मदाघूर्णितलोचनैः । कामालसगतैर्हस्तपद्मलोलसुचामरैः ।।
पृथून्नतकुचाभारत्रुट्यत्क्षीणावलग्नकैः। स्रवन्मधुरवाग्गुम्फैरभितः सेवितेऽनिशम्।।
निरन्तरं महारत्नधारौघं वर्षतोऽद्भुतम्। परानन्दसुधास्पन्दं स्रवतः स्वस्तरोरधः।।
रत्नभूमौ सहस्रार्कभास्वत्सिंहासनाम्बुजे। लक्ष्मीकान्तं समासीनं चिन्तयेदिष्टसिद्धये।।
उद्यन्नूतननीलनीरजलसत्कान्तिं जगत्कारणं वक्रस्निग्धसुमूर्धजातकुसुमं माणिक्यमौलिं प्रभुम्।
सम्यक्शोभिललाटनासिकमुदञ्चद्भ्रूलतालङ्कृतं संरक्तायतलोललोचनयुगं रत्नोल्लसत्कुण्डलम्।।
श्रीमद्गण्डतलं विनिर्जितलसद्बन्धूकशोणाधरं हासश्रीविशदीकृताखिलदिशं प्रस्विन्नमुग्धाननम्।
स्फूर्जद्रश्मिमहार्घरत्ननिकरप्रत्युप्तभूषागणैर्मुक्ताहारमुखैर्विभूषिततनुं रोगोद्गमालङ्कृतम्।।
कर्पूरागरुकुङ्कुमद्रवविलिप्ताङ्गं स्वतः सुन्दरं वृत्तस्थूलसुदीर्घकोमलभुजैर्दिङ्मानसंख्यैर्युतम्।
रक्ताब्जद्युतिपादपद्मयुगलं कामार्तचिन्ताकुलं स्वाङ्कन्यस्तकराम्बुजद्वयमतस्तत्र स्थिताया भृशम्।।
रुक्मिण्या लसदूरुयुग्मपिहितं सत्स्वर्णकान्तिं प्रियामालिङ्गन्तममुं कराब्जयुगलेनासक्तभावां दृढम्।
बाहुभ्यां भगवन्तमार्द्रजघनामालिङ्ग्य सम्यक् स्थिताम् रोमाञ्चाञ्चितदेहवल्लिलसितामानन्दभाराहृताम्।।
प्रस्वेदच्छद्ममुक्ताभिर्भूषिताङ्गां मनोरमाम्। तस्मिन्नेव समासक्तसर्वेन्द्रियगणां ध्रुवम्।।
तरङ्गरहितैरङ्गैर्मज्जन्तीं सुखसागरे। स्वदक्षस्थितयाश्लिष्टं श्यामया सत्यभामया।।
दिव्यक्षौमानुलेपाद्यैर्युक्तया सर्वभूषणैः। कामबाणप्रविद्धाङ्ग्या बाहुना परिरब्धया।।
(मुखाम्बुजसमासक्तनेत्ररोलम्बया सदा। सर्वाङ्गभव्ययात्यर्थं पद्मद्योतिकराब्जया)।।
रक्तया जाम्बवत्या च श्लिष्टं वामस्थया तथा। तामुक्तलक्षणोपेतामालिङ्गन्तं स्वबाहुना।।
कालिन्द्या च परीरब्धं पृष्ठदेशस्थया विभुम्। करोद्यत्पद्मया नीलमेघश्यामरुचा ततः।।
अनङ्गबाणसंतापभीतया भूषिताङ्गया। पद्मं गदां चक्रशङ्खौ चतुर्भिर्दधतं करैः।।
करद्वयलसद्वेणुच्छिद्रार्पितमुखाम्बुजम्। चतुर्दिक्षु बहिर्देवैर्मुनिभिः खेचरैर्वृतम्।।
सर्वैर्भक्तिरतिप्रेमभावभारानताङ्गकैः। स्तुवद्भिः स्तुतिभिः सम्यक् सेवासंसक्तमानसैः।।
चतुर्वर्गप्रदं नित्यं मनोवाचामगोचरम्। स्वतेजसि स्थितं मग्नं महानन्दसुधाम्बुधौ।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद मानस पूजा करे। पूर्वोक्त विंशाक्षर यन्त्र के मध्य में बीज लिखे। इसकी चारो दिशाओं में द्रीं श्रीं ज्रीं झ्रीं लिखे। इन चारो को दश बीजरहित चौंतीस वर्णों से वेष्टित करे। षट्कोण के ईशान पूर्व आग्नेयगत कोणों में ऐं ह्रीं श्रीं लिखे। नैर्ऋत्य पश्चिम वायव्य दिग्गत कोणों में भी इन्हीं बीजों को लिखे। अवशिष्ट से पूर्ववत् यन्त्र बनाकर अपने आगे स्थापित करे। तदनन्तर अर्घ्य-स्थापन एवं पीठपूजा करे।

मध्य बीज में देव का आवाहन करके आवाहनादि वैष्णव मुद्रा दिखावे। न्यासक्रम से विभूतिपञ्जर मूर्तियों की पूजा करे। देव के आगे दक्ष वाम पृष्ठ लिखित बीजों में रुक्मिणी, सत्यभामा, जाम्बवती कालिन्दी की पूजा करे। षट्कोणों में पूर्ववत् षडङ्गों की पूजा करे। केसर में पञ्च बाणों की पूजा करे। अष्टदल के दलों में पूर्वोक्त लक्ष्मी आदि की पूजा करे। देवाग्र दल

के आगे ध्वजाय नम:। पीछे विपाय नम:। दक्ष दलाग्र में शङ्खनिधये नम:। वाम दलाग्र में पद्मनिधये नम:। आग्नेयादि दलाग्रों में हेरम्बाय नम:, शास्त्रे नम:, दुर्गायै नम:, विश्वक्सेनाय नम: से पूजा करे। इसके बाहर चतुरस्र में लोकेशों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार यह विष्णु पूजा सात आवरणों की होती है।

सद्गुरु से दीक्षा में विधिवत् मन्त्र पाकर एक लाख जप करे। जप के समय दर्शन, भाषण, स्पर्श, वचन, श्रवणादि; स्त्रियों और गुरु से भी न करे। शक्कर गोघृत मधु मिश्रित पायस से दशांश हवन करे। तर्पण मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन करावे। इस प्रकार से जो प्रतिदिन मन्त्र का जप करता है, उसकी पूजा देवता भी करते हैं। वह लोकानन्दकारक हो जाता है। प्रात:काल में जल को शक्करयुक्त दूध मानकर जो प्रतिदिन सौ तर्पण करता है, वह अग्रगण्य होता है। इन्द्र श्री जलबिन्दु के समान उसकी आभा होती है। वह विभूति का महासागर होता है। कपूर एवं चन्दन लिप्त नवीन मालती पुष्पों से जो दश हजार हवन इस श्रेष्ठ मन्त्र से करता है, उसके वश में तीनों लोक होते हैं। वह विख्यात श्रेष्ठ कवि होता है। यथाविधि इस मन्त्र के ध्यानमात्र से सुरसुन्दरियाँ कामविह्वल होकर उसके वश में रहती हैं। इसके जपादि कर्म से क्या क्या प्राप्त नहीं होते? स्वाभाविक स्पर्धा छोड़कर मन्त्रज्ञानी को सेवा में लक्ष्मी और सरस्वती भी उसकी सेवा में तत्पर रहते हैं। वह व्याधि दारिद्र्य पापसमूह ज्वर मोह विषादि जरा मृत्यु दौर्भाग्य दु:खादि से सदा रहित होता है। पुत्र-पौत्र-धन-आरोग्य-स्त्री-बान्धवादि के साथ-साथ समस्त सम्पत्ति से युक्त होकर यशस्वी एवं दीर्घजीवी होता है।

सप्रयोग: सन्तानगोपालविधि:

अथ सन्तानगोपालस्य। सारसंग्रहे—

अथ संतानगोपालमन्त्रं वच्मि सुतप्रदम्। देवकीसुतशब्दान्ते गोविन्देति समीरयेत्॥१॥
वासुदेवपदात् पश्चात् सम्बुद्ध्यन्तं जगत्पतिम्। देहि मे पदमाभाष्य तनयं कृष्णमुच्चरेत्॥२॥
त्वामहं शरतो ब्रूयाद् णं गतोऽयं मनुर्भवेत्। द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रो नारदोऽस्य मुनिर्मनो:॥३॥
छन्दोऽनुष्टव् देवता च कृष्ण: संतानसिद्धिद:। पादैश्चतुर्भि: सर्वेण पञ्चाङ्गानि मनोर्विदु:॥४॥
शङ्खचक्रधरं देवं श्यामवर्णं चतुर्भुजम्। सर्वाभरणसंदीप्तं पीतवाससमच्युतम्॥५॥
मयूरपिच्छसंयुक्तं विष्णुं तेजोपबृंहितम्। समर्पयन्तं विप्राय नष्टानानीय बालकान्॥६॥
करुणामृतसंपूर्णचेष्टैकनिलयं प्रभुम्।

चतुर्भुजमित्यनेन गदाम्बुजे सूचिते। वामाद्यूर्ध्वयोराद्ये तदाद्यन्ययोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्। स्त्रीभिस्तु—
स्वाङ्के संमुखसन्निविष्टममले रक्ताम्बुजे बालकंमाणिक्योज्ज्वलबालभूषणगणं प्रोत्तप्तहेमद्युतिम्।
प्रेम्णालिङ्ग्य मुहुर्मुहु: सुखवशात्संलालितं स्वात्मना पुत्रत्वेन विभावयेन्मुररिपुं पुत्रार्थिनी कामिनी॥७॥
इति देवो ध्येय:।
ध्यात्वा जपार्चनादीनि कुर्याद्भक्तिपरायण:। अर्चनाङ्गेन्द्रवज्राद्यैरुदितास्य महामनो:॥८॥

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा शिरसि नारदाय ऋषये नम:। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नम:। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नम:। इति मूर्धादिषु विन्यस्य मूलमन्त्रेण करयोर्व्यापकं विन्यस्य, देवकीसुतगोविन्द हृदयाय नम:। वासुदेवजगत्पते शिरसे स्वाहा। देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्। त्वामहं शरणं गत: कवचाय नम:। देवकीसुतगोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गत: अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिपञ्चाङ्गुलीषु विन्यस्य, हृदादिष्वपि विन्यस्य ध्यानमानसपूजादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

लक्षं जप्त्वा तद्दशांशं जुहुयाद् गोघृतेन च। तर्पणादि तत: कुर्यान्मन्त्र: सिद्ध्यति मन्त्रिण:॥९॥
दशम्यामर्धरात्रे तु शुक्लपक्षेषु मन्त्रवित्। पुत्रार्थी स्वस्तिके न्यस्य तत्संस्थं विष्णुमर्चयेत्॥१०॥
स्वस्तिके मण्डले।
य एवं भजते मन्त्रं साधक: पुत्रकाङ्क्षया। सोऽवश्यं लभते पुत्रं विनीतं चिरजीविनम्॥११॥ इति।

सन्तान गोपाल मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार बत्तीस अक्षरों का सन्तानगोपाल मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते। देहि मे तनयं कृष्ण! त्वामहं शरणं गतः।।

प्रातःकालिक कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदि कृष्णाय देवतायै नमः। तत्पश्चात् मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। तब इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नमः, वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा, देहि मे तनयं कृष्ण शिखायै वषट्, त्वामहं शरणं गतः कवचाय हुं, पूरे मन्त्र से अस्त्राय फट्। पञ्चाङ्ग न्यासमन्त्रों से अंगुष्ठादि पाँचों अंगुलियों में न्यास करके हृदयादि में भी न्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

शङ्खचक्रधरं देवं श्यामवर्णं चतुर्भुजम्। सर्वाभरणसंदीप्तं पीतवाससमच्युतम्।।
मयूरपिच्छसंयुक्तं विष्णुं तेजोपबृंहितम्। समर्पयन्तं विप्राय नष्टानानीय बालकान्।।
करुणामृतसंपूर्णचेष्टैकनिलयं प्रभुम्। स्वाङ्के संमुखसन्निविष्टममले रक्ताम्बुजे बालकं।।
माणिक्योज्ज्वलबालभूषणगणं प्रोत्तप्तहेमद्युतिम्। प्रेम्णालिङ्ग्य मुहुर्मुहुः सुखवशात् संलालितं।।
स्वात्मना पुत्रत्वेन विभावयेन्मुररिपुं पुत्रार्थिनी कामिनी।

इस प्रकार ध्यान के बाद मानस आदि पूजा करके शेष पूजा को भी सम्पन्न कर पूजा का समापन करे।

एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन गाय के घी से करे। तदनन्तर तर्पणादि करे तो मन्त्र सिद्ध होता है। शुक्ल दशमी की आधी रात में पुत्रार्थी मन्त्रवित् स्वस्तिक में बिठाकर विष्णु का अर्चन करे तो उसे विनीत एवं चिरञ्जीवी पुत्र अवश्य प्राप्त होता है।

पूजायन्त्ररचना

यन्त्रसारे—

कामं मध्यं स्वरयुगलसत्केसरेष्वष्टपत्रेष्वालिख्यान्तर्जलनिधिमितान् मन्त्रवर्णान् क्रमेण ।
भूयो हल्भिर्बहिरभिवृतं भूपुरस्थं तदेतद् यन्त्रं सद्यो वितरति नृणां पुत्रपौत्राभिवृद्धिम् ॥१॥ इति।

अस्यार्थः—(अष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां ससाध्यं कामबीजं विलिख्य तत्) केसरेषु द्वन्द्वशः स्वरान् विलिख्य, तद्दलेषु मूलमन्त्राक्षराणि चत्वारि चत्वारि विलिख्य, बहिर्वृत्तद्वयान्तराले कादिक्षान्तवर्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्रं सकामबीजकोणचतुष्टयं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

यन्त्रसार में कहा गया है कि अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका के मध्य में साध्य नाम के साथ 'क्लीं' लिखकर दल के केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। उसके दलों में मूल मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल में क से क्ष तक के वर्णों को वेष्टित करते हुए लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसके कोणों में सकाम बीजचतुष्टय लिखे। यह यन्त्र मनुष्य के पुत्र-पौत्रों की वृद्धि करने वाला होता है।

निगडच्छेदनमन्त्रः

सारसंग्रहे—

वसुदेवं चतुर्थ्यन्तं निगडच्छे-पदं वदेत्। दनं वा-शब्दतो ब्रूयात् सुदेवं ङेसमन्वितम् ॥१२॥
वर्मास्त्रवह्निजायान्तो विंशार्णोऽयं मनुर्मतः ।

वसुदेवं स्वरूपं। अत्र कर्मणि द्वितीया। निगडच्छेदनं चतुर्थ्यन्तं निगडच्छेदनाय। वसुदेवं ङेसमन्वितं, वासुदेवाय। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। वह्निजाया स्वाहा। तथा—

नारदोऽस्य मुनिः प्रोक्तो गायत्री छन्द ईरितम्। श्रीकृष्णो देवता प्रोक्तो निगडच्छेदनाह्वयः ॥१३॥
न्यासध्यानजपार्चादि दशवर्णोक्तवद् भवेत् ।

निगड़च्छेदन मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार बन्धन को काटने वाला बीस अक्षरों का मन्त्र है—वासुदेवं निगड़च्छेदनाय वासुदेवाय हुं फट् स्वाहा। इसके ऋषि नारद, छन्द गायत्री एवं देवता निगड़च्छेदक श्रीकृष्ण हैं। इसके न्यास ध्यान जप अर्चन आदि दशाक्षर मन्त्र के समान होते हैं।

सम्मोहनकृष्णैकाक्षरमन्त्रविधानम्

अथ वक्ष्ये महामन्त्रमेकाक्षरसमाह्वयम् ॥१४॥
धनपुत्रकलत्रादिभोगमोक्षफलप्रदम् । सिद्धर्षियोगिवृन्दानां पुरारेरपि मोहनम् ॥१५॥
नरोरगसुरस्त्रीणां वश्याकर्षकरं परम् । जयाभूशान्तिबिन्द्वात्मा मनुरेकाक्षरस्त्वयम् ॥१६॥

जया ककारः, भूर्लकारः, शान्तिरीकारः, बिन्दुरनुस्वारस्तेन क्लीं। तथा—

मुनिः संमोहनाद्योऽस्य नारदो गदितो बुधैः । मन्त्रतन्त्ररहस्यज्ञैश्छन्दो गामत्रमीरितम् ॥१७॥
जगत्संमोहनः कृष्णो देवता देववन्दितः । षड्दीर्घाद्येन बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥१८॥
आसनं न्यासपर्यन्तमुक्तरीत्या विधाय तु । अङ्गुलीषु न्यसेदङ्गं हस्तयोस्तलयोरपि ॥१९॥
पञ्चाङ्गुलीषु बाणांश्च पूर्वोक्तांस्तत्क्रमान् न्यसेत् । बीजसंपुटितान् न्यसेन्मातृकार्णाननन्तरम् ॥२०॥
षडङ्गानि पुनर्न्यस्य यथास्थानं शरान्न्यसेत् । शिरोवदनहल्लिङ्गपादेषु क्रमतः सुधीः ॥२१॥
शोषणप्रमुखान् ङेन्तान् हृदन्तान् बीजपूर्वकान् । जगत्संमोहनं कृष्णं ध्यायेत् पश्चात् समाहितः ॥२२॥
वृन्दावनद्रुमोद्यानविकसत्कल्पशाखिनः । मूले रत्नस्थलीराजद्रत्नसिंहासनोपरि ॥२३॥
उद्यदादित्यसंकाशं विश्वप्राणस्वरूपिणः । महतो वैनतेयस्य वामस्कन्धोपरि स्थितम् ॥२४॥
बन्धूककुसुमाभं तं शम्बरारिसवर्णकम् । अरिशङ्खसृणीन् पाशं पुष्पबाणेक्षुकार्मुके ॥२५॥
पद्मं गदां च हस्ताब्जैरष्टभिर्दधतं निजैः । स्निग्धारुणविशालोद्यद्घूर्णिताक्षिद्वयाम्बुजम् ॥२६॥
रत्नप्रत्युप्तमुकुटं मणिकुण्डलमण्डितम् । मुक्ताहारलसद्रत्नकङ्कणाङ्गदमुद्रिकम् ॥२७॥
किङ्किणीनूपुराद्यैश्च रत्नमाल्यैरलङ्कृतम् । शोणालेपं स्वर्णकान्तिक्षौमाम्बरविराजितम् ॥२८॥
आत्मवामोरुपीठस्थां लक्ष्मीमालिङ्गितप्रियाम् । वामबाहुधृताम्भोजां क्लिद्यन्मदनमन्दिराम् ॥२९॥
कामोन्मदमदव्याप्तव्याकुलाङ्गलतोज्ज्वलाम् । रम्यमालाविलेपाङ्गीं सर्वभूषणभूषिताम् ॥३०॥
सूक्ष्मशुक्लसुवस्त्राढ्यां कान्तसद्वदनाम्बुजे । प्रेरितालोलनीलाभनेत्रषट्पदमण्डिताम् ॥३१॥
सेक्षुचापेन वामेन बाहुना तरुणीमिमाम् । आलिङ्गन्तममुं तज्जपरमानन्दनन्दितम् ॥३२॥
सुरासुरभुजङ्गेन्द्रसिद्धगन्धर्वयोषिताम् । वृन्दैर्वृतं सुभूषाढ्यैः कामबाणनिपीडितैः ॥३३॥
सर्वलोकगुरुं देवं सत्यानन्दं विचिन्तयेत् ।

दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये, तदादिद्वन्द्वक्रमेणाधोऽधोऽन्यान्यपि बोद्धव्यानि।

विंशाक्षरकृते यन्त्रे प्रत्यहं कृष्णमर्चयेत् । आदावर्घ्यादिभूषान्तैरुपचारैर्यथाविधि ॥३४॥
पश्चादङ्गानि बाणांश्च न्यासमार्गेण पूजयेत् । किरीटं मस्तके श्रोत्रद्वये कुण्डलयुग्मकम् ॥३५॥
चक्राद्यस्त्राणि हस्तेषु श्रीवत्सं कौस्तुभं ततः । कुचोर्ध्वदेशतः कण्ठे वनमालां नितम्बके ॥३६॥
पीताम्बरां महालक्ष्मीं वामाङ्के बीजपूर्विकाम् । अभ्यर्च्य कर्णिकामध्ये दिग्विदिक्ष्वङ्गदेवताः ॥३७॥
तद्बहिश्चतुरो बाणान् दिक्षु कोणेषु पञ्चमम् । यजेदग्रादिपत्रेषु लक्ष्म्याद्याः प्रोक्तलक्षणाः ॥३८॥
दिव्याम्बरानुलेपाद्यैर्भूषणाद्यैश्च भूषिताः । श्वेतचामरधारिण्यः कामार्ताः सस्मिताननाः ॥३९॥
इन्द्रादीन् पूजयेद्बाह्ये वज्रादीन्यायुधानि च । एकाक्षरमनोरित्थं पूजा सम्यक् समीरिता ॥४०॥

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि संमोहननारदाय

ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये जगत्संमोहनाय कृष्णाय देवतायै नमः। गुह्ये कं बीजाय नमः। पादयोः ईं शक्तये नमः। (नाभौ लं कीलकाय नमः) इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, क्लांक्लीं इत्यादिना करयोः षडङ्गमन्त्रन्यासं कृत्वा (करयोः पञ्चाङ्गुलीषु पुरुषोत्तमप्रकरणोक्तान् पञ्चबाणान् विन्यस्य कामबीजपुटितमातृकान्यासं कृत्वा) पुनर्हृदयादिषु षडङ्गानि विन्यस्य, शिरोवदनहृदयलिङ्गपादेषु पञ्चबाणान् विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते विंशत्यक्षरोक्तं यन्त्रं कृत्वा, पीठपूजादिपुष्पोपचारान्ते देवस्य देहे न्यासस्थानेषु षडङ्गानि पञ्चबाणांश्च संपूज्य, देवस्य शिरसि किरीटाय नमः। कर्णयोः कुण्डलाभ्यां नमः। चक्राय नमः। शङ्खाय नमः। अङ्कुशाय नमः। पाशाय नमः। पुष्पबाणेभ्यो नमः। इक्षुधनुषे नमः। पद्माय नमः। गदायै नमः। इति देवस्य हस्तेषु ध्यानोक्तक्रमेण संपूज्य, वक्षःस्थले श्रीवत्साय नमः। कौस्तुभाय नमः। कण्ठे वनमालायै नमः। नितम्बे पीताम्बराय नमः। वामाङ्के श्रीलक्ष्म्यै नमः। कर्णिकायां देवाग्रादिचतुर्दिक्षु चतु ष्कोणेषु षडङ्गानि संपूज्य, केसरेषु देवाग्रादिचतुर्दिक्षु बाणचतुष्टयं चतुष्कोणेषु पञ्चममिति पञ्चबाणान् संपूज्य, अष्टदलेषु लक्ष्म्याद्याः प्रागुक्ताः संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

एकाक्षरमनुं जप्याद् भानुलक्षं जितेन्द्रियः। पलाशकुसुमैः स्वादुत्रयाक्तैरर्चितेऽनले ॥४१॥
हुनेद्रविसहस्राणि तोयैस्तावच्च तर्पयेत्। आत्माभिषेकं कृत्वाथ विप्रानभ्यर्च्य तोषयेत् ॥४२॥
त्रैलोक्यमोहनं ङेन्तं प्रवदेद्विद्महे-पदम्। चतुर्थ्यन्तं स्मरं ब्रूयाद् धीमहि तदनन्तरम् ॥४३॥
तन्नो विष्णुरिति प्रोच्य ततो मन्त्री प्रचोदयात्। गायत्र्येषा जपात् पूर्वं जप्यात् पापविशुद्धये ॥४४॥
जपपूजाहुताद्यैश्च लक्ष्मीवृद्धिकरी मता। शुद्ध्यर्थमेतया मन्त्री पूजाद्रव्यादि सेचयेत् ॥४५॥
अनेन मनुना तोयैर्मोहिनीपुष्पसंयुतैः। दिनादावन्वहं मन्त्री तर्पयेद्यः शतं हि सः ॥४६॥
सर्वान् कामानवाप्नोति वाञ्छितान् यन्त्रवर्जितान्। अयुतं सर्पिषा हुत्वा ससंपातं हुताशने ॥४७॥
तावज्जप्तं च संपातघृतं स्वां भोजयेत् प्रियाम्। यस्तस्य वशगा सा स्यात् सोऽपीत्थं वशगो भवेत् ॥४८॥
अष्टादशलिपिप्रोक्तं वश्यकर्मात्र साधयेत्। विधिनानेन यो मन्त्रं भजेदेनमनन्यधीः ॥४९॥
लोकत्रयं वशीकृत्य भोगान् भुक्त्वा मनोरमान्। स याति वैष्णवं धाम दाहप्रलयवर्जितम् ॥५०॥ इति।

सारसंग्रह में कहा गया है कि अब कृष्ण के सम्मोहन कारक एकाक्षर मन्त्र को कहता हूँ। यह धन-पुत्र-कलत्रादि के साथ-साथ भोग-मोक्षप्रदायक है। इससे सिद्ध, ऋषि, योगीवृन्द और पुरारी का भी मोहन होता है। नर-नाग-देवस्त्रियों के वश्य एवं आकर्षण करने वाला यह श्रेष्ठ मन्त्र है। यह एकाक्षर मन्त्र 'क्लीं' है। इसके ऋषि सम्मोहन नारद, छन्द गायत्री एवं देवता जगत्सम्मोहन कृष्ण हैं। क्लां क्लीं इत्यादि से इसका षडङ्ग न्यास होता है। पूर्वोक्त रीति से आसन न्यासादि करके हाथ की अंगुलियों, करतल, करपृष्ठों में न्यास करे। पाँचों अंगुलियों में पूर्वोक्त पञ्च बाणों का न्यास करे। बीजसम्पुटित मातृका वर्णों का न्यास करे। पुनः षडङ्ग न्यास करके यथास्थान बाणों का न्यास शिर, मुख, हृदय, लिङ्ग, पैरों में क्रमशः करे। द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः—इन बाणबीजों के साथ शोषणादि बाणों का भी न्यास करे। तब एकाग्र होकर इस प्रकार जगत्सम्मोहन कृष्ण का ध्यान करे—

वृन्दावनद्रुमोद्यानविकसत्कल्पशाखिनः। मूले रत्नस्थलीराजद्रत्नसिंहासनोपरि।।
उद्यदादित्यसंकाशं विश्वप्राणस्वरूपिणः। महतो वैनतेयस्य वामस्कन्धोपरि स्थितम्।।
बन्धूककुसुमाभं तं शाम्वरारिसवर्णकम्। अरिशङ्खसृणीन् पाशं पुष्पबाणेक्षुकार्मुके।।
पद्मं गदां च हस्ताब्जैरष्टभिर्दधतं निजैः। स्निग्धारुणविशालोद्यद्घूर्णिताक्षिद्वयाम्बुजम्।।
रत्नप्रत्युप्तमुकुटं मणिकुण्डलमण्डितम्। मुक्ताहारलसद्रत्नकङ्कणाङ्गदमुद्रिकम्।।
किङ्किणीनूपुराद्यैश्च रत्नमाल्यैरलङ्कृतम्। शोणालेपं स्वर्णकान्तिक्षौमाम्बरविराजितम्।।
आत्मवामोरुपीठस्थां लक्ष्मीमालिङ्गितप्रियाम्। वामबाहुधृताम्भोजां क्लिद्यन्मदनमन्दिराम्।।

कामोन्मदमदव्याप्तव्याकुलाङ्गलतोज्ज्वलाम्। रम्यमालाविलेपाङ्गीं सर्वभूषणभूषिताम्।।
सूक्ष्मशुक्लसुवस्त्राढ्यां कान्तसद्वदनाम्बुजे। प्रेरितालोलनीलाभनेत्रषट्पदमण्डिताम्।।
सेक्षुचापेन वामेन बाहुना तरुणीमिमाम्। आलिङ्गन्तममुं तज्जपरमानन्दनन्दितम्।।
सुरासुरभुजङ्गेन्द्रसिद्धगन्धर्वयोषिताम्। वृन्दैर्वृतं सुभूषाढ्यैः कामबाणनिपीडितैः।।

ध्यान के बाद आत्म पूजा करे। विंशाक्षर मन्त्रोक्त यन्त्र बनाकर पीठपूजा करे। पुष्पोपचार तक पूजा करे। देव के देह में न्यासस्थानों में षडङ्गों, पाँच बाणों की पूजा करे। देव के शिर में किरीटाय नमः, कानों में कुण्डलाभ्यां नमः, चक्राय नमः, शङ्खाय नमः, अङ्कुशाय नमः, पाशाय नमः, पुष्प बाणेभ्यो नमः, इक्षुधनुषे नमः, पद्माय नमः, गदायै नमः से देव के हाथों में ध्यानोक्त क्रम से पूजा करे। वक्षःस्थल में श्रीवत्साय नमः, कौस्तुभाय नमः। कण्ठ वनमालायै नमः। नितम्ब पर पीताम्बराय नमः। वामांक में श्रीलक्ष्म्यै नमः से पूजा करे। कर्णिका में देव के आगे से चारो दिशाओं में कोणों में षडङ्ग पूजा करे। केसर में देव के आगे से चारो दिशाओं में चार बाणों की पूजा कोणों में पञ्चम बाण की पूजा करे। अष्टदलों में लक्ष्मी आदि की पूजा करे। चतुरस्र में पूर्ववत् लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। शेष सभी कर्मों को पूर्ववत् करके पूजा को समाप्त करे।

इस एकाक्षर मन्त्र का जप बारह लाख करे। संस्कृत अग्नि में त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से बारह हजार हवन करे। शुद्ध जल से तर्पण-मार्जन एवं ब्राह्मणों को भोजन कराये। 'त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे स्मराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्' इस गायत्री का जप करे। जप के पहले इस गायत्री का जप करने से साधक सभी पापों से विशुद्ध हो जाता है। इस प्रकार का जप-पूजन एवं हवन लक्ष्मीवर्द्धक होता है। शुद्धि के लिये इससे पूजा द्रव्यादि का सेचन करे। जल में मोहिनी पुष्प मिलाकर इस मन्त्र से प्रतिदिन एक सौ तर्पण करे तो सभी मनोरथ पूरे होते हैं। गाय के घी से दश हजार हवन करे। हुत शेष का सम्पात यन्त्र पर करे। उस सम्पात घी को अपनी प्रिया को खिलावे तो वह उसके वश में हो जाती है। अट्ठारह अक्षरों के मन्त्र से पूर्वोक्त वश्य कर्मों को करे। विधानपूर्वक अनन्य वुद्धि से जो इस मन्त्र को भजता है वह तीनों लोकों को अपने वश में करके मनोरम भोगों को भोगता है और अन्त में वैकुण्ठ लोक गमन करता है।

सप्रयोगः काममन्त्रार्चाक्रमः

अथ काममन्त्रः सारसंग्रहे (अयमेव प्रोक्तकृष्णैकाक्षरमन्त्रः)—

अथायमेव कामस्य मनुरेकाक्षरो भवेत्। संमोहनो मुनिश्छन्दो गायत्रं देवता स्मरः ॥१॥
अस्याङ्गानि स्वबीजेन दीर्घभाजा प्रकल्पयेत्।

रक्तं रक्तविलेपनं सुरुचिरं रक्ताम्बरं बिभ्रतं रत्नोद्यन्मुकुटादिभूषणगणैरादीप्तदेहं प्रभुम्।
पाशं साङ्कुशमिक्षुचापसुमनोबाणान् वहन्तं करैः रक्ताम्भोजनिकेतनं मनसिजं देवं सदा भावयेत् ॥२॥

वामाद्यूर्ध्वकरयोराद्ये। तदाद्यधःस्थयोरन्ये। इत्यायुधध्यानम्।

पीठे संपूजयेत् कामं संमोहिन्यादिशक्तिकम्। मोहिनी क्षोभिणी चैव त्रासिनी स्तम्भिनी तथा ॥३॥
आकर्षिणी द्राविणी च ह्लादिनी तदनन्तरम्। क्लिन्ना स्यात् क्लेदिनी प्रोक्ता कामपीठस्य शक्तयः ॥४॥
आसनं मनुना दद्यान्मूर्तिं मूलेन कल्पयेत्। तत्रावाह्य स्मरं भक्त्या पूजयेद्विधिनामुना ॥५॥
अङ्गानि पूर्वमाराध्य मध्ये दिक्षु शरान् न्यसेत्। उक्तबीजादिकानष्टदलेष्वर्च्या इमाः क्रमात् ॥६॥
प्रथमानङ्गरूपाख्याप्यनङ्गमदना ततः। अनङ्गमन्मथानङ्गकुसुमाह्वा परा मता ॥७॥
पञ्चमी च ततः प्रोक्ता ह्यनङ्गकुसुमातुरा। अनङ्गशिशिरा षष्ठी भूयश्चानङ्गमेखला ॥८॥
अनङ्गदीपिकाः सर्वाः पद्महस्ताः स्वलङ्कृताः। स्वरसंख्यदलेष्वर्च्या बहिस्तत्संख्यशक्तयः ॥९॥
युवतिः प्रथमा ज्ञेया विप्रलम्भा ततः परा। ज्योत्स्ना सुभ्रूस्ततश्चैव पञ्चमी च मदद्रवा ॥१०॥
सुरतावारुणीसंज्ञे लोकालीले परे मते। सौदामिनी ततः कामच्छत्राख्या चन्द्रलेखया ॥११॥
शुकी मदनया युक्ता योनिर्मायावती ततः। कह्लारहस्ताः कामार्ता तरुण्यः सस्मितानना: ॥१२॥

पत्राग्रेषु ततोऽभ्यर्च्याः कामस्य परिचारकाः। शोकमोहौ विलासाख्यो विभ्रमो मदनातुरः ॥१३॥
अपत्रपयुवानौ च चन्दनस्तदनन्तरम्। चूतपुष्पाह्वयश्चैव ज्ञातव्योऽयं रतिप्रियः ॥१४॥
ग्रीष्माभिधस्तापनाख्योऽप्यूर्जो हेमन्तसंज्ञकः। शिशिराख्यो मदः पुष्पबाणेक्षुजधनुर्धराः ॥१५॥
पृष्ठतोऽर्पिततूणीराः शोणाः स्त्रीसक्तमानसाः। तद्बहिः पूजयेदष्टौ दिक्क्रमेण रतिप्रियान् ॥१६॥
परभृत्सारसाख्यौ तु शुको मेघस्ततः परम्। अपाङ्गो भ्रूविलासश्च हावो भावो रतिप्रियाः ॥१७॥
भूगृहस्य च कोणेषु चतस्रः पूजयेदिमाः। माधवाख्या मालती च हरिणाक्षी मदोत्कटा ॥१८॥
श्वेतचामरसद्धस्ताः श्यामा भूषितविग्रहाः। इन्द्रादींश्च ततो बाह्ये वज्रादीन्यपि पूजयेत् ॥१९॥
एवमाराधयेद्यस्तु गन्धपुष्पादिभिः स्मरम्। सौभाग्यमतुलं कामान् महालक्ष्मीं स विन्दति ॥२०॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि संमोहनाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीकामाय देवतायै नमः। प्राग्बीजशक्त्यादि विन्यस्य विनियोगः। क्लांक्लीं इत्यादिना प्राग्वत् करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यानादिपरतत्त्वार्चान्ते अष्टदलकेसरेषु—मोहिन्यै नमः। क्षोभिण्यै नमः। त्रासिन्यै नमः। स्तम्भिन्यै नमः। आकर्षिण्यै नमः। द्राविण्यै नमः। आह्लादिन्यै नमः। क्लिन्नायै नमः। क्लेदिन्यै नमः। इति स्वाग्रादिमध्यान्तं संपूज्य, क्लींसर्वशक्तिकमलासनाय नमः। इत्यासनं समस्तं पीठे संपूज्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्य, कर्णिकायां मध्ये चतुर्दिक्षु च बाणान् प्राग्वत् संपूज्याष्टदलेषु—अनङ्गरूपायै नमः। अनङ्गमेखलायै नमः। अनङ्गमन्मथायै नमः। अनङ्गकुसुमायै नमः। अनङ्गकुसुमातुरायै नमः। अनङ्गशिशिरायै नमः। अनङ्गमेखलायै नमः। अनङ्गदीपिकायै नमः। इति संपूज्य, बहिःषोडशदलेषु—युवत्यै नमः। विप्रलम्भायै नमः। ज्योत्स्नायै नमः। सुभ्रुवे नमः। मदद्रवायै नमः। सुरतायै नमः। वारुण्यै नमः। लोकायै नमः। लीलायै नमः। सौदामिन्यै नमः। कामच्छत्रायै नमः। चन्द्रलेखायै नमः। शुक्यै नमः। मदनायै नमः। योन्यै नमः। मायावत्यै नमः। इति प्रादक्षिण्येन देवाग्रादितः संपूज्य, षोडशदलाग्रेषु—शोकाय नमः। मोहाय नमः। विलासाय नमः। बिभ्रमाय नमः। मदनातुराय नमः। अपत्रपाय नमः। यूने नमः। चन्दनाय नमः। चूतपुष्पाय नमः। रतिप्रियाय नमः। ग्रीष्माय नमः। तापनाय नमः। ऊर्जाय नमः। हेमन्ताय नमः। शिशिराय नमः। मदाय नमः। इति संपूज्य, चतुरस्रस्याष्टदिक्षु देवाग्रात् प्रादक्षिण्येन—परभृते नमः। सारसाय नमः। शुकाय नमः। मेधाय नमः। अपाङ्गाय नमः। भ्रूविलासाय नमः। हावाय नमः। भावाय नमः। इति संपूज्य, चतुरस्रचतुष्कोणेषु आग्नेयादि—माधव्यै नमः। मालत्यै नमः। हिरण्याक्ष्यै नमः। मदोत्कटायै नमः। इति संपूज्य बहिर्लोकपालार्चादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

सञ्चिन्त्यैनं जपेन्मन्त्रं राशिलक्षं विधानतः। तद्दशांशं त्रिमध्वक्तैः किंशुकप्रसवैर्हुनेत् ॥२१॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणानपि भोजयेत्। ततोऽभ्यर्च्य गुरुं वित्तैः प्रणम्य परितोषयेत् ॥२२॥
(एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगानाचरेत् ततः। अशोककुसुमैः स्वादुत्रयाक्तैस्त्रिदिनं हुनेत्)॥२३॥
अष्टाधिकं सहस्रं यः सर्वेषां स प्रियो भवेत्। गोघृतेन ससंपातमष्टोत्तरशतं हुनेत् ॥२४॥
सम्यक्संपूजिते वह्नौ मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। संपातसर्पिषा तेन नारीं स्वां भोजयेत् प्रियाम् ॥२५॥
आज्ञानुवर्तिनी सास्य भवेज्जन्मान्तरेऽपि च। दध्यक्तलाजाहोमेन प्रत्यहं मण्डलावधि ॥२६॥
वाञ्छितां लभते मन्त्री कन्यां सापि प्रियं पतिम्।

काममन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार एकाक्षर कृष्णमन्त्र 'क्लीं' ही काममन्त्र है। इसके ऋषि सम्मोहन, छन्द गायत्री एवं देवता कामदेव हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि सम्मोहनाय ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्री कामाय देवतायै नमः। अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर क्लां क्लीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तं रक्तविलेपनं सुरुचिरं रक्ताम्बरं बिभ्रतं रत्नोद्यन्मुकुटादिभूषणगणैरादीप्तदेहं प्रभुम्।
पाशं साङ्कुशमिक्षुचापसुमनोबाणान् वहन्तं करैः रक्ताम्भोजनिकेतनं मनसिजं देवं सदा भावयेत्।।

इस प्रकार ध्यान के बाद परतत्त्व तक की पूजा करे। अष्टदलों के केसरों में इन मन्त्रों से पूजा करे—मोहिन्यै नमः, क्षोभिण्यै नमः, त्रासिन्यै नमः, स्तम्भिन्यै नमः, आकर्षिण्यै नमः, द्राविण्यै नमः, आह्लादिन्यै नमः, क्लिन्नायै नमः एवं क्लेदिन्यै नमः। तदनन्तर क्लीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः से आसन देकर समस्त पीठ की पूजा करे। तब देव का आवाहनादि से पुष्पोपचार तक पूजा करे। पूर्ववत् अंगों की पूजा करे। कर्णिका के मध्य में एवं चारो दिशाओं में बाणों की पूजा पूर्ववत् करे।

अष्टदल में अनङ्गरूपायै नमः, अनङ्गमदनायै नमः, अनङ्गमन्मथायै नमः, अनङ्गकुसुमायै नमः, अनङ्गकुसुमातुरायै नमः, अनङ्गशिशिरायै नमः, अनङ्गमेखलायै नमः, अनङ्गदीपिकायै नमः मन्त्रों से पूजा करे।

षोडशदल में युवत्यै नमः, बिप्रलम्भायै नमः, ज्योत्स्नायै नमः, सुभ्रुवे नमः, मदद्रवायै नमः, सुरतायै नमः, वारुण्यै नमः, लोकायै नमः, लीलायै नमः, सौदामिन्यै नमः, कामच्छत्रायै नमः, चन्द्रलेखायै नमः, शुक्यै नमः, मदनायै नमः, योन्यै नमः एवं मायावत्यै नमः—इन मन्त्रों से देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से पूजा कर षोडश दल के अग्रभागों में शोकाय नमः, मोहाय नमः, विलासाय नमः, विभ्रमाय नमः, मदनातुराय नमः, अपत्रपाय नमः, यूने नमः, चन्दनाय नमः, चूतपुष्पाय नमः, रतिप्रियाय नमः, ग्रीष्माय नमः, तापनाय नमः, ऊर्जाय नमः, हेमन्ताय नमः, शिशिराय नमः मदाय नमः—इन मन्त्रों से पूजा करे।

चतुरस्र की आठों दिशाओं में देव के आगे से प्रादक्षिण्य से परभृते नमः, सारसाय नमः, शुकाय नमः, मेघाय नमः, अपांगाय नमः, भ्रूविलासाय नमः, हावाय नमः, भावाय नमः से पूजा करे।

चतुरस्र के कोणों में आग्नेयादि क्रम से माधव्यै नमः, मालत्यै नमः, हिरण्याक्ष्यै नमः, मदोत्कटायै नमः से पूजा करे। इसके बाहर लोकेशों और आयुधों की पूजा कर शेष पूजा करके पूजा को समाप्त करे। इस प्रकार की पूजा जो साधक गन्ध-पुष्पादि से करता है, वह अतुल्य सौभाग्य, मनोरथ एवं महालक्ष्मी को प्राप्त करता है।

पूजन के पश्चात् बारह लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। तब गुरु को धन देकर प्रणाम करके सन्तुष्ट करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से प्रयोगों को करे। त्रिमधुराक्त अशोक के फूलों से एक हजार आठ हवन तीन दिनों तक करे तो सबों का प्रिय होता है। गाय के घी से एक सौ आठ हवन सम्यक् पूजित अग्नि में करके हवन के सम्पात घी को स्त्री को खिलावे तो जन्मान्तर में भी वह साधक की आज्ञानुवर्तिनी होती है। दही मिश्रित लावा से चालीस दिनों तक प्रतिदिन हवन करे तो साधक को वांछित स्त्री मिलती है और कन्या को प्रिय पति प्राप्त होता है।

तद्यन्त्राणामुद्धारः

षट्कोणे मदनं ससाध्यमथ तत्कोणेषु चाङ्गं बहि-
र्गायत्र्या गुणशो विभज्य विलिखेद् वर्णान् दलेष्वष्टसु।
तेषामग्रगतांश्च तर्कसमितान् मालाणुवर्णांस्तथा
भूगेहाश्रिषु मन्मथेन लसितं यन्त्रं शुभं मान्मथम्॥२७॥
पूजितं धारितं ह्येतल्लोकत्रयवशीकरम्।

अस्यार्थः—षट्कोणगर्भमष्टदलकमलं कृत्वा, षट्कोणमध्ये ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, कोणेषु षडङ्गमन्त्रानष्टदलेषु पूर्वोक्तकामगायत्र्या वर्णत्रयं त्रयं प्रतिदले प्रविलिख्य, दलाग्रेषु पूर्वोक्तकाममालामन्त्रस्य षट्षड्वर्णान् विभज्य विलिख्य बहिश्चतुरस्रकोणेषु कामबीजं विलिखेत्। एतदुक्तफलदं भवति। तथा—

साध्याख्यार्णपुटीकृतैस्तु मदनैः कामं लिखेद् वेष्टितं
मध्ये तारविसर्गपक्षलिपिभिर्न्नृद्ध्या सगान्तार्णया।

षष्ठैकादशषट्त्रिभिश्च लसितैरष्टच्छदैरम्बुजं
दिक्शूलाढ्यमिदं मनोहरतरे ताम्बूलपत्रे कृतम् ॥२८॥
यन्त्रमेतद्विधानेन पूजितं स्थापितानिलम् । मूलमन्त्रेण संजप्तं नारीं यां खादयेन्निशि ॥२९॥
मन्त्री सा तद्वशे तिष्ठेद्यावज्जीवं न संशयः । इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकमलं सुगन्धिद्रव्यैर्नागवल्लीदले कृत्वा तत्कर्णिकायां साध्यनामाक्षरसंपुटितैः कामबीजैर्वेष्टितं कामबीजं विलिख्य, पूर्वादिदलेषु—ॐअःआढघऊएख इत्यष्टौ वर्णानेकैकशो विलख्य दिग्दलाग्रेषु त्रिशूलं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। इति। केरलीये यन्त्रसारे—

मदनभासितमध्यमथेन्द्रियच्छदविराजितपञ्चमनोभवम् ।
स्मरशरैर्लिपिभिश्च समावृतं कुगृहकोणविराजितमन्मथम् ॥१॥
लिखतु पञ्चमनोभवयन्त्रमित्युदितमेतदशेषसमृद्धिदम् ।
कनकनिर्मितपट्टतले ततः शुभतरे दिवसे विधृतं द्रुतम् ॥२॥
सकलमानवसिद्धसुराङ्गनाहृदयरञ्जनमीप्सितसिद्धिदम् ।
रुचकपूर्वविभूषणमध्यगं विदधती वनिताप्यखिलान्नरान् ॥३॥
निजवशे प्रविधाय रमां परां समधिगम्य सुतैः सह मोदते ।
इति विलख्य च कुङ्कुमकर्दमे तदनुलिप्ततनोः सकलं जगत् ॥४॥
वशमुपैति निरीक्षणमात्रतः किमुत सान्त्वसहासनसङ्गमैः । इति।

अस्यार्थः—पञ्चदलकमलकर्णिकायां ससाध्यं कामबीजं विलिख्य, दलेषु ऐंह्रींक्लींब्लूंस्त्रीं इति पञ्चकाममन्त्रान् प्रतिदलमेकमेकं विलिख्य, बहिर्वृत्तत्रयं कृत्वा तदन्तरालयोरभ्यन्तराले पूर्वोक्तकामबीजैरावेष्ट्य, बाह्यान्तराले मातृकया संवेष्ट्य बहिश्चतुरस्रकोणेषु कामबीजं प्रतिकोणं लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

अष्टदल बनाकर उसमें षट्कोण बनावे। षट्कोण के मध्य में साध्य नाम के साथ 'क्लीं लिखे। कोणों में षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। दलों मे पूर्वोक्त कामगायत्री के तीन-तीन अक्षरों को लिखे। दलों के आगे पूर्वोक्त मालामन्त्र के छः छः अक्षरों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र के कोणों में 'क्लीं लिखे। यह पूजित एवं धारित यन्त्र तीनों लोकों को वश में करने वाला होता है।

पान के पत्ते पर सुगन्धित द्रव्य से अष्टदल कमल बनावे। उसकी कर्णिका में क्लीं से सम्पुटित साध्य नाम और क्लीं लिखे। अष्टदल के पूर्वादि दलों में ॐ अः आ ढ घ ऊ ए ख को लिखे। दलाग्रों में त्रिशूल बनावे। इस यन्त्र की पूजा करके स्थापित करके मूल मन्त्र के तीन जप से मन्त्रित करके जिस नारी को साधक खिलाता हैं, वह आजीवन उसके वश में रहती है।

केरलीय यन्त्रसार के अनुसार पञ्चदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में साध्य नाम के साथ क्लीं लिखे, पाँचों दलों में ऐं ह्रीं क्लीं ब्लूं स्त्री लिखे। इसके बाहर तीन वृत्त बनावे। केन्द्र से पहले अन्तराल में पूर्वोक्त कामबीजों को लिखकर वेष्टित करे। उसके बाद वाले अन्तराल में मातृका वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र के कोणों में 'क्लीं' लिखे। यह यन्त्र सभी समृद्धियों को देने वाला होता है, सभी मानव सिद्ध देवाङ्गनाओं का हृदयरञ्जक है, ईप्सित सिद्धिदायक है। इस यन्त्र को अपने वस्त्राभूषण में धारण करने से सभी स्त्री-पुरुष वश में होते हैं एवं वह बहुत धनवान होकर पुत्रों के साथ आनन्द करता है। इस यन्त्र को कुङ्कुम यक्ष कर्दम से लिखकर अपने देह में भी यक्ष कर्दम लगाकर देखने मात्र से ही सारे संसार को वश में कर लेता है।

प्रणवमन्त्रः सप्रयोगविधिः

अथ प्रणवस्य मन्त्रः। सारसंग्रहे—

अथ सम्यक् प्रवक्ष्यामि प्रणवाख्यं महामनुम् । पापौघध्वंसनं नानाकामकल्पमहीरुहम् ॥१॥
निःश्रेयसकरं नृणां मुनिवृन्दैस्तु सेवितम् । केशवो विष्णुतन्द्रे च बिन्दुः प्रोक्तो ध्रुवाभिधः ॥२॥

केशवः अ। विष्णु उ। तन्द्रा म। बिन्दुरनुस्वारः। एतैः प्रणवः सिद्धः। तथा—

मन्त्रस्त्रिमात्रकः प्रोक्तो मुनिर्ज्ञेयः प्रजापतिः। छन्दस्य देवीगायत्री परमात्मा च देवता ॥३॥

दक्षिणामूर्तिः—'बीजं शक्तिस्त्वनुक्रमात्। मकारं कीलक'मिति। तथा—

ह्रस्वदीर्घस्वरान्तस्थैः षडङ्गानि ध्रुवैर्विदुः। षड्भिर्व्याहृतिभिः सम्यक् सत्यहीनाभिरेव च ॥४॥
निर्मलाङ्गश्रियं विष्णुं पीतकौशेयवाससम्। सर्वतो भासमानेन तेजसा भास्करद्युतिम् ॥५॥
किरीटाङ्गदहाराख्यरशनानूपुरादिभिः। ग्रैवेयकङ्कणाद्यैश्च भूषणैर्भूषिताङ्गकम् ॥६॥
चक्रशङ्खाम्बुजगदा धारयन्तं कराम्बुजैः। कौस्तुभप्रभया दीप्तं मणिकुण्डलमण्डितम् ॥७॥
भजेऽहं सर्वसंपत्त्यै प्रफुल्लाम्बुजसंस्थितम्।

वामाधःकरमारभ्य दक्षिणाधःकरपर्यन्तमायुधध्यानम्।

संपूज्य वैष्णवं पीठं तत्रावाह्य यजेद्धरिम्। केसरेष्वङ्गपूजा स्याद् दिक्पत्रेषु यजेदिमान् ॥८॥
वासुदेवं सङ्कर्षणं प्रद्युम्नमनिरुद्धकम्। शान्तिं श्रियं सरस्वत्या रतिं कोणदलेषु च ॥९॥
दिक्पत्राग्रेषु चात्मानमन्तरात्मानमप्यथ। परमाद्यं तथात्मानं ज्ञानात्मानं च पूजयेत् ॥१०॥
कोणपत्राग्रगाः पूज्या निवृत्त्याद्याः पुरोदिताः। तद्बाह्ये शक्रमुख्यानां वज्रादीनां च पूजनम् ॥११॥

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः। हृदये परमात्मने देवतायै नमः। गुह्ये अंबीजाय नमः। पादयोः उं शक्तये नमः। नाभौ मं कीलकाय नमः। इति विन्यस्य, मम मोक्षार्थे विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, अंॐआं हृदयाय नमः। इं ॐ ईं शिरसे स्वाहा। उं ॐ ऊं शिखायै वषट्। एं ॐ ऐं कवचाय हुं। ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। अं ॐ अः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानाद्यङ्गपूजान्ते दिक्पत्रेषु—वासुदेवादीन् सशक्तिकान् संपूज्य, दलाग्रेषु—दिक्क्रमेण आत्मादीन् सशक्तिकानभ्यर्च्य लोकपालार्चादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

संदीक्षितो विधानेन कोटिसंख्यं जपेन्मनुम्। हविषा घृतसिक्तेन दशांशं जुहुयात् ततः ॥१२॥
समिद्वरैः पलाशोत्थैराज्याक्तैरथवानले। तर्पयित्वा तद्दशांशं शुद्धतोयैर्यथाविधि ॥१३॥
आत्माभिषेचनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः। गुरुमभ्यर्च्य वित्ताद्यैः प्रणम्य परितोषयेत् ॥१४॥
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री कृतकृत्यो न संशयः। घृतं हविष्यं शालींश्च तिलांश्च समिधोऽमृतम् ॥१५॥
क्रमेण जुहुयाद्यस्तु मन्त्रेणानेन मन्त्रवित्। अभीष्टसिद्धिस्तस्य स्यादिह लोके परत्र च ॥१६॥

इत्थं मन्त्रवरं जपार्चनहुतैर्यः सेवते साधकः सद्भक्त्या प्रणवं निराकुलमतिर्विध्वस्तपापव्रजः।
पत्नीपुत्रविशिष्टमित्रसहितः सत्संपदा संयुतो लोकेऽस्मिन् पुनरप्यवाप्तविमलज्ञानो व्रजेत्सद्गतिम् ॥१७॥

इति श्रीकृष्णप्रकरणम्।

प्रणव मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार प्रणव नामक महामन्त्र पाप समूहों का नाशक एवं नाना कामनाओं की पूर्ति में कल्पवृक्ष के समान हैं। मनुष्यों के लिये श्रेयष्कर यह मन्त्र मुनिवृन्दों से सेवित है।

यह अ ऊ म अर्द्धचन्द्र एवं अनुस्वार से बनता है। इसका स्वरूप 'ॐ' है। इसे त्र्यक्षर कहते हैं। इसके ऋषि प्रजापति, छन्द देवी गायत्री एवं देवता परमात्मा कहे गये हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे देवीगायत्री छन्दसे नमः, हृदये परमात्मने देवतायै नमः, गुह्ये अं बीजाय नमः, पादयोः ॐ शक्तये नमः, नाभौ मं कीलकाय नमः। अपने मोक्ष के लिये इसका विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास किया जाता है—अ ॐ आं हृदयाय नमः। इं ॐ ईं शिरसे स्वाहा। उं ॐ ऊं शिखायै वषट्। एं ॐ ऐं कवचाय हुं। ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। अं ॐ अः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करके निम्नवत् ध्यान करे—

निर्मलाङ्गश्रियं विष्णुं पीतकौशेयवाससम्। सर्वतो भासमानेन तेजसा भास्करद्युतिम्।।
किरीटाङ्गदहाराख्यरशनानूपुरादिभि:। ग्रैवेयकङ्कणाद्यैश्च भूषणैर्भूषिताङ्गकम्।।
चक्रशङ्खाम्बुजगदा धारयन्तं कराम्बुजै:। कौस्तुभप्रभया दीप्तं मणिकुण्डलमण्डितम्।।
भजेऽहं सर्वसंपत्त्यै प्रफुल्लाम्बुजसंस्थितम्।

अष्टदल कमल के केसर में षडङ्ग पूजन करे। दलों में पूर्वादि क्रम से वासुदेव सङ्कर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध की पूजा करे। कोणों में शान्ति, श्री, सरस्वती और रति की पूजा करे। दलाग्रों में आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, ज्ञानात्मा की पूजा पूर्वादि दिशाओं के क्रम से करे। कोण दलाग्रों में निवृत्ति प्रतिष्ठा विद्या और शान्ति की पूजा करे। उसके बाहर चतुरस्र में लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे।

विधिवत् दीक्षा लेकर मन्त्र का एक करोड़ जप करे। घृतसिक्त खीर से दशांश हवन करे, अथवा आज्य सिक्त पलाश फूलों से हवन करे। दशांश तर्पण शुद्ध जल से करे। मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन करावे। गुरु को धनादि देकर प्रणाम करके सन्तुष्ट करे। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर साधक कृतकृत्य होता है। घी हविष्य शालि तिल अमृत समिधा से अलग-अलग हवन इस मन्त्र से करने पर मन्त्रवित् को संसार में अभीष्टसिद्धि होती है और परलोक के उत्तम लोक में उसका वास होता है। जो साधक इस श्रेष्ठ मन्त्र का सेवन जप पूजन हवन से भक्तिपूर्वक करता है, उसे निराकुल मति प्राप्त होती है, वह सभी पापों से रहित होकर पत्नी, पुत्र, विशिष्ट मित्र एवं सत्संपदा से युक्त होकर इस संसार में विमल ज्ञान प्राप्त करता है एवं अन्त में सद्गति को प्राप्त होता है।

सप्रयोग: कार्तवीर्यमन्त्रविधानम्

अथ कार्तवीर्यमन्त्रा: उड्डामरेश्वरतन्त्रे—

देव्युवाच

देवदेव महादेव देवारिबलसूदन। देववर्द्धन देवेन्द्रवन्दितेन्दुशिखामणे ।।१।।
पृच्छे भवन्तं भगवान् कार्तवीर्यस्य भूपते:। माहात्म्यं मन्त्रराजस्य विस्तरेण ब्रवीतु मे ।।२।।
कार्तवीर्यमनोर्देव विधानं वक्तुमर्हसि। सरहस्यं महापुण्यं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वत: ।।३।।

ईश्वर उवाच

शृणु देवि महामन्त्रं विस्तरेणाखिलार्थदम्। चौरमारीविपक्षाणां विशेषेणापकृन्तनम् ।।४।।
महद्वश्यकरं शीघ्रं राज्ञां विजयवर्धनम्। भजतां सर्वपापघ्नं सर्वसौख्यकरं परम् ।।५।।
सर्वसंपत्करं मन्त्रमुद्धरिष्येऽधुना प्रिये। इन्दो रुद्रार्णरूढोऽग्नि: सतारोऽर्धेन्दुनादयुक् ।।६।।
तन्मन्त्रबीजं मुनिभिर्गदितं क्षोभकारकम्। तस्य साग्नेर्महामायाबिन्दुनादैश्च सङ्गमम् ।।७।।
इच्छन्त्येके महात्मानो लोकवश्याभिकाङ्क्षिण:। तस्य साग्नेर्नादबिन्दुयुक्तस्य परमेश्वरि ।।८।।
इच्छन्त्यन्ये महात्मानो भौतिकेन समागमम्। (तस्य साग्नेर्भौतिकार्धचन्द्रेण च समागमम् ।।९।।
इच्छन्त्यन्ये सुवाक्सिद्धिकामा देवि महर्षय:।) इत्थं स्वरुच्या तद्बीजं समुद्धृत्य च मानव: ।।१०।।
द्वितीयमुद्धरेद्बीजं सर्वशत्रुविनाशनम्। द्वितीयबीजं वक्ष्यामि प्रतिलोमेन सुन्दरि ।।११।।
सूर्याद्विंशतिवर्णस्तु तत्तृतीयं त्रिमूर्तिना। संयुक्तं चार्धशशिना नादेन च पुन: प्रिये ।।१२।।
सेन्द्रं षष्ठं द्वितीयात्तु प्रतिलोमेन मायया। नादेन बिन्दुना युक्तं तृतीयं लोकवश्यदम् ।।१३।।
तृतीयं प्रथमात् तस्मात् चतुर्थेन चतुर्थकम्। वामकर्णेन्दुनादेन प्रोक्तं संस्तम्भनं क्षणात् ।।१४।।
मुखवृत्तं बिन्दुनादसंयुक्तं परमेश्वरि। पञ्चमं च महाबीजं क्षणादाकृष्टिकारकम् ।।१५।।
व्योमार्धेन्द्वग्निदेव्या च युक्तं षष्ठं समीरितम्। उद्धरेत् सप्तमं च क्रों बिन्दूत्थं बिन्दुवह्निना ।।१६।।
करणेन च संयुक्तमष्टमं मुनिभि: स्मृतम्। हुंफट् च कार्तवीर्यार्जुनायेत्युक्त्वा नतिं वदेत् ।।१७।।

विंशत्यर्णः स्मृतो मन्त्रस्तारादिर्मुनिभिः स्मृतः। एकोनविंशत्यर्णः स्याद्वितारो यदि भाव्यते ॥१८॥
कार्तवीर्यार्जुनस्यैतन्महासामर्थ्यदं प्रिये। इति।

अग्नी रेफः, स इन्दोः ठकाराद्यो रुद्रार्ण एकादशोऽर्णः फकारस्तेनारूढः। यद्वा, पुरस्तात् प्रतिलोमेनेति स्वयमुक्तत्वादत्राप्यध्याहारः। इन्दुः सकारस्तस्माद्वा प्रतिलोमेनैकादशार्णः फकारः। सतार ओकारयुक्तः। अत्र तारशब्देन केवलस्त्रयोदशस्वर उच्यते। अर्धेन्दुनादयुगिति स्वयमुक्तत्वात्। अर्धेन्दुरर्धचन्द्रः। नादो बिन्दुः। एतस्यैव भेदमाह, तस्येति—अत्र तच्छब्देन फकारो गृह्यते साग्नेरिति स्वयमुक्तत्वात्। महामाया ईकारः। तेन तद्बीजस्थं त्रयोदशस्वरमपास्य तत्स्थाने ईकारो योजनीय इत्यर्थः। पुनः प्रकारान्तरमाह—भौतिक ऐकारः, इकारस्थाने ऐकारो योजनीय इत्यर्थः। द्वितीयमिति—सूर्यान्मकारात् प्रतिलोमेन विलोमेन विंशतितमो वर्णश्चकारः। तत्तृतीयं मात्तृतीयमक्षरमनुलोमेन रेफः। त्रिमूर्तिरीकारः। अर्धशशिना इत्यादि प्राग्वत्। तेन च्रीं इति सिद्धम्। द्वितीयाद् द्वितीयबीजाक्षराच्चकारात् प्रतिलोमेन षष्ठमक्षरं ककारस्तत् सेन्द्रं लकारसहितं, मायया ईकारेण, नादेन बिन्दुना च युक्तमेतेन कामबीजमुक्तं। प्रथमात् प्रथमबीजात् फकारात् तृतीयं भकारः। तस्माद्भकाराच्चतुर्थेन रेफेण वामकर्णेन ऊकारेण नादेन बिन्दुना च युक्तं, तेन भ्रूं इति जातं। मुखवृत्तमाकारो बिन्द्वादि प्राग्वत्, तेन आं इति। व्योम हकारः, अग्नी रेफः, देवी ईकारः, अर्धेन्द्वादि प्राग्वत् तेन मायाबीजमुद्धृतं। क्रों स्वरूपम्। बिन्दुः रेतस्तदुत्थमस्थि तस्य रेतोंऽशत्वात्। तथा च श्रुतिः—'अस्थिस्नायुमज्जानः पितृतः' इति। तेन, तद्वाचकमक्षरं शकारो गृह्यते। वह्नी रेफः। करणेन चतुर्थस्वरेण ईकारेण युक्तः। बिन्दुनादौ प्राग्वत्, तेन श्रीं इत्युद्धृतं। हुंफट् स्वरूपं। कार्तवीर्यार्जुनाय स्वरूपं। नतिर्नमः। तथा—

मन्त्रस्यास्य पुरा प्रोक्तो मुनिभिर्मुनिरम्बिके। दत्तात्रेय ऋषिश्छन्दोऽनुष्टुबस्य मनोः स्मृतम् ॥२०॥
देवता चार्जुनो नाम कार्तवीर्यपदादिकः। मूलबीजैः स्वरारूढैः कुर्यात् पञ्चाङ्गकं सुधीः ॥२१॥

द्वाभ्यां द्वितीयस्वरसंयुताभ्यां द्वाभ्यां तुरीयस्वरसंयुताभ्याम्।
द्वाभ्यां च षष्ठस्वरसंयुताभ्यां द्वाभ्यां तथा द्वादशसंयुताभ्याम् ॥२२॥
द्वाभ्यां च वर्मास्त्रपदाक्षराभ्यामङ्गानि कृत्वाप्यवशिष्टवर्णैः।
संव्यापयेदात्मनि संयतात्मा कार्ताक्षराद्यैर्नवभिर्ध्रुवाद्यैः ॥२३॥

द्वितीयस्वरः आ। तुरीयस्वरः ई। षष्ठस्वरः ऊ। द्वादशस्वरः ऐ। एतदारूढैरित्यर्थः। तथा—

हृदुदरनाभिजघनगुह्यपदद्वयसोरुजानुजङ्घाख्ये। मूर्धनि तुङ्गभ्रूश्रुतिलोचननासास्यकण्ठबाहौ च ॥२४॥
दशबीजानि प्रणवद्वयमध्यस्थानि प्रविन्यसेच्छिष्टान्। बिन्द्वन्तिकान् ध्रुवादीनुक्तस्थानेषु प्रविन्यसेदेवम् ॥२५॥

ध्यायेच्च मन्त्रमूर्तिं स्वात्मैक्येनादरात् समाहितधीः।
रक्षायै च भयेभ्यो वाञ्छितसिद्ध्यै धनाप्तये सुचिरम् ॥
अव्यात् सर्वभयात् प्रकाशिततनुः प्रद्योतनोद्द्योतितः
स्वर्णस्रक्परिवीतकन्धरधरो रक्तांशुकोष्णीषवान्।
नानाकल्पविभूषितः करसहस्रार्धात्तबाणासनो
बाणात्तार्धसहस्रबाहुरनिशं भूवल्लभो नः प्रभुः ॥२७॥
सप्तद्वीपैकनाथः सवितृसमरुचिः सर्वदुष्टान्तको नः
पायादब्जायताक्षो रथवरनिलयः स्थूलकायोऽतिभीमः।
चापान्तेषु त्रिलोकीं करधृतधनुषां निस्वनैस्त्रासयन् यः
स श्रीमान् कार्तवीर्यो निखिलनृपनताङ्घ्र्यम्बुजः क्षिप्रकारी ॥२८॥

एवं स्मरेन्नित्यमतीव भक्त्या समर्चयेद् हैहयवंशनाथम्।
गन्धादिभिर्वैष्णवपीठमध्ये स्वीयाङ्गमूर्त्यष्टकशक्तियुक्तम्॥२९॥
तस्याङ्गमूर्तयः पञ्च स्फटिकाभा मनोरमाः। खड्गचर्मधरा वीराः सर्वाभरणभूषिताः॥३०॥
बाणबाणासनधरा मूर्तयो रक्तरोचिषः। सर्वाभरणसंयुक्ता ध्येयाः सर्वसमृद्धये॥३१॥
चौरमार्यरिसुरारिपदाद्यान् दिक्षु तन्मदविभञ्जनकाख्यान्।
दुष्टदुःखदुरितामयाद्यानाह्वयानभियजेच्च विदिक्षु॥३२॥
क्षेमङ्करी वश्यकरी श्रीकरी च यशस्करी। आयुष्करी तथा प्रज्ञाकरी विद्याकरी तथा॥३३॥
धनङ्करी च पूर्वादिदिक्षु पूज्याः सितप्रभाः।
वरदाम्बुजलसत्करा रक्तांशुकहारकुण्डलोल्लसिताः।
हैहयनाथमनोज्ञा ध्येयाः सौन्दर्यलालिताः प्रमदाः॥३४॥
लोकेशाद्या बहिः पूज्या गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। षोडशैरुपचारैस्तु पूजयेद्यो दिने दिने॥३५॥
कार्तवीर्यं महावीर्यं परिचारप्रियं प्रभुम्। सर्वान् कामानवाप्येह प्राप्यते हरिमन्दिरम्॥३६॥
एवं यः पूजयित्वा दिनमनु विधिनैवामुना मन्त्रमुख्यं
जप्याद्भक्त्या स विन्द्याद् बलधनवसुशौर्यायुरारोग्यविद्याः।
श्रीमेधाकान्तिपुष्टीर्धृतिमतिवचसां भाजनं स्यान्नरेन्द्रै-
र्नारीभिः पूजितः स्यादनुगतभुवनश्चाप्रधृष्यश्च लोकैः॥३७॥ इति।

अथः प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि दत्तात्रेयऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, मूलमन्त्रेण करयोर्व्यापकं विन्यस्य, फ्रांव्रां हृदयाय नमः। क्लींभ्रीं शिरसे स्वाहां ऊंहूं शिखायै वषट्। क्रैंश्रैं कवचाय हुं। हुंफट् अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तास्वङ्गुलीषु विन्यस्य, नेत्ररहितेषु हृदयाद्यस्त्रान्तेषु पञ्चाङ्गेषु च विन्यस्य, ॐकार्तवीर्यार्जुनाय नमः इति सर्वाङ्गे व्यापकं कृत्वा, हृदये ॐ फ्रों ॐ नमः। उदरे ॐ व्रीं ॐ नमः। नाभौ ॐ क्लीं ॐ नमः। जघने ॐ भ्रूं ॐ नमः। गुह्ये ॐ आं ॐ नमः। पादयोः ॐ ह्रीं ॐ नमः। ऊर्वोः ॐ क्रों ॐ नमः। जानुनोः ॐ श्रीं ॐ नमः। जङ्घयोः ॐ हुं ॐ नमः। मूर्ध्नि ॐ फट् ॐ नमः। शिखायां ॐ कां नमः। भ्रूमध्ये ॐ र्तं ॐ नमः। श्रुत्योः ॐ वीं ॐ नमः। नेत्रयोः ॐ र्यां ॐ नमः। नासायां ॐ र्जुं ॐ नमः। मुखे ॐ नां ॐ नमः। कण्ठे ॐ यं ॐ नमः। दक्षबाहौ ॐ नं नमः। वामबाहौ ॐ मं नमः। इति विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते प्रागुक्तं वैष्णवं पीठमभ्यर्च्य, तत्र देवमावाह्याङ्गार्चान्तं प्राग्वत् कृत्वाष्टदलेषु देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन दिग्दलेषु—चौरमदविभञ्जनाय नमः। मारीमदविभञ्जनाय नमः। अरिमदविभञ्जनाय नमः। सुरारिमदविभञ्जनाय नमः। विदिग्दलेषु—दुष्टमदविभञ्जनाय नमः। दुःखमदविभञ्जनाय नमः। दुरितमदविभञ्जनाय नमः। आमयमदविभञ्जनाय नमः। इति संपूज्य, दलाग्रेषु—ॐ क्षेमङ्कर्य्यै नमः। वश्यकर्य्यै नमः। श्रीकर्य्यै नमः। यशस्कर्य्यै नमः। आयुष्कर्य्यै नमः। प्रज्ञाकर्य्यै नमः। विद्याकर्य्यै नमः। धनकर्य्यै नमः इति देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन संपूज्य, तद्बहिश्चतुरस्रे प्राग्वल्लोकपालांस्तदस्त्राणि च संपूज्य धूपदीपादिसर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

इत्थं ध्यात्वा मन्त्रवर्य्यं प्रजप्य लक्षावृत्त्या मन्त्रवित् प्राप्तदीक्षः।
नद्यास्तीरे गुर्वनुज्ञानुपूर्वं पश्चात् कुर्याच्चोरपीडाप्रयोगान्॥३८॥
कुम्भोदकासिक्ततनुः प्रजप्य मन्त्रेण होमं प्रकरोति मन्त्री।
पयोन्धसाग्नौ तिलतण्डुलैर्वा दशांशमानं सघृतैश्च मन्त्री॥३९॥ इति।

एष लक्षजपः कृतयुगपरः। कलावेतच्चतुर्गुणजपः कार्यः। इति प्राग्वत्तर्पणं यथावत्कुर्यादिति। तथा—

(एवं सिद्धमनुर्नरः सुविहितान् कुर्यात् प्रयोगान् प्रिये)
वश्यादीन् विधिवद्विशिष्टचरितश्चौरापहृत्यै भृशम्।
दुष्टानामपि वक्ष्यमाणविधिना मन्त्रैर्हुतैस्तर्पणै-
र्ध्यानैर्मन्त्रविशेषकैश्च मतिमान् गुर्वाज्ञया तत्परः ॥४०॥

कार्तवीर्य मन्त्र—उड्डामरेश्वर तन्त्र में श्रीदेवी ने ईश्वर से कहा—हे देवदेव, महादेव, देवारिखिलसूदन, देववर्द्धन, देवेन्द्रवन्दित, चन्द्रशेखर, भगवन्! आपसे विनती करती हूँ कि राजा कार्तवीर्य का माहात्म्य और उनके श्रेष्ठ मन्त्र को विस्तार से मुझसे कहिये। कार्यवीर्य के पुनीत मन्त्रविधान को रहस्य के साथ में सुनना चाहती हूँ।

ईश्वर ने कहा—देवि! सुनो, अब मैं सभी इच्छाओं को पूरा करने वाले महामन्त्र को कहता हूँ। यह चोर, मारी और विपक्षियों का विशेष रूप से विनाशक है। यह महावश्यकर और राजाओं के लिये शीघ्र विजयवर्द्धक है। इसे भजने वालों के सभी पापों का नाश होता है और उन्हें सभी सुख मिलते हैं। सर्वसुख एवं सम्पत्कर विंशाक्षर मन्त्र है—ॐ फ्रों व्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः। इस मन्त्र को पहले मुनियों ने मुनियों को कहा। इसके ऋषि दत्तात्रेय, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता कार्तवीर्यार्जुन हैं। इसकी पूजाविधि इस प्रकार है प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दत्तात्रेयऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय देवतायै नमः। ममाभीष्टसिद्धये विनियोगः। मूल मन्त्र से हाथों में न्यास करे। तब अंग न्यास करे। फ्रां व्रां हृदयाय नमः। क्लीं भ्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। क्रैं श्रैं कवचाय हुं। हुं फट् अस्त्राय फट्। इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों से अंगूठों से कनिष्ठाओं तक में न्यास करे। फिर हृदय से अस्त्र तक नेत्र को छोड़कर न्यास करे। ॐ कार्तवीर्यार्जुनाय नमः से सभी अङ्गों में व्यापक न्यास करे।

मन्त्र वर्ण न्यास—ॐ फ्रों ॐ नमः (हृदय), ॐ व्रीं ॐ नमः (उदर), ॐ क्लीं ॐ नमः (नाभि), ॐ भ्रूं ॐ नमः (जघन), ॐ आं ॐ नमः (गुह्य), ॐ ह्रीं ॐ नमः (पैर), ॐ क्रों ॐ नमः (ऊरु), ॐ श्रीं ॐ नमः (जानु), ॐ हुं ॐ नमः (जङ्घा), ॐ फट् ॐ नमः (मूर्धा), ॐ कां नमः (शिखा), ॐ र्तं नमः (भ्रूमध्य)। ॐ वी नमः (कर्ण), ॐ र्यां नमः (नेत्र), ॐ र्जुं नमः (नासिका), ॐ नां नमः (मुख), ॐ यं नमः (कण्ठ), ॐ नं नमः (दक्ष बाहु), ॐ मं नमः (वाम बाहु)। तब ध्यान करे—

अव्यात् सर्वभयात् प्रकाशिततनुः प्रद्योतनोद्द्योतितः स्वर्णस्रक्परिवीतकन्धरधरो रक्तांशुकोष्णीषवान्।
नानाकल्पविभूषितः करसहस्रार्धात्तबाणासनो बाणात्तार्धसहस्रबाहुरनिशं भूवल्लभो नः प्रभुः॥
सप्तद्वीपैकनाथः सवितृसमरुचिः सर्वदुष्टान्तको नः पायादब्जायताक्षो रथवरनिलयः स्थूलकायोऽतिभीमः।
चापान्तेषु त्रिलोकीं करधृतधनुषां निस्वनैस्त्रासयन् यः स श्रीमान् कार्तवीर्यो निखिलनृपनताङ्घ्र्यम्बुजः क्षिप्रकारी॥

ध्यान के बाद आत्मपूजा करे। पूर्वोक्त वैष्णव पीठ पर पूजा करे। अष्टदल बनाकर उसके मध्य में देव का आवाहन करके अंग पूजा करे। दलों में देव के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से पूर्वादि दिशा के दलों में चौरमदविभंजनाय नमः, मारीमदविभंजनाय नमः, अरिमदविभंजनाय नमः, सुरारिमदविभञ्जनाय नमः से पूजन करे। कोणदलों में दुष्टमदविभंजनाय नमः, दुःखमदविभंजनाय नमः, दुरितमदविभंजनाय नमः, आमयमदविभंजनाय नमः से पूजन करे। इसके बाद दलाग्रों में देवाग्रादि प्रादक्षिण्य क्रम से ॐ क्षेमंकर्यै नमः, वश्यकर्यै नमः, श्रीकर्यै नमः, यशस्कर्यै नमः, आयुष्कर्यै नमः, प्रज्ञाकर्यै नमः, विद्याकर्यै नमः, धनकर्यै नमः से पूजन करे।

चतुरस्र में पूर्ववत् इन्द्रादि लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार गन्ध-पुष्पाक्षतादि से षोडशोपचार पूजा जो प्रतिदिन करता है, उसकी सभी कामनाओं को महावीर्य परिचारप्रिय प्रभु कार्तवीर्य पूरा करते हैं और अन्त में वह वैकुण्ठ जाता है। इस विधान से जो इस श्रेष्ठ मन्त्र से कार्तवीर्य की पूजा करता है और भक्ति से जप करता है, उसे बल-धन-शौर्य-आयु-आरोग्य-विद्या-श्री-मेधा-कान्ति-पुष्टि-धृति एवं मति वाणी की प्राप्ति होती है। वह राजा और नारियों का

पूज्य होता है एवं चौदहों भुवन तथा सातों लोक उसके अनुगत होते हैं।

इस प्रकार के ध्यान-पूजन के बाद दीक्षित साधक एक लाख मन्त्र-जप नदी के किनारे गुरु से आज्ञा लेकर करे। तदनन्तर चोर पीड़ा प्रयोगों को करे। मन्त्रित कुम्भ जल से स्नान करके जो दूध वाले वृक्ष को लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि में घी एवं तिल-तण्डुल से दशांश हवन करता है, उसे यह मन्त्र सिद्ध होता है।

इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से साधक विहित प्रयोग करे। गुरु से आज्ञा लेकर चोरों, दुष्टों को वश में करने के लिये विहित विधि से तर्पण एवं ध्यान करके वश्य आदि प्रयोगों को करना चाहिये।

कार्तवीर्ययन्त्रोद्धारनिरूपणम्

लिखेदष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम्। वृत्तं बहिर्भूपुराढ्यं वज्राष्टकविभूषितम् ॥४१॥
तद्बीजं कर्णिकामध्ये साध्याख्याकर्मसंयुतम्। लिखेत् समीरबीजं च सहतारगतं प्रिये ॥४२॥
सवाग्भवं च पूर्वादिपत्रेषु विलिखेत्ततः। सवर्मान्तानि बीजानि शिष्टार्णानन्तरालके ॥४३॥
केसरेषु स्वरानूष्मवर्णयुक्तान् समर्पयेत्। वृत्तं प्रवेष्टयेद्वर्णैः कादिभिश्चोष्मवर्जितैः ॥४४॥
भूमिकोणचतुष्केऽथ भूतवर्णान् समर्पयेत्। संस्थाप्य विधिवत् प्राज्ञः कलशं सम्यगर्चयेत् ॥४५॥
तोयाभिषेकः कर्तव्यो नृणामीहितसिद्धये। वन्ध्याया पुत्रसंप्राप्त्यै दीक्षायै (यशसे) चायुषे तथा ॥४६॥
धनार्थं रोगनाशाय चोरशान्त्यै विशेषतः। वश्याय च हितार्थं वाक्सिद्ध्यै वाणिज्यसिद्धये ॥४७॥
तद्यन्त्रारूढकुम्भाम्बुनाभिषिक्तस्य सुन्दरि। किं न सिध्यति लोकेऽस्मिन् कामिनां मनसेप्सितम् ॥४८॥
तद्यन्त्रस्थापनाद्राज्यं ग्रामं पुरमथापि वा। रक्षयेच्चाभितोऽरिभ्यो मन्त्रः रोगविषादितः ॥४९॥
(सर्वभूतादिसंत्रासकृदेतन्नगनन्दिनि ।) न प्रकाश्यं हि मूर्खाय स्तेनाय पिशुनाय च ॥५०॥
गुरुप्रियाय धीराय दक्षाय शुद्धचेतसे। ईर्ष्याद्वेषविहीनाय देयं स्वाचारशालिने ॥५१॥
हिंसारतान् दुष्टचित्तान् द्वेषयेच्च परस्परम्। कर्षयेद्भ्रमयेच्चौरान् दमयेच्च ज्वरादिकान् ॥५२॥
तत्तद्बीजार्पणाद् देवि क्षिप्रं सिध्यन्ति मन्त्रिणः। बहुनोक्तेन किं देवि मन्त्रोऽयमखिलार्थदः ॥५३॥

अस्यार्थः—यथोक्तलक्षणमष्टदलकमलं कृत्वा, तद्बहिर्वृत्तं तद्बहिरष्टवज्रयुक्तं चतुरस्रं च कृत्वा, तत्कर्णिकायां ससाध्यं कार्तवीर्यबीजं यमिति वायुबीजं वाग्भवं च प्रणवोदरे विलिख्य, तत्केसरेषु द्वन्द्वशः स्वरान् शषसह इति वर्णांश्चैकैकशो द्विरावृत्त्या विलिख्य, पूर्वादिदलेषु द्वितीयबीजादिहुंबीजान्तानि अष्टौ बीजानि प्रतिदलमेकैकशो विलिख्य, अन्तिमदल एव फट्कारं (विलिख्यावशिष्टानवान्तराले विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तद)न्तरालवीथ्यां ककारादिक्षकारान्तैः शषसहवर्जितैरावेष्ट्य, चतुरस्रस्य कोणचतुष्टये तत्तत्कार्योपयोगिनो भूतवर्णान् दश दश विलिख्य, तत्र दीक्षोक्तविधिना कुम्भं संस्थाप्य, तत्र देवमावाह्य साङ्गं सावरणं संपूज्य, मूलमष्टोत्तरसहस्रं तत्कुम्भं स्पृशञ्जपित्वा तत्कुम्भजलेनाभिषेकादुक्तफलसिद्धिर्भवतीति। भूतवर्णास्तु—शान्तौ (ऋॠओघझढधभवस इति जलवर्णा दश लेख्याः। वश्याकर्षणे तु इईएखछठथफरक्ष इत्यग्निवर्णा दश लेख्याः। स्तम्भने उऊओगजडदबलळ इति भूमिवर्णा दश लेख्याः। उच्चाटने अआऐकचटतपयष इति वायुवर्णा) दश लेख्याः। विद्वेषणमारणयोः ऌॡअंङञणनमशह इत्याकाशवर्णा दश लेख्या इति। (अत्र भूतवर्णलेखनप्रकारस्तु आग्नेयकोणादारभ्य प्रादक्षिण्येन चतुर्षु कोणेषु द्वित्रिक्रमेण विभज्य दशववँर्णाल्लिखेदिति संप्रदायः)।

अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर वृत्त तब आठ वज्रयुक्त चतुरस्र बनावे, कर्णिका के मध्य में साध्य नाम कार्तवीर्यबीज एवं वायुबीज यं एवं ॐ के उदर में लिखे। दलों की कर्णिकाओं में दो-दो स्वरों को लिखे। श ष स ह को दो आवृत्ति में लिखे। पूर्वादि दलों में द्वितीय बीज फ्रों से हुं तक के बीजों को लिखे। अन्तिम दल में फट् लिखे। शेष मन्त्राक्षरों को दलों की सन्धियों में लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनावे। अन्तराल वीथि में 'शषसह' को छोड़कर क से क्ष तक के वर्णों

को लिखे। चतुरस्र के चारो कोणों में कार्य के अनुसार उपयोगीभूतवर्णों को दश-दश करके लिखे। दीक्षोक्त विधि से कुम्भ स्थापित करे। उसमे देव का आवाहन करके सांग सावरण पूजा करे। मूल मन्त्र का जप एक हजार आठ कुम्भ को स्पर्श किए हुए करे। उस कुम्भजल से स्नान करने पर अभीष्ट की सिद्धि होती है। वन्ध्या को पुत्र प्राप्ति होती है, दीर्घायु एवं यश प्राप्त होता है, धन की प्राप्ति, रोगनाश, चोर शान्ति, वश्यकर्म, वाक्सिद्धि एवं व्यापारसिद्धि के लिये उक्त कुम्भजल से स्नान करना चाहिये। इस कुम्भ जल के स्नान से सब कुछ सिद्ध किया जा सकता है। इस यन्त्र को स्थापित करने से राज्य, ग्राम अथवा नगर की चारो ओर से रक्षा होती है। यह अत्यन्त गुप्त है; अतः मूर्ख, चोर, द्वेषी आदि को इसे नहीं बताना चाहिये। गुरुभक्त, धीर, दक्ष, शुद्ध चित्त वाले, ईर्ष्याद्वेष से रहित आचारवान् को ही इसे देना चाहिये। यह मन्त्र सकल कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

भूत वर्ण—शान्ति कर्म मे ऋ ॠ ओ घ झ ढ ध भ व स—ये दश जल वर्ण हैं। इन्हें लिखे। वश्य आकर्षण में इ ई ए ख छ ठ थ फ र क्ष—ये अग्नि वर्ण लेख्य हैं। स्तम्भन में उ ऊ ओ ग ज ड द ब ल ळ—दश भूमि वर्ण लेख्य हैं। उच्चाटन में अ आ ऐ क च ट त ष य श—ये वायु वर्ण लेख्य हैं। विद्वेषण मारण में लृ लॄ अं ङ ण न म श है—ये दश अकाश वर्ण लेख्य हैं। भूत वर्णों का लेखन कार्य आग्नेय कोण से प्रारम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से चारो कोणों में दो-दो-तीन-तीन के क्रम से लिखा जाता हैं।

कार्तवीर्यमन्त्रदशविधभेदनिरूपणम्

तथा—

कृतवीर्यात्मजस्याथ मन्त्रभेदान् हि मन्त्रिणः। हिताय देवि वक्ष्यामि दशधैकोऽपि विद्यते ॥५४॥
कार्तवीर्यस्य मन्त्राणामृषिरेकः स्मृतः पुरा। दत्तात्रेयो महाप्राज्ञः साक्षान्नारायणांशजः ॥५५॥
देवता च स्वयं प्रोक्तो मन्त्रभेदेषु सुन्दरि। असौ चक्रहरेरंशादुत्पन्नो हैहयान्वये ॥५६॥
आज्ञया देवदेवस्य सर्वदुष्टप्रशान्तये। यस्मिन् गर्जति दैत्येन्द्रस्त्रीणां गर्भा बलाद्वशम् ॥५७॥
प्रच्यवन्ति स चक्राख्यो हरिरासीत् क्षितौ स्वयम्। कृतवीर्यस्य भार्यायां माहिष्मत्यां पुरोत्तमे ॥५८॥
रेवातीरे समुत्पन्नो नाम्नार्जुन इतीरितः। दत्तात्रेयात् प्राप्तविद्यस्तत्प्रियश्च द्विजप्रियः ॥५९॥
राजराजो महातेजाः सहस्रकिरणोपमः। सहस्रबाहुर्दोर्दण्डः स विष्णोरंशसंभवः ॥६०॥
शीघ्रगामी महावीर्यः सर्वदुष्टान्तकः प्रभुः। सर्वदा सर्वदुष्टघ्नः पुरस्थो बहुरूपवान् ॥६१॥
सप्तद्वीपवतीं पृथ्वीं तपोबलपराक्रमैः। दमयन् सर्वदुष्टान् यो ररक्ष स हरिः स्वयम् ॥६२॥
एकस्य मूलमन्त्रस्य दशधास्य महात्मनः। कार्तवीर्यस्य वक्ष्यामि भेदांश्च शृणु सुन्दरि ॥६३॥
छन्दोभेदांश्च देवेशि ध्यानभेदांश्च तत्त्वतः। कार्तस्यादौ तस्य मूलं जपेत् सर्वार्थसिद्धये ॥६४॥
दशाक्षरविधानेन अवशिष्टाक्षरान् प्रिये। मूलबीजं च चामुण्डाबीजयुक्तं नवाक्षरम् ॥६५॥
जपेत् संस्तम्भनायाशु चोराणां वसुहारिणाम्। मूलेन सह मच्छत्रुबीजं देवि नवाक्षरम् ॥६६॥
प्रजपेन्नरनारीणां नृपाणां मोहनाय च। स्वमूलं चैव रावार्णसहितं तु नवाक्षरम् ॥६७॥
(भ्रामणोच्चाटनद्वेषमारणाय जपेद्बुधः। मन्त्री स्वमूलं मायाद्यबीजयुक्तं नवाक्षरम् ॥६८॥
पापक्षयाय वश्याय मोहनाय शुभाय च। स्वमूलं पाशबीजेन युक्तं देवि नवाक्षरम्)॥६९॥
आकर्षणाय चौराणां क्षिप्रं देवि न संशयः। (स्वमूलं मायया चैव सहितं तु नवाक्षरम् ॥७०॥
उच्चाटयेच्च दुष्टानां हिंसापैशुन्यचेतसाम्। स्वबीजं पाशबीजेन सहितं तु नवाक्षरम् ॥७१॥
नरनारीनृपाणां च वश्यकृद्भवति ध्रुवम्)[१]। मूलमङ्कुशबीजेन पुटितं तु नवाक्षरम् ॥७२॥
वाक्स्तम्भनाय गमनस्तम्भनाय जपेत् क्षणात्। वर्मास्त्राक्षरयोर्मध्यगतं मूलं नवाक्षरम् ॥७३॥

---
१. क्षेपकम्।

जपेदुन्मादनायाशु स्तम्भनायारिमोहनम् । वृक्षाग्रस्थितचोराणां स्तम्भनाय विशेषत: ।।७४।।
मूर्धसंस्फोटनायालं चौराणां देव्यसंशय: । स्वबीजं कमलाबीजपुटितं तु नवाक्षरम् ।।७५।।
यो जपेदब्दमात्रेण स स्याद्वैश्रवणोपम: । मूलं वाग्भवबीजेन यो जपेल्लक्षमात्रकम् ।।७६।।
मन्त्रवर्णैस्तु सर्वैर्वा स कवित्वमवाप्नुयात् । एतदेकमपि प्रोक्तं दशधोक्तप्रभेदत: ।।७७।।
तेषामन्यन्महामन्त्रं प्रोक्तमेतद् दशाक्षरम् । तस्य च्छन्दो विराडत्र शेषाणां शृणु तत्त्वत: ।।७८।।
एकादशाक्षरा: सर्वे शेषास्तव समीरिता: । शेषाणां त्रैष्टुभं प्रोक्तं मुनिभिर्वेदवादिभि: ।।७९।।
सर्वेषां कार्तवीर्यस्य मन्त्राणां जपकर्मणि । आदौ तारेण संयोज्य जप्तव्यास्तु मनूनथ ।।८०।।

एकस्येत्याद्यथेत्यन्तै: षोडशभि: श्लोकै: कार्तवीर्यस्य मन्त्रभेदांश्छन्दोभेदांश्चाह—तत्र तस्यबीजं फ्रों इति कार्तवीर्यबीजम्, एतत्तु दशस्वपि भेदेषु ज्ञेयम्। चामुण्डाबीजं च्रीं इति। मच्छत्रुर्मम शिष्यशत्रु: कामस्तद्बीजं क्लीं इति। रावार्णं भ्रूं इति। माया ह्रीं। पाश: आं। अङ्कुश: क्रों। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। कमला श्रीं। वाग्भवं ऐं। अत्र 'मूलमङ्कुशबीजेन पुटितं तु' इत्यत्र मूलकार्ताक्षरयोर्मध्येऽङ्कुशबीजं देयमिति तु शब्दार्थ:। अन्यथा एकादशाक्षरासंभवात्। 'वर्मास्त्राक्षरगतयोर्मध्यगतं मूलं नवाक्षर'मित्यत्र मूलनवाक्षरयोर्मध्ये हुंबीजं तथैव फट्कारं च पृथक् पृथग्योजयेदित्यर्थ:। अन्यथा दशविधत्वासम्भवादित्यर्थ:। वाग्भवादिस्तु दशभेदाद्बहिर्भूत:, अतएव सर्वैर्वा इत्युक्तं, सर्वैर्विंशतिभिर्वर्णै:, एकोनविंशतिवर्णैर्वादो संयोज्य जपेदित्यर्थ:। तथा—

यन्त्रं च दशमन्त्राणां पूर्वोक्तं विलिखेद्बुध: । कर्णिकायां लिखेन्मूलं दशपत्रे दशाक्षरान् ।।८१।।
(दशाक्षरप्रयोगे च मूलं मध्यदले तथा । लिखेद्गुरूपदेशेन शेषं पूर्ववदाचरेत्)।।८२।।

अस्यार्थ:—तत्र यथोक्तलक्षणं दशदलकमलं कृत्वा, तद्बहिरष्टवज्रयुक्तं चतुरस्रं च कृत्वा, तत्कर्णिकायां ससाध्यं मूलबीजं प्राग्वद्विलिख्य, तत्केसरेषु द्वन्द्वश: स्वरानष्टसु अष्टसु कमलकेसरेषु नवमे शष दशमे सह इति विलिख्य दशपत्रेषु कार्तादिनवाक्षराणि नवसु पत्रेषु दशमे पुनर्मूलबीजमिति संप्रदाय:। एष एव गुरूपदेश:। इति दशवर्णान् विलिख्य शेषमन्यत् सर्वं पूर्वोक्तयन्त्रवद्बहिर्लिखेत्। इत्येतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। एतद्दशाक्षरमन्त्रस्य यन्त्रम्। अन्ययन्त्रेषु तन्मध्ये (प्राग्वन्मूलं ससाध्यं विलिख्य तदनु तथैव केसरेषु) प्राग्वत् स्वरान् शषसहसहितान् विलिख्य (पत्रेषु चावशिष्टदशवर्णान् विलिख्य) शेषं प्राग्वद्विलिखेदिति। तथा—

पूजायां पूर्वसंप्रोक्तावरणै: सम्यगर्चयेत् । तारादिविंशार्णमिदं पूजयेत् प्रयतोऽनिशम् ।।८३।।
मन्त्रं गुर्वाज्ञया देवि स सर्वार्थानवाप्नुयात् ।

कार्तवीय मन्त्र के दश भेद होते हैं; उन्हें अब साधकों के हित के लिये कहता हूँ। कार्तवीय मन्त्रों के ऋषि महाप्राज्ञ दत्तात्रेय साक्षात् नारायण के अंश हैं। मन्त्रभेद से देवता स्वयं शिव के अंश सहस्रार्जुन हैं। देवदेव की आज्ञा से जब ये सभी दुष्टों की शान्ति के लिये गरजते हैं तो दैत्यस्त्रियों के गर्भ स्रवित हो जाते हैं। विष्णु का चक्र कृतवीर्य रूप में नर्मदा तट पर माहिष्मती पुर में अपनी भार्या के साथ रहता था। उन्हीं को अर्जुन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। अर्जुन ने दत्तात्रेय से विद्या प्राप्त किया था और द्विजों का प्रिय था। राजाओं का भी राजा वह हजारों किरणों के समान महातेजस्वी एक हजार हाथ थे। वह विष्णु के अंश से उत्पन्न हुआ था। महाबलवान सभी दुष्टों के अतिरिक्त सवों का स्वामी, शीघ्रगामी, सभी दुष्टों का विनाशक बहुरूपवान वह अपने नगर में रहता था। अपने तप बल के पराक्रम से वह सप्तद्वीपा पृथ्वी पर सभी दुष्टों का दमन करके विष्णु के समान उसकी रक्षा करता था। कार्तवीर्य के एक ही मन्त्र के दश भेदों को कहता हूँ। उनके छन्दभेद और ध्यानभेद को तत्त्वत: कहता हूँ। कार्यवीर्य के नवाक्षर 'कार्तवीर्यार्जुनाय नम:' के पहले मन्त्र के दश बीजों में से एक-एक को लगाने से दश मन्त्र बनते हैं। जैसे—

१. फ्रों कार्तवीर्यार्जुनाय नम:—इसका जप सर्वार्थ-सिद्धिदायक है।

२. च्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नम:—इसका जप चोरों और वसुहारियों का स्तम्भन करता है।

३. क्ली कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से नर-नारी-नृपों का मोहन होता है।

४. भ्रूं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से भ्रामण, उच्चाटन, द्वेषण एवं मारण होता है।

५. ह्रीं कार्यवीर्यार्जुनाय नमः के जप से पापक्षय, वश्य एवं मोहन होता है।

६. आं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से चोरों का आकर्षण शीघ्र होता है।

७. ह्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से हिंसा-पैशुन्य चित्तत वाले दुष्टों का उच्चाटन होता है।

८. क्रों कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से वाणी और गति का स्तम्भन होता है।

आं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से नर-नारी नृपों का वशीकरण होता है।

९. हुं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः के जप से शत्रुओं का उन्मादन, स्तम्भन एवं मोहन होता है। वृक्ष के नीचे बैठे चोरों का विशेष रूप से स्तम्भन होता है। चोरों के मूर्धा में स्फोट होता है।

१०. श्रीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः का जप जो एक वर्ष तक करता है, वह कुबेर के समान धनी हो जाता है।

११. ऐं कीर्तवीर्यार्जुनाय नमः का जप जो एक लाख करता है, उसे कवित्व प्राप्त होता है। इस प्रकार एक ही मन्त्र के दश भेदों का कहा गया हैं। इन दशाक्षर मन्त्रों को महामन्त्र कहा जाता है। इन सबों का छन्द विराट् है। समस्त एकादशाक्षर मन्त्रों का छन्द त्रिष्टुप् है। कार्तवीर्य के सभी मन्त्रों के जप से पहले ॐ लगाया जाता है।

पूर्वोक्त लक्षण का दशदल कमल बनाकर उसके बाहर आठ वज्रों से युक्त चतुरस्र बनावे। कर्णिका में पूर्ववत् साध्य सहित मूल बीजों को लिखे। उसके दलों के केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। नवम दल में 'शष' और दसवें दल में 'सह' लिखे। दश पत्रों में से नव में 'कार्तवीर्यार्जुनाय नमः' के एक-एक अक्षर को लिखे। दसवें पत्र में मूल बीज 'क्रों' लिखे। इस प्रकार दस वर्णों को लिखकर अन्य सब पूर्वोक्त यन्त्र के समान लिखे। तब यह यन्त्र उक्त फल प्रदान करने वाला होता है। पूजा में पूर्वोक्त आवरणों का सम्यक् अर्चन करे। तारादि विंशाक्षर मन्त्र से प्रतिदिन पूजा करे। गुरु की आज्ञा से मन्त्रजप करने से सभी कामना और अर्थ की सिद्धि होती है।

तन्मन्त्राणां षट्कर्मप्रयोगकथनम्

कार्तवीर्यस्य मन्त्राणां प्रयोगो वक्ष्यतेऽधुना ॥८४॥

हिताय मन्त्रिणां होमः सर्वकामार्थसिद्धये। गौरवे कर्मणि चरेद्बहुद्रव्यघृतादिभिः ॥८५॥

होमं रात्रौ वक्ष्यमाणद्रव्यैर्देवि सदक्षिणैः। लाघवे च लघुद्रव्यैर्ज्ञात्वा सम्यक् समाचरेत् ॥८६॥

कल्पोक्तसर्वकार्याणां यद्वाञ्छति सदा प्रिये। संपूजयेद्गुरुं भक्त्या द्रव्यैश्चास्य समीहितैः ॥८७॥

अन्नदानैर्द्विजान् भक्त्या प्रीणयेत् सर्वकर्मसु। वस्त्राद्यैर्वात्महितवित् प्रारभेत् सर्वकर्म च ॥८८॥

विप्राणां वचनैः कुर्यात् कर्माणि कमलेक्षणे। सितसर्षपहोमेन मारयेद्रिपुमात्मनः ॥८९॥

कार्पासलशुनारिष्टैर्विषवृक्षदलैस्तथा। कनकैर्होमयेच्चौरान् स्तम्भयेन्मोहयेत्तथा ॥९०॥

विभीतजैः खादिरोत्थैः समिद्भिश्चाटयेच्चिरम्। निम्बैर्विद्वेषयेन्मन्त्री चाकर्षेन्मधुरत्रयैः ॥९१॥

नीलोत्पलैश्च वशयेत् तत्क्षणाद्भुवनत्रयम्। पद्मै साज्यैः श्रिये होमः स्यात्तथा सुमहान् वशः ॥९२॥

तिलहोमेन पापानि व्यपोहेद् गोघृतेन वा। तिलतण्डुललोणाब्जलाजसिद्धार्थमिश्रितैः ॥९३॥

मधुराक्तैर्हुनेदेतैर्वश्यार्थाय च तत्क्षणात्। लोणैश्च सर्ववर्णानां वश्यार्थे पावके हुनेत् ॥९४॥

सर्वसिद्ध्यै च दूर्वाभिः पयोभिश्च तथायुषे। लक्ष्म्यै दूर्वामृताह्वापामार्गार्कसमिदादिभिः ॥९५॥

होमो रोगविमुक्त्यर्थं ग्रहशान्त्यै तथायुषे। वटोदुम्बरबिल्वानां समिद्भिरभिवृद्धये ॥९६॥

हुनेद्धनाप्तये वापि क्षीराज्याक्तैर्विशेषतः। केवलेनैव पयसा हुनेद्गोकुलवृद्धये ॥९७॥

ब्रह्मवृक्षसमिद्भिश्च ब्रह्मवर्चःसमृद्धये। अश्वत्थैर्मनसः शान्त्यै प्लक्षैः सन्ततिवृद्धये ॥९८॥

भूतशान्त्यै गुग्गुलुभिः स्त्रीवश्याय प्रियङ्गुभिः। पुष्पैर्हुनेच्च वस्त्रार्थी तत्तद्वर्णैर्मनोहरैः ॥९९॥

शालिहोमेन भूमान् स्यादन्नैरन्नादिमान् भवेत् । गोरोचनागोमयाभ्यां सेनायाः स्तम्भनं भवेत् ।।१००।।
होमेन देवि शत्रूणां गोमूत्रेण विशेषतः । कार्षासगृहधूमादिपादपांसुविमिश्रितैः ।।१०१।।
क्षीरवृक्षसमिद्भिश्च हुनेन्निशि निशातधीः । अङ्गनाशाय चौराणां विद्वेष्ट्यै मारणाय च ।।१०२।।
सर्पनिर्मोककनकसिद्धार्थैर्हवनक्रिया । लवणैः सह चौराणां कुलनाशाय तद्भवेत् ।।१०३।।
सर्पनिर्मोकः सर्पमुक्तत्वक्।

अत्र कार्तवीर्य मन्त्रों के प्रयोगो को कहता हूँ! साधकों के हित के लिये हवनकर्म को कहता हूँ। कर्म की गुरुता होने पर बहुत द्रव्य एवं घृतादि से हवन करे। रात में हवन वक्ष्यमाण द्रव्यों से दक्षिणा-सहित करे। कर्म की लघुता होने पर कम द्रव्यों के ज्ञानपूर्वक हवन करें। कल्पोक्त सभी कर्मो में वांछितार्थ प्राप्ति के लिये गुरु की पूजा भक्तिपूर्वक धन-वस्त्रादि से करे। सभी कर्मो में द्विजों को अन्नदान करके प्रसन्न करे। अपने कल्याण के लिये वस्त्रादि दान करे सभी कर्म प्रारम्भ करे। विप्रों की इच्छा के अनुसार सभी कर्मो को करे। पीले सरसों के हवन से शत्रुओं का नाश होता है। कपास, लहसुन, रीठा, विष वृक्ष के पत्रों से तथा धत्तूर के हवन से चोरों का स्तम्भन और मोहन होता है। लिसोड़े और खैर की समिधाओं से हवन करने पर शीघ्र उच्चाटन होता है। नीम के पत्तों से हवन करने पर उच्चाटन होता है। त्रिमधुराक्त नीलोत्पल से हवन करने पर तत्क्षण तीनों लोक वश में होते हैं। गोघृत-प्लुत कमल के हवन से धन मिलता है और बड़े लोग वश में होते हैं। तिल से हवन करने पर पापों का नाश होता है अथवा गोघृत से हवन करने पर भी पापों का नाश होता है। तिल चावल नमक कमल सिद्धार्थ को त्रिमधुर से सिक्त करके हवन करने से तुरन्त वशीकरण होता है। सबों को वश में करने के लिये नमक से हवन करना चाहिये। सभी सिद्धियों के लिये दूर्वा से हवन करे। आयु के लिये दूध से हवन करें। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये दूब-गुडूची, अपामार्ग, अकवन की समिधा से हवन करे। रोग से विमुक्ति, ग्रहशान्ति तथा आयु के लिये वट-गूलर-बेल की समिधा से हवन करे। धन-प्राप्ति के लिये वट-गूलर-बेल की समिधाओं को दूध-गोघृत से अक्त करके करे। गोकुल की वृद्धि के लिये केवल दूध से हवन करे। ब्रह्मवर्चस् के लिये पलाश की समिधाओं से हवन करे। मन की शान्ति के लिये पीपल की समिधा से एवं सन्तति की वृद्धि के लिये पाँकड़ की समिधा से हवन करे। भूतों की शान्ति के लिये गुग्गुल से एवं स्त्री-वशीकरण के लिये प्रियंगु से हवन करे। जिस रंग के वस्त्र की इच्छा हो, उसी रंग के फूलों से हवन करे। शालि के हवन से भूमि और अन्न के हवन से अन्न की प्राप्ति होती है। गोरोचन और गोबर के हवन से सेना का स्तम्भन होता है। गोमूत्र से हवन करने पर शत्रुओं का विशेष स्तम्भन होता है। कपास, गृहधूम और शत्रु के पैरों की धूलि के मिश्रण से क्षीरवृक्ष की लकड़ी से ज्वलित अग्नि में रात में हवन करे तो चोरों के अंग का नाश होता है। विद्वेषण और मारण के लिये साँप का केचुल धत्तूर, और सरसों को मिलाकर हवन करे। इसमें नमक मिलाकर हवन करने से चोरों के कुल का नाश होता है।

तर्पयेच्च दशांशेन शुद्धतोयेन नित्यशः । हुतसंख्या च साहस्रं सहस्रादयुतान्तका ।।१०४।।
लघुगौरवकार्येषु विचार्य निपुणश्चरेत् । पुष्पैर्होमः प्रयोगोक्तैर्द्रव्यैः साज्यैर्विधीयते ।।१०५।।
रोगशान्त्यायुषे तद्वद्वश्याय मधुरैः सह । मारणद्वेषणोच्चाटस्तंभमोहनकर्मसु ।।१०६।।
तीक्ष्णतैलयुतैर्द्रव्यैर्माहिष्याज्ययुतैस्तथा । यद्यष्टविषयुक्तैर्वा चरेत् कर्माज्ञया गुरोः ।।१०७।।
एवं षट्कर्म संप्रोक्तं मनुनानेन सुन्दरि । हिताय मन्त्रिणां सम्यग् हैहयाधिपतेर्विभोः ।।१०८।।
मन्त्रसिद्धस्य सिध्यन्ति कर्माण्येतानि तत्त्वतः । यस्यासिद्धो मनुर्होमात्स पुमान्नाचरेत् क्रियाम् ।।१०९।।
न सिध्यति ह्यसिद्धस्य कल्पोक्तं कर्मणां फलम् । सदा वैदिकजप्तस्य शुद्धस्य ब्राह्मणस्य च ।।११०।।
न्यायागतमनोः किञ्चित् क्रियास्यापि प्रसिध्यति । तस्मात् सदाचारवता गुरुभक्तेन सुन्दरि ।।१११।।
जप्तव्यो मन्त्रतीर्थो हि पुरुषेण मनूत्तमः । रक्षितुं पुरराष्ट्रादीन् स्त्रीबालादीन् स मन्त्रवित् ।।११२।।
गोब्राह्मणवरांश्चापि स्वात्मानं च विशेषतः । कुर्यात् प्रयोगान् विधिवन्मारणादीनपि प्रिये ।।११३।।
सर्वथा चौरजातीनां मारणान्नास्ति पातकम् । यदि स्यात् प्राणिहनना न्यायमेतेन नाशयेत् ।।११४।।

अन्नगोभूमिदानाद्यैराज्यहोमैश्च मन्त्रवित्। व्यपोहेच्चौरहत्याद्यं प्राणायामजपादिभिः ॥११५॥
जपेच्च देवीं गायत्रीं सर्वपापापनुत्तये। सहस्रं नित्यशो देवीं सर्वरक्षार्थमात्मनः ॥११६॥
गायत्रीं जपमानस्य द्विजातेः संयतात्मनः। किमसाध्यं प्रयोगेषु वैदिकेषु विशेषतः ॥११७॥
गायत्रीजापकं भक्त्या ब्राह्मणं सुसमाहितम्। न स्पृशन्ति महात्मानं पापहत्यादयोऽपि च ॥११८॥
किमु भूतादयः सर्वे घोरा रुधिरभोजनाः। तस्माज्जपेच्च गायत्रीं प्रयोगादौ समाहितः ॥११९॥
प्रयोगान्ते च गायत्रीं नियतः सर्वकर्मणि।

दशांश तर्पण नित्य शुद्ध जल से करे। हवन संख्या एक हजार या दश हजार है। कार्य की लघुता-गुरुता का विचार करके हवन करे। फूलों का हवन प्रयोगोक्त द्रव्यों में गोघृत मिलाकर करे। रोगशक्ति, आयुवृद्धि या वश्य में मधुराक्त द्रव्यों से हवन करे। मारण-विद्वेषण-उच्चाटन-स्तम्भन-मोहन कर्मों में कडुआ तेल तथा भैंस का घी द्रव्यों में मिलाकर हवन करे अथवा अष्ट विषों से युक्त हवन गुरु की आज्ञा से करे। हे सुन्दरि इस प्रकार इस मन्त्र से षट्कर्म-साधन को कहा गया। मान्त्रिकों के हित के लिये हैहय-अधिपति के मन्त्र को सिद्ध करने वाले के उपरोक्त सभी कर्म सिद्ध होते है। जिसे मन्त्र सिद्ध होता है, वही इन क्रियाओं को करे। असिद्ध को कल्पोक्त कर्मफल नहीं मिलते। सदा वैदिक जप करने वाले शुद्ध ब्राह्मणों के न्यायागत मन्त्रों से कुछ क्रियाएँ सिद्ध होती हैं, इसलिये सदाचारी गुरुभक्त पुरुष को मन्त्रजप तीर्थों में करना चाहिये। नगर-राष्ट्र-स्त्री-बालक गो-ब्राह्मण एवं अपनी रक्षा के लिये मारण आदि कर्म विधिवत् करना चाहिये।

चोर जातियों का मारण किसी भी प्रकार से पाप नहीं है। प्राणियों के हत्यारों को मारना न्यायसंगत है। चोरों की हत्या करने के बाद प्रायश्चित्त में गाय-भूमि का दान, आज्य से हवन, प्राणायाम और जप करे। सभी पापो से छुटकारे के लिये देवी गायत्री का जप करे। सबकी रक्षा और आत्मरक्षा के लिये नित्य एक हजार जप करे। संयतात्मा गायत्री जप करने वाले द्विजों के लिये कुछ भी असाध्य नहीं है। विशेषतः वैदिक कर्मों में भक्ति से गायत्री जप करने वाले द्विज महात्मा को हत्यादि के पाप स्पर्श भी नहीं करते। तब रुधिरभोक्ता भूतादि के बारे में क्या सोचना है। इसलिये प्रयोग के पहले एकाग्र चित्त से गायत्री का जप करना चाहिये। प्रयोग के अन्त में सभी कर्मों में नियत संख्या में गायत्री का जप करना चाहिये।

मन्त्रान्तरविधिः

अन्यानपि प्रवक्ष्यामि मन्त्रान् क्षिप्रप्रसाधकान् ॥१२०॥
कृतवीर्यात्मजस्यात्मभूतान् देवि शृणुष्व तान्। यैः कुर्युः पुरराष्ट्राणां रक्षणं सिद्धमन्त्रिणः ॥१२१॥
मन्त्रैर्जप्तैरपि भवेद्रक्षोभिश्च जलादिभिः। तारागिनजाययोर्मध्ये नमः कार्ताक्षरान् वदेत् ॥१२२॥
वीर्यार्जुनाय हुंफट् च ऋष्याद्याश्च पुरोदिताः। चतुर्दशार्णो मन्त्रोऽयमनेनाङ्गं समाचरेत् ॥१२३॥

तारः प्रणवः। अग्निजाया स्वाहाकारः। सुगममन्यत्।

तारेण नतिना सप्तवर्णैर्वर्मास्त्रठद्वयैः। कुर्यात् पञ्चाङ्गकं मन्त्री ध्यायेत् पूर्वोक्तमार्गतः ॥१२४॥

ॐ हृदयं। नमः शिरः। कार्तवीर्यार्जुनाय शिखा। हुंफट् कवचं। स्वाहा अस्त्रम्।

नमोऽन्ते कार्तयोः पूर्वे स्याच्चेद्भगवते पदम्। तदाष्टादशवर्णः स्यान्मनुरेष मनूत्तमः ॥१२५॥

'ॐ नमो भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय हुंफट् स्वाहा' इति।

मूलमन्त्रेण पञ्चाङ्गं कुर्यात् पूर्ववदेव तु। सतारनतिनैव स्यात् तदा हृदयमम्बिके ॥१२६॥

ॐ नमः हृदयं। भगवते शिरः। सप्तभिः शिखा। द्वाभ्यां कवचं। द्वाभ्यामस्त्रं। ध्यानं पूर्वोक्तमेव।

शीघ्र सिद्धिदायक अन्य मन्त्रों को कहता हूँ। कृतवीर्य के पुत्र के ये मन्त्र नगर एवं राष्ट्र की रक्षा के लिये सिद्ध हैं। मन्त्रजप से जलादि में भी रक्षा होती है। चौदह अक्षर का यह मन्त्र है—ॐ नमः कार्तवीर्यार्जुनाय हुं फट् स्वाहा। इसके ऋष्यादि पूर्ववत् हैं। मन्त्र के चौदह वर्णों से अंग न्यास करे। हृदयादि न्यास इस प्रकार करे—ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा।

कार्तवीर्यार्जुनाय शिखायै वषट्। हुं फट् कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। पूर्ववत् ध्यान करे।

एक अन्य अट्ठारह अक्षरों का उत्तम मन्त्र है—ॐ नमो भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय हुं फट् स्वाहा। मूल मन्त्र से इसका पञ्चाङ्ग न्यास करे। हृदयादि न्यास इस प्रकार करे—ॐ नम: हृदयाय नम:। भगवते शिरसे स्वाहा। कार्तवीर्यार्जुनाय शिखायै वषट्। हुं फट् कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। पूर्ववत् ध्यान करे।

यन्त्ररचनाप्रकार:

यन्त्रं लिखेच्च चौराणां मारणादिषु मन्त्रवित्। षट्कोणमध्ये तद्बीजं लिखेत् कोणषडक्षरम् ॥१२७॥
लिखेच्च द्वादशदले शिष्टान् स द्वादशाक्षरान्। स्वरवेष्टितषट्कोणं कादिभिर्वृत्तपञ्चकम् ॥१२८॥
भूताक्षरबहि:कोणं भूतमण्डलवेष्टितम्। तत्तत्कार्यवशाद् देवि तत्तन्मण्डलमालिखेत् ॥१२९॥
ताले च फलके कुड्यमूले चौरकृते बिले। विलिखेत् सर्वसंपत्त्यै चौराणां स्तम्भनाय च ॥१३०॥
एतद्यन्त्रं मन्त्रजप्तं स्थापितं यत्र कुत्रचित्। भयानि न भवन्त्यत्र देशे देव्यखिलानि च ॥१३१॥

ताले तालपत्रे। अथैतद्यन्त्ररचनाप्रकार:—द्वादशदलं पद्मं विरच्य, तत्कर्णिकायां वृत्तद्वयवीतं षट्कोणं कृत्वा तन्मध्ये कार्तवीर्यबीजं ससाध्यं विलिख्य, षट्सु मूलमन्त्रस्य 'ॐनमो भगवते' इति षडक्षरान् सबिन्दून् विलिख्य, षट्कोणाद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले षोडशस्वरैरावेष्ट्य, द्वादशदलेषु शिष्टद्वादशवर्णान् सबिन्दून् विलिख्य, प्राग्वत्तत्कार्योपयोगीनि भूताक्षराणि चतुरस्रकोणेषु विलिख्य तद्बहिस्तत्तद्भूतमण्डलं विलिखेत्, उक्तफलसिद्धिर्भवति।

चौरादि मारण यन्त्र—ताड़पत्र या फलक सा कूटमूल में या चौरकृत छेद में सभी सम्पत्तियों की चोरों से रक्षा के लिये इस यन्त्र को लिखे। द्वादश दल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में दो वृत्तों के अन्दर षट्कोण बनावे। उसके मध्य में साध्य नाम के साथ कार्तवीर्य बीज फ्रों लिखे। छ: कोणों में 'नमो भगवते' के अक्षरों को सानुस्वार लिखे। षट्कोण के बाहर वृत्तों के अन्तराल में सोलह स्वरों को लिखे। द्वादश दल में शेष बारह अक्षरों को लिखे। पूर्ववत् कार्योपयोगी भूताक्षरों को चतुरस्र के कोणों में लिखे। उसके बाहर उसके भूतमण्डल को लिखे। इस यन्त्र को मन्त्रित करके जहाँ स्थापित किया जाता है, वहाँ कोई भय नहीं होता।

महावीर्यमन्त्रविधानम् ध्यानभेदकथनञ्च

तथा मन्त्रान्तरम्—

महावीर्यमनुर्नाम कार्तवीर्यस्य वक्ष्यते। स्मरणादपि नश्यन्ति तस्य चौरकुलादय: ॥१३२॥
नमो भगवते प्रोच्य श्रीकार्तार्णान् समुद्धरेत्। वीर्यार्जुनायेति तत: सर्वदुष्टान्तकाय च ॥१३३॥
तपोबलपदस्यान्ते पराक्रममितीरयेत्। परिपालितसप्तद्वीपाय सर्वपदं तत: ॥१३४॥
राजन्यचूडामणये महाशक्तिमते तथा। सहस्रदलनायान्ते हुंफडित्युच्चरेदिदम् ॥१३५॥
चतुष्षष्ट्यक्षरो मन्त्रो वाञ्छितार्थप्रसाधक:।

अयमपि मन्त्र: प्रणवादिरिति ज्ञेय:। चतु:षष्ट्यक्षर इत्याद्युक्तत्वात्।

ऋष्याद्याश्च हुताद्याश्च पूर्वोक्तास्तु स्मृता: प्रिये। जपश्चायुतसंख्य: स्याच्छन्दोऽस्य त्रिष्टुबुच्यते ॥१३६॥
राजन्यचक्रयुतवर्ति च वीरशूरमाहिष्मतीपतिपदैश्च चतुर्थियुक्तै:।
रेवाम्बुलीलपरिदृप्त-पदेन कारागेहप्रबाधितदशास्य-पदेन चाङ्गम् ॥१३७॥

राजन्यचक्रवर्तिने हृत्। वीराय शिर:। शूराय शिखा। माहिष्मतीपतये कवचं। रेवाम्बुलीलापरिदृप्ताय नेत्रं। कारागेहप्रबाधितदशास्याय अस्त्रं। तथा—

एवं कृत्वा षडङ्गं नृपकुलतिलकं कार्तवीर्यं महान्तं ध्यायेद्रेवातटस्थं युवतिभिरभित: क्रीडमानं मदान्धम्।
मज्जतं नग्नरूपं प्रमुदितमनसं लोलरक्तायताक्षं हस्ताब्जै: स्वै: सहस्रैर्भृशपरिवितते रुध्यमानं जलौघान् ॥१३८॥

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्री मन्त्रवर्यमनुत्तमम्। सर्वार्थसिद्धयै सम्यक् च वश्यायाशु विशेषतः ॥१३९॥
जले भयं यदि स्याच्चेत् तदैवं संस्मरेद् बुधः। अन्यथा वक्ष्यते ध्यानं राज्यैश्वर्यसमृद्धये ॥१४०॥

माहिष्मत्यां महात्मा कनकमणिगणालङ्कृताङ्गं सभाया-
मासीनं मन्त्रिमध्ये रविरुचिविलसद्रत्नपीठे प्रसन्नम्।
ध्यायेत् स्वैर्बाहुदण्डैर्धृतशरनिकरेष्वासवर्मासिपाश-
प्रासाद्यैः सर्वसिद्धयै सकलदुरितचौरापहत्यै च लक्ष्म्यै ॥१४१॥

परचक्रमये प्राप्ते तावद्राज्ञो महात्मनः। अथवा वक्ष्यते ध्यानं रक्षायै वाशु सर्वदा ॥१४२॥

दशशतहययुतरथवरनिलयं त्रैलोक्यभीषणं ध्यायेत्।
मध्याह्नार्कसमानं गर्जनतस्तर्जयन्तं परबलान् ॥१४३॥
दोर्दण्डमण्डलैरायुधमण्डलान् आक्षिपन्तमाशुवरम्।
कुण्डलमण्डितगण्डं खण्डितसर्वारिमण्डलं मन्त्री ॥१४४॥
नानायुधनिकरधरैः पदातिभिर्वेष्टितं तथा रथिभिः।
अभितो गजयूथयुतैर्हयसादिभिरुल्ल्वणैश्च पत्त्यङ्गैः ॥१४५॥
ध्यात्वा यो वै मन्त्रमिति प्राङ्मुखो जपेन्नियतः।
स तु सकलवाञ्छितार्थान्मासेन लभेदयत्नवानपि च ॥१४६॥

अब कार्तवीर्य के महामन्त्र को कहता हूँ, इसके स्मरण से चोरों के समूह का नाश होता है। चौंसठ अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय सर्वदुष्टान्तकाय तपोबलपराक्रमपरिपालितसप्तद्वीपाय सर्वराजन्यचूड़ामणये महाशक्तिमते सहस्रदलनाय हुं फट्। यह मन्त्र वांछितार्थ-प्रदायक है। इसके ऋष्यादि एवं हवनादि पूर्वोक्त मन्त्र के समान ही हैं। इसका दश हजार जप किया जाता है। छन्द त्रिष्टुप् है। पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—राजन्यचक्रवर्तिने हृदयाय नमः। वीराय शिरसे स्वाहा। शूराय शिखायै वषट्। माहिष्मतिपतये कवचाय हुं। रेवाम्बुलीलापरिदृप्ताय नेत्रत्रयाय वौषट्। कारागेहप्रबाधितदशास्याय अस्त्राय फट्। इस प्रकार षडङ्ग न्यास करके राजकुलतिलक कार्तवीर्य के रेवातट पर युवतियों के साथ मदान्ध होकर क्रीड़ा करते हुये, नग्न होकर स्नान करते हुये, चंचल आँखों वाली हजारों युवतियों से घिरे एवं हजारों हाथों से रेवा की जलराशि को अवरुद्ध किये हुये रूप का ध्यान करना चाहिये।

इस प्रकार का ध्यान करके उत्तम मन्त्र का जप सर्वार्थसिद्धि और तुरन्त वश्य के लिये करे। जल में भय होने पर भी ऐसा ही ध्यान करे। राज्य एवं ऐश्वर्य की समृद्धि के लिये इस प्रकार ध्यान करे—

माहिष्मत्यां महात्मा कनकमणिगणालङ्कृताङ्गं सभायामासीनं मन्त्रिमध्ये रविरुचिविलसद्रत्नपीठे प्रसन्नम्।
ध्यायेत् स्वैर्बाहुदण्डैर्धृतशरनिकरेष्वासवर्मासिपाशप्रासाद्यैः सर्वसिद्धयै सकलदुरितचौरापहत्यै च लक्ष्म्यै।।

परचक्र और दूसरे राजा से भय होने पर सर्वथा रक्षा के लिये इस प्रकार ध्यान करे—

दशशतहययुतरथवरनिलयं त्रैलोक्यभीषणं ध्यायेत्। मध्याह्नार्कसमानं गर्जनतस्तर्जयन्तं परबलान्।।
दोर्दण्डमण्डलैरायुधमण्डलान् आक्षिपन्तमाशुवरम्। कुण्डलमण्डितगण्डं खण्डितसर्वारिमण्डलं मन्त्री।।
नानायुधनिकरधरैः पदातिभिर्वेष्टितं तथा रथिभिः। अभितो गजयूथयुतैर्हयसादिभिरुल्ल्वणैश्च पत्त्यङ्गैः।।

ऐसा ध्यान करके पूर्वमुख होकर जो नियत जप करता है, उसे एक महीने में सभी वांछितार्थ प्राप्त होते हैं।

यन्त्रोद्धारस्तन्माहात्म्यञ्च

यन्त्रं चास्योल्लिखेद् देवि सर्वकामार्थसिद्धये। आदौ चतुर्दलं पद्मं लिखेदष्टदलं ततः ॥१४७॥
तद्बहिः षोडशदलं द्वात्रिंशत्तद्बहिर्दलम्। कर्णिकायां लिखेद्बीजं कार्तवीर्यस्य भूपतेः ॥१४८॥
वेदादिनतिमध्यस्थं साध्यनाम च दिग्दले। दलाष्टके द्विशो लिख्यान्मन्त्रार्णान् बिन्दुसंयुतान् ॥१४९॥

षोडशारदले लिख्यात् कामराजमनूत्तमम्। द्वात्रिंशतिदले तस्यानुष्टुबर्णान् समालिखेत्॥१५०॥
एकैकशो बहिर्मालामन्त्रेण तत्प्रवेष्टयेत्। तद्बहिः कादिभिर्वीतं प्रतिलोमानुलोमतः॥१५१॥
क्रूंखूंगूंघूंमहाबीजैश्चतुर्भिः पूजयेत् सुधीः। चतुर्दलान्तराले तु च्रूंछूंज्रूंझ्रूं पुनस्तथा॥१५२॥
टूंठूंडूंढूं महाबीजैः त्रूंथ्रूंद्रूंध्रूं पुनस्तथा। प्रूंफ्रूंब्रूंभ्रूं महाबीजैः य्रूंर्लूंल्रूंव्रूं पुनस्तथा॥१५३॥
श्रूंष्रूंस्रूंह्रूं पुनर्यन्त्रमेतैर्बीजैः समाहितः। द्विरावृत्त्या लिखेद् देवि बहिर्वै भूतमण्डले॥१५४॥
भूताक्षराणि विलिखेत् तत्तत्कार्यसमाप्तये। एतद्यन्त्रस्य माहात्म्यं को नु जानाति पार्वति॥१५५॥
किमु देवादयः सर्वे सुरासुरनमस्कृते। अहं जानामि विष्णुश्च दत्तात्रेयश्च तद्गुरुः॥१५६॥
प्रभावमस्य देवेशि यन्त्रस्याखिलभूपतेः। तद्यन्त्रधारकं दृष्ट्वा भीता भूतादिवैरिणः॥१५७॥
चोररोगादयश्चापि प्रद्रवन्ति न संशयः। स्वर्णपत्रस्थितं यन्त्रमेतत् सर्वार्थदं क्षणात्॥१५८॥
विश्वैश्वर्यप्रदं विश्वमोहनं क्षोभकारकम्। राजते विलिखेद्येतद्राज्यलाभाय मन्त्रवित्॥१५९॥
ताम्रे च सर्वरक्षायै फलके चाम्बरेऽपि वा। भित्तौ वा सर्ववश्याय भूर्जपत्रे समालिखेत्॥१६०॥
चन्दनागरुकर्पूररोचनासृगुशीरकैः। लाक्षामृगमदाद्यैश्च विलिखेद् वश्यकर्मसु॥१६१॥
लिखेदष्टविषेणाथ मारणादिषु कर्मसु। अष्टगन्धेन वा देवि गुर्वनुज्ञापुरःसरम्॥१६२॥
कारस्करस्य फलके तथा वैकङ्कतोद्भवे। अक्षजे चाथ पाषाणे शरावे वा समाहितः॥१६३॥
एतद्यन्त्रं ध्वजाग्रस्थं युध्यमानस्य शत्रुभिः। एतद् दृष्ट्वारयः सर्वे प्रद्रवन्ति न संशयः॥१६४॥
यत्र यत्र स्थितं यन्त्रं तत्रतत्र जयो भवेत्। नागाश्च नागकन्याश्च यक्षिण्यश्च सुराङ्गनाः॥१६५॥
नरनारीनृपगणा दृष्ट्वा तद्यन्त्रधारिणम्। आगत्य दृष्ट्वा मोहेन तस्मै दद्युश्च वाञ्छितम्॥१६६॥
तद्यन्त्रकलशासेकाद्वन्ध्या पुत्रं प्रसूयते। राजाभिषिक्तो भवति शत्रुनिर्यातवानपि॥१६७॥
त्रैलोक्यमपि चानेन रक्षयेत्तु समाहितः। बहुना किमिहोक्तेन यन्त्रमेतदनुत्तमम्॥१६८॥
सर्वकार्यार्थदं नृणां कुर्यान्मन्त्री विचक्षणः। इति।

अथैतद्यन्त्ररचनाप्रकारः—तत्र प्रथमं चतुर्दलकमलं विलिख्य तद्बहिरष्टदलं तद्बहिः षोडशदलं तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलम् इति कमलचतुष्टयं कृत्वा, तत्कर्णिकायां ससाध्यं कार्तवीर्यबीजं विलिख्य, चतुर्दलेषु—'ॐ अमुकं मे वशमानय नमः' इति प्रतिदलं विलिखेत्। अत्र वशमित्युपलक्षणं स्तम्भय मोहय द्वेषयेत्यादि स्वेष्टकर्मपदं लिखेत्। ततोऽष्टदलेषु विंशत्यक्षरमूलमन्त्रस्य प्रणवमूलबीजनमःपदात्मकाक्षरचतुष्टयं विहाय द्वितीयबीजादि नाय नम इत्यन्तान् षोडशवर्णान् सबिन्दून् द्विशो द्विशः प्रतिदलं विलिख्य, (तद्बहिः षोडशदलेषु प्रतिदलं कामबीजमालिख्य तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलेषु एकैकशो वक्ष्यमाणानुष्टुब्मन्त्रवर्णान् विलिख्य,) तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले पूर्वोक्तचतुष्षष्ट्यर्णमालामन्त्रेण संवेष्ट्य, तद्बहिर्वृत्तत्रयान्तरालगतवीथीद्वयेऽन्तर्गतवीथ्यां प्रतिलोमेन ककारादिक्षकारान्तैर्वर्णैः संवेष्ट्य, बहिर्गतवीथ्यामनुलोमेन तैरेव वर्णैरावेष्ट्य, चतुर्दलस्यान्तरालचतुष्टये प्रमाणोक्तककारादिहकारान्तेष्वष्टाविंशतिबीजेषु कवर्गोत्थं बीजचतुष्टयमष्टदलान्तरालेषु (चटवर्गोत्थबीजाष्टकं, षोडशदलान्तरालेषु तपवर्गोत्थं बीजाष्टकं यादिवर्गोत्थं बीजाष्टकं च विलिख्य द्वात्रिंशद्दलान्तरालेषु पुनः कादिहान्तानि अष्टाविंशतिबीजान्य)ष्टाविंशत्यन्तरालेषु प्रथमं विलिख्य, पुनः कवर्गोत्थं बीजचतुष्टयं शिष्टान्तरालचतुष्टये लिखेत्। अत्र केचिदाद्यबीजचतुष्टयं चतुर्दलान्तरालेषु प्रथमं विलिख्य पुनस्तदाद्यान्यष्टाविंशतिबीजान्यष्टादशान्तरालादिषु द्विरावृत्त्या लिखेदिति वदन्ति, नैतदस्मदाराध्यचरणसंमतम्। यथागुरूपदेशं लेख्यमिति। ततस्तद्बहिस्तत्तत्कार्योपयोगिभूतमण्डलं विरच्य तत्र तत्तद्भूताक्षराणि च प्रागुक्तयुक्त्या लिखित्वा यथाविधि विनियुञ्जीत, यथोक्तफलसिद्धिर्भवति।

सर्वार्थ-सिद्धि के लिये इन मन्त्रों से यन्त्र बनाये। पहले चतुर्दल कमल बनाकर उसके बाहर अष्टदल उसके बाहर षोडश दल उसके बाहर बत्तीस दल कमल—इस प्रकार कुल चार कमल बनावे। चतुर्दल कमल की कर्णिका में साध्य नाम के साथ

कार्तवीर्य बीज 'फ्रों' लिखे। चारों दलों में 'ॐ अमुकं मे वशमानय नमः' लिखे। यहाँ 'वश' पद उपलक्षण मात्र है। 'वश' के बदले 'स्तम्भय मारय द्वेषय' इत्यादि अपने इष्ट कर्म को लिखे। तब अष्टदल में विंशाक्षर मूल मन्त्र के ॐ फ्रों नमः' चार अक्षरों को छोड़कर दूसरे बीज से नाय नमः तक के सोलह वर्णों में से दो-दो वर्णों को प्रत्येक दल में लिखे। उसके बाहर षोडश दल के प्रत्येक दल में 'क्लीं क्लीं' लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल के प्रत्येक दल में अनुष्टप् मन्त्र—'कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रभाक्। तस्यानुस्मरणादेव हतं नष्टं च लभ्यते' के एक-एक वर्ण को लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में पूर्वोक्त चौंसठ अक्षरों के मालामन्त्र को लिखे। उसके बाहर तीनों वृत्तों से निर्मित दो अन्तरालों में अन्दर से पहले अन्तराल में 'क्ष' से 'क' तक के प्रतिलोम मातृका को लिखे। उसके बाद वाली वीथि में अनुलोम मातृका 'क' से 'क्ष' तक लिखे। चतुर्दल के चार अन्तरालों में 'क' से 'ह' तक के वर्णों में से 'ङ ञ ण न म' को छोड़कर अट्ठाईस वर्णों को इस प्रकार लिखे। कुं खुं गुं घुं चार को चतुर्दल के अन्तराल में लिखे। चुं छुं जुं झुं टुं ठुं डुं ढुं आठ वर्णों को अष्टपत्र के अन्तराल में लिखे। तुं थुं दुं धुं पुं फुं बुं भुं आठ को षोडश दल के अन्तराल में लिखे। युं रुं लुं वुं शुं षुं सुं हुं आठ को बत्तीस दल के अन्तराल में लिखे। इसके बाद 'क' से 'ह' तक के अट्ठाईस वर्णों को लिखे। शेष चार अन्तरालों में 'क ख ग घ' चार वर्णों को लिखे। इसके बाहर कार्योपयोगी भूतवर्णों को लिखे।

इस यन्त्र का माहात्म्य देवता भी नहीं जानते। यह देव-दैत्यों से नमस्कृत है। इसे केवल मैं (शिव) जानता हूँ, विष्णु और उसके गुरु दत्तात्रेय जानते हैं। भूपति के इस यन्त्र को धारण करने वाले को देखकर भूतादि वैरी भयभीत होकर भाग जाते हैं; चोर रोगादि भी डर जाते हैं। स्वर्णपत्र पर अंकित यह यन्त्र सर्वार्थसिद्धिदायक होता है। संसार का ऐश्वर्य-प्रदायक होने के साथ-साथ विश्वमोहक और क्षोभकारक होता है। राज्यलाभ के लिये इसे चाँदी के पत्र पर लिखे। सभी प्रकार की रक्षा के लिये ताम्रपत्र पर लिखे या फलक पर या कपड़े पर या भीत पर लिखे। सबों के वश्य के लिये भोजपत्र पर लिखे। वश्यकर्म में चन्दन अगर कपूर, गोरोचन कमल, खश, लाह, कस्तूरी के घोल से यन्त्र बनावे। मारण कर्म में आठ प्रकार के जहरों से यन्त्र को लिखे या अष्टगन्ध से गुरु की आज्ञा के अनुसार लिखे। कारस्कर के फलक पर या वैकंकत के फलक या अकवन के फलक या पत्थर पर या शराव पर लिखे। इस यन्त्र को झण्डा पर लिखकर शत्रुसेना के सामने खड़ा करे तो सभी भयभीत होकर इधर-उधर भाग जाते हैं और झण्डा वाले की जीत होती है। जहाँ-जहाँ यह यन्त्र रहता है, वहाँ-वहाँ विजय होती है। इस यन्त्रधारी को देखकर नाग-नागकन्या, यक्षिणी, सुराङ्गना, नर-नारी, राजा मोहित होकर उसके पास आते हैं और वांछित प्रदान करते हैं। इस यन्त्र को जलकुम्भ में रखकर उस जल से स्नान करने पर वन्ध्या को पुत्र होता है। शत्रु के डर से भागे हुए राजा को भी इसके अभिषेक से राज्य वापस मिलता है। इससे तीनों लोकों की रक्षा होती है। बहुत क्या कहा जाय, यह यन्त्र बहुत उत्तम है। सभी कार्यार्थ-साधक है। यह मन्त्री को विचक्षण बना देता है।

आनुष्टुभध्यानविधिः

तथा अनुष्टुब्मन्त्रः—

अनुष्टुबुच्यतेऽथास्य कार्तवीर्यस्य भूपतेः। एतत् सौम्यं च रौद्रं च सर्वकामफलप्रदम् ॥१६९॥
कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रभाक्। तस्यानुस्मरणादेव हतं नष्टं च लभ्यते ॥१७०॥
स्वयं छन्दः स्मृतं पादैः सर्वैः पञ्चाङ्गकं भवेत्। अनुष्टुबस्ततो ध्यानविधिं वक्ष्येऽधुना प्रिये ॥१७१॥

कैलासाद्रिसमप्रभेभपतिपृष्ठस्थं महाभीषणं नागस्यन्दनसप्तिपत्तिनिकरैराघूर्णितैरावृतम्।
दोर्दण्डाम्बुजबद्धचापसशरं पाशाङ्कुशैरावृतं ध्यायेद् यान्तमरातिवर्गहननायातीव संपत्तये ॥१७२॥

वने महाचौरभये गजानां युद्धे त्वरातिग्रहरक्षणाय।
एवं स्मरन् मन्त्रवरं प्रजप्यादानुष्टुभं संयतधीर्हि देवि ॥१७३॥
स्वैर्हस्ताब्जैः सहस्रैर्धृतकमलसहस्रं स्मरन् मन्त्रमेनं
जप्यादासीनमब्जे निखिलमणिगणालङ्कृताङ्गं प्रसन्नम्।

बुद्ध्वैनं योगनिष्ठं मुनिभिरभिवृतं दीप्तमर्कौघतुल्यं
स्वर्णाप्त्यै गोसमृद्ध्यै सकलधनसमृद्ध्यै च मन्त्रं महान्तम् ॥१७४॥
सङ्कर्षणाय जनानां दीर्घायुर्वर्धनाय रोगाणाम्। शान्त्यै च वसुसमृद्ध्यै ध्यायेदित्थं महाभयेष्वपि च ॥

अनुष्टुप् मन्त्र—राजा कार्तवीर्य का अनुष्टुप मन्त्र सौम्य एवं रौद्र होने के साथ-साथ सर्वकामफलप्रद है। मन्त्र है—
कार्तवीर्यार्जुनो नाम राजा बाहुसहस्रभाक्। तस्यानुस्मरणादेव हृतं नष्टं च लभ्यते।।

इस मन्त्र के चार पादों से हृदय, शिर, शिखा और कवच में न्यास किया जाता है। पूरे मन्त्र से अस्त्र न्यास किया जाता है। इससे पञ्चाङ्ग भी न्यास होता है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

कैलासाद्रिसमप्रभेभपतिपृष्ठस्थं महाभीषणं नागस्यन्दनसप्तिपत्तिनिकरैराघूर्णितैरावृतम्।
दोर्दण्डाम्बुजबद्धचापसशरं पाशाङ्कुशैरावृतं ध्यायेद् यान्तमरातिवर्गहननायातीव संपत्तये।।

जंगल में, महान् चोरी के भय में, हाथियों के युद्ध में, दुष्ट ग्रह से रक्षा के लिये उपर्युक्त ध्यान करके एकाग्रता से इस मन्त्र का जप करे।

अपने हजार हाथों में हजार कमलों को धारण किये कार्तवीर्य का स्मरण कर कमल पर आसीन, अनेक मणियों से अलंकृत योगनिष्ठ, मुनियों से घिरे, प्रचण्ड सूर्य की किरणों के समान देदीप्यमान इस मन्त्र का स्वर्ण प्राप्ति, गोवृद्धि, समस्त धन-प्राप्ति के लिये जप करना चाहिये। लोगों के आकर्षण के लिये, दीर्घायु वृद्धि के लिये, रोगों की शान्ति के लिये एवं धन-समृद्धि के लिये और महाभय की शान्ति के लिये भी इसी प्रकार ध्यान करे।

आनुष्टुभयन्त्रोद्धारः

तथानुष्टुभयन्त्रम्—

आशापत्रे सरोजे दलमनु चतुरोऽनुष्टुबर्णान् विलिख्यात्
तद्बीजं कर्णिकायां स्वरयुगललसत्केसरं कादिवीतम्।
मालामन्त्रार्णवीतं दलविवरलसत्तस्य गायत्रिवर्णा-
स्त्रिस्त्रिर्भूतार्णवृत्तं सकलसुखकरं यन्त्रमानुष्टुबाख्यम् ॥१७६॥ इति।

अस्यार्थः—तत्राष्टदलकमलं कृत्वा तत्कर्णिकायां ससाध्यं कार्तवीर्यबीजं विलिख्य, तत्केसरेषु द्वन्द्वशः स्वरान् विलिख्य, तद्दलेषु आनुष्ठुभमन्त्रस्य वर्णांश्चतुरश्चतुरो विलिख्य, तेष्वेव वक्ष्यमाणकार्तवीर्यगायत्रीवर्णांस्त्रिश-स्त्रिशो विलिख्य तद्बहिर्वृत्तत्रयं विभाव्य तदन्तर्गतवीथीद्वयेऽभ्यन्तरवीथ्यां ककारादिक्षकारान्तैर्वर्णैरावेष्ट्य, बहिर्वीथ्यां प्रागुक्तचतुःषष्ट्यक्षरमालामन्त्रेण संवेष्ट्य, तद्बहिर्वृत्तं कृत्वा वृत्ताभ्यन्तरे प्राग्वत् कार्यानुसारेण भूतवर्णान् विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

इस मन्त्र का यन्त्र इस प्रकार का होता है। अष्टदल कमल बनाकर उसके कर्णिका में साध्य नाम के साथ बीज फ्रों लिखे। दल के केसर में दो-दो स्वरों को लिखे। अष्टदल के दलों में बत्तीस अक्षरों के अनुष्टुप् मन्त्र के चार-चार अक्षरों को लिखे। दलों में ही कार्तवीर्य गायत्री के तीन-तीन अक्षरों को लिखे। गायत्री है—कार्तवीर्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि तन्नोऽर्जुनः प्रचोदयात्। उसके बाहर तीन वृत्त बनाकर उनके अन्तराल की दो वीथियों में से अर्न्तगत वीथि में 'क' से 'क्ष' तक की मातृकाओं को लिखे। इसके बाद वाली वीथि में माला मन्त्र के चौंसठ अक्षरों को लिखे। उसके बाहर वृत्त बनाकर वृत्त के आभ्यन्तर में कार्य के अनुसार भूतवर्णों को लिखे। यह यन्त्र समस्त सुखों को देने वाला होता है।

कार्तवीर्यगायत्रीमहिमा

कार्तवीर्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि तन्नोऽर्जुनः प्रचोदयात्, इति गायत्री।

सर्वमन्त्रप्रयोगेषु जप्तव्यैषा हितार्थिना। गायत्री जपमात्रेण मन्त्रवीर्यप्रवर्धिनी ॥१७७॥
मन्त्रस्यास्य जपाद् देवि नष्टद्रव्यं च लभ्यते। हताश्चौरा भविष्यन्ति नष्टद्रव्यं च सिध्यति ॥१७८॥ इति।

सभी मन्त्र-प्रयोगों में 'कार्तवीर्याय विद्महे सहस्रकराय धीमहि तन्नोऽर्जुनः प्रचोदयात्' इस गायत्री मन्त्र को जप हितकारी होता है। गायत्री जपमात्र से मन्त्रवीर्य की वृद्धि होती है। इस मन्त्र के जप से नष्ट द्रव्य वापस मिलता है। चोर नष्ट होते हैं और चोरी गयी वस्तुएँ वापस मिलती हैं।

यन्त्रान्तरविधानम्

यन्त्रसारे—

क्ष्रौंबीजान्तःस्थसाध्यं दहनपुरयुगाश्रिष्वथो चक्रमन्त्रं सन्धिष्वप्यङ्गषट्कं स्वरयुगललसत्केसरे चाष्टपत्रे।
आलिख्यान्मन्त्रवर्णाञ्जलधिपरिमितान् वेष्टयेद्व्यञ्जनार्णैर्भूगेहस्थं तदेतन्निखिलसुखकरं कार्तवीर्यस्य यन्त्रम् ॥१॥
सर्वरक्षाकरमिदं धनधान्यसमृद्धिदम्। स्थापितं भवने क्षेत्रे सर्वसंपत्करं नृणाम् ॥२॥
चौरभूतपिशाचादिव्याघ्रादिभयनाशनम्।
करधृतमेतद्यन्त्रं विलिख्य कटकादिषु च युद्धेषु। वितरति योद्धुर्विजयं रक्षां च महत्तरां लक्ष्मीम् ॥३॥

अस्यार्थः—अष्टदलकमलमध्यस्थषट्कोणमध्ये ससाध्योदरं नृसिंहबीजं विलिख्य षट्सु कोणेषु सुदर्शनषडर्णं कोणसन्धिषु तत्षडङ्गानि केसरेषु युगशः स्वरान् दलेषु 'ॐ नमो भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय महाबलाय सर्वदुष्टविनाशनाय हुं फट् स्वाहा' इति मन्त्रस्य चतुरश्चतुरो वर्णान् विलिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले कादिक्षान्तार्णैः संवेष्ट्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

तद्यन्त्रस्थापनान्नृणां रक्षा सर्वत्र जायते। वाञ्छितार्थाः प्रसिध्यन्ति भृताद्वापि तथा प्रिये ॥४॥
आनुष्टुभजपाद्रात्रौ तपःस्वाध्यायतत्परः। तिष्ठन् प्रत्यङ्मुखो नित्यं शतमष्टोत्तरं प्रिये ॥५॥
मण्डलान् म्रियते चौरो विकलाङ्गोऽथवा भवेत्। जपमात्रेण वाऽचौरो भविष्यति न संशयः ॥६॥
यस्यां दिशि भयं देवि विद्यते मन्त्रवित्तमः। नित्यं तत्संमुखो रात्रौ जपेच्चानुष्टुभं मनुम् ॥७॥
भयानि न भवन्त्यस्य नात्र कार्या विचारणा। आसीनो वा जपेन्मन्त्री मन्त्रसाधनकर्मणि ॥८॥
अनेन तर्पयेत् प्राज्ञो वाञ्छिताप्त्यै जलैः सुधीः। हुनेद्वा पूर्वसंप्रोक्तद्रव्यैर्मन्त्री सुरेश्वरि ॥९॥
आनुष्टुभेन मन्त्रेण साधयेत् साधकोत्तमः। सर्वकार्माणि संसिद्धः स्वयं मन्त्री समाहितः ॥१०॥
इत्यानुष्टुभमन्त्रः।

यन्त्रसार के अनुसार पहले षट्कोण बनाकर उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। षट्कोण के मध्य में नृसिंहबीज क्ष्रौं के उदर में साध्य नाम लिखे। छः कोणों में सुदर्शन षडक्षर मन्त्र के वर्णों को एक-एक करके लिखे। कोणसन्धियों में षडङ्ग मन्त्र लिखे। अष्टदल के केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। दलों में 'ॐ नमो भगवते कार्तवीर्यार्जुनाय महाबलाय सर्वदुष्टविनाशनाय हुं फट् स्वाहा' मन्त्र के चार-चार वर्णों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में 'क' से 'क्ष' तक के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। यह यन्त्र सर्वारक्षाकर एवं धन-धान्य समृद्धि-प्रदायक होता है। घर में या क्षेत्र में इसे स्थापित करने से मनुष्यों को सभी सम्पत्ति मिलती है। चोर भूत पिशाच व्याघ्रादि भय का नाश होता है। इस यन्त्र को लिखकर बाँह में धारण करके युद्ध में जाने पर विजय होती है और बहुत धन मिलता हैं।

इस यन्त्र को स्थापित करने से मनुष्यों की रक्षा सर्वत्र होती है। भृतों से भी वांछितार्थ सिद्ध होता है। तप स्वाध्याय में तत्पर हो पश्चिममुख बैठकर रात में इस अनुष्टुप् मन्त्र का एक सौ आठ जप करे तो चालीस दिनों में चोर मर जाता हैं या विकलाङ्ग हो जाता है। इसके जपमात्र से घर में चोरी नहीं होती। जिस दिशा में भय हो, उसी दिशा में मुख करके रात में अनुष्टुप् मन्त्र का जप करे तब उसे भय नहीं रहता। मन्त्रसाधन कर्म में बैठकर मन्त्र जप करे। वांछित-प्राप्ति के लिये इस मन्त्र से शुद्ध जल से तर्पण करे। पूर्वोक्त द्रव्यों से हवन करे। तदनन्तर अनुष्टुप् मन्त्र से साधक सभी कर्मों को सिद्ध करें।

मालामन्त्रः

तथा मालामन्त्रः—

प्रवक्ष्यामि च सिद्ध्यर्थं सर्वकार्येषु सुन्दरि। येनाशु मुनयः सिद्धिं गताः पूर्वं महाहवे ॥१॥

ॐनमो भगवते श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय हैहयनाथाय श्रीकार्तवीर्यार्जुन सहस्रकरसदृश सर्वदुष्टान्तक सर्वशिष्ट शिष्टेष्टद सर्वत उदधेरागन्तुकामान् अस्मद्वसुविलुम्पकांश्चौरसमूहान् स्वकरसहस्रैर्निवारय २ रुन्धय २ स्वपाशसहस्रैर्बन्धय २ अङ्कुशसहस्रैराकर्षय २ स्वचापोद्धूतबाणसहस्रैर्भिन्धि २ स्वहस्तोद्धूतखड्गसहस्रैश्छिन्धि २ स्वहस्तोद्धूतमुसलसहस्रैर्मारय २ स्वशङ्खोद्धूतनादसहस्रैर्भीषय २ स्वहस्तोद्धूतचक्रसहस्रैर्निकृन्तय २ परकृत्यां त्रासय २ गर्ज २ आकर्षय २ भ्रामय २ मोहय २ उद्वासय २ उन्मादय २ तापय २ विनाशय २ विदारय २ स्तम्भय २ जृम्भय २ मारय २ वशङ्कुरु २ उच्चाटय २ विनाशय २ दत्तात्रेयश्रीपादप्रियाय नमः श्रीकार्तवीर्यार्जुन सर्वत उदधेरागन्तुकामान् अस्मद्वसुविलुम्पकान् चोरसमूहान् सम्यगुन्मूलय २ हुं फट् स्वाहा। मालामन्त्रोऽयम्।

अस्य मालामन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीकार्तवीर्यार्जुनो देवता सर्वार्थसाधनाय विनियोगः। दत्तात्रेयप्रियतमाय हृदयाय नमः। माहिष्मतीनाथाय शिरसे०। रेवाजलक्रीडासंसक्ताय शिखायै०। हैहयाधिपतये कवचाय०। सहस्रबाहवे अस्त्राय०। ध्यानम्—

दोर्दण्डैकसहस्रसंमितकरेष्वेतेष्वजस्रं दधत् कोदण्डैः सशरैरुदग्रविशिखैरुद्यद्विवस्वत्प्रभः।
ब्रह्माण्डं परिपूरयंस्तदखिलं गण्डस्थलान्दोलितद्योतत्कुण्डलमण्डितो विजयते श्रीकार्तवीर्यप्रभुः ॥२॥

एवं ध्यात्वा समभ्यर्च्य सर्वकर्माणि कारयेत्। (त्रिसहस्रं जपः प्रोक्तः शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥३॥
मन्त्रभेदेषु पूजायामृष्यादिन्यासतत्त्वतः। पूजयेत् तत्तदङ्गाद्यं पूर्वोक्तावरणैर्बुधः ॥४॥
अनेन मन्त्रवर्येण सर्वकार्याणि कारयेत्।) मालामन्त्रजपाच्छत्रूंश्चौरांश्चापि महाबलान् ॥५॥
क्षपयेत् स्तम्भयेद्वापि चाटयेन्मारयेत्तथा। वशयेत् तत्क्षणाद् देवि त्रैलोक्यमपि मन्त्रवित् ॥६॥
क्षोभयेत् स्तम्भयेत् प्राज्ञः शमयेच्च ज्वरादिकान्। क्षिप्रं समीहितार्थाप्त्यै मालामन्त्रः प्रजायते ॥७॥
वक्ष्यमाणप्रकारेण ध्यायेत् तन्मन्त्रदेवताम्।

ध्यानम्—

चक्रेषुचापमुसलासिकुठारपाशप्रासाढ्यचर्मधृतशङ्खधरैः स्वहस्तैः।
दक्षोत्तरैः प्रतिशतैररुणाम्बराढ्यं मध्यन्दिनार्कसदृशं स्मरतातिघोरतिम् ॥८॥
रक्ताम्बराक्षमतिभीषणमेकनाथं नीलाम्बुदाभगजपृष्ठगतं स्वहस्तैः।
संवेष्टितं सकलदुष्टहरं विशिष्टं शिष्टेष्टदं सकलदुःखनिवारणाय ॥९॥

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्री मालामन्त्रं मनूत्तमम्। अर्धरात्रे विशेषेण नष्टद्रव्याप्तिसिद्धये ॥१०॥
चौरैर्हृतं समानेतुं नित्यमष्टोत्तरं शतम्। जपेन्निश्येकपादेन सदा रात्रौ विचक्षणः ॥११॥
हृतं द्रव्यं प्रगृह्यातिकृच्छ्रेण भ्रान्तमानसाः। समेत्य मन्त्रिणे चोराः प्रार्पयिष्यन्त्यसंशयम् ॥१२॥
नायाति चेन्मृतिस्तस्य षण्मासाज्जपमात्रतः। चौरैर्हृतान् पशून् मन्त्री यद्यानेतुं समीहति ॥१३॥
अनेन मनुना तेषां कण्ठपाशं जपेन्निशि। प्रगृह्य देवतां ध्यायन् नित्यमष्टोत्तरं शतम् ॥१४॥
आयान्ति स्वगृहं गावो द्वादशाहे विमोचिताः। आयान्ति त्रिदिने देवि सितसर्षपहोमतः ॥१५॥
हृतशेषैर्हुनेद्रात्रौ चौरैर्द्रव्यैः समाहितः। व्रीहिधान्यादिकं मन्त्री गुर्वादिशेन तत्क्षणात् ॥१६॥
हृतं प्रकाश्यते देवि चोरैर्झटिति नान्यथा। बाणान् प्रवेशयेद्रात्रौ धनुषा ध्यानतत्परः ॥१७॥
दशदिक्षु जपन् मन्त्रं गृहस्य नगरस्य वा। राष्ट्रस्य चापि देशस्य वरणस्याप्यथो गवाम् ॥१८॥

मन्त्रमूर्तिः स्वयं भूत्वा रक्षायै जगतो भयात् । मन्त्रेण परिजप्तानि पार्थिवानि रजांसि च ॥१९॥
क्षिप्तानि मन्त्रिणा यत्र तत्र रक्षा भवेन्निशि । तर्पयेद्वा हुनेद्वापि जपमानेन नित्यशः ॥२०॥
सर्वार्थसिद्ध्यै लक्ष्म्यै च रक्षायै च विशेषतः । सर्वत्र भूपतेर्ध्यानं विना ध्यानं न सिध्यति ॥२१॥
यथा च लभ्यते ध्यानं गुरुभक्तेन सुन्दरि । नान्येन लभ्यते ध्यानं मन्त्रिणा चेति निश्चयः ॥२२॥
सर्वदा कुर्वतः कर्म जपहोमार्चनादिभिः । विना ध्यानेन चेत्सर्वं तत्फलं नास्य सिद्ध्यति ॥२३॥
गुर्वाज्ञातत्परश्चेत् स्याद्विना ध्यानादपि प्रिये । सिध्यन्ति सर्वकार्याणि तस्य नास्त्यत्र संशयः ॥२४॥
तस्मात् प्राज्ञः सदा यत्नाद्गुरुभक्तिं समाचरेत् । प्राणैश्चैव धनैः सर्वैः कर्मणा मनसा गिरा ॥२५॥
सर्वदा सर्वदेवेशि गुरोराज्ञां न लङ्घयेत् । कृतवीर्यसुतस्यास्य मन्त्रभेदं सुदुस्तरम् ॥२६॥
गदितं तव देवेशि मया गुप्तमनुत्तमम् । त्वया चैतन्महामन्त्रं न प्रकाश्यं दुरात्मने ॥२७॥
विष्णुभक्ताय दातव्यमतिगुह्यं सुदुर्लभम् । सर्वरक्षाकरं देवि चौरनाशं मलापहम् ॥२८॥
भुक्तिमुक्तिप्रदं देवि सत्यं सत्यं न संशयः ।

माला मन्त्र—अब मैं सभी कार्यों की सिद्धि के लिये मालामन्त्र को कहता हूँ, जिससे पूर्वकाल में मुनियों ने सिद्धि प्राप्त किया है। माला मन्त्र है—ॐनमो भगवते श्रीकार्तवीर्यार्जुनाय हैहयनाथाय श्रीकार्तवीर्यार्जुन सहस्रकरसदृश सर्वदुष्टान्तक सर्वशिष्ट शिष्टेष्टद सर्वत उदधेरागन्तुकामान् अस्मद्वसुविलुम्पकांश्चौरसमूहान् स्वकरसहस्रैर्निवारय निवारय रुन्धय रुन्धय स्वपाशसहस्रैर्बन्धय बन्धय अङ्कुशसहस्रैराकर्षय आकर्षण स्वचापोद्धृतबाणसहस्रैर्भिन्धि भिन्धि स्वहस्तोद्धृतखड्गसहस्रैश्छिन्धि छिन्धि स्वहस्तोद्धृत-मुसलसहस्रैर्मारय मारय स्वशङ्खोद्धूतनादसहस्रैर्भीषय भीषण स्वहस्तोद्धृतचक्रसहस्रैर्निकृन्तय निकृन्तय परकृत्यां त्रासय त्रासय गर्ज गर्ज आकर्षय आकर्षय भ्रामय भ्रामय मोहय मोहय उद्वासय उद्वासय उन्मादय उन्मादय तापय तापय विनाशय विनाशय विदारय विदारय स्तम्भय स्तम्भय जृम्भय जृम्भय मारय मारय वशङ्कुरु कुरु उच्चाटय उच्चाटय विनाशय विनाशय दत्तात्रेयश्रीपादप्रियाय नमः श्रीकार्तवीर्यार्जुन सर्वत उदधेरागन्तुकामान् अस्मद्वसुविलुम्पकान् चोरसमूहान् सम्यगुन्मूलय उन्मूलय हुं फट् स्वाहा। इस माला-मन्त्र के दत्तात्रेय ऋषि, गायत्री छन्द एवं श्री कार्तवीर्यार्जुन देवता हैं; सर्वार्थ-साधन के लिये इसका विनियोग होता है।

इसका अंगन्यास इस प्रकार होता है—दत्तात्रेयप्रियातमाय हृदयाय नमः, माहिष्मतीनाथाय शिरसे स्वाहा, रेवाजलक्रीड़ासंसक्ताय शिखायै वषट्, हैहयाधिपतये कवचाय हुम्, सहस्रबाहवे अस्त्राय फट्। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

दोर्दण्डैकसहस्रसंमितकरेष्वेतेष्वजस्रं दधत् कोदण्डैः सशरैरुदग्रविशिखैरुद्यद्विवस्वत्प्रभः।
ब्रह्माण्डं परिपूरयंस्तदखिलं गण्डस्थलान्दोलितद्योतत्कुण्डलमण्डितो विजयते श्रीकार्तवीर्यप्रभुः।।

ऐसा ध्यान करके पूजा करके सभी कर्मों को करे। इसका जप तीन हजार कहा गया है। शेष विधियाँ पूर्ववत् होती हैं। मन्त्रभेद से पूजा में ऋष्यादि न्यास करे। तब उसकी पूजा अंग आवरणों के साथ करे। इस श्रेष्ठ मन्त्र से सभी कार्य करे। इस मालामन्त्र के जप से महाबलवान चोर को भी स्तम्भित-उच्चाटित करके साधक मार सकता है। क्षणमात्र में तीनों लोकों को वश में कर सकता है। प्राज्ञों को क्षुब्ध एवं स्तम्भित कर सकता है। ज्वरों का शमन कर सकता है। शीघ्र वांछितार्थ प्राप्त कर सकता है। मन्त्रदेवता का ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

चक्रेषुचापमुसलासिकुठारपाशप्रासाढ्यचर्मधृतशङ्खधरैः स्वहस्तैः।
दक्षोत्तरैः प्रतिशतैररुणाम्बराढ्यं मध्यन्दिनार्कसदृशं स्मरतातिघोरतिम्।।
रक्ताम्बराक्षमतिभीषणमेकनाथं नीलाम्बुदाभगजपृष्ठगतं स्वहस्तैः।
संवेष्टितं सकलदुष्टहरं विशिष्टं शिष्टेष्टदं सकलदुःखनिवारणाय।।

ऐसा ध्यान करके उत्तम मालामन्त्र का जप साधक करे। नष्ट द्रव्य की प्राप्ति के लिये विशेष रूप से आधी रात में जप करे। चोरी होने पर सामान्यतः नित्य एक सौ आठ मन्त्र जप एक पैर पर खड़ा होकर रात में करे। ऐसा करने से चोर भ्रान्त मानस होकर चोरी गये सामानों के साथ साधक के पास चला आता है। चोर यदि नहीं आता है तो छः महीन के जप

से उसकी मृत्यु हो जाती है। चोरी गये पशु को वापस पाने के लिये उसे रस्सी से पकड़े हुए देवता का ध्यान करके जप करे तो गाय बारह दिनों वापस घर आ जाती है। तीन दिनों तक पीले सरसों से हवन करने पर गायें वापस आ जाती हैं। चोरी गये अन्न में से बचे हुए अन्न से रात में हवन गुरु के आदेश से करे तो चोर का पता चल जाता है। धनुष पर बाण चढ़ाये हुए देव का ध्यान करके घर नगर राष्ट्र देश या गोशाला के दशो दिशाओं में रक्षा के लिये स्वयं मन्त्रमूर्ति होकर मिट्टी धूल को मन्त्रित करके फेंके तो इनकी रक्षा होती है। मन्त्र जपते हुए तर्पण-हवन नित्य करे तो सर्वार्थ सिद्ध होते हैं, लक्ष्मी प्राप्त होती है। रक्षा के लिये विशेष रूप से इसका प्रयोग होता है। इन सभी कार्यों के लिये भूपति का ध्यान करे, ध्यान के बिना कार्य सिद्ध नहीं होते। गुरु से जैसा ध्यान मिलता है, वैसा दूसरों से नहीं मिलता। जप होम अर्चन कर्म के फल बिना ध्यान के नहीं मिलते। गुरु की आज्ञा में तत्पर हुए बिना ध्यान से भी कार्य सिद्ध नहीं होते। इसलिये साधक यत्न से गुरु भक्ति-आचरण करे। गुरु की सेवा प्राण से धन से, सभी कर्मों से, मन से एवं वाणी से सर्वदा करे। गुरु की आज्ञा का उल्लंघन कभी न करे। इस महामन्त्र को दुरात्मा को नहीं बतलाना चाहिये। अति गुह्य, सुदुर्लभ, सर्वरक्षाकर, चौरनाशक, पापनाशक, भुक्ति-मुक्ति प्रद यह मन्त्र विष्णुभक्त को ही देय है। यह सत्य है।

दीपदानविधानम्

अथ दीपविधिः।

श्रीदेव्युवाच

देवदेव महादेव भक्तानुग्रहकारक ॥२९॥
पृच्छामि त्वां सुरश्रेष्ठ लोकानां हितकाम्यया। कार्तवीर्यस्य नृपतेर्वद दीपविधिं प्रभो ॥३०॥

ईश्वर उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोकानुग्रहकाम्यया। गुह्यं च मम सर्वस्वं न चाख्येयं दुरात्मने ॥३१॥
राजचौरादिपीडासु ग्रहरोगभयेषु च। नानादुःखेषु देवेशि सुखप्राप्त्यै तथैव च॥३२॥
दीपं कुर्वीत विधिवद्गुरुदर्शितमार्गतः। सौवर्णे राजते ताम्रे कांस्ये लौहेऽथ मृन्मये ॥३३॥
गोधूममाषमुद्गानां चूर्णेन घटितेऽपि वा। सौवर्णे कार्यसिद्धिः स्याद्रौप्ये वशं जगद्भवेत् ॥३४॥
ताम्रे तयोरभावेऽपि कांस्ये विद्वेषणं भवेत्। मारणं लोहपात्रे तु उच्चाटो मृन्मये तथा ॥३५॥
गोधूमचूर्णघटिते विवादे विजयो भवेत्। माषे शत्रुमुखस्तम्भः स्यान्मुद्गे शान्तिरुत्तमा ॥३६॥
अलाभे सर्वपात्राणां ताम्रे कुर्याद्विचक्षणः। सप्त पञ्च तथा तिस्र एका वा वर्तिका भवेत् ॥३७॥
गुरुकार्येऽधिका कार्या स्वल्पे त्वल्पा मता प्रिये। सूत्रं श्वेतं तथा पीतं माञ्जिष्ठं च कुसुम्भकम् ॥३८॥
कृष्णं च कर्बुरं चैव क्रमतो विनियोजयेत्। सर्वाभावे सितेनैव कुर्याद्वर्तीः पृथक् प्रिये ॥३९॥
दश पञ्चाधिकाश्चैव विंशतिस्त्रिंशदेव च। चत्वारिंशत्तथा कार्या पञ्चाशदपि वा भवेत् ॥४०॥
तत्तत्कार्यवशाद् देवि कुर्यात् तन्तून् समाहितः। गोघृतेन प्रकर्तव्यो दीपः सर्वार्थसिद्धये ॥४१॥
गोमयेनोपलिप्तायां भूमौ यन्त्रं समालिखेत्। (कपिलागोमयेनैवं षट्कोणं कारयेत्ततः ॥४२॥
मारबीजं कर्णिकायां षट्कोणे बीजषट्ककम्। दिक्षु बीजचतुष्कं च शेषैः संवेष्टयेद्धि तत्) ॥४३॥
तत्र प्रत्यङ्मुखो दीपः स्थाप्यः सर्वाङ्गसुन्दरि। प्राणानायम्य विधिवन्मूलेनाङ्गं समाचरेत् ॥४४॥

मूलेन प्राणानायम्य प्रागुक्तं पञ्चाङ्गं कुर्यादित्यर्थः।

यन्त्रराजं लिखित्वा तु ताम्रपात्रेऽष्टगन्धकैः। स्थापयेत् पूर्ववत्तस्य कुर्यात् सङ्कल्पमादरात् ॥४५॥
तारं पूर्वं समुद्धृत्य वक्त्रवृत्तं समुद्धरेत्। संयोजयेत् तत्सोमार्धनादेन च पुनः सति ॥४६॥
व्योमार्धेन्द्वग्निना देव्या युक्तं तदपि संलिखेत्। वषट्पदं ततः कार्तवीर्यार्जुनपदं तथा ॥४७॥
माहिष्मतीनाथपदं सहस्रबाहुमुच्चरेत्। सहस्रक्रतुदीक्षित-दत्तात्रेयप्रियस्तथा ॥४८॥

ङेन्तान्येतानि संप्रोच्य आत्रेयाय पठेत् पुनः । अनुसूयागर्भरत्नपदं ङेन्तं समुच्चरेत् ॥४९॥
व्योमाग्निवामकर्णेन्दुनादयुक्तं पुनः प्रिये । चक्रिणं पुनरुद्धृत्य वह्निनादेन संयुतम् ॥५०॥
वामकर्णेन्दुसंयुक्तमिमं दीपं पुनर्वदेत् । गृहाणेति-पदं पश्चादमुकं रक्ष रक्ष च ॥५१॥
दुष्टान् नाशय पातय घातयेति वदेद् द्विशः । शत्रूञ्जहि जहीत्युक्त्वा मायाप्रणवमुच्चरेत् ॥५२॥
स्वबीजं मारबीजं च वामाक्षि बिन्दुसंयुतम् । वह्निजायां वदेत् पश्चान्मन्त्रशास्त्रविशारदः ॥५३॥
अनेन दीपवर्य्येण पश्चिमाभिमुखेन च । मां रक्ष च वदेद् देवि देवदत्त-पदं तथा ॥५४॥
वरप्रदानाय-पदं व्योमयुग्मं वदेत्ततः । (वामकर्णेन्दुना युक्तं नादेन च पुनः प्रिये ॥५५॥
व्योमाग्निमायासंयुक्तं नादयुक्तं पुनर्वदेत् । तारं मारं द्वितीयं च बीजं प्रोच्य वदेत्ततः)॥५६॥
वह्निजायां ततो देवि जलं भुवि विनिक्षिपेत् ।

मन्त्रः प्रयोगे स्पष्टयितव्यः। तथा—

तपवर्गौ सनादौ च वेदादिर्वह्निवल्लभा । पश्चिमाभिमुखो भूत्वा कृत्वा च करसंपुटम् ॥५७॥
सकृज्जप्त्वा पुनर्मन्त्री जपेन्मन्त्रं समाहितः । तारं नारायणं सेन्दुं व्योमाग्निनादसंयुतम् ॥५८॥
मायायुक्तं समुद्धृत्य प्रथमं मायया युतम् । उच्चरेच्च द्वितीयं तु बीजं स्याद्वह्निवल्लभा ॥५९॥
चक्रिणं वह्निसंयुक्तं तारनादयुतं प्रिये । तारमुद्धृत्य प्रजपेद् दीपाग्रे वै सहस्रकम् ॥६०॥
अनेन विधिना देवि कार्तवीर्यस्य गोपतेः । दीपो देयः प्रयत्नेन सर्वं कार्यमभीप्सता ॥६१॥
गुरोराज्ञां पुरस्कृत्य कुर्याद् देवि प्रयत्नतः । अन्यथा हि कृतं लोके विपरीतफलं भवेत् ॥६२॥
विधानं दीपदानस्य कृतघ्ने पिशुनाय च । ब्रह्मकर्मविहीनाय न वक्तव्यं कदाचन ॥६३॥
सुभक्ताय सुशिष्याय साधकाय विशेषतः। विधानं देवि वक्तव्यं मम प्रीतिकरं शिवे ॥६४॥
किं बहूक्तेन भो देवि कल्पोऽयमखिलार्थदः । अथाभिधीयते मानमाज्यस्य वरवर्णिनि ॥६५॥
साधकानां हितार्थाय सर्वार्थस्य च सिद्धये । पलानां पञ्चविंशत्या दीपो भूतविनाशनः ॥६६॥
पञ्चाशता घृतपलैश्चौरशान्त्यै च कारयेत् । शत्रुवश्याय च तथा सन्धिकार्ये तथैव च ॥६७॥
पञ्चसप्ततिभिर्देवि शत्रूणां स्यात् पराजयः । शतेन शत्रुनाशः स्यात् सहस्रेणाखिलाः क्रियाः ॥६८॥
सिध्यन्ति साधकानां हि प्रयोगा येऽपि दुष्कराः । नित्यदीपे न मानं हि सोऽपि कार्यः स्वशक्तितः ॥६९॥
यथाकथञ्चिद् देवेशि नित्यदीपं प्रकल्पयेत् । कार्तवीर्याय देवाय सर्वकल्याणसिद्धये ॥७०॥
गुरुकार्येऽधिकं मानं कर्तव्यं देवि सर्वदा । अल्पद्रव्यैः प्रकर्तव्यः स्वल्पे कार्ये वरानने ॥७१॥
विना मानं न कुर्वीत कार्तवीर्यस्य भूपतेः । दीपं देवेशि कार्यार्थे कुर्वन्नेष्टमवाप्नुयात् ॥७२॥

अथ दीपदानप्रयोगः—तत्र साधकः कृतनित्यक्रियः शुभे स्थाने रहसि वितानादिभिरलङ्कृते गृहे गोमयेनोपलिप्ते स्थाने कपिलागोमयेन षट्कोणमण्डलं कृत्वा, तन्मध्ये कुङ्कुमचन्दनादिभिः कामबीजं विलिख्य, षट्सु कोणेषु मूलविंशत्यक्षरमन्त्रस्य प्रणवादि कामबीजरहितं बीजषट्कं (ओंफ्रोंव्रींभ्रूंआंह्रीं) विलिख्य, षट्कोणस्य चतुर्दिक्षु स्वाग्रादि शिष्टं बीजचतुष्टयं (फ्रोंश्रींहुंफट्) विलिख्य, कार्तादिनवभिर्वर्णैः (कार्तवीर्यार्जुनाय नमः) षट्कोणं संवेष्ट्य, तत्र कार्यानुरूपेण प्रोक्तदीपपात्रे प्रोक्तवर्तीर्निक्षिप्य प्रज्वाल्य, षट्कोणमध्ये पश्चिमाभिमुखं दीपं निधाय, मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा ऋष्यादिन्यासजातं विधाय, ताम्रपात्रे वैष्णवाष्टगन्धैः कार्तवीर्यस्य यन्त्रं (अष्टदलगर्भचतुरस्ररूपं) प्रागुक्तं विलिख्य, दीपस्य पूर्वभागे गोमयोपलिप्ते स्वाभिमुखं संस्थाप्य, अद्येत्यादितिथ्याद्युल्लेखनान्ते स्वगोत्रनामाद्युच्चार्य 'अमुककार्यसिद्ध्यर्थं दीपदानमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य, तस्मिन् यन्त्रे देवमावाह्य सर्वोपचारैः साङ्गं, सावरणं संपूज्य, दक्षिणहस्तेन जलमादाय 'ॐआंह्रींवषट्कार्तवीर्यार्जुनाय माहिष्मतीनाथाय सहस्रबाहवे सहस्रक्रतुदीक्षिताय दत्तात्रेयप्रियाय आत्रेयाय अनुसूयागर्भरत्नाय ह्रूंक्रूं इमं दीपं गृहाण अमुकं रक्षरक्ष दुष्टान् नाशय नाशय पातय पातय

घातय घातय शत्रूञ्जहि जहि ह्लींॐफ्रोंक्लींईं स्वाहा अनेन दीपवर्येण पश्चिमाभिमुखेन मां रक्ष 'देवदत्तवरप्रदानाय ह्लींह्लींह्लींओंक्लींच्रीं स्वाहा' इमं मन्त्रं जपित्वा तज्जलं भूमौ निक्षिप्य पश्चिमाभिमुखो भूत्वा कृताञ्जलिः 'तंथंदंधंनंपंफंबंभमंॐ स्वाहा' इति सकृत् जपित्वा, ॐआंह्लींफ्रींच्रीं स्वाहा क्रोंॐ' इति मन्त्रं सहस्रावृत्त्या जपित्वा ततो यावद्दीपस्तिष्ठति तावत्प्रत्यहं तस्मिन् यन्त्रे देवं पूजयेत्। दीपनिर्वापणे देवं विसर्जयेत्। इति देवाय जपं समर्प्य स्तुत्वा प्रणमेत्। इत्थं प्रत्यहं घृतसमाप्तिर्यावद्यावच्च कार्यसिद्धिस्तावत् कुर्यादिति दीपदानविधिः। इति वैष्णवं प्रकरणम्।

दीपदान विधि—श्रीदेवी ने कहा कि हे देवदेव महादेव! भक्तों पर कृपा करने वाले! मैं लोकहित की कामना से आपसे पूछती हूँ। कार्तवीर्य नृपति की दीपदान विधि मुझे बतलाइये। ईश्वर ने कहा कि हे देवि! सुनो, मैं लोकानुग्रह की कामना से अपना सर्वस्व गुह्य तुमसे कहता हूँ। इसे दुरात्माओं से नहीं कहना चाहिये। राज-चौरपीड़ा में, ग्रह-रोगभय में, नाना दुःखों में, सुख-प्राप्ति के लिये गुरुदर्शित मार्ग से दीपदान करना चाहिये। सोना, चाँदी, ताम्बा, कांसा, लोहा और मिट्टी तथा गेहूँ के आँटे के दीपकों के दान से विवाद में विजय मिलता है। उड़द पिष्ट के दीपदान से शत्रुमुख का स्तम्भन होता है। मूंगपिष्ट के दीपदान से उत्तम शान्ति होती है। सोने के दीपक अप्राप्त होने पर ताम्बे के दीपक में सात पाँच तीन या एक बत्ती या कार्य की गुरुता-लघुता के अनुसार दीप-बत्तियों की संख्या होती है। उजले, पीले, माञ्जिष्ठ, कुसुम्भ, काले, कर्पूर सूतों की बत्ती बनावे। सबों के अभाव में उजले सूतों की बत्ती बनावे। पन्द्रह, बीस, तीस, चालीस या पचास सूतों से कार्य के अनुसार बत्ती बनावे। सर्वार्थ-सिद्धि के लिये गाय के घी से दीपक जलावे।

नित्य क्रिया के बाद वितानादि से अलंकृत शुभ स्थान में या घर में गोबर से लिपी भूमि में कपिला गाय के गोबर से षट्कोण बनाकर उसके मध्य में लाल चन्दन से कामबीज क्लीं लिखे। छः कोणों में मूल विंशाक्षर मन्त्र के प्रणवदि काम बीजरहित छः बीज ओं फ्रों च्रीं भ्रूं आं ह्रीं लिखे। षट्कोण के पूर्वादि चारो दिशाओं में शिष्ट चार बीज 'क्रों श्रीं हुं फट्' लिखे। 'कार्तवीर्यार्जुनाय नमः' के नव वर्णों से षट्कोण को वेष्टित करे। कार्यानुरूप पूर्वोक्त दीपपात्र में पूर्वोक्त बत्ती रखकर जलावे। षट्कोण मध्य में दीपों को पश्चिमाभिमुख रखे। मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके ऋष्यादि न्यास करे। ताम्र पात्र में वैष्णव अष्टगन्ध से कार्तवीर्य यन्त्र में अष्टदल के बाहर चतुरस्र बनावे। दीपक के पूर्व भाग में गोबर से लिप्त भूमि पर उस यन्त्र को स्थापित करे। तिथि-वार-नक्षत्र आदि का उल्लेख करते हुये अपने कार्यसिद्धि के लिये दीपदान का संकल्प करे। उस यन्त्र में देव का आवाहन करके सभी उपचारों से अंगों सहित आवरण पूजा करे। दाँयें हाथ में जल लेकर 'ॐआंह्लींवषट्कार्तवीर्यार्जुनाय माहिष्मतीनाथाय सहस्रबाहवे सहस्रक्रतुदीक्षिताय दत्तात्रेयप्रियाय आत्रेयाय अनुसूयागर्भरत्नाय ह्रूंक्रूं इमं दीपं गृहाण अमुकं रक्षरक्ष दुष्टान् नाशय नाशय पातय पातय घातय घातय शत्रूञ्जहि जहि ह्रींॐफ्रोंक्लींईं स्वाहा अनेन दीपवर्येण पश्चिमाभिमुखेन मां रक्ष 'देवदत्तवरप्रदानाय ह्रींह्रींह्रींओंक्लींच्रीं स्वाहा' का जप करके जल को भूमि पर गिरा दे। पश्चिम की ओर मुख करके हाथ जोड़कर 'तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं ॐ स्वाहा' का एक बार जप करे। तब ॐ आं ह्रीं फ्रीं च्रीं स्वाहा क्रों ॐ' का एक हजार जप करे। जब तक दीपक जलता रहे तब तक उस यन्त्र में प्रतिदिन देव की पूजा करे। दीपक के बुझने पर देव का विसर्जन करे। देव को जप समर्पित करके स्तुति करके प्रणाम करे। इस प्रकार प्रतिदिन जब तक दीप जलता रहे तब तक कार्यसिद्धि होने तक जप करता रहे।

गुरु की आज्ञा पाकर दीपदान करे; अन्यथा विपरीत फल प्राप्त होता है। दीपदान का विधान कृतघ्न चुगलखोर, ब्रह्मकर्मविहीनों को नहीं बतलाना चाहिये। सुभक्त, सुशिष्य, साधकविशेष को विधान बतलाने से मैं प्रसन्न होता हूँ। हे देवि! बहुत क्या कहा जाय, यह कल्प सर्वार्थदायक है।

अब मैं दीप के लिये गोघृत का मान बतलाता हूँ, जो साधकों के हितार्थ सर्वार्थसिद्धिप्रद है। भूत-विनाशन के लिये २५ पल बराबर १५०० ग्राम (डेढ़ किलो) घी दीपक में भरे। पचास पल = तीन किलो घी का दीपक शान्ति, शत्रु-वश्य, सन्धिकार्य के लिये जलाये। साढ़े चार किलो घी का दीपक जलाने से शत्रु का पराजय होता है। एक सौ पल = छः किलो के घी का दीपक जलाने से शत्रु का नाश होता है। एक हजार पल = ६० किलो घी का दीपक जलाने से सभी कार्य होते

हैं। साधक के दुष्कर प्रयोग भी सिद्ध होते हैं। नित्य दीपदान का कोई मान नहीं है। यह अपनी शक्ति के अनुसार करे। सभी कल्याण-सिद्धि के लिये कार्तवीर्य देव के लिये नित्य दीपदान करे। अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य के लिये अधिक मान का दीपक जलावे। स्वल्प कार्य के लिये अल्प द्रव्य का दीपक जलावे। विना मान का दीपक कार्तवीर्य के लिये न करे। कार्य-सिद्धि के लिये द्रव्यमान से दीपक जलावे।

सौरमन्त्रमहिमवर्णनम्

अथ सौरमन्त्रा उद्धीयन्ते तत्र सारसंग्रहे—

अथोच्यन्ते सौरमन्त्राः सर्वागमसुगोपिताः। आयुरारोग्यधनदाः कीर्तिदाः पुत्रपौत्रदाः ॥१॥
सर्वसौभाग्यजनकाः सर्वापन्नाशकाः सदा। अष्टादश त्वचो रोगास्तेषां नाशकराश्च ये ॥२॥
त्रिलोक्यां विश्रुता नित्या नारदाद्यैश्च सेविताः। तथा गन्धर्वसिद्धौघविद्याधरनिषेविताः ॥३॥
सर्वरोगहराः सर्वे सर्वोपद्रवनाशकाः। धर्मार्थकाममोक्षाप्तितीर्थरूपाः शुभोदयाः ॥४॥
वश्याकर्षणसंस्तम्भविद्वेषोच्चाटमारणे। शक्ताः स्मरणमात्रेण साधकेन सुसाधिताः ॥५॥
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानदृष्टिप्रदायकाः। वाक्सिद्धिखेचरीसिद्धिपादुकासिद्धिदायकाः ॥६॥
किं बहूक्तेन विधिना साधिताः सर्वकामदाः।

सौरमन्त्र—सारसंग्रह में कहा गया है कि अब मैं सभी आगमों में गोपित सूर्य मन्त्र को कहता हूँ, जो आयु-आरोग्य-धन-कीर्ति-पुत्र-पौत्रप्रद, सर्वसौभाग्यदायक, सर्वापन्नाशक, अट्ठारह प्रकार के त्वचा रोग का नाशक, तीनों लोकों में विख्यात नारदादि से सेवित है। यह गन्धर्व सिद्धौघ विद्याधरों से सेवित है। सर्वरोगहारी, सर्वोपद्रवविनाशक, धर्मार्थ-काम-मोक्षप्रदायक, तीर्थरूप है। वश्य, आकर्षण, स्तम्भन, विद्वेषण, उच्चाटन, मारण कर्म में यह मन्त्र समर्थ है। स्मरणमात्र से साधकों को यह सिद्ध होता है। अज्ञान-तिमिरान्धों को यह ज्ञानदृष्टि, प्रदायक है। वाक्सिद्धि, खेचरी-सिद्धि-पादुका-सिद्धिदायक है। बहुत क्या कहा जाय; विधिवत् सिद्ध होने पर सर्वकामदायक है।

अष्टार्णसौरमन्त्रः

प्रोच्यतेऽभीष्टफलदस्तेष्वप्यष्टाक्षरो मनुः ॥७॥
प्रणवो घृणिसर्गान्ते चन्द्रोऽर्घीशसमन्वितः। ईरोऽग्निशिखरोऽनन्तो द सुसूक्ष्मः त्यसंयुतः ॥८॥
अष्टवर्णो मनुर्भानोरिष्टदः परिकीर्तितः।

प्रणव ॐ। घृणि स्वरूपं। सर्गो विसर्गः तेन घृणिः। चन्द्रः स, अर्घीश ऊ, तेन सू। ईरो य, अग्नी र, तेन र्य। अनन्त आ। द स्वरूपं, सूक्ष्म इ, तेन दि। त्य स्वरूपं। अत्र यकाराकारयोर्न सन्धिः। एवं श्रुतिदर्शनात्। तथाच श्रुतिः—'घृणिरिति द्वे अक्षरे सूर्य इति त्रीणि (?द्वे) आदित्य इति त्रीणि एतद्वै सावित्रस्याष्टाक्षरं परमं पदं श्रियाभिषिक्तं य एवं वेद श्रिया हैवाभिषिच्यते' इति। तथा—

ऋषिस्तु देवभागाख्यश्छन्दो गायत्रमिष्यते। श्रीसूर्यो देवता प्रोक्त ऐहिकामुष्मिकप्रदः ॥९॥
तेजो वदेत्ततो ज्वालामणिहुंफट् द्विठान्तकः। हृन्मनुः सत्यपूर्वोऽयं ब्रह्मपूर्वः शिरोमनुः ॥१०॥
विष्णुपूर्वः शिखामन्त्रो वर्माणू रुद्रपूर्वकः। अग्निपूर्वो नेत्रमनुः सर्वपूर्वोऽस्त्रमन्त्रकः ॥११॥
सत्याद्यांश्च चतुर्थ्यन्तान् केचिदिच्छन्ति सूरयः। सत्यतेजः-पदं केचिच्चतुर्थ्यन्तं प्रचक्षते ॥१२॥

सत्यतेजोज्वालामणिहुंफट् हृदयाय नमः इति केचिदिति। शारदातिलके—'सत्याय हृदयं प्रोक्तं ब्रह्मणे शिर ईरित'मित्यादि। अत्र चतुर्थ्यविवक्षितेत्यपेक्षितार्थद्योतनिकाकारादयः। प्रपञ्चसारे तु—

सत्यब्रह्मविष्णुरुद्रैः साग्निभिः सर्वसंयुतैः। तेजोज्वालामणिहुंफट्स्वाहान्तैरङ्गमाचरेत् ॥ इति।

अत्रोक्तं ब्रह्मेत्यत्राकारश्रुतिश्चतुर्थीनिवारणायेति पद्मपादाचार्याः। सारसंग्रहे—

विधायैवं षडङ्गानि मूर्तिं न्यसेद्यथाक्रमम्। मस्तकाननहृद्गुह्यपाददेशेषु देशिकः॥१३॥
पञ्चह्रस्वैः सहादित्यो रविभानू च भास्करः। सूर्यस्ततश्च मन्त्रार्णान् प्रणवाद्यान् न्यसेद्बुधः॥१४॥
शीर्षाक्षिकण्ठहृत्कुक्षिनाभिलिङ्गाङ्घ्रिषु क्रमात्। ह्रस्वैरक्लीवैरोकाराद्यकारान्तैस्तु पञ्चभिः॥१५॥

'सद्यादिपञ्चभिरपि' इति शारदायाम्। ध्यानम्—

भास्करं विमलकुण्डलभूषं चारुतरारुणपङ्कजसंस्थम्।
अब्जयुगाभयदानकरं तं रक्ततनुं प्रभजे युगनेत्रम्॥१६॥

दानकरं युगनेत्रमिति पदच्छेदः। ऊर्ध्वकरयोः पद्मे वामाद्यधःस्थयोरभयदाने, इत्यायुधध्यानम्। तथा—

अग्निकोणे प्रभूतं च विमलं नैर्ऋते यजेत्। सारं वायव्यकोणे च समाराध्यं तथैशके॥१७॥
सुखं परमपूर्वं च यजेन्मध्ये तु मन्त्रवित्।

अग्न्यादीति—प्रथमं मण्डूकादिसिंहासनान्तमुक्तरीत्याभ्यर्च्य अग्न्यादिकोणेषु प्रभूतादीन् धर्माधर्मादिस्थानेषु यजेत्। 'पीठाङ्घ्रीन् कल्पयेदेतान् हृदा मध्ये विदिक्षु च' इति नारायणीयवचनात्। 'ईशानान्ते च मध्येऽपि विदिक्ष्वेतान् प्रपूजयेत्' इति प्रयोगसारवचनाच्चेति वदन्ति। तत्र—(१५.६) 'प्रयजेदथ प्रभूतां विमलां साराह्वयां समाराध्याम्। परमसुखामग्न्यादिष्वस्त्रिषु मध्ये च पीठक्लृप्तेः प्राक्' इति शङ्कराचार्यचरणैरुक्तत्वात्। स्त्रीलिङ्गप्रयोगस्तु भुवनेश्यर्चाप्रकरणात्। पीठकल्पनं तु सर्वत्र धर्मादिभिरेव। 'धर्मादिकल्पिते पीठे' इति श्रवणाद्धर्मादिभिर्युक्तस्यैव योगपीठत्वात्। तदर्चनात् प्रागेतान् संपूज्य पश्चाद्धर्मादीन् संपूज्यानन्तादिकमर्चयेत्। तथा 'स्वबिम्बं पश्चिमे पीठे पूजिते नव पूजयेत्।' स्वबिम्बं पश्चिमे इति सोमाग्निमण्डले संपूज्य, पश्चात् सूर्यमण्डलं संपूज्य, सत्त्वादिपरतत्त्वान्तमभ्यर्च्य पीठशक्तीः पूजयेदित्यर्थः। तथा—

दलमूलेषु पूर्वादि मध्ये च विधिपूर्वकम्। दीप्तासूक्ष्मे जयाभद्रे विभूतिर्विमलान्विता॥१८॥
अमोघा विद्युता चान्या नवमी सर्वतोमुखी। पीठशक्तीः क्रमादेता ह्यग्निवर्णाः सुभूषिताः॥१९॥
ह्रस्वत्रयक्लीववर्ज्या अचो वह्नीन्दुभूषणाः। बीजान्यासां क्रमादाहुर्मन्त्रशास्त्रविशारदाः॥२०॥

ह्रस्वत्रयं अइउ। क्लीवाः ऋॠऌॡ इति। अचः स्वराः। वह्नी रेफः। इन्दुः बिन्दुस्तेन रांरींरूंरेंरैंरोंरौंरंरः इति नवबीजानि। उक्तं च महाकपिलपञ्चरात्रे—'आद्योपान्ते तृतीयं च त्यक्त्वा चैव नपुंसकम्। भेदयेन्नवधा यान्तं स्वरैरेभिर्यथाक्रमम्। बिन्दुयुक्तानि बीजानि शक्तीनामुद्धृतानि वै' इति। प्रयोगसार-नारायणीययोस्तु—'आद्यमन्त्यं तृतीयं च त्यक्त्वा चैव नपुंसकम्' इत्युक्तं यथागुरूपदेशं ग्राह्यमिति।

ङेन्तं वदेत्तारपूर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम्। ततः सौराय पीठाय हृदन्तः समुदीरितः॥२१॥
पीठमन्त्रो दिनेशस्य यजेत् पीठमनेन हि। खखोल्कादित्यमन्त्रेण मूर्तिं तस्य प्रकल्पयेत्॥२१॥
तस्यामावाह्य देवेशं सूर्यं सम्यक् समर्चयेत्। अङ्गपूजां पुरा कृत्वा प्रपूज्या दिग्दलस्थिताः॥२२॥
आदित्याद्याः पुरा प्रोक्ता मूर्तयो वेदसंख्यया। उषाद्याः कोणगाः पूज्याश्चतस्रः शक्तयः शुभाः॥२३॥
स्वनामाद्यर्णसंयुक्ताः कथ्यन्ते ता यथाक्रमम्। उषाप्रज्ञे तथा प्रोक्ते प्रभासन्ध्ये मनीषिभिः॥२४॥
ततो दलाग्रे ब्राह्म्याद्या अर्चयेदग्रतोऽरुणम्। सोमपूर्वान् ग्रहानष्टौ पूजयेत् तद्बहिः सुधीः॥२६॥
लोकपालांश्च वज्रादीन् पूर्ववत् संयजेत्ततः।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि देवभागाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीसूर्याय देवतायै नमः। इति विन्यस्य विनियोगमुक्त्वा, सत्यतेजोज्वालामणि हुंफट् स्वाहा हृदयाय नमः। ब्रह्मतेजोज्वालामणि हुंफट् स्वाहा शिरसे०। विष्णुतेजोज्वालामणि हुंफट् स्वाहा शिखायै०। रुद्रतेजोज्वालामणि हुंफट् स्वाहा कवचाय०। अग्नितेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय०।

सर्वतेजोज्वालामणि हुंफट् स्वाहा अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, शिरसि ॐ अं आदित्याय नमः। मुखे ॐइं रवये नमः। हृदि ॐउं भानवे नमः। गुह्ये ॠं भास्कराय नमः। पादयोः ऌं सूर्याय नमः। शिरसि ॐ नमः। नेत्रयोः ॐघृं नमः। कण्ठे ॐणिं नमः। हृदि ॐसूं नमः। कुक्षौ ॐर्यं नमः। नाभौ ॐआं नमः। लिङ्गे ॐदिं नमः। पादयोः ॐत्यं नमः। इति विन्यस्य ध्यानाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिपृथिव्यन्तं योगपीठमभ्यर्च्य, क्षीरसमुद्रं संपूज्य नवरत्नद्वीपादिसिंहासनस्य पादेषु प्रभूताय नमः। विमलाय०। साराय०। समाराध्याय०। मध्ये परमसुखाय नमः। इति संपूज्यानन्तरं धर्मादिपरतत्त्वान्ते प्राग्वत् संपूज्याष्टदलकेसरेषु—रां दीप्तायै नमः। रीं सूक्ष्मायै नमः। रूं जयायै नमः। रें भद्रायै नमः। रैं विभूत्यै नमः। रों विमलायै नमः। रौं अमोघायै नमः। रं विद्युतायै नमः। रः सर्वतोमुख्यै नमः। इति मध्यान्तं संपूज्य, ॐब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः, इति समस्तं पीठं संपूज्य, खखोल्काय स्वाहा श्रीसूर्यमूर्तिं परिकल्पयामि नमः इति मन्त्रेण मूर्तिं परिकल्प्यावाहनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्य, दिग्दलेषु आं आदित्याय नमः। रं रवये०। भां भास्कराय नमः। भां भानवे नमः। विदिग्दलेषु उं उषायै नमः। प्रं प्रज्ञायै नमः। प्रं प्रभायै नमः। सं सन्ध्यायै नमः। इति संपूज्याष्टदलाग्रेषु प्राग्वद् ब्राह्म्याद्यष्टशक्तीः संपूज्य, देवस्याग्रे अरुणाय नमः। ततश्चतुरस्रस्य प्रथमरेखायां देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन सोमाय नमः। भौमाय नमः। बुधाय नमः। वृहस्पतये नमः। शुक्राय नमः। शनैश्चराय नमः। राहवे नमः। केतुभ्यो नमः। इति संपूज्य लोकपालार्चादिसर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

अष्टलक्षं जपित्वान्ते दुग्धवृक्षसमिद्वरैः। जुहुयात् तत्सहस्राणि दुग्धाक्तैः साधकोत्तमः ॥२७॥
तर्पयेच्छुद्धसलिलैश्चन्द्रचन्दनवासितैः। स्वाभिषेकं ततः कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥२८॥ इति।

अभीष्ट फलप्रद अष्टाक्षर सौर मन्त्र है—ॐ घृणिः सूर्य आदित्य। इस अष्टाक्षर सूर्य मन्त्र को इष्ट-प्रदायक कहा गया है।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि देवभागाय ऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदये श्रीसूर्याय देवतायै नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—सत्यतेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः, ब्रह्मतेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा, विष्णुतेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्, रुद्रतेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा कवचाय हुम्, अग्नितेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, सर्वतेजोज्वालामणि हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे।

मूर्ति मन्त्र वर्ण न्यास इस प्रकार करे—शिर पर ॐ अं आदित्याय नमः, मुख में ॐ इं रवये नमः, हृदय में ॐ उं भानवे नमः, गुह्य में ॠं भास्कराय नमः, पैरों में ऌं सूर्याय नमः, शिर पर ॐ नमः, नेत्रों में ॐ घृं नमः, कण्ठ में ॐ णिं नमः, हृदय में ॐ सूं नमः, कुक्षि में ॐ र्यं नमः, नाभि में ॐ आं नमः, लिङ्ग में ॐ दिं नमः, पैरों में ॐ त्यं नमः। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

भास्करं विमलकुण्डलभूषं चारुतरारुणपंकजसंस्थम्। अब्जयुगाभयदानकरं तं रक्ततनुं प्रभजे युगनेत्रम्।।

ध्यान के बाद आत्म पूजा करे। योगपीठ में मण्डूक से पृथ्वी तक की पूजा करे। क्षीरसमुद्र की पूजा करे। नव रत्नद्वीपादि की पूजा करे। सिंहासन के पादों में प्रभूताय नमः, विमलाय नमः, साराय नमः, समाराध्याय नमः, मध्य में परमसुखाय नमः से पूजन करने के बाद धर्मादि से परतत्त्व तक पूर्ववत् पूजा करे। तदनन्तर अष्टदल केसरों में रां दीप्तायै नमः, रीं सूक्ष्मायै नमः, रूं जयायै नमः, रें भद्राय नमः, रैं विभूत्यै नमः, रों विमलायै नमः, रौं अमोघायै नमः, रः सर्वतोमुख्यै नमः से पूजा करे। तब समस्त पीठ की पूजा 'ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः' से करके से करके खखोल्काय स्वाहा श्रीसूर्यमूर्तिं परिकल्पयामि नमः' मन्त्र से मूर्ति परिकल्पित करे। आवाहनादि से पुष्पोपचारान्त तक देव की पूजा करके पूर्ववत् अंगों की पूजा करे। अष्टदल के पूर्वादि दलों में आं आदित्याय नमः, रं रवये नमः, भां भास्कराय नमः, भां भानवे नमः

से पूजन करे। कोणदलों में—उं उषायै नमः, प्रं प्रज्ञायै नमः, प्रं प्रभायै नमः, सं सन्ध्यायै नमः से पूजन करे। अष्टदलाग्रों में ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों की पूजा करके देवता के आगे अरुणाय नमः से पूजन करे। चतुरस्र की प्रथम रेखा में देव के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से सोमाय नमः, भौमाय नमः, बुधाय नमः, वृहस्पतये नमः, शुक्राय नमः, शनैश्चराय नमः राहवे नमः, केतुभ्यो नमः से पूजन करके पूर्ववत् लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे।

तदनन्तर आठ लाख मन्त्रजप करे। दुग्ध वृक्ष की समिधाओं को दुग्धाक्त करके आठ हजार हवन करे। शुद्ध जल में चन्दन कपूर मिलाकर तर्पण करे। तब मार्जन करके ब्राह्मणों को भोजन करावे।

सूर्यार्घ्यदानविधिः

प्रयोगसारे अर्घ्यदानविधिः—

रक्ताम्बरधरो रक्तो रक्तमालार्चितः सदा। घृतक्षीरसमायुक्तगुडभक्ताशनो निशि ॥१॥
भिक्षाहारोऽथवा वीतसङ्गः सन्तोषवान् सदा। मन्त्रमावर्तयेन्नित्यमाराधनपरायणः ॥२॥
इत्थमभ्यर्च्य भास्वन्तमर्घ्यं तस्मै निवेदयेत्। प्रत्यहं रविवारे वा तद्विधानमुदीर्यते ॥३॥
पुरो मण्डलमालिख्य यजेत् पीठं यथाविधि। तत्र संस्थाप्य पात्रं हि शुद्धताम्रसमुद्भवम् ॥४॥
रम्यं प्रस्थजलग्राहि मूलमन्त्रं समुच्चरन्। शुद्धोदकेन संपूज्य प्रक्षिपेत्तत्र कुङ्कुमम् ॥५॥
रोचनाराजिकारक्तचन्दनं वंशतण्डुलान्। श्यामाकतण्डुलान् शालीन् करवीरजपाकुशान् ॥६॥
सञ्चिन्त्य देवतात्मैक्यं भास्करं साङ्गमर्चयेत्। उपचारैर्निवेद्यान्तैस्तत्र ध्यायञ्जपेन्मनुम् ॥७॥
सम्यगष्टोत्तरशतं भूयः पुष्पादिभिर्यजेत्। उद्धृत्यामस्तकं पात्रं जानुस्पृष्टमहीतलः ॥८॥
दृष्टिं निधाय व्योमार्के स्वैक्यं सावरणं स्मरेत्। ततो जपेन्मूलमनुं धिया दद्याच्च भानवे ॥९॥
अर्घ्यं प्रसन्नचित्तः सन् दत्त्वा च सुमनोञ्जलिम्। पुनर्नियतधीस्तावद्यावद्भानुर्निजैः करैः ॥१०॥
अर्घ्योदकं समादत्ते जपेदष्टोत्तरं शतम्। ततः प्रसन्नो भगवान् प्रयच्छेदिष्टमात्मनः ॥११॥
नृणामनेन भवतीह नितान्तमायुरारोग्यपुत्रधनमित्रकलत्रवृद्धिः।
तेजश्च वीर्यमतुलं पशुकान्तिसंपद्विद्या यशो विभवभोगसमृद्धयः स्युः ॥१२॥
तन्मन्त्रसहिताम्भोभिः सप्तधाञ्जलिसेचनम्। दारिद्र्यपापान्धकारनाशनं श्रीकरं परम् ॥१३॥
स्थण्डिले सुतले कुम्भं तीर्थोदकसुपूरितम्। हिरण्यरत्नगन्धादि तत्र निक्षिप्य पूजयेत् ॥१४॥
देवं सपरिवारं तु प्रागुक्तविधिना ततः। स्थण्डिलेऽग्निं समाधाय कपिलापयसा चरुम् ॥१५॥
पक्त्वा च तेन जुहुयात् तदाज्यसहितेन च। सहस्रं कृतसंपातं शुद्धपात्रे तु कारयेत् ॥१६॥
ऋतुस्नातां सुनियतां पूर्वेऽह्नि समुपोषिताम्। अष्टमे दिवसे तां तु सहस्रमभिमन्त्रितैः ॥१७॥
अभिषिञ्चेत् कुम्भजलैर्दद्यात्तस्यै च मन्त्रवित्। सहस्रमन्त्रितं होमसंपातान्नं ततो निशि ॥१८॥
भर्तापि सूर्य एवाहमिति ध्यात्वा तया सह। संभोगमाचरेत् तेन सुपुत्रो गुणवान् भवेत् ॥१९॥ इति।

अर्घ्यदानविधि—प्रयोगसार में कहा गया है कि लाल वस्त्र धारण करके लाल माला धारण करके रात में गुड़-भात खाकर या भिक्षा का भोजन करके एकान्त में सन्तोषी होकर नित्य पूजा करके जप करे। इस प्रकार से पूजा करके सूर्य को अर्घ्यदान करे। ऐसा प्रतिदिन या रविवार में करे। सामने मण्डल बनाकर पीठ पर यथाविधि पूजा करे। एक सेर जल अँटने लायक शुद्ध ताम्बे के पात्र को स्थापित करके मूल मन्त्र कहते हुए उसे शुद्ध जल से भरे। पूजन करके उसमें कुङ्कुम, गोरोचन, राई, रक्तचन्दन, वंशतण्डुल, साँवाँ चावल, शालि, कनैल, अड़हुल फूल और कुश डाले। अपने और देवता में ऐक्य मानकर भास्कर की साङ्ग पूजा करे। उपचारों से पूजा के बाद ध्यान करके एक सौ आठ मन्त्र जप करे। फूलों से पूजा करे। पात्र को मस्तक तक ले जाकर घुटनों पर बैठकर आकाश में सूर्य को देखते हुए आवरणसहित उनका स्मरण करे। तब मूल मन्त्र जपते

हुए सूर्य को अर्घ्य प्रदान करे। तब प्रसन्न चित्त से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। अर्घ्य जल देकर एक सौ आठ मन्त्र जप करे तब भगवान् प्रसन्न होकर अभीष्ट प्रदान करते हैं।

इस प्रकार के अर्घ्यदान से मनुष्य की आयु-आरोग्य-पुत्र-धन-मित्र-कलत्र की वृद्धि होती है। तेज, अतुल वीर्य, पशु, कान्ति, सम्पत्ति, विद्या, यश, वैभव, भोग की समृद्धि होती है। तन्त्र-मन्त्रसहित जल से सात अजलि से सेचन करे। यह दारिद्र्य का नाशक, पाप एवं अन्धकार का निवारक और लक्ष्मीप्रदायक है। समतल भूमि पर स्थण्डिल बनाकर तीर्थजलपूर्ण कुम्भ स्थापित करे। उसमें सोना रत्न गन्धादि डालकर सपरिवार देव की पूजा पूर्वोक्त विधि से करे। स्थण्डिल में आग जलाकर कपिला गाय के दूध में चरु पकाकर गोघृत मिलाकर एक हजार हवन करे। शुद्ध पात्र में हुत सम्पात करे। ऋतुस्नान के बाद आठवें दिन पूर्वाह्न में उपवास रहने वाली स्त्री को एक हजार जप से मन्त्रित उस कुम्भजल से स्नान करावे, हजार जप से मन्त्रित होमसम्पात के साथ पति-पत्नी भोजन करे तत्पश्चात् पति अपने को सूर्य मानकर पत्नी के साथ सम्भोग करे तो गुणवान पुत्र उत्पन्न होता है।

यन्त्रोद्धारप्रकारः

यन्त्रसारे—

कर्णिकायां साध्यगर्भं तारं यन्त्रचतुष्टये। सौरस्य चतुरर्णस्य क्रमादेकैकमक्षरम् ॥१॥
अष्टाक्षरमनोर्वर्णान् पत्रेष्वष्टसु तद्बहिः। आवेष्ट्य मातृकावर्णैर्भूपुरास्रचतुष्टये ॥२॥
प्रयोजनानां तिलकं ताराद्यं च समालिखेत्। सौरयन्त्रमिदं नृणां सर्वामयविनाशनम् ॥३॥
तेजःप्रतापसौभाग्यपुत्रायुःकीर्तिवर्धनम्। धनधान्यप्रदं वश्यं सर्वरक्षाकरं परम् ॥४॥
इदमेव यन्त्रमभिलिख्य जले प्रतिमज्जतां शिताधियां दिनशः।
ज्वरकुष्ठशूलमुखरोगसंकटा विलयं प्रयान्ति न चिरादिति ध्रुवम् ॥५॥

अस्यार्थः—चतुष्पत्रकमलकर्णिकायां साध्यगर्भं प्रणवं विलख्य पत्रेषु ॐह्रींहंसः इति चतुरक्षरमन्त्रस्यैकैकमक्षरमालिख्य, तद्बहिरष्टपत्रेषु मूलमन्त्रस्यैकैकमक्षरमालिख्य, तद्बहिर्वृत्तयोरन्तराले सबिन्दुभिर्मातृकार्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्रकोणेषु ॐह्रांह्रींसः इति वर्णचतुष्टयं प्रतिकोणमेकैकं लिखेद्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—

प्रणवं साध्यसमेतं विलिख्य षट्कोणकर्णिकामध्ये।
तारं प्रयोजनानां तिलकं हंसं च षट्सु कोणेषु ॥६॥
केसरविलसत्सौरचतुरर्णैर्दलचतुष्टये वापि। उद्यन्नद्याद्यास्ताः पादचतुष्कमृचोऽष्टपत्रेषु ॥७॥
केसरराजत्सौरवसुवर्णके दलेष्वृचः पादान्। आलिख्य बहिर्लिप्या चावेष्ट्य कुगृहकोणेषु ॥८॥
चतुरक्षरस्य च मनोः सौरस्यैकैकमक्षरं सम्यक्। विलिखेदेतद्यन्त्रं विनाशयेद्ग्रहान् विधृतम् ॥९॥
प्रथयति तेजो लक्ष्मीर्भोगान् धृतिं प्रतापाद्यान्। अङ्गणभूमावेतद्विलिख्य संपूज्य तत्र दिननाथम् ॥१०॥
दद्यादर्घ्यं कान्त्यै लक्ष्म्यै कुष्ठज्वरादिशान्त्यै च।
रोगघ्नयन्त्रमिदमेव विलिख्य ताम्रे संस्थापितं निजगृहे विधिवत् प्रपूज्य।
हन्याच्च कुष्ठमुखरोगज्वरातिशूलविस्मृत्यपस्मृतिभवानथवा विकारान् ॥११॥
आलिख्य चैतत् कलधौतपत्रे तैले विनिःक्षिप्य सहस्रसंख्यम्।
जप्त्वा तदभ्यक्ततनोर्नरस्य कुष्ठादिरोगा विलयं प्रयान्ति ॥१२॥
इदमेव नवे विलिख्य यन्त्रं नवनीते त्रितयं प्रजप्य चर्चाम्।
परिभक्षयतां तदैव शूलं विषममामयमाशु नाशमेति ॥१३॥ इति।

अस्यार्थः—षट्कोणमध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, तत्कोणेषु 'ॐह्रांह्रींसःहंसः' इत्यक्षरषट्कमेकमेकं विलिख्य, तद्बहिश्चतुर्दलकेसरेषु 'ॐह्रींहंसः' इति मन्त्रस्यैकैकमक्षरं विलिख्य, चतुर्दलेषु उद्यन्नद्येति ऋचः पादमेकै-

कमालिख्य, तद्बहिरष्टदलकेसरेषु मूलमन्त्रस्याष्टवर्णानालिख्य, अष्टदलेष्वेतत्सूक्तस्य द्वितीयतृतीयर्चो: पादाष्टकं प्रतिदलमेकमेकं पादमालिख्य, तद्बहिर्वृत्तद्वयान्तराले मातृकार्णै: संवेष्ट्य चतुरस्रकोणेषु 'ॐह्रींहंस:' इति मन्त्रस्यैकैकमक्षरं लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। (ऋ० १.५०.११)—

उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम्। हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय॥१॥
शुकेषु मे हरिमाणं रोपणाकासु दध्मसि। अथो हारिद्रवेषु मे हरिमाणं निदध्मसि॥२॥
उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो अहं द्विषते रधम्॥३॥ इति।

सूर्ययन्त्र—यन्त्रसार के अनुसार चतुर्दल कमल की कर्णिका में साध्य नाम को ॐ के गर्भ में लिखे। चारो पत्रों मे 'ॐ ह्रीं हंस:' मन्त्र के चारो वर्णो को लिखे। उसके बाहर अष्टदल बनाकर दलों में मूल मन्त्र 'ॐ घृणि: सूर्य आदित्य' के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर वृत्त के अन्तराल में सानुस्वार मातृका वर्णो को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र में चारो कोणों में 'ॐ ह्रां ह्रीं स:' के एक-एक अक्षर को प्रत्येक कोण में लिखे। यह यन्त्र मनुष्यों के सभी रोगों का विनाशक, तेज प्रताप सौभाग्य पुत्र आयु कीर्ति का वर्द्धक एवं धन-धान्यप्रद होने के साथ-साथ वश्य तथा सर्वरक्षाकारक है। इस यन्त्र को लिखकर जल में डाल दे। उस जल से स्नान करे तो ज्वर, कुष्ठ, शूल, मुखरोग संकट अल्प काल में नष्ट हो जाता है।

अन्य यन्त्र—षट्कोण-मध्य में ॐ के उदर में साध्य नाम लिखे। उसके कोणों में ॐ ह्रां ह्रीं स: हंस: के एक-एक अक्षर को लिखे। उसके बाहर चतुर्दल कमल बनाकर दल के केसरों में 'ॐ ह्रीं हं स:' के एक-एक वर्ण को लिखे। चारो दलों में 'उद्यन्नद्य मित्रमह', 'आरोहन्नुत्तरां दिवम्' 'हृद्रोगं मम सूर्य', 'हरिमाणं च नाशय' मन्त्र के एक- एक पद को लिखे। उसके बाहर अष्टदल पद्म बनाकर दल के केसरों में 'ॐ घृणि: सूर्य आदित्य' के एक-एक अक्षर को लिखे। दलों में 'शुकेषु मे हरिमाणं', 'रोपणाकासु दध्यसि' 'अथो हरिद्रवेषु मे' 'हरिमाणं निदध्मसि', 'उदगादयमादित्यो', 'विश्वेन सहसा सह', द्विषन्तं मह्यं रन्धयन्मो', 'अहं द्विषते रधम्' ऋचाओं के इन आठ पदों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में मातृका वर्णो को लिखे। चतुरस्र के कोणों में 'ॐ ह्रीं हंस:' के एक-एक अक्षर को लिखे। यह यन्त्र विपरीत ग्रहों के प्रभाव को नष्ट करता है। तेज, लक्ष्मी, भोग, प्रतापादि का वर्द्धक है। घर के आंगन की भूमि पर इस यन्त्र को लिखकर सूर्य की पूजा करे और अर्घ्यदान करे तो कान्ति एवं लक्ष्मी प्राप्त होती है तथा कुष्ठ एवं ज्वर शान्त हो जाता है।

रोगघ्न इस यन्त्र को ताम्रपत्र पर लिखकर अपने घर में स्थापित करके विधिवत् पूजा करे, तो कोढ़, मुखरोग, बुखार, अतिशूल, विस्मृति, अपस्मृति आदि विकारों का नाश होता है। सोना या चाँदी के पत्र पर लिखकर तेल में डाल कर उस तेल को एक हजार जप से मन्त्रित करे। उस तेल को शरीर में लगाने से कुष्ठादि रोगों का नाश होता है। इस यन्त्र को ताजे मक्खन में लिखकर तीन जप से मन्त्रित करके खाने से विषम रोग शूल का तुरन्त नाश होता है।

मन्त्रान्तरविधानम्

सारसंग्रहे मन्त्रान्तरम्—

वदेत् पदं चतुर्थ्यन्तं खखोल्काख्यं द्विठान्तकम्। षडर्णो मनुराख्यातो दिनेशस्य जगत्पते:॥१॥

खखोल्काख्यं चतुर्थ्यन्तं खखोल्काय। द्विठ: स्वाहा। अस्मिन्मन्त्रे भेदमाह कपिलपञ्चरात्रे—

याष्टमं बिन्दुना युक्तं कद्वितीयं तथैव च। तदेव केवलं भूय: ओभिन्नं गविलोमकम्॥१॥
घविलोमाच्चतुर्थं तु मांसाऽऽक्रान्तं समीरण:। समासादुद्धृतो वत्स मूर्तिमन्त्र: षडक्षर:॥२॥

याष्टमं ह, बिन्दुरनुस्वारस्तद्युक्तं तेन हं। कद्वितीयं ख। तथैव बिन्दुयुक्तं तेन खं। तदेव खं केवलं बिन्दुरहितं तेन ख। गविलोमकं खं, तदोभिन्नम् ओकारयुक्तं तेन खो। घविलोमाच्चतुर्थं घकाराद्विलोमेन चतुर्थं ककार:, मांसेन लकारेण आकारेण चाक्रान्तमुपरि स्थितं तेन ल्का। समीरणो य। तथा नाराणीये मन्त्रान्तरम्—

खकान्तौ दण्डिनौ चण्डो मज्जा दशनसंयुता। मांसं दीर्घाऽजवद्वायुरेतन्मन्त्रोपकृद्विदु:॥१॥

खं ह, कान्तः ख, दण्डी अनुस्वारस्तद्युक्तौ तेन हंखं। चण्डः ख। मज्जा ष, दशन ओ, तेन षो। मांसं ल, दीर्घा आ, अजः क, तेन ल्का। वायुः य। सारसंग्रहे—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्रं छन्द ईरितम्। देवता सविता चास्य सर्वसौख्यफलप्रदः ॥१॥
सूक्ष्मरूपायाग्निवधूः स्वाहान्तं सूक्ष्मतेजसे। सूक्ष्माकारायाग्निवधूः सूक्ष्मवालाय ठद्वयम् ॥२॥
सूक्ष्मकाय च हुंफट् च जातिवुक्ताः समीरिताः। पञ्चाङ्गमन्त्रा मन्त्रार्णैः षडङ्गं वा समाचरेत् ॥३॥
रक्तपद्मद्वयं हस्ते बिभ्राणं वरदाभये। बन्धूकाभं त्रिनेत्रं च रविं ध्यायेत् सुभूषितम् ॥४॥
पूर्वोक्ते पूजयेत् पीठे देवमावाह्य पूर्ववत्। लक्षमेकं जपेन्मन्त्री नियतात्मा जितेन्द्रियः ॥५॥
जुहुयात् तद्दशांशेन बिल्वाश्वत्थपलाशजैः। उडुम्बरसमुद्भूतैस्त्रिमध्वक्तैः समिद्वरैः ॥६॥
तर्पणादि ततः कुर्यात् प्राक्प्रोक्तविधिना सुधीः। अर्घ्यादिकं च कुर्वीत पूर्ववद्वाञ्छिताप्तये ॥७॥
एवं संसेवनात् तस्य खेचरीसिद्धिरीरिता। इति।

तथा मन्त्रान्तरम्—

सदण्डी कान्तबीजाढ्यः सप्तार्णोऽयं मनुर्मतः। ऋष्याद्यङ्गविधिध्यानजपपूजादि पूर्ववत् ॥८॥

कान्तः ख दण्डी अनुस्वारस्तेन खं बीजादिः पूर्वमन्त्रः सप्तार्ण इत्यर्थः। तथा—

ङेन्तं सप्ततुरङ्गं तु विद्महे पदमुच्चरेत्। सहस्रकिरणायेति धीमहीति पदं ततः ॥९॥
तन्नो रविरिति प्राप्ते चोदयादिति संगिरेत्। जप्यात् सर्वार्कमन्वादौ गायत्र्येषा दिनेशितुः ॥१०॥

तेन—सप्ततुरङ्गाय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि तन्नो रविः प्रचोदयात्।

मन्त्रान्तर—सारसंग्रह के अनुसार जगत्पति भगवान् सूर्य का षडक्षर मन्त्र है—खखोल्काय स्वाहा। कपिल पञ्चरात्र के अनुसार इस प्रकार का मन्त्र है—हं खं खखोल्काय। नारायणीय के अनुसार षडक्षर मन्त्र है—हं खं खंषोल्काय।

सारसंग्रह के अनुसार इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता समस्त सुखों को देने वाले सविता हैं। इसका पञ्चाङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—सूक्ष्मरूपाय स्वाहा हृदयाय नमः, सूक्ष्मतेजसे शिरसे स्वाहा, सूक्ष्माकाराय स्वाहा शिखायै वषट्, सूक्ष्मबालाय स्वाहा कवचाय, सूक्ष्मकाय हुं फट् अस्त्राय फट्। इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों के मन्त्रार्णों से षडङ्ग न्यास भी किया जाता है। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

रक्तपद्मद्वयं हस्ते बिभ्राणं वरदाभये। बन्धूकाभं त्रिनेत्रं च रविं ध्यायेत् सुभूषितम्।।

पूर्वोक्त पीठ पर देव का आवाहन करके पूजा करे। नियतात्मा जितेन्द्रिय होकर एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन बेल पीपल पलाश गूलर की समिधाओं को त्रिमधुराक्त करके करे। तब पूर्वोक्त विधि से तर्पणादि करे। वांछित प्राप्ति के लिये पूर्ववत् अर्घ्यादि प्रदान करे। इस प्रकार की उपासना से खेचरी सिद्धि मिलती है।

मन्त्रान्तर—भगवान् सूर्य का सप्ताक्षर मन्त्र है—खं खखोल्काय स्वाहा। इस मन्त्र के ऋषि आदि, अंगन्यास, ध्यान, पूजा, जप पूर्ववत् होते हैं।

सूर्यगायत्री—सूर्य की गायत्री इस प्रकार है—सप्ततुरङ्गायै विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि तन्नो रविः प्रचोदयात्।

सप्रयोगः भुवनाधीशमन्त्रः

तथा मन्त्रान्तरम्—

अथ वक्ष्ये समासेन चतुर्वर्णमनुं रवेः। तारो माया दण्डिवियत् सविसर्गोऽस्य पूर्वगः ॥१०॥

तारः प्रणवः। माया भुवनेशीबीजं। वियत् ह, दण्डी अनुस्वारस्तेन हं। अस्य हकारस्य पूर्वगः स, सविसर्गो विसर्गसहितस्तेन सः। तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा च गायत्री छन्दः सूर्यात्मिका तथा। देवता भुवनाधीशा षडङ्गानि ततो न्यसेत्॥११॥
तानि प्रणवशक्तिभ्यां त्रिभिरावर्तनैरथ। तारादिभिश्च षड्दीर्घमायाबीजैर्भवन्ति च॥१२॥
भास्वद्रत्नसहस्रमौलिविलसच्चन्द्रार्धमुद्योतयद्धस्ताब्जैर्दधदङ्कुशं गुणवराभीतीः सुतुङ्गस्तनम्।
पायाद्दालितकाञ्चनाम्बुजजपाविद्युज्ज्वलत्कान्तिभिर्विश्वं द्योतयदार्कमाशु शिशिरं विश्वेशिकाया वपुः॥१३॥
दक्षाद्यूर्ध्वयोराद्ये तदाद्यधःस्थयोरन्ये, इत्यायुधध्यानम्।

नवशक्तिसमायुक्ते पीठे पूर्वोदिते यजेत्। मूलेन मूर्तिं सङ्कल्प्य तत्रावाह्य दिनेश्वरम्॥१४॥
संपूज्य तस्यावरणान्यर्चयेत् क्रमतः सुधीः। हृल्लेखाद्या च गगना परा रक्ता तृतीयका॥१५॥
करालिका चतुर्थी स्यान्महोच्छुष्मा तु पञ्चमी। प्रथमावृतिराभिः स्याद् द्वितीयाङ्गैः समीरिता॥१६॥
तृतीया मातृभिः प्रोक्ता चतुर्थी च ग्रहैर्मता। दिक्स्थैः सोमज्ञगुरुभिः सशुक्रैरपरा तथा॥१७॥
विदिग्गतैर्भौमसौरिराहुकेतुभिरादरात्। इति।

तथा प्रयोगसारे—
स्वनामाद्यक्षरैर्बिन्दुभूषितैरन्वितान् यजेत्। भूयस्ततो लोकपालैः पञ्चमी च तदायुधैः॥१॥
षष्ठी प्रोक्तैवमभ्यर्चेद् दिनशो दिननायकम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीसूर्यरूपिणीभुवनेश्वर्यै देवतायै नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ शिखायै वषट्। ह्रीं कवचाय हुं। ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते कर्णिकायामेव देवस्य मूर्तौ देवाग्रदक्षोत्तरपश्चिमेषु—हृं हृल्लेखायै नमः। गं गगनायै नमः। रं रक्तायै नमः। कं करालिकायै नमः। मं महोच्छुष्मायै नमः। इति संपूज्य, प्राग्वत् केसरेषु षडङ्गानि संपूज्याष्टदलेषु प्राग्वद् ब्राह्म्याद्याः संपूज्याष्टदलाग्रेषु दिग्विदिक्क्रमेण—सं सोमाय नमः। बुं बुधाय नमः। बृं बृहस्पतये नमः। शुं शुक्राय नमः। मं मङ्गलाय नमः। शं शनैश्चराय नमः। रं राहवे नमः। कें केतुभ्यो नमः। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यात्। तथा—

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः। ब्रह्मवृक्षसमुद्भूतैः पुष्पैस्त्रिमधुराप्लुतैः॥१८॥
सरोजैर्वा ततो देवं तर्पयेदभिषेचयेत्। ब्राह्मणाराधनं कुर्यात्ततः सिद्धो भवेन्मनुः॥१९॥
एवं साधितमन्त्रस्तु काम्यकर्माणि साधयेत्। यजेदेवं प्रतिदिनं रविवारेऽथवा सुधीः॥२०॥
दद्यादर्घ्यद्वयमपि भवेत्तस्येप्सितं फलम्। इति।

भुवनाधीश मन्त्र—भगवान् सूर्य का चार अक्षरों का मन्त्र है—ॐ ह्रीं हंसः। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द सूर्यात्मिका गायत्री एवं देवता भुवनाधीशा हैं। ॐ के साथ ह्रां ह्रीं ह्रूं इत्यादि से उसका षडंग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

भास्वद्रत्नसहस्रमौलिविलसच्चन्द्रार्धमुद्योतयद्धस्ताब्जैर्दधदङ्कुशं गुणवराभीतीः सुतुङ्गस्तनम्।
पायाद्दालितकाञ्चनाम्बुजजपाविद्युज्ज्वलत्कान्तिभिर्विश्वं द्योतयदार्कमाशु शिशिरं विश्वेशिकाया वपुः।।

उपर्युक्त प्रकार से ध्यान करके पूर्वोक्त नव शक्तियुक्त पीठ पर पूजा करे। मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके दिनेश्वर का आवाहन करे। आवरणों सहित पूजा करे। प्रथम आवरण में हृल्लेखा, गगना, रक्ता, करालिका एवं महोच्छुष्मा की पूजा पञ्चदल कमल में करे। द्वितीय आवरण में अंगों की पूजा करे। तृतीय आवरण में ब्राह्मी आदि मातृकाओं की पूजा करे। चौथे आवरण में ग्रहों की पूजा करे। चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु की पूजा पूर्वादि दिशाओं में करे। कोणदिशाओं में शुक्र, शनि, राहु, केतु की पूजा करे। इनके नामों के पहले बिन्दुयुक्त आद्य अक्षर लगाकर पूजा करे; जैसे—चं चन्द्राय नमः मं मंगलाय नमः

इत्यादि। पञ्चम आवरण में इन्द्रादि लोकपालों की और छठे आवरण में उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे।

सिद्धि के लिये चार लाख मन्त्रजप करे, दशांश हवन त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से करे अथवा त्रिमधुराप्लुत गुलाब के फूलों से हवन करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मण भोजन करावे तो यह मन्त्र सिद्ध होता है। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मों की साधना करे। इस प्रकार प्रतिदिन या रविवार को पूजन करके दोनों सन्ध्याओं में अर्घ्य देने से इच्छित फल की प्राप्ति होती है।

सप्रयोगं त्र्यक्षरार्णविधानम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

वह्निदीर्घेन्दुमद्व्योम माया सर्गान्वितो भृगुः। प्रयोजनानां तिलकः त्र्यक्षरः कथितो मनुः ॥२१॥

वह्नि रेफः, दीर्घा आ, इन्दुरनुस्वारस्तद्युतं व्योम हकारः, तेन ह्रां। माया ह्रीं। सर्गो विसर्गः। भृगुः सकारस्तेन सः। तथा—

अजोऽस्य मुनिरुद्दिष्टो गायत्रं छन्द उच्यते। देवताऽस्य मनोः ख्यातः सविता सेवितः सुरैः ॥२२॥
गुह्यात्पादतलं यावद्गलादागुह्यकं तथा। कान्ताच्च गलपर्यन्तं मन्त्रार्णान् विन्यसेत् सुधीः ॥२३॥
मायाबीजेन षड्दीर्घयुजाङ्गानि प्रविन्यसेत्। इति।

ध्यानम्—

अरुणकमलसंस्थं त्रीक्षणं भूरिभूषं ह्यरुणकमलयुग्माभीष्टदाभीतिहस्तम्।
अरुणतरशरीरं भावयामो दिनेशं ह्यरुणकरसुसेव्यं सर्वदेवौघवन्द्यम् ॥२४॥

पूर्वोदिते यजेत् पीठे नवशक्तिमन्विते। देवमावाह्य संपूज्य पुराङ्गानि समर्चयेत् ॥२५॥
चन्द्रादिभिर्ग्रहैरन्या दिगीशैरपरावृतिः। तदायुधैश्चतुर्थी स्यादेवं पूजा समीरिता ॥२६॥
ततश्च तेजश्चण्डाय निर्माल्यं विनिवेदयेत्।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि अजाय ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदये श्रीसूर्याय देवतायै नमः। इति विन्यस्य विनियोगमुक्त्वा, गुह्यादिपादपर्यन्तं, ह्रां नमः। कण्ठाद्गुह्यपर्यन्तं, ह्रीं नमः। मूर्धादिकण्ठान्तं, सः नमः। इति विन्यस्य, ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौ नेत्राभ्यां वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानाद्यङ्गपूजान्ते प्राग्वद् ग्रहान् संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् समापयेत् इति। तथा—

जपेद् द्वादशलक्षं च तत्सहस्रं हुनेत्तिलैः। घृताक्तैर्मधुराक्तैश्च पयोत्रैश्चैव तादृशैः ॥२७॥
तर्पणादि ततः कुर्यात् प्रयोगान् साधयेत्तथा। दद्यात् पूर्वोदितं चार्घ्यं दिनेशाय सुसाधकः ॥२८॥
सोऽप्यस्य धनधान्यादिपुत्रपौत्रविवर्धनम्। करोति रत्नवस्त्रादिभूषणादिविवर्धनम् ॥२९॥
अष्टपत्राम्बुजं कुर्यात्तत्र कुम्भान्नव न्यसेत्। पत्रमध्ये कर्णिकायां तांश्च तोयेन पूरयेत् ॥३०॥
नवग्रहान् समावाह्य तेषु कुम्भेषु मन्त्रवित्। कर्णिकाकलशं मूलमन्त्रेण च सहस्रकम् ॥३१॥
प्रजप्यान्येषु तन्मन्त्रान् शतकृत्वो जपेत् सुधीः। तज्जलैरभिषिञ्चेद्यः साधको ग्रहदोषतः ॥३२॥
रोगा नश्यन्ति सततं लक्ष्मीश्चापि स्थिरा भवेत्। ग्रहहोमः प्रकर्तव्यो ग्रहाणां वैकृते तथा ॥३३॥
चन्द्रभान्वोश्चोपरागे निजर्क्षे वाथ मन्त्रवित्। रिपुजे च भये वाथ घोररूपे गदेऽथवा ॥३४॥
पूर्ववन्मण्डलं कृत्वा ग्रहान् संपूज्य तत्र च। स्वदिक्षु चाग्नीन् संस्थाप्य जुहुयाच्च समिद्वरैः ॥३५॥
अर्कद्विजद्रुमायूराश्वत्थोडुम्बरखादिरैः। शमीदूर्वाकुशोद्भूतैः क्रमाद्धोमः समीरितः ॥३६॥

द्विजद्रुः पलाशः। मायूरा अपामार्गाः।

अष्टाधिकं सहस्रं च हुनेत् सूर्यस्य चाहुती: । अष्टाधिकं शतं मन्त्री सोमादीनां तथाहुती: ।।३७।।
अन्ते चाज्यैर्व्याहृतिभिर्हुत्वा होमं समापयेत् । गुरुं सन्तोष्य ऋत्विग्भ्यो यथाशक्ति च दक्षिणाम् ।।३८।।
दद्याच्च भोजयेद्विप्रान् संग्रामे विजयी भवेत् । रोगा: शान्तिं व्रजन्त्याशु दीर्घमायुश्च विन्दति ।।३९।।
कृत्याद्रोहादिकानां च शान्तिरेवाशु जायते । सर्वेषां च ग्रहाणां च होम एकत्र वा भवेत् ।।४०।।
एवं प्रतिदिनं मन्त्री दिननाथं समर्चयेत् । धनधान्यैश्वर्यपूर्णमायुर्दीर्घं च विन्दति ।।४१।। इति।

मन्त्रान्तर—ह्रां ह्रीं स:—यह भगवान् सूर्य का त्र्यक्षर मन्त्र है। इसके ऋषि अज, छन्द गायत्री एवं देवता देवताओं द्वारा सेवित सविता हैं। इस मन्त्र के प्रयोग में प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अजाय ऋषये नम:, मुखे गायत्री छन्दसे नम:, हृदये श्रीसूर्याय देवतायै नम:। अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके गुह्य से पैरों तक ह्रां नम: से न्यास करे। इस प्रकार के न्यास के बाद षडङ्ग न्यास करे—ह्रां हृदयाय नम:, ह्रीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्र: अस्त्राय फट्। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

अरुणकमलसंस्थं त्रीक्षणं भूरिभूषं ह्यरुणकमलयुग्माभीष्टदाभीतिहस्तम्।
अरुणतरशरीरं भावयामो दिनेशं ह्यरुणकरसुसेव्यं सर्वदेवौघवन्द्यम्।।

ध्यान के बाद प्रथम आवरण में अंग पूजा करे। द्वितीय आवरण में चन्द्रादि आठ ग्रहों की पूजा अष्टदल में करे। तृतीय आवरण में लोकेशों की और चौथे आवरण में उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। शेष पूजन पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

सिद्धि हेतु बारह लाख मन्त्र-जप करे। बारह हजार जीवन घृताक्त तिल से, मधुराक्त तिल से और दूध मिश्रित तिल से करे। तर्पण-मार्जन करके सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे। पूर्वोक्त प्रकार से सूर्य को अर्घ्य प्रदान करे। इससे धन-धान्य, पुत्र-पौत्र, रत्न-वस्त्र एवं आभूषणों की वृद्धि होती है।

अष्टदल कमल बनाकर उसके दलों में और मध्य में नव कुम्भ स्थापित करे। उन्हें शुद्ध जल से भरे। उन कुम्भों में नवग्रहों का आवाहन करे। मध्य कुम्भ में सूर्य का आवाहन करे। शेष आठ में चन्द्रादि का आवाहन करे। मध्य कलश के जल को हजार सूर्यमन्त्र के जप से मन्त्रित करे। शेष आठ कुम्भों के जल को चन्द्रादि के मन्त्रों के सौ-सौ जप से मन्त्रित करे। उन कुम्भों के जल से पीड़ित का अभिषेक करे तो सभी ग्रह दोषजनित रोगों का नाश होता है एवं बराबर लक्ष्मी की प्राप्ति होकर लक्ष्मी स्थिर रहती है। विपरीत ग्रहों की शान्ति के लिये ग्रह हवन करे। चन्द्र-सूर्य ग्रहणकाल में अथवा अपने जन्म नक्षत्र में शत्रुओं का भय अथवा भयंकर रोग होने पर पूर्ववत् मण्डल बनाकर उसी पर ग्रहों की पूजा करे। अपने सामने अग्नि स्थापन करके ग्रहों की समिधाओं से हवन करे। ग्रहों की समिधाओं में अकवन, पलाश, चिड़चिड़ा, पीपल, गूलर, खैर, शमी, दूर्वा एवं कुश आते हैं। क्रमश: इनसे हवन करे। सूर्य के लिये एक हजार आठ आहुति से हवन करे। सोमादि अन्य ग्रहों के लिये एक सौ आठ-एक सौ आठ आहुतियों से हवन करे। गुरु को सन्तुष्ट करके ऋत्विजों को यथाशक्ति दक्षिणा प्रदान करे। ब्राह्मणों को भोजन कराये। ऐसा करने से साधक की युद्ध में जीत होती है, रोगों का नाश होता है एवं दीर्घ काल तक वह जीवित रहता है। साथ ही इससे कृत्यादि दोष शान्त होते हैं। या सभी ग्रहों का हवन एक साथ करे। साधक इस प्रकार प्रतिदिन दिननाथ की पूजा करे तो वह धन-धान्य-ऐश्वर्य से युक्त होकर दीर्घकाल तक जीवित रहता है।

पुत्रेष्टिविधि:

अथ पुत्रेष्टि:। भविष्योत्तरे भृगुं प्रति नारदवाक्यम्—

पुत्रीयं यज्ञमाचक्ष्व सतां वंशविवर्धनम् । शक्रेणेति गुरु: प्रोक्तो यथाहं कथयामि ते ।।१।।
बहुस्त्रीकोऽसुतो वन्ध्य: पुत्रीयं यज्ञमाचरेत् । पुण्यर्क्षमासतिथिषु ते कथ्यंते यथाक्रमम् ।।२।।
पूर्वोत्तरेषु सर्वेषु हस्तश्रवणमूलके । मृगपुष्यमहाज्येषु पूर्वातिथिगुणेषु च (?) ।।३।।

गुरुशुक्रेन्दुसौम्येषु स्थिरलग्नेषु सङ्गवे। शुक्रे केन्द्रगते वार्कग्रहणे समुपस्थिते ॥४॥
भृगुशुद्धौ विशुद्धार्के गुरुचन्द्रशुभेऽहनि। मार्गफाल्गुनवैशाखे श्रावणे कार्तिके तथा ॥५॥
शुक्लपक्षे विधातव्यं पुत्रीयं यज्ञमादरात्। आचार्यो भूसुरः श्रीमान् सर्वागमविशारदः ॥६॥
अलोभः सत्यवादी च कर्मवान् संमतः सताम्। व्रतकष्टसहिष्णुश्च जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥७॥
कृतोपवासो यजमानस्तद्वत् स्त्रीभिः समावृतः। तद्वदाचार्यनिकटं यायादर्घ्यकरः स्वयम् ॥८॥
पत्नीग्राहितबल्यन्नः सायं तस्य निमन्त्रणे। उत्तराभिमुखो विप्रो यजमानोऽप्युदङ्मुखः ॥९॥
पूर्वमुख्यः स्त्रियः सर्वास्ता विशेयुर्यथाक्रमम्। उपस्पृशञ्जलं दर्भं प्रोक्तासनवरोपरि ॥१०॥
गन्धपुष्पादिसौवर्णयज्ञसूत्राङ्गदादिभिः। वासोभिः शोभितं कृत्वा श्रावयेदिदमन्ततः ॥११॥
श्वस्तनेऽहनि पुत्रेष्टिकर्म कर्तुमहं द्विजाः। उक्त्वा गोत्राह्वयं पश्चाद् ब्राह्मणं तदनन्तरम् ॥१२॥
वरिष्ये त्वमिति प्रोच्य प्रणमेद्विप्रमेकदा। स्वस्तिस्वस्तिं तवाहं स्यामाचार्यः पुत्रियक्रतौ ॥१३॥
श्वस्तनेऽहनि संप्रोच्य सर्वानुत्थापयेच्च तान्। आचार्येण समं सायमेकस्मिन्नालये शुभे ॥१४॥
संविशेयुः कुशास्तीर्णे कम्बले मृदुवाससि। ततः प्रभृति कुर्वीत दीपं रात्र्यन्तगोचरम् ॥१५॥
प्रत्यहं क्षालयेच्छय्यावासः क्षाराम्बुना पृथक्। गृहं च शोधयेन्नित्यं मृद्गोमयजलैः शुभैः ॥१६॥
विकिरान् विकिरेत् सायं नूतनं दीपमुज्ज्वलम्। रक्षोघ्नं स्थापयेत्तत्र कपिलापञ्चगव्यकम् ॥१७॥
तिलाज्यमधुसम्पूर्णं हेमपात्रं सरत्नकम्। धूपः सिन्दूरकर्पूरगुग्गुल्वगुरुकुङ्कुमैः ॥१८॥
सचन्दनैः प्रदातव्यः सर्वविघ्नोपशान्तये। भित्तौ च सर्वतस्तस्य सेचयेच्चतुरः समैः ॥१९॥
स्नानद्वयं प्रकुर्वीत यजमानो व्रते स्थितः। आचार्यो घृतपलं प्राशेदथ दुग्धपलद्वयम् ॥२०॥
पलद्वयं च दधि वा तोयं पलचतुष्टयम्। जलाशी वा फलाशी वा निराहारोऽथवा भवेत् ॥२१॥
यजमानस्तु कलमसंभवांस्तण्डुलांस्तथा। अक्षतान् फलसंशुद्धान् क्षालितांश्च पुनः पुनः ॥२२॥
प्रस्थमात्रान् कपिलाज्यदुग्धपक्वान् मृदूँल्ल्यून्। सायंकृत्यान्तरे काले भुञ्जीतैक्षवसंयुतान् ॥२३॥
स्त्रियोऽपि श्यामकलमसंभवांस्तण्डुलांस्तथा। अर्धाहारं प्रकुर्वीत संस्कृतांस्तीर्थवारिणा ॥२४॥
सैन्धवेन घृतेनात्र समभ्यर्च्य प्रजापतिम्। ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय मूत्रोत्सर्गौ विधाय च ॥२५॥
कृतशौचक्रियः शुद्ध आचान्तः प्रोक्तवर्त्मना। दन्तकाष्ठं विधायाथ स्नायात्सूर्योदयात्पुरा ॥२६॥

पुत्रेष्टि-विधि—भविष्योत्तर पुराण में नारद ने भृगु से कहा कि जिस पुत्रीय यज्ञ को बृहस्पति ने इन्द्र से कहा था, उसे सदाचारियों के वंशवर्द्धन के लिये मैं यहाँ कहता हूँ। बहुत स्त्रियों से भी पुत्र न होने वाले अपुत्री को यह यज्ञ करना चाहिये। इसके लिये शुभ नक्षत्र मास तिथि को यथाक्रम से कहता हूँ। सभी पूर्वा, उत्तरा नक्षत्रों में, हस्त, श्रवण, मूल, मृगसिरा, पुष्य नक्षत्रों में; पूर्वा तिथिगुणों में, गुरु शुक्र सोम बुध स्थिर लग्न में, केन्द्रगत शुक्र में या सूर्यग्रहण में, शुक्र शुद्ध एवं विशुद्ध सूर्य में, गुरुवार या सोमवार में, अगहन फाल्गुन वैशाख श्रावण कार्तिक मास के शुक्लपक्ष में पुत्रीय यज्ञ आदरपूर्वक करना चाहिये। इस यज्ञ का आचार्य ब्राह्मण श्रीमान्, सर्वांगविशारद, निर्लोभ, सत्यवादी, कर्मवान्, सदाचारी, व्रत-कष्ट सहिष्णु, जितक्रोध, जितेन्द्रिय एवं उपवास करने वाला होना चाहिये। उसी प्रकार का यजमान भी स्त्रियों के साथ आचार्य के निकट जाकर स्वयं अर्घ्य प्रदान करे। बलि अन्न गृहीत पत्नी शाम को उसे निमन्त्रण देवे। उत्तराभिमुख विप्र, यजमान भी उत्तराभिमुख एवं पूर्वमुखी सभी स्त्रियाँ यथाक्रम आसन पर जल का छींटा देकर बैठें। गन्ध, पुष्पादि, सौवर्ण, यज्ञसूत्र अंगदादि से शोभित वस्त्रों से शोभित यजमान आचार्य से कहे—अगले दिन मैं पुत्रेष्टि कर्म करने की इच्छा करता हूँ। अपने गोत्र का नाम कहकर कहे कि इस कार्य के लिये आपका वरण करता हूँ। तब विप्रों को प्रणाम करे। तब आचार्य कहे—स्वस्ति स्वस्ति; मैं तुम्हारे पुत्रीय यज्ञ का आचार्य होना स्वीकार करता हूँ। स्वस्ति कहकर उन सबों को उठाये। आचार्य के साथ शुभ आलय में कुशासन, कम्बल या मृदुल वस्त्रासन पर बैठे। रातभर जलने के योग्य दीपक जलाये, प्रतिदिन शयन के वस्त्रों को सारे जल से साफ

करे। घर का शोधन गोबर से लीपकर शुद्ध जल से करे। शाम को नया दीपक कपिला गाय के घी से जलाकर रक्षादीप स्थापित करे। तब हेमपात्र में कपिला का पञ्चगव्य, तिल, गोघृत, मधु, पञ्चरत्न देकर कपूर, गुग्गुल, अगर, कुङ्कुम, चन्दन का धूप जलावे। इससे सभी विघ्नों की शान्ति होती है। चारो ओर से दीवाल का सेचन करे। व्रत स्थित यजमान दो बार स्नान करे। घी एक पल = ५० ग्राम, दूध १०० ग्राम, दही १०० ग्राम, जल २०० ग्राम खाकर आचार्य जलाहारी, फलाहारी या निराहारी रहे। यजमान भी चावल को बार-बार धोकर कपिला गाय के एक किलो दूध में आज्य गुड़ डालकर खीर पकाकर खाये। स्त्रियाँ भी चावल को तीर्थजल में पकाकर सेन्धा नमक घी के साथ प्रजापति की पूजा करके आधा पेट खायें। ब्राह्म मुहूर्त में उठकर मल-मूत्र त्यागकर पूर्वोक्त मार्ग से दतुवन करके सूर्योदय के पहले स्नान कर लें।

आचार्यो यजमानश्च महानद्यां स्त्रियश्च ताः। प्रातःकृत्यं यथाप्रोक्तं कृत्वा सूर्यमनुं जपेत् ॥२७॥
सार्धयामद्वये यावत् प्रातरारभ्य संजयेत्। जपादौ च जपान्ते च देवं संपूजयेद्रविम् ॥२८॥
होमं कृत्वा दशांशेन ततो माध्याह्निकीं क्रियाम्। कृत्वा सन्तर्पयेद् देवं दशांशैः शुद्धवारिणा ॥२९॥
मार्जयेच्च तदर्धेन यावदुक्तार्कमण्डलम्। सायंकृत्यं विधायाथ भुञ्जीरनुक्तवर्त्मना ॥३०॥
प्रणम्याचार्यचरणौ शयीरंस्तस्य देशतः। एवं प्रोक्तनि कर्माणि प्रातःकृत्यादनन्तरम् ॥३१॥
सोपवासः प्रकुर्वीत प्रतिज्ञां पुत्रियक्रतौ। एतस्य यजमानस्य पत्न्यामस्यामथासु वा ॥३२॥
पितृभ्योऽधिकगुणवत्पुत्रकामोऽद्य कालतः। मासद्वयं यावदहं त्रिलक्षकृतसंख्यया ॥३३॥
अक्षरं(आर्क) मन्त्रं महाश्वेताशक्तिं भास्करदैवतम्। देवभागमुनिं तद्वद्गायत्रीछन्दसान्वितम् ॥३४॥
जप्त्वैतस्य दशांशेन कपिलाज्यतिलेन च। हुत्वार्कोपचिते वह्नौ योनिकुण्डे तदर्धतः ॥३५॥
तर्पयेच्छुद्धतोयेन संमार्ज्यापि तदर्धतः। कल्पोक्तविधिना देवं संपूज्य भास्करं प्रभुम् ॥३६॥
रक्तभूमध्यकुम्भं तं सञ्चिन्त्याभ्यर्च्य पूर्ववत्। तज्जलेन सपत्नीकं यजमानं स्नापितं मुने ॥३७॥
तत्पत्नीकर्तृकचरुप्राशनं चरुमुच्चरेत्। पुत्रीयं यज्ञं करिष्ये प्रतिज्ञामाचरेदिति ॥३८॥
ततो ह्यनन्तरे काले उपान्ते होममाचरेत्। सार्धं त्रिंशत्सहस्राणि जप्त्वा प्रोक्तेन वर्त्मना ॥३९॥
पूर्णाहुतिं सपत्नीकयजमानसमन्वितः। कुर्याच्च त्र्यायुषं तेषु वह्निं संरक्षयेत्ततः ॥४०॥
प्रत्यहं पूजयेत्तं च देवताकारमाहितम्। प्रतिज्ञानिर्विघ्नकरान् कृतस्वस्त्ययनद्विजान् ॥४१॥
सन्तर्पयेद्भोजनेन त्रिमध्वक्तेन साधकः। तेभ्यश्च दक्षिणां दत्त्वा दद्यात्तु प्रेप्सितं वरम् ॥४२॥
चक्रं विदद्यादाचार्यस्ततो वर्णैस्तु पञ्चभिः। नवनाभं यथाशोभं वह्नेरुत्तरतो दिशि ॥४३॥
हैमान् वा रूप्यताम्रोत्थान् कलशान्नव शोभनान्। क्षालितानस्त्रमनुना धूपितान् कलशांस्तु तान् ॥४४॥
मध्यादिप्रदक्षिणतः पदेषु नवसु स्मरन्। ग्रहान्नव ततो दीक्षाविधिवत् स्थापयेत्तु तान् ॥४५॥
सूर्यादिकान् ग्रहांस्तांस्तु पूजयेच्च पृथक् पृथक्। दीक्षोक्तेन विधानेन प्रत्यहं दिवसत्रयम् ॥४६॥
दिक्पालान् पूजयेत् सूर्ये ततश्चाष्टग्रहानपि। कुम्भेभ्यो सूर्यं तु कुम्भतोयान्तर्जलान्यप्यत्र चान्यतः ॥४७॥
निक्षिपेन्मन्त्रैर्मन्त्रास्त्वाद्यर्णबीजकाः । चतुर्थ्यन्ता नमोन्ताश्च मध्यकुम्भाम्भसा पृथक् ॥४८॥
आचामयेत्स तान् सर्वानासीनानुत्तरामुखान्। स्नापयेन्मूलमन्त्रेण साधकः सूर्यं संस्मरन् ॥४९॥
यथा ज्येष्ठां च तत्पत्नीं श्वेतवस्त्रं पिधापयेत्। अन्कुम्भाम्भसा पात्र एकत्र कृतसंपदा ॥५०॥
आचामेन्मूलमन्त्रेण सर्वनेतान् पृथक्पृथक्।

आचार्य स्त्रियों सहित यजमान के साथ महानदी के तट पर जाकर यथाविधि प्रातःकृत्य करने के बाद प्रातः से ढाई प्रहर तक सूर्य मन्त्र का जप करे। जप के पहले और जप के बाद सूर्यदेव की पूजा करे। जप का दशांश हवन करे तब मध्याह्न क्रिया करके जप का दशांश सूर्यदेव का तर्पण करे। तर्पण का आधा मार्जन करे। सूर्यास्त के पहले सायंकृत्य करे। सूर्यास्त के बाद पूर्वोक्त भोजन करे। तदनन्तर यजमान आचार्य को प्रणाम करके शयन करे। इस प्रकार प्रातःकृत्य के बाद दिन भर

की क्रिया करे। पुत्रिय यज्ञ में ब्राह्मण उपवास रहकर सङ्कल्प करे कि पत्नी सहित इस यजमान को गुणवान पुत्र कामना से इस समय से दो महीनों तक द्वादशाक्षर मन्त्र का तीन लाख जप करूँगा। इस मन्त्र के ऋषि देवभाग मुनि, छन्द गायत्री एवं देवता महाश्वेता-समन्वित सूर्य हैं। जप के बाद दशांश हवन कपिला गाय के घी और तिल से योनि कुण्ड में सूर्यरूप में पूजित अग्नि में करे। हवन का आधा तर्पण करे। तर्पण का आधा मार्जन करे। कल्पोक्त विधि से सूर्यदेव की पूजा करे। लाल भूमि में कलश स्थापित करके उसमें सूर्य का पूजन करे। उस जल से सपत्नीक यजमान को स्नान करावे। यजमान की पत्नी को चरु खिलावे। 'पुत्रिय यज्ञं करिष्ये' इस प्रकार का संकल्प करे। इसके बाद हवन मन्त्रोच्चारणसहित तीन हजार हवन करे। सपत्नीक यजमान के साथ पूर्णाहुति करे। तदनन्तर उस अग्नि की रक्षा करे। उस अग्नि की पूजा देवता के रूप में प्रतिदिन करे। प्रतिज्ञा की निर्विघ्नता के लिये द्विज लोग स्वस्त्ययन करें। ब्राह्मणों को यजमान त्रिमधुयुक्त भोजन कराये, दक्षिणा प्रदान करे और ब्राह्मण भी इच्छित फल पाने का आशीर्वाद दें।

तव आचार्य पाँच रंग के चूर्णों से नवनाभ मण्डल अग्नि के उत्तर भाग में बनावे। सोना-चाँदी या ताम्बे के नव कलशों को विधिवत् धोकर धूपित करके मध्य से प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से मण्डल में स्थापित करे। उनमें नवग्रहों को स्थापित करे। सूर्यादि नवग्रहों की पृथक्-पृथक् पूजा उनमें तीन दिनों तक करे। मध्यस्थित सूर्यकुम्भ में लोकपालों और आठ ग्रहों की पूजा भी करे। सूर्य कुम्भ का थोड़ा-थोड़ा जल अन्य आठ कुम्भों में भी डाले। ऐसा करते समय तत्तत् ग्रहों के चतुर्थ्यन्त नाम के साथ नमः लगाकर मन्त्र बनाकर पूजा करे। तब उत्तरमुख यजमानों को बैठाकर मध्य कुम्भ के जल से आचमन करे। सूर्य को स्मरण करके यजमान को मूल मन्त्र से स्नान कराये। यजमान की ज्येष्ठा पत्नी श्वेत वस्त्र लिपटे अन्य कुम्भों के जल को एक साथ लेकर अन्य पत्नियों को पृथक्-पृथक् आचमन करावे।

चरुं पचेद्धोमवह्नौ कथ्यतेऽस्य विधिः शुभः ॥५१॥

क्षालयेदस्त्रतोयेन हौमं चरुमनेकधा। होमाग्नावादधीतामुं प्रजापतिमनुं स्मरन् ॥५२॥
मूलेन कपिलादुग्धं क्षिपेत्प्रस्थचतुष्टयम्। तथा हैमन्तिकश्वेतधान्यतो हस्तविद्रुतान् ॥५३॥
अक्षतान् प्रस्थसंख्यातान् क्षालितांस्तीर्थवारिणा। कपिलायास्तु गोर्मूत्रैर्गोमयैः पयसा तथा ॥५४॥
दध्ना घृतेन प्रत्येकं त्रिभिः प्रक्षालयेद् ध्रुवम्। मूलमन्त्रं जपेत् स्पृष्ट्वा सहस्रं हेमपात्रके ॥५५॥
तत्र संपूज्येद्देवं कल्पोक्तविधिना रविम्। तांस्तु देवमयान् ध्यात्वा चरोर्मध्ये तु निक्षिपेत् ॥५६॥
हेमपात्र्यां च मूलेन हस्ताभ्यां तन्मुखं स्पृशन्। शतं सहस्रं प्रजपेन्मन्त्रं फलत्रयोपरि ॥५७॥
पूजयेत् पूर्ववत्तत्र भास्करं लोकभास्करम्। निर्माल्यादि चरोस्तस्माद्दूरीकृत्याथ मन्त्रवित् ॥५८॥
कल्पोक्तन्यासजातानि चरोरेव प्रविन्यसेत्। अभिघारं घृतेनात्र मूलेनोत्सृज्य च त्रिधा ॥५९॥
अवतार्य मुखं स्पृष्ट्वा सहस्रं च जपेन्मनुम्। व्याहृतीभिः पक्वचरुणाग्नये च ततः परम् ॥६०॥
प्रजापतये स्वाहेति अथेन्द्रादिभ्य एव च। तदस्त्रेभ्यश्च प्रत्येकं भास्करेभ्यश्चरुं तथा ॥६१॥
जुहुयात् पञ्चमांशेन सघृतेन चरोस्ततः। नवनाभान्तरे मध्ये पूजयेत् पूर्ववच्चरुम् ॥६२॥
संस्थाप्य पूजयेत्तत्र देवं पूर्वोक्तवर्त्मना। निर्माल्यं दूरतः कृत्वा ग्रहानष्टौ ततो यजेत् ॥६३॥
दिक्पालान् पूजयेत्तेषु पायसान्नं बलिं हरेत्। ततोऽपसार्य निर्माल्यं चरुमुत्थाप्य मन्त्रवित् ॥६४॥
विप्राशीर्भिः प्रवृत्ताभिः पञ्चघोषपुरःसरम्। आचार्यः पुत्रतेजोदो ब्रह्मप्रत्यधिदैवतम् ॥६५॥
रुद्राधिदैवतं तस्मादिदं भास्करदैवतम्। गृहाण भुङ्क्ष्व पत्नीभ्यो विभज्याभ्यो निवेदय ॥६६॥
एतान् भुञ्जीत पुत्राप्त्यै पञ्चग्रासान् यथाकृतान्। भुक्त्वाचामयेयुरन्ते दन्तकाष्ठं विधाय च ॥६७॥
पुनराचम्य ते सर्वे गुरुपादाम्बुजद्वये। निपतेयुरसावुत्थाप्येदं ब्रुवन् स मन्त्रवित् ॥६८॥
पित्रादिगुणवत्पुत्रं लभध्वमतितेजसम्। दीर्घायुषं महासत्त्वं सदा लक्ष्मीनिषेवितम् ॥६९॥
जितशत्रुं कुलदीपं कुलदीप्तिकरं परम्। विद्यानां पारगं दान्तं दातारं गजवाजिनाम् ॥७०॥

भोक्तारं वसुधायास्तं यशसा क्रान्तभूतलम्। इत्यादायाशिषं मूर्ध्ना प्रणमेच्च पुन: पुन: ।।७१।।
एतत्पुत्रीययज्ञस्य प्रतिकार्यं निवेदयेत्। गुरवे दक्षिणां दत्त्वा सुवर्णानां शतं तथा ।।७२।।
गावो महिष्यो वृषभा अश्वयूथो गजादय:। संपन्नापणचक्रार्था उद्यानवनशोभिता: ।।७३।।
ग्रामा ग्रामगुणोपेता ये स्युर्नद्यम्बुमातृका:। भूषणासनशय्यादिधनधान्यालयानि च ।।७४।।
नान्यत्र याचते येन तावदस्मै निवेदयेत्। आचार्यं प्रणतिं कुर्याद् ब्राह्मणै: सहित: स्वयम् ।।७५।।
ब्राह्मणान् भोजयित्वा च दीनान्धान् रोगपीडितान्। यजमानं सपत्नीकं शान्तिकुम्भोदकेन च ।।७६।।
अभिषिच्य ऋत्विक्स्वस्ति प्रोच्यागच्छेत्स्वमालयम्। यजमानस्त्रियश्चैता यावत्कुसुमसंस्थिता: ।।७७।।
पुष्पवत्यामथैकस्यामर्धरात्रे स्त्रियं भजेत्।

तदनन्तर हवनकुण्ड में चरु पकावे। उसकी विधि यह है कि चरु पकाने वाले वर्तन को अस्त्र मन्त्र कहकर जल से बार-बार साफ करे। प्रज्वलित होमाग्नि में प्रजापति का स्मरण करे। चार किलो दूध को पात्र में मूल मन्त्र से डाले। तब एक किलो हैमन्तिक धान के चावल को तीर्थ जल से कपिला गाय के मूत्र, गोबर, दूध, दही, घी से तीन-तीन बार धोये। उसे हेमपात्र में रखकर एक हजार जप से मन्त्रित करे। उसमें देव की पूजा करे। उसे देवमय मानकर पात्र में डाले। चरु पात्र के मुख का स्पर्श करके एक सौ या एक हजार जप करे। उसमें लोक को प्रकाशित करने वाले भास्कर की पूजा करे। चरु से निर्माल्य को हटा दे। कल्पोक्त न्यासों को चरु मे करे। मूल मन्त्र से तीन बार घी की धार गिरावे। तब उस पात्र को अग्नि से बाहर निकालकर रखे। उसके मुख का स्पर्श करके एक हजार मन्त्र जप करे। तब उस चरु से व्याहृतियों, प्रजापति, इन्द्रादि लोकपालों, वज्रादि आयुधों और सूर्य को पञ्चमांश से आहुतियाँ प्रदान करे। नवनाभ मण्डल के मध्य में चरु का पूजन पूर्ववत् करे। उसमें सूर्यदेव को स्थापित करके पूर्वोक्त विधि से पूजा करे। उस पर से निर्माल्य हटाकर आठो ग्रहों की पूजा करे। तब आयुधों सहित दिक्पालों की पूजा करे। उस पायसान्न से बलि प्रदान करे। तब निर्माल्य हटाकर चरु को उठाकर विप्रों के आर्शीर्वचन के साथ पञ्चघोष-पूर्वक आचार्य पुत्रतेजप्रद ब्रह्मप्रत्यधिदैवत रुद्राभिदैवत भास्करदैवत से चरु का तीन भाग करके पत्नियों को खाने के लिये देवे। चरु का पाँच ग्रास बनाकर पत्नियाँ पुत्र-प्राप्ति के लिये खाये। खाकर आचमन करें, दतुवन करे, पुन: आचमन करके गुरु के चरणों में लेट कर प्रणाम करें। तब गुरु उन्हें उठाकर इस प्रकार कहें—

पित्रादिगुणवत्पुत्रं लभध्वमतितेजसम्। दीर्घायुषं महासत्त्वं सदा लक्ष्मीनिषेवितम्।।
जितशत्रुं कुलदीपं कुलदीप्तिकरं परम्। विद्यानां पारगं दान्तं दातारं गजवाजिनाम्।।
भोक्तारं वसुधायास्तं यशसा क्रान्तभूतलम्।

गुरु से ऐसा आशीर्वाद मिलने पर यजमान बार-बार गुरु को प्रणाम करे एवं इस पुत्रिय यज्ञ का प्रतिकार्य निवेदन करे। गुरु को एक सौ सुवर्ण के सिक्कों की दक्षिणा प्रदान करे। गाय, भैंस, बैल, घोड़ा, हाथी, उद्यान-वनशोभित ग्राम, भूषण, आसन, शय्या, धन-धान्य, गृह इत्यादि इतना दान में दे कि गुरु को दूसरों से कुछ मांगना न पड़े। तदनन्तर ब्राह्मणों के साथ आचार्य को प्रणाम करे। ब्राह्मणों को भोजन कराकर गरीबों, अन्धों एवं रोगियों को भोजन कराये। तब ऋत्विक् सपत्नी यजमान का कुम्भजल से अभिषेक करें। अभिषेक के बाद स्वस्तिवाचन करके ऋत्विक् अपने घर जायँ। यजमान भी अपने घर आकर ऋतुस्नान के बाद आधी रात में पत्नी को याद करे। धोकर पति अधिकृत स्त्री के स्तनों का मर्दन करे; क्योंकि स्तनमर्दन से स्त्री को शक्ति प्राप्त होती है।

विशुद्धमृदुशय्याक: शुद्धवस्त्रसुगन्धिधृक् ।।७८।।
चारुस्रग् गन्धभूषाढ्य: सुगन्धिकृतलेपन:। कुण्डलादिविभूषावान् पृष्ठतो यज्ञसूत्रधृत् ।।७९।।
स्त्रियामासज्जमानायां सिञ्चेदम्भो धृढध्वज:। सिक्ते रेतस्यथाश्लिष्टौ तिष्ठतां दम्पती क्षणम् ।।८०।।
सुयन्त्रिता तथा नारी कर्तव्या यत्नत: स्तने। सम्भोगेऽपि निपीड्या च यत: शक्तिमुपैति सा ।।८१।।
उत्थायाचामतस्तौ हि शूद्रवच्छौचमाश्रितौ। स्नायातां चेत्कृताभ्यङ्गौ तूर्णं वाचामयेत्पृथक् ।।८२।।

पयः पीत्वा यथावाञ्छं पुमांस्ताम्बूलमाचरेत्। नारी हरीतकीं भक्षेत् प्रातः कुङ्कुमसंयुताम्॥८३॥
पूर्ववत्तौ शयीयातां यावत् षोडशवासरान्। देवपुत्रो भवेत्तत्र नात्र कार्या विचारणा॥८४॥
आषोडशदिनाद्यावदृतुकालं विदुर्बुधाः। दिवा वा निशि वा जाते पुष्पभागे भगाम्बुजे॥८५॥
ताश्चतस्रो निशास्त्याज्याः स्नानं स्यात्पञ्चमे दिने। आद्याश्चतस्रो निन्द्यास्ताः सङ्गमस्तासु गर्हितः॥८६॥
समरात्रं प्रसिञ्चेत्तु पुत्रार्थी प्रोक्तवर्त्मना। आदौ दिवा निषेवेत यदि गर्भो भवेदपि॥८७॥
अल्पायुरल्पवचनो दाहमोहरुजाकुलः। द्वितीये दुःखभोगः स्यात्तृतीये रोगवांस्तथा॥८८॥
चतुर्थे पञ्चपञ्चाशद्दिनानीह स जीवति। षष्ठे षष्टिं च साराढ्यो वर्षाणीह स जीवति॥८९॥
अष्टमे सप्ततिं वर्षान् दशमेऽशीतिवत्सरान्। द्वादशे नवतिं चाब्दान् षोडशे साष्टकं शतम्॥९०॥
रात्रिकालेऽपि कथ्यन्ते संयोगार्थाः सुगोपिताः। प्रथमे घटिकाकाले योगाद्गर्भो यदा भवेत्॥९१॥
अल्पायुरल्पशक्तिश्च त्रिंशद्वर्षाणि जीवति। चत्वारिंशद् द्वितीयेऽपि एवमग्रेऽपि वर्धते॥९२॥
एकैकपङ्क्तिभागेन यावत्साग्रं शतं पृथक्। नन्दायां मन्दभाग्यः स्याद्भद्रायां भास्करोपमः॥९३॥
जयायां विष्णुसदृशो रिक्तायां निर्बलोऽधमः। पूर्णायां पूर्णलक्ष्मीवान् विद्वान् भवति धार्मिकः॥९४॥
कुजे कुब्जादिकं देहे सहिष्णुर्बहुवित्तवान्। बुधे विद्वान् बुद्धिहीनो धर्मकर्मरतः स्मृतः॥९५॥
गुरौ गुरुमतिः श्रीमान् बहुभोक्ता जगत्प्रियः। शुक्रे मतिजिताशेषः सानुरक्तो गुणप्रियः॥९६॥
शनौ स्थिरमतिः पापारोपणः परमर्षकः। रवौ क्रोधवशो लोलो बहुपुत्रो रुजाकुलः॥९७॥
चन्द्रे सुन्दरदेहः स्याद्धनवान् धार्मिकः सुधीः। पञ्चपर्वसु यो जातः स भवेत्तस्करोऽधमः॥९८॥
सार्वभौमो भवेद्गर्भः पञ्चम्यामुत्तरे भृगौ। शुभसिद्ध्यमृतानन्दे गर्भो राजेश्वरो भवेत्॥९९॥
विष्टिदुष्टेषु कालेषु यावज्जीवं रुजाकुलः। इति।

कोमल शय्या पर शुद्ध वस्त्र एवं गन्ध धारण करके, सुन्दर माला धारण कर, गन्ध-आभूषणयुक्त होकर सुन्धित लेप लगाकर, कुण्डलादि पहनकर, पीठ पर यज्ञोपवीत धारण करके स्त्री-समागम के लिये दृढ़ लिंग को धोकर पति-पत्नी दोनों थोड़ी देर रुके रहें। उस समय पति सम्भोगकुल पत्नी के स्तनों का मर्दन करे। तदनन्तर दोनों सम्भोग कर्म में रत हो जायँ। सम्भोग के समय भी पति स्त्री के स्तनों को पीड़ित करता रहे; क्योंकि इससे स्त्री को शक्ति प्राप्त होती है। वीर्यपात के बाद थोड़ी देर दोनों आलिंगनबद्ध रहें। सम्भोग से निपीड़ित नारी शूद्रवत् आचमन करे। पुरुष स्नान करके आचमन करे। इच्छानुसार दुग्ध पान करे और ताम्बूल भक्षण करे एवं नारी हर्रे खाय। इस प्रकार सोलह रातों तक दोनों शयन करें। ऐसा करने से देवपुत्र उत्पन्न होता है, इसमें संशय नहीं है।

रजोदर्शन के चार दिनों के बाद नारी स्नान करे ऋतुस्नान के बाद चार दिनों तक संगम गर्हित होता है। सम तिथि की रात में पुत्र के लिये पूर्वोक्त मार्ग से सम्भोग करे। पहले दिन में मैथुन करने से उत्पन्न पुत्र अल्पायु, मितभाषी एवं दाह-मोह-रोगाकुल होता है। दूसरे दिन के सम्भोग से उत्पन्न पुत्र दुःखी होता है। तीसरे में रोगी होता है। चौथे दिन के सम्भोग से उत्पन्न पुत्र पचपन दिनों तक जीवित रहता है। छठे दिन से उत्पन्न पुत्र साठ दिन तक एवं सातवें दिन का पुत्र एक वर्ष तक जीवित रहता है। आठवें दिन से उत्पन्न पुत्र सत्तर वर्ष तक और दसवें दिन से अस्सी वर्ष तक जीवित रहता है। बारहवें दिन के संगम से उत्पन्न पुत्र नब्बे वर्ष तक जीवित रहता है एवं सोलहवें दिन के संगम से उत्पन्न पुत्र एक सौ आठ वर्ष तक जीवित रहता है।

रात्रिकाल के गोपित संयोग को कहता हूँ। रात की प्रथम घटी में संयोग से यदि गर्भ रहता है तो उससे उत्पन्न पुत्र अल्पायु एवं अल्प शक्ति वाला होकर तीस वर्षों तक जीवित रहता है। दूसरी घटी में उत्पन्न पुत्र चालीस वर्ष तक जीवित रहता है। इसी प्रकार घटी के अनुसार क्रमशः आठवीं घटी के संयोग से उत्पन्न पुत्र सौ वर्ष तक जीवित रहता है। तिथियों के अनुसार नन्दा में संगम से उत्पन्न पुत्र मन्दभाग्य होता है, भद्रा में सूर्य के समान तेजस्वी होता है, जया तिथि में विष्णु

के समान होता है, रिक्ता में निर्बल एवं नीच होता है। पूर्णा में पूर्ण लक्ष्मीवान, विद्वान् एवं धार्मिक होता है। दिनों के क्रम में मंगलवार मे संगम से उत्पन्न पुत्र कुबड़ा, सहिष्णु एवं बहुत धनी होता है। बुध में संगम से उत्पन्न पुत्र विद्वान् एवं धर्म-कर्म में लगा रहता है। गुरुवार में संगम से बृहस्पति के समान बुद्धिमान, श्रीमान्, बहुभोक्ता एवं जगत्प्रिय होता है। शुक्रवार में संगम से सबों को जीतने वाला, प्रेमी एवं गुणप्रिय होता है। शनिवार मे संगम से उत्पन्न पुत्र स्थिर बुद्धि, पापी एवं क्रूर होता है। रविवार में संगम से उत्पन्न पुत्र क्रोधी, लालची, बहुपुत्रवान और रोगी होता है। सोमवार में संगम से उत्पन्न पुत्र सुन्दर शरीर वाला, धनवान धार्मिक एवं बुद्धिमान होता है। पाँचों पर्वों में उत्पन्न पुत्र नीच एवं चोर होता है। पञ्चमी तिथि, उत्तरा नक्षत्र, शुक्रवार में संगम से उत्पन्न पुत्र चक्रवर्ती होता है। शुभ सिद्ध अमृत आनन्द योग में स्थित गर्भ से उत्पन्न पुत्र राजराजेश्वर होता है। दुष्ट विष्टि काल में स्थित गर्भ से उत्पन्न पुत्र आजीवन रोगी रहता है।

संग्रामविजयमन्त्रः

तथा मन्त्रान्तरम्—

मनुर्वह्निसमारूढो मस्तकेन च संयुतः। वर्माढ्यो मनुराख्यातः सङ्ग्रामविजयाभिधः॥१॥

मनुः औकारः, वह्नी रेफः, मस्तकोऽनुस्वारः, एतैः रौं। वर्म हुंकारः।

ऋष्याद्या मन्त्रिभिः प्रोक्ता अजगायत्रिभानवः। ह्रामाद्यैरङ्गमुद्दिष्टं मनोरस्य दिनेशितुः॥२॥

पद्मयुग्मं वराभीती दधानं करपङ्कजैः। रक्तपद्मस्थितं भानुं रक्तं ध्यायेत्त्रिलोचनम्॥३॥

न्यासपूजादिकं सर्वं त्र्यक्षरोक्तविधानवत्। अर्घ्यं पूर्वोदितं कृत्वा संग्रामे विजयी भवेत्॥४॥ इति।

संग्राम विजयप्रद मन्त्र—युद्ध में विजय प्रदान करने वाला दो अक्षरों का मन्त्र है—रौं हुं। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता सूर्य हैं। ह्रां ह्रीं इत्यादि से इसका षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

पद्मयुग्मं वराभीती दधानं करपङ्कजैः। रक्तपद्मस्थितं भानुं रक्तं ध्यायेत्त्रिलोचनम्॥

इसके न्यास पूजादि सभी त्र्यक्षर मन्त्र के समान होते हैं। पूर्वोक्त विधि से अर्घ्य प्रदान कर युद्ध में जाने पर विजय प्राप्त होती है।

सप्रयोगोऽजपामन्त्रविधिः

तथा मन्त्रान्तरम्—

शिरोयुक्तं विष्णुपदं चन्द्रो जिह्वान्वितो मनुः। आत्मनो युग्मवर्णोऽयमजपाख्यो विषापहः॥५॥

शिरोयुक्तं विष्णुपदं बिन्दुयुक्तो हकारः। चन्द्रो जिह्वान्वितो विसर्गयुक्तो सकारः। तथा—

ब्रह्मा मुनिः समुद्दिष्टो गायत्रीछन्द उच्यते। देवीपूर्वं देवतास्य परमात्मा समीरितः॥६॥

षड्दीर्घभाजा च हसा विदध्यादङ्गमस्य वै।

रक्ताब्जकाञ्चननिभं गुणटङ्कयुक्तैर्हस्तैरभीतिवरदे दधदम्बुजस्थम्।

गौरीहराङ्कलितं वपुराश्रयामः सौम्याग्निरूपमनिशं गिरिजार्धभागम्॥७॥

उपरितनयोः करयोः पद्मयुगं, वामाद्यधःकरयोरभीतिवरौ, इत्यायुधध्यानम्।

पूर्वोदिते यजेत् पीठे दीप्तादिपरिकल्पिते। तत्र देवं यजेन्मूर्तिं मूलेनाकल्प्य मन्त्रवित्॥८॥

पूर्वमङ्गैर्यजेन्मन्त्री दिग्दलेषु प्रपूजयेत्। क्रमादृतं वसुं तद्वन्नरं पश्चाद्वरं तथा॥९॥

विदिग्दलेषु चाभ्यर्च्या ऋतजाख्या अतःपरम्। गोजा अब्जाद्रिजा वापि ततो लोकेश्वरान् बहिः॥१०॥

वज्रादीनि ततः पश्चाद्यजेदनुदिनं सुधीः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः। हृदि परमात्मने देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम मोक्षार्थे विनियोगः इति

कृताञ्जलिरुक्त्वा, ह्सां हृदयाय नमः। ह्सीं शिरसे स्वाहा। ह्सूं शिखायै वषट्। ह्सैं कवचाय वषट्। ह्सौं नेत्राभ्यां वौषट्। ह्सः अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, ध्यानाद्यङ्गार्चान्ते दिग्दलेषु देवाग्रादि प्रादक्षिण्येन—ऋताय नमः। वसवे नमः। नराय नमः। विदिग्दलेषु—अब्जायै नमः। गोजायै नमः। ऋतजायै नमः। अद्रिजायै नमः। इति संपूज्य लोकेशार्चादि प्रागवत् कुर्यादिति। तथा—

जपेद् द्वादशलक्षं तु तद्दशांशं हुनेत्तथा। सर्पिरक्तेन हविषा तर्पणादि ततश्चरेत् ॥११॥
पूर्वोदितेन विधिना सूर्यायार्घ्यं निवेदयेत्।

कृत्वा सल्लिपिपद्ममत्र च भवेन्मध्ये मनुर्मूलगो
न्यस्यास्योपरि तोयपूर्णकलशं सम्यक् पिधायास्य च।
वक्त्रं वामकरेण मूलमनुना जप्तेन चाष्टोत्तरं
सञ्जप्याथ शतं सुधामयमिति स्मृत्वाभिषिञ्चेच्च तम् ॥१२॥
साध्यं तेन नरो भवेद्विगतभीः सर्वत्र वीतामयो
दीर्घायुश्च विपद्भयेन रहितो योषिच्च सौभाग्ययुक्।
तेनैव प्रजपेत् करेण करकं सम्यक् पिधायामृती-
भूतैस्तैर्विषिणं निषिञ्चति विषं वा कालकूटं हरेत् ॥१३॥
अथवा मनुमत्र जपेत् स्वकरं विषिमूर्ध्नि सुधां विनिधाय ततः।
स तु तक्षकदष्टमपीह नरं प्रतिमोचयते ह्यचिरान्मनुना ॥१४॥

सञ्चिन्त्याशु सुधाकरद्वयगलत्पीयूषधाराप्लुतं बीजं प्रान्तगतं ततः स्रुतसुधासम्भावितं चादिमम्।
मन्त्रस्यास्य कृती जपेन्मनुमिमं क्षुद्रामयघ्नं परं भूतापस्मृतिसर्पजातविकृतीर्हत्वा सुखं जीवति ॥१५॥
शीर्षे चन्द्रविनिःसृतं स्रुतसुधं हंसात्मरूपं मनुं तत्सौषम्नपथं स वै विमलधीर्नीत्वा ततः स्वां तनुम्।
व्याप्तां तेन विचिन्त्य तां मनुमिमं सञ्जप्य धीमान् कृती रोगापस्मृतिकालकूटदुरितोन्मादज्वरान् संहरेत् ॥१६॥
आकाशान्तरचन्द्रखण्डविलसत्पीयूषधाराचितं मन्त्रान्त्यं सगतार्धचन्द्रयुगलप्रोद्भूतभासा मुहुः।
एवं साधकसत्तमस्य सततं दाहार्तिभूतामयाः कृत्याः शत्रुकृताः प्रयान्ति विलयं योगः परोऽयं मतः ॥१७॥ इति।

अजपा मन्त्र—विष को हरण करने वाला दो अक्षरों का अजपा मन्त्र है—हंसः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द देवी गायत्री एवं देवता परमात्मा हैं। ह्स्रां ह्स्रीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार। ध्यान किया जाता है—

रक्ताब्जकाञ्चननिभं गुणटङ्कयुक्तैर्हस्तैरभीनिवरदे दधदम्बुजस्थम्।
गौरीहराङ्ककलितं वपुराश्रयामः सौम्याग्निरूपमनिशं गिरिजार्धभागम्॥

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः, हृदि परमात्मने देवतायै नमः। इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करके अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ह्सां हृदयाय नमः, ह्सीं शिरसे स्वाहा, ह्सूं शिखायै वषट्, ह्सैं कवचाय हुम्, ह्सौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्सः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। ध्यान के बाद अंगपूजा करे। अष्टदल कमल के पूर्वादि दलों में देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से ऋताय नमः, वसवे नमः, नराय नमः एवं वराय नमः से पूजा करे। कोणदलों में अब्जायै नमः, गोजायै नमः, ऋतजायै नमः, अद्रिजायै नमः से पूजा करे। तब चतुरस्र में लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे।

बारह लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन सर्पि और लाल द्रव्यों से करे। तर्पणादि करे। पूर्वोक्त विधि से अर्घ्यदान करे। सुन्दर पद्मपत्र बनाकर उसके मध्य में मूल मन्त्र 'हंसः' लिखे। उसके ऊपर वस्त्र से ढके कलश को जलपूर्ण करके रखे। उसके मुख पर बाँयाँ हाथ रखकर एक सौ आठ मन्त्रजप करे। उसे अमृत मानकर उस जल से साध्य का सेचन करे तो वह

भयरहित, निरोग, दीर्घायु, विपत्तिभय से रहित एवं सौभाग्यशाली होता है। पुन: उसी प्रकार करक को हाथ से ढककर जप करे। इस अमृतभूत जल से जहर-पीड़ित का सेचन करे तो कालकूट विष का भी नाश हो जाता है। अथवा अपने हाथ को जप से मन्त्रित करके विषपीड़ित के मूर्धा पर रखे तो तक्षक का काटा हुआ मनुष्य भी ठीक हो जाता है। इस मन्त्र के दोनों बीजों को सुधाकर से चूते हुए अमृतधारा से प्लुत रूप में चिन्तन करके मन्त्रजप करे तो क्षुद्र रोग, भूत, अपस्मार, सर्पविष का प्रभाव नष्ट होता है और पीड़ित मनुष्य सुख से जीवित रहता है। शिर पर चन्द्र-नि:सृत सुधा एवं हंसात्म रूप मन्त्र को सुषुम्ना मार्ग से अपने देह में लाकर उससे व्याप्त अपने तन को जानकर इस मन्त्र का जप करे तो बुद्धिमान साधक रोग, अपस्मार, कालकूट विष, दुरित उन्माद ज्वर आदि का नाश है। आकाश में चन्द्रखण्ड को अमृतधारा वर्षाते हुए मन्त्र के दोनों वर्णों को दो चन्द्र मानकर साधक जप करे तो दाह-कष्ट, भूत, रोग, शत्रुकृत कृत्या का नाश हो जाता है।

मार्त्तण्डभैरवमन्त्र:

तथा मार्तण्डस्य मन्त्र:—

वियत् कृशानुमान्ताभ्यां मनुषष्ठेन्दुभिर्युतम्। मार्तण्डभैरवो मन्त्रो भजतां सर्वसिद्धिद: ॥१८॥

वियत् हकार:, कृशानु रेफ:, मान्तो यकार:, मनु: औकार:, षष्ठ ऊकार:, इन्दुर्बिन्दु:, एभि: पिण्डितं बीजं ह्र्यौऊं इति सिद्धं भवति।

मध्यगो बिम्बमन्त्वोश्च सर्वेष्टफलदायक:। दान्ताग्न्यक्ष्युत्तमाङ्गैस्तु बिम्बबीजमुदाहृतम् ॥१९॥

दान्तो धकार:, अग्नी र, अक्षि इ, उत्तमाङ्गं बिन्दु:, तेन ध्रिं इति। मन्त्रान्तरं तु—'टान्तं दहननेत्रेन्दुसहितं तदुदीरितम्।' टान्तं ठकार:, दहनो रेफ:, नेत्रं इ, इन्दुरनुस्वार:, तेन ठ्रिं इति बिम्बबीजमुद्धृतम्। यथोपदेशं जप:। ब्रह्मा ऋषि:, निचृद्गायत्री छन्द:, मार्तण्डभैरवो देवता, हं बीजं, बिन्दु: शक्तिरिति वदन्ति। तथा—

मूर्तय: पञ्च चोद्दिष्टा: सूर्यभास्करभानव:। रविर्दिवाकरश्चापि न्यस्तव्या अङ्गुलीषु ते ॥२०॥
मध्यमाङ्गुलिमारभ्य कनिष्ठान्तं न्यसेत् सुधी:। मूलाणुना पञ्चह्रस्वैर्युक्तेनानेन संयुता: ॥२१॥
शिरोवदनहृद्गुह्यपादेष्वेता: क्रमान्न्यसेत्।

मध्यमाङ्गुलिमिति मध्यमातर्जन्यङ्गुष्ठानामाकनिष्ठासु। 'मध्यमाद्यनुजान्तास्विति' नारायणीयवचनात्। पञ्चह्रस्वैरकाराद्योकारान्तै: षण्डविधुरै:। 'मूर्ती: सद्यावसानिका:' इति नारायणीयोक्ते:।

तत: षडङ्गं नेत्रान्तं कुर्याद् दीर्घयुजाणुना। ततस्तेनैव कुर्वीत व्यापकं मन्त्रवित्तम: ॥२२॥

अत्रास्त्रन्यासानन्तरं नेत्रन्यास: कार्य:। अत्र केचित्—'दीर्घयुक्तेन बीजेन नेत्रान्ताङ्गानि विन्यसेत्'। इति शारदातिलकवचनात्, नेत्रान्तानि पञ्चाङ्गानि वदन्ति, तन्न 'अस्त्रान्ताङ्गानि षट्' इति नारायणीयवचनात्। तथा ध्यानम्—

स्वर्णापीतजानिभं त्रिनयनं मुक्तालसद्धारिणं खट्वाङ्गारिगुणांस्तथा जपवटीं पद्मं च शक्त्यङ्कुशौ।
हस्ताब्जैर्दधतं कपालममलं सद्वल्लभालिङ्गितं मार्तण्डं मणिबद्धरम्यमुकुटं ध्यायेच्च वेदाननम् ॥२३॥

दक्षोर्ध्वादिखट्वाङ्गादीनि चत्वारि। वामोर्ध्वादिपद्मादीनि चत्वारि ध्येयानि। वेदाननं चतुर्मुखं, त्रिनयनं प्रतिवक्त्रमिति शेष:। 'अष्टबाहुं द्विषट्काक्ष'मिति नारायणीयोक्ते:। स्वर्णापीतं जपापुष्पनिभं च तेन रक्तमित्युक्तं 'सिन्दूरारुणमीशानं वामोर्ध्वे दधतं रविम्' इति नारायणीयोक्ते:। तथा—

नवशक्तिसमायुक्ते पीठे चोषाढ्यकर्णिके। कुर्वीत पूर्ववच्चाङ्गपूजनं नेत्रमीशगम् ॥२४॥
पूजयेच्च ग्रहानष्टौ लोकेशांश्च तथायुधै:। इति।

नारायणीये—

न्यसेदुषां प्रभां सन्ध्यां प्रज्ञां दिक्ष्वब्जकर्णिके। दण्डिदीर्घस्वनामादिवर्णैरावाहयेत् तत: ॥१॥ इति।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे निचृद्गायत्रीछन्दसे नम:। हृदि श्रीमार्तण्डभैरवदेवतायै नम:। गुह्ये हं बीजाय नम:। पादयो: बिन्दवे शक्तये नम:। नाभौ रं कीलकाय नम:। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, मध्यमयो: अं सूर्याय नम:। तर्जन्यो: इं भास्कराय नम:। अङ्गुष्ठयो: उं भानवे नम:। अनामयो: एं रवये नम:। कनिष्ठयो: ओं दिवाकराय नम:। शिरसि अं सूर्याय नम:। मुखे इं भास्कराय नम:। हृदि उं भानवे नम:। गुह्ये एं रवये नम:। पादयो: ओं दिवाकराय नम:। ह्र्यां हृदयाय नम:। ह्र्यीं शिरसे स्वाहा। ह्र्यूं शिखायै वषट्। ह्र्यैं कवचाय हुम्। ह्र्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्र्य: अस्त्राय फट्। इति करयो: कनिष्ठान्तं हृदादिषु नेत्रान्तं च विन्यस्य, मूलमन्त्रेण व्यापकं विन्यस्य, ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि यथास्वस्थानं संपूज्यास्त्रमीशानकोणे संपूज्य, प्राग्वदष्टौ ग्रहान् संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यादिति। तथा—

लक्षाणां त्रितयं मन्त्री जपेद्बीजं च बिम्बयो: । मध्यगं जुहुयात् तस्य दशांशेनोत्पलै: शुभै: ॥२६॥
त्रिमध्वक्तैस्तर्पणादि कुर्यात् सिध्यति मन्त्रराट्। एवं सिद्धे मनौ मन्त्री काम्यकर्माणि साधयेत् ॥२७॥
पूर्ववच्चार्घ्यदानं च कुर्यान्मन्त्री समाहित: । चतुरङ्गुलसम्भूतै: सुमनोभि: श्रियं लभेत् ॥२८॥
लक्षं हुनेच्च शाल्याज्यतिलबिल्वैर्निधानभाक् । राजानं वशयेच्छीघ्रं जपाकुसुमहोमत: ॥२९॥
जुहुयान्मातुलुङ्गैश्च लभते वाञ्छितार्थकान् । एवं य: साधयेन्मन्त्री तस्य विद्यायशोबलम् ॥३०॥
पुत्रा लक्ष्मीश्च सौभाग्यं सर्वदा विजयो भवेत् ।

मार्तण्ड भैरव मन्त्र—समस्त सिद्धियों को देने वाला दो अक्षरों का मार्त्तण्डभैरव मन्त्र है—ह्र्यौंऊं। ठ्रीं ह्र्यूं—यह दो अक्षर का मन्त्र समस्त अभीष्ट को देने वाला है। गुरु के उपदेशानुसार इसका जप करना चाहिये। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द निचृद् गायत्री एवं देवता मार्तण्डभैरव हैं। हं बीज एवं बिन्दु शक्ति है। पञ्चाङ्गुलियों में न्यास पाँच मूर्तियों सूर्य, भास्कर, भानु, रवि, दिवाकर से करे। मध्यमा अंगुलि से कनिष्ठा तक अर्थात् मध्यमा, तर्जनी, अंगुष्ठ, अनामिका एवं कनिष्ठा—इस क्रम से न्यास करे। पञ्च ह्रस्वों से शिर वदन हृदय गुह्य पैरों में क्रमश न्यास करे। पाँच ह्रस्व अ इ उ ए ओ हैं। दीर्घ स्वरयुक्त बीज से षडङ्ग न्यास करे। पूरे मन्त्र से व्यापक न्यास करे। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

स्वर्णापीतजानिभं त्रिनयनं मुक्तालसद्धारिणं खट्वाङ्गारिगुणांस्तथा जपवटीं पद्मं च शक्त्यङ्कुशौ।
हस्ताब्जैर्दधतं कपालममलं सद्वल्लभालिङ्गितं मार्तण्डं मणिबद्धरम्यमुकुटं ध्यायेच्च वेदाननम्।।

नव शक्तियुक्त पीठ की कर्णिका में अंगपूजन करे। इसके बाद आठों ग्रहों, लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। नारायणीय में कहा गया है कि कर्णिका की चार दिशाओं में उषा, प्रभा, सन्ध्या, प्रज्ञा का न्यास करे। तदनन्तर आं के साथ स्वनामादि वर्ण से आवाहन करे।

प्रयोग—प्रात:कृत्य से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे निचृद् गायत्री छन्दसे नम:। हृदि श्रीमार्तण्डभैरवदेवतायै नम:। गुह्ये हं बीजाय नम:। पादयो: बिन्द शक्तये नम:। नाभौ रं कीलकाय नम:। इस प्रकार न्यास करके अभीष्ट सिद्धि के लिये विनियोग करने के पश्चात् करन्यास करे—मध्यमयो: अं सूर्याय नम:, तर्जन्यो: इं भास्कराय नम:, अंगुष्ठयो: उं भानवे नम:, अनामयो: एं रवये नम:, कनिष्ठयो: ओं दिवाकराय नम:।

मूर्ति न्यास—शिरसि अं सूर्याय नम:। मुखे इं भास्कराय नम:। हृदि उं भानवे नम:। गुह्ये एं रवये नम:। पादयो: ओं दिवाकराय नम:। ह्र्यां हृदयाय नम:। ह्र्यीं शिरसे स्वाहा। ह्र्यूं शिखायै वषट्। ह्र्यैं कवचाय हुं। ह्र्यौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्र्य: अस्त्राय फट्। इस प्रकार करन्यास एवं अंगन्यास करके मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। ध्यान से आरम्भ कर पुष्पोपचार तक पूजा करे। पूर्ववत् अंग पूजा करे। अस्त्र की पूजा ईशान कोण में करे। पूर्ववत् आठो ग्रहों की, लोकेशों की और उनके आयुधों की पूजा करे।

बिम्बमध्यगत बीज का तीन लाख जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त उत्पल फूलों से करे। तदनन्तर तर्पणादि करे तो मन्त्र सिद्ध होता है। इस सिद्ध मन्त्रराट् से काम्य कर्मों को साधित करे। साधक समाहित चित्त होकर पूर्ववत् अर्घ्यदान करे। चतुरंगुल सुमनो के हवन से श्रीलाभ होता है। शालि, आज्य, तिल, बेल, अड़हुल से एक लाख हवन करने पर राजा शीघ्र वश में होते हैं। विजौरा नीबू से हवन करने पर वांछितार्थ प्राप्त होते हैं। जो साधक इस प्रकार की साधना करता है, उसे विद्या, यश, बल, पुत्र, लक्ष्मी और सौभाग्य प्राप्त होते हैं एवं वह हमेशा विजयी होता है।

तद्यन्त्रचक्रवर्णनं महासौरमन्त्रश्च

वृत्तं त्र्यस्रं पुनर्वृत्तं षडस्रं वृत्तयुग्मकम् ॥३१॥

अष्टास्रकं कलास्रं च विधानेन लिखेत् क्रमात्। (वृत्तस्य मध्ये प्रणवं त्रिकोणेऽङ्गारकं न्यसेत् ॥३२॥
गारुडं च पुनर्वृत्ते लिखेत्पञ्चाक्षरं न्यसेत्। षट्कोणे चक्रराजञ्च वर्गषट्कं लिखेत्क्रमात् ॥३३॥)
वृत्तद्वये महासौरं गायत्रीं शिरसा सह। अष्टस्वष्टाक्षरं न्यसेदिन्द्रादीर्देवता अपि ॥३४॥
कलास्रेषु स्वराः प्रोक्ताः श्रींह्रीं च विलिखेत्क्रमात्। सौरचक्रमिदं पुंसामायुरारोग्यवर्धनम् ॥३५॥
वन्ध्यानां पुत्रजनकं स्त्रीणां सौभाग्यदायकम्। राज्ञां विजयदं सम्यक् रोगिणां रोगनाशनम् ॥३६॥
किं बहूक्तेन विधिना धृतं हस्तेऽखिलप्रदम्। उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् ॥३७॥
हृद्रोगं मम शब्दान्ते सूर्यान्ते हरिमा-पदम्। णं च नाशयशब्दान्ते महासौरमनुर्मतः ॥३८॥ इति।

वृत्तमित्यादीनां श्लोकानामयमर्थः—वृत्तं कृत्वा तन्मध्ये ससाध्यं प्रणवं विलिख्य, तद्बहिस्त्र्यस्रेऽङ्गारकं 'रं' इति विलिख्य, पुनर्वृत्ते 'क्षिपओं स्वाहा' इति गारुडपञ्चाक्षरमालिख्य, षट्कोणे पूर्वोक्तसुदर्शनचक्रमन्त्रमालिख्य, तदग्रेषु कवर्गादिवर्गषट्कं विलिख्य, बहिर्वृत्तद्वये महासौरं शिरसा सह गायत्रीं च विलिख्याष्टसु कोणेषु सौराष्टाक्षरमालिख्य, तदग्रेषु शक्रादिबीजान्यालिख्य, षोडशदलेषु स्वरांस्तदग्रेषु श्रींह्रीं इति बीजद्वयं प्रत्यग्रं लिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। महासौरमन्त्रस्तु 'उद्यन्नद्य मित्रमह' इति प्रोक्तवैदिकमन्त्रः।

पहले वृत्त बनाकर उसके बाहर त्रिकोण उसके बाहर वृत्त उसके बाहर षट्कोण उसके बाहर दो वृत्त उसके बाहर अष्टकोण उसके बाहर षोडश कोण विधान से बनावे। वृत के मध्य में साध्य नाम के साथ 'ॐ' लिखे। त्रिकोण के कोणों में 'रं' लिखे। वृत्त में छिपओं स्वाहा' इस गारुड़ पञ्चाक्षर मन्त्र को लिखे। षट्कोण में पूर्वोक्त सुदर्शन चक्र के षडक्षर मन्त्र वर्णों को लिखे। कोणाग्रों में कवर्गादि वर्गषट्क लिखे। दो वृत्तों के अन्तराल में शिरोमन्त्र के साथ महासौर गायत्री लिखे। कोणों में सूर्य के अष्टाक्षर मन्त्र वर्णों को लिखे। उसके कोणाग्रों में शक्रादि बीजों को लिखे। षोडश दलों में स्वरों को लिखे। सोलह दलाग्रों में से प्रत्येक में श्रीं ह्रीं—यह दो बीजों को लिखे। यह सूर्यचक्र मनुष्यों के आयु एवं आरोग्य को वर्द्धक, वन्ध्याओं को पुत्रप्रद, स्त्रियों को सौभाग्यदायक, राजाओं को विजय-प्रदायक एवं रोगियों के रोगों का विनाशक है। बहुत क्या कहा जाय; विधिवत् हाथ में धारण करने से यह सर्वार्थदायक होता है।

वैदिक महासौर मन्त्र है—

उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम्। हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय।।

सप्रयोगं चन्द्रमन्त्रार्चनम्

अथ चन्द्रस्य मन्त्रः। सारसंग्रहे—

चन्द्रमन्त्रं प्रवक्ष्यामि मन्त्रिणां हितकाम्यया। संपत्प्रदं चतुर्वर्गफलदं सर्वसिद्धिदम् ॥१॥
व्योमादिर्मनुपूर्वस्थो बिन्दुयुग् भृगुसद्यतः। रविराननवृत्ताढ्यो मरुद् दीर्घा विषस्तथा ॥२॥
कलान्त्ययुक् षडर्णोऽयं सोममन्त्र उदाहृतः। भृग्वम्बुमन्विन्दुखण्डमपरे बीजमूचिरे ॥३॥

व्योमादिः सकारः, मनुपूर्व ओकारः, बिन्दुरनुस्वारस्तेन सों इति। भृगुः सकारः, सद्य ओकारस्तेन सो

इति। रविर्मकारः, आननवृत्तमाकारस्तेन मा इति। मरुत् यकारः। दीर्घा न। विषं म, अन्त्यकला विसर्गस्तेन मः इति। प्रकारान्तरेण बीजमुक्तम्—भृगुः सकारः, अम्बु वकारः, मनुरौकारः, इन्दुखण्डोऽनुस्वारस्तैः स्वौं इति बीजं वदन्ति।

ऋषिर्भृगुः पंक्तिश्छन्दो देवता चन्द्रमाः स्मृतः। सदीर्घनिजबीजेन षडङ्गानि मनोः क्रमात्॥४॥
एवं विन्यस्य मन्त्रज्ञो द्विजराजं विचिन्तयेत्।
श्वेताब्जस्थः स्फुटिकरजतप्रोल्लसत्कान्तिरुच्चैर्मुक्ताहारप्रलसिततनुर्नीलकेशौघरम्यः।
हस्ताब्जाभ्यां कुमुदवरदे धारयन्नः शशाङ्को भूत्यैर्भूयादभिमतरमामङ्कोद्यत्कलङ्कः॥५॥

वामदक्षाभ्यां कुमुदवरदे।

पीठे धर्मादिभिर्युक्ते गदिते परिपूज्य च। चन्द्रमण्डलपर्यन्तं ततः संपूज्येद्विभुम्॥६॥

पद्मपादाचार्यास्तु—राका कुमुद्वती नन्दा सुधा सञ्जीवनी क्षमा। आप्यायनी चन्द्रिका चाह्लादिनी नव शक्तयः॥१॥ पूर्वादिक्रमतो मन्त्री नत्यन्ताः पूजयेदिमाः' इति पीठशक्तीराहुः। स्वायम्भुवे तु—'अमृता तारका ज्योत्स्ना विमला व्यापिनी तथा। चित्रा च कृत्तिका कान्तिः श्रवणा नव शक्तयः। अमृतान्ते कलात्मने संवित्पीठाय वै नमः इति। तथा—

किञ्जल्केषु षडङ्गानि तच्छक्तीः पत्रगा यजेत्। तास्वाद्या रोहिणी प्रोक्ता कृत्तिका रेवती पुनः॥७॥
भरणी रात्रिरार्द्रा च ज्योत्स्नाख्या च कला मताः। सुश्वेताः श्वेतवसनाः श्वेतमाल्यानुलेपनाः॥८॥
मुक्ताहारालङ्कृताङ्ग्यः पाण्यञ्जलिपुटाः शुभाः। आपीनोन्नतवक्षोजभाराक्लान्तावलग्नकाः॥९॥
मदेन मन्दगामिन्यः प्राणनाथात्तमानसाः। प्रसन्नचन्द्रवदनाः फल्लेन्दीवरलोचनाः॥१०॥
ग्रहानष्टौ दलाग्रेषु लोकेशांश्च ततो यजेत्। वज्रादीनि ततो बाह्ये एवं पूजा समीरिता॥११॥

ग्रहार्चाक्रमस्तु—'पूर्वदक्षिणपाश्चात्यसौम्यपत्राग्रकेषु च। रविश्चान्द्रिः गुरुः शुक्रः संपूज्याः साधकैरमी। आग्नेयादिषु कोणेषु भौममन्दाहिकेतवः।' चान्द्रिर्बुधः। मन्दः शनिः। अही राहुः, इति स्वायम्भुवोक्ताः। 'स्वानामाद्यर्णबीजकाः' इति शारदातिलके तत्तन्नामाद्यर्णबीजका रव्यादयो ज्ञेयाः। अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि भृगुऋषये नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीचन्द्रमसे देवतायै नमः। गुह्ये सौं बीजाय नमः। पादयोः नमः शक्तये नमः। इति विन्यस्य प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, सांसीं इत्यादिना करषडङ्गं कृत्वा ध्यानाद्यात्मपूजान्ते मण्डूकादिकर्णिकान्तं योगपीठं संपूज्यार्कमण्डलं वह्निमण्डलं च संपूज्य, पश्चात् सोममण्डलमभ्यर्च्य सत्त्वादिपरतत्त्वार्चान्तेऽष्टदलकेसरेषु स्वाग्रादि प्रादक्षिण्येन मध्यान्तं राकायै नमः। कुमुद्वत्यै नमः। नन्दायै नमः। सुधायै नमः। सञ्जीवन्यै नमः। क्षमायै नमः। आप्यायन्यै नमः। चन्द्रिकायै नमः। आह्लादिन्यै नमः। इति संपूज्य, 'अमृतकलात्मने संवित्पीठाय नमः' इति पीठं संपूज्यावाहनादिषडङ्गपूजान्तेऽष्टदलेषु रोहिण्यै नमः। कृत्तिकायै नमः। रेवत्यै नमः। भरण्यै नमः। रात्र्यै नमः। आर्द्रायै नमः। ज्योत्स्नायै नमः। कलायै नमः। इति संपूज्य, दिग्दलाग्रेषु—रं रवये नमः। बुं बुधाय नमः। गं गुरवे नमः। शुं शुक्राय नमः। कोणदलाग्रेषु भौं भौमाय नमः। मं मन्दाय नमः। रां राहवे नमः। कें केतवे नमः। इति संपूज्य लोकपालार्चादि सर्वं प्राग्वत् कुर्यात्। तथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तत्सहस्रकम्। हविषा घृतसिक्तेन तर्पणादि ततश्चरेत्॥१२॥
ततः सिद्धो भवेन्मन्त्रः साधकस्य न संशयः। एवमुक्तप्रकारेण संसिद्धे मन्त्रवित्तमः॥१३॥
चन्द्रं शिरसि सञ्चिन्त्य जपेन्मन्त्रमनन्यधीः। त्रिसहस्रेण लभते राज्यैश्वर्यमकिञ्चनः॥१४॥
लघुमिष्टहविष्याशी (जलस्थो विजितेन्द्रियः। वेदलक्षममुं मन्त्रं प्रजपेद्यतमानसः॥१५॥
धरागतं निधानं स ध्रुवं प्राप्नोति तत्क्षणात्। घोरज्वरे महाक्लेशे) शिरोरोगे च दारुणे॥१६॥
शत्रूत्पादितकृत्यासु कामलाद्यामयेषु च। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं तच्छान्तिरचिराद्भवेत्॥१७॥

पूर्णिमायां यथाशक्ति जपेन्मन्त्रं जितेन्द्रियः। सौभाग्यारोग्यसंपत्तिभाजनं मनुजो भवेत् ॥१८॥
ऐन्द्रवारुणविस्तीर्णमण्डलानां त्रयं बुधः। लिप्ते भूमण्डले कृत्वा निषीदेत्पश्चिमे स्वयम् ॥१९॥
मध्यस्थे मण्डले न्यस्य पूजोपकरणानि च। अग्रस्थमण्डले पद्मसंयुते पूर्ववद्यजेत् ॥२०॥
विधुं ततो रौप्यजातं पात्रं संस्थाप्य पूरयेत्। शुद्धगोपयसा मन्त्री स्पृशन्पात्रं मनुं जपेत् ॥२१॥
अष्टाधिकं शतं पश्चाद् राकायामुदये विधोः। चन्द्राय विद्यामनुना दद्यादर्घ्यं यथाविधि ॥२२॥
राकायां पौर्णमास्यां।

एवमर्घ्यविधानं यः करोति प्रतिमासिकम्। षण्मासादीप्सितानर्थांल्लभते नात्र संशयः ॥२३॥
लक्ष्मीं च महतीं पुत्रान् सौभाग्यारोग्यसंपदः। कान्तिं निजेप्सितां कन्यां सत्कीर्तिं लभते ततः ॥२४॥ इति।

चन्द्र मन्त्र—सारसंग्रह के अनुसार साधकों के लिये हितकारक, सम्पत्तिदायक, चतुर्वर्ग-प्रदायक एवं सर्व सिद्धिदायक षडक्षर चन्द्र मन्त्र है—सों सोमाय नमः। किसी-किसी के मत से बीजमन्त्र 'सों' के स्थान पर 'स्वौं' हैं। इसके ऋषि भृगु, छन्द पंक्ति एवं देवता चन्द्र कहे गये हैं।

प्रातःकृत्यादि योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भृगुऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः, हृदये श्रीचन्द्रमसे देवतायै नमः, गुह्ये सौं बीजाय नमः, पादयोः नमः शक्तये नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करने के पश्चात् सां सीं इत्यादि से कर एवं षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

श्वेताब्जस्थः स्फुटिकरजतप्रोल्लसत्कान्तिरुच्चैर्मुक्ताहारप्रलसिततनुर्नीलकेशौघरम्यः।
हस्ताब्जाभ्यां कुमुदवरदे धारयन्नः शशाङ्को भूत्यैर्भूयादभिमतरमामञ्चकोद्यत्कलङ्कः॥

आत्म-पूजा के बाद कर्णिका में मण्डूकादि योगपीठ की पूजा करके अर्कमण्डल और वह्निमण्डल की पूजा करे। तब सोममण्डल की पूजा करे। सत्त्वादि से परतत्त्व तक की पूजा करे। अष्टदल के केसरों में अपने आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से इनकी पूजा करे—राकायै नमः, कुमुद्वत्यै नमः, नन्दायै नमः, सुधायै नमः, संजीवन्यै नमः, क्षमायै नमः, आप्यायन्यै नमः, चन्द्रिकायै नमः, मध्य में आह्लादिन्यै नमः से पूजा कर 'अमृतकलात्मने संवित्पीठाय नमः' से पीठ की पूजा करे। आवाहनादि के बाद षडङ्ग पूजा करके दलों में रोहिण्यै नमः, कृत्तिकायै नमः, रेवत्यै नमः, भरण्यै नमः, रात्र्यै नमः, आर्द्रायै नमः, ज्योत्सनायै नमः, कलायै नमः से पूजन करे। दलाग्रों में पूर्वादि क्रम से इनकी पूजा करे—रं रवये नमः, बुं बुधाय नमः, गुं गुरवे नमः, शुं शुक्राय नमः। कोणदलाग्रों में भौं भौमाय नमः, मं मन्दाय नमः, रां राहवे नमः, कें केतवे नमः से पूजन करे इसके बाद चतुरस्र में पूर्ववत् इन्द्रादि लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करके समापन करे।

वर्णलक्ष के अनुसार छः लाख मन्त्र-जप करे। छः हजार हवन घृतसिक्त हवि से करे। ऐसा करने से मन्त्र सिद्ध होता है। मस्तक पर चन्द्रमा का ध्यान करके सिद्ध मन्त्र का जप एकाग्रता से करे। तीन हजार जप करने से अकिञ्चन को भी राज्य एवं ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। अल्पाहारी जितेन्द्रिय होकर जल में खड़े होकर एकाग्रता से चार लाख मन्त्र जप करे तो पृथ्वी-स्थित वैभव की प्राप्ति होती है। भयंकर बुखार, दारुण कष्ट, शिर में पीड़ा, शत्रु-प्रेरित कृत्या एवं कामला आदि रोगों में दश हजार जप करे तो शान्ति होती है। पूर्णिमा तिथि में जितेन्द्रिय रहकर यथाशक्ति मन्त्र जप करे तो मनुष्य सौभाग्य, आरोग्य एवं सम्पत्तियों से युक्त होता है। पूर्व से पश्चिम की ओर विस्तृत तीन मण्डल लिप्त स्थान पर बनाकर स्वयं पश्चिम मण्डल में बैठे। बीच वाले मण्डल में पूजन सामग्रियों को रखे। आगे वाले मण्डल में पद्मसंयुक्त चन्द्र का पूजन विधिवत् करे। उस पर चान्दी का पात्र रखकर उसमें गाय का शुद्ध दूध भरे। उसे छूते हुए एक सौ आठ मन्त्र-जप करे। इसके बाद पूर्णिमा की रात में चन्द्रोदय होने पर मन्त्र से यथाविधि अर्घ्यदान करे। इस प्रकार का अर्घ्यदान जो प्रतिमाह छः महीनों तक करता है, उसे इच्छित लाभ होता है। तदनन्तर वह बहुत धन, पुत्र, सौभाग्य, आरोग्य, संपदा, कान्ति, इच्छित कन्या एवं सत्कीर्ति प्राप्त करता है।

विद्यामन्त्रः

तथा—

विद्ये विद्यामालिनियुक् चन्द्रिण्यन्ते च चन्द्रयुक्। मुखि शिरोऽन्त्यस्ताराद्यो विद्यामनुरयं ततः ॥२५॥

विद्ये विद्यामालिनि स्वरूपं। चन्द्रिणि स्वरूपं। चन्द्रमुखि स्वरूपं। शिरोऽन्त्यः स्वाहान्त्यः।

विद्या-मन्त्र—'ॐ विद्ये विद्यामालिनि चन्द्रिणि चन्द्रमुखि स्वाहा'—यह विद्या मन्त्र है।

विद्यायन्त्ररचनाप्रकारः

तथा यन्त्रसारे—

षट्कोणे कर्णिकायां र(ट)परपरिलसत्तारमस्रेषु मन्त्रं
षड्वर्णं चाष्टपत्रे स्वरयुगललसत्केसरे युग्मशोऽर्णान्।
विद्यामन्त्रस्य काद्यैर्वृतमवनिपुराश्रिस्थवंबीजमुक्तं
यन्त्रं सोमस्य कान्तिद्रविणसुतयशः श्रीप्रदं क्ष्वेडहारि ॥१॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदलकमलकर्णिकायां षट्कोणमध्ये प्रणवोदरे ससाध्यं रंबीजं विलिख्य, षट्कोणेषु सोमषडक्षरस्यैकैकमक्षरं विलिख्याष्टदलकेसरेषु स्वरान् द्विश आलिख्य, अष्टदलेषु विद्यामन्त्रस्य प्रणवरहितान् षोडशवर्णान् द्वन्द्वशो विलिख्य, बहिर्वृत्तयोरन्तराले कादिक्षान्तवर्णैरावेष्ट्य बहिश्चतुरस्रकोणेषु वंबीजं विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति।

विद्यायन्त्र—यन्त्रसार के अनुसार अष्टदल कमल में षट्कोण बनाकर उसके मध्य में ॐ के गर्भ में साध्य नाम के साथ 'रं' लिखे। छः कोणों में चन्द्र के षड्क्षर मन्त्र 'सों सोमाय नमः' के एक-एक अक्षर को लिखे। अष्ट केसरों में दो-दो स्वरों को लिखे। आठो दलों में 'विद्ये विद्यामालिनि चन्द्रिणि चन्द्रमुखि स्वाहा' के दो-दो वर्णों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्तों के अन्तराल में क से क्ष तक के वर्णों को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र के कोणों में 'वं' बीज लिखे। यह सोम यन्त्र कान्ति, द्रव्य, पुत्र, यश, श्रीप्रद और क्ष्वेड रोग का विनाशक होता है।

भौममन्त्रः

अथ भौमस्य मन्त्रः—

अथ भौममनुं वक्ष्ये सर्वरोगनिवारणम्। सबिन्द्वाद्यद्वयं प्रोक्तं गारकाय हृदन्तिकः ॥२६॥
अष्टवर्णो मनुः प्रोक्तोऽङ्गारकस्य मनीषिभिः।

सबिन्द्वाद्यद्वयं अंअं। गारकाय स्वरूपं। हृन्नमः। तथा—

ऋष्याद्या ब्रह्मगायत्रीभूमिपुत्राः समीरिताः। अङ्गषट्कं चास्य मनोर्निजबीजेन संमतम् ॥२७॥
नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषितम्। जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम् ॥२८॥

आंईं इत्यादि षडङ्गकम्।

मंगल मन्त्र—समस्त रोगों के निवारक मंगल का मन्त्र है—अं अंगारकाय नमः। मनीषियों ने अंगारक के इस अष्टाक्षर मन्त्र को प्रकट किया है। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता भूमिपुत्र भौम हैं। षडङ्ग न्यास आं ईं ऊं ऐं औं अः से किया जाता है। इसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

नमाम्यङ्गारकं रक्तं रक्ताम्बरविभूषितम्। जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम्।।

बुधमन्त्रः

अथ बुधस्य मन्त्रः—

बुं ङेन्तं बुधशब्दं च हृदयान्तः षडर्णकः। बुधमन्त्रस्य मुन्याद्या ब्रह्मपङ्क्तिबुधा मताः ॥२९॥

षडङ्गानि स्वबीजेन विन्यस्यैवं विचिन्तयेत्। वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम्॥३०॥
जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम्। प्रजपेद्वर्णसाहस्रं दशांशं जुहुयाद् घृतैः॥३१॥
अर्चनं पूर्वमुदितं ज्ञातव्यं मनुवित्तमैः।

बुध मन्त्र—बुध का षडक्षर मन्त्र है—बुं बुधाय नम:। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द पंक्ति एवं देवता बुध हैं। बां बीं बूं इत्यादि से षडङ्ग न्यास इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम्। जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम्।।

बुध का प्रसन्नता-हेतु इस मन्त्र का छ: हजार जप एवं उसका दशांश हवन घी से किया जाता है पूजन पूर्ववत् होता है।

बृहस्पतिमन्त्रः

बृं बृहस्पतये हृच्च वसुवर्णो गुरोर्मनुः॥३२॥

ऋष्याद्या ब्रह्मसानुष्टुब्गुरवोऽस्य प्रकीर्तिताः। अङ्गषट्कं दीर्घषट्कस्वीयबीजेन कल्पयेत्॥३३॥
रत्नस्वर्णांशुकादीनि दक्षपाण्यम्बुजात्किरन्। सव्यादन्यान् वस्तुराशीन् निध्येयोऽमरसद्गुरुः॥३४॥
जपेदष्टसहस्रं तु तच्छतं हविषा हुनेत्। घृताक्तेन षडङ्गैश्च ग्रहाशापायुधैर्यजेत्॥३५॥
ध्यात्वा पूर्वोक्तमार्गेण समासीनो नवाम्बरे। जपेत् सप्तदिनं वह्नौ पीतपुष्पैर्घृतप्लुतैः॥३६॥
एवं दिनानां त्रितयं चाहुनेन्मन्त्रवित्तमः। स्वर्णवस्त्रादिसंसिद्धिर्भवत्यस्य न संशयः॥३७॥

बृहस्पति मन्त्र—बृहस्पति का अष्टाक्षर मन्त्र है—बृं बृहस्पतये नम:। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता बृहस्पति हैं 'षडङ्ग न्यास ब्रां ब्रीं ब्रूं ब्रैं ब्रौं ब्र: से करने के पश्चात् इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

रत्नस्वर्णांशुकादीनि दक्षपाण्यम्बुजात्किरन्। सव्यादन्यान् वस्तुराशीन् निध्येयोऽमरसद्गुरु:।।

सिद्धि हेतु आठ हजार मन्त्र-जप एवं दशांश आठ सौ हवन घृताक्त हविष्य से करे। षडङ्ग पूजा के साथ-साथ ग्रहों और उनके आयुधों की पूजा करे। पूर्वोक्त रूप से ध्यान करके नये वस्त्र पर बैठकर सात दिनों तक जप करे एवं घृत संसिक्त पीले फूलों से अग्नि में हवन करे। इस प्रकार से तीन दिनों तक हवन करने से साधक को सोना-वस्त्रादि की प्राप्ति होती है।

शुक्रमन्त्रः

वस्त्रं मे देहि शुक्राय शुमाद्यो हृदयान्तिकः। मुन्याद्या ब्रह्मसविराट्शुक्रा मन्त्रिभिरीरिताः॥३८॥
शुमाद्यः शुं वस्त्रं मे इत्यादि।

पदैः षड्भिः षडङ्गानि ततो देवं विचिन्तयेत्। शुक्रं नमाम्यापणस्थं शुक्लाभं वरभूषणम्॥३९॥
स्वर्णभाण्डे रत्नधाराचिन्मुद्रान्नकरद्वयम्। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं जुहुयाद् घृतैः॥४०॥
अङ्गग्रहाशापहेतिचतुरावरणं यजेत्।

शुक्रमन्त्र—शुक्र का एकादशाक्षर मन्त्र है—शुं वस्त्रं मे देहि शुक्राय नम:। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द विराट् और देवता शुक्र हैं। मन्त्र के छ: पदों से षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

शुक्रं नमाम्यापणस्थं शुक्लाभं वरभूषणम्। स्वर्णभाण्डे रत्नधाराचिन्मुद्रान्नकरद्वेयम्।।

दश हजार मन्त्र जप करे। एक हजार हवन घी से करे। अंग, ग्रह, शाप एवं आयुधों की पूजा चार आवरणों में करे।

शनिमन्त्रः

शनैश्चराय हृदयं शमाद्यश्चाष्टवर्णकः॥४१॥

मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रीशनैश्चरसमाह्वयाः। बीजेनैव षडङ्गानि विदधीत विचक्षणः॥४२॥
विचक्षण इत्युक्तेः षड्दीर्घयुक्तत्वं बीजस्य सूचयति।

वन्दे शनैश्चरं वक्रदंष्ट्रं नीलविभूषणम्। वामजानुस्थतद्धस्तं साभयान्यकराम्बुजम्॥४३॥
जपेदक्षरसाहस्रं तद्दशांशं हुनेद् घृतैः। षडङ्गग्रहदिक्पालैः सायुधैः परिपूजयेत्॥४४॥

शनि मन्त्र—शनि का अष्टाक्षर मन्त्र है—शं शनैश्चराय नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री और देवता शनैश्चर हैं। शां शीं शूं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वन्दे शनैश्चरं वक्रदंष्ट्रं नीलविभूषणम्। वामजानुस्थतद्धस्तं साभयान्यकराम्बुजम्।।

सिद्धि हेतु इसका आठ हजार जप करे। घी से दशांश हवन करे। षडङ्ग, ग्रह, दिक्पाल और उनके आयुधों की पूजा आवरणों में करे।

राहुमन्त्रः

रां राहवे नमोन्तोऽयं राहुमन्त्रः समीरितः। षडर्णः स्वीयबीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत्॥४५॥
मुन्याद्या ब्रह्मगायत्रीराहवः समुदाहृताः। वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्पकायं कृताञ्जलिम्॥४६॥
विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कारमन्वहम्। जपहोमार्चनाद्यं च पूर्ववत् परिकल्पयेत्॥४७॥
पूर्ववत् वर्णसाहस्रघृतहोमतद्दशांशाङ्गग्रहाशाधिपतदायुधैरिति।

राहु मन्त्र—षडक्षर राहु मन्त्र है—रां राहवे नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री और देवता राहु हैं। रां रीं रूं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वन्दे राहुं धूम्रवर्णं सर्पकायं कृताञ्जलिम्। विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कारमन्वहम्।।

इसके जप, होम, अर्चन, तर्पण, मार्जनादि पूर्ववत् होते हैं। अर्थात् छः हजार मन्त्र जप, दशांश हवन घी से किया जाता है। अंग, लोकेशों एवं उनके आयुधों की पूजा आवरण में होती है।

केतुमन्त्रः

अथ केतोः—
कें केतवे हृदित्येवं केतुमन्त्रः षडर्णकः। ब्रह्मा मुनिर्मतश्छन्दः पङ्क्तिः केतुश्च देवता॥४८॥
पूर्ववत् स्यादङ्गषट्कं ततः केतुं विचिन्तयेत्। वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रादिभूषितम्॥४९॥
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं साभयान्यकराम्बुजम्। जपहोममार्जनादि पूर्ववत् परिकल्पयेत्॥५०॥ इति।

अत्र भौमादीनां (पूजाया मध्ये तं तं ग्रहं संपूज्य तत्तदुत्तरग्रहादितत्तत्पूर्वग्रहावसानिकान् अष्टौ ग्रहानग्रादिप्रादक्षिण्येन पूजयेत्। अत्रैते ग्रहमन्त्राः) पुरस्तान्नानामन्त्रप्रकरणे वक्तव्या अपि सूर्यमन्त्रस्य प्रयोगोपयोगितया प्रोक्ताः सौकर्यार्थं, न तु पञ्चायतनान्तर्गतत्वेनेति।

केतु मन्त्र—केतु का षडक्षर मन्त्र है—कें केतवे नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द पंक्ति एवं देवता केतु हैं। कां कीं इत्यादि से षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रादिभूषितम्। वामोरुन्यस्ततद्धस्तं साभयान्यकराम्बुजम्।।

इसके जप-होम-मार्जनादि पूर्ववत् होते हैं।

सप्रयोगोऽग्निमन्त्रः

अथाग्नेः प्रपञ्चसारे (१६.२५)—

अथाग्निमन्त्रानखिलार्थसिद्धिप्रदान् प्रवक्ष्ये जगतो हिताय।
सर्प्यादिक्लृप्तीनपि साङ्गभेदान् सार्चाविशेषान् सजपादिकांश्च॥१॥
वियतो दशमोऽर्घिसर्गयुक्तो भुवसर्गौ भृगुलान्तषोडशाचः।
हुतभुग्दयिता ध्रुवादिकोऽयं मनुरुक्तः सुसमृद्धिदः कृशानोः॥२॥ इति।

वियतो हकाराद्दशमो विलोमेन भकार:। अर्घी ऊकार:। सर्गो विसर्गस्ताभ्यां युक्तो भूरिति। भुवसर्गो भुव इत्यक्षरद्वयं सर्गो विसर्गस्तेन भुवरिति। भृगु: सकार:, लान्तो वकार:, अच: षोडशो विसर्गस्तेन स्व:। हुतभुग्दयिता स्वाहा। ध्रुवादिक: प्रणवादिस्तेन सप्ताक्षरोऽयं मनु:। तथा—

भृगुरपि तदृषिश्छन्दो गायत्री देवताग्निरुद्दिष्ट: । प्राक्प्रोक्तान्यङ्गानि द्विश: समुक्तैश्च मन्त्रवाक्यैर्वा ॥३॥

पूर्वोक्तानि, सहस्रार्चिषे हृदयाय नम: इत्यादि प्रागुक्तानि। ध्यानम्—

शक्तिस्वस्तिकपाशान् साङ्कुशवरदाभयान् दधत् त्रिमुख: ।
मुकुटादिविविधभूषोऽवताच्चिरं पावक: प्रसन्नो व: ॥४॥
जपेदिमं मनुमृतुलक्षमादराद् दशांशत: प्रतिजुहुयात् पयोन्धसा ।
ससर्पिषाप्यसिततरैश्च षाष्ठिकै: समर्चयेदथ विधिवद्विभावसुम् ॥५॥

पीता श्वेतारुणा कृष्णा धूम्रा तीव्रा स्फुलिङ्गिनी । रुचिरा ज्वालिनी चेति कृशानोर्नव शक्तय: ॥६॥

पीठे तनूनपात: प्रागङ्गैरष्टमूर्तिभिस्तदनु । भूयश्च शतमखाद्यैर्विधिनाथ हिरण्यरेतसं प्रयजेत् ॥७॥ इति।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि भृगवे ऋषये नम:। मुखे गायत्रीछन्दसे नम:। हृदये अग्नये देवतायै नम:। इत्यादि दीक्षाप्रकरणोक्तन्यासध्यानपूजादिकं कृत्वा पूजाशेषं समापयेदिति। साज्येन सर्पिषा चेति तर्पणादिकमपि प्राग्वत् कुर्यात् । तथा—

आज्यैरष्टोर्ध्वशतं प्रतिपदमारभ्य मन्त्रविद्दिनश: । चतुरो मासाञ्जुहुयात् (लक्ष्मीरत्यायता भवेत्तस्य ॥८॥
शुद्धाभि: शालीभिर्दिनमनु जुहुया)दथाब्दमात्रेण । शालीशालि गृहं स्याद्गोमहिष्याद्यैश्च सङ्कुलं तस्य ॥९॥
शुद्धान्नैर्घृतसिक्तै: प्रतिदिनमग्नौ समेधिते जुहुयात् । अन्नसमृद्धिर्महती स्यादस्य निकेतनेऽब्दमात्रेण ॥१०॥
जुहुयात् तिलै: सुशुद्धै: षण्मासाञ्जायते महालक्ष्मी: । कुमुदै: सकह्लारैरपि जातीकुसुमैश्च जायते सिद्धि: ॥११॥
पालाशै: पुनरिध्मकै: सरसिजैर्बिल्वैश्च रक्तोत्पलैर्दुग्धैर्वीरुहसंभवै: खदिरजैर्व्याघातवृक्षोद्भवै: ।
दूर्वाख्यैश्च शमीविकङ्कतभवैरष्टोर्ध्वयुक्तं शतं नित्यं वा जुहुयात् प्रतिप्रतिपदं मन्त्री महासिद्धये ॥१२॥

अग्निमन्त्र—प्रपञ्चसार मैं कहा गया है कि अब लोक कल्याण के लिये समस्त सिद्धियों को देने वाले अग्नि मन्त्र को ऋषि, अंग, विशेष पूजन, जप आदि के साथ कहता हूँ। सप्ताक्षर अग्नि मन्त्र है—ॐ भुर्भुव:स्व: स्वाहा।

पूजा—प्रात:कृत्यादि से आरम्भ कर योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि भृगवे ऋषये नम:, मुखे गायत्री छन्दसे नम:, हृदये अग्नये देवतायै नम: अथवा पूर्वोक्त सहस्रार्चिषे हृदयाय नम: इत्यादि मन्त्रवाक्यों से अंगन्यास करे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

शक्तिस्वस्तिकपाशान् साङ्कुशवरदाभयान् दधत् त्रिमुख:। मुकुटादिविविधभूषोऽवताच्चिरं पावक: प्रसन्नो व:॥

इस मन्त्र का चौदह लाख जप करे। दशांश हवन दूध, अन्न, गोघृत एवं साठी चावल से करे। विधिवत् अर्चन करे। अग्नि की नव शक्तियों की भी पूजा करे। ये हैं—पीता, श्वेता, अरुणा, कृष्णा, धूम्रा, तीव्रा, स्फुलिङ्गिनी, रुचिरा एवं ज्वालिनी। पीठ पर पहले अंगपूजा करे। तब अष्टमूर्तियों की पूजा करे। शतमखादि में इस विधि से अग्नि की पूजा करे।

प्रतिपदा से प्रारम्भ करके चार महीनों तक प्रतिदिन एक सौ आठ हवन गाय के घी से करे। इससे साधक पर लक्ष्मी प्रसन्न होती है। एक साल तक शुद्ध शालि चावल से हवन करे तो साधक का घर शालि, गाय, भैंस से भरपूर हो जाता है। एक वर्ष तक घृतसिक्त शुद्ध अन्न से हवन प्रतिदिन करने से साधक का घर अन्न से भरपूर रहता है। छ: महीनों तक प्रतिदिन शुद्ध तिल से हवन करने पर महालक्ष्मी की प्राप्ति होती है। कुमुद और कल्हार जाती पुष्प के हवन से सिद्धि मिलती है। महासिद्धि के लिये साधक पलाश की अग्नि में कमल, लाल कुमुद, दूध वाले वृक्ष की समिधा, खैर, दूर्वा, शमी एवं कण्टकारी से प्रत्येक प्रतिपदा में हवन करना चाहिये।

मन्त्रान्तरविधानम्

तारं व्याहृतयश्चाग्ने जातवेद इहावह। सर्वकर्माणि चेत्युक्त्वा साधयाग्निवधूर्मनुः ॥१३॥

तारं प्रणवः। व्याहृतयो भूर्भुवःस्वः। अग्ने स्वरूपं। जातवेद इहावह स्वरूपं। सर्वकर्माणि स्वरूपं। साधय स्वरूपं। अग्निवधूः स्वाहा। अत्र व्याहृत्यग्निपदयोः सन्धिः, तेन स्वरग्ने इति मन्त्रे पठितव्यम्। तथा—

ऋष्याद्याः पूर्वोक्ता मन्त्रेणाङ्गक्रियार्णभिन्नेन। भूतर्तुकरणसेन्द्रियगुणयुग्मैर्जातिभेदितैस्तदपि ॥१४॥

भूत ५ ऋतु ६ करण ४ इन्द्रिय ५ गुण ३ युग्म २। ध्यानम्—

अथवा शक्तिस्वस्तिकदर्भाक्षस्रक्स्रुवस्रुगभयवरान्।
दधदमिताकल्पो वो वसुरवतात् कनकमालिकालसितः ॥१५॥

अथवेत्यनेन पूर्वमन्त्रध्यानोक्तरूपं वक्ष्यमाणध्यानोक्तरूपं वा ध्यायेदित्युक्तम्। प्रयोगः सुगमः। तथा—

वत्सरादेश्चतुर्दश्यां दिनादावेव दीक्षितः। मन्त्रं द्वादशसाहस्रं जपेत् सम्यगुपोषितः ॥१६॥
अर्चयेदङ्गमूर्तीश्च लोकेशकुलिशादिभिः। समिदाज्यममावस्यां परिशोध्य यथाविधि ॥१७॥
ब्राह्मणान् भोजयित्वाथ स्वयं भुक्त्वा समाहितः। परेऽह्नि प्रतिपद्येतैर्जुहुयादर्चितेऽनले ॥१८॥
मन्त्री वटसमिद्व्रीहितिलराजीहविर्घृतैः। अष्टोत्तरशतावृत्त्या हुनेदेकैकशः क्रमात् ॥१९॥
दशाहमेवं हुत्वा तु पुनरेकादशीतिथौ। शक्त्या प्रतर्प्य विप्रांश्च प्रदद्याद् गुरुदक्षिणाम् ॥२०॥
सुवर्णवासोधान्यानि शोणां गां च सतर्णकाम्। पुनरष्टोत्तरं मन्त्री सहस्रं दिनशो जपेत् ॥२१॥

विधिनेति विधातुरग्निपूजामचिरेणैव भवेन्महासमृद्धिः।
धनधान्यसुवर्णरत्नपूर्णा धरणी गोवृषपुत्रमित्रकीर्णा ॥२२॥

वत्सरादीति चैत्रशुक्लप्रतिपत्, तत्पूर्वचतुर्दश्यां दीक्षा जपश्च। अमायां समिदाज्यशोधनम्। प्रतिपदमारभ्य दशदिनावधि प्रोक्तप्रकारेण होमः। सुगममन्यत्। अथ वेत्यनेन श्लोकेन पूर्वोक्तपुरश्चरणमन्तरेणापि मन्त्रसिद्ध्युपायमाह। पालाशैरित्यादिभिः श्लोकैः काम्यप्रयोगानाह।

प्रजपेदथवा सहस्रसंख्यं दिनशो वत्सरतो भवेन्महाश्रीः।
जुहुयात् प्रतिवासरं शताख्यं हविषाब्देन भवेन्महासमृद्धिः ॥२३॥

पालाशैः कुसुमैर्हुनेद् दधिघृतक्षौद्रप्लुतैर्मण्डलं नित्यं साष्टशतैस्तथैव करवीरोत्थैः समृद्ध्यै हुनेत्।
षण्मासं कपिलाघृतेन दिनशोऽप्यष्टौ सहस्रं तथा होतव्यं लभते स राज्यसदृशीं लक्ष्मीं यशो वा महत् ॥२४॥

वा समुच्चयार्थः।

मन्त्रान्तर—अग्नि का एक अन्य मन्त्र है—ॐ भुर्भुवः स्वः अग्ने जातवेद इहावह सर्वकर्माणि साधय स्वाहा इसके ऋष्यादि पूर्ववत् ही हैं। मन्त्र वर्णों से अंग न्यास करे इस प्रकार मन्त्र के ५,६,४,५,३,२ वर्णों से अंगन्यास करे—

अथवा शक्तिस्वस्तिकदर्भाक्षस्रक्स्रुवस्रुगभयवरान्। दधदमिताकल्पो वो वसुरवतात् कनकमालिकालसितः।।

पूर्व मन्त्र के प्रसंग में पठित ध्यानश्लोक से भी ध्यान किया जा सकता है। इस प्रकार ध्यान करने के पश्चात् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के पहले कृष्णपक्ष की चतुर्दशी में दीक्षा लेकर उपवास रहकर बारह हजार मन्त्र-जप करे। देवता का षडङ्ग पूजा करके इन्द्रादि लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। अमावस्या में आज्यादि हवन सामग्रियों का शोधन करे। ब्राह्मणों को भोजन करकर स्वयं भोजन करे। दूसरे दिन प्रतिपदा में वटवृक्ष की लकड़ी से प्रज्वलित अग्नि की पूजा करे। चावल तिल राई हवि घी प्रत्येक से एक सौ आठ-एक सौ आठ हवन करे। इस प्रकार का हवन दश दिनों तक करे। एकादशी तिथि में तर्पण करे। ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर गुरु को सोना वस्त्र धान्य और गाय दक्षिणा में प्रदान करे। तदनन्तर पुनः दिन में एक हजार आठ जप करे।

इस विधि से अग्नि की पूजा से अल्पकाल में ही साधक को बहुत सम्पत्ति मिलती है। धन-धान्य, सोना, रत्न, भूमि, गाय, बैल, पुत्र, मित्र आदि मिलते हैं। अथवा एक वर्ष तक प्रतिदिन एक हजार जप करे तो महती लक्ष्मी की प्राप्ति होती हैं। एक वर्ष तक हवि से प्रतिदिन एक सौ हवन करे तो महासमृद्धि मिलती है। दही, घी, मधु, मिश्रित, पलाश के फूलों से चालीस दिनों तक प्रतिदिन एक सौ आठ हवन करे या कनैल के फूलों से हवन करे तो समृद्धि मिलती है। छः महीनों तक प्रतिदिन एक हजार आठ हवन करने पर राज्यलक्ष्मी और महान् यश की प्राप्ति होती हैं।

मन्त्रान्तरम्

मन्त्रान्तरम्—

उत्पूर्वात्तिष्ठशब्दात् पुरुषहरिपदे पिङ्गलान्ते निगद्य
प्रोक्त्वाथो लोहिताक्षं पुनरपि च वदेद्देहि मे दात् क्रमेण।
भूयो ब्रूयात्तथा दापय शशियुगलं स्याच्चतुर्विंशदर्णः
प्रोक्तो मन्त्रोऽखिलेष्टप्रतरणसुरसद्माङ्घ्रिपानां सदृक् स्यात् ॥२५॥

उत्पूर्वात्तिष्ठशब्दात् उत्तिष्ठेति स्वरूपम्। पुरुष हरिपिङ्गल लोहिताक्ष देहि मे ददापय इत्येतानि पदानि स्वरूपाणि। शशियुगलं स्वाहाकारः।

ऋष्याद्याः स्युः पूर्ववदृतुभूतदिशात्रिकरणयुगलार्णैः।
मूलमनुनाथ कुर्यादङ्गानि क्रमश एव मन्त्रितमः ॥२६॥

ऋतु ६ भूत ५ दिशा ४ त्रि ३ करण ४ युगल २। अत्र दिशाशब्देन महादिशानामेव ग्रहणम्। आबन्तोऽपि दिशाशब्दोऽस्ति भागुरिमते। 'वष्टि भागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः। आपं चैव हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा' इति। ध्यानम्—

हेमाश्वत्थसुरद्रुमोदरभुवो निर्यान्तमश्वाकृतिं वर्षन्तं धनधान्यरत्ननिचयान् रन्ध्रैः स्वकैः सन्ततम्।
ज्वालापल्लवितस्वरोमविवरं भक्तार्तिसंभेदनं वन्दे धर्मसुखार्थमोक्षफलदं दिव्याकृतिं पावकम् ॥२७॥

जप्याच्च लक्षमानं मन्त्री संदीक्षितोऽथ मनुमेनम्। जुहुयाच्च तदवसाने घृतसिक्तैः पायसैर्दशांशेन ॥२८॥
अङ्गैर्हुतवहमूर्तिभिराशेशैः संयजेत् तदस्त्रैश्च। पावकमिति मन्त्रितमो गन्धाद्यैरनुदिनं तदुपहारैः ॥२९॥ इति।

प्रयोगः सुगमः।

दिनावतारे मनुमेनमन्वहं जपेत् सहस्रं नियमेन मन्त्रवित्।
अधृष्यतायै यशसे श्रिये रुजां विमुक्तये युक्तमतिस्तथायुषे ॥३०॥

दिनावतारे सूर्योदयकाले।

मन्त्रान्तर—उत्तिष्ठ पुरुष हरिपिङ्गल लोहिताक्ष देहि मे ददापय स्वाहा—चौबीस अक्षरों का अग्नि का यह मन्त्र समस्त इष्ट को प्रदान करने वाला है। इस मन्त्र के ऋष्यादि पूर्ववत् हैं। मन्त्र के ६,५,४,३,४,२ वर्णों से अंगन्यास करने के बाद इस प्रकार ध्यान किया जाता है—

हेमाश्वत्थसुरद्रुमोदरभुवो निर्यान्तमश्वाकृतिं वर्षन्तं धनधान्यरत्ननिचयान् रन्ध्रैः स्वकैः सन्ततम्।
ज्वालापल्लवितस्वरोमविवरं भक्तार्तिसंभेदनं वन्दे धर्मसुखार्थमोक्षफलदं दिव्याकृतिं पावकम्।।

दीक्षित होकर एक लाख मन्त्रजप करे। दशांश हवन घृतसिक्त पायस से करे। अग्नि की मूर्ति और अस्त्रों की पूजा गन्धादि से प्रतिदिन करे। नियम से प्रतिदिन सूर्योदय के समय एक हजार मन्त्रजप साधक करे। इससे यश एवं श्री को प्राप्त करने के साथ-साथ साधक आजीवन निरोग रहता है।

काम्यप्रयोगः

शालीतण्डुलकैः सितैश्च पयसा कृत्वा हविः पावकं
गन्धाद्यैः परिपूज्य तेन हविषा संवर्त्य पिण्डं महत्।
आज्यालोडितमेकमेव जुहुयाज्जप्त्वा मनुं मन्त्रवित्
साष्टोर्ध्वं प्रतिपद्यथो शतमतः स्यादिन्दिरा वत्सरात्॥३१॥
अष्टोत्तरं शतमथो मृगमुद्रयैव मन्त्री प्रतिप्रतिपदं जुहुयात् पयोन्नैः।
साज्यैर्भवेन्न खलु तत्र विचारणीयं संवत्सरात्स च निकेतनमिन्दिरायाः॥३२॥
अष्टोर्ध्वं शतं हविषा मन्त्रेणानेन नित्यशो जुहुयात्।
षण्मासादाढ्यतमो भवति नरो नात्र सन्देहः॥३३॥
शालीभिः शुद्धाभिः प्रतिदिनमष्टोत्तरशतं जुहुयात्।
धनधान्यसमृद्धः स्यान्मन्त्री संवत्सरार्धमात्रेण॥३४॥
आज्यैरयुतं जुहुयात् प्रतिमासं प्रतिपदं समारभ्य।
अतिमहती लक्ष्मीः स्यात्तस्य तु षण्मासतो न सन्देहः॥३५॥
अरुणैः पुनरुत्पलैः शतं यो मधुराक्तैः प्रजुहोति वत्सरार्धम्।
मनुनाप्यमुना शताधिकं स प्रलभेन्मङ्क्षु महत्तरां च लक्ष्मीम्॥३६॥
जातीपलाशकरवीरजपाख्यबिल्वव्याघातकेसरकुरण्टभवैः प्रसूनैः।
एकैकशः शतमथो कपिलापयोक्तैः (जुह्वत्प्रतिप्रतिपदं श्रियमेति वर्षात्॥३७॥
खण्डैश्च सप्तदिनमप्यमृतालतोत्थैर्मन्त्री हुनेद् गुणसहस्रमथो पयोक्तैः।)
सम्यक्समर्च्य दहनं त्वचिरेण जन्तुश्चातुर्थिकादिविषमज्वरतो वियुञ्ज्यात्॥३८॥

गुणसहस्रं सहस्रत्रयम्।

क्षीरद्रुमत्वगभिपक्वजलैर्यथावत् संपूर्य कुम्भमभिपूज्य कृशानुमत्र।
जप्त्वा मनुं पुनरमुं त्रिसहस्रमात्रं सेकक्रिया ज्वरहरी ग्रहवैकृतघ्नी॥३९॥
पयसि हृदयदघ्ने भानुमालोक्य तिष्ठन्प्रजपतु च सहस्रं नित्यशो मन्त्रमेनम्।
स दुरितमपमृत्युं रोगजातांश्च हत्वा व्रजति नियतसौख्यं वत्सराद्दीर्घमायुः॥४०॥
मनुनामुनाष्टशतजप्तमथ प्रपिबेज्जलं ज्वलनदीपनकृत्।
गुरु भुक्तमप्युदरगं त्वमुना परिजापितं पचति कुक्ष्यनलः॥४१॥
हुनेदरुणपङ्कजैस्त्रिमधुराप्लुतैर्नित्यशः सहस्रमृतुमासतः पृथुतरा रमा जायते।
प्रतिप्रतिपदं हुनेदिति बुधोऽथवा वत्सरं विनष्टवसुरप्यसौ भवति चेन्दिरामन्दिरम्॥४२॥

ऋतुमासतः षण्मासतः।

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे एकोनविंशः श्वासः॥२९॥

●

शालि चावल शक्कर दूध से खीर बनावे। अग्नि की पूजा गन्धादि से करे। उस खीर से एक बड़ा पिण्ड बनाकर उसमें घी लगाकर मन्त्रोच्चारणपूर्वक हवन करे एवं एक सौ आठ मन्त्रजप करे तो एक वर्ष में साधक का घर लक्ष्मी का निवास हो जाता है। प्रत्येक प्रतिपदा तिथि में मृग मुद्रा से एक सौ आठ हवन दूध अन्न और घी से करे तो एक वर्ष में उसका घर लक्ष्मी-निकेतन हो जाता है। छः महीनों तक प्रतिदिन एक सौ आठ हवन हविष्य से करे तो साधक धनाढ्य हो जाता है। शुद्ध

शाली चावल से प्रतिदिन एक सौ आठ हवन करे तो छ: महीनों में धन-धान्य से समृद्ध हो जाता है। प्रत्येक माह में प्रतिपदा से आरम्भ करके दश हजार हवन आज्य से करे तो छ: महीनों में बहुत धनवान हो जाता है। छ: महीनों तक लाल उत्पल को मधुराक्त करके हवन करने से महती लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। कपिला गाय के दूध से सिक्त जाती पलाश कनैल अड़हुल बेल खण्ड केसर कुरण्टक के फूलों से पृथक्-पृथक् क्रमश: सौ-सौ हवन प्रत्येक प्रतिपदा में करे तो एक वर्ष में धनाढ्य हो जाता है। गुडूची खण्डों को दूध-सिक्त करके सात दिनों तक तीन-तीन हजार हवन करे तो चातुर्थिक विषम ज्वर से मुक्त हो जाता है। दुग्ध, वृक्षों की छाल को पानी में पकाकर क्वाथ बनावे, उस क्वाथ को कुम्भ में भरकर उसमें अग्नि की पूजा करे। तीन हजार जप से उसे अभिमन्त्रित करे और पीड़ित को उससे नहलावे तो ज्वर छूट जाता है एवं ग्रहजनित पीड़ा समाप्त हो जाती है। दूध या दही में सूर्यबिम्ब को देखते हुए बैठकर प्रतिदिन एक वर्ष तक इस मन्त्र का जप एक हजार करे तो रोग के कारण होने वाली अपमृत्यु का दु:ख नष्ट हो जा जाता है। रोगी सुखपूर्वक वर्षों तक जीवित रहता है। इस मन्त्र के एक सौ आठ जप से मन्त्रित जल को पीने से उदर का जलन शान्त होता है। इसके जप से गरिष्ठ भोजन करने पर भी सम्यक् रूप से पाचन होता है। त्रिमधुराक्त लाल कमलों से हवन छ: महीनों तक प्रतिदिन एक हजार करे तो धन की वृद्धि होती है। प्रत्येक प्रतिपदा में अथवा प्रत्येक बुधवार में एक वर्ष तक इस प्रकार का हवन करे तो निर्धन भी धनवान हो जाता है।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र के कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में एकोनत्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

अथ त्रिंशः श्वासः

शैवपञ्चाक्षरमन्त्रोद्धारप्रकारः

अथ शैवमन्त्रा उद्ध्रियन्ते। तत्र श्रीनन्दिकेश्वरमते—

कैलासशिखरासीनमर्धनारीश्वरं प्रभुम्। ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्राद्यैर्देवैर्विद्याधरैस्तथा ॥१॥
दानवैर्मुनिभिः सिद्धैर्यक्षरक्षोप्सरोगणैः। हेरम्बस्कन्दपूर्वादिगणैर्भक्त्या सुसेवितम् ॥२॥
अक्षक्रीड़ारसास्वादलालसं परमेश्वरम्। क्रीडतो भुवनेशस्य जगदम्बिकया सह ॥३॥
अक्षपाताधिकारे तु देव्या नन्दी नियोजितः। क्रीडता क्रमयोगेन जितं देवेन शम्भुना ॥४॥
अक्षप्रपाताद् देवेन प्रोक्तं नन्दिञ्जितं मया। तव सत्याभियोगेन तुष्टोऽहं तव भक्तितः॥५॥
वद किं क्रियतां वत्स यत्ते मनसि वर्तते। ददामि तन्न सन्देहः प्रीतेन मनसाधुना ॥६॥

श्रीनन्दिकेश्वर उवाच

तुष्टोऽसि यदि मे देव जगतामीश्वर प्रभो। वद मन्त्राञ्जगन्नाथ शैवांस्त्रैलोक्यदुर्लभान् ॥७॥
(वक्त्राङ्गन्याससहितान् पूजाकर्मसमन्वितान्। दीक्षाभिषेकसहितानधिकारपदान्वितान् ॥८॥

श्रीमहादेव उवाच

कथयामि महाभाग त्रैलोक्येष्वतिदुर्लभान्।) शैवान् सर्वमनुश्रेष्ठान् सर्वतन्त्रेषु गोपितान् ॥९॥
भक्तोऽसीति न मे किञ्चिदवाच्यं त्वयि सुव्रत। मूलमन्त्राङ्गविन्यासपूजाकर्मसमन्वितान् ॥१०॥
दीक्षाभिषेकसहितानधिकारपदान्वितात् । उद्धारक्रमयोगेन सर्वकामफलप्रदान् ॥११॥
सुसमे भूप्रदेशे तु गोमयेनोपलेपिते। पुष्पप्रकरशोभाढ्ये गन्धधूपतरङ्गिते ॥१२॥
विलिखेन्मातृकां तत्र वर्गाष्टकविभेदतः। स्वरैः षोडशभिर्वर्गः प्रथमः परिकीर्तितः ॥१३॥
पञ्च पञ्चाक्षराश्चान्ये द्वावन्त्यौ चतुरक्षरौ। वर्गाष्टकं भवेदेवं ततो मन्त्रान् समुद्धरेत् ॥१४॥
पञ्चमस्य तु वर्गस्य पञ्चमं प्रथमं वदेत्। षष्ठवर्गान्तिमो वर्णः प्रथमान्त्यसमन्वितः ॥१५॥
द्वितीयं वर्णमाख्यातमष्टमस्याद्यमक्षरम्। प्रथमस्य तृतीयार्णसमेतं तत् तृतीयकम् ॥१६॥
चतुर्थं सप्तमस्यादिद्वितीयार्णसमन्वितम्। चतुर्थवर्णो मन्त्रस्य सप्तमाद्यं तु पञ्चमम् ॥१७॥
एष पञ्चाक्षरो मन्त्रः प्रणवाद्यः षडक्षरः। यत्साधनात्तु मनुजाः शिवसायुज्यमाप्नुयुः ॥१८॥
प्रणवस्तु परब्रह्मबोधकः समुदीरितः। पञ्चाक्षरमयानि स्युः पञ्चभूतानि सुव्रत ॥१९॥
भूतात्मकं जगदिदं तेनास्य जगदात्मता। ऋषिरुक्तो वामदेवः पङ्क्तिश्छन्द उदाहृतम् ॥२०॥
सदाशिवो देवतास्य मन्त्रस्य परिकीर्तितः। षडङ्गानि मनोर्वर्णैर्जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥२१॥

शैव मन्त्र—श्रीनन्दिकेश्वर मत में कहा गया है कि अर्ध नारीश्वर शिव कैलास के शिखर पर आसीन थे। ब्रह्मा- विष्णु-इन्द्रादि देवता, विद्याधर, दानव, मुनि, सिद्ध, यक्ष, राक्षस, अप्सरागण, गणेश, स्कन्द एवं उनके गण भक्तिपूर्वक उनकी सेवा में तत्पर थे। चौपड क्रीड़ा रसास्वाद की इच्छा से परमेश्वर जगदम्बिका के साथ खेल रहे थे। अक्षपात के अधिकारी के रूप में देवी ने नन्दी को नियोजित किया था। क्रीड़ा में शिव जी की जीत हुई। देव ने नन्दी से कहा कि तुम्हारे अक्षप्रपात से मैं जीत गया। तुम्हारी भक्ति से मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो इच्छा हो मुझसे मांगो, उसे मैं अवश्य दूँगा।

नन्दीकेश्वर ने कहा—हे देव जगदीश्वर! प्रभो! यदि आप मुझसे प्रसन्न हैं तो तीन लोकों में दुर्लभ शैव मन्त्रों को अंगन्यास, पूजा कर्म, दीक्षा, अभिषेक और अधिकार के साथ कहिये।

महादेव ने कहा—हे महाभाग! तीनों लोकों में अति दुर्लभ एवं सभी तन्त्रों में गोपित सर्वश्रेष्ठ शैव मन्त्रों को कहता हूँ। भक्तों के लिये मेरे लिये कुछ भी अकथनीय ही है। मन्त्रों के अंग न्यास पूजा कर्म दीक्षा अभिषेक और इनके अधिकारी को भी बतलाता हूँ। उद्धार क्रमयोग से ये सभी मन्त्र मनोरथों को पूरा करने वाले हैं। गोबर से लेपित, फूलों से शोभित एवं गन्ध-धूप से सुगन्धित समतल भूमि में मातृका वर्णों को वर्गाष्टक भेद से लिखे। प्रथम वर्ग में षोडश स्वर हैं। पाँच-पाँच अक्षरों के पाँच और चार-चार वर्णों के दो वर्ग हैं। ये ही वर्गाष्टक कहे गये हैं। मन्त्र का उद्धार इस प्रकार किया जाता है—पञ्चम वर्ग (तवर्ग) का पाँचवाँ अक्षर (न), प्रथम वर्ग (स्वरवर्ग) के अन्तिम वर्ण (:) से युक्त षष्ठ वर्ग (पवर्ग) का पाँचवाँ अक्षर (म:), प्रथम वर्ग के तृतीयवर्ण (इ) सहित अष्टम वर्ग (शवर्ग) का प्रथम वर्ण (शि), अष्टम वर्ग के द्वितीय वर्ण (आ) से समन्वित सप्तम वर्ग (यवर्ग) का चतुर्थ अक्षर (वा) एवं अन्त में सप्तम वर्ग का प्रथम अक्षर (य) इस प्रकार शिव का पञ्चाक्षर मन्त्र स्पष्ट होता है—नम: शिवाय। इसके पहले ॐ लगाने से यह षडक्षर हो जाता है। इसके साधन से मनुष्य शिवसायुज्य को प्राप्त करता है। प्रणव परब्रह्म का बोधक है। पंचाक्षर में पाँचों भूत समविष्ट हैं। यह जगत् भूमात्मक है; इसीलिये यह मन्त्र जगदात्मस्वरूप है इसके ऋषि वामदेव, छन्द पंक्ति एवं देवता सदाशिव कहे गये हैं।

पूजाविधानम्

ततस्तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशसंज्ञकान् । मूलवर्णादिकान् न्यसेत् त्रिषु स्थानेष्वतन्द्रित: ॥२२॥
सतर्जनीमध्यमान्त्यानामाङ्गुष्ठेष्वथापर: । आस्यहृत्पादगुह्येषु मूर्ध्नि वक्त्रेषु चापर: ॥२३॥
प्राग्याम्यवारुणोदीच्यमध्यवक्त्रेषु पञ्चसु । तत: षडङ्गं विन्यसेद्वक्ष्यमाणं यथाविधि ॥२४॥
सर्वज्ञो नित्यतृप्तश्च बोधान्तोऽनादि: कीर्तित: । स्वतन्त्रशक्तिश्चालुप्तशक्तिश्चानन्तशक्तियुक् ॥२५॥
मूलमन्त्रार्णपूर्वैश्च धाम्नेशब्दान्तिकै: क्रमात् । षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि मन्त्रवित् ॥२६॥
कुर्वीत गोलकन्यासं रक्षायै नन्दिकेश्वर । हृदि वक्त्रांसयोरूर्वो: कण्ठे नाभौ द्विपार्श्वयो: ॥२७॥
पृष्ठे हृदि ततो मूर्ध्नि वदने नेत्रयोर्नसो: । दोष्पत्सन्धिषु साग्रेषु विन्यसेत् तदनन्तरम् ॥२८॥
शिरोवदनहृत्कुक्षिसोरुपादद्वये पुन: । हृदि वक्त्राम्बुजे कण्ठे मृगाभयवरेष्वथ ॥२९॥
वक्त्रांसहृत्सु पादोरुजठरेषु क्रमान्न्यसेत् । मूलमन्त्रस्य षड्वर्णान् यथावद् देशिकोत्तम: ॥३०॥
मूर्ध्नि भालोदरांसेषु हृदये तान् पुनर्न्यसेत् । नमोऽस्तु स्थाणुभूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने ॥३१॥
चतुर्मूर्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे । पश्चादनेन मन्त्रेण कुर्याच्च व्यापकं सुधी: ॥३२॥
एवं न्यस्ततनुर्नन्दिन् ध्यायेद् देवमनन्यधी: । गोक्षीरफेनधवलं रजताद्रिसमप्रभम् ॥३३॥
चारुचन्द्रकलाराजज्जटामुकुटमण्डितम् । पञ्चवक्त्रधरं शम्भुं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥३४॥
शार्दूलचर्मवसनं रत्नाभरणभूषितम् । दक्षोर्ध्वहस्ते परशुं वरं च तदध:करे ॥३५॥
वामोर्ध्वहस्ते हरिणं दधानमभयं परे । सुप्रसन्नमुखाम्भोजं निविष्टं पद्मविष्टरे ॥३६॥
ब्रह्मविष्णुमहेन्द्राद्यै: स्तुतं भक्त्या सुरासुरै: । विश्वाद्यं विश्ववपुषं भवभीतिहरं शिवम् ॥३७॥
इति ध्यात्वा गणश्रेष्ठ मानसैरर्चयेच्छिवम् । उपचारै: षोडशभिर्बाह्यपीठे समर्चयेत् ॥३८॥
पद्मं वसुदलं कृत्वा कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् । बहिरष्टदलद्वन्द्वं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥३९॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं मण्डलेऽस्मिन् प्रपूजयेत् ।

अत्र मानसपूजादिपीठपूजान्तस्य प्रागेव प्रयोगप्रकरणे लिखितत्वाद् ग्रन्थगौरवभयाच्च नात्र लिख्यते। तथा—

एवं पीठं समभ्यर्च्य मूर्तिं मूलेन तत्र वै । संस्थाप्य देवमावाह्य तस्यां संपूजयेच्छिवम् ॥४०॥
सर्वोपचारैराराध्य मध्ये वत्स ततोऽर्चयेत् । प्रथमेऽष्टदले मूर्तीर्यजेत् तत्पुरुषादिका: ॥४१॥
दिक्पत्रेषु गणश्रेष्ठ ईशं मध्ये समर्चयेत् । पीतासितश्वेतरक्तश्वेताभाश्चतुरानना: ॥४२॥

वराभयमृगान् वत्स परशुं बिभ्रतीः करैः। कोणपत्रेषु मध्ये च निवृत्त्याद्याः कला यजेत् ॥४३॥
निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्ततः परम्। शान्त्यतीताश्च ताः प्रोक्तास्तेजोरूपाः कलाः क्रमात् ॥४४॥
अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च पूजयेत्। केसरेषु षडङ्गानि द्वितीयेऽष्टदले ततः ॥४५॥
अनन्ताद्यान् यजेद्वत्स देवाग्रादिप्रदक्षिणम्। अनन्तं सूक्ष्मनामानं शिवोत्तममनन्तरम् ॥४६॥
एकनेत्रमेकरुद्रं त्रिमूर्तिं तदनन्तरम्। श्रीकण्ठं च गणश्रेष्ठं शिखण्डिनमपि क्रमात्॥४७॥
रक्तपीतसितारक्तकृष्णरक्ताञ्जनासितान् । किरीटार्पितबालेन्दून् पद्मस्थांश्चारुभूषणान् ॥४८॥
त्रिनेत्राञ्छूलवज्रेषुचापहस्तान् मनोहरान्। ततोऽर्चयेद्गणश्रेष्ठ तृतीयेऽष्टदले पुनः ॥४९॥
उमाचण्डीश्वरौ नन्दी महाकालो गणेश्वरः। वृषभो भृङ्गिरिटिश्च स्कन्दश्चैतान् यथाक्रमम् ॥५०॥
उत्तरं दलमारभ्य नीलपीतासितारुणान्। मुक्तानिशाकरश्वेतपाटलान् क्रमतः सुधीः ॥५१॥
चतुरस्रे गणश्रेष्ठ पूर्वादिक्रमतो यजेत्। इन्द्रं सुराधिपं पीतं वज्रहस्तं सवाहनम् ॥५२॥
अग्निं तेजोधिपं रक्तं शक्तिहस्तं सुभूषितम्। यमं प्रेताधिपं कृष्णं दण्डहस्तं समर्चयेत् ॥५३॥
रक्षोधिपं च निर्ऋतिं खड्गहस्तं सुधूम्रकम्। पाशहस्तं सुशुभ्राङ्गं वरुणं यादसां पतिम् ॥५४॥
वायुं प्राणाधिपं धूम्रमङ्कुशाढ्यकरं यजेत्। यक्षाधिपं कुबेरं च मुक्तावर्णं गदाधरम् ॥५५॥
विद्यापतिं तथेशानं स्वच्छं शूलकरं यजेत्। (ब्रह्माणं पद्महस्तं च लोकपं रक्तवर्णकम् ॥५६॥
अनन्तं नागपं गौरवर्णं चक्रधरं तथा।) ऐरावतं तथा मेषं महिषं मृतपूरुषम् ॥५७॥
मकरं मृगमर्त्यौ च वृषं च विपहंसकौ। इन्द्रादिलोकपालानां वाहनानि गणाधिप ॥५८॥
ततो बहिस्तदस्त्राणि तत्तत्पार्श्वे समर्चयेत्। वज्रं पीतं सितां शक्तिं दण्डं कृष्णं समर्चयेत् ॥५९॥
खड्गमाकाशसङ्काशं पाशं विद्युन्निभं यजेत्। अङ्कुशं रक्तवर्णं तु शुक्लवर्णां गदां यजेत् ॥६०॥
त्रिशूलं नीलवर्णं च यजेद्वत्स समाहितः। रथाङ्गं कुरुविन्दाभं पद्मं रक्तं समर्चयेत् ॥६१॥
लोकपालायुधान्येवं कथितानि तवानघ। य एवं पूजयेद्देवं स सद्यः शिवतां व्रजेत् ॥६२॥ इति।

तथा—

तन्महेशपदं ङेन्तं विद्महे वागितीरयेत्। विशुद्धाय च धीशब्दं महि तन्नः शिवः-पदम् ॥६३॥
प्रचोदयादिति प्रोच्य गायत्री श्रीशिवस्य च ॥ इति।

अथ शैवमन्त्राः—तत्र कैलासेत्यादि फलप्रदानित्यन्तमेकादश श्लोकास्तन्त्रावतारक्रमकथनपरा उक्तोच्यमान-विषयत्वात् स्पष्टार्थाः। 'सुसमे' इत्यादिभिरुद्धरेदित्यन्तैस्त्रिभिः श्लोकैर्मन्त्रोद्धारकथनार्थं मातृकाप्रस्तारस्थानस्वरूपं तस्य वर्गाष्टकविभेदं चोपदिशति। तत्र पञ्चमस्य तवर्गस्य पञ्चममक्षरं तेन नकारः, स प्रथममक्षरं मन्त्रस्येति शेषः। (षष्ठस्य वर्गस्यान्तिमो वर्णः मकारः स प्रथमस्यान्त्येन अः इत्यनेन सहितो मन्त्रस्य द्वितीयार्णस्तेन मः इति बोध्यम्।) अष्टमस्य वर्गस्याद्यमक्षरं शकारः प्रथमस्य वर्गस्य तृतीयाक्षरेण इकारेण समेतं मन्त्रस्य तृतीयमक्षरं शि इति। सप्त-मस्य वर्गस्य चतुर्थमक्षरं वकारः स प्रथमवर्गस्य द्वितीयार्णेन आ इत्यनेन समन्वितं मन्त्रस्य चतुर्थमक्षरं भवति, तेन वा इति। सप्तमवर्गस्याद्यं य इति मन्त्रस्य पञ्चममक्षरं भवति। मन्त्रनिरुक्तिमाह—प्रणवस्त्वित्यादि। स्पष्टोऽर्थः। अथ प्रयोगः—तत्र प्रागुक्तविधिना दीक्षितः साधकः प्रागुक्तप्रकारेण प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्तं कर्म कृत्वा मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीसदाशिवाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। तर्जन्योः नं तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः मं अघोराय नमः। कनिष्ठिकयोः शिं सद्योजाताय नमः। अनामिकयोः वां वामदेवाय नमः। अङ्गुष्ठयोः यं ईशानाय नमः। इति करयोर्विन्यस्य, मुखे हृदये पादयोर्गुह्ये मूर्ध्नि चैता मूर्तीर्विन्यस्य, पुनर्मुखे नं तत्पुरुषाय प्राग्वक्त्राय नमः। दक्षकर्णे मं अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः। चूडाधः शिं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः। वामकर्णे वां वामदेवायोत्तरवक्त्राय

नम:। मूर्ध्नि यं ईशानायोर्ध्ववक्त्राय नम:। इति पञ्चमूर्तीर्विन्यस्य, ॐ सर्वज्ञशक्तिधाम्ने हृदयाय नम:। नं नित्यतृप्तशक्तिधाम्ने शिरसे स्वाहा। मं अनादिबोधशक्तिधाम्ने शिखायै वषट्। शिं स्वतन्त्रशक्तिधाम्ने कवचाय हुं। वां अलुप्तशक्तिधाम्ने नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अनन्तशक्तिधाम्ने अस्त्राय फट्। इति मन्त्रै: षडङ्गानि यथास्थानं विन्यस्य मूलमन्त्रेण व्यापकन्यासं कुर्यात्। तत: (१) हृदि ॐ नम:। वक्त्रे नं नम:। दक्षिणांसे मं नम:। वामांसे शिं नम:। दक्षिणोरौ वां नम:। वामोरौ यं नम:। (२) कण्ठे ॐ नम:। नाभौ नं नम:। दक्षिणपार्श्वे मं नम:। वामपार्श्वे शिं नम:। पृष्ठे वां नम:। हृदि यं नम:। (३) मूर्ध्नि ॐ नम:। वदने नं नम:। दक्षनेत्रे मं नम:। वामनेत्रे शिं नम:। दक्षनसि वां नम:। वामे यं नम:। (४) दक्षदोर्मूले ॐनम:। मध्ये नं नम:। मणिबन्धे मं नम:। अङ्गुलिमूले शिं नम:। अङ्गुलिमध्ये वां नम:। अङ्गुल्यग्रे यं नम:। (५) वामदोर्मूले ॐ नम:। मध्ये नं नम:। मणिबन्धे मं नम:। अङ्गुलिमूले शिं नम:। मध्ये वां नम:। अग्रे यं नम:। (६) दक्षोरुमूले ॐनम:। जानुनि नंनम:। गुल्फे मं नम:। अङ्गुलिमूले शिं नम:। मध्ये वां नम:। अग्रे यं नम:। (७) वामोरुमूले ॐ नम:। जानुनि नं नम:। गुल्फे मं नम:। अङ्गुलिमूले शिं नम:। मध्ये वां नम:। अग्रे यं नम:। (८) शिरसि ॐ नम:। मुखे नं नम:। हृदि मं नम:। कुक्षौ शिं नम:। दक्षोरुमूलादिपादाग्रपर्यन्तं वां नम:। वामोरुमूलादिपादाग्र-पर्यन्तं यं नमत:। (९) हृदि ॐनम:। वक्त्रे नं नम:। कण्ठे मं नम:। वामोर्ध्वहस्ते मृगे शिं नम:। वामाध:करे अभये वां नम:। दक्षाधोहस्ते वरे यं नम:। (१०) मुखे ॐ नम:। अंसयो: नं नम:। हृदि मंनम:। पादयो: शिंनम:। ऊर्वो: वांनम:। जठरे यंनम:। इति विन्यस्य, (पुनर्मूर्ध्नि ॐनम:। ललाटे नंनम:। जठरे मंनम:। दक्षांसे शिंनम:। वामांसे वांनम:। हृदये यं नम:)। 'नमोऽस्तु स्थाणुभूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे'। इति मन्त्रेण मूर्धादिपादपर्यन्तं व्यापकं न्यसेत्। इति विन्यस्य यथोक्तरूपं देवं ध्यात्वा मानसपूजादियोगपीठपूजान्ते यथाविधि देवमावाह्यासनादिपुष्पान्तैरुपचारै: संपूज्य, भगवन्नावरणपूजार्थमनुज्ञां देहि इति प्रार्थ्य, प्रथमेऽष्टदले दिग्दलेषु—नं तत्पुरुषाय नम:। मं अघोराय नम:। शिं सद्योजाताय नम:। वां वामदेवाय नम:। मध्ये यं ईशानाय नम:। इति देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन संपूज्य, आग्नेयादिदलेषु प्रादक्षिण्येन—ॐ निवृत्त्यै नम:। ओं प्रतिष्ठायै नम:। ॐ विद्यायै नम:। ॐ शान्त्यै नम:। मध्ये—ॐ शान्त्यतीतायै नम:। इति संपूज्य, द्वितीयाष्टदलान्त: केसरेषु देवस्य दक्षाग्रकेसरे ॐ हृदयाय नम:। वामाग्रे ईशाने नं शिरसे स्वाहा। पृष्ठदक्षिणे मं शिखायै वषट्। पृष्ठवामे शिं कवचाय हुम्। अग्रे वां नेत्रत्रयाय वौषट्। अग्रादिचतुर्दिक्षु यं अस्त्राय फट्। इति संपूज्य, (द्वितीयेऽष्टदले देवाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—अनन्ताय नम:। सूक्ष्माय नम:। शिवोत्तमाय नम:। एकनेत्राय नम:। एकरुद्राय नम:। त्रिमूर्तये नम:। श्रीकण्ठाय नम:। शिखण्डिने नम:। इति संपूज्य) तृतीयेऽष्टदले देवस्य वामदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—उमायै नम:। चण्डीश्वराय नम:। नन्दिने नम:। महाकालाय नम:। गणेश्वराय नम:। वृषभाय नम:। भृङ्गिरिटये नम:। स्कन्दाय नम:। इति संपूज्य, चतुरस्त्ररेखात्रयान्तरालगतवीथीद्वयेऽभ्यन्तरालवीथ्यां देवाग्रमारभ्य—लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय वज्रहस्ताय ऐरावणवाहनाय नम:। रं अग्नये तेजोधिपतये रक्तवर्णाय शक्तिहस्ताय मेषवाहनाय नम:। टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय दण्डहस्ताय महिषवाहनाय नम:। क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय खड्गहस्ताय (प्रेतवाहनाय नम:। वं वरुणाय यादसांपतये शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय मकरवाहनाय नम:। यं वायवे प्राणाधिपतये धूम्रवर्णाय अङ्कुशहस्ताय मृगवाहनाय नम:। सं कुबेराय यक्षाधिपतये मौक्तिकवर्णाय गदाहस्ताय) नरवाहनाय नम:। हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय शूलहस्ताय वृषभवाहनाय नम:। इति संपूज्य, इन्द्रेशानयोर्मध्ये आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये रक्तवर्णाय पद्महस्ताय हंसवाहनाय नम:। निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये गौरवर्णाय चक्रहस्ताय गरुडवाहनाय नम:। इति संपूज्य, द्वितीयवीथ्यां—वज्राय नम:। शक्तये नम:। दण्डाय नम:। खड्गाय नम:। पाशाय नम:। अङ्कुशाय नम:। गदायै नम:। त्रिशूलाय नम:। पद्माय नम:। चक्राय नम:। इति लोकपालायुधानि तत्समीपस्थानेषु पूजयेत्। इत्थं लोकपालार्चायां विस्तराशक्तौ प्रागुक्तप्रकारेण वा पूजयेत्। इत्थं षडावरणसमेतं देवं संपूज्य मूलमन्त्रमुच्चार्य साङ्गाय सपरिवाराय श्रीसदाशिवाय नम:। इति पुष्पाञ्जलिना मध्ये देवं संपूज्य धूपदीपादि पूजाशेषं प्रागुक्तविधिना समापयेदिति। तथा—

लक्षषट्कं जपेद्वत्स नियमस्थो जितेन्द्रयः। तावत्सहस्रं जुहुयात् तिलैः शुद्धैर्घृतप्लुतैः ॥६४॥
पायसैः क्षीरवृक्षोत्थसमिद्भिर्वा गणेश्वर। तावत्संख्यं जलैः शुद्धैस्तर्पयेच्चन्द्रवासितैः ॥६५॥
मार्जयेच्च गणश्रेष्ठ स्वात्मानं मूलमन्त्रतः। तर्पणस्य दशांशेन तद्दशांशेन भोजयेत् ॥६६॥
शिवभक्तान् द्विजश्रेष्ठान् सदाचारानतन्द्रितः। पञ्चाङ्गमेवं विधिवत् पुरश्चरणमाचरेत् ॥६७॥
एवं संसिद्धमन्त्रस्तु सर्वान् कामान् प्रयच्छति।

एष षड्लक्षजपः कृतयुगपरः कलावेतच्चतुर्गुणजपः कार्यः।

पूजा—पूर्वोक्त विधि से दीक्षित साधक प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुख पंक्तिछन्दसे नमः, हृदये सदाशिवाय देवतायै नमः—इस प्रकार न्यास करके धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की सिद्धि के लिये विनियोग बोलकर तर्जनियों में नः तत्पुरुषाय नमः, मध्यमाओं में मं अघोराय नमः, कनिष्ठिकाओं में शिं सद्योजाताय नमः, अनामिकाओं मे वां वामदेवाय नमः, अंगुष्ठों में यं ईशानाय नमः से करन्यास करने के बाद मुख, हृदय, पैरों, गुह्य, मूर्धा में इन पाँच मूर्तियों का न्यास करे—मुख में नं तत्पुरुषाय प्राग्वक्त्राय नमः, दक्ष कर्ण में मं अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः, शिखा के नीचे शिं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः, वाम कर्ण में वां वामदेवायोत्तरवक्त्राय नमः, मूर्धा में यं ईशानायोर्ध्ववक्त्राय नमः, इस प्रकार मूर्तिन्यास के बाद षडङ्ग न्यास करे—ॐ सर्वज्ञशक्तिधाम्ने हृदयाय नमः, नं नित्यतृप्तशक्तिधाम्ने शिरसे स्वाहा, मं अनादिबोधशक्तिधाम्ने शिखायै वषट्। शिं स्वतन्त्रशक्तिधाम्ने कवचाय हुं, वां अलुप्तशक्तिधाम्ने नेत्रत्रयाय वौषट्, यं अनन्तशक्तिधाम्ने अस्त्राय फट्। तदनन्तर मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके सर्व-रक्षा के लिये इस प्रकार गोलक न्यास करे—

१. हृदय में ॐ नमः, मुख में नं नमः, दक्षिणांस में मं नमः, वामांस में शिं नमः, दक्षिण ऊरु में वां नमः, वाम ऊरु में यं नमः। २. कण्ठ में ॐ नमः, नाभि मे नमः, नं दक्षिण पार्श्व में मं नमः, वाम पार्श्व में शिं नमः, पृष्ठ में वां नमः, हृदय में यं नमः। ३. मूर्धा में ॐ नमः, मुख में नं नमः, दक्ष नेत्र में मं नमः, वाम नेत्र में शिं नमः, दक्ष नासिका में वां नमः, वाम नासिका में यं नमः। ४. दक्ष बाहुमूल में ॐ नमः, मध्य में नं नमः, मणिबन्ध में मं नमः, अंगुलिमूल में शिं नमः, अंगुलिमध्य में वां नमः, अंगुलि के आगे यं नमः। ५. वाम बाहुमूल में ॐ नमः, मध्य में नं नमः, मणिबन्ध में मं नमः, अंगुलिमूल में शिं नमः, मध्य में वां नमः, आगे यं नमः। ६. दक्ष ऊरुमूल में ॐ नमः, जानुओं में नं नमः, गुल्फ में मं नमः, अंगुलिमूल में शिं नमः, मध्य मे वां नमः, आगे यं नमः। ७. वाम ऊरुमूल में ॐ नमः, जानुओं में नं नमः, गुल्फ में मं नमः, अंगुलिमूल में शिं नमः, मध्य में वां नमः, आगे यं नमः। ८. शिर पर ॐ नमः, मुख में नं नमः, हृदय में मं नमः, कुक्षि में शिं नमः, दक्ष ऊरुमूल से पादाग्र तक वां नमः, वाम ऊरुमूल से पादाग्र तक यं नमः। ९. हृदय में ॐ नमः, मुख में नं नमः, कण्ठ में मं नमः, बाँयें हाथ में ऊपर मृगे शिं नमः, बाँयें हाथ में नीचे अभये वां नमः, दाहिने हाथ में नीचे वरे यं नमः। १०. मुख में ॐ नमः, कन्धों में नं नमः, हृदय में मं नमः, पैरों में शिं नमः, ऊरुओं में वां नमः, जठर में यं नमः।

इस प्रकार के न्यास के बाद पुनः मूर्धा ॐ नमः, ललाट मं नमः, जठर में मं नमः। दाँयें कन्धे पर शिं नमः, वाँयें कन्धे पर वां नमः एवं हृदय में यं नमः से न्यास करके इस मन्त्र से मस्तक से पैरों तक व्यापक न्यास करे—नमोस्तु स्थाणुभूताय ज्योतिर्लिंगामृतात्मने। चतुर्मूर्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

गोक्षीरफेनधवलं रजताद्रिसमप्रभम्। चारुचन्द्रकलाराजज्जटामुकुटमण्डितम्॥
पञ्चवक्त्रधरं शम्भुं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्। शार्दूलचर्मवसनं रत्नाभरणभूषितम्॥
दक्षोर्ध्वहस्ते परशुं वरं च तदधःकरे। वामोर्ध्वहस्ते हरिणं दधानमभयं परे॥
सुप्रसन्नमुखाम्भोजं निविष्टं पद्मविष्टरे। ब्रह्मविष्णुमहेन्द्राद्यैः स्तुतं भक्त्या सुरासुरैः॥
विश्वाद्यं विश्ववपुषं भवभीतिहरं शिवम्।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करने के बाद पीठ पर षोडशोपचार पूजन करे। पूजन यन्त्र कर्णिका केसर उज्वल युक्त अष्टदल पद्म बनावे, इसके बाहर दो अष्टदल बनावे। तीन चतुरस्र बनावे, जो चार द्वारों से युक्त हो इस मण्डल में शिव की पूजा हेतु शिव से इस प्रकार आज्ञा मांग 'भगवन्नावरणपूजार्थमनुज्ञां देहि'। तब पूजा करे।

प्रथम अष्टदल के पूर्वादि दलों में नं तत्पुरुषाय नमः, मं अघोराय नमः, शिं सद्योजाताय नमः, वां वामदेवाय नमः, मध्य में यं ईशानाय नमः से पूजा करे! देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से पूजा के बाद आग्नेयादि दलों में इनकी पूजा करे— ॐ निवृत्त्यै नमः, ॐ प्रतिष्ठायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः, मध्ये ॐ शान्त्यतीतायै नमः।

द्वितीय अष्टदल के केसरों में देव के दक्षाग्र केसर में ॐ हृदयाय नमः, वामाग्र में ईशान में, नं शिरसे स्वाहा, पृष्ठ पर दाँयें मं शिखायै वषट्, पृष्ठ पर बाँये शिं कवचाय हुं, अग्रे वां नेत्रत्रयाय वौषट्, अग्रादि चारो दिशाओं में यं अस्त्राय फट् से न्यास करे।

द्वितीय अष्टदल के दलों में देवाग्रदल से प्रदक्षिण क्रम से अनन्ताय नमः, सूक्ष्माय नमः, शिवोत्तमाय नमः, एकनेत्राय नमः, एकरुद्राय नमः, त्रिमूर्तये नमः, श्रीकण्ठाय नमः एवं शिखण्डिने नमः से पूजन करे।

तृतीय अष्टदल में देव के वामदल से आरम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से उमाय नमः, चण्डीश्वरायै नमः, नन्दिने नमः, महाकालाय नमः, गणेश्वराय नमः, वृषभाय नमः, भृंगिरिटये नमः, स्कन्दाय नमः से पूजा करे। चतुरस्र रेखात्रय की दो वीथियों में से आभ्यन्तर वीथि में देव के आगे से लं इन्द्राय सुराधिपतये पीतवर्णाय वज्रहस्ताय ऐरावतवाहनाय नमः, रं अग्नये तेजोधिपतये रक्तवर्णाय शक्तिहस्ताय मेषवाहनाय नमः, टं यमाय प्रेताधिपतये कृष्णवर्णाय दण्डहस्ताय महिषवाहनाय नमः, क्षं निर्ऋतये रक्षोधिपतये धूम्रवर्णाय खड्गहस्ताय प्रेतवाहनाय नमः, वं वरुणाय यादसांपतये शुक्लवर्णाय पाशहस्ताय मकरवाहनाय नमः, यं वायवे प्राणाधिपतये धूम्रवर्णाय अंकुशहस्ताय मृगवाहनाय नमः, सं कुबेराय यक्षाधिपतये मौक्तिकवर्णाय गदाहस्ताय नरवाहनाय नमः, हौं ईशानाय विद्याधिपतये स्फटिकवर्णाय शूलहस्ताय वृषभवाहनाय नमः से पूजन करे। पूर्व और ईशान के मध्य में आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये रक्तवर्णाय पद्महस्ताय हंसवाहनाय नमः से पूजन करे। नैर्ऋत्य और पश्चिम के मध्य में ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये गौरवर्णाय चक्रहस्ताय गरुड़वाहनाय नमः से पूजन करे। द्वितीय वीथि में वज्राय नमः, शक्तये नमः, दण्डाय नमः, खड्गाय नमः, पाशाय नमः, अंकुशाय नमः, गदायै नमः, त्रिशूलाय नमः, पद्माय नमः, चक्राय नमः से पूजन करे। यह छः आवरणों की पूजा होती है। इस विस्तृत पूजा को करने में यदि असमर्थ हो तो पूर्ववत् ही पूजन सम्पन्न करे। नदनन्तर मूल मन्त्र कहकर सांगाय सपरिवाराय श्रीसदाशिवाय नमः से पुष्पाञ्जलि देकर शेष पूजा समाप्त करे। इस प्रकार की पूजा जो शिव की करता है, उसे शिवत्व मिलता है। शिवगायत्री इस प्रकार है—महेशाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि तन्नो: शिव: प्रचोदयात्।

नियमस्थ एवं जितेन्द्रिय रहकर छः लाख मन्त्र-जप करे। छः हजार हवन शुद्ध घृतप्लुत पायस एवं क्षीर वृक्ष की समिधाओं से करे। छः हजार तर्पण कर्पूरवासित जल से करे। मूल मन्त्र से तर्पण का दशांश अपना मार्जन करे। मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन करावे। शिवभक्त सदाचारी ब्राह्मणों को भोजन करावे। पञ्चाङ्ग से विधिवत् पुरश्चरण करे। इस सिद्ध मन्त्र से सभी इच्छाएँ पूरी होतीं हैं। उपर्युक्त छः लाख जप का विधान सतयुग के लिये कहा गया है; कलियुग में सिद्धि-हेतु चौबीस लाख जप करना चाहिये।

मन्त्रविनियोगविधि:

लिङ्गपुराणे—

विनियोगं प्रवक्ष्यामि सिद्धमन्त्रप्रयोजनम्। दौर्बल्यं याति तन्मन्त्रं विनियोगमजानतः॥१॥
यस्य येन नियुञ्जीत कार्येण च विशेषतः। विनियोगः स विज्ञेय ऐहिकामुष्मिकं फलम्॥२॥

विनियोगजमायुष्यमारोग्यं तत्सुनित्यता। राजैश्वर्यं च विज्ञानं स्वर्गो निर्वाणमेव च ॥३॥
प्रोक्षणं चाभिषेकं च अघमर्षणमेव च। स्नानं च सन्ध्ययोस्त्वेवं कुर्यादेकादशेन वै ॥४॥
शुद्धः पर्वतमारुह्य जपेल्लक्षमतन्द्रितः। महानद्यां द्विलक्षं तु दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥५॥
दूर्वाङ्कुरैस्तिलैर्वापि शुद्धैर्द्रव्यैस्तथैव च। तेषां दश सहस्राणि होममायुःप्रवर्धनम् ॥६॥
अश्वत्थवृक्षमाश्रित्य जपेल्लक्षद्वयं सुधीः। शनैश्चरदिने स्पृष्ट्वा दीर्घमायुर्लभेन्नरः ॥७॥
जपेदष्टोत्तरशतं सोऽपमृत्युहरो भवेत्। आदित्याभिमुखो भूत्वा जपेल्लक्षमनन्यधीः ॥८॥
अर्कैरष्टशतं नित्यं जुहुयाद् व्याधिमुक्तये। समस्तव्याधिशान्त्यर्थं पलाशसमिधो नरः ॥९॥
हुत्वा दशसहस्रं तु नीरोगो मनुजो भवेत्। जपेल्लक्षं तु पूर्वाह्णे हुत्वा चाष्टशतेन च ॥१०॥
सूर्यं नित्यमुपस्थाय यः स आरोग्यमाप्नुयात्। नदीतोयेन संपूर्णं घटं संस्पृश्य शोभनम् ॥११॥
जप्त्वायुतं तु तैः स्नायाद्रोगाणां भेषजं भवेत्। अष्टाविंशतिजप्तान्नमश्नीयादन्वहं शुचिः ॥१२॥
हुत्वा च तालपालाशैरेतैरारोग्यमश्नुते। नित्यमष्टशतं जप्त्वा पिबेदपोऽर्कसंनिधौ ॥१३॥
औदरैर्व्याधिभिः सर्वैर्मासेनैकेन मुच्यते। एकादशेन भुञ्जीयादन्नं चैवाभिमन्त्रितम् ॥१४॥
भक्ष्यं चान्नं तथा पेयं विषमप्यमृतं भवेत्। चन्द्रसूर्यग्रहे पूर्वमुपोष्य विधिना शुचिः ॥१५॥
यावद्ग्रहणमोक्षं तु तावन्नद्यां समाहितः। जपेत् समुद्रगामिन्यां विमोक्षे ग्रहणस्य तु ॥१६॥
अष्टोत्तरसहस्रेण पिबेद् ब्राह्मीरसं द्विजः। ऐहिकीं लभते मेधां सर्वश्रुतिवहां शुभाम् ॥१७॥
सारस्वती भवेद् दैवी तस्य वागतिमानुषी। ग्रहनक्षत्रपीडासु जपेद् भक्त्यायुतं नरः ॥१८॥
(हुत्वा चाष्टसहस्रं च ग्रहपीडा विनश्यति। दुःस्वप्नदर्शने स्नात्वा जपेच्चैवायुतं नरः॥१९॥)
घृतेनाष्टशतं हुत्वा सद्यः शान्तिर्भविष्यति। चन्द्रसूर्यग्रहे लिङ्गं समभ्यर्च्य यथाविधि ॥२०॥
यत्किञ्चित् प्रार्थयेद् देवि जपेदयुतमादरात्। सन्निधौ तस्य देवस्य शुचिः संयतमानसः ॥२१॥
सर्वान् कामानवाप्नोति पुरुषो नात्र संशयः। गजानां तुरगाणां तु गोजातीनां तथैव च ॥२२॥
व्याध्यागमे शुचिर्भूत्वा जुहुयात् समिधाहुतिम्। मासमभ्यर्च्य विधिना अयुतं भक्तिसंयुतः ॥२३॥
तेषामृद्धिश्च शान्तिश्च भविष्यति न संशयः। उत्पाते शत्रुबाधायां जुहुयादयुतं शुचिः ॥२४॥
पलाशसमिधैर्देवि तस्य शान्तिर्भविष्यति। आभिचारिकशङ्कायामेतद् देवि समाचरेत् ॥२५॥
प्रतिधावति तच्छक्तिः शत्रोः पीडा भविष्यति। विद्वेषणार्थं जुहुयाद्विभीतसमिधाष्टकम् ॥२६॥

मन्त्र विनियोग विधि—लिङ्गपुराण में कहा गया है कि सिद्ध मन्त्र के प्रयोजन के लिये उसके विनियोगों को कहता हूँ। विनियोग के बिना मन्त्र में दुर्बलता रहती है। जो विशेष कार्यों में नियुक्त होने पर विनियोग करता है, उसे लौकिक-पारलौकिक कार्यों में सफलता मिलती है। आयु, आरोग्य, उसकी नित्यता, राजैश्वर्य, विज्ञान, स्वर्ग, निर्वाण, प्रोक्षण, अभिषेक, अघमर्षण, स्नान, सन्ध्योपासना—इन ग्यारह कार्यों में विनियोग करे। शुद्ध पर्वत पर चढ़कर निरालस होकर एक लाख जप करे। महानदी में दो लाख जप करे तो दीर्घ आयु प्राप्त होती है। दुर्वाङ्कुर, तिल, शुद्ध द्रव्यों से दश हजार हवन करने से आयु बढ़ती है। पीपल-वृक्ष के नीचे बैठकर शनिवार को दो लाख जप उसे स्पर्श करके करे तो दीर्घ आयु मिलती है। एक सौ आठ जप से अपमृत्यु नहीं होती। सूर्य की ओर मुख करके एकाग्रता से एक लाख जप करे एवं नित्य एक सौ आठ हवन अकवन के फूलों से करे तो रोग नष्ट हो जाता है। सभी व्याधियों की शान्ति के लिये पलाश की समिधाओं से दश हजार हवन करे तो मनुष्य निरोग होता है। पूर्वाह्न में एक लाख जप करके एक सौ आठ हवन करे एवं नित्य सूर्य का उपस्थान करे तो आरोग्य प्राप्त होता है। नदी-जल से पूर्ण सुन्दर घड़े का स्पर्श करके दश हजार जप करे और उस जल से स्नान करे तो निरोग होता है। प्रतिदिन अट्ठाईस जप से मन्त्रित अन्न का भोजन करे एवं ताड़ और पलाश से हवन करे तो आरोग्य मिलता है। नित्य एक सौ आठ जप से मन्त्रित जल का सूर्य के सामने पान करे तो पेट की सभी बिमारियों से एक माह में मुक्ति मिल जाती

है। ग्यारह जप से मन्त्रित अन्न, भक्ष्य, पेय और विष भी अमृत हो जाता है। चन्द्र-सूर्यग्रहण के पहले उपवास रहकर ग्रहण से मोक्ष तक समुद्रगामिनी नदी में जप करे। ग्रहण मोक्ष के बाद एक हजार आठ जप से मन्त्रित ब्राह्मी रस का पान करे तो समस्त वेदों को धारण करने वाली मेधा प्राप्त होती है और उसकी वाणी अलौकिक हो जाती है। ग्रह-नक्षत्रपीड़ा में भक्ति से दश हजार जप करे एवं एक हजार आठ हवन करे तो ग्रहपीड़ा नष्ट हो जाती है। बुरा सपना देखने पर स्नान करके दश हजार जप करके एक सौ आठ हवन घी से करे तो तत्काल शान्ति होती है। चन्द्र-सूर्यग्रहण में विधिवत् शिव-लिंग का अर्चन करके उसके निकट बैठकर कामना से दश हजार जप करके प्रार्थना करे तो साधक की सभी कामनायें पूरी होती हैं। हाथी, घोड़ों, गायों को व्याधि होने पर पवित्र होकर एक महीने तक भक्तिसहित समिधाओं से हवन करके विधिवत् पूजन करे तो शान्ति होती है और पशुओं की वृद्धि होती है। उत्पात और शत्रुबाधा होने पर पवित्रता से दश हजार हवन पलाश की समिधाओं से करे तो शान्ति होती है। आभिचारिक शंका होने पर भी इसी प्रकार करे तो उसकी शक्ति दौड़ती है और शत्रु को पीड़ा होती है। विद्वेषण के लिये लिसोड़े की आठ समिधाओं से हवन करना चाहिये।

प्रायश्चित्तम्

प्रायश्चित्तं च वक्ष्यामि सर्वपापविशुद्धये। पापशुद्धिं यथा यम्यक् कर्तुमभ्युद्यतो नरः ॥२७॥
पापशुद्धिर्न चेत्पुंसः क्रियाः सर्वाश्च निष्फलाः। ज्ञानं च हीयते तस्मात् कर्तव्यं पापशोधनम् ॥२८॥
विद्यालक्ष्मीविशुद्ध्यर्थं मां ध्यात्वाञ्जलिना शुभे। शिवेनैकादशेनाद्भिरभिषिञ्चेत् समन्ततः ॥२९॥
अष्टोरशतेनैव स्नायात् पापविशुद्धये। सर्वतीर्थफलं तच्च सर्वपापहरं शुभम् ॥३०॥
सन्ध्योपासनविच्छेदे जपेद् दशशतं बुधः। विड्वराहैश्च चाण्डालैर्मार्जारैः कुक्कुरैरपि ॥३१॥
स्पृष्टमन्नं न भुञ्जीत भुक्त्वा चाष्टशतं जपेत्। ब्रह्महत्यादिशुद्ध्यर्थं जपेल्लक्षायुतं नरः ॥३२॥
पातकानां तदर्धं स्यान्नात्र कार्या विचारणा। उपपातकदुष्टानां तदर्धं परिकीर्तितम् ॥३३॥
शेषाणामपि पापानां जपेत् पञ्चसहस्रकम्। आत्मबोधकरं गुह्यं शिवरूपप्रसाधकम् ॥३४॥
जितश्वासो जपेन्मन्त्रं पञ्चलक्षमनाकुलः। पञ्चवायुजयं भद्रे प्राप्नोति मनुजः सुखी ॥३५॥
यो जपेत् पञ्चलक्षं तु निगृहीतेन्द्रियः शुचिः। पञ्चेन्द्रियाणां विजयो भविष्यति वरानने ॥३६॥
ध्यानयुक्तो जपेद्यस्तु मनः संयम्य यत्नतः। सम्यग्विजयमाप्नोति करणानां वरानने ॥३७॥
पञ्चविंशतिलक्षाणां जपेन कमलानने। पञ्चविंशतितत्त्वानां विजयं मनुजो लभेत् ॥३८॥
मध्यरात्रे व्यतीते तु जपेदयुतमादरात्। स ब्रह्मसिद्धिमाप्नोति इहैवानेन सुन्दरि ॥३९॥
जपेल्लक्षमनालस्यो निर्वाते ध्वनिवर्जिते। मध्यरात्रे शिवज्योत्स्नां पश्यत्येव न संशयः ॥४०॥
(अन्धकारविनाशं च दीपस्येव प्रकाशनम्। हृदयान्तर्बहिर्वापि भविष्यति न संशयः ॥४१॥)
सर्वसंपत्समृद्ध्यर्थं जपेदयुतमात्मवान्। सबीजसंपुटं मन्त्रं शतलक्षं जपेत् सुधीः ॥४२॥
मत्सायुज्यमवाप्नोति भक्तिमान् मनुजः परम्। इति।

सभी पापों से शुद्धि के लिये प्रायश्चित्त को कहता हूँ, जिसे सम्यक् रूप में करने से पापशुद्धि होती है और मनुष्य का अभ्युदय होता है। पापशुद्धि के बिना मनुष्य के सभी कर्म निष्फल होते हैं। साथ ही ज्ञान भी घटता है; इसलिये पापशोधन करना चाहिये। विद्या-लक्ष्मी की विशुद्धि के लिये अंजलि में जल लेकर ग्यारह जप से उसे मन्त्रित करके उससे अभिसिञ्चन करके एक सौ आठ जप से मन्त्रित करके स्नान करे तो पाप की शुद्धि होती है। इससे सभी तीर्थों का फल मिलता है और सभी पापों का नाश होता है। सन्ध्या उपासना के विच्छेद होने पर एक हजार जप करे। विष्टा, सूअर, चाण्डाल, विलार, कुत्ता से स्पृष्ट अन्न का भोजन न करे। यदि भोजन कर ले तो एक सौ आठ जप करे। ब्रह्महत्या से शुद्धि के लिये एक लाख या दश हजार जप करे। पापों के लिये पचास हजार जप करे। दुष्टों के उत्पात होने पर पच्चीस हजार जप करे। शेष पापों के लिये पाँच हजार जप करे। आत्मप्रबोधक, शिवरूप का साधक गोपनीय मन्त्र का श्वास रोककर व्याकुलता से रहित हो पाँच

लाख जप करे तो पाँचों वायुओं पर जय पाकर मनुष्य सुखी होता है। इन्द्रियों का निग्रह करके पवित्र होकर जो पाँच लाख जप करता है, वह पाँचों इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेता है। जो पच्चीस लाख मन्त्रजप करता है, उस मनुष्य को पच्चीस तत्त्वों पर विजय प्राप्त होती है। आधी रात के बाद जो दश हजार जप करता है, उसे इसी संसार में ब्रह्मसिद्धि मिल जाती है। आलस्यरहित हो ध्वनिविहीन मध्य रात में जो एक लाख जप करता है, उसे शिवज्योत्स्ना दिखायी पड़ती है और अन्धकार का नाश होकर दीपक-जैसे प्रकाश होता है। यह प्रकाश उसके हृदय में और बाहर भी होता है। सभी समृद्धियों एवं सपत्तियों के लिये मन्त्र का जप दश हजार करे। बीजसम्पुटित मन्त्र का एक करोड़ जप करे तो उसे शिवसायुज्य प्राप्त होता है।

पूर्वोक्तमन्त्रस्य प्रत्यक्षर-स्थान-वर्ण-स्वरादिवर्णनम्

तथा लिङ्गपुराणे—

अस्य मन्त्रस्य वक्ष्यामि ऋषिच्छन्दोऽधिदैवतम्। बीजं शक्तिं स्वरं वर्णं स्थानं चैवाक्षरं प्रति ॥१॥
वामदेवो नाम ऋषिः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम्। देवता शिव एवाहं मन्त्रस्यास्य वरानने ॥२॥
नकारादीनि वर्णानि पञ्चभूतात्मकानि च। आत्मानं प्रणवं विद्धि सर्वव्यापिनमव्ययम् ॥३॥
शक्तिस्त्वमेव देवेशि सर्वदेवनमस्कृता। त्वदीयं प्रणवं केचिन्मदीयं प्रणवं तथा ॥४॥
त्वदीयं देवि मन्त्राणां शक्तिभूतं न संशयः। ॐकारस्य स्वरोदात्त ऋषिर्ब्रह्मा सिता प्रभा ॥५॥
छन्दो देवी च गायत्री परमात्माधिदेवता। उदात्तः प्रथमस्तद्वच्चतुर्थश्च द्वितीयकः ॥६॥
पञ्चमः स्वरितश्चैव मध्यमो निषदस्तथा। नकारः पीतवर्णोऽस्य (स्थानं पूर्वमुखं स्मृतम् ॥७॥
इन्द्रोऽधिदैवतं छन्दो गायत्री गौतम ऋषिः। मकारः कृष्णवर्णोऽस्य) स्थानं वै दक्षिणं मुखम् ॥८॥
छन्दोऽनुष्टुबृषिश्चात्री रुद्रो दैवतमुच्यते। शिकारो धूम्रवर्णोऽस्य स्थानं वै पश्चिमं मुखम् ॥९॥
विश्वामित्र ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो विष्णुश्च देवता। वकारो हेमवर्णोऽस्य स्थानं चैवोत्तरं मुखम् ॥१०॥
ब्रह्माधिदैवतं छन्दो बृहती चाङ्गिरा ऋषिः। यकारो रक्तवर्णोऽस्य स्थानमूर्ध्वमुखं विराट् ॥११॥
छन्दो ऋषिर्भरद्वाजो स्कन्दो दैवतमुच्यते। इति।

तथा सारसंग्रहे—

इत्थं शिवं समभ्यर्च्य सहस्रं नित्यशो जपेत्। सर्वपापविनिर्मुक्तश्चान्ते सद्गतिमाप्नुयात् ॥१॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाद्वाञ्छितां रमाम्। सहस्रद्वयजापेन महारोगैः प्रमुच्यते ॥२॥
सहस्रत्रयजायेन दीर्घमायुर्लभेन्नरः। चतुःसहस्रजापेन वाञ्छितार्थानवाप्नुयात् ॥३॥
तिलैः शुद्धैर्घृताभ्यक्तैर्हुनेदुत्पातसम्भवाः। रोगा विनश्यन्त्यचिरान्नात्र कार्या विचारणा ॥४॥
प्रजपेच्छतलक्षं यः स शिवो नात्र संशयः। नादीनां पञ्चवर्णानामृषयोऽमी मताः क्रमात् ॥५॥
गौतमोऽत्रिर्द्वितीयः स्याद्विश्वामित्रोऽङ्गिरास्तथा। भरद्वाजश्च गायत्री सानुष्टुप् त्रिष्टुबेव च ॥६॥
बृहती सविराडेषां छन्दांसीह मतानि वै। इन्द्ररुद्रहरिब्रह्मस्कन्दा देवाः प्रकीर्तिताः ॥७॥
एषामाद्यः पूर्ववत् स्यात् (पूर्वः पीतोऽसितस्तथा। धूम्रपीतारुणा ज्ञेया एवं पञ्चार्णवो मताः ॥८॥

एषामाद्यः नादीनामाद्यः प्रणवः स पूर्ववत् स्यात्) परब्रह्मबोधक इत्यर्थः। अथ च पूर्वोक्तमुन्यादिकश्च स्यात्। तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्रीच्छन्द ईरितम् ॥९॥
देव्यादिकं देवतास्य परमात्मा समीरितः। ज्योतिर्वर्णः समाख्यातो मोक्षार्थे विनियुज्यते ॥१०॥

इत्यादि। इति पञ्चाक्षरविधिः।

पञ्चाक्षर मन्त्र के स्वर-वर्ण-स्थान—लिङ्गपुराण में ईश्वर ने कहा है कि अब मैं इस मन्त्र के प्रत्येक अक्षर के

ऋषि-छन्द-देवता-बीज-शक्ति-स्वर-वर्ण-स्थान को क्रमशः कहता हूँ। सम्पूर्ण मन्त्र के ऋषि वामदेवः छन्द पंक्ति एवं देवता शिव हैं। नकारादि अक्षर पञ्चभूतात्मक है। सर्वव्यापी अव्यय मैं स्वयं प्रणव हूँ। समस्त देवों से नमस्कृत स्वयं तुम उसकी शक्ति हो। कुछ लोग प्रणव को तुमसे सम्बद्ध करते हैं और कुछ मुझसे सम्बद्ध करते हैं। तुमसे सम्बद्ध प्रणव ही इस मन्त्र की शक्ति है।

'ॐ'कार का स्वर उदात्त है, ब्रह्मा ऋषि है, श्वेत आभा है, छन्द देवी गायत्री है एवं परमात्मा अधिदेवता है। इसका प्रथम और चतुर्थ अक्षर उदात्त स्वर है। द्वितीय एवं पञ्चम अक्षर स्वरित् स्वर है। मध्यस्थ का निषाद स्वर है। अर्थात् 'न वा' का स्वर उदात्त, 'म य' का स्वर स्वरित् और 'शि' का स्वर निषाद है। 'नकार' का वर्ण पीला एवं स्थान शिव का पूर्व मुख है। इसके अधिदेवता इन्द्र, छन्द गायत्री एवं ऋषि गौतम हैं। 'मकार' का वर्ण काला एवं स्थान शिव का दक्षिण मुख है। छन्द अनुष्टुप् ऋषि अत्रि एवं देवता रुद्र हैं। 'शि' का वर्ण धूम्र एवं स्थान शिव का पश्चिम मुख है ऋषि विश्वामित्र, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता विष्णु हैं। 'वकार का वर्ण सुनहला एवं स्थान शिव का पूर्व मुख है। ब्रह्मा अधिदेवता, छन्द बृहती एवं ऋषि अंगिरा हैं। यकार का वर्ण लाल एवं स्थान शिव का ऊर्ध्व मुख है। छन्द विराट्, ऋषि भरद्वाज एवं देवता कार्तिकेय हैं।

सारसंग्रह में कहा गया है कि इस प्रकार के शिवपूजन के बाद प्रतिदिन एक हजार मन्त्र जप करे तो सभी पापों से मुक्त होकर अन्त में सद्गति प्राप्त करता है। सभी पापों से मुक्त होकर इच्छित लक्ष्मी प्राप्त करता है। दो हजार जप करने से महारोग छूट जाते हैं। तीन हजार जप से दीर्घायु प्राप्त होती है। प्रतिदिन चार हजार जप से वांछितार्थ प्राप्त करता है। घृताक्त शुद्ध तिल से हवन करने से उत्पात के कारण होने रोगों का थोड़े ही दिनों में नाश हो जाता है। जो एक करोड़ जप कर लेता है, वह साक्षात् शिव हो जाता है। 'नमः शिवाय' मन्त्र के पाँचों वर्णों के ऋषि आदि क्रमशः इस प्रकार है। न के ऋषि गौतम, छन्द गायत्री, देवता इन्द्र एवं वर्ण पीला है; 'म' के ऋषि अत्रि, छन्द अनुष्टुप्, देवता रुद्र वर्ण काला है; शि के ऋषि विश्वामित्र, छन्द त्रिष्टुप् एवं देवता हरि, वर्ण धूम्र है; वा के ऋषि अंगिरा, छन्द बृहती देवता ब्रह्मा एवं वर्ण पीला है; य के ऋषि भरद्वाज, छन्द विराट् देवता स्कन्द एवं वर्ण लाल है। इन सबों को आदि में पूर्ववत् प्रणव होता है। साथ ही यह भी कहा गया है कि पञ्चाक्षर नमः शिवाय मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द देवी गायत्री एवं देवता परमात्मा कहे गये हैं। इसका वर्ण सुनहला कहा गया है एवं मोक्ष के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

सपूजाप्रयोगमुमापतिमन्त्रविधानम्

नन्दिकेश्वरमते मन्त्रान्तरे—

शृणु नन्दिन् प्रवक्ष्यामि मन्त्रान्तरमुमापतेः। अष्टमान्त्यं सप्तमस्य द्वितीयार्णस्थमालिखेत् ॥१॥
आद्यवर्गतुरीयार्णोपान्त्याभ्यां परिमण्डितम्। मायाबीजमिदं वत्स त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥२॥
अनेनाद्यन्तयोर्युक्तः पञ्चार्णः सप्तवर्णकः। षडर्णश्चाष्टवर्णः स्यादेवं मन्त्रद्वयं भवेत् ॥३॥

अष्टमान्त्यं हकारः, सप्तमद्वितीयार्णस्थं रेफोपरि स्थितम्। आद्यवर्गतुरीयार्णः ईकारः, तस्यैव (वर्गस्य) उपान्त्यो बिन्दुस्ताभ्यां युक्तं लिखेत्, तेन मायाबीजं सिद्धम्। तथा—

ऋषिरुक्तो वामदेवः पङ्क्तिश्छन्द उदाहृतम्। उमापतिर्देवता स्यान्मन्त्रयोर्जगदीश्वरः ॥४॥
तारषड्दीर्घयुङ्मायापूर्वैर्मन्त्रार्णकैः क्रमात्। षडङ्गानि गणश्रेष्ठ जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥५॥
बन्धूककुसुमारक्तं चन्द्रार्धकृतशेखरम्। दक्षिणोर्ध्वकरे शूलं तदधो वरमुद्रिकाम् ॥६॥
वामोर्ध्वेन कपालं तदधोहस्तेन चाभयम्। दधानं निजवामोरुपीठस्थाया गणेश्वर ॥७॥
रक्तोत्पलकरायाश्च श्लिष्यन्तं वामबाहुना। सर्वाभरणसन्दीप्तदेहं देव्या मुदान्वितम् ॥८॥
स्मेरवक्त्रं त्रिनयनं सर्वाभरणभूषितम्। एवं ध्यात्वा यजेद् देवं प्राक्प्रोक्ते शैवविष्टरे ॥९॥
पद्मं पञ्चदलं कृत्वा तद्बहिश्चाष्टपत्रकम्। बहिरष्टच्छदाम्भोजं चतुरस्रत्रयं बहिः ॥१०॥
वीथीद्वयसमोपेतं चतुर्द्वारोपशोभितम्। अस्मिन् पीठे यजेद्देवं मूर्तिं सङ्कल्प्य मूलतः ॥११॥

सर्वोपचारैराराध्य प्राग्वदङ्गानि पूजयेत्। हृल्लेखां गगनां रक्तां महोच्छुष्मां करालिकाम्॥१२॥
पूजयेत् पञ्चपत्रेषु बहिरष्टदले पुनः। वृषभं क्षेत्रपात्रं च चण्डेश्वरमनन्तरम्॥१३॥
दुर्गां च षण्मुखं पश्चान्नन्दिनं विघ्नायकम्। सेनापतिं ततो बाह्ये यजेदष्टदलेष्विमाः॥१४॥
ब्राह्म्याद्या मातरस्तास्तु ब्राह्मी माहेश्वरी ततः। कौमारी वैष्णवी चैव वाराही तदनन्तरम्॥१५॥
ऐन्द्री च षष्ठी चामुण्डा महालक्ष्मीरिति क्रमात्। लोकपालांस्तदस्त्राणि चतुरस्रान्तरालयोः॥१६॥
एवं संपूज्य देवेशं नियमेन जितेन्द्रियः। लक्षत्रयं जपेत् सार्धं तत्सहस्रं समिद्वरैः॥१७॥
आरग्वधतरूद्भूतैस्तत्पुष्पैर्वा हुनेत् ततः। मधुरत्रयसंसिक्तैस्तर्पणादि ततश्चरेत्॥१८॥
प्रागुक्तेन विधानेन ततः सिद्धो भवेन्मनुः। सौभाग्यसंपदायुष्यपुत्रपौत्रादिवर्धनः॥१९॥
देहान्ते च गणश्रेष्ठ शिवसायुज्यदो भवेत्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्तं प्राग्वत्कृत्वा, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे पङ्क्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीउमापतये देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ॐह्रांॐ हृदयाय नमः। ॐह्रींनं शिरसे स्वाहा। ॐह्रूंमं शिखायै वषट्। ॐह्रैंशिं कवचाय हुम्। ॐह्रौंवां नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐह्रःयं अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य, (हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततो ध्यानादिमानसपूजान्ते प्रमाणोक्तं पूजाचक्रं निर्मायार्घ्यादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वद् देवाङ्गानि संपूज्य) पञ्चदलेषु देवाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन—ॐहृल्लेखायै नमः। ॐगगनायै नमः। ॐरक्तायै नमः। ॐमहोच्छुष्मायै नमः। ॐकरालिकायै नमः। इति संपूज्य, अष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य—वृषभाय नमः। क्षेत्रपालाय नमः। चण्डेश्वराय नमः। दुर्गायै नमः। षण्मुखाय नमः। नन्दिने नमः। विघ्ननायकाय नमः। सेनापतये नमः। इति प्रादक्षिण्येन संपूज्य, तद्बहिरष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन—आं ब्राह्म्यै नमः। ईं माहेश्वर्यै नमः। ऊं कौमार्यै नमः। ॠं वैष्णव्यै नमः। लृं वाराह्यै नमः। ऐं इन्द्राण्यै नमः। औं चामुण्डायै नमः। अः महालक्ष्म्यै नमः। इति संपूज्य, ततः प्राग्वल्लोकपालार्चादि सर्वं समापयेदिति।

उमापति मन्त्र—नन्दिकेश्वरमत में ईश्वर ने कहा है कि हे नन्दिन्! सुनो, अब मैं उमापति के दूसरे मन्त्र को कहता हूँ। मायावीज 'ह्रीं' तीनों लोकों में दुर्लभ है। पञ्चाक्षर मन्त्र नमः शिवाय के पहले और बाद में ह्रीं लगाने से सप्ताक्षर मन्त्र होता है—ह्रीं नमः शिवाय ह्रीं। इसी प्रकार यह षडाक्षर और अष्टाक्षर भी होता है। ह्रीं नमः शिवाय—यह षडक्षर होता है एवं ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं—यह अष्टाक्षर मन्त्र होता है।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदये श्री उमापतये देवतायै नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ ह्रां ॐ हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं नं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं मं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं शिं कवचाय हुम्, ॐह्रौं वां नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रः यं अस्त्राय फट्। इसी प्रकार इन मन्त्रों से अंगूठे से करतल तक न्यास करे। फिर हृदयादि षडङ्ग न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

बन्धूककुसुमारक्तं चन्द्रार्धकृतशेखरम्। दक्षिणोर्ध्वकरे शूलं तदधो वरमुद्रिकाम्॥
वामोर्ध्वेन कपालं तदधोहस्तेन चाभयम्। दधानं निजवामोरुपीठस्थाया गणेश्वर॥
रक्तोत्पलकरायाश्च श्लिष्यन्तं वामबाहुना। सर्वाभरणसन्दीप्तदेहं देव्या मुदान्वितम्॥
स्मेरवक्त्रं त्रिनयनं सर्वाभरणभूषितम्।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजन करके पूजा यन्त्र बनावे। एतदर्थ पञ्चदल पद्म बनाकर उसके बाहर अष्टदल बनावे। उसके बाहर फिर अष्टदल बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र से दो वीथी बनावे। इसके बाद अर्घ्यादि से पुष्पोपचार तक की पूजा करे। तब अंग पूजा करे।

पञ्चदल में देवाग्र दल से प्रादक्षिण्य क्रम से ॐ हृल्लेखायै नम:, ॐ गगनायै नम:, ॐ रक्तायै नम:, ॐ महोच्छुष्मायै नम:, ॐ करालिकायै नम: से पूजा करे।

अष्टदल में देव के आगे क्रमश: वृषभाय नम:, क्षेत्रपालाय नम:, चण्डेश्वराय दुर्गायै नम:, षण्मुखाय नम:, नन्दिने नम:, विघ्ननायकाय नम:, सेनापतये नम: से प्रादक्षिण्य क्रम से पूजा करे। उसके बाहर वाले अष्टदल में देवाग्र से प्रादक्षिण्य क्रम से आं ब्राह्मयै नम:, ईं माहेश्वर्यै नम:, ऊं कौमार्यै नम:, ॠं वैष्णव्यै नम:, ॡं वाराह्यै नम:, ऐं इन्द्राण्यै नम:, औं चामुण्डायै नम:, अ: महालक्ष्म्यै नम: से पूजन करके चतुरस्रों के अन्तरालों में इन्द्रादि लोकपालों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा पूर्ववत् करे।

पूजनसहितप्रासादमन्त्रविधानम्

तथा प्रासादमन्त्र:—

शृणु नन्दिन् प्रवक्ष्यामि प्रासादाख्यं महामनुम्। यस्य स्मरणमात्रेण नर: साक्षाच्छिवो भवेत् ॥१॥
अष्टमस्यान्त्यवर्णस्तु प्रथमान्त्यादिसंयुत:। तदादिस्वरसंयुक्त: कथितो वै महामनु: ॥२॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां साधने मुनिसेवित:। प्रसादकरणाच्छीघ्रमस्य प्रासादनामता ॥३॥

अष्टमान्त्यवर्णो ह: प्रथमान्त्यादिरनुस्वार:, तदादिस्वर औकारस्ताभ्यां युतस्तेन प्रासादबीजमुद्धृतम्।

वामदेवो मुनिर्वत्स पंक्तिश्छन्द उदाहृतम्। सदाशिवो देवतास्य मन्त्रस्य परिकीर्तित: ॥४॥
हकारो बीजमित्युक्तमौकार: शक्तिच्यते। षट्कलाढ्येन बीजेन षडङ्गानि प्रविन्यसेत् ॥५॥
प्रथमाद्यतृतीयेषुरुद्रादित्योत्तरस्वरै:। अष्टमान्त्यं तु संभेद्य प्रथमोपान्त्यसंयुतै: ॥६॥
विलोमगै: पञ्चबीजैरीशानाद्यान् प्रविन्यसेत्।

प्रथमाद्यमिति, प्रथमाद्यं अ, तृतीयं इ, इषु उ, रुद्र ए, आदित्योत्तर: ओ, एभिर्भेदितमष्टमान्त्यं हकार:, प्रथमोपान्त्यो बिन्दुस्तेन हंहिंहुंहेंहों इति, विलोमगै: होंहेंहुंहिंहं इत्यादिभि:।

मूर्तिरीशानश्चाद्य: स्यात् ततस्तत्पुरुषाह्वय:। अघोरो वामदेवश्च सद्योजातश्च पञ्चम: ॥७॥
अङ्गुष्ठादिष्वङ्गुलीषु मूर्ध्नि वक्त्रे हृदि न्यसेत्। गुह्ये च पादयोश्चाथ पञ्च वक्त्रेषु ता: पुन: ॥८॥
ऊर्ध्वादिषु गणश्रेष्ठ ततो देवं विचिन्तयेत्। इति।

शारदातिलके (१८.५६)—

तत्तदङ्गुलिभिर्भूयस्तत्तद्बीजादिकान् न्यसेत्। शिरोवदनहृद्गुह्यपाददेशे यथाक्रमम् ॥१॥
ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु ता:। इति।

ता मूर्ती:। तथा—

मुक्ताविद्युद्घनस्वच्छारुणवर्णैस्तु पञ्चभि:। वदनै: शोभितं वत्स प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥९॥
चन्द्रावतंसविलसज्जटामुकुटमण्डितम्। शुद्धस्फटिकसंकाशं समासीनं सरोरुहे ॥१०॥
प्रसन्नवदनाम्भोजं दधानं करपङ्कजै:। दक्षिणैस्त्रिशिखं टङ्कं वज्रं खड्गं तथानलम् ॥११॥
सर्पं घण्टासृणी पाशमभयं वामबाहुभि:। नानाभरणसन्दीप्तं ध्यायेद् देवं सदाशिवम् ॥१२॥
इति ध्यात्वा गणश्रेष्ठ पूर्वोक्ते योगविष्टरे। पञ्चाक्षरोक्तवत् कृत्वा पूजामण्डलमन्त्रवत् ॥१३॥
मूलेन मूर्तिं संकल्प्य तस्यामावाह्य पूजयेत्। उपचारै: समभ्यर्च्य यजेदावृतिदेवता: ॥१४॥
प्रथमेऽष्टदले वत्स सद्यादीन् पञ्च पूजयेत्। वेदाक्षमालाभीतीष्टहस्तं कुन्देन्दुसन्निभम् ॥१५॥
चतुर्वक्त्रं त्रिनयनं सद्यं पश्चिमतो यजेत्। काश्मीरवर्णोऽभीतीष्टटङ्काक्षस्रक्कर: शुभ: ॥१६॥
त्रीक्षणश्चतुरास्यश्च विलासी चोत्तरे स्थित:। पूजनीयो वामदेवस्त्वघोरं दक्षिणे यजेत् ॥१७॥

अक्षमालां वेदपाशौ साङ्कुशं डमरुं करैः। खट्वाङ्गं त्रिशिखं चैव कपालं दधतं क्रमात् ॥१८॥
अञ्जनाभं भीमदंष्ट्रं त्रिनेत्रं चतुराननम्। (प्रदीप्तविद्युद्धेमाभं पूर्वे तत्पुरुषं यजेत् ॥१९॥
हस्तैर्विषावराभीतिकुठारान् दधतं क्रमात्। चतुर्वक्त्रं त्रिनयनं नागयज्ञोपवीतिनम् ॥२०॥)
ईशानं पूजयेन्मध्ये पञ्चवक्त्रं गणेश्वर। मुक्तागौरं त्रिनयनं बाहुभिर्दशभिर्निजैः ॥२१॥
दधानमक्षस्रग्वेदपाशाङ्कुशसमाह्वयान्। डमरुं चैव खट्वाङ्गं त्रिशूलं च कपालकम् ॥२२॥
अभयं वरदं चैव कोणपत्रेषु पूजयेत्। तेजोरूपा निवृत्त्याद्यास्तास्वन्त्यां मध्यतो यजेत् ॥२३॥
पुरोक्तवत् षडङ्गानि पूजयेन्नन्दिकेश्वर। अनन्ताद्यानुमाद्याश्च यजेदष्टदलद्वये ॥२४॥
पूर्ववल्लोकपालांश्च तदस्त्राणि च पूजयेत्। य एवं पूजयेच्छम्भुं साधकः स्थिरमानसः ॥२५॥
भुङ्क्ते स भोगानखिलान् देहान्ते शिवतां व्रजेत्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीसदाशिवाय देवतायै नमः। गुह्ये हं बीजाय नमः। पादयोः ॐ शक्तये नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, हां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। हूं शिखायै वषट्। हैं कवचाय हुं। हौं नेत्रत्रयाय वौषट्। हः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकरतलान्तं करयोर्विन्यस्य, हृदयादिनेत्रत्रयान्तं विन्यस्यास्त्रमन्त्रेण तालत्रयं तर्जन्यङ्गुष्ठोत्थशब्देन दशदिग्बन्धनं च कृत्वा, अङ्गुष्ठयोः हों ईशानाय नमः। तर्जन्योः हें तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः हुं अघोराय नमः। अनामिकयोः हिं वामदेवाय नमः। कनिष्ठयोः हं सद्योताजाय नमः। इति विन्यस्यैवमेव शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु विन्यस्येत्। शिरसि हों ईशानायोर्ध्ववक्त्राय नमः। मुखे हें तत्पुरुषाय पूर्ववक्त्राय नमः। दक्षिणकर्णे हुं अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः। वामकर्णे हिं वामदेवायोत्तरवक्त्राय नमः। चूढाधः हं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः। इत्यङ्गुष्ठादिभिरेकेनाङ्गुलिनैकैकां मूर्तिं विन्यस्य, ध्यानादिमानसपूजान्ते पञ्चाक्षरोक्तं पूजायन्त्रं विधायार्घ्यस्थापनादिपुष्पोपचारान्ते प्रथमेऽष्टदले देवस्य पृष्ठदले हं सद्योजाताय नमः। वामदले हिं वामदेवाय नमः। दक्षिणदले हुं अघोराय नमः। अग्रदले हें तत्पुरुषाय नमः। कर्णिकायां देवस्याग्रे हों ईशानाय नमः। इति संपूज्याग्नेयादिदलेषु मध्ये च निवृत्त्याद्याः संपूज्य, ततः प्राग्वत् षडङ्गानि संपूज्यानन्तादिपूजामारभ्य पञ्चाक्षरोक्तवत् सर्वं कृत्वा समापयेदिति। तथा—

लक्षद्वयं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः। पञ्चसप्ततिसाहस्रं समेतं करवीरजैः ॥२६॥
जपापुष्पैस्तु पद्मैर्वा त्रिमध्वक्तैर्दशांशतः। पायसैः सघृतैर्वाथ राजवृक्षसमिद्वरैः ॥२७॥
जुहुयात् तस्य पुष्पैर्वा तर्पणादि ततश्चरेत्। इति।

एष जपः कृतयुगपरः।

प्रासाद मन्त्र—जिसके स्मरणमात्र से मनुष्य साक्षात् शिवस्वरूप हो जाता है, वह प्रासाद नामक महामन्त्र है—हौं इसके ऋषि वामदेव, छन्द पंक्ति एवं देवता सदाशिव कहे गये हैं।

पूजन—प्रातःकृत्यादि से योगपीठन्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः, हृदये श्री सदाशिवाय देवतायै नमः। गुह्ये हं बीजाय नमः, पादयो शक्तये नमः। तदनन्तर समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार हृदयादि न्यास करे—हां हृदयाय नमः, हीं शिरसे स्वाहा, हूं शिखायै वषट्, हैं कवचाय हुं, हौं नेत्रत्रयाय वौषट्, हः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार हां हीं इत्यादि से अंगूठों से तर्जनियों तक और करतल करपृष्ठ का न्यास करे। तदनन्तर हृदय से नेत्रत्रय तक न्यास करके अस्त्रमन्त्र से तीन ताली बजाये। तब दश दिग्बन्ध करे। तब मूर्ति न्यास करांगुलियों में करे—हों इशानाय नमः (दोनों अंगुष्ठ), हें तत्पुरुषाय नमः (दोनों तर्जनी), हं अघोराय नमः (दोनों मध्यमा), हिं वामदेवाय नमः (दोनों अनामिका), हं सद्योजाताय नमः (दोनों कनिष्ठा), इसके बाद शिर मुख हृदय गुह्य पैरों में भी न्यास करे। तदनन्तर अंगुष्ठादि एक-एक अंगुलियों से एक-एक मूर्तियों को तत्तत्

स्थानों पर इस प्रकार न्यस्त करे—शिर पर हों ईशानाय ऊर्ध्ववक्त्राय नमः, मुख में हे तत्पुरुषाय पूर्ववक्त्राय नमः, दक्षिण कर्ण में हुं अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः, वाम कर्ण में हिं वामदेवाय उत्तरवक्त्राय नमः, शिखा के नीचे हं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः। तदनन्तर इस प्रकार से ध्यान करे—

मुक्ताविद्युद्घनस्वच्छारुणवर्णैस्तु पञ्चभिः। वदनैः शोभितं वत्स प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्।।
चन्द्रावतंसविलसज्जटामुकुटमण्डितम्। शुद्धस्फटिकसंकाशं समासीनं सरोरुहे।।
प्रसन्नवदनाम्भोजं दधानं करपङ्कजैः। दक्षिणैस्त्रिशिखं टङ्कं वज्रं खड्गं तथानलम्।।
सर्पं घण्टासृणी पाशमभयं वामबाहुभिः। नानाभरणसन्दीप्तं ध्यायेद् देवं सदाशिवम्।।

इस प्रकार के ध्यान के बाद मानस पूजा करे। पंचाक्षरोक्त पूजायन्त्र बनाकर अर्घ्य-स्थापन करे। पुष्पोपचार तक पूजा करके प्रथम अष्टदल में देव के पीछे वाले दल में हं सद्योजाताय नमः, वाम दल में ह्रीं वामदेवाय नमः, दक्षिण दल में हुं अघोराय नमः, अग्रदल में हें तत्पुरुषाय नमः, कर्णिका में देव के आगे हों ईशानाय नमः से पूजन करे। तब अग्नेयादि दलों में और मध्य मे निवृत्त्यादि की पूजा करे। तब पूर्ववत् षडङ्ग पूजा करके अनन्तादि की पूजा से पञ्चाक्षरोक्त तक सभी पूजा करके समाप्त करे। जितेन्द्रिय रहकर हविष्यान्न का भोजन करे और दो लाख पचहत्तर हजार जप करे। दशांश हवन कनैल या कमलों को त्रिमधुराक्त करके करे। अथवा पायम में घी मिलाकर हवन करे। अथवा राजवृक्ष की समिधा से या फूलों से हवन करे। तदनन्तर तर्पण आदि करे।

अष्टाक्षरमन्त्रविधिः

तथा मन्त्रान्तरम्—

अथ नन्दिन् प्रवक्ष्यामि मन्त्रमष्टाक्षरं परम्। प्रथमस्य तु वर्गस्योपान्त्यवर्णसमन्वितम्।।१।।
तत्रयोदशवर्णं तु प्रथमार्णमिदं भवेत्। मायाबीजं द्वितीयं स्यात् प्रासादाख्यं तृतीयकम्।।२।।
पञ्चाक्षरस्ततः पश्चादेवमष्टाक्षरो मनुः।

प्रथमवर्गोपान्त्योऽनुस्वारः, तत्रयोदश ॐकारस्तेन ॐ, स मन्त्रस्यादिमो वर्णो भवति।

वामदेव ऋषिः पंक्तिश्छन्दो देवः सदाशिवः। मायाप्रासादबीजाभ्यां भेदिताभ्यां स्वरैरथ।।३।।
षड्भिः कुर्यात् षडङ्गानि मन्त्रवर्णैः सजातिभिः। ध्यायेद्देवं ततो वत्स हृदि चैकाग्रमानसः।।४।।
सिन्दूरपुञ्जशोणाङ्गं स्मेरवक्त्रं त्रिलोचनम्। मणिमौलिलसच्चन्द्रकलालङ्कृतमस्तकम्।।५।।
दक्षिणोर्ध्वकरे टङ्कं दधानं तदधो वरम्। वामोर्ध्वहस्ते हरिणं तदधःकरमादरात्।।६।।
पीनवृत्तघनोत्तुङ्गस्तनाग्रे विनिवेश्य च। वामाङ्के सन्निविष्टायाः प्रियाया रक्तपङ्कजम्।।७।।
दधत्या दक्षिणे हस्ते चासीनं रक्तपङ्कजे। नानाभरणसंदीप्तं दिव्यगन्धस्त्रगम्बरम्।।८।।
एवं ध्यात्वा गणश्रेष्ठ पूर्वोक्ते पूजयेच्छिवम्। योगपीठे समावाह्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः।।९।।
पञ्चाक्षरोक्तविधिना पूजायन्त्रं प्रकल्प्य च। तत्तन्त्रोक्तविधानेन यजेन्मूर्तीः कलाश्च ताः।।१०।।
ततोऽङ्गानि समभ्यर्च्यानन्तादीनप्युमादिकान्। लोकेशांश्च तदस्त्राणि पूजयेद्वत्स पूर्ववत्।।११।।
अनेन विधिना यस्तु शिवमाराधयेत् सदा। पुत्रपौत्रधनैश्वर्यभोगमोक्षान् स विन्दति।।११।।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते पञ्चाक्षरोक्तमृष्यादिकं विन्यस्य, ह्रांहांॐ हृदयाय नमः। ह्रींहींनं शिरसे स्वाहा इत्यादि करषडङ्गन्यासं विधाय, यथोक्तरूपं देवं ध्यात्वा मानसयजनादिकं पञ्चाक्षरोक्तमन्त्रवत् सर्वं कुर्यादिति।

अष्टाक्षर मन्त्र—भगवान् शिव का अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ ह्रीं हौं नमः शिवाय। इसके ऋषि वामदेव, छन्द पंक्ति एवं देव सदाशिव हैं। षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ह्रां हां ॐ हृदयाय नमः, ह्रीं हीं नं शिरसे स्वाहा, ह्रूं हूं मं

शिखायै वषट्, हैं हैं शिं कवचाय हुम्, हौं हौं वां नेत्रत्रयाय वौषट्, हः हः यं अस्त्राय फट्। तदनन्तर एकाग्र होकर हृदय में इस प्रकार देव का ध्यान करे—

सिन्दूरपुञ्जशोणाङ्गं स्मेरवक्त्रं त्रिलोचनम्। मणिमौलिलसच्चन्द्रकलालङ्कृतमस्तकम्।।
दक्षिणोर्ध्वकरे टङ्कं दधानं तदधो वरम्। वामोर्ध्वहस्ते हरिणं तदधःकरमादरात्।।
पीनवृत्तघनोत्तुङ्गस्तनाग्रे विनिवेश्य च। वामाङ्के सन्निविष्टायाः प्रियाया रक्तपङ्कजम्।।
दधत्या दक्षिणे हस्ते चासीनं रक्तपङ्कजे। नानाभरणसंदीप्तं दिव्यगन्धस्रगम्बरम्।।

हे गणश्रेष्ठ! इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त विधि से शिव की पूजा योगपीठ में आवाहन करके गन्ध-पुष्प-अक्षत से करे। पञ्चाक्षरोक्त विधि से पूजा यन्त्र बनाकर उसके तन्त्रोक्त विधान से मूर्ति एवं उसके कलाओं की पूजा करे। तब षडङ्ग पूजा करके अनन्तादि, उमा आदि, लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार से जो शिव की आराधना करता है, वह पुत्र-पौत्र-धन-ऐश्वर्य के साथ भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष प्राप्त करता है।

दक्षिणामूर्तिमन्त्रविधानम्

तथा दक्षिणामूर्तिमन्त्रः—

दक्षिणामूर्तिमन्त्रस्य विधानं नन्दिकेश्वर। प्रवक्ष्यामि गणश्रेष्ठ मन्त्रोद्धारपुरःसरम् ॥१॥
पञ्चमस्य तृतीयार्णः प्रथमः प्रथमस्य तु। तृतीयार्णयुतो वत्स द्वितीयाद्योऽष्टमस्य च ॥२॥
द्वितीयार्णयुतश्चाथ चतुर्थान्त्यो गणाधिप। प्रथमस्य द्वितीयार्णयुतोऽन्त्यः षष्ठवर्गजः ॥३॥
आद्यषष्ठसमायुक्तः पञ्चमाद्यस्ततः परम्। सप्तमस्य द्वितीयार्णरूढस्तस्यादिमस्ततः ॥४॥
आद्यैकादशसंयुक्तः पञ्चमाद्यस्ततः पुनः। आद्यपञ्चमसंयुक्तस्तुरीयः षष्ठवर्गजः ॥५॥
सप्तमाद्यसमायुक्तः प्रथमोपान्त्यसंयुतः। सप्तमान्त्यस्ततो वत्स चतुर्थाद्यस्ततः परम् ॥६॥
षष्ठस्य पञ्चमस्त्वाद्यषष्ठवर्णसमन्वितः। सप्तमस्य तृतीयोऽथ पञ्चमान्त्यस्ततः परम् ॥७॥
आद्यवर्गतृतीयार्णसमेतः सप्तमान्त्यकः। आद्यद्वितीयसंयुक्तस्त्वष्टमस्य तृतीयकः ॥८॥
प्रथमस्य तृतीयार्णसमेतस्तदनन्तरम्। आद्यैकादशसंयुक्तः पञ्चमस्य तु पञ्चमः ॥९॥
सप्तमाद्यसमायुक्तः पञ्चमस्य चतुर्थकः। आद्यद्वितीययुक्तश्च (पञ्चमान्त्यस्ततः परम् ॥१०॥
आद्यद्वादशसंयुक्तो द्वितीयाद्यस्तथा परम्। पञ्चमान्त्यस्ततो वत्स आद्यतृतीयसंयुतः ॥११॥
सप्तमस्य द्वितीयोऽथ पञ्चमाद्यस्ततः परम्। आद्यद्वितीयसंयुक्त)स्तस्य पञ्चदशान्वितः ॥१२॥
द्वितीयस्य तृतीयोऽथ प्रथमस्य द्वितीययुक्। सप्तमाद्यं ततो वत्स पञ्चमान्त्यस्ततः परम् ॥१३॥
षष्ठान्तिमोऽथ नन्दीश आद्यत्रयोदशान्वितः। सप्तमस्य द्वितीयोऽथ आद्यपञ्चमसंयुतम् ॥१४॥
पञ्चमस्य तृतीयोऽथ आद्यसप्तमयोस्तथा। द्वितीयार्णसमायुक्तः सप्तमस्यादिमस्तथा ॥१५॥
अष्टमस्यादिमः पश्चात् प्रथमोपान्त्यसंयुतः। षष्ठस्य च चतुर्थोऽथ प्रथमैकादशान्वितः ॥१६॥
सप्तमस्य चतुर्थार्णः प्रोक्तो द्वात्रिंशदक्षरः। पुटितस्तारमायाभ्यां भवेत् षट्त्रिंशदक्षरः ॥१७॥
कथितो मन्त्रराजोऽयं वाङ्मोक्षफलदायकः। इति।

पञ्चमस्य तृतीयार्णो द, प्रथमो मन्त्रस्याद्यमक्षरमित्यर्थः। द्वितीयाद्यः ककारः, अष्टमस्य द्वितीयोऽर्णः ष, प्रथमस्य तृतीयार्णः इ, ताभ्यां युतस्तेन क्षि इति। चतुर्थान्त्यो णकारः, प्रथमस्य द्वितीयार्णयुत आकारेण युक्तस्तेन णा इति। षष्ठवर्गान्त्यो मकारः, आद्यषष्ठ ऊकारस्तद्युक्तस्तेन मू इति। पञ्चमाद्यस्तकारः, (सप्तमस्य द्वितीये रेफे आरूढस्तेन र्त। तथा तस्यैवादिमो यकारः, प्रथमस्यैकादशेनैकारेण युक्तस्तेन ये। पञ्चमाद्यस्तकारः), आद्यपञ्चम उकारस्तद्युक्तस्तेन तु इति। षष्ठवर्गतुरीयो भकारः, सप्तमाद्यो यकारः, प्रथमोपान्त्यो बिन्दुस्तद्युक्तश्च तेन भ्यं इति। सप्तमान्त्यो वकारः। चतुर्थाद्यो टकारः। षष्ठस्य पञ्चमो मकारः, आद्यषष्ठ ऊकारस्तद्युक्तस्तेन मू। सप्तमस्य तृतीयो

लकारः। पञ्चमान्त्यो नकारः, (आद्यवर्गतृतीयार्णसमेत इकारयुक्तस्तेन नि)। सप्तमान्त्यो वकारः, आद्यद्वितीय आकारस्तेन युक्तो वा इति। अष्टमस्य तृतीयः सकारः, प्रथमस्य तृतीय इकारस्तद्युक्तस्तेन सि। पञ्चमस्य पञ्चमो नकारः, आद्यैकादश एकारस्तद्युक्तस्तेन ने इति। पञ्चमस्य चतुर्थो धकारः, सप्तमाद्यो यकारः, आद्यद्वितीय आकारस्ताभ्यां युक्त स्तेन ध्या इति। पञ्चमान्त्यो नकारः, आद्यद्वादश ऐकारस्तेन युक्तो नै इति। द्वितीयाद्यः ककारः। पञ्चमान्त्यो नकारः, आद्यतृतीय ईकारस्तद्युक्तस्तेन नि इति। सप्तमस्य द्वितीयो रेफः। पञ्चमाद्यस्तकारः, आद्यद्वितीय आकारस्तद्युक्तस्तस्य आद्यवर्गस्य पञ्चदशो बिन्दुस्तद्युक्तस्तेन तां इति। द्वितीयतृतीयो गकारः, प्रथमस्य द्वितीय आकारस्तद्युतस्तेन गा इति। सप्तमाद्यो यकारः। पञ्चमान्त्यो नकारः। षष्ठान्तिमो मकारः, आद्यत्रयोदश ओकारस्तद्युक्तस्तेन मो इति। सप्तमस्य द्वितीयो रेफः, आद्यपञ्चम उकारस्तेन रु इति। पञ्चमस्य तृतीयो द, आद्यसप्तमयोर्द्वितीयार्णेन आकाररेफेण युक्तस्तेन द्रा इति। सप्तमस्यादिमो यकारः। अष्टमस्याद्यः शकारः, प्रथमोपान्त्यो बिन्दुस्तद्युक्तस्तेन शं इति। षष्ठस्य चतुर्थो भकारः। सप्तमस्य चतुर्थार्णो वकारः, प्रथमैकादशान्वित एकारेण युक्तस्तेन वे इति। तारमायाभ्यां पुटितः आदौ प्रणवस्तदनु हृल्लेखा। स्पष्टम् 'ॐह्रींदक्षिणामूर्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने। ध्यानैकनिरताङ्गाय नमो रुद्राय शम्भवेह्रींॐ।' तथा—

ऋषिः शुकः समुद्दिष्टश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम्। देवता जगतामादिर्दक्षिणामूर्तिरव्ययः ॥१८॥
प्रणवो बीजमित्युक्तं हृल्लेखा शक्तिरीरिता। विनियोगः समुद्दिष्टः पुरुषार्थचतुष्टये ॥१९॥
आदौ तु मूलमन्त्रेण करशुद्धिं समाचरेत्। रसनेत्राष्टकवसुबाणवह्निमितैः क्रमात् ॥२०॥
विभक्तैर्मन्त्रवर्णैस्तु तारमायादिकैः पुनः। षड्दीर्घभिन्नमायान्तैः षडङ्गानि प्रविन्यसेत् ॥२१॥

रसाः षट्। नेत्रं द्वयं। वसवोऽष्टौ। बाणाः पञ्च। वह्नयस्त्रयः।

मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रोत्रगण्डयुग्मे च नासिके। आस्यदोःसन्धिषु गले स्तनहृन्नाभिमण्डले ॥२२॥
कट्यां गुह्ये पुनः पादसन्धिष्वर्णान् प्रविन्यसेत्। व्यापकं तारमायाभ्यां विन्यसेद्गणनायक ॥२३॥
मूर्धादिपादपर्यन्तं ततो देवं विचिन्तयेत्। हिमाचलतटे रम्ये सिद्धकिन्नरसेविते ॥२४॥
विविधद्रुमशाखाभिः सर्वतो वारितातपे। सुपुष्पितलताजालैराश्लिष्टकुसुमद्रुमैः ॥२५॥
शिलाविवरनिर्गच्छन्निर्झरानिलशीतले। गायद्भृङ्गाङ्गनासङ्घैर्नृत्यद्बर्हिकदम्बकैः ॥२६॥
कूजत्कोकिलसङ्घातैर्मुखरीकृतदिङ्मुखे। परस्परविनिर्मुक्तमात्सर्यमृगसेविते ॥२७॥
आद्यैः शुकाद्यैर्मुनिभिरजस्रं समुपस्थिते। पुरन्दरमुखैर्देवैः सेवायातैर्निषेविते ॥२८॥
वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम्। गारुत्मतमयैः पत्रैर्निबिडैरुपशोभितम् ॥२९॥
नवरत्नमयाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम्। जलजैः स्थलजैः पुष्पैरामोदिभिरलङ्कृतम् ॥३०॥
गृणद्भिर्वेदशास्त्राणि शुकवृन्दैर्निषेवितम्। संसारतापविच्छेदकुशलच्छायमद्भुतम् ॥३१॥
विचिन्त्य तस्य मूलस्थे रत्नसिंहासने शुभे। आसीनममिताकल्पं शरच्चन्द्रनिभाननम् ॥३२॥
स्तूयमानं मुनिगणैर्दिव्यज्ञानाभिलाषिभिः। संस्मरेज्जगतामाद्यं दक्षिणामूर्तिमव्ययम् ॥३३॥
रजताद्रिप्रतीकाशं दुग्धफेनामलच्छविम्। चन्द्रखण्डलसद्रम्यजटामुकुटमण्डितम् ॥३४॥
वीरासने समासीनं नासालोकनतत्परम्। सुप्रसन्नमुखाम्भोजं नयनत्रयशोभितम् ॥३५॥
दक्षिणोर्ध्वकरे टङ्कं व्याख्यामुद्रामधःकरे। वामोर्ध्वहस्ते हरिणं दधानं तदधःकरम् ॥३६॥
वामजानुनि विन्यस्य निविष्टं शुभ्रपङ्कजे। कक्षावन्धविशेषोद्यत्फणिनाथैरलङ्कृतम् ॥३७॥
ध्यात्वैवं दक्षिणामूर्तिं मुनिवृन्दसमावृतम्। प्राक्प्रोक्ते पूजयेत् पीठे देवमावाह्य पूर्ववत् ॥३८॥
लिखेदष्टदलं पद्मं सर्वलक्षणसंयुतम्। अन्तर्बहिर्विभागेन कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ॥३९॥
चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम्। अस्मिन् पीठे यजेद् देवं प्राग्वदङ्गानि पूजयेत् ॥४०॥

प्रथमेऽष्टदले वत्स सनकं च सनन्दनम्। सनातनं चाथ सनत्कुमारं शुकमेव च ॥४१॥
जाबालिनं नारदं च व्यासमेतान् प्रपूजयेत्। (द्वितीयेऽनन्तसूक्ष्मादींस्तृतीये वृषभादिकान् ॥४२॥
वीथीद्वये लोकपालांस्तदस्त्राणि प्रपूजयेत्।) इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि शुकाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीदक्षिणामूर्तये देवतायै नमः। गुह्ये ॐबीजाय नमः। पादयोः ह्रींशक्तये नमः। इति विन्यस्य, मम चतुर्वर्गपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततो मूलमन्त्रेण करशुद्धिं कृत्वा, ॐह्रीं दक्षिणामूर्तये ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं तुभ्यं ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐह्रीं वटमूलनिवासिने ह्रूं शिखायै वषट्। ॐह्रीं ध्यानैकनिरताङ्गाय ह्रैं कवचाय हुं। ॐह्रीं नमो रुद्राय ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐह्रीं शम्भवे ह्रः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य, हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततः शिरसि दंनमः। भाले क्षिं नमः। दक्षनेत्रे णांनमः। वामे मूंनमः। दक्षश्रोत्रे र्तंनमः। वामे येंनमः। दक्षगण्डे तुंनमः। वामे भ्यंनमः। नासायां वंनमः। मुखे टंनमः। दक्षबाहुमूले मूंनमः। मध्ये लंनमः। मणिबन्धे निंनमः। अङ्गुलिमूले वांनमः। वामबाहुमूले सिंनमः। मध्ये नेंनमः। मणिबन्धे ध्यांनमः। अङ्गुलिमूले नैंनमः। गले कंनमः। स्तनयोः निंनमः। हृदि रंनमः। नाभौ तांनमः। कटौ गांनमः। गुह्ये यंनमः। दक्षोरुमूले नंनमः। जानुनि मोंनमः। गुल्फे रुंनमः। पादाङ्गुलिमूले द्रांनमः। वामोरुमूले यंनमः। जानुनि शंनमः। गुल्फे भंनमः। पादाङ्गुलिमूले वें नमः। इति विन्यस्य, (ॐह्रींमिति बीजद्वयेन मूर्धादिपादपर्यन्तं व्यापकं कृत्वा, ध्यात्वा प्राग्वच्चैवं पीठं संपूज्यावाह्य ध्यात्वावाहनादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्य) प्रथमाष्टदले देवाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन सनकाय नमः। सनन्दनाय नमः। सनातनाय नमः। सनत्कुमाराय नमः। शुकाय नमः। जाबालिने नमः। नारदाय नमः। व्यासाय नमः। द्वितीये अनन्ताद्यांस्तृतीये वृषभादिकानभ्यर्च्य प्राग्वल्लोकपालादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

इत्थं देवं समभ्यर्च्य प्रजपेदयुताष्टकम्। पुरश्चरणसिद्ध्यर्थं यथोक्तनियमान्वितः ॥४३॥
जुहुयात् तद्दशांशेन तिलैः क्षीरपरिप्लुतैः। पायसेनाथ वा नन्दिन् सघृतेन द्वयेन वा ॥४४॥
तर्पणादि ततः कुर्याद्यथोक्तेन विधानतः। एवं सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगानाचरेदथ ॥४५॥

दक्षिणामूर्ति मन्त्र—हे गणश्रेष्ठ नन्दिकेश्वर! अब मैं दक्षिणामूर्ति मन्त्र का विधान कहता हूँ। दक्षिणामूर्ति का छत्तीस अक्षरो का मन्त्र होता है—ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्तये तुभ्यं वटमूलनिवासिने ध्यानैकनिरतांगाय नमो रुद्राय शम्भवे ह्रीं ॐ। यह मन्त्रराज वाणी एवं मोक्ष प्रदान करने वाला है, इसके ऋषि शुक, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता दक्षिणामूर्ति हैं। प्रणव बीज एवं ह्रीं शक्ति है। पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। इसका विधान इस प्रकार है—

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि शुकाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्री दक्षिणामूर्तये देवतायै नमः, गुह्ये ॐ बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। तदनन्तर विनियोगः करके मूल मन्त्र से करशुद्धि करे।

षडङ्ग न्यास—ॐ ह्रीं दक्षिणामूर्तये ह्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं तुभ्यं ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रीं वटमूलनिवासिने ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रीं ध्यानैकनिरताङ्गाय ह्रैं कवचाय हुम्, ॐ ह्रीं नमो रुद्राय ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्रीं शम्भवे ह्रः अस्त्राय फट्। इसी प्रकार अंगूठे से तल तक हाथ में न्यास करे। हृदयादि षडङ्गों में भी न्यास करे। तब वर्णन्यास करे।

मन्त्रवर्ण न्यास—शिर पर दं नमः, भाल में क्षिं नमः, दक्ष नेत्र में णां नमः, वाम नेत्र में मूं नमः, दक्ष कर्ण में र्तं नमः, वाम कर्ण में यें नमः, दक्ष गण्ड में तुं नमः, वाम गण्ड में भ्यं नमः, नासा में वं नमः, मुख में टं नमः, दक्ष बाहुमूल में मूं नमः, बाहुओं के मध्य में लं नमः, मणिबन्ध में निं नमः, अंगुलिमूल में वां नमः, वाम बाहुमूल में सिं नमः, बाँयें बाहु के मध्य में नें नमः, मणिबन्ध में ध्यां नमः, अंगुलिमूल में नैं नमः, गले में कं नमः, स्तनों में निं नमः, हृदय में रं नमः, नाभि में तां नमः, कमर में गां नमः, गुह्य में यं नमः, दक्ष ऊरुमूल में नं नमः, जानुओं में मों नमः, गुल्फ में रुं नमः, पैर के अंगुलि

मूल में द्रां नमः, वाम ऊरुमूल में यं नमः, जानुओं में शं नमः, गुल्फ में भं नमः, पादाङ्गुलिमूल में वें नमः। इसके बाद ॐ-ह्रीं—इन दो बीजों से शिर से पैर तक व्यापक न्यास करके इस प्रकार ध्यान करे—

हिमाचलतटे रम्ये सिद्धकिन्नरसेविते। विविधद्रुमशाखाभिः सर्वतो वारितातपे।।
सुपुष्पितलताजालैराश्लिष्टकुसुमद्रुमैः । शिलाविवरनिर्गच्छन्निर्झरानिलशीतले ।।
गायद्भृङ्गाङ्गनासङ्घैर्नृत्यद्बर्हिकदम्बकैः । कूजत्कोकिलसङ्घातैर्मुखरीकृतदिङ्मुखे ।।
परस्परविनिर्मुक्तमात्सर्यमृगसेविते। आद्यैः शुकाद्यैर्मुनिभिरजस्रं समुपस्थिते।।
पुरन्दरमुखैर्देवैः सेवायातैर्निषेविते। वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम्।।
गारुत्मतमयैः पत्रैर्निबिडैरुपशोभितम्। नवरत्नमयाकल्पैर्लम्बमानैरलङ्कृतम्।।
जलजैः स्थलजैः पुष्पैरामोदिभिरलङ्कृतम्। गृणद्भिर्वेदशास्त्राणि शुकवृन्दैर्निषेवितम्।।
संसारतापविच्छेदकुशलच्छायमद्भुतम्। विचिन्त्य तस्य मूलस्थे रत्नसिंहासने शुभे।।
आसीनममिताकल्पं शरच्चन्द्रनिभाननम्। स्तूयमानं मुनिगणैर्दिव्यज्ञानाभिलाषिभिः।।
संस्मरेज्जगतामाद्यं दक्षिणामूर्तिमव्ययम्। रजताद्रिप्रतीकाशं दुग्धफेनामलच्छविम्।।
चन्द्रखण्डलसद्रम्यजटामुकुटमण्डितम्। वीरासने समासीनं नासालोकनतत्परम्।।
सुप्रसन्नमुखाम्भोजं नयनत्रयशोभितम्। दक्षिणोर्ध्वकरे टङ्कं व्याख्यामुद्रामधःकरे।।
वामोर्ध्वहस्ते हरिणं दधानं तदधःकरम्। वामजानुनि विन्यस्य निविष्टं शुभ्रपङ्कजे।।
कक्षावन्धविशेषोद्यत्फणिनाथैरलङ्कृतम्।

इस प्रकार ध्यान करके पूर्वोक्त पीठ पर देव का आवाहन करके पूजन करे। पूजायन्त्र में पहले तीन अष्टदल कमल बनाकर उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनाकर पूजा करे। पूर्ववत् केसर में षडङ्ग पूजा करे। प्रथम अष्टदल में देव के आगे से दक्षिणक्रम से इनकी पूजा करे—सनकाय नमः, सनन्दनाय नमः, सनातनाय नमः, सनत्कुमाराय नमः, शुकाय नमः, जाबालिने नमः, नारदाय नमः, व्यासाय नमः।

द्वितीय अष्टदल में अनन्तादि की, तृतीय में वृषभादि की पूजा करे। चतुरस्र में लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करने के पश्चात् पूर्ववत् शेष विधियाँ सम्पन्न करके पूजा समाप्त करे।

देव का इस प्रकार से अर्चन करके पुरश्चरण के लिये नियमपूर्वक अस्सी हजार मन्त्रजप करे। दशांश हवन दूधमिश्रित तिल या घीमिश्रित पायस से या दोनों से करे। यथोक्त विधान से तर्पण करे; तब सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे।

काम्यप्रयोगः

मासमेकं च भिक्षाशी सहस्रं साष्टकं जपेत्। मन्त्रं प्रतिदिनं मन्त्री वैदुष्यं लभते ध्रुवम्।।४६।।
मूलमन्त्रेण पुटितां मातृकां मन्त्रवित्तमः। जलं स्पृष्ट्वा त्रिधा जप्य पिबेदब्दाद्भवेद्ध्रुवम्।।४७।।
अखिलानां च शास्त्राणां व्याख्याता च महाकविः। गजपिप्पलिकाब्राह्मीवचासर्षपसैन्धवैः ।।४८।।
सुगन्धिद्रव्यसंयुक्तैर्नन्दिकेश्वर कल्कितैः। तत्कल्कसहिते ब्राह्मीरसे पक्वं च गोघृतम्।।४९।।
अनेन मन्त्रवर्येण प्रजप्तमयुतावधि। एतत् संसेवितं कीर्तिकविताश्रीधृतिप्रदम्।।५०।।
कान्तिरक्षायुष्करं च गदितं सर्वसिद्धिकृत्। इति।

भिक्षान्न खाकर एक महीने तक प्रतिदिन एक हजार आठ जप करे तो साधक को वैदुष्य-लाभ होता है। मूल मन्त्र से पुटित मातृका के तीन बार जप से मन्त्रित जल साल भर पीने से अवश्य ही वह सभी शास्त्रों का व्याख्याता एवं महाकवि होता है। गजपीपल, ब्राह्मी, वच, सरसों, सेन्धा नमक और सुगन्धि द्रव्य को मिलाकर पीसे। उस कल्क को ब्राह्मीरस और गोघृत में पकावे। इसे दश हजार जप से मन्त्रित करे। इसके बाद इसके सेवन से कीर्ति, वाणी, श्री, धृति- कान्ति, रक्षा एवं आयु की वृद्धि होती है। इसे सर्वसिद्धिप्रद कहा गया है।

मन्त्रान्तरोद्धारः

तथा मन्त्रान्तरम्—

त्रयोदशार्णमुद्धृत्य प्रथमस्य गणाधिप। तस्य पञ्चदशार्णेन संयुक्तं पञ्चमस्य तु॥१॥
पञ्चमार्णं ततो वत्स षष्ठस्यान्तं ततो वदेत्। आद्यत्रयोदशार्णेन संयुक्तं तदनन्तरम्॥२॥
(षष्ठस्य तु चतुर्थोऽर्णो द्वितीयस्य तृतीयकः। सप्तमान्त्यं तथोच्चार्य पञ्चमाद्यं समुच्चरेत्॥३॥
आद्यद्वादशसंयुक्तं पूर्वमन्त्रादिवर्णतः। षडक्षराणि चोच्चार्य षष्ठस्यान्त्यं तथोच्चरेत्॥४॥
अष्टमान्त्यं सप्तमाद्यसमेतं नन्दिकेश्वर। प्रथमोपान्त्यसहितं ततः षष्ठस्य पञ्चमम्॥५॥
आद्यैकादशसंयुक्तं पञ्चमस्य चतुर्थकम्। आद्यद्वितीयोपान्त्याभ्यां संयुक्तं तदनन्तरम्॥६॥)
षष्ठस्याद्यं सप्तमस्य द्वितीयेन समन्वितम्। सप्तमाद्यं ततो वत्स तृतीयस्य द्वितीयकम्॥७॥
सघनं चाष्टमस्याथ तृतीयं सप्तमान्त्ययुक्। आद्यद्वितीययुक्तं च ततोऽन्त्यस्यान्त्यमक्षरम्॥८॥
आद्यद्वितीयसंयुक्तं मन्त्रो द्वाविंशदक्षरः। इति।

अस्यार्थः—प्रथमस्य त्रयोदशार्ण ओकारः, तस्य प्रथमस्य पञ्चदशार्णो बिन्दुस्तद्युक्तस्तेन ॐ इति। पञ्चमस्य पञ्चमार्णो नकारः। षष्ठस्यान्तो मकारः, आद्यत्रयोदशार्ण ओकारस्तेन मो इति। षष्ठस्य चतुर्थार्णो भकारः। द्वितीयस्य तृतीयो गकारः। सप्तमान्त्यं वकारः। पञ्चमाद्यस्तकारः, आद्यैकादश एकारस्तद्युक्तं तेन ते इति। पूर्व-मन्त्रादितः। षडक्षराणि (पूर्वोद्धृतात्रिंशदक्षरमन्त्रस्य प्रणवमायाविधुरस्य आदितो दकारमारभ्य षडक्षराणि) दक्षिणामूर्तये इत्येवंरूपाणि। षष्ठस्यान्तं मकारः। अष्टमान्त्यं हकारः, सप्तमाद्यो यकारः, प्रथमोपान्त्यो बिन्दुस्ताभ्यां युक्त ह्यं इति। षष्ठपञ्चमो मकारः, (आद्यैकादश ए तद्युक्तस्तेन मे इति)। पञ्चमस्य चतुर्थो धकारः, आद्यद्वितीय आ, उपान्त्यो बिन्दुस्ताभ्यां युक्तस्तेन धां इति। षष्ठस्याद्यं पकारः, सप्तमस्य द्वितीयो रेफस्तद्युक्तस्तेन प्र इति। सप्तमाद्यं यकारः। तृतीयद्वितीयं छकारः, सघनं सप्रयत्नोच्चार्यं द्वित्वद्योतकोच्चार्यमित्यर्थः, तेन च्छ इति। अष्टमस्य तृतीयः सकारः सप्तमान्त्यं वकारः, आद्यद्वितीय आकारस्तद्युक्तस्तेन स्वा इति। अन्त्यस्याष्टमस्यान्त्यं हकारः, आद्यद्वितीय आकारस्तेन युक्तं हा इति। स्पष्टं तु 'ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा'। अत्र केचिदस्मिन्मन्त्रे मेधामिति पदं त्यक्त्वा तत्स्थाने प्रज्ञामिति पदं वदन्ति। 'मेधास्थाने सूरयोऽन्ये प्रज्ञापदमथोचिरे' इति मन्त्रतन्त्रप्रकाशवचनात्। तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्रं छन्द ईरितम्। देवता श्रीमहादेवो दक्षिणामूर्तिसंज्ञकः॥९॥
प्रणवः प्रोच्यते बीजं स्वाहा शक्तिरिति स्मृता। मेधापदं कीलकं स्यात् पुरुषार्थे नियोज्यते॥१०॥
ताररुद्धस्वरैर्दीर्घैः षड्भिरङ्गानि कल्पयेत्। शिरोभ्रूमध्यवक्त्रेषु हृदि नाभौ च गुह्यके॥११॥
जान्वोश्चरणयोर्न्यस्येत् पदानि क्रमशः सुधीः। मूर्ध्नि पश्चाल्ललाटे च चक्षुषोः श्रोत्रयोस्तथा॥१२॥
नासापुटद्वये पश्चादोष्ठयोर्दन्तयोरपि। जिह्वायां चिबुकाग्रे च अंसयोर्युगले गले॥१३॥
बाह्वोश्च हृदये चैव नाभौ गुह्ये गुदे तथा। ऊर्वोर्जान्वोश्च जङ्घायां पादपाणियुगे तथा॥१४॥
सर्वाङ्गेषु च विन्यस्येन्मन्त्रवर्णानतन्द्रितः। एवं न्यस्ततनुर्मन्त्री ध्यायेद् देवमनन्यधीः॥१५॥
अकलङ्कशरच्चन्द्रनिभमम्भोजमध्यगम्। गङ्गाधरं लसच्चन्द्रकलोल्लासितशेखरम्॥१६॥
प्रसन्नवदनाम्भोजं त्रिनेत्रं सस्मिताननम्। दिव्याम्बरधरं दिव्यगन्धमाल्यैरलङ्कृतम्॥१७॥
नानारत्नमयाकल्पमहिकक्ष्याविभूषितम्। मुक्ताक्षमालां दक्षोर्ध्वे ज्ञानमुद्रामधःकरे॥१८॥
वामोर्ध्वे च सुधाकुम्भं पुस्तकं तदधःकरे। दधानं चिन्तयेन्नन्दिन् मुनिवृन्दनिषेवितम्॥१९॥
सहस्रारशिरःपीठलसद्वामाङ्घ्रिपङ्कजम्। एवं ध्यात्वा गणश्रेष्ठ पूर्वोक्ते शैवपीठके॥२०॥
पद्मत्रयसमोपेते भूगृहत्रितयान्विते। चतुर्द्वारसमायुक्ते देवमावाह्य पूजयेत्॥२१॥
(आदावङ्गानि संपूज्य केसरेषु यथा पुरा। स्वरान् षोडश तत्रैवं द्वन्द्वशः केसरस्थितान्॥२२॥

यजेद्वर्गाष्टकं पश्चादष्टपत्रेषु मन्त्रवित्। द्वितीयेऽष्टदले वत्स सरस्वत्यादिकान् यजेत् ॥२३॥)
सरस्वती चतुर्वक्त्रः सनकश्च सनन्दनः। सनातनस्ततो वत्स सनत्पूर्वः कुमारकः ॥२४॥
शुको व्यासश्च संपूज्य तृतीयेऽष्टदले पुनः। पार्वती सुभगा भद्रा क्रिया शान्तिस्तथैव च ॥२५॥
रौद्री काली वल्लभेति दक्षिणामूर्तिशक्तयः। चतुरस्रचतुष्कोणेष्वग्र्यादीशान्तमर्चयेत् ॥२६॥
सिद्धगन्धर्वयोगीन्द्रविद्याधरगणानपि । इन्द्रादींश्च तदस्त्राणि प्राग्वद्वीथीद्वये यजेत् ॥२७॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलमन्त्रेण प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीदक्षिणामूर्तये देवतायै नमः। गुह्ये प्रणवबीजाय नमः। पादयोः स्वाहाशक्तये नमः। नाभौ मेधाकीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्ध्यर्थे विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततः—ॐआंॐ हृदयाय नमः। ॐईंॐ शिरसे स्वाहा। ॐऊंॐ शिखायै वषट्। ॐऐंॐ कवचाय हुं। ॐऔंॐ नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐअःॐ अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततः—शिरसि ॐनमः। भ्रूमध्ये नमो नमः। वक्त्रे भगवते नमः। हृदि दक्षिणामूर्तये नमः। नाभौ मह्यं नमः। गुह्ये मेधां नमः। जान्वोः प्रयच्छ नमः। पादयोः स्वाहा नमः। शिरसि ॐनमः। ललाटे नंनमः। नेत्रयोः मोंनमः। कर्णयोः भं नमः। नासापुटद्वये गंनमः। ओष्ठयोः वंनमः। दन्तपङ्क्त्योः तेंनमः। जिह्वायां दंनमः। चिबुकाग्रे क्षिंनमः। अंसयोः णांनमः। गले मूंनमः। बाह्वोः र्तंनमः। हृदये येंनमः। नाभौ मंनमः। गुह्ये ह्यंनमः। गुदे मेंनमः। ऊर्वोः धांनमः। जान्वोः प्रंनमः। जङ्घयोः यंनमः। पादयोः च्छंनमः। पाण्योः स्वांनमः। सर्वाङ्गे हां नमः। इति विन्यस्य, प्राग्वद् ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्य, प्रथमाष्टदलकेसरेषु, अंआं नमः। इंईं नमः। उंऊं नमः। ऋंॠं नमः। ऌंॡं नमः। एंऐं नमः। ओं औं नमः। अं अः नमः। इति प्रादक्षिण्येन देवाग्रमारभ्य संपूज्य, तद्दलेषु कंखंगंघंङं नमः। चंछंजंझंञं नमः। टंठंडंढंणं नमः। तंथंदंधंनं नमः। पंफंबंभंमं नमः। यंरंलंवं नमः। शंषंसंहं नमः। ळंक्षं नमः इति संपूज्य, द्वितीयाष्टदले—सरस्वत्यै नमः। ब्रह्मणे नमः। सनकाय नमः। सनन्दनाय नमः। सनातनाय नमः। सनत्कुमाराय नमः। शुकाय नमः। व्यासाय नमः। तृतीयाष्टदले तथैव—पार्वत्यै नमः। सुभगायै नमः। भद्रायै नमः। क्रियायै नमः। शान्त्यै नमः। रौद्र्यै नमः। काल्यै नमः। वल्लभायै नमः। इति संपूज्य, (चतुरस्रचतुष्कोणयोरन्तरालस्थकोणचतुष्के अग्नेयादि सिद्धगणेभ्यो नमः। गन्धर्वगणेभ्यो नमः। योगीन्द्रगणेभ्यो नमः। विद्याधरगणेभ्यो नमः। इति संपूज्य), प्राग्वल्लोकपालार्चादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

एकलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं हुनेत् तथा। क्षीरप्लुतैस्तिलैः पद्मैः पायसैर्वा घृतप्लुतैः ॥२८॥
तर्पणादि ततः कुर्याद्यथोक्तविधिना सुधीः। मन्त्रवर्यं प्रसाध्यैवं काम्यकर्माणि साधयेत् ॥२९॥

दक्षिणामूर्ति मन्त्रान्तर—दक्षिणामूर्ति का एक अन्य बाईस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा। मन्त्रतन्त्रप्रकाश के अनुसार कुछ विद्वान् 'मेधा' के स्थान पर 'प्रज्ञा' लगाकर जप करते हैं। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, देवता दक्षिणामूर्ति, प्रणव बीज, स्वाहा शक्ति एवं मेधा कीलक कहा गया है। धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की प्राप्ति हेतु इसका विनियोग किया जाता है।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदये श्रीदक्षिणामूर्ति देवतायै नमः, गुह्ये ॐ बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः, नाभौ मेधा कीलकाय नमः, मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः।

हृदयादि न्यास—ॐ आं ॐ हृदयाय नमः, ॐ ईं ॐ शिरसे स्वाहा, ॐ ऊं ॐ शिखायै वषट्, ॐ ऐं ॐ कवचाय हुं, ॐ औं ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ अः ॐ अस्त्राय फट्। इन्हीं षडङ्ग मन्त्रों से अंगूठे से करतल तक न्यास करके इन्हीं से हृदयादि न्यास भी करे।

मन्त्र पद न्यास—शिर पर ॐ नमः। भ्रूमध्य में नमो नमः। मुख में भगवते नमः। हृदय में दक्षिणामूर्तये नमः। नाभि मे मह्यं नमः। गुह्य में मेधां नमः। घुटनों में प्रयच्छ नमः। पैरों में स्वाहा नमः।

मन्त्र वर्ण न्यास—शिर पर ॐ नमः, ललाट में नं नमः, नेत्रों में मों नमः, कर्णो में भं नमः, नासापुट में गं नमः, ओष्ठों में वं नमः, दन्तपंक्तियों में ते नमः, जिह्वा में दं नमः, चिबुक में क्षिं नमः, कन्धों में णां नमः, गले में मूं नमः, बाहु में र्तं नमः, हृदय में यें नमः, नाभि में मं नमः, गुह्य में ह्यं नमः, गुदा में में नमः, ऊरुओं में धां नमः, जानुओं में प्रं नमः, जङ्घा में यं नमः, पैरों में च्छं नमः, हाथों में स्वां नमः, सर्वांग में हां नमः। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

अकलङ्कशरच्चन्द्रनिभमम्भोजमध्यगम्। गङ्गाधरं लसच्चन्द्रकलोल्लासितशेखरम्।।
प्रसन्नवदनाम्भोजं त्रिनेत्रं सस्मिताननम्। दिव्याम्बरधरं दिव्यगन्धमाल्यैरलङ्कृतम्।।
नानारत्नमयाकल्पमहिकक्ष्याविभूषितम्। मुक्ताक्षमालां दक्षोर्ध्वे ज्ञानमुद्रामधःकरे।।
वामोर्ध्वे च सुधाकुम्भं पुस्तकं तदधःकरे। दधानं चिन्तयेन्नन्दिन् मुनिवृन्दनिषेवितम्।।
सहस्रारशिरःपीठलसद्वामाङ्घ्रिपङ्कजम्।

ध्यान के बाद पुष्पोपचार तक पूजा करे। मध्य में अंग पूजा करे। पूजन यन्त्र तीन अष्टदल के बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र बनाकर आवाहन-पूजन करे। प्रथम अष्टदल के केसरों में अं आं नमः। इं ईं नमः, उं ऊं नमः, ऋं ॠं नमः, ऌं ॡं नमः, एं ऐं नमः, ओं औं नमः, अं अः नमः—इस प्रकार देवता के आगे से प्रारम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से पूजा करे। उसके दलो में कं खं गं घं ङं नमः, चं छं जं झं ञं नमः, टं ठं डं ढं णं नमः, तं थं दं धं नं नमः, पं फं बं भं मं नमः, यं रं लं वं नमः, शं षं सं हं नमः, ळं क्षं नमः से पूजा करे। द्वितीय अष्टदल में सरस्वत्यै नमः, ब्रह्मणे नमः, सनकाय नमः, सनन्दनाय नमः, सनातनाय नमः, सनत्कुमाराय नमः, शुकाय नमः, व्यासाय नमः से पूजा करे। तृतीय अष्टदल में पार्वत्यै नमः, सुभगायै नमः, भद्रायै नमः, क्रियायै नमः, शान्त्यै नमः, रौद्र्यै नमः, काल्यै नमः एवं वल्लभायै नमः से पूजा करे।

चतुरस्र के कोणों एवं अन्तराल के कोणों में आग्नेयादि क्रम से सिद्धगणेभ्यो नमः, गन्धर्वगणेभ्यो नमः, योगीन्द्रगणेभ्यो नमः, विद्याधरगणेभ्यो नमः से पूजन करे। इसके बाद पूर्ववत् इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके वज्रादि दश आयुधों की पूजा करने के पश्चात् शेष पूजा करके समाप्त करे।

एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन दूधसिक्त तिल या कमल या घृतमिश्रित पायस से करे। यथोक्त विधि से तर्पणादि करे। तब इस सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मों का साधन करे।

काम्यप्रयोगविधिः

कण्ठमात्रोदके स्थित्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रकम्। प्रत्यहं मण्डलादर्वाक् कवीनामग्रणीर्भवेत्।।३०।।
पञ्चविंशतिधा जप्तमन्त्रं पायसमेव च। भक्षितं शीर्षसंसिक्तं परं वाक्सिद्धिकारकम्।।३१।।
सर्वापन्नाशनं चैव सर्वरोगविनाशनम्। त्रयोदश्यां प्रदोषेषु सोपवासः शिवालयम्।।३२।।
मौनी गत्वार्चयेद् देवं विद्यायुर्वृद्धयेऽनघ। आज्येन पायसान्नेन वाक्कामः सर्वदा हुनेत्।।३३।।
श्रीकामः पद्मैर्बिल्वैर्वा नन्द्यावर्तैः सदा हुनेत्। आज्यक्षीराक्तदूर्वाभिर्हुत्वा दद्याच्च दक्षिणाम्।।३४।।
गुरवे गां च महिषीं तस्य मृत्युभयं कुतः। आदित्याभिमुखो भूत्वा दद्याज्जलाञ्जलीन् दश।।३५।।
मूलमन्त्रेण मन्त्रज्ञः सर्वदोषैर्न बाध्यते। प्रातः सायं च सप्तैव मध्याह्ने चैकविंशतिम्।।३६।।
दुग्धबुद्ध्या जलैर्देवं तर्पयेदर्चयेद्धुनेत्। पलाशपुष्पैरचिरात् कविर्होमादिभिर्भवेत्।।३७।।
गौर्य्या पार्श्वस्थया सार्धं श्रीकामश्चिन्तयेत् प्रभुम्। अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं भूयसीं श्रियमाप्नुयात्।।३८।।
भुञ्जानः प्रयतो मन्त्री गोमूत्रे पक्वमोदनम्। भिक्षान्नमथवा मन्त्रमयुतद्वितयं जपेत्।।३९।।
अश्रुतादृष्टशास्त्राणि व्याचष्टे नात्र संशयः।

चालीस दिनों तक प्रतिदिन कण्ठ तक जल में खड़े होकर एक हजार मन्त्र जप करे तो साधक कवियों में अग्रणी

होता है। पच्चीस जप से मन्त्रित अन्न या पायस खाने से वाक्सिद्धि मिलती है। साथ ही सभी पापों का नाश तथा सभी रोगों का नाश होता है। त्रयोदशी के प्रदोषकाल मे उपवास रहकर शिवालय में मौन होकर जाय और देव का अर्चन करे तो विद्या एवं आयु की वृद्धि होती है। वाणी की कामना से गोघृत-मिश्रित पायस से हवन करे। श्री की कामना से कमल, बेल या नन्द्यावर्त से सदा हवन करे। गोघृत एवं दूध से अक्त दूर्वा से हवन करके गुरु को गाय एवं भैंस की दक्षिणा प्रदान करे तो मृत्युभय नहीं रहता। सूर्य की ओर मुख करके दश अंजली जल मूल मन्त्र से प्रदान करे तो उसे कोई दोष बाँधा नही करता। सबेरे-शाम सात-सात और मध्याह्न में इक्कीस मन्त्रजप से जल को दूध मानकर तर्पण-अर्चन करे एवं हवन पलाश फूलों से करे तो थोड़े ही दिनों में साधक कवि हो जाता है। शिव के पार्श्व में गौरी बैठी हैं—ऐसा चिन्तन करके श्री की कामना से अर्चन करे और दश हजार मन्त्र जप करे तो महती श्री की प्राप्ति होती है। संयत होकर गोमूत्र में पका भिक्षान्न में प्राप्त चावल का भात खाकर बीस हजार मन्त्र जप करे तो अश्रुत एवं अदृष्ट शास्त्रों की भी व्याख्या करने में समर्थ होता है।

दक्षिणामूर्तियन्त्रम्

पद्मं दशदलं कृत्वा तारं तत्कर्णिकान्तरे ॥४०॥
साध्याख्याकर्मसंयुक्तं विलिखेन्नन्दिकेश्वर। पत्रेषु मन्त्रसंभूतानर्णान् द्विर्द्विर्लिखेत् क्रमात् ॥४१॥
अन्त्यमन्त्ये समालिख्य वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः। यन्त्रं श्रीदक्षिणामूर्तेः साधितं विधिवन्नृणाम् ॥४२॥
अपस्मारग्रहादीनां नाशनं धारणाद्भवेत्। इति।

अस्यार्थः—दशदलं पद्मं कृत्वा तत्कर्णिकायां प्रणवं विलिख्य, तन्मध्ये 'देवदत्तं रक्ष रक्ष' इति साध्यनाम विलिख्य, तत्पत्रेषु द्विर्द्विर्मन्त्रवर्णानालिख्यान्त्यदले वर्णत्रयं लिखित्वा, बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा तयोरन्तरालवीथ्यां प्रागादिप्रादक्षिण्येनाकारादिक्षकारान्तां सबिन्दुकां मातृकां विलिखेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। तथा—

पद्ममष्टदलं कृत्वा मध्ये साध्यं समालिखेत्। किञ्जल्केषु स्वरान् नन्दिन् द्वन्द्वशस्तु समालिखेत् ॥४३॥
तारमाद्यदले नन्दिन् वर्णत्रयविभागशः। आलिख्य विलिखेत् पश्चाद्वर्णत्रयविभागतः ॥४४॥
शिष्टपत्रेषु मन्त्रस्य शिष्टवर्णान् समालिखेत्। बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा अन्तराले तयोर्लिखेत् ॥४५॥
कादिक्षान्तान् सबिन्दूंश्च बहिर्भूविम्बमालिखेत्। प्रधानदिक्षु तस्याथ सप्तमान्त्यं समालिखेत्॥४६॥
प्रथमोपान्त्यसंयुक्तं चतुर्थं स्याद् द्वितीयकम्। कोणेषु विलिखेच्चैतद्यन्त्रं सर्वार्थसाधकम् ॥४७॥
पुत्रपौत्रप्रदं नृणामायुःश्रीविजयप्रदम्। कृत्यापस्मारभूतादिनाशनं सर्वकामदम् ॥४८॥ इति।

अस्यार्थः—अष्टदलपद्मं कृत्वा तत्कर्णिकायां ससाध्यं नाम समालिख्य किञ्जल्केषु द्विशः स्वरान् सबिन्दूनालिख्य, प्रथमदले प्रणवं अकार-उकारमकारभेदेन विभज्य विलिख्य, सप्तसु दलेषु मन्त्रस्यैकविंशतिवर्णांस्त्रिशस्त्रिशः समालिख्य वृत्तान्तरालवीथ्यां कादिवर्णानालिख्य भूपुरस्य दिक्षु च कोणेषु वमिति विलिखेत्। एतदुक्तफलदं भवति।

दक्षिणामूर्ति यन्त्र—दश दल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में ॐ के मध्य में 'देवदत्तं रक्ष रक्ष'—इस प्रकार साध्य नाम लिखे। उसके दलों में मन्त्र के दो-दो वर्णों को लिखे। अन्तिम दल में तीन अक्षर लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनके अन्तराल की वीथि में पूर्व से प्रादक्षिण्य क्रम से अं से क्षं तक की मातृकाओं को लिखे। दक्षिणामूर्ति के इस यन्त्र को साधित कर धारण करने से अपस्मार और ग्रहों का कुप्रभाव नष्ट होता है।

अन्य यन्त्र—पहले अष्टदल कमल बनावे। उसकी कर्णिका में साध्य का नाम लिखे। किंजल्क में दो-दो स्वरों को लिखे। अष्टदल के प्रथम दल में अ उ म लिखे। शेष सात दलों मे मन्त्र के शेष इक्कीस वर्णो मे से तीन-तीन वर्णो को लिखे। वृत्तों के अन्तराल की वीथि में कं से क्षं तक के वर्णो को लिखे। भूपुर की पूर्वादि दिशाओं में और कोणों में वं लिखे। यह यन्त्र सर्वार्थ-साधक होता है। साथ ही मनुष्यों को पुत्र-पौत्र-श्री एवं विजय-प्रदायक तथा कृत्या-अपस्मार-भूतादि का विनाशक एवं सर्वकामप्रद होता है।

नवाक्षरविधानम्

तथा नन्दिकेश्वरमते मन्त्रान्तरम्—

श्रृणु नन्दिन् प्रवक्ष्यामि मन्त्रमन्यन्नवाक्षरम्। देवस्य दक्षिणामूर्तेः सर्वज्ञत्वप्रदायकम् ॥१॥
आद्यत्रयोदशार्णं तु तस्य पञ्चदशान्वितम्। उद्धृत्य पुनराद्यस्य प्रथमार्णं समुद्धरेत् ॥२॥
स एव प्रथमवर्गस्य पञ्चदशसमन्वितः। पञ्चाक्षरमनुं पश्चादाद्यवर्णद्वयं पुनः ॥३॥
व्युत्क्रमेण वदेन्नन्दिन् मन्त्रः प्रोक्तो नवाक्षरः।

आद्यत्रयोदशार्ण ओकारः, तस्य पञ्चदशो बिन्दुस्तेन प्रणवो जातः। आद्यस्य प्रथमार्णोऽकार, स पञ्चदशार्णेन बिन्दुना समन्वितः तेन अं इति। पञ्चाक्षरमनुः पूर्वोक्तशिवपञ्चक्षरः। आद्यवर्णद्वयं प्रणवांकारौ व्युत्क्रमेण अंकारप्रणवक्रमेण। तथा—

ऋषिः शुकः समाख्यातोऽनुष्टुप् छन्द उदाहृतम्। देवता जगतामादिर्दक्षिणामूर्तिरव्ययः ॥४॥
तारेण हृदयं प्रोक्तमंकारेण शिरः स्मृतम्। शिखा नमःपदेन स्याच्छिवाय कवचं मतम् ॥५॥
अंकारेण च नेत्रं स्यादस्त्रं तारेण विन्यसेत्।

ध्यानम्—

मुद्रापुस्तकवह्निनागविलसद्बाहुं प्रसन्नाननं मुक्ताहारविभूषणं मणिरुचा भास्वत्किरीटोज्ज्वलम्।
अज्ञानापहमादिमादिमगिरामर्थं भवानीपतिं न्यग्रोधोपनिवासिनं परगुरुं ध्यायेदभीष्टाप्तये ॥६॥
इति ध्यात्वा यजेद्देवं शैवे पीठे पुरोदिते। पञ्चाक्षरोक्तविधिना पुरश्चर्यादिकं तथा ॥७॥
एवं यो भजते मन्त्रं सर्वज्ञो भवति ध्रुवम्। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातरुत्थानादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि शुकाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीदक्षिणामूर्तये देवतायै नमः। इति विन्यस्य, प्राग्वद्विनियोगमुक्त्वा, ॐ हृदयाय नमः। अं शिरसे स्वाहा। नमः शिखायै वषट्। शिवाय कवचाय हुं। अं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा ध्यानमानसपूजान्ते पञ्चाक्षरवत् सर्वं कुर्यात्। तथा—

आद्यद्वादशवर्णं तु तस्योपान्त्येन संयुतम्। पञ्चमं पञ्चमस्याथ षष्ठस्यापि च पञ्चमम् ॥१॥
प्रथमस्यान्त्यसंयुक्तं द्वितीयप्रथमं ततः। सप्तमस्य तृतीयस्थं प्रथमस्य तुरीयुक् ॥२॥
प्रथमोपान्त्ययुक्तश्च अष्टमस्याद्यमक्षरम्। तृतीयोपेतमाद्यस्य सप्तमस्य तुरीयकम् ॥३॥
आद्यद्वितीयसंयुक्तं सप्तमस्याद्यमक्षरम्। अष्टमस्य तृतीयं तु आद्योपान्त्याद्यसंयुतम् ॥४॥
तदन्त्यसहितं नन्दिन् ताराद्योऽयं नवाक्षरः। तव स्नेहान्मया नन्दिन् कथितः सर्वसिद्धिदः ॥५॥

आद्यद्वादश ऐ, तस्योपान्त्यो बिन्दुस्तेन युक्त ऐं इति। पञ्चमस्य पञ्चमो नकारः। षष्ठपञ्चमं मकारः, प्रथमोपान्त्यो विसर्गस्तद्युक्तस्तेन मः। द्वितीयप्रथमं क, सप्तमस्य तृतीयस्थं लकारोपरि स्थितं, प्रथमस्य तुरीय ईकारः, प्रथमोपान्त्यो बिन्दुस्तेनापि युक्तम्, एतेन कामबीजमुद्धृतम्। अष्टमस्याद्यं शकारः, आद्यस्य तृतीयं इकारस्तेन शि। सप्तमस्य तुरीयं वकारः, आद्यद्वितीय आकारस्तेन वा। सप्तमस्याद्यं यकारः। अष्टमस्य तृतीयं सकारः आद्योपान्त्याद्य औ, तदन्त्यो विसर्गः, ताभ्यां युक्तस्तेन सौः इति। ताराद्यः प्रणवाद्यः। तथा—

मुन्याद्याः पूर्वमुद्दिष्टाः पदैः षड्भिः षडङ्गकम्। ध्यायेत् पूर्ववद्देवेशं वामार्धदयितं शिवम् ॥६॥
यजेत् पूर्वोदिते पीठे पञ्चाक्षरविधानतः। पुरश्चरणकृत्यं च पूर्वोक्तं नन्दिकेश्वर ॥७॥
पूर्वमन्त्रोदितान् कुर्यात् प्रयोगान् साधकोत्तमः।

पूर्वोक्तमिति पञ्चाक्षरोक्तम्। पूर्वमन्त्रोदितान् दक्षिणामूर्तिप्रकरणोदितान्। ओं हृत्। ऐं शिरः। नमः शिखा।

क्लीं कवचं। शिवाय नेत्रं। सौः अस्त्रं। अन्यत् सुगमम्। तथा—

दक्षिणामूर्तये प्रोक्त्वा विद्महे तु ततो वदेत्। ध्यानस्थिताय धीशब्दं महि तन्नो वदेत् ततः ॥८॥
धीरः प्रचोदयादेषा गायत्री नन्दिकेश्वर। इति।

नवाक्षर मन्त्र—शिव का नवक्षर मन्त्र है—ॐ अं नमः शिवाय अं ॐ। इसके ऋषि शुक, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता अविनाशी दक्षिणामूर्ति हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि शुकाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीदक्षिणामूर्तये देवतायै नमः। इस प्रकार न्यास कर पूर्ववत् विनियोग करे।

षडङ्ग न्यास—ॐ हृदयाय नमः। अं शिरसे स्वाहा। नमः शिखायै वषट्। शिवाय कवचाय हुं। अं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

मुद्रापुस्तकवह्निनागविलसद्बाहुं प्रसन्नाननं मुक्ताहारविभूषणं मणिरुचा भास्वत्किरीटोज्ज्वलम्।
अज्ञानापहमादिमादिमगिरामर्थं भवानीपतिं न्यग्रोधोपनिवासिनं परगुरुं ध्यायेदभीष्टाप्तये॥

ध्यान के बाद मानसोपचार से पूजन करे। तब शैव पीठ पर पञ्चाक्षर मन्त्रोक्त विधि से पुरश्चरण करे।

अन्य नवाक्षर मन्त्र—एक अन्य नवाक्षर मन्त्र है—ॐ ऐं नमः क्लीं शिवाय सौः। यह मन्त्र सभी सिद्धियों को देने वाला है। इसके ऋष्यादि पूर्ववत् हैं। षडङ्ग न्यास ॐ हृदयाय नमः, ऐं शिरसे स्वाहा, नमः शिखायै वषट्, क्लीं कवचाय हुं, शिवाय नेत्रत्रयाय वौषट्, सौः अस्त्राय फट् से किया जाता है। वामार्ध में बैठी पार्वती-सहित शिव का ध्यान करे। पूर्वोक्त पीठ पर पञ्चाक्षर विधान से पूजा करे। पूर्वोक्त प्रकार से ही पुरश्चरण करे। साथ ही इस सिद्ध मन्त्र से पूर्व मन्त्रोक्त प्रयोगों को करे।

दक्षिणामूर्ति गायत्री—दक्षिणामूर्तये विद्महे ध्यानस्थिताय धीमहि तन्नो धीरः प्रचोदयात्।

सप्रयोगः मृत्युञ्जयमन्त्रः

नन्दिकेश्वरमते मृत्युञ्जयस्य मन्त्रः—

अथ मृत्युञ्जयं मन्त्रं कथयामि तवानघ। आद्यत्रयोदशोपान्त्यस्वरावुद्धृत्य नन्दिक ॥१॥
ततस्तृतीयवर्गस्य तृतीयं चाद्यषष्ठयुक्। तदुपान्त्यस्वरारूढमष्टमस्य तृतीयकम् ॥२॥
आद्यान्त्यवर्णसंयुक्तं तृतीयवर्णमुद्धरेत्। एष मृत्युञ्जयो मन्त्रः प्रोक्तो मृत्युभयापहः ॥३॥

आद्यत्रयोदश ओ, उपान्त्यो बिन्दुस्तेन प्रणवो जातः। तृतीयवर्गस्य तृतीयं जकारः, आद्यषष्ठं ऊ, तदुपान्त्यो बिन्दुस्ताभ्यां युक्तस्तेन जूं इति। अष्टमस्य तृतीयं स, आद्यान्त्यो विसर्गस्तेन सः।

ऋषिः कहोलो देव्यादिगायत्री च्छन्द ईरितम्। देवतास्य मनोः प्रोक्तं शिवो मृत्युञ्जयाभिधः ॥४॥
प्रणवो बीजमित्युक्तं सः शक्तिरिति कीर्तिता। षड्दीर्घयुक्तेनान्त्येन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥५॥
आधारहृच्छिरःस्वेवं न्यसेद्वर्णत्रयं ततः। ध्यायेद् देवं ततो वत्स समाहितमनाश्चिरम् ॥६॥
शुद्धस्फटिकसङ्काशं शुभ्रपद्मासने स्थितम्। कपर्दमौलिविलसच्चन्द्रखण्डच्युतामृतैः ॥७॥
अभिषिक्तसमस्ताङ्गमर्केन्द्वनललोचनम्। दक्षिणोदर्ध्वकरे मुद्रां ज्ञानाख्यां तदधःकरे ॥८॥
अक्षमालां च वामोर्ध्वे पाशं वेदमधःकरे। दधानं चिन्तयेद् देवं मृत्युरोगभयापहम् ॥९॥
इति ध्यात्वार्चयेत् पीठे शैवे पूर्वसमीरिते। अष्टपत्राम्बुजे वत्स चतुरस्रत्रयावृते ॥१०॥
अर्चनाङ्गेन्द्रवज्राद्यैरावृतित्रयसंयुता। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते, शिरसि कहोलाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः। हृदि श्रीमृत्युञ्जयाय देवतायै नमः। गुह्ये ओं बीजाय नमः। पादयोः सः शक्तये नमः। इति विन्यस्य,

ममेष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिरुक्त्वा सांसींसूंसैंसौंसः इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, मूलाधारे ॐनमः। हृदये जूं नमः। शिरसि सः नमः। इति विन्यस्य ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते प्राग्वदङ्गानि संपूज्य लोकपालपूजादिसर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। अत्र पूजामण्डलं चतुरस्रत्रयवेष्टितमष्टदलं ज्ञेयम्। अष्टदलेषु दिक्पालान् चतुरस्रे तदायुधानि पूजयेत्। तथा—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रममृताशकलैर्हुनेत्। क्षीराप्लुतैस्तर्पणादि ततो नन्दिन् समाचरेत्॥११॥
एवं सिद्धे मनौ नन्दिन् प्रयोगानाचरेत्ततः।

मृत्युञ्जय मन्त्र—तीन अक्षरों का मृत्युञ्जय मन्त्र है—ॐ जूं सः। इसके ऋषि कहोल, छन्द गायत्री, देवता मृत्युञ्जय शिव, प्रणव बीज एवं सः शक्ति है।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि कहोलाय ऋषये नमः, मुखे देवीगायत्रीछन्दसे नमः, हृदि मृत्युञ्जयाय देवतायै नमः, गुह्ये ॐ बीजाय नमः, पादयोः सः शक्तये नमः। अपनी इष्टसिद्धि के लिये विनियोग करे। सां सीं सूं सैं सौं सः से कर एवं षडङ्ग न्यास करे। मन्त्र वर्ण न्यास इस प्रकार करे—मूलाधार में ॐ नमः, हृदये जूं नमः, शिर पर सः नमः। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं शुभ्रपद्मासने स्थितम्। कपर्दमौलिविलसच्चन्द्रखण्डच्युतामृतैः।।
अभिषिक्तसमस्ताङ्गमर्केन्द्वनललोचनम्। दक्षिणोर्द्ध्वकरे मुद्रां ज्ञानाख्यां तदधःकरे।।
अक्षमालां च वामोर्ध्वे पाशं वेदमधःकरे। दधानं चिन्तयेद् देवं मृत्युरोगभयापहम्।।

इस प्रकार ध्यान करके पुष्पोपचार तक पूजा करे। अंगपूजन करे। तव लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। यहाँ पूजा मण्डल तीन चतुरस्रों से वेष्टित अष्टदल होता है। अष्टदल में लोकेशों की और चतुरस्र में आयुधों की पूजा करे।

तदनंन्तर तीन लाख मन्त्रजप करे। दुग्धप्लुत गुडूची खण्डों से दशांश हवन करे। तर्पण-मार्जनादि करे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे।

काम्यप्रयोगविधिः

तारनालं मध्यपत्रमन्त्यमध्यं च संपुटे॥१२॥
पद्मयुग्मं तदन्तःस्थमात्मानं चिन्तयेच्छिवम्। संस्रवद्वर्णपीयूषधारासिक्तकलेवरम् ॥१३॥
अनेन योगेन भवेद् दीर्घायुश्च निरामयः।

अयमर्थः—ॐकारनालस्य जूंकारपत्राष्टकस्य सःकारकर्णिकस्य संपुटितस्य पद्मद्वयस्य मध्ये समासीनं मन्त्रवर्णत्रयनिर्गच्छदमृतधाराप्लावितसर्वगात्रं शिवात्मानं चिन्तयेदित्यर्थः। तथा—

वेदाङ्गुलमितैर्नन्दिन् गुडूचीशकलैर्हुनेत्। पयःपरिप्लुतैरर्कसहस्रं विजितेन्द्रियः॥१४॥
आरोग्यायुर्यशोलक्ष्मीरचिराल्लभते ध्रुवम्। (अमृताशकलैर्दुग्धसंप्लुतैश्चतुरङ्गुलैः ॥१५॥
सहस्रद्वादशमितं जुहुयादेधितेऽनले। यावत्संख्यं जुहोत्येवं साधको नन्दिकेश्वर॥१६॥)
तावत्संख्यैः सुधाकुम्भैरग्निः प्रीणाति शङ्करम्। आप्यायितोऽग्निना रुद्रः प्रादद्यात्साधकेप्सितान्॥१७॥
गुडूचीशकलान् नन्दिन् समिधो वटवृक्षजाः। तिला दूर्वाः पयः सर्पिः पायसं च गणाधिप॥१८॥
इत्युक्तैः सप्तभिर्द्रव्यैर्जुहुयात् सप्तवासरम्। क्रमाद् दशशतं नित्यमष्टोत्तरमतन्द्रितः॥१९॥
सप्ताधिकान् द्विजान् नित्यं भोजयेन्मधुरान्वितैः। विविधैः स्वादुभिर्भोज्यैरन्नपानादिकैर्गण॥२०॥
विकारानुगुणान् नन्दिन् वर्धयेद्धोमवासरान्। होतृभ्यो दक्षिणां दद्यादरुणां गां पयस्विनीम्॥२१॥
गुरुं संप्रीणयेन्नन्दिन् धनाद्यैर्देवताधिया। अनेन विधिना साध्यः कृत्यारोगज्वरादिभिः॥२२॥
विमुक्तः सुचिरं जीवेच्छरदां शतमञ्जसा। अभिचारे ज्वरे तीव्रे घोरोन्मादे शिरोगदे॥२३॥

असाध्यरोगे क्ष्वेडार्तौ मोहे दाहे महाभये। होमोऽयं शान्तिद: प्रोक्त: सर्वसंपत्प्रदायक: ॥२४॥
अथ त्रिजन्मदिवसे द्रव्यै: सप्तभिरादरात्। पृथक् शतं हुनेन्मन्त्री मधुरैर्भोजयेद् द्विजान् ॥२५॥
दीर्घमायुरवाप्नोति नियमेन न संशय:। अथवा सप्तभिर्द्रव्यैर्जन्मर्क्षे जुहुयात् सुधी: ॥२६॥
पृथक् सहस्रं तेन स्यान्निरुपद्रवमुत्तमम्। दीर्घमायुरवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥२७॥
पयोक्तदूर्वात्रितयैर्हुनेदेकादशाहुती: । दिनश: सोऽपमृत्युं च रोगाञ्जित्वाचिरादसौ ॥२८॥
दीर्घमायुश्च लभते मन्त्रशास्त्रविशारद:। त्रिजन्मसु सुधावल्लीकाश्मरीबकुलोद्भवै: ॥२९॥
समिद्वरै: कृतो होम: सहस्रेण पृथक्पृथक्। अपमृत्युहरो नन्दिन् सर्वरोगान् विनाशयेत् ॥३०॥
सिद्धार्थैर्विहितो होमो महाज्वरविनाशन:। अपामार्गसमिद्धोमस्त्वपमृत्युगदापह: ॥३१॥

ॐकार रूप नाल, जूंकार स्वरूप अष्टपत्र एवं स:कार रूप कर्णिका वाले दो कमलों से सम्पुटित, मध्य में समासीन तीन मन्त्र वर्णों से निर्गत अमृतधारा से प्लावित शरीर वाले स्वयं को शिवरूप में चिन्तन करके जप करे। चार अंगुल लम्बे गुडूची खण्डों को दूध से परिप्लुत करके बारह हजार हवन करे। इससे थोड़े ही दिनों में आरोग्य, आयु एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। चार अंगुल लम्बे गुडूची खण्डों से जब तक साधक बारह हजार हवन प्रज्वालित अग्नि में करता है तब तक उतनी ही संख्या में अमृतपूर्ण कलशों से शंकर अग्नि को तृप्त करते हैं। शिव-आप्यायित अग्नि से साधक को अभीष्ट देते हैं। गुडूचीखण्ड, वटवृक्ष की समिधा, तिल, दूब, दूध, गोघृत, पायस—इन सात द्रव्यों से सात दिनों में प्रत्येक दिन प्रत्येक द्रव्य से एक हजार आठ हवन और सात से अधिक ब्राह्मणों को मधुरान्वित विविध स्वादिष्ट भोज्य अन्न-पान खिला पिलाकर प्रतिदिन तृप्त करे। होताओं को दक्षिणा और पयस्विनी लाल गाय दान में दे। गुरु को देवता मानकर धन आदि देकर प्रसन्न करे। इस विधान के करने से कृत्या, रोग, बुखार आदि से मुक्त होकर साधक सौ वर्षों तक जीवित रहता है। अभिचार, तेज बुखार, घोर उन्माद, शिरपीड़ा, असाध्य रोग, क्ष्वेड, मोह, दाह, महाभय में इस प्रकार का हवन शान्तिप्रद और सर्वसम्पत्प्रदायक होता है। तीनों जन्म दिवसों में—माँ के गर्भ से बाहर होने वाले दिन में, यज्ञोपवीत धारण करने वाले दिन में तथा दीक्षा प्राप्ति के दिवस में उपर्युक्त सात द्रव्यों से अलग-अलग एक सौ आठ हवन करे और द्विजों को मधुर भोजन करावे तो मनुष्य को दीर्घायु प्राप्त होती हैं अथवा तीनों जन्मनक्षत्रों में प्रत्येक द्रव्य से एक-एक हजार हवन करे तो मनुष्य निरुपद्रव होकर दीर्घ आयु प्राप्त करता है। इसमें संशय नहीं है। तीन-तीन दूबों को दूध से सिक्त करके ग्यारह आहुति प्रतिदिन प्रदान करे तो वह अपमृत्यु और रोगों को जीतकर दीर्घायु होकर मन्त्रशास्त्र-विशारद होता है। तीनों जन्मदिनों में गुडूची, काश्मरी, बकुल की समिधाओं से अलग-अलग एक-एक हजार हवन करे तो अपमृत्यु एवं सभी रोगों का विनाश होता है। सरसों से हवन करने पर महाज्वर का नाश होता है। चिड़चिड़ा की समिधाओं से हवन करने पर अपमृत्यु और रोग नष्ट होते हैं।

मृत्युञ्जययन्त्रम्

लिखेदष्टदलं पद्मं तारं मध्ये ससाध्यकम्। दिक्पत्रेषु द्वितीयार्णं विदिक्स्थेषु तृतीयकम् ॥३२॥
दिक्षु भूमण्डलस्याथ सप्तमान्तं सबिन्दुकम्। विदिक्षु च चतुर्थस्य द्वितीयं बिन्दुभूषितम् ॥३३॥
यन्त्रं मृत्युञ्जयस्येदं जपहोमादिसाधितम्। धृतं मूर्ध्न्यथवा कण्ठे बाहौ कट्यां प्रकोष्ठके ॥३४॥
ग्रहरोगविषादीनां नाशनं मृत्युभञ्जनम्। कीर्तिवश्येन्दिराकान्तिपुत्रदं नात्र संशय: ॥४५॥ इति।

अस्यार्थ:—अष्टदलपद्मं विरच्य तत्कर्णिकायां प्रणवं तन्मध्ये साध्यनाम विलिख्य, तस्य दिक्पत्रेषु जूं इति विलिख्य, कोणपत्रेषु स: इति लिखित्वा, बहिश्चतुरस्रं कृत्वा तस्य दिक्षु—वं, कोणेषु—ठं, इति लिखित्वोक्तविधिना बिभृयादुक्तफलदं भवति।

मृत्युञ्जय यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में ॐ के गर्भ में साध्य नाम लिखे। उसके पूर्वादि दलों में 'जूं' लिखे। कोण दिशाओं में 'स:' लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर पूर्वादि दिशाओं में 'वं' लिखे। कोणों में 'ठं' लिखे। जप-होम से साधित इस यन्त्र को मस्तक पर या कण्ठ, बाहु, कमर में धारण करने से ग्रह, रोग, विषद आदि का नाश होता है; मृत्यु का विनाश होता एवं कीर्ति, धन, लक्ष्मी, कान्ति तथा पुत्र प्राप्त होता है।

अघोरास्त्रमन्त्रविधानम्

अथाघोरास्त्रमन्त्रः। तत्र श्रीकण्ठसंहितायाम्—

अथाघोरमनुं वक्ष्ये सर्वशत्रुनिसूदनम्। सर्वदुष्टग्रहव्याधिनाशनं जगदीश्वरि॥१॥
रेवती नकुलाक्रान्ता लोलाक्षी श्रीमुखीयुता। भृग्वाक्रान्ता कुर्दिनी च वर्तुलाक्षीयुतः प्रिये॥२॥
रेवती च पुनश्चैतद्द्वयं प्रादि च तद्द्वयम्। शिवोत्तमः सद्ययुक्तो रेवती तद्द्वयं तर॥३॥
तनुरूपपदं देवि चटयुग्मं प्रपूर्वि तत्। क्रोधीशो नकुलीशश्च पुनरेतद्द्वयं शिवे॥४॥
वमयुग्मं बन्धयुग्मं घातयद्वितयं ततः। वर्मास्त्रान्तो मनुर्देवि एकपञ्चाशदक्षरः॥५॥ इति।

रेवती रेफः, नकुलाक्रान्ता हकाराधःस्थिता, लोलाक्षी ईकारः, श्रीमुखी बिन्दुस्ताभ्यां युक्तस्तेन ह्रीं। भृगुः सकारः, तदाक्रान्ता कुर्दिनी तदधःस्थः फकारः, वर्तुलाक्षी उकारस्तेन युता, तेन स्फु। रेवती रेफः। पुनरेतद्द्वयं स्फुर इति। प्रादि च तद्द्वयं प्रस्फुर प्रस्फुर इति। चकाराद्वीप्सा लभ्यते। शिवोत्तमो घकारः, सद्ययुक्त ओकारेण युतस्तेन घो। रेवती रेफः। पुनरेतद्द्वयं घोर इति। तर स्वरूपं। तनुरूप स्वरूपं। चटयुग्मं चटचट इति। प्रपूर्वि तत् चटयुग्मं प्रपूर्वकं च तेन प्रचट प्रचट इति। क्रोधीशः क। नकुलीशो ह। पुनरेतद्द्वयं कह इति। वमयुग्मं वमवम। बन्धयुग्मं बन्धबन्ध इति। घातयद्वितयं घातय घातय। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। इति (वर्णाः ५१)। तथा—

अघोरोऽस्य ऋषिः प्रोक्तस्त्रिष्टुप् छन्दः समीरितम्। अघोररुद्रो देवता स्यात् हुंबीजं देवि कीर्तितम्॥६॥
शक्तिश्च शक्तिबीजं स्यात् पुरुषार्थचतुष्टये। विनियोगो भवेद् देवि षडङ्गं विन्यसेत्ततः॥७॥
शरर्तुदशदिग्दन्तिदिवाकरमितैः क्रमात्। पदान्येकादश मनोरेषु स्थानेषु विन्यसेत्॥८॥
शिरोनेत्रवक्त्रगलहृन्नाभ्यन्धूरुजानुषु। सजङ्घापादयोश्चैवं पदानि परमेश्वरि॥९॥
शरर्तुनेत्रवस्वब्धिरसवेदाब्धिवेदकैः। रसनेत्रमितैर्वर्णैः पदानि स्युर्महेश्वरि॥१०॥ इति।

षडङ्गन्यासे वर्णविभागमाह—शर इत्यादि। शराः ५ ऋतवः ६ दश १० दिक् १० दन्तिनः ८ दिवाकराः १२। पदेषु वर्णविभागमाह—शर इत्यादि। शराः ५ ऋतवः ६ नेत्रं २ वसवः ८ अब्धयः ४ रसाः ६ वेदाः ४ अब्धयः ४ वेदाः ४ रसाः ६ नेत्रं २। तथा—

एवं न्यस्ततनुर्मन्त्री ध्यायेद् देवं प्रसन्नधीः। कालमेघनिभं देवं भीमदंष्ट्रं त्रिलोचनम्॥११॥
भुजङ्गभूषणं रक्तवसनालेपशोभितम्। परशुं करवालं च बाणांस्त्रिशिखमेव च॥१२॥
दधानं दक्षिणैर्हस्तैरूर्ध्वादिक्रमतः परैः। डमरुं खेटकं चापं नृकपालं च पार्वति॥१३॥
काम्यकर्मसु रक्ताभमसितं चाभिचारके। निग्रहे ग्रहभूतादिमुक्त्यै मुक्तानिभं स्मरेत्॥१४॥
एवं सञ्चिन्त्य देवेशं शैवे पीठे पुरोदिते। षट्कोणान्तःस्थिते पद्मद्वितये भूपुरैर्वृते॥१५॥
चतुर्द्वारसमायुक्ते वसुपत्रे महेश्वरि। पूजयेद् देवमावाह्य गन्धपुष्पैर्मनोहरैः॥१६॥
अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य केसरेषु यथापुरा। प्रथमेऽष्टदले देवि पूजयेदायुधाष्टकम्॥१७॥
परशुं डमरुं खड्गं खेटं बाणान् धनुस्तथा। शूलं कपालं चैतानि द्वितीयेऽष्टदले पुनः॥१८॥
ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्याश्चतुरस्त्रत्रयान्तरा। वीथीद्वये लोकपालांस्तदस्त्राणि च पूजयेत्॥१९॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि अघोराय ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीअघोररुद्राय देवतायै नमः। गुह्ये हुं बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। इति विन्यस्य मम चतुर्वर्गपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततः ह्रीं स्फुर स्फुर हृदयाय नमः। प्रस्फुर प्रस्फुर शिरसे०। घोर घोरतर तनुरूप शिखायै०। चट चट प्रचट प्रचट कवचाय०। कह कह वम वम नेत्रत्रयाय०।

बन्ध बन्ध घातय घातय हुंफट् अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि विन्यस्य, शिरसि ह्रीं स्फुर स्फुर नमः। नेत्रयोः प्रस्फुर प्रस्फुर नमः। मुखे घोर नमः। कण्ठे घोरतर तनुरूप नमः। हृदि चट चट नमः। नाभौ प्रचट प्रचट नमः। लिङ्गे कह कह नमः। ऊर्वोः वम वम नमः। जान्वोः बन्ध बन्ध नमः। जङ्घयोः घातय घातय नमः। पादयो हुंफट् नमः। इति विन्यस्य, ध्यानादिषडङ्गपूजान्ते प्रथमाष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन—परशवे नमः। डमरुकाय नमः। खड्गाय नमः। खेटाय नमः। बाणेभ्यः नमः। धनुषे नमः। शूलाय नमः। कपालाय नमः। द्वितीयाष्टदले देवाग्रमारभ्य ब्राह्मयाद्यष्टमातृः संपूज्य, प्राग्वदिन्द्रादिपूजामारभ्य सर्वं समापयेदिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी यतव्रतः। जुहुयात् तद्दशांशेन तिलैः शुद्धैर्घृतप्लुतैः ॥२०॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा भोजयेन्मधुरैर्द्विजान्। एवं सिद्धे मन्त्रवरे काम्यकर्माणि साधयेत् ॥२१॥

अघोरास्त्र मन्त्र—श्रीकण्ठसंहिता में पठित श्लोकों का उद्धार करने पर इक्यावन अक्षरों का अघोरास्त्र मन्त्र होता है—ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्ध बन्ध घातय घातय हुं फट्। इसके ऋषि अघोर, छन्द त्रिष्टप्, देवता अघोररुद्र, बीज हुं एवं शक्तिबीज (ह्रीं) शक्ति है।

प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अघोराय ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदये श्री अघोररुद्राय देवतायै नमः, गुह्ये हुं बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। तदनन्तर चतुर्वर्ग-सिद्धि के लिये विनियोग कर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ह्रीं स्फु स्फुर हृदयाय नमः, प्रस्फुर प्रस्फुर शिरसे स्वाहा, घोर घोरतर तनुरूप शिखायै वषट्, चट चट प्रचट प्रचट कवचाय हुं, कह कह वम वम नेत्रत्रयाय वौषट्, बन्ध बन्ध घातय घातक हुं फट् अस्त्राय फट्। इन्हीं षडङ्ग मन्त्रों से हृदयादि षडङ्गों में भी न्यास करे। तब मन्त्र-पद न्यास करे—शिर पर ह्रीं स्फुर स्फुर नमः, नेत्रों में प्रस्फुर प्रस्फुर नमः, मुख में घोर नमः, कण्ठ में घोरतर तनुरूप नमः, हृदय में चट चट नमः, नाभि में प्रचट प्रचट नमः, लिङ्ग में कह कह नमः, ऊरुओं में वम वम नमः, जानुओं में बन्ध बन्ध नमः, जंघाओं में घातय घातय नमः, पैरों में हुं फट् नमः। इसके बाद काले बादल के समान शरीर वाले, बड़े-बड़े दाँतों वाले, तीन नेत्रों वाले, सर्पभूषण एवं रक्तवस्त्र धारण करने वाले, दाहिने हाथों में परशु करवाल, बाण एवं त्रिशिख तथा बाँयें हाथों में डमरु, खेटक चाप तथा मनुष्य का कपाल धारण करने वाले देव का प्रसन्न मन से ध्यान करे।

अभिचार कर्म में रक्ताभ कृष्ण वर्ण का ध्यान करे एवं ग्रह-भूतादि से मुक्ति के लिये श्वेत वर्ण का ध्यान करे। प्रथम आवरण में षडङ्ग पूजन उपरोक्त षडङ्ग मन्त्रों से कर्णिका में करे। प्रथम अष्टदल में देवता के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से परशवे नमः डमरुकाय नमः, खड्गाय नमः, खेटाय नमः, बाणेभ्य नमः, धनुषे नमः, शूलाय नमः, कपालाय नमः से पूजन करे। द्वितीय अष्टदल में ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं की पूजा करे। चतुरस्र में पूर्ववत् लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। शेष पूजा पूर्ववत् करके पूजा का समापन करे।

व्रतपूर्वक हविष्याशी रहकर एक लाख मन्त्र जप करे। दशांश हवन घृतप्लुत शुद्ध तिल से करे। तर्पण मार्जन करके ब्राह्मणों को मधुर भोजन करावे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से काम्य कर्मो का साधन करे।

काम्यविनियोगः

क्रमात् सर्पिरपामार्गतिलसर्षपपायसैः। साज्यैः सहस्रं प्रत्येकं यामिन्यां जुहुयात् सुधीः ॥२२॥
होमोऽयं नाशयेत् सद्यो भूतकृत्यामयादिकान्। श्वेतकिंशुकनिर्गुण्डीहोमोऽपामार्गसम्भवैः ॥२३॥
समिद्वरैः कृतो होमः पूर्ववद्भूतशान्तिदः। अपामार्गारग्वधयोः पञ्चगव्यसमुक्षिताः ॥२४॥
समिधो जुहुयात् कृष्णपञ्चम्यां निशि संयतः। पृथक् सहस्रहोमेन भूतानां निग्रहो भवेत् ॥२५॥
क्रमात् सर्पिरपामार्गपञ्चगव्यहविर्घृतैः। हुत्वा सहस्रं प्रत्येकं पात्रे संपातयेद् घृतम् ॥२६॥
संपातसर्पिषा साध्यं भोजयेद्भूतशान्तये।

क्रमशः गोघृत, चिड़चिड़ा, तिल, सरसो, पायस से अलग-अलग एक-एक हजार हवन रात में करे तो भूत, कृत्या एवं रोगों का तत्काल नाश होता है। श्वेत पलाश के फूलों, निर्गुण्डी, चिड़चिड़ा की समिधाओं से पूर्ववत् हवन करने से भूतो की शान्ति होती है। पञ्चगव्यसिक्त चिड़चिड़ा, आरग्वध की समिधाओं से कृष्ण पञ्चमी की रात में प्रत्येक से एक-एक हजार हवन करने से भूतों का निग्रह होता है। सर्पि, अपामार्ग, पञ्चगव्य, हवि घी प्रत्येक से अलग-अलग एक-एक हजार हवन करे और हुतशेष घी को पात्र में टपकावे। इस सम्पात घी को जो खाता है, उसके भूतों की शान्ति हो जाती है।

तद्यन्त्रोद्धारः

लिखेदष्टदलं पद्मं वह्निगेहयुगान्तरे ॥२७॥

मायां तत्कर्णिकामध्ये साध्याख्याकर्मसंयुताम् । स्वरैरावेष्ट्य तां शक्तिं किञ्जल्केष्वष्टवर्गजान् ॥२८॥
ककारादिलकारान्तानालिख्य दलसप्तके । अष्टमे तु दले वादिक्षान्तान् सप्तार्णकाँल्लिखेत् ॥२९॥
स्फुरादिचटयुग्मान्तान् मन्त्रवर्णान् त्रिशस्त्रिशः । दलमध्ये तु संलिख्य दलाग्रेषु महेश्वरि ॥३०॥
प्रचटाद्यान् घातयान्तांस्तथैव गुणशो लिखेत् । बहिः षट्कोणकोणेषु प्रतिकोणं समालिखेत् ॥३१॥
वर्मास्त्रबीजे तद्बाह्ये भूपुरेण तु वेष्टयेत् । दीक्षोक्तविधिना कुम्भं तस्मिन् यन्त्रे निधाय च ॥३२॥
तत्र देवं समाराध्य तज्जलैरभिषेकतः । भूतापस्मारकृत्याद्याः सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥३३॥

अस्यार्थः—क्वचिद्भूतले सुसमे सिन्दूरादिना विपुलं षट्कोणं विरच्य, तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं कृत्वा, तत्कर्णिकायां शक्तिबीजमालिख्य, तस्य हकारोदरे देवदत्तस्य, रेफस्थाने रोगं, ईकारस्थाने नाशय नाशयेति साधकसाध्यकर्माण्यालिख्य, तद्बीजं सबिन्दुभिः षोडशस्वरैरावेष्ट्याष्टदलकेसरेषु—प्रथमदलकेसरे कंखंगंघं, द्वितीये ङंचंछंजं, तृतीये झंञंटंठं, चतुर्थे डंढंणंतं, पञ्चमे थंदंधंनं, षष्ठे पंफंबंभं, सप्तमे मंयंरंलं, अष्टमे वंशंषंसंहंळंक्षं नमः। इति स्वाग्रादिप्रादक्षिण्येन वर्णान् विलिख्य, दलमध्येषु स्वाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन प्रथमदलमध्ये स्फुरस्फु, द्वितीये रप्रस्फु, तृतीये रप्रस्फु, चतुर्थे रघोर, पञ्चमे घोरत, षष्ठे रतनु, सप्तमे रूपच, अष्टमे टचट, इति विलिख्य, ततः प्रथमदलाग्रेषु प्रचट, द्वितीये प्रचट, तृतीये कहक, चतुर्थे हवम, पञ्चमे वमबं, धबंध, सप्तमे घातय, अष्टमे घातय, इति विलिख्य, तद्बहिःस्थषट्कोणेषु हुंफट् इति प्रतिकोणं विलिख्य तद्बहिश्चतुरस्रेण वेष्टयित्वा, तत्र दीक्षोक्तविधिना कुम्भं संस्थाप्य तत्र देवमावाह्य समभ्यर्च्य, तेन जलेन साध्यमभिषेचयेत्, यथोक्तफलसिद्धिर्भवति।

समतल भूमि पर सिन्दूरादि से बड़ा षट्कोण बनावे। उसके मध्य में अष्टदल कमल बनावे। उसकी कर्णिका में शक्तिबीज ह्रीं लिखे। हकार के उदर में साध्य नाम, रकार के स्थान में रोग नाम, ईकार स्थान में नाशय नाशय, साध्य कर्म लिखे। 'ह्रीं' को अं से अः तक सोलह स्वरों से वेष्टित करे।

अष्टदल के प्रथम दल के केसर में कं खं गं घं, दूसरे में ङं चं छं जं, तीसरे में झं ञं टं ठं, चौथे में डं ढं णं तं, पाँचवें में थं दं धं नं, छठे में पं फं बं भं, सातवें में मं यं रं लं, आठवें में वं शं षं सं हं ळं क्षं नमः लिखे। यह लेखन अपने आगे से प्रदक्षिण क्रम से करे। आठों दलों में अपने सामने के दल से प्रारम्भ करके प्रादक्षिण्य क्रम से प्रथम दल में स्फुर स्फुर, दूसरे दल में रप्रस्फु, तीसरे दल में रप्रस्फु, चौथे में रघोर, पाँचवें में घोरत, छठें में रतनु, सातवें में रूपच, आठवें मे टचट लिखे। इसके बाद प्रथम दलाग्र में प्रचट, दूसरे में प्रचट, तीसरे में कहक, चौथे में हवम, पाँचवें में वमबं, छठें में धबंध, सातवें में घातय, आठवें में घातय लिखे। इसके बाहर षट्कोण के प्रत्येक कोण में हुं फट् लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। दीक्षोक्त विधि से कुम्भ स्थापित करे। उसमें देवता का आवाहन करके पूजा करे। उस जल से साध्य को स्नान करावे। इससे भूत-अपस्मार-कृत्यादि के सभी उपद्रवों की शान्ति होती है।

तथा—

अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं षट्कोणं तस्य मध्यतः। तन्मध्ये शक्तिमालिख्य साध्याख्यानामसंयुताम् ॥३४॥
स्फुरद्वयेन तां शक्तिं वेष्टयेज्जगदीश्वरि । षट्कोणस्य तु कोणेषु प्रस्फुरद्वितयं लिखेत् ॥३५॥

एकैकशो महेशानि शिष्टवर्णान् दलेष्वध। मूलमन्त्रस्य देवेशि रसवेदचतूरसैः ॥३६॥
चतुश्चतुर्वेदरसैर्विभक्तांस्तद्वहिस्ततः। पुनः षट्कोणमालिख्य तत्कोणेषु महेश्वरि ॥३७॥
हुंफडित्यालिखेद् बाह्ये चतुरस्रेण वेष्टयेत्। यन्त्रमेतदघोरस्य कीर्तितं भुवि दुर्लभम् ॥३८॥
क्षुद्रचौरग्रहव्यालभूतापस्मारनाशनम्। संसाधितं धृतं नृणां सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥३९॥ इति।

अस्यार्थः—विपुलं षट्कोणं कृत्वा तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं विरच्य, तत्कर्णिकायां पुनः षट्कोणमालिख्य, तन्मध्ये प्राग्वत् ससाध्यां शक्तिमालिख्य, तां स्फुर स्फुर इत्यक्षरचतुष्टयेनावेष्ट्यान्तःषट्कोणेषु प्रस्फुर प्रस्फुर इति षडक्षराणि प्रतिकोणमेकमेकमालिख्य, अष्टसु दलेषु स्वाग्रदलमारभ्य प्रादक्षिण्येन 'घोर' इत्यादि 'घातय' इत्यन्तान् वर्णान् ६।४।४।६।४।४।४।६। इति क्रमेण विभज्यालिख्य बहिः षट्कोणेषु प्राग्वदन्त्याक्षरद्वयं विलिखेत् तद्वहिश्चतुरस्रेणावेष्टयेत्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवतीति।

एक बड़ा षट्कोण बनावे। उसके मध्य में अष्टदल कमल बनावे। उसकी कर्णिका में षट्कोण बनावे। उसके मध्य में पूर्ववत् साध्य के साथ ह्रीं लिखे। उसे स्फुर स्फुर—इन चार अक्षरों से वेष्टित करे। षट्कोण के कोणों में प्रस्फुर प्रस्फुर के छः अक्षरों को एक-एक करके लिखे। अष्टदलों में अपने आगे के दल से प्रारम्भ करके प्रत्येक दल में घोर-घोरतर, तनुरूप, चट चट, प्रचट प्रचट, कह कह, वम-वम, बन्ध-बन्ध, घातय-घातय लिखे। षट्कोणों के वाहर प्रत्येक कोण के अग्रभाग में हुं फट् लिखें। इसे चतुरस्र से वेष्टित करे। यह अघोर यन्त्र संसार में दुर्लभ कहा गया है। यह क्षुद्र चौर ग्रह, सर्प, भूत, अपस्मार का विनाशक है। साधित करके धारण करने से यह मनुष्यों को सभी सिद्धियों का प्रदायक हैं।

पाशुपतास्त्रमन्त्रविधिः

श्रीशिवरहस्ये पाशुपतास्त्रमन्त्रः—

अथ वक्ष्ये महेशानमन्त्रं पाशुपताह्वयम्। अस्त्रराजं समस्तापरत्ताणं शत्रुकृन्तनम् ॥१॥
तारो बकेशः शान्तीन्द्रभूषितश्चन्द्रशेखरः। शिखीशपूर्वो वान्तश्च पञ्चमस्वरसंयुतः ॥२॥
वर्मास्त्रान्तः षडर्णोऽयं षडानन समीरितः।

तारः प्रणवः। बकेशः शकारः, शान्तिरीकारः, इन्द्रो लकारः, ताभ्यां भूषितश्चन्द्रशेखरो बिन्दुमस्तकस्तेन श्लीं इति। शिखीशपूर्वः पकारः। वान्तः शकारः, पञ्चमस्वर उकारस्तेन शु। वर्म हुं। अस्त्रं फट्। तथा—

ऋषिः स्याद्वामदेवोऽस्य पंक्तिश्छन्द उदीरितम्। रुद्रः पशुपतिः प्रोक्तो देवता देववन्दितः ॥३॥
मन्त्रार्णैः षड्भिरङ्गानि हुंफडन्तैः सबिन्दुभिः। जातियुक्तानि विन्यस्य षडानन कराङ्गयोः ॥४॥
ध्यायेत् पशुपतिं सम्यङ् मन्त्री चैकाग्रमानसः। पञ्चवक्त्रं दशभुजं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम् ॥५॥
अग्निज्वालानिभश्मश्रुमूर्धजं भीमदंष्ट्रकम्। खड्गं बाणानक्षसूत्रं शक्तिं परशुमेव च ॥६॥
दधानं दक्षिणैर्हस्तैरूर्ध्वादिक्रमतो गुह। खेटचापौ कुण्डिकां च त्रिशूलं ब्रह्मदण्डकम् ॥७॥
वामहस्तैश्च बिभ्राणं मध्याह्नार्कसमप्रभम्। नानाभरणसन्दीप्तं पन्नगेन्द्रैरलङ्कृतम् ॥८॥
स्फटिकौघनिभं भान्तं सर्वरक्षाकरं स्मरेत्। पूर्वोक्ते पूजयेत् पीठे शैवे गन्धादिभिः शिवम् ॥९॥
पद्ममष्टदलं कृत्वा कर्णिकाकेसरान्वितम्। चतुर्द्वारसमायुक्तं चतुरस्रत्रयावृतम् ॥१०॥
एवं यन्त्रं समालिख्य स्वर्णरूप्यादिके शुभे। पट्टे वा फलके वत्स श्रीकण्ठादिसमुद्भवे ॥११॥
सर्वोपचारैराराध्य यजेदङ्गानि पूर्ववत्। दलेषु मातरः पूज्या लोकेशास्त्राणि तद्वहिः ॥१२॥
पूजयेद्विधिनानेन रुद्रं परमभक्तितः। यः स सर्वानवाप्येह कामानन्ते शिवो भवेत् ॥१३॥

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये पशुपतये देवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः,

इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ॐहुंफट् हृदयाय नमः। श्लींहुंफट् शिरसे स्वाहा। पहुंफट् शिखायै वषट्। शुहुंफट् कवचाय हुं। हुंहुफट् नेत्रत्रयाय वौषट्। फट्हुंफट् अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततो ध्यानाद्यङ्गपूजान्ते अष्टदलेषु ब्राह्म्याद्याः संपूज्य बहिर्वीथीद्वये इन्द्राद्यांस्तदस्त्राणि च संपूज्य प्राग्वत् सर्वं समापयेदिति। तथा—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः। तद्दशांशं हुनेद् द्रव्यैः सघृतैः संस्कृतेऽनले ॥१४॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेद् गुह। ततः सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगान् विदधीत वै ॥१५॥
अनेन मन्त्रितं तोयं ग्रस्तस्य वदने क्षिपेत्। सद्यस्तं मुञ्चति क्रन्दन् ग्रहो मन्त्रप्रभावतः ॥१६॥
अमुना मन्त्रितान् बाणान् विसृजेद्युधि भूपतिः। जपेत् क्षणेन सबलानपि शत्रून् षडानन ॥१७॥ इति।

पाशुपतास्त्र मन्त्र—शिवरहस्य के श्लोकों उद्धार करने पर षडक्षर पाशुपतास्त्र मन्त्र होता है—ॐ श्लीं पशु हुं फट्। इसके ऋषि वामदेव, छन्द पंक्ति, देवता देववन्दित पशुपति हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः, हृदये पशुपतये देवतायै नमः। तदनन्तर सर्वाभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करने के पश्चात् इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—ॐ हुं फट् हृदयाय नमः, श्लीं हुं फट् शिरसे स्वाहा, प हुं फट् शिखायै वषट्, शु हुं फट् कवचाय हुं, हुं हुं फट् नेत्रत्रयाय वौषट्, फट् हुं फट् अस्त्राय फट्। इन्हीं षडङ्ग मन्त्रों से करन्यास भी करे। पुनः हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तब एकाग्र होकर स्फटिक के समान प्रकाशमान, सबकी रक्षा करने वाले पशुपति का इस प्रकार ध्यान करे—

पञ्चवक्त्रं दशभुजं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्। अग्निज्वालानिभश्मश्रुमूर्धजं भीमदंष्ट्रकम्।।
खड्गं बाणानक्षसूत्रं शक्तिं परशुमेव च। दधानं दक्षिणैर्हस्तैरूर्ध्वादिक्रमतो गुह।।
खेटचापौ कुण्डिकां च त्रिशूलं ब्रह्मदण्डकम्। वामहस्तैश्च बिभ्राणं मध्याह्नार्कसमप्रभम्।।
नानाभरणसन्दीप्तं पन्नगेन्द्रैरलङ्कृतम्।

इस प्रकार ध्यान के बाद अंगपूजा कर में करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि आठ देवियों की पूजा करे। चतुरस्र की वीथियों में इन्द्रादि दश लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। परम भक्ति से रुद्र की पूजा जो करता है, वह समस्त मनोरथों को पाकर अन्त में साक्षात् शिवस्वरूप हो जाता है। वर्णलक्ष के अनुसार छः लाख मन्त्रजप हविष्याशी होकर जितेन्द्रिय रहकर करे। दशांश हवन घी-मिश्रित द्रव्यों से संस्कृत अग्नि में करे। तर्पण-मार्जन के बाद ब्राह्मणों को भोजन करावे। तब इस सिद्ध मन्त्र से काम्य प्रयोग करे। इससे मन्त्रित जल से पीड़ाग्रस्त व्यक्ति के मुख पर छींटा मारने से तत्काल रोता हुआ मनुष्य भी स्वस्थ हो जाता है। इस मन्त्र का प्रभाव ऐसा ही है। इस मन्त्र से मन्त्रित बाण युद्ध में राजा छोड़े तो अति बलवान शत्रु भी पराभूत हो जाता है।

नीलकण्ठमन्त्रः

अथ श्रीकण्ठसंहितायां नीलकण्ठमन्त्रः—

नीलकण्ठमनुं वक्ष्ये क्ष्वेडत्रयविनाशनम्। यं ज्ञात्वा गिरिजे मन्त्री दृष्ट्या नाशयते विषम् ॥१॥
भुजङ्गेशसमारूढो लोहितेशस्तु पार्वति। सद्योऽक्रूरसमायुक्तः प्रथमं वरवर्णिनि ॥२॥
मेषेशोऽपि भुजङ्गस्थो लोलाक्षीश्रीमुखीयुतः। लाङ्गलीशो महासेनयुतस्तार्तीय ईरितः ॥३॥

भुजङ्गेशो रेफः, तदुपरि स्थितो लोहितेशः पकारः, सद्य ओकारः, अक्रूरो बिन्दुस्ताभ्यां युक्तस्तेन प्रों इति। मेषेशो नकारः, भुजङ्गस्थो रेफोपरि स्थितः, लोलाक्षी ईकारः, श्रीमुखी बिन्दुस्ताभ्यां युक्तस्तेन न्रीं इति। लाङ्गलीशष्ठकारः, महासेनयुतो विसर्गसहितस्तेन ठः इति। तथा—

अरुणो मुनिरुद्दिष्टोऽनुष्टुप् छन्दश्च देवता। नीलकण्ठः शिवो देवि षडङ्गविधिरुच्यते ॥४॥
हरयुग्मद्विठान्तो हृत् कपर्दिने द्विठः शिरः। नीलकण्ठः सङेर्देवि स्वाहान्तश्च शिखा मता ॥५॥

कवचं कालकूटान्ते विषभक्षणङेयुतम्। वर्मास्त्रबीजयुगलं नीलकण्ठः सङेशिराः ॥६॥
अस्त्रमेवं यजेद् देवि पञ्चाङ्गानि कराङ्गयोः। मूर्ध्नि कण्ठे च हृदये न्यसेद्बीजत्रयं ततः ॥७॥
ध्यायेद् देवं नीलकण्ठं बालार्कायुतवर्चसम्। जटाजूटलसच्चन्द्रशकलं फणिसत्तमैः ॥८॥
कृताकल्पं कराम्भोजैर्दधानं जपमालिकाम्। शूलं च दक्षिणाधोर्ध्वे वामोर्ध्वे च कपालकम् ॥९॥
खट्वाङ्गं तदधोहस्ते पञ्चवक्त्रविराजितम्। प्रतिवक्त्रं त्रिनयनं व्याघ्रचर्माम्बरावृतम् ॥१०॥
पद्ममध्ये समासीनमतिसुन्दरविग्रहम्। एवं ध्यात्वार्चयेत् पीठे शैवे सर्वोपचारकैः ॥११॥
पद्मे वसुदले रम्ये चतुरस्त्रत्रयावृते। चतुर्द्वारसमायुक्ते पूर्वमङ्गानि पूजयेत् ॥१२॥
लोकेश्वरानथाभ्यर्च्य तदस्त्राणि च संयजेत्। एवं समर्चयेन्मन्त्री नीलकण्ठं महेश्वरम् ॥१३॥
दृष्ट्या विनाशयेत् क्ष्वेडं नीलकण्ठ इवापरः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वत् प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि अरुणाय ऋषये नमः। मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीनीलकण्ठाय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततो मूलेन करशुद्धिं कृत्वा, हरहर स्वाहा हृदयाय नमः। कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा। नीलकण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्। कालकूटविषभक्षणाय हुंफट् कवचाय हुं। नीलकण्ठाय स्वाहा अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं करयोर्विन्यस्य नेत्रवर्जं हृदयादिपञ्चाङ्गेष्वपि न्यसेत् ततः (शिरसि प्रों नमः। कण्ठे व्रीं नमः। शिरसि ठः नमः। इति विन्यस्य, ध्यानाद्यङ्गपूजान्ते लोकेशांस्तदस्त्राणि च प्राग्वद्वीथीद्वये पूजयेत्। ततः) प्राग्वत् सर्वं समापयेदिति। तथा—

**लक्षत्रयं जपेद् देवि दीक्षितो विजितेन्द्रियः। हविषा सघृतेनाथ हुनेद् देवि दशांशतः ॥१४॥
तर्पणं मार्जनं कृत्वा भोजयेन्मधुरैर्द्विजान्। एवं सिद्धे मनौ देवि मन्त्री हरति तत्क्षणात् ॥१५॥
क्ष्वेडत्रयं न संदेहो नीलकण्ठ इव स्वयम्।**

नीलकण्ठ मन्त्र—श्रीकण्ठ संहिता के अनुसार क्ष्वेडत्रय का विनाशक तीन अक्षरों का नीलकण्ठ मन्त्र है—प्रों व्रीं ठः। इसको जानने वाले के देखने-मात्र से ही विष का नाश हो जाता है। इस मन्त्र के ऋषि अरुण, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता नीलकण्ठ शिव कहे गये हैं। प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अरुणाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः हृदये श्रीनीलकण्ठाय देवतायै नमः। तदनन्तर समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करे। तदनन्तर मूलमन्त्र से करशुद्धि करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—हर हर स्वाहा हृदयाय नमः, कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा, नीलकण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्, कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् कवचाय हुं, नीलकण्ठाय स्वाहा अस्त्राय फट्। इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों से नेत्र छोड़कर पञ्चाङ्ग न्यास करे। तब मन्त्र वर्णन्यास करे—शिर पर प्रों नमः, कण्ठ में व्रीं नमः, शिर पर ठः नमः। तदनन्तर इस प्रकार ध्यान करे—

ध्यायेद् देवं नीलकण्ठं बालार्कायुतवर्चसम्। जटाजूटलसच्चन्द्रशकलं फणिसत्तमैः॥
कृताकल्पं कराम्भोजैर्दधानं जपमालिकाम्। शूलं च दक्षिणाधोर्ध्वे वामोर्ध्वे च कपालकम्॥
खट्वाङ्गं तदधोहस्ते पञ्चवक्त्रविराजितम्। प्रतिवक्त्रं त्रिनयनं व्याघ्रचर्माम्बरावृतम्॥
पद्ममध्ये समासीनमतिसुन्दरविग्रहम्।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद शैव पीठ पर पूजा करे। पूजा यन्त्र में अष्टदल कमल के बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनावे। अष्टदल के केसर में अंगपूजा करे। चतुरस्र की वीथियों में लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। शेष सब कुछ पूर्ववत् करे। दीक्षा-प्राप्त साधक जितेन्द्रिय रहकर तीन लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन घी के साथ हवि से करे। तर्पण-मार्जन के बाद ब्राह्मणों को मधुर भोजन करावे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से मन्त्री स्वयं नीलकण्ठ शिव होकर क्ष्वेडत्रय का हरण तत्क्षण कर देता है।

काम्यकर्मविनियोग:

स्पृष्ट्वा जपेद्विषग्रस्तं तत्क्षणान्निर्विषो भवेत् ।।१६।।

बीजाभ्यां प्रथमान्त्याभ्यां पार्श्वयोर्विषमाहरेत् । मध्येन मध्यगं सर्वं मनुनानेन संहरेत् ।।१७।।
एतन्मन्त्राभिसंजप्तकलशोदकसेचनात् । तक्षकेणापि संदष्टस्तत्क्षणान्निर्विषो भवेत् ।।१८।।
विलोक्य विषिणं मन्त्री प्रजपेत् सुसमाहित: । विषद्वयान्मुच्यतेऽसावचिरान्नात्र संशय: ।।१९।।
दृष्ट्वा क्ष्वेडग्रहग्रस्तं स्वशिर:कण्ठहृत्सु च । मन्त्रवर्णत्रयं न्यस्य देवतारूपकं गुरुम् ।।२०।।
स्मरम् स्वदक्षिणानामामध्यमातर्जनीषु च । मन्त्राक्षरद्व(त्र)यं देवि तदङ्गुलिभिरुत्तम: ।।२१।।
त्रिशूलमुद्रामापाद्य दष्टस्याभिमुखं नयेत् । प्रदर्श्य मन्त्रं प्रजपेत् पञ्चाशद्वारमद्रिजे ।।२२।।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं च तथा विषम् । रोगग्रहाद्यपस्मारानपमृत्युं च नाशयेत् ।।२३।।
पञ्चाशन्मनुना जप्तमन्त्रमौषधमेव च । भक्षितं क्ष्वेडरोगादिनाशनं परमं शिवे ।।२४।। इति।

विषग्रस्त का स्पर्श करके इस मन्त्र का जप करे तो वह तुरन्त विष के प्रभाव से मुक्त हो जाता है। पहले और दूसरे वर्ण से पार्श्वों के विष का और तीसरे वर्ण से मध्यगत विष को दूर करता है। इस मन्त्र से अभिमन्त्रित कलशजल से नहलाने पर तक्षक द्वारा काटा हुआ विषग्रस्त मनुष्य भी स्वस्थ हो जाता है। विषग्रस्त को देखते हुए मन्त्री जप करे तो तत्काल दोनों प्रकार के विषों का प्रभाव नष्ट हो जाता है। क्ष्वेड (श्वास रोग) ग्रस्त को देखकर अपने शिर कण्ठ हृदय में प्रों त्रीं ठ: तीनों बीजों का न्यास करके अपने को देवतारूप मानकर गुरु का स्मरण करे। अपने दाँयें हाथ की अनामा मध्यमा तर्जनी मे तीनों वर्णो को न्यस्त करके त्रिशूल मुद्रा बनाकर विषग्रस्त के मुख के सामने दिखाते हुए पचास बार मन्त्र-जप करे। इससे स्थावर जंगम कृत्रिम विष, रोग, ग्रहपीड़ा, अपस्मार (मृगी), अपमृत्यु का नाश होता है। इस मन्त्र के पचास जप से मन्त्रित अन्न और दवा खाने से श्वास नली के रोगों का नाश होता है।

तन्मन्त्रान्तरम्

तथा मन्त्रान्तरम्—

मन्त्रान्तरमथो वक्ष्ये नीलकण्ठस्य पार्वति । तारहृन्नीलकण्ठाय मनुरष्टाक्षरो भवेत् ।।१।।

तार: प्रणव:। हृत् नम:। नीलकण्ठाय स्वरूपम्। तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्री छन्द उच्यते । देवता नीलकण्ठोऽस्य विषग्रहविनाशन: ।।२।।
अङ्गध्यानार्चनाजाप्यहोमाद्यर्णत्रयोक्तवत् । तारं ङेनीलकण्ठोऽग्निवधूरष्टाक्षरोऽपर: ।।३।।
(अरुणोऽस्य मुनिश्छन्दो गायत्री देवता शिव: । नीलकण्ठो महापूर्वो विषरोगादिनाशन: ।।४।।)
करौ मूलेन संशोध्य पञ्चाङ्गविधिमाचरेत् । नीलकण्ठ: सङेर्हृच्च हृदयोपरि विन्यसेत् ।।५।।
स्वाहा नम: शिर: प्रोक्तं तारं हृच्च शिखा मता । नीलकण्ठ: सङेर्हृच्च कवचं परिकीर्तितम् ।।६।।
स्वाहा चैव हृदन्तास्त्रं पञ्चाङ्गानि न्यसेत्क्रमात् । दक्षतर्जनिकारम्भाद् वामतर्जनिकावधि ।।७।।
वर्णाष्टकं न्यसेन्मन्त्री पादोरुगुह्यनाभिषु । हृत्कण्ठमुखशीर्षेषु न्यसेद्वर्णाष्टकं प्रिये ।।८।।
पूर्वाद्यैराननैर्युक्त: श्वेतपीतारुणासितै: । अभयं वरदं चापं वासुकिं च दधद्भुजै: ।।९।।
ध्येयो देवस्तु पार्श्वस्थगौरीकश्चातिसुन्दर: । संहारनिर्विषस्तम्भावेशान् कुर्यात् क्रमाद्बुध: ।।१०।।

दक्षिणाध:करमारभ्य वामाध:करपर्यन्तमायुधध्यानम्।

त्र्यक्षरोक्तविधानेन पूजयेत् परमेश्वरम् । पुरश्चरणमप्युक्तं वर्णलक्षं महेश्वरि ।।११।।

अथ प्रयोग:—तत्र प्रात:कृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं विधाय, शिरसि अरुणाय ऋषये नम:। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नम:। हृदये श्रीमहानीलकण्ठाय देवतायै नम:। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये

विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततो मूलमन्त्रेण करशोधनं कृत्वा, नीलकण्ठाय नमः हृदयाय नमः। स्वाहा नमः शिरसे स्वाहा। ॐनमः शिखायै वषट्। नीलकण्ठाय नमः कवचाय हुं। स्वाहा नमः अस्त्राय फट्। इति पञ्चाङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तं करयोर्विन्यस्य नेत्रवर्जं हृदयादिष्वपि न्यसेत्। ततो यथोक्तरूपं ध्यात्वान्यत् सर्वं त्र्यक्षरवत् कुर्यादिति।

नीलकण्ठ मन्त्रान्तर—नीलकण्ठ का एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ नमः नीलकण्ठाय। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री एवं देवता विषग्रह के विनाशक नीलकण्ठ कहे गये हैं। एक अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ नीलकण्ठाय स्वाहा। इसके ऋषि अरुण, छन्द गायत्री एवं देवता विष-रोगादि के नाशक महानीलकण्ठ शिव कहे गये हैं।

पूजा—प्रात:कृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अरुणाय (ब्रह्मणे) ऋषये नमः, मुखे गायत्री छन्दसे नमः, हृदये श्रीमहानीलकण्ठाय देवतायै नमः। अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके मूल मन्त्र से करशोधन करके पञ्चाङ्ग न्यास करे—नीलकण्ठाय नमः हृदयाय नमः, स्वाहा नमः शिरसे स्वाहा, ॐ नमः शिखायै वषट्, नीलकण्ठाय नमः कवचाय हुं, स्वाहा नमः अस्त्राय फट्। इन्हीं पञ्चाङ्ग मन्त्रों से नेत्रों को छोड़कर हृदयादि न्यास भी करे। तब मन्त्र वर्ण न्यास पैरों, ऊरुओं, गुह्य, नाभि, हृदय, कण्ठ, मुख, मस्तक में करे। तदनन्तर श्वेत, पीत, लाल एवं काले मुखों से युक्त: अभय, वरद, चाप एवं नाग को भुजाओं में धारण किये, समीप में अति सुन्दर गौरी को बैठाये देव का ध्यान करे। तत्पश्चात् संहार निर्विष स्तम्भ आवेश में क्रमशः इस मन्त्र का प्रयोग करे। त्र्यक्षर मन्त्र के समान ही सभी पूजा कर्म करे एवं सिद्धि हेतु वर्णलक्ष जप करे।

चिन्तामणिमन्त्रः

अथ चिन्तामणिमन्त्रः। तत्र श्रीशिवरहस्ये—

कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नविचित्रिते। नानाद्रुमलताकीर्णे मन्दवायुतरङ्गिते॥१॥
नानाकुसुमसौरभ्यैरामोदितदिगन्तरे। सिद्धकिन्नरगन्धर्वचारणाप्सरसां गणैः॥२॥
गीतवादित्रनृत्यैश्च प्रीणयद्भिः शिवं सदा। ब्रह्मविष्णुसहस्राक्षप्रमुखैरमरैस्तथा॥३॥
गजास्यनन्दिभृङ्ग्याद्यैर्गणैर्मुनिगणैरपि। निषेवितं शिलापृष्ठे वैडूर्यमणिनिर्मिते॥४॥
सिंहासनसमासीनमर्धनारीश्वरं हरम्। सुप्रसन्नमुखं शम्भुं स्कन्दः पप्रच्छ शङ्करम्॥५॥

स्कन्द उवाच

भगवन् सर्वधर्मज्ञ जगदाद्य जगत्पते। अनाद्यन्ताखिलाधार भक्तानुग्रहविग्रह॥६॥
रहस्यं किञ्चिदिच्छामि प्रष्टुं त्वां भक्तवत्सल। भक्तोऽस्मि तव देवेश वदस्व कृपया विभो॥७॥
चिन्तामणिमनुर्देव सूचितो यस्त्वया पुरा। इदानीं तं जगन्नाथ श्रोतुमिच्छामि शङ्कर॥८॥

श्रीमहादेव उवाच

साधु साधु गुह प्राज्ञ सर्वतन्त्रार्थपारग। रहस्यमपि वक्ष्यामि भक्तोऽसीति षडानन॥९॥
न कस्यापि मयाख्यातं त्वत्स्नेहात् प्रवदाम्यहम्। गोपितव्यं त्वया वत्स न प्रकाश्यं षडानन॥१०॥
सद्भक्ताय सुशान्ताय सुकुलीनाय दीयताम्। मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणु वत्स समाहितः॥११॥
भुजङ्गेशं समुद्धृत्य क्रोधीशं तदधः कुरु। श्वेतेशं तदधः कुर्यान्महाकालं च षण्मुख॥१२॥
(पुनर्भुजङ्गमालिख्य कपालीशमधः कुरु। अनुग्रहेशमर्घीशमक्रूरेशं च योजयेत्॥१३॥
गुरूपदेशविधिना बीजं चिन्तामणेरिदम्। मथित्वा ज्ञानदण्डेन वेदागममहार्णवम्॥१४॥
उद्धृतोऽयं महामन्त्रः साक्षान्मोक्षैकसाधनम्। तपस्तप्त्वा चिरं पूर्वं कश्यपस्तु प्रजापतिः॥१५॥
दृष्टवांस्तेजसां राशिं प्रज्वलन्तं महाद्भुतम्। मन्त्ररत्नं महदिदं चिन्तयंस्तु चिरं पुनः॥१६॥
स्रष्टोऽभूज्जगतां वत्स चिन्तामणिरतो यतः। इति।

भुजङ्गेशो रेफः, क्रोधीशः ककारः, श्वेतेशः षकारः, महाकालो म, पुनर्भुजङ्गो र, कपालीशो य, अनुग्रहेशः औ, अर्घीशः ऊ, अक्रूरेशो बिन्दुः, एतैः संपिण्डितं रक्षमरयऔऊँ इति कूटं भवति। तथा—

ऋषिः कश्यप आख्यातोऽनुष्टुप् छन्द उदाहृतम्। देवता जगतामादिः पार्वतीपतिरीरितः ॥१७॥
क्षकारो बीजमाख्यातं रेफः शक्तिरितीरिता। मकारः कीलकं वत्स रेफाद्यैः षड्भिराचरेत् ॥१८॥
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तानि षण्मुख।) ततः सञ्चिन्तयेद् देवमर्धनारीश्वरं शिवम् ॥१९॥
विद्रुमारकवामार्धदेहं नीलापराङ्गकम्। अहिगङ्गाशशाङ्कार्धविलसत्तुङ्गमौलिकम् ॥२०॥
हावभावविलासार्धनारीरूपं महेश्वरम्। भीषणापरदेहार्धं वामोर्ध्वे पाशमद्भुतम् ॥२१॥
पद्मं च तदधोहस्ते दधानं दक्षिणोर्ध्वके। करे त्रिशूलं तस्याधो नृकपालं च षण्मुख ॥२२॥
प्रविभक्तांशुकाकल्पं मालालेपविराजितम्। एवं ध्यात्वा यजेत् पीठे शैवे सर्वोपचारकैः॥२३॥
अष्टपत्राम्बुजद्वन्द्वं चतुरस्रत्रयं ततः। चतुर्द्वारसमोपेतमस्मिन् षण्मुख पूजयेत् ॥२४॥
आदावङ्गानि संपूज्य केसरेषु यथाविधि। अर्चयेदष्टपत्रेषु कार्तिकेय वृषादिकान् ॥२५॥
ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्या द्वितीयेऽष्टदले पुनः। लोकेश्वरांस्तदस्त्राणि प्राग्वत् वीथीद्वये यजेत् ॥२६॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि कश्यपाय ऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीअर्धनारीश्वराय देवतायै नमः। गुह्ये क्षं बीजाय नमः। पादयोः रं शक्तये नमः। नाभौ मं कीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततः रं हृदयाय नमः। कं शिरसे स्वाहा। षं शिखायै वषट्। मं कवचाय हुं। रं नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्। षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिनेत्रान्तेषु पञ्च मन्त्रान् विन्यस्य अस्त्रमन्त्रेण तालत्रयं दशदिग्बन्धनं कृत्वा ध्यानादिपुष्पोपचारान्ते अष्टदलकेसरेषु आग्नेये रं हृदयाय नमः। ईशाने कं शिरसे नमः। नैर्ऋत्ये षं शिखायै नमः। वायव्ये मं कवचाय नमः। देवाग्रे रं नेत्राय नमः। देवाग्रादिचतुर्दिक्षु यं अस्त्राय नमः। इति षडङ्गानि संपूज्य, प्रथमाष्टदले देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन— वृषाय नमः। क्षेत्रपालाय नमः। चण्डेश्वराय नमः। दुर्गायै नमः। षण्मुखाय नमः। नन्दिने नमः। विघ्ननायकाय नमः। सेनापतये नमः। इति संपूज्य, द्वितीयाष्टदले तथैवारभ्य—आं ब्राह्म्यै नमः। ईं माहेश्वर्य्यै नमः। ऊं कौमार्य्यै नमः। ॠं वैष्णव्यै नमः। ॡं वाराह्यै नमः। ऐं इन्द्राण्यै नमः। औं चामुण्डायै नमः। अः महालक्ष्म्यै नमः। इति संपूज्येन्द्रादिपूजादि सर्वं प्राग्वत् समापयेदिति। तथा—

एकलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः। जुहुयात् तद्दशांशेन त्रिमध्वक्तैः सतण्डुलैः ॥२७॥
तिलैः सन्तर्पयेद् देवं शुद्धतोयैः षडानन। ततोऽभिषिञ्चेन्मूलेन स्वमूर्धनि समाहितः ॥२८॥
ब्राह्मणांस्तर्पयेत् पश्चादन्नपानैः सदक्षिणैः। एवं सिद्धमनुर्वत्स प्रयोगान् विदधीत वै ॥२९॥ इति।

एष लक्षजपः कृतयुगपरः। शिवसद्भावे तु शिवशक्त्योः पृथक्पृथग्ध्यानमुक्तम्। यथा—

अथवा देवदेवेशि ध्यायेदष्टभुजं शिवम्। दक्षिणोर्ध्वे करे देवि परशुं तदधः क्रमात् ॥१॥
खड्गं वह्निं शरांश्चैव दधानं वामबाहुभिः। भुजङ्गं त्रिशिखं चैव कपालं चापमेव च ॥२॥
ऊर्ध्वादितः स्त्रीविलासं त्रीक्षणं त्रिदशार्चितम्। गङ्गातरङ्गविलसच्चन्द्रखण्डाहिशेखरम् ॥३॥
इति सञ्चिन्त्य देवेशं तत्पार्श्वस्थां शिवामपि। अरुणामरुणाकल्पामरुणांशुकधारिणीम् ॥४॥
अरुणालेपमालाढ्यां त्रिनेत्रां मणिभूषणाम्। शूलैः षोडशभिर्व्यग्रभुजषोडशमण्डिताम् ॥५॥
चिन्तयेत् परमेशानीं साधकाभीष्टदायिनीम्। इति।

प्रायशः काम्यमेतदिति चिन्त्यं, नित्यं तु प्रागुक्तमेव।

चिन्तामणि मन्त्र—श्रीशिवरहस्य में कहा गया है कि रम्य कैलासशिखर पर सिंहासन पर अर्धनारीश्वर शिवजी बैठे

हैं। यह शिखर नाना रत्नों से चित्रित है। विविध लता-वृक्षों से हरा-भरा है। मन्द वायु से तरङ्गित है। विविध कुसुम- सौरभ से इसकी दिशायें सुगन्धित हैं। सिद्ध किन्नर गन्धर्व चारण अप्सरागण गी वाद्य नृत्य करके शिव को प्रसन्न कर रहे हैं। वैदूर्य मणि-निर्मित शिलाओं पर ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रादि प्रमुख देवता, गजमुख, नन्दि, भृंगी आदि गणों एवं मुनिगण आसीन हैं। कार्तिकेय ने उन कल्याणकारक प्रसन्नमुख शंकर से पूछा—इस प्रकार हे भगवन्! आप सभी धर्मों के जानकार, जगत् के रचयिता जगन्नाथ, अनाद्यन्त सबों के आधार, भक्तानुग्रहविग्रह, भक्तवत्सल हैं, आपसे कुछ रहस्य मैं पूछना चाहता हूँ। मैं आपका भक्त हूँ। कृपया यह बतलाइये कि जिस चिन्तामणि मन्त्र के बारे में पहले आपने पूर्व में कहा है, वह क्या है? उसे सुनने की मेरी इच्छा है।

महादेव ने कहा—हे गुह! तुझे साधुवाद देता हूँ। तुम समस्त तन्त्रार्थों के ज्ञाता हो एवं अत्यन्त बुद्धिमान् हो; अतः तुमसे इस रहस्य को मैं कहता हूँ। अभी तक किसी को इसे नहीं बतलाया है। तुम्हारे स्नेहवश कहता हूँ। तुम भी इसे गुप्त रखना; किसी से मत कहना। सद् भक्त, सुशान्त एवं कुलीन को ही इसे बतलाना चाहिये। अब मैं मन्त्रोद्धार कहता हूँ, एकाग्रता से सुनो। श्लोक १२-१३ का उद्धार करने पर चिन्तामणि पिण्ड मन्त्र होता है—र क्ष म र य औ ॐ।

गुरु के उपदेश की विधि से यह बीज चिन्तामणि होता है। वेद एवं आगम रूपी महासागर को ज्ञानदण्ड से मन्थन करके इसे निकाला गया है। यह उद्धृत मन्त्र साक्षात् मोक्ष का साधन है। कश्यप प्रजापति ने बहुत दिनों तक तप किया तब अतीव अद्भुत प्रज्वलित तेजःराशि को देखा। तब इस मन्त्ररत्न का चिन्तन बहुत दिनों तक किया। इससे वे संसार के स्रष्टा हुए क्योंकि यह मन्त्र चिन्तामणि है। इसके ऋषि कश्यप, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता जगदाधभूत पार्वतीपति शंकर हैं। क्षकार इसका बीज एवं रकार शक्ति कहा गया है एवं मकार कीलक है।

पूजन—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि कश्यपाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्री अर्द्धनारीश्वराय देवतायै नमः, गुह्ये क्षं बीजाय नमः, पादयोः रं शक्तये नमः। नाभौ मं कीलकाय नमः। न्यास के बाद अभीष्ट-सिद्ध्यर्थ विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—रं हृदयाय नमः, कं शिरसे स्वाहा, षं शिखायै वषट्, मं कवचाय हुं, रं नेत्रत्रयाय वौषट्, यं अस्त्राय फट्। इन षडङ्ग मन्त्रों से करन्यास करके हृदय से नेत्र तक पाँच मन्त्रों का न्यास करके अस्त्रमन्त्र से तीन ताली बजाकर दश दिग्बन्ध करके अर्धनारीश्वर शिव का इस प्रकार ध्यान करे—

विद्रुमारकवामार्धदेहं नीलापराङ्गकम्। अहिगङ्गाशशाङ्कार्धविलसत्तुङ्गमौलिकम्।।
हावभावविलासार्धनारीरूपं महेश्वरम्। भीषणापरदेहार्धं वामोर्ध्वे पाशमद्भुतम्।।
पद्मं च तदधोहस्ते दधानं दक्षिणोर्ध्वके। करे त्रिशूलं तस्याधो नृकपालं च षण्मुख।।
प्रविभक्तांशुकाकल्पं मालालेपविराजितम्।

ध्यान के बाद पुष्पोपचार से पूजा करके अष्टदल केसर में आग्नेय कोण में रं हृदयाय नमः, ईशान में कं शिरसे नमः, नैर्ऋत्य में षं शिखायै नमः, वायव्य में मं कवचाय हुं नमः, देव के आगे रं नेत्राय नमः, देवाग्र से चारों दिशाओं में यं अस्त्राय नमः—इस प्रकार की षडङ्ग पूजा के बाद प्रथम अष्टदल में देव के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से इस प्रकार इस मन्त्रों से पूजा करे—वृषाय नमः, क्षेत्रपालाय नमः, चण्डेश्वराय नमः, दुर्गायै नमः, षण्मुखाय नमः, नन्दिने नमः, विघ्ननायकाय नमः, सेनापतये नमः।

द्वितीय अष्टदल में उसी प्रकार से आं ब्राह्मयै नमः, ईं माहेश्वर्यै नमः, ऊं कौमार्यै नमः, ॠं वैष्णव्यै नमः, ऐं इन्द्राण्यै नमः, औं चामुण्डायै नमः, अः महालक्ष्म्यै नमः से पूजन करे चतुरस्र में इन्द्रादि लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। शेष सभी पूर्ववत् करके पूजा समाप्त करे।

एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन मधुराक्त चावल तिल से करे। शुद्ध जल से तर्पण करे। मूल मन्त्र से अपने शिर पर मार्जन करे। ब्राह्मणों को अन्न-पान-दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करे। इस प्रकार के सिद्ध मन्त्र से प्रयोग करे। शिव सद्भाव

में शिव एवं शक्ति का ध्यान पृथक्-पृथक् कहा गया है। वहाँ कहा गयाहै कि अष्टभुज शिव का ध्यान करे। उनके दाहिने हाथों में ऊपर से क्रमश: परशु, खड्ग, वह्नि एवं शर हैं तथा बाँयें में क्रमश: सर्प, त्रिशिख कपाल एवं चाप हैं। ऊपर स्त्रियों का विलासस्वरूप, देवों से वन्दित तृतीय नेत्र है एवं माथे पर गंगा तरंगों से शोभायमान चन्द्रखण्ड है। शिव के बगल में लाल वर्ण की, लाल वस्त्रों वाली, लाल अंग राग एवं माला धारण की हुई, तीन नेत्रों वाली, मणियों के आभूषण से युक्त, सोलह भुजाओं में शूल आदि धारण करने वाली, समस्त अभीष्टों को देने वाली शिवा का ध्यान करे। नित्य ध्यान पूर्वोक्त रूप में ही करना चाहिये।

मन्त्रान्तरं तत्काम्यप्रयोगश्च

मन्त्रान्तरं शिवरहस्ये—

रेफं त्यक्त्वादिमं वत्स शिवशक्ती नियोज्य च। प्रजपेत्तेन सिद्धि: स्याच्छीघ्रमेव न संशय: ॥१॥

अयमर्थ:—बीजस्यादिमं रेफमपास्य तत्स्थाने शिवशक्ती हकारसकारौ संयोज्य जपेदिति।

प्रासादाद्यं जपेन्मन्त्रमयुतं मन्त्रवित्तम:। तेनावेशो भवेत् सद्यो भूतादीनां रुजामपि ॥२॥
ग्रस्तस्य शिरसि ध्यायेच्चन्द्रमण्डलमध्यगम्। स्वरै: षोडशभिर्वीतं स्रवत्पीयूषचर्चितम् ॥३॥
अपमृत्युज्वरक्ष्वेडभ्रान्त्यपस्मारनाशनम्। शिरोरोगहरं चापि गदितं शिखिवाहन ॥४॥
रेफादिवर्णषट्काढ्यषट्कोणान्तस्त्रिकोणगम्। प्रतिलोमस्वरावीतं ग्रस्तस्य शिरसि स्मरेत् ॥५॥
बीजमेतन्महासेन ग्रहार्तिं तत्क्षणाद्धरेत्। त्रिकोणं चिन्तयेन्मूर्ध्नि ग्रस्तजन्तो: षडानन ॥६॥
तन्मध्ये चिन्तयेद्बीजं ज्वलत्कालानलप्रभम्। क्षणादावेशयेन्मन्त्री ग्रहान् रोगादिकानपि ॥७॥
एतन्मन्त्राभिजप्तं च बन्धुजीवप्रसूनकम्। ग्रस्तस्य मूर्धनि क्षिप्तं क्षणादावेशकारकम् ॥८॥
पौष्टिके शान्तिके मन्त्रं शुक्लवर्णं विचिन्त्य च। सकारमादौ संयोज्य जपेन्मन्त्रं षडानन ॥९॥
आकृष्टौ च वशीकारे रक्तो रेफादिको भवेत्। हकारादिश्च हेमाभ: स्तम्भने क्षोभणे गुह ॥१०॥
धूम्रवर्णो यकारादिर्विद्वेषोच्चाटयोरपि। पीतवर्णो लकारादि: स्तम्भने शिखिवाहन ॥११॥
शुद्धस्फटिकसङ्काशो मन्त्रो ध्येयो मुमुक्षुभि:। अकारादिश्च जप्तव्यो देशिकादेशतो गुह ॥१२॥
वायुमण्डलमध्यस्थं मन्त्रं कृष्णं विचिन्तयेत्। नेत्रयोर्द्विषतां वत्स आन्ध्यमाशु प्रजायते ॥१३॥
बाधिर्यं कर्णयो रन्ध्रे छर्दिश्च वदने स्मृता। कुक्षौ शूलं करोत्याशु वायुं मर्मसु संस्मृतम् ॥१४॥
दु:सहं च शिरोरोगं कुर्याच्छिरसि षण्मुख। वाग्रोधं कण्ठनाले च चतुरस्रस्य मध्यगम् ॥१५॥
चन्द्रमण्डलमध्यस्थं स्वरै: षोडशभिर्वृतम्। नेत्रे ध्यातं रोगहरं हरत्याशु न संशय: ॥१६॥
रक्तस्रावं कृशाङ्गीनां योनौ ध्यातं हरेत् क्षणात्। कुक्षौ ध्यातं शूलनुत् स्याद्विस्फोटे विषमे ज्वरे ॥१७॥
तृषि रक्तामये वत्स भ्रमे दाहे शिरोगदे। स्मरेन्मन्त्रं विद्रुमाभं तत्र तद्दोषशान्तये ॥१८॥

मन्त्रान्तर—शिवरहस्य के अनुसार पूर्व मन्त्र 'रक्षमरयऔऊँ' में से पहले अक्षर 'र' के बदले 'ह्सौं' लगाकर अर्थात् 'ह्सौं क्षमरयऔऊँ' का जप करने से शीघ्र सिद्धि मिलती है। हौं क्षमरयऔऊँ का जप दश हजार करने से रोगियों में भी तुरन्त आवेश हो जाता है। भूतादि के रोगों से ग्रस्त के शिर पर सोलह स्वरों से वेष्टित चन्द्रमण्डल चूते हुए अमृत से भींगा हुआ ध्यान करे तो अपमृत्यु, ज्वर, क्ष्वेड, भ्रान्ति, अपस्मार का नाश होता है। रोगी के शिर पर 'रक्षमरयऔ' से युक्त षट्कोण में त्रिकोण का चिन्तन प्रतिलोम स्वरों से युक्त करे तो ये बीज ग्रहपीड़ा से तुरन्त छुटकारा दिला देते हैं। रोगी के मूर्धा पर त्रिकोण में इन बीजों का चिन्तन ज्वलित कालानल के समान करे तो ग्रहों से पीड़ित मनुष्यों में भी तत्क्षण चेतना का सञ्चार हो जाता है। बन्धुजीव फूलों को अभिमन्त्रित करके रोगग्रस्त के मूर्धा पर डालने से तुरन्त चैतन्यता आती है। पौष्टिक और शान्ति कर्म में श्वेत वर्ण के मन्त्र का चिन्तन करे। मन्त्र के पहले 'स' लगाकर जप करे। आकर्षण और वशीकरण में रेफादि मन्त्र का चिन्तन लाल वर्ण का करे। स्तम्भन क्षोभण में मन्त्र के पहले 'हं' लगाकर बर्फ के वर्ण का चिन्तन करे। विद्वेषण-उच्चाटन में यकारादि

यन्त्र का धूम्र वर्ण का करे। स्तम्भन में लकारादि मन्त्र का चिन्तन पीले वर्ण का करे। मुमुक्षुजन शुद्ध स्फटिक वर्ण के मन्त्र का चिन्तन करें। गुरु की आज्ञा से अकारादि मन्त्र का जप करे। वायुमण्डल में मन्त्र का चिन्तन काले वर्ण का करे। इससे शत्रु शीघ्र अन्धे हो जाते हैं। शत्रु के कानों में बहरापन, नासिका छिद्रों में सर्दी, पेट में दर्द करते हुए वायु का चिन्तन करे। इससे असह्य शिरदर्द होता है। कण्ठनली में वाणी अवरुद्ध होती है। चतुरस्र के मध्य में चन्द्रमण्डल मध्यस्थ सोलह स्वरों से घिरे इनका ध्यान करने से नेत्ररोग नष्ट होता है। कृशांगी की योनि में ध्यान करने से रक्तस्राव बन्द होता है। कुक्षि में ध्यान करने से पेटदर्द ठीक होता है। चेचक, विषम ज्वर, तृष्णा, खून में रोग, भ्रम, जलन, शिरदर्द में मूंगे के वर्ण के मन्त्र का ध्यान करे तो शान्ति होती है।

अत्यारक्तं त्रिकोणान्तःस्थितं बीजं स्मरेद्गुह । यस्य मूर्ध्नि स वश्यः स्यादचिराद्दासवद्ध्रुवम् ॥१९॥
इष्टाङ्गनाहृदम्भोजे स्थितं मन्त्रं विचिन्त्य च । मन्त्रवर्णैर्दृढं बद्ध्वा तेजोरूपं च संस्मरेत् ॥२०॥
तच्छीर्षमाशु पाशेन कर्षयेद्योषितं ध्रुवम् । स्वनामगर्भितं बीजं योषायोनौ विचिन्तयेत् ॥२१॥
वशयेत् तत्क्षणाद्योषां स्रावयेच्छुक्रमेव च । निजलिङ्गशिरःस्थं तद्बीजं सञ्चिन्तयेद्गुह ॥२२॥
प्रवेशयेद्योनिमध्ये संपर्काद्योषितं वशे । विदध्याद्द्रावयेच्चैव नात्र कार्या विचारणा॥२३॥
कुलालमृदमानीय तत्र बीजं समालिखेत् । तन्मकारस्थरेफे तु साध्याख्यां कर्मसंयुताम् ॥२४॥
विलिख्य तत् त्रिकोणेन वेष्टयेत्तद्बहिस्ततः । षट्कोणेन समावेष्ट्य षट्सु कोणेषु चालिखेत् ॥२५॥
रेफं सबिन्दुकं तच्च विलोमैर्वेष्टयेत् स्वरैः । प्राणप्रतिष्ठसां तस्याथ कृत्वा सम्यक् षडानन ॥२६॥
निखनेच्चुल्ल्यधस्ताच्च तत्र पाकं समाचरेत् । तदन्नभक्षणात् सद्यो वश्यो भवति निश्चितम् ॥२७॥
पतिः प्रियायाः षड्वक्त्र नात्र कार्या विचारणा । मधुरत्रययुक्तेन शालिपिष्टेन षण्मुख ॥२८॥
कृत्वा पुत्तलिकां सम्यक् स्पष्टाङ्गीमतिमञ्जुलाम् । प्रपदाभ्यां च जङ्घाभ्यां जानुभ्यामूरुयुग्मतः॥२९॥
नाभेरधस्ताद्धृदयात् कण्ठादाशीर्षकं ततः । एवं द्वादशधा छित्वा तीक्ष्णशस्त्रेण साधकः ॥३०॥
मूलमन्त्रेण जुहुयाद्यमुद्दिश्य षडानन । स वश्यो भवति क्षिप्रं नात्र कार्या विचारणा ॥३१॥
चतुरस्रं समं कृत्वा नागवल्लीदले गुह । तन्मध्ये तु वकारस्य बीजे साध्यं समालिखेत् ॥३२॥
मन्त्रमध्यमकाराधःस्थिते रेफे विचक्षणः । चतुरस्रं चतुष्कोणे ठकारं बिन्दुसंयुतम् ॥३३॥
विलिख्य स्थापितप्राणं मूलमन्त्राभिमन्त्रितम् । अष्टोत्तरसहस्रेण शिरोरोगी प्रभक्षयेत् ॥३४॥
आम्बिकेयाचिरादेव रोगान्मुक्तः सुखी भवेत् । सरेफेण ककारेण कण्ठं साध्यस्य षण्मुख ॥३५॥
दक्षस्तनं षकारेण वामं चैव मकारतः । दक्षांसं रेफतो बद्ध्वा वामं चापि यकारतः ॥३६॥
औकारेण मुखं वत्स नाभिमूकारतो गुह । वक्षो बिन्द्वर्धचन्द्राभ्यां बद्ध्वा कर्षन् स्मरेद्धिया ॥३७॥
मरणान्तं स वश्यः स्यादचिरान्नात्र संशयः । बन्धुजीवाख्यपुष्पेण त्रिकोणं रचयेद्गुह ॥३८॥
तन्मध्ये विलिखेद्बीजं चन्दनागरुकुङ्कुमैः । पुष्पेण तेन तन्मध्ये कार्तिकेय विधानतः ॥३९॥
अग्निं संस्थाप्य तत्रेशं संपूज्य विधिवत् सुत । हुनेदष्टोत्तरशतं घृतैः संपातयेद् घृतम् ॥४०॥
त्रिलोहनिर्मितायां तु मुद्रिकायां विचक्षणः । संपातसिक्तां तावत्स सहस्रेणाभिमन्त्रिताम् ॥४१॥
साष्टकेनाथ तां हस्ते धारयेद्यस्तु भूपतिः । जयेत्स युधि षड्वक्त्र बलाढ्यानखिलान् रिपून्॥४२॥
विषवेतालभूतादिदुरितैर्बाध्यते न सः ।

जिसके माथे पर अति रक्त त्रिकोण में स्थित बीजों का चिन्तन किया जायेगा, वह शीघ्र दासवत् वश में हो जाता है। वांछित स्त्री के हृदयकमल में स्थित मन्त्र का चिन्तन करे एवं मन्त्रवर्णों से बद्ध ज्योति रूप का स्मरण उसके शिर पर करे तो वह स्त्री थोड़े ही समय में आकर्षित होती है। अपने नाम से गर्भित बीजों का चिन्तन स्त्री की योनि में करे तो स्त्री वश में होती है। बीजों का चिन्तन अपने लिङ्ग के शिर पर स्थित रूप में करे। उन पर अपना वीर्यपात करे और वांछित औरत

की योनी में लिङ्ग प्रविष्ट करे तो वह तत्काल वश में होती है। कुम्हार के हाथ की मिट्टी ले आये। उस पर मन्त्रबीजों को लिखे। मकारस्थ 'र' में साध्य नाम-कर्म लिखे। उसे बाहर से त्रिकोण से वेष्टित करे। त्रिकोण को षट्कोण से वेष्टित करे। छः कोणों में 'रं' लिखे। उसे विलोम सानुस्वार स्वरों से वेष्टित करे और उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करे। उसे चूल्हे के नीचे गाड़कर खाना बनावे। उस अन्न को खाने से पति वश में होता है। मधुरत्रय से चावल पीसकर पिष्ट से सुन्दर पुत्तली बनावे। उसे बारह भागों में विभक्त करे—पैरों के दो खण्ड, दो घुटने, दो जङ्घा, दो ऊरु, नाभि से नीचे एक खण्ड, नाभि से हृदय तक एक खण्ड, हृदय से कण्ठ तक एक खण्ड और कण्ठ से मस्तक एक खण्ड। साध्य नाम के साथ मूल मन्त्र से एक खण्ड से हवन करे। ऐसा करने से साध्य शीघ्र वश में होता है. पान के पत्ते पर चतुरस्र बनावे, उसके मध्य में 'वं' के मध्य में साध्यनाम लिखे। चतुरस्र के कोणों मे 'म्रं ठं' लिखे। प्राण-प्रतिष्ठा करे। मूल मन्त्र के एक हजार आठ जप से मन्त्रित करे। उसे शिरोरोगी को खिलावे तो इससे रोगी शीघ्र ठीक हो जाता है।

साध्य का कण्ठ 'क' से, दक्ष स्तन 'ष' से, वाम म से, दाँयाँ कन्धा 'रं' से, बाँयाँ कन्धा 'यं' से, मुख 'औं' से, नाभि 'ऊ' से वक्ष ँ से बाँधकर खींचते हुए चिन्तन करे। ऐसा करने से साध्य आजीवन वश में तुरन्त हो जाता है। बन्धुजीव के फूलों से त्रिकोण बनावे। त्रिकोण के मध्य में चन्दन अगर कुङ्कुमफूलों से मन्त्र बीजों को लिखे। उसमें विधान से अग्नि का स्थापन करे और पूजन करे। घी से एक सौ आठ हवन करे। हुत शेष घी को पात्र में टपकावे। उस सम्पात घी में त्रिलोक की अंगूठी को डालकर एक हजार आठ जप से मन्त्रित करे। जो राजा इस अंगूठी को धारण करता है, वह सभी बलवान शत्रुओं को युद्ध में जीत लेता है। उसे जहर-वेताल-भूतादि की बाधा नहीं होती।

वक्ष्ये भागं त्रिलोहस्य शृणु षण्मुख सांप्रतम् ॥४३॥

सोमसूर्याग्निरूपत्वान्मातृकायाः षडानन। तन्मयत्वात् त्रिलोहस्य भागास्तद्वर्णसंख्यया ॥४४॥
भवेद्रूप्यस्य सौम्यत्वाद्भागः षोडश उच्यते। काञ्चनस्यार्करूपत्वात्तद्वर्णाः पञ्चविंशतिः ॥४५॥
तेन भागस्तस्य तावत्ताम्रस्याग्निमयत्वतः। तद्वर्णाश्च दशैतेन तस्य भागोऽपि तादृशः ॥४६॥
अष्टपत्रं लिखेत् पद्मं कर्णिकायां षडस्रकम्। तन्मध्ये च त्रिकोणं स्यात्तन्मध्ये बीजमालिखेत् ॥४७॥
साध्याख्याकर्मसंयुक्तं षट्कोणेषु षडङ्गकम्। लिखेत् पूर्वादिपत्रेषु बीजवर्णान् विभज्य च ॥४८॥
रंकंषंमंरंयं इति औंऊमिति च षण्मुख। बहिर्वृत्तचतुष्कं स्यादन्तरालत्रयान्वितम् ॥४९॥
(स्वरानाद्यान्तराले तु कादिमान्तान् द्वितीयके। तृतीये तु यकारादीन् वेष्टनत्वेन संलिखेत् ॥५०॥
चतुरस्रं बहिष्कृत्वा तस्य कोणेषु संलिखेत्। बीजं नरहरेर्वत्स क्ष्रौमित्यक्षररूपकम्)॥५१॥
एतद्यन्त्रं धृतं सर्वरक्षाकरमनुत्तमम्। अस्मिन् यन्त्रे समाधाय कलशं विधिवद्गुह ॥५२॥
तत्र देवं समभ्यर्च्य साध्यं तेनाभिषेचयेत्। ग्रहरोगादिभिर्मुक्तः सुचिरं सुखमाप्नुयात् ॥५३॥
(कृत्या रोगा विनश्यन्ति जीवेद्वर्षशतं गुह। ततः पूर्णेन्दुबिम्बाभं मण्डलं च समालिखेत्)॥५४॥
आदौ षट्कोणमालिख्य वकारं तत्र संलिखेत्। तन्मध्ये साध्यसंयुक्तं लिखेद्बीजं षडानन ॥५५॥
स्वरैः षोडशभिर्वीतं षडस्रेषु रमालिखेत्। बहिर्वृत्तद्वयं कृत्वा अन्तराले तथा लिखेत् ॥५६॥
ककारादिक्षकारान्तान् वर्णान् बिन्दुसमन्वितान्। अष्टकोणं बहिःकृत्वा तत्कोणेषु लिखेद्गुह ॥५७॥
नृसिंहबीजं प्रागुक्तं यन्त्रमेतत् षडानन। दुष्टग्रहविषव्याधिनाशनं सर्वसिद्धिदम् ॥५८॥
आदौ षट्कोणमालिख्य तन्मध्ये साध्यसंयुतम्। चिन्तामणिं समालिख्य षट्सु कोणेषु षण्मुख ॥५९॥
रंकंषंमंरंयं इति औंऊं इति च सन्धिषु। विलिख्य बहिरावेष्ट्य वृत्तेन प्रणवेण च ॥६०॥
तद्बहिर्वेष्टयेद्वत्स पुनर्वृत्तं समालिखेत्। तद्बहिश्चतुरस्रेण वेष्टयित्वा विचक्षणः ॥६१॥
नृसिंहबीजं विलिखेत्तत्कोणेषु च षण्मुख। एतद्यन्त्रं रोचनया विलिखेद्गोमयाम्भसा ॥६२॥
लाक्षावीतमिदं कृत्वा संजप्य विधिवद्बुधः। मस्तके धारयेदेतल्लक्ष्मीसौभाग्यवर्धनम् ॥६३॥

आयुरारोग्यविजयवश्यकृत् पुत्रपौत्रदम्। चौरव्यालमहारोगभूतापस्मारनाशनम् ॥६४॥
कारस्करतरोः शाखां साग्रामानीय तत्र च। अग्रदेशे महासेन सुरम्यं कारयेत् स्थलम्॥६५॥
षट्कोणं विलिखेद्वत्स तत्र साध्यसमन्वितम्। चिन्तामणिं विलिख्याथ षट्सु कोणेषु रं लिखेत्॥६६॥
वह्निज्वाला इवारक्तरेखाः कार्याश्च तद्बहिः। कार्तिकेयाथ संजप्तमष्टोत्तरसहस्रतः॥६७॥
मूलमन्त्रेण तत् सम्यक् स्थापयेद्यत्र तत्र वै। चौरव्याघ्रक्रोडसर्परिपुभूतपिशाचकाः ॥६८॥
न व्रजन्ति कदाचिच्च यन्त्रस्यास्य प्रभावतः। इति।

अब त्रिलोह के भाग को कहता हूँ। मातृकायें सोम-सूर्याग्निरूपा हैं। उनके वर्णों की संख्या के बराबर तीनो लौहों का मान होता है। त्रिलोह में सोमरूप चाँदी सोलह भाग, सूर्य रूप सोने का पच्चीस भाग, क्योंकि सोमात्मक सोलह स्वर हैं। रौप्यात्मक कचटतप वर्ग के पच्चीस वर्ण हैं। शेष य से क्ष तक दश वर्ण अग्न्यात्मक हैं; इसलिये ताम्बा का दश भाग होता है।

अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में षट्कोण बनावे। षट्कोण में त्रिकोण बनावे। त्रिकोण में साध्य नाम कर्म के साथ बीजमन्त्र लिखे। षट्कोण के कोणों में षडङ्ग मन्त्रों को लिखे। पूर्वादि पत्रों में रं कं षं मं रं यं औं ऊँ लिखे। इसके बाहर चार वृत्त बनावे। उनसे निर्मित तीन अन्तरालों में अन्दर से पहले अन्तराल में सोलह स्वरों को, द्वितीय अन्तराल में क से म तक पच्चीस वर्णो को. तृतीय अन्तराल में य से क्ष तक दश वर्णो को लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनाकर कोणों में नृसिंह बीज 'क्ष्रौं' लिखे। इस यन्त्र को धारण करने से सभी प्रकार से रक्षा होती है। इस यन्त्र के मध्य में कलश स्थापित करके उसमें देव का अर्चन विधिवत् करे। इसके जल से स्नान करने पर व्यक्ति ग्रह-रोगादि से मुक्त होकर दीर्घ काल तक जीवित रहता है। इससे कृत्यादि रोगों का नाश होता है। सौ वर्षो तक जीवित रहता है। तब पूर्वेन्दु विम्बाभ मण्डल बनावे। पहले षट्कोण बनावे। उसके मध्य में वकार लिखे। 'व' के मध्य में साध्य के साथ बीज लिखे। षट्कोणों में श्री के साथ सोलह स्वरों को लिखे। उसके बाहर दो वृत्त बनाकर उनसे बने अन्तराल में 'कं' से 'क्षं' तक की मातृका वर्णो को लिखे। इसके बाहर अष्टकोण बनाकर उसके कोणों में पूर्वोक्त नृसिंहवीज क्ष्रौं लिखे। यह यन्त्र दुष्ट ग्रह, विष एवं व्याधि का नाशक एवं समस्त सिद्धियाँ देने वाला है। पहले षट्कोण बनाकर उसके मध्य में साध्य नाम के साथ चिन्तामणि मन्त्र 'रक्षमरयऔंऊँ' लिखे। छः कोणों में रं कं षं मं रं यं लिखे। सन्धियों में 'औ ऊँ' लिखे। इसके बाहर वृत्त बनाकर उसे ॐ लिखकर वेष्टित करे। इसके बाहर वृत्त बनावे। उसके बाहर चतुरस्र बनावे। चतुरस्र के कोणों में नृसिंह बीज 'क्ष्रौं' लिखे। यह यन्त्र गोरोचन को गोबर जल में पीसकर लिखे। इसकी गोली बनाकर लाह से वेष्टित करे। मन्त्रजप से उसे मन्त्रित करके मस्तक पर धारण करने से सौभाग्य-वृद्धि होती है। उसे आयु, आरोग्य, विजय, वश्य, पुत्र, पौत्र प्राप्त होते हैं। चोर, सर्प, महारोग, भूत, अपस्मार का विनाश होता है। कारस्कर वृक्ष की शाखा लाकर रखे। उसके आगे स्थल को सुरम्य बनावे। उसमें षट्कोण बनावे। उसके मध्य में साध्य नामसहित चिन्तामणि मन्त्र लिखे। कोणों में 'रं' लिखे। उसके बाहर लाल रेखा से वृत्त बनावे। एक हजार आठ मन्त्र जप करे। शाखा को मन्त्रित करे। उसे जहाँ स्थापित किया जायेगा, वहाँ इस यन्त्र के प्रभाव से चोर, व्याघ्र, क्रोड, सर्प, शत्रु, भूत, पिशाच नहीं रहते।

तुम्बुरुरुद्रमन्त्रः

अथ तुम्बुरुरुद्रमन्त्रः। श्रीकण्ठसंहितायाम्—

श‍ृणु देवि प्रवक्ष्यामि मन्त्ररत्नं महाद्भुतम्। तुम्बुरोर्देवदेवस्य शत्रुक्षयकरं परम्॥१॥
संवर्तेशो महादेवि महाकालेन संयुतः। तदधश्च भुजङ्गेशो वालीशस्तदधः शिवे॥२॥
अर्घीशस्तदधो देवि सर्वोर्ध्वे श्रीमुखी स्थिता। बीजमेतत् समाख्यातं सर्वसिद्धिकरं परम्॥३॥

संवर्तेशः क्षकारः। महाकालेशो मकारः। भुजङ्गेशो रेफः। वालीशो यकारः। अर्घीशः ऊ। श्रीमुखी बिन्दुरेतैः संपिण्डितं क्ष्म्र्य्ऊं इति बीजं भवति।

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्री च्छन्द ईरितम् । श्रीरुद्रो देवता प्रोक्तः सर्वाभीष्टाप्तये भवेत् ॥४॥
षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् । क्षकाररहितं मूलबीजं जभसहान्वितम् ॥५॥
चत्वारि देवीबीजानि देव्यस्तु गिरिनन्दिनि । जयाख्या विजया पश्चादजिता चापराजिता ॥६॥
बीजमङ्गुलिषु न्यस्य करयोर्व्यापकं ततः । कनिष्ठादिषु विन्यस्येत् षडङ्गानि तलावधि ॥७॥
देवं देवीः स्वबीजाढ्याः कनिष्ठादिषु विन्यसेत् । पादान्मूर्धावधि न्यस्येन्मुष्टिना जगदीश्वरि ॥८॥
मूर्धादिपादपर्यन्तं तलाभ्यां व्यापकं न्यसेत् । षडङ्गानि पुनर्न्यस्य देवं देवीश्च पूर्ववत् ॥९॥
शिरोवदनहृन्नाभिगुदेषु क्रमतो न्यसेत् । एवं न्यस्ततनुर्देवि ध्यायेद् देवमनन्यधीः ॥१०॥
उद्यदादित्यरुचिरं चतुर्वक्त्रं त्रिलोचनम् । चन्द्रार्धशेखरं हस्तैश्चतुर्भिर्दधतं क्रमात् ॥११॥
दक्षिणोर्ध्वकरे देवि सृणिं खट्वाङ्गमप्यतः । पाशं वामोर्ध्वहस्ते च कपालं तदधो ज्वलत् ॥१२॥
रक्ताङ्गरागाभरणांशुकं चिपिटनासिकम् । अनर्घ्यरत्नाकल्पाढ्यं ध्यायेदेवं शिवं शिवे ॥१३॥
शैवं पीठं समभ्यर्च्य वक्ष्यमाणेन वर्त्मना । तत्रावाह्य यजेद्देवं सम्यग् गन्धादिभिः शिवे ॥१४॥
नपुंसकस्वरैर्विद्वाननुलोमविलोमगैः । धर्मादिकैरधर्माद्यैः पादगात्राणि कल्पयेत् ॥१५॥
इकारेण न्यसेद् देवि तन्तुरूपान् गुणानथ । चतुर्थपञ्चमाभ्यां तु स्वराभ्यां वरवर्णिनि ॥१६॥
मायाविद्यामये देवि अध ऊर्ध्वं छदे न्यसेत् । षष्ठस्वरेण पद्मं च कल्पयित्वा वरानने ॥१७॥
संध्यक्षरैर्महादेवि चतुर्भिश्च यथाक्रमम् । वामाद्याः पूजयेदेता वामा ज्येष्ठा ततः परम् ॥१८॥
रौद्री चेच्छा च ता ध्येया ज्वालारूपा महेश्वरि । इत्थं सङ्कल्पिते पीठे मूर्तिं सङ्कल्प्य मूलतः ॥१९॥
तस्मिन्नावाह्य देवेशं तुम्बुरुं देवि पूजयेत् । चतुर्द्वारसमायुक्तचतुरस्रत्रयावृते ॥२०॥
अष्टपत्राम्बुजे देवि यजेदावरणैः सह । आदावङ्गानि संपूज्य केसरेषु यथा पुरा ॥२१॥
दिक्पत्रेषु यजेद् देवि स्वस्वबीजादिकाः क्रमात् । वामाद्याः पूर्वमुदिता रक्ता रक्तानुलेपनाः ॥२२॥
अरुणांशुकपुष्पाढ्यास्ताम्बूलापूरिताननाः । वल्लकीवादनरता मदविभ्रममन्थराः ॥२३॥
कोणपत्रेषु चाभ्यर्च्या दूतीर्बीजादिकाः क्रमात् । दुर्भगा सुभगा चैव कराली मोहिनी ततः ॥२४॥
(बद्धाञ्जलिपुटाः किञ्चिदानम्रवदनाम्बुजाः । देवीसदृशभूषाढ्यास्तासां बीजानि पार्वति ॥२५॥
बकः श्वेतो भृगुश्चैव नकुली बिन्दुभूषिताः ।) बहिर्वीथीद्वये देवि लोकेशान् सायुधान् यजेत् ॥२६॥
इत्थं यो भजते देवि तुम्बुरुं विधिवन्नरः । न तस्य दुर्लभं किञ्चित् त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥२७॥ इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीतुम्बुरुरुद्राय देवतायै नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। क्ष्म्रां हृदयाय नमः। क्ष्म्रीं शिरसे स्वाहा। क्ष्म्रूं शिखायै वषट्। क्ष्म्रैं कवचाय हुं। क्ष्म्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ष्म्रः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रान् कनिष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य, पुनः क्षमरयूं नमः इति केवलबीजमेव कनिष्ठाद्यङ्गुलिषु विन्यस्य, करयोश्च व्यापकं कृत्वा, कनिष्ठयोः क्षमरयूं तुम्बुरुरुद्राय नमः। अनामिकयोः जमरयूं जयायै नमः। मध्यमयोः भमरयूं विजयायै नमः। तर्जन्योः समरयूं अजितायै नमः। अङ्गुष्ठयोः हमरयूं अपराजितायै नमः। इति विन्यस्य, पादादिमूर्धावधि क्षमरयूं नमः इति मुष्टिना विन्यस्य, पुनर्मूर्धादिपादपर्यन्तं करतलाभ्यां बीजं विन्यस्य, पुनः पूर्ववत् षडङ्गानि विन्यस्य, शिरोवचनहृन्नाभिगुदेषु प्राग्वद् देवं देवीश्च विन्यस्य, ध्यानाद्यात्मपूजान्ते पूजाचक्रं यथोक्तं कृत्वा संस्थाप्य, तत्र मण्डूकादिसिंहासनान्तं प्राग्वत्पीठं संपूज्य, सिंहासनस्य पादेषु ॠं धर्माय नमः। ॠं ज्ञानाय नमः। ऌं वैराग्याय नमः। ॡं ऐश्वर्याय नमः। तस्य गात्रेषु ऌं अधर्माय नमः। ॡं अज्ञानाय नमः। ॠं अवैराग्याय नमः। ॠं अनैश्वर्याय नमः। इति संपूज्य, ततोऽनन्तं पद्ममानन्दकन्दं संविन्नालं च संपूज्य, ईं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। ऊं विकामयकेसरेभ्यो०। उं सर्वतत्त्वरूपायै कर्णिकायै०। इति संपूजयेत्। अ. 'षष्ठस्वरेण पद्मं' चेत्यनेन

पद्ममध्यस्था कर्णिका लक्ष्यते, पद्मस्य प्रागेव पूजितत्वादिति। ततः सूर्यादिमण्डलपूजान्ते इं प्रबोधात्मने सत्त्वाय नमः, इत्यादिगुणत्रयं इकारादि, ततः ईं मायायै०। ऊं विद्यायै०। इति यथावत् संपूज्यात्मचतुष्टयपूजान्ते दिग्दलकेसरेषु— एं वामायै नमः। ऐं ज्येष्ठायै नमः। ओं रौद्र्यै नमः। औं इच्छायै नमः। इति शक्तिचतुष्टयं पूजयेत्। अत्र नवशक्तिपूजनं नास्तीति प्रतीयते, विशिष्य सबीजशक्तिचतुष्ट-यमात्रस्योक्तत्वात्। शैवपीठे नवशक्तिबहिर्भूतेच्छाशक्तेः संग्रहाच्चेति। इत्थं पीठपूजां विधाय, तत्र मूर्तिकल्पनादिषडङ्गपूजा-न्तेऽष्टदलेषु देवाग्रादिदिग्दलचतुष्टये प्रादक्षिण्येन—एं वामायै नमः। ऐं ज्येष्ठायै नमः। ओं रौद्र्यै नमः। औं इच्छायै नमः। अग्न्यादिकोणपत्रेषु—शं दुर्भगायै नमः। षं सुभगायै नमः। सं कराल्यै नमः। हं मोहिन्यै नमः। इति संपूज्येन्द्राद्यर्चनादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतैर्हुनेत्। तर्पणं मार्जनं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥२८॥

तुम्बरुमन्त्र—श्रीकण्ठसंहिता के अनुसार देवदेव तुम्बुरु का शत्रु विनाशक मन्त्र है—क्ष् म् र् य् ऊँ = क्ष्म्र्यूं। इसके ऋषि ब्रह्म, छन्द गायत्री एवं देवता रुद्र हैं। समस्त अभीष्ट की प्राप्ति के लिये इसका विनियोग किया जाता है।

पूजा—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदये श्रीतुम्बरुरुद्राय देवतायै नमः। तदनन्तर अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—क्ष्म्रां हृदयाय नमः, क्ष्म्रीं शिरसे स्वाहा, क्ष्म्रूं शिखायै वषट्, क्ष्म्रैं कवचाय हुं, क्ष्म्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्ष्म्रः अस्त्राय फट्। इन्हीं षडङ्ग मन्त्रों से कनिष्ठा से करतल तक करन्यास करे। फिर 'क्षमरयूं नमः' इन बीजों का कनिष्ठा से अंगूठों तक में न्यास करे। इसके बाद हाथों से व्यापक न्यास करके कनिष्ठिकाओं में क्षमरयूं तुम्बुरुरुद्राय नमः, अनामिकाओं में जमरयूं जयायै नमः, मध्यमाओं में भमरयूं विजयायै नमः, तर्जनियों में समरयूं अजितायै नमः, अंगुष्ठों में हमरयूं अपराजितायै नमः से न्यास करे। इसके बाद पैरों से मस्तक तक क्षमरयूं नमः कहकर मुट्ठियों से न्यास करे। फिर मूर्धा से पैरों तक करतल से बीजन्यास करे। पुनः पूर्ववत् षडङ्ग न्यास करके शिर, मुख, हृदय, नाभि, गुदा में पूर्ववत् देव-देवी का न्यास करके एकाग्र होकर इस प्रकार ध्यान करे—

उद्यदादित्यरुचिरं चतुर्वक्त्रं त्रिलोचनम्। चन्द्रार्धशेखरं हस्तैश्चतुर्भिर्दधतं क्रमात्।।
दक्षिणोर्ध्वकरे देवि सृणिं खट्वाङ्गमप्यतः। पाशं वामोर्ध्वहस्ते च कपालं तदधो ज्वलत्।।
रक्ताङ्गरागाभरणांशुकं चिपिटनासिकम्। अनर्घ्यरत्नाकल्पाढ्यं ध्यायेदेवं शिवं शिवे।।

ध्यान के बाद आत्म पूजा करके यथोक्त रूप में पूजाचक्र बनाकर स्थापित करे। उसमें मण्डूक से सिंहासन तक पूर्ववत् पीठ पूजा करे। सिंहासन के पायों में मन मन्त्रों से पूजा करे—ॠं धर्माय नमः, ॠं ज्ञानाय नमः, ॡं वैराग्याय नमः, ॡं ऐश्वर्याय नमः, सिंहासन के अंगों में ॡं अधर्माय नमः, ॡं अज्ञानाय नमः, ॠं अवैराग्याय नमः, ॠं अनैश्वर्याय नमः से पूजन करे तब अनन्त, पद्म आनन्दकन्द संविन्नाल की पूजा करे। तब पद्म की पूजा करे—ईं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः, ऊं विकारममकेसरेभ्यो नमः, उं सर्वतत्त्वरूपायै कर्णिकायै नमः, तब सूर्यादि मण्डल की पूजा के बाद इनकी पूजा करे—इं प्रबोधात्मने सत्त्वाय नमः, ईं प्रबोधात्मने रजोगुणाय नमः, ऊं प्रबोधात्मने तमोगुणाय नमः। तब ईं मायायै नमः। ऊं विद्यायै नमः से यथावत् पूजन करके आत्मचतुष्टय पूजा के अन्त में दिग्दल केसरों में—एं वामायै नमः, ऐं ज्येष्ठायै नमः, ओं रौद्र्यै नमः, औं इच्छायै नमः, शक्तिचतुष्टय की पूजा करे। इस प्रकार पीठपूजा करके उसमें मूर्ति कल्पित करके षडङ्ग पूजा के पश्चात् अष्टदल में पूर्वादि दिशाओं में देव के आगे से प्रदक्षिण क्रम से—एं वामायै नमः, ऐं ज्येष्ठायै नमः, ओं रौद्र्यै नमः, औं इच्छायै नमः, अग्न्यादि कोणपत्रों में—शं दुर्भगायै नमः से पूजन कर षं सुभगायै नमः, सं कराल्यै नमः, हं मोहिन्यै नमः से पूजन करे। उसके बाहर चतुरस्त्र में इन्द्रादि लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार विधिवत् पूजन जो तुम्बुरु का करता है, उसके लिये तीनों लोकों में कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता। पूजन के पश्चात् एक लाख मन्त्र-जप करे। उसका दशांश हवन घी से करे। तर्पण-मार्जन करके ब्राह्मणभोजन करावे।

काम्यसाधनम्

वायुवह्नियुगान्तःस्थं बीजं स्मृत्वा जपेत्प्रिये। ज्वरशूलमहारोगा नश्यन्ति तेन तत्क्षणात्॥२९॥
कुपितस्य हृदम्भोजे स्मृत्वा बीजमिदं जपेत्। तत्कोपं शमयेच्छीघ्रं ध्रुवं मन्त्रप्रभावतः॥३०॥
एतन्मन्त्राभिजप्तं तु जलं प्रातः पिबेन्नरः। हृद्रोगकामलाकासश्वासविष्टम्भकास्तथा॥३१॥
नश्यन्ति तत्क्षणादेव नात्र कार्या विचारणा। मण्डलं नवनाभाख्यं कृत्वा रम्यं महेश्वरि॥३२॥
तत्र संस्थापयेद्रम्यान् कलशान्नव मन्त्रवित्। देवं मध्येऽष्टसु तथा देवीर्दूतीश्च पूजयेत्॥३३॥
पुरोक्तवत्तेन सिञ्चेत् कुलजां योषितं शिवे। सुतं वन्ध्यापि सा सूते किमन्या कन्यकाप्रसूः॥३४॥
राजाभिषिक्तो विजयी भूयाद् देवि न संशयः। भूतप्रेतादिकाः कृत्या रोगा नश्यन्ति सेचनात्॥३५॥

काम्य-साधन—वायु और अग्नि के मध्य में स्थित बीज का चिन्तन करके मन्त्र का जप करे तो ज्वर, शूल आदि महारोग तत्क्षण नष्ट होते हैं। क्रुद्ध मनुष्य के हृदय कमल में इस बीज का स्मरण करके जप करे तो उसका क्रोध शान्त हो जाता है। इस मन्त्र से मन्त्रित जल को प्रातःकाल में पीने से हृदयरोग, कामला, कास, श्वास, विष्टम्भक का तत्क्षण नाश हो जाता है। नवनाभ मण्डल बनाकर उसमें नव कलश स्थापित करे। मध्य कलश में देव की पूजा करे। शेष आठ कलशों में पूर्वोक्त आठ देवदूतियों की पूजा करे। इस जल से कुलीन स्त्री का सिञ्चन करे तो वन्ध्या को भी पुत्र प्राप्त होता है, केवल कन्या जन्म देने वाली स्त्री को तो पुत्र होता ही है। राजा को इससे अभिषेक किया जाय तो वह युद्ध में विजयी होता है। इस जल से सेचन करने पर भूत-प्रेत-कृत्या-रोग नष्ट होते हैं।

तुम्बुरुयन्त्ररचनाप्रकारः

अष्टपत्राम्बुजे मध्ये ससाध्यं बीजमालिखेत्। केसरेषु स्वरान् देवि दिक्पत्रेषु लिखेत्ततः॥३६॥
पूर्वोक्तदेवीबीजानि विदिक्पत्रेषु पार्वति। दूतीमन्त्रान् पुरा प्रोक्तानालिखेत्तद्बहिः पुनः॥३७॥
वृत्तद्वयं विधायाथ तयोर्मध्ये समालिखेत्। ककारादिक्षकारान्तान् बिन्दुयुक्तान् महेश्वरि॥३८॥
तद्बहिश्चतुरस्रेण वेष्टयेज्जगदीश्वरि। एतद्यन्त्रं महादेवि प्रोक्तं श्रीतुम्बुरोर्महत्॥३९॥
साधितं जपहोमाभ्यां धृतं नाशयति क्षणात्। रोगकृत्याग्रहान् सम्यग् भूतापस्मारकादिकान्॥४०॥

अत्र यन्त्ररचनाप्रकारः सुगम एव।

तुम्बुरु यन्त्र—अष्टपत्र कमल बनाकर साध्य नाम के साथ 'क्ष्म्र्यूं' बीज लिखे। पूर्वादि दलों मे स्वरों को लिखे। कोणदलों में पूर्वोक्त बीजों को लिखे। दलों के बाहर पूर्वोक्त दूतीमन्त्रों को लिखे। इसके बाहर दो वृत्त बनाकर अन्तराल में कं से क्षं तक के वर्णों को लिखे। उसके बाहर चतुरस्र बनाकर उसे वेष्टित करे। इस तुम्बुरु यन्त्र को जप, होम से सिद्ध करके धारण करने से रोग कृत्या एवं ग्रहों, अपस्मार आदि का तत्क्षण नाश होता है।

सप्रयोगः क्षेत्रपालमन्त्रः

अथ क्षेत्रपालमन्त्रः श्रीकण्ठसंहितायाम्—

क्षेत्रपालमनुं वक्ष्ये शृणु देवि यथाविधि। संवर्तोऽनुग्रहेन्द्वाढ्यो रुद्रसंवर्तकौ पुनः॥१॥
आषाढी रेवतीयुक्तो लोहितोऽनन्तसंयुतः। पिनाकी चानन्तयुतो वाली मेषस्ततो भवेत्॥२॥
महाकालो विसर्गाढ्यस्ताराद्योऽयं मनुः प्रिये।

संवर्तः क्षकारः, अनुग्रह औ, इन्दुरनुस्वारस्तेन क्षौं इति। रुद्र एकारः, संवर्तः क्ष, तेन क्षे इति। आषाढी त, रेवती रेफस्तद्युक्तस्तेन त्र इति। लोहितः प, अनन्तयुतः साकारस्तेन पा इति। पिनाकी ल, अनन्त आ, तेन ला इति। वाली य। मेषो न। महाकालो म विसर्गाढ्यस्तेन मः इति। ताराद्यः प्रणवाद्यः। तथा—

मुनिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टो गायत्री च्छन्द ईरितम्। क्षेत्रपालो देवतास्य क्षं बीजं परिकीर्तितम्॥३॥

नमः शक्तिरिति प्रोक्ता ह्यष्टसिद्धिकरः स्मृतः। षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥४॥
ततः संचिन्तयेद् देवं क्षेत्रपालमनन्यधीः। अञ्जनाद्रिप्रतीकाशमूर्ध्वपिङ्गजटाधरम् ॥५॥
वर्तुलोग्रत्रिनयनं भीमसर्पविभूषणम्। दंष्ट्राकरालवदनं भीमरूपं दिगम्बरम् ॥६॥
द्विभुजं दक्षिणे हस्ते गदां वामे कपालकम्। दधतं चिन्तयेद् देवि शैवे पीठे समर्चयेत् ॥७॥
पद्ममष्टदलं बाह्ये दिग्द्वारैर्भूगृहैर्वृतम्। कृत्वा तत्र समावाह्य गन्धाद्यैरर्चयेद्विभुम् ॥८॥
आदावङ्गानि संपूज्य पूर्ववत् परमेश्वरि। अर्चयेदष्टपत्रेषु किङ्कराष्टकमद्रिजे ॥९॥
अनलश्चाग्निकेशश्च (करालो घण्टिकारवः। महाकोपः पिशिताशः पिङ्गाक्षस्तदनन्तरम् ॥१०॥
ऊर्ध्वकेश इमे चाष्टौ) क्षेत्रपालस्य किङ्कराः। लोकेशांश्च तदस्त्राणि पूर्ववत् परिपूजयेत् ॥११॥
धूपदीपादिकं दत्त्वा ततस्तस्मै बलिं हरेत्। एह्येहीति समुच्चार्य विद्विषोऽन्ते मुरुद्वयम् ॥१२॥
भञ्जय-द्वितयं पश्चात्नर्तय-द्वितयं ततः। विघ्नयुग्मं महान्ते स्याद्भैरव क्षेत्रपालक ॥१३॥
बलिं-पदं समुच्चार्य देवि गृह्णद्वयं द्विठः। बलिमन्त्रः समाख्यातः सर्वकामफलप्रदः ॥१४॥

बलिर्नैवेद्यम्। तत्र मन्त्रः—एहीति। द्विठः स्वाहाकारः। अन्यत् सुगमम्। अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठ-न्यासान्ते, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदये श्रीक्षेत्रपालाय देवतायै नमः। गुह्ये क्षं बीजाय नमः। पादयोः नमः शक्तये नमः। इति विन्यस्य, मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततः क्षां हृदयाय नमः। क्षीं शिरसे स्वाहा। क्षूं शिखायै वषट्। क्षैं कवचाय हुं। क्षौं नेत्राभ्यणा वौषट्। क्षः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि न्यसेत्। ततो ध्यानादिषडङ्गपूजान्तेऽष्टदलेषु—अनलाय नमः। अग्निकेशाय नमः। करालाय नमः। घण्टिकारवाय नमः। महाकोपाय नमः। पिशिताशनाय नमः। पिङ्गाक्षाय नमः। ऊर्ध्वकेशाय नमः। इति संपूज्य लोकेशार्चादि सर्वं समापयेदिति। तथा—

एकलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः। चरुणा घृतसिक्तेन तर्पणादि ततश्चरेत् ॥१५॥
रात्रौ गृहाङ्गणे रम्ये कृत्वा स्थण्डिलमुत्तमम्। आवाह्य तत्र संपूज्य क्षेत्रेशं प्रोक्तवर्त्मना ॥१६॥
अन्नव्यञ्जनदुग्धाद्यैः कृत्वा वै सिक्थकं महत्। पूर्वोक्तमनुना देवि तस्य हस्ते बलिं हरेत् ॥१७॥
बलिनानेन सन्तुष्टः क्षेत्रपालो मुदान्वितः। ऐश्वर्यविजयारोग्यश्रीसौभाग्यादिसंपदः ॥१८॥
ददाति रौद्रभूतार्तिकृत्याद्याशु निवारयेत्।

अत्र रात्रौ बलिदानं काम्यम्। नित्यपूजायामपि नैवेद्यं प्रोक्तमन्त्रेणैव देयम्।

क्षेत्रपाल मन्त्र—श्रीकण्ठसंहिता में पठित श्लोकों का उद्धार करने पर क्षेत्रपाल का मन्त्र होता है—ॐ क्षं क्षेत्रपालाय नमः। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, देवता क्षेत्रपाल, बीज क्षं एवं शक्ति नमः कहे गये हैं। इस यन्त्र को आठो सिद्धियाँ प्रदान करने वाला कहा गया है। पूर्ववत् योगपीठ न्यास करने के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदये श्रीक्षेत्रपालाय देवतायै नमः, गुह्ये क्षं बीजाय नमः, पादयोः नमः शक्तये नमः। इस प्रकार न्यास के पश्चात् समस्त अभीष्ट सिद्धि के लिये विनियोग बोलकर इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—क्षां हृदयाय नमः, क्षीं शिरसे स्वाहा, क्षूं शिखायै वषट्, क्षैं कवचाय हुं, क्षौं नेत्राभ्यां वौषट्, क्षः अस्त्राय फट्। इन्हीं षडङ्ग मन्त्रों से करन्यास करे। पुनः हृदयादि षडङ्ग न्यास करे। तदनन्तर समाहित चित्त होकर इस प्रकार क्षेत्रपाल का ध्यान करे—

अञ्जनाद्रिप्रतीकाशमूर्ध्वपिङ्गजटाधरम्। वर्तुलोग्रत्रिनयनं भीमसर्पविभूषणम्॥
दंष्ट्राकरालवदनं भीमरूपं दिगम्बरम्। द्विभुजं दक्षिणे हस्ते गदां वामे कपालकम्॥

शैव पीठ पर अर्चन करे। पूजा यन्त्र में अष्टदल के बाहर चार द्वारों से युक्त भूपुर बनावे। इसके मध्य में षडङ्ग पूजा करे। अष्टदल के दलों में इन मन्त्रों से पूजा करे—अनलाय नमः, अग्निकेशाय नमः, करालाय नमः, घण्टिकारवाय नमः,

महाकोपाय नमः, पिशिताशनाय नमः, पिङ्गाक्षाय नमः. ऊर्ध्वकेशाय नमः। ये सभी क्षेत्रपाल के दास होते हैं। भूपुर में लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। धूप-दीपादि देकर उन्हें बलि प्रदान करे। समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला बलि मन्त्र है—एह्येहि विद्विषो मुरु मुरु भंजय भंजय नर्तय नर्तय विघ्न विघ्न महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा।

तदनन्तर एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन घृतसिक्त चरु से करे। तब तर्पणादि करे। रात में अपने घर के आङ्गन में उत्तम स्थण्डिल बनावे। उसमें क्षेत्रपाल का आवाहन करके पूर्वोक्त विधि से क्षेत्रेश की पूजा करे। अन्न व्यञ्जन दूध आदि से सिक्थ बनाकर पूर्वोक्त मन्त्र से क्षेत्रेश के हाथ में बलि प्रदान करे। इस बलि से क्षेत्रपाल सन्तुष्ट एवं प्रसन्न होकर ऐश्वर्य, विजय, आरोग्य, श्री, सौभाग्यादि सम्पदा देते हैं। घोर भूतपीड़ा कृत्या आदि का तुरन्त निवारण करते हैं। रात में बलिदान काम्य पूजा में करे। नित्य पूजा में भी उपरोक्त मन्त्र से ही नैवेद्य प्रदान करे।

वटुकभैरवमन्त्रः

अथ वटुकभैरवमन्त्रः कौलेशकोटिप्रभेदे—

अथ वक्ष्ये महादेवि भैरवस्येश्वरेश्वरि। मन्त्ररत्नं महागुप्तं दुष्टग्रहनिकृन्तनम् ॥१॥
सर्वशत्रुक्षयकरं सर्वव्याधिविनाशनम्। सर्वापत्तारकं देवि सर्वसौभाग्यदायकम् ॥२॥
वश्याकर्षणविद्वेषस्तम्भनोच्चाटमारणे। निग्रहे व्याधिकरणे प्रशस्तमखिलेष्टदम् ॥३॥
उद्धरिष्ये महामन्त्रं शृणुष्वावहिता प्रिये। व्योमाग्निशान्तितिथिभिद्धरेत् प्रथमाक्षरम् ॥४॥
जलं च खेचरी कर्णयुता काय ततः शिवे। अनन्तो लोहितश्चात्रिः कर्णवान् मीनयुग्मकम् ॥५॥
वह्निष्टपञ्चमोऽनन्तयुतः पवन एव च। क्रोधी कर्णयुतो वह्निः कर्णवान् परमेश्वरि ॥६॥
पुनरेतद्द्वयं प्रोक्त्वा द्वितीयार्णादि पार्वति। चतुष्टयं तु वर्णानां पुनराद्यं समुद्धरेत् ॥७॥
एकविंशतिवर्णात्मा मन्त्रराजः समुद्धृतः। गोपनीयः प्रयत्नेन त्रैलोक्येष्वपि दुर्लभः ॥८॥

व्योम ह, अग्नी रेफः, शान्ति ई, तिथिरनुस्वारः, एतैर्भुवनेश्वरीबीजम्। जलं व। खेचरी ट, कर्णयुता उकारेण सहिता, तेन टु इति। काय स्वरूपं। अनन्त आ। अत्र यकार-आकारयोर्न सन्धिः। एकविंशतिवर्ण इत्युक्तेः। लोहितः प। अत्रिः द, कर्णवान् उकारयुक्तस्तेन दु इति। मीनयुग्मं धकारद्वयं, तेन द्ध इति। वह्निः रेफः। टपञ्चमो ण, अनन्त आ, तेन णा इति। पवनो य। क्रोधी क, कर्ण उ, तेन कु इति। वह्नी र, कर्ण उ, तेन रु इति। पुनरेतद्द्वयं कुरु इति। द्वितीयार्णादिचतुष्टयं वटुकाय इति। आद्यं ह्रीं इति। तथा—

ऋषिरुक्तो महादेवि बृहदारण्यसंज्ञकः। अनुष्टुप् छन्द इत्युक्तं भैरवो देवता शिवे ॥९॥
शक्तिर्बीजं च शक्तिश्च आं कीलकमुदाहृतम्। आद्यक्षरयुगं देवि पञ्चह्रस्वान्वितं कुरु ॥१०॥
सद्यादिप्रतिलोमेन नपुंसकविवर्जितम्। एतद्बीजद्वयाद्यास्तु न्यस्तव्याः पञ्चमूर्तयः ॥११॥
अङ्गुष्ठादिष्वङ्गुलीषु मूर्धास्यहृदयेषु च। सगुह्यचरणेष्वेवं मूर्धास्ये दक्षकर्णके ॥१२॥
वामकर्णे च चूडाथ ऊर्ध्वपूर्वान्तकोत्तर। पश्चिमेषु च वक्त्रेषु मूर्तयस्ता महेश्वरि ॥१३॥
ईशानाख्यस्तत्पुरुषोऽघोरो देवि तृतीयकः। वामदेवश्चतुर्थः स्यात्सद्योजातस्तु पञ्चमः ॥१४॥
पुनराद्यर्णयुगलं षड्दीर्घस्वरभेदितम्। कृत्वा तैस्तु षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत् ॥१५॥ इति।

वटुकभैरव मन्त्र—कौलेशकोटिप्रभेद के अनुसार दुष्आ ग्रहों का विनाश करने वाला वटुकभैरव का अत्यन्त गोपनीय इक्कीस अक्षरों का मन्त्र है—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं। तीनों लोकों में दुर्लभ यह मन्त्र समस्त शत्रुओं का नाश करने वाला, समस्त व्याधियों का विनाशक, समस्त आपत्तियों, से उद्धार करने वाला एवं सौभाग्य प्रदान करने वाला है। वश्य आकर्षण, विद्वेषण स्तम्भन, उच्चाटन, मारण, निग्रह, व्याधिकरण में प्रशस्त होते हुये समस्त अभीष्ट प्रदान करने वाला है। इस मन्त्र के ऋषि बृहदारण्यक, छन्द अनुष्टुप्, देवता भैरव कहे गये है। ह्रीं बीज एवं शक्ति तथा आं कीलक है। अपनी अभीष्ट-सिद्धि के लिये इसका विनियोग किया जाता है। कर न्यास इस प्रकार होता है—ॐ ह्रौं वौं ईशानाय

नम: (दोनों अङ्गुष्ठ), ॐ हें वें तत्पुरुपाय नम: (दोनों तर्जनी), ॐ हूं वूं अघोराय नम: (दोनों मध्यमा), ॐ ह्रीं वीं वामदेवाय नम: (दोनों अनामिका), ॐ हां वां सद्योजाताय नम: (दोनों कनिष्ठिका)।

मूर्तिन्यास इस प्रकार होता है—ॐ हौं वौं ईशानाय नम: ऊर्ध्ववक्त्राय नम: (शिर), ॐ हें वें तत्पुरुषाय नम: पूर्ववक्त्राय नम: (मुख), ॐ हूं वूं अघोराय नम: दक्षिणवक्त्राय नम: (दक्षिण कर्ण), ॐ ह्रीं वीं वामदेवाय नम: उत्तरवक्त्राय नम: (वाम कर्ण), ॐ ह्रां वां सद्योजाताय नम: पश्चिमवक्त्राय नम: (शिखा के नीचे)।

पञ्च ब्रह्म न्यास इस प्रकार किया जाता है—ॐ हौं वौं ईशानाय नम: (शिर), ॐ हें वें तत्पुरुषाय नम: (मुख), ॐ हूं वूं अघोराय नम: (हृदय), ॐ ह्रीं वीं वामदेवाय नम: (गुह्य), ॐ ह्रां वां सद्योजाताय नम: (दोनों पैर)।

हृदयादि न्यास—ॐ ह्रां वां हृदयाय नम: हृदये, ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा, ॐ हूं वूं शिखायै वषट्, ॐ हैं वैं कवचाय हुं, ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्र: व: अस्त्राय फट्।

एकादशधान्यासः

श्रीरुद्रयामले—

श्रीदेव्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शम्भोस्त्रैलोक्यनायक। भैरवस्य विधिं भूयो ममाचक्ष्व महामुने ॥१॥
येन कार्याणि सिद्ध्यन्ति साधकानां निरन्तरम्। सुगोप्यमपि देवेशि विधिं प्रब्रूहि शङ्कर ॥२॥
येनाहं ते प्रिया देव सदा वर्ते निरन्तरम्। ततः कृपां समाधाय विधिं कथय शोभन ॥३॥

श्रीभैरव उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि वटुकस्य महात्मनः। विधानं परमं गोप्यं ब्रह्मादीनां सुदुर्लभम् ॥४॥
सूत्रेणैव सुसंक्षेपात् कथयिष्यामि वल्लभे। येन विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं साधयेत् सुधीः ॥५॥
एकदा देवदेवेशि तपसं मन्दराचलम्। गतोऽहं परमानन्दान्मूलप्रकृतिमीश्वरीम् ॥६॥
चक्रे परमसन्तुष्टां तपसा भावितात्मना। साकाशरूपिणी देवी प्रोवाच वचनं मुदा ॥७॥
तुष्टाहं शङ्कर प्रीता वरं वरय दुर्लभम्। इति वाक्यं समाकर्ण्य प्रोवाचाहं सुवल्लभे ॥८॥
देवि मातर्जगत्पूज्ये यदि दास्यसि मे वरम्। दुर्लभं कस्यचिद् ब्रूहि विधानं परमाशयात् ॥९॥
मन्त्रस्य येन सिद्ध्यन्ति सर्वकार्याणि सांप्रतम्। इति वाक्यं च मे श्रुत्वा मूलभूता सनातनी ॥१०॥
उवाच यादृशं देवि विधानं शृणु वल्लभे। वटुकाख्यस्य देवस्य भैरवस्य महात्मनः ॥११॥
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैर्वन्दितस्य दयानिधेः। न्यासा एकादश प्रोक्ता वटुकाराधने शिवे॥१२॥
यान् विना नैव सिद्धिः स्याद्वर्षाणामयुतैरपि।
आदौ न्यासं प्रेतबीजेन कार्यं पश्चात् साक्षात् सिंहबीजेन देवि।
न्यासं कार्यं क्वाणबीजेन तद्वन्मन्याबीजन्यासमग्रे विदध्यात् ॥१३॥
महाश्रीबीजतो न्यासं प्राणबीजेन चापरम्। घण्टाबीजस्य च न्यासं विधाय ख्यातिबीजतः ॥१४॥
मूलबीजेन पश्चाच्च न्यासं कृत्वा महामतिः। भ्रामरीबीजतो न्यासं विदध्यात् प्रीतिसंयुतः॥१५॥
एवं न्यासान् दशादौ तु न करोति नरो यदा। त्वां शपेऽहं वरारोहे तावन्मन्त्रो न सिध्यति ॥१६॥

श्रीदेव्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शम्भो संसारतारक। कृपां कृत्वा न्यासविधिं प्राकट्येन निरूपय ॥१७॥
कालेनेह यथाल्पेन साधकः सिद्धिमाप्नुयात्। गोपनीयो न मन्त्रोऽयं वटुकाख्यो जगद्गुरो ॥१८॥
तथा निरूपय विभो बालकोऽपि यथा लभेत्।

श्रीशिव उवाच

शृणु देवि जगत्पूज्ये न्यासबीजानि शोभने। प्रकटानि यथा शश्वत् कथयामि हिताय ते॥१९॥
स्थानेषु येषु बीजानि न्यस्तव्यानि महात्मभिः। तथात्र प्रवदिष्यामि शृणु मत्प्राणवल्लभे॥२०॥

रुद्रयामल में देवी ने भैरव से कहा कि हे देवदेव! जगन्नाथ! शम्भु! त्रैलोक्यनायक, अब भैरव की पूजन-विधि बतलाइये, जिससे साधकों के कार्य निरन्तर सिद्ध होते हैं। यदि मैं आपकी प्रिया हूँ तो अत्यन्त गोपनीय इस विधि को मुझसे कहिये।

श्री भैरव ने कहा कि हे देवि! सुनो, मैं महात्मा वटुक के विधान को कहता हूँ। यह विधान परम गोपनीय एवं ब्रह्मादि को भी दुर्लभ है। हे वल्लभे! सूत्ररूप में संक्षेप में इसे मैं कहता हूँ, जिसे जानकर साधक तीनों लोकों को साधित करता है। एक बार मैं परमानन्द मूल प्रकृति ईश्वरी की साधना के लिये मन्दराचल पर्वत पर गया था। मेरी तपस्या से सन्तुष्ट होकर प्रसन्नता से आकाशरूपा उस देवी ने कहा कि हे शंकर! मैं सन्तुष्ट हूँ; दुर्लभ वर भी माँगो। यह वचन सुनकर मैंने कहा कि हे जगत्पूज्ये माते! यदि मुझे वर देना है तो मुझसे किसी दुर्लभ विधान को कहिये। उस मन्त्र का विधान कहिये, जिससे सभी कार्य सिद्ध होते हों। मेरे वचन को सुनकर मूलभूता सनानी देवी ने जो विधान कहा, उसे सुनो। ब्रह्मा, विष्णु, महेश से वन्दित देव वटुकभैरव की आराधना के लिये ग्यारह न्यास कहे गये हैं जिसके विना हजारों वर्ष तक साधना करने पर भी सिद्धि नहीं मिलती। पहले प्रेतबीज से न्यास करे। तब सिंहबीज से न्यास करे। तब क्वाणबीज से न्यास करे। तब मन्याबीज से न्यास करे। तब महाश्रीबीज से न्यास करे। तब प्राणबीज से न्यास करे। तब घण्टाबीज से न्यास करे। तब ख्यातिबीज से न्यास करे। तब मूल बीज से न्यास करे। तब भ्रामरी बीज से न्यास करे। पहले इन दश न्यासों को जो नहीं करता उसे मैं शाप देता हूँ और उसका मन्त्र सिद्ध नहीं होता।

श्री देवी ने कहा कि हे देवदेव! जगन्नाथ! शम्भो! संसारतारक! कृपा करके इस न्यासविधि का निरूपण स्पष्ट रूप में कीजिये, जिससे थोड़े ही समय में साधक सिद्धि प्राप्त कर सके। बटुक का यह मन्त्र गोपनीय नही है। इसे इस प्रकार स्पष्ट रूप में कहिये कि बालक भी जिससे लाभ उठा सके। श्री शिव ने कहा—हे जगत्पूज्ये देवी! न्यासबीजों को सुनो, तुम्हारे हित के लिये इन्हें मैं प्रकट रूप में कहता हूँ। महात्माओं को इन बीजों से न्यास जिस स्थान में करना चाहिये, उसे कहता हूँ।

प्रेतबीजोद्धारन्यासः

शिवचन्द्रशिवैः शक्रस्वरोपेतैः सबिन्दुभिः। प्रेतबीजं समाख्यातं तेनाङ्गानि न्यसेच्च षट्॥२१॥
हृच्छिरश्च शिखानेत्रकवचास्त्रेषु सुन्दरि।

शिवो ह, चन्द्रः स, पुनर्ह, शक्रस्वरः औ, बिन्दुरनुस्वारस्तेन ह्स्हौं इति।

१. **प्रेतबीज**—प्रेत बीज 'ह्स्हौं' है। इससे हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र, अस्त्र—इन छः अंगों में न्यास करना चाहिये।

सिंहबीजम्

तथा—

शिवचन्द्रौ ससंवर्तौ कालवामाक्षिभूषितौ। बिन्दुनादयुतौ देवि न्यासात्सान्निध्यकारकम्॥२२॥
सिंहबीजमिदं देवि विन्यसेत् सुरसुन्दरि। मूर्ध्नि बाह्वोश्च लिङ्गे च नाभौ हस्ताङ्गुलीषु च॥२३॥
पादाङ्गुलीषु देवेशि विन्यसेत् परमेश्वरि।

शिवो ह, चन्द्रः स, संवर्तः क्ष, कालो म, वामाक्षि ई, बिन्दुरनुस्वारः, नादोऽर्धचन्द्रस्तैः ह्स्क्ष्म्रीं इति।

२. **सिंहबीज**—सिंह बीज 'हस्क्ष्मीं' है। इसका न्यास मूर्धा, बाहुओं, लिङ्ग, नाभि कराङ्गुलियों और पादाङ्गुलियों में करना चाहिये।

क्वाणबीजम्

तथा—

अजेशोऽग्निसमारूढः शक्रस्वरशशीयुतः। क्वाणबीजमिदं प्रोक्तं विन्यसेत् परमेश्वरि ॥२४॥
ब्रह्मरन्ध्रे मुखे नेत्रयुगे ग्रीवानसोरपि। कपोलयोश्च चिबुके ब्रह्मरन्ध्रे पुनर्न्यसेत् ॥२५॥

अजेशो झ, अग्नी र, शक्रस्वर औ, शशी बिन्दुस्तैः झ्रौं इति।

३. क्वाणबीज—क्वाण बीज 'झ्रौं' को कहते हैं। इसका न्यास ब्रह्मरन्ध्र, मुख, दो नेत्र, ग्रीवा, नासा, कपोल, चिबुक और पुनः ब्रह्मरन्ध्र में करना चाहिये।

मन्याबीजम्

तथा—

कालशक्रशिवाः सद्योबिन्दुनादविभूषिताः। मन्याबीजं महेशानि पादयोर्हस्तयोस्तथा ॥२६॥
नेत्रयोः श्रोत्रयोः कुक्ष्योर्मेढ्रे चैव प्रविन्यसेत्।

कालो म, शक्रो ल, शिवो ह, सद्यः ओ, बिन्दुरनुस्वारः, नादोऽर्धचन्द्रस्तैः म्ल्ह्रों इति।

४. मन्या बीज—'म्ल्ह्रों' को मन्याबीज कहते हैं। इसका न्यास पैरों, हाथों, नेत्रों, कर्णों, कुक्षियों और लिङ्ग में करना चाहिये।

महाश्रीबीजम्

तथा—

अस्थ्यग्निवामकर्णेन्दुनादैर्देवि समीरितम्। महाश्रीबीजमीशानि चिबुके पादयोर्गले ॥२७॥
पादयोर्हृदये पादद्वये नाभौ च पादयोः।

अस्थि श, अग्नी र, वामकर्ण ऊ, इन्दुनादौ प्राग्वत्, तेन श्रूँ इति।

५. महाश्री बीज— 'श्रूँ' महाश्रीबीज है। इसका न्यास चिबुक, दोनों पैरों, गला, पैरों, हृदय, दोनों पैरों, नाभि और पैरों में करना चाहिये।

प्राणबीजम्

तथा—

लोहिताग्न्यासनो वामकर्णबिन्दुभिरद्रिजे। प्राणबीजं मुखे देवि हृदये नाभिमण्डले ॥२८॥
हृदये पादयोर्देवि हृदये दक्षकुक्षिके। हृदये वामकुक्षौ च हृदये दक्षपत्तले ॥२९॥
हृदये वामपादे च हृदये दक्षनेत्रके। हृदये वामनेत्रे च हृदये दक्षघोणके ॥३०॥
हृदये वामघोणे च हृदये दक्षकर्णके। हृदये वामकर्णे च हृदये विन्यसेत् प्रिये ॥३१॥

लोहितः प, अग्नी र, वामकर्ण ऊ, बहुवचनान्नादोऽपि विज्ञेयस्तेन प्रूँ इति।

६. प्राणबीज—प्राणवीज 'प्रूं' को कहते हैं। इसका न्यास मुख, हृदय, नाभिमण्डल, हृदय, पैरों, हृदय, दक्ष कुक्षि, हृदय, वाम कुक्षि, हृदय, दक्ष पदतल, हृदय, वामपाद, हृदय, दक्ष नेत्र, हृदय, नाम नेत्र, हृदय, दक्ष नासिका, हृदय-वाम नासिका, हृदय दक्ष कर्ण, हृदय वाम कर्ण और हृदय में करना चाहिये।

घण्टाबीजम्

तथा—

कतुरीयोऽग्निमारूढो वामकर्णेन्दुनादवान्। घण्टाबीजं महादेवि विन्यसेत् परमेश्वरि ॥३२॥
घण्टिकायां च नाभौ च घण्टिकायां हृदि न्यसेत्। पादयोर्हृदये कट्यां मस्तके मस्तके कटौ ॥३३॥
स्तनयोर्गुल्फयोश्चैव गुल्फयोः स्तनयोर्न्यसेत्।

कतुरीयो घ, अग्नी रेफः, वामकर्ण ऊ, नादबिन्दू प्राग्वत्, तेन घ्रूँ, इति।

७. **घण्टा बीज**—'घ्रूँ' घण्टाबीज है। इसका न्यास घण्टिका-नाभि, घण्टिका-हृदय, पैरों, हृदय, कमर-मस्तक, मस्तक-कमर, स्तनों-गुल्फों, गुल्फों-स्तनों में किया जाता है।

ख्यातिबीजम्

तथा—

चण्डीशो वायुवह्न्याढ्यो वामकर्णेन्दुनादवान्। ख्यातिबीजमिति प्रोक्तं विन्यसेद्देवि साधकः ॥३४॥
मस्तके पादयोश्चैव ग्रीवायां नाभिमण्डले। गले च हृदि देवेशि जङ्घयोर्नेत्रयोस्तथा ॥३५॥
कर्णयोर्बाहुयुग्मे च स्तनयोश्च प्रविन्यसेत्।

चण्डीशः ख, वायुः य, वह्नी र, वामकर्ण ऊ, इन्दुनादौ प्राग्वत्, तेन खयरूं इति।

८. **ख्याति बीज**—'खयरूं' ख्यातिबीज है। इसका न्यास मस्तक, पैरों, गर्दन, नाभिमण्डल, गला, हृदय, जांघों, नेत्रों, कानों, बाहुओं एवं स्तनों में होता है।

मूलबीजम्

तथा—

प्रणवो मूलबीजं स्याद्धृदये पादयोः प्रिये। हस्तयोः कर्णयोर्नासायुगे चैव प्रविन्यसेत् ॥३६॥

प्रणव ॐकारः इति।

९. **मूलबीज**—मूल बीज 'ॐ' है। इसका न्यास हृदय, पैरों, हाथों, कानों और नासापुटों में होता है।

भ्रामरीबीजम्

तथा—

(द्विरण्डरेवतीशक्रचन्द्रहंसत्रिमूर्तिभिः। सबिन्दुनादैर्देवेशि भ्रामरीबीजमीरितम् ॥३७॥

द्विरण्डो भ, रेवती र, शक्रो ल, चन्द्रः स, हंसो ह, त्रिमूर्तिः ई, बिन्दुनादौ प्राग्वत्, तेन भरलसहीं इति।

तथा—

मुखे नेत्रद्वये कर्णद्वये चैव कपोलयोः। गण्डयोः कण्ठदेशे च स्तनयोर्हृदि पादयोः ॥३८॥
चिबुके मस्तके बाह्वोः स्कन्धयोर्दन्तलेखयोः। ब्रह्मरन्ध्रे तथाधारे भ्रूमध्ये च न्यसेत् प्रिये ॥३९॥

१०. **भ्रामरी बीज**—'भरलसहीं' भ्रामरी बीज है। इसका न्यास मुख, आँखों, कानों, कपोलों, गण्डों, कण्ठ, स्तनों, हृदय, पैरों, चिबुक, मस्तक, बाहुओं, कन्धों, दन्तपंक्तियों, ब्रह्मरन्ध्र, मूलाधार एवं भ्रूमध्य में होता है।

इति न्यासान् समाधाय पुरश्चरणकारकः। यथोक्तन्यासकारी च यदि नो वरमाप्नुयात् ॥४०॥
तदा कन्यादूषणोत्थं मम पापं प्रजायताम्। न्यासैरेतैर्वरारोहे ब्रह्महत्या विनश्यति ॥४१॥
का कथान्यस्य पापस्य सत्यं सत्यं वदामि ते। मर्मन्यासानथो वक्ष्ये त्रीन् देवस्य महात्मनः ॥४२॥
यान् विधाय नरो विन्देत्सिद्धिं लोकेषु दुर्लभाम्। आकूतबीजं विन्यस्य मस्तके गण्डयोर्मुखे ॥४३॥
कालबीजं चक्षुषोश्च कर्णयोरपि विन्यसेत्। नाभौ लिङ्गे गुदे वापि विद्याबीजं कपोलयोः ॥४४॥
ब्रह्मरन्ध्रे दन्तपंक्त्योर्विन्यसेत् साधकोत्तमः।

श्रीदेव्युवाच

भगवन् करुणासिन्धो दीनबन्धो जगद्गुरो। कृपां कृत्वा समाख्याहि तन्त्रैरेव पृथक्पृथक् ॥४५॥
साधकस्तु यथा सिद्धिमचिरेणैव विन्दति।

श्रीमहादेव उवाच

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि न्यासत्रयविधिं पृथक् ।

इन सभी न्यासों को करके पुरश्चरण करना चाहिये। यथोक्त न्यास करने वाले को यदि वर प्राप्त नहीं होता तो मुझे कन्या को दूषित करने का पाप लगता है। इन न्यासों से ब्रह्महत्या का भी नाश होता है, तब अन्य पापों के बारे में क्या कहा जाय। अब महान् देव के तीन मर्मन्यासों को कहता हूँ। इन न्यासों को करने से मनुष्य इस संसार में दुर्लभ सिद्धि प्राप्त करता है। आकृत बीज का न्यास मस्तक, गण्ड, मुख में करना चाहिये। कालबीज का न्याय आँखों, कानों, नाभि, लिंग, गुदा में एवं विद्या बीज का न्यास कपोलों, ब्रह्मरन्ध्र एवं दन्तपंक्तियों में करना चाहिये।

देवी ने कहा—भगवन् करुणासिन्धो दीनबन्धो जगद्गुरो। कृपया इन्हें पृथक्-पृथक् कहिये, जिससे साधकों को अल्प काल में सिद्धि प्राप्त हो सके। महादेव ने कहा कि हे देवि! सुनो, इन बीजो को अलग-अलग कहता हूँ।

आकूत-काल-विद्याबीजानि

दीर्घाकालाग्निशक्राणामध: कालानलान्त्यका: ।।४६।।

वह्न्यस्थिवह्निगगनचन्द्रवामाक्षिमण्डिता: । बिन्दुनादसमाक्रान्ता बीजमाकूतमुद्धृतम् ।।४७।।

दीर्घा न, कालो म, अग्नि: र, शक्रो ल, कालो म, अनल: र, अन्त्य: क्ष, वह्नि: र, अस्थि श, वह्नि: र, गगनं ह, चन्द्र: स, वामाक्षि ई, बिन्द्वादि: प्राग्वत्। तेन नमरलमरक्षरशरहसीं इति। तथा—

ब्रह्माग्नीन्द्रेन्द्वग्निकालवह्निवामाक्षिभि: प्रिये । बिन्दुनादौ च देवेशि कालबीजमितीरितम् ।।४८।।

ब्रह्मा क, अग्नि: र, इन्द्रो ल, इन्दु: स, अग्नि: र, कालो म, वह्नि: र, वामाक्षि ई, बिन्दुनादौ प्राग्वत्। तेन करलसरमरीं इति। तथा—

संवर्तानलचन्द्रोऽग्नि: शिवचन्द्रत्रिमूर्तिभि: । सबिन्दुनादैर्देवेशि विद्याबीजं समुद्धृतम् ।।४९।।

संवर्त: क्ष, अनलो रेफ:, चन्द्र: स, अग्नी र, शिवो ह, चन्द्र: स, त्रिमूर्ति: ई, बिन्द्वादि पूर्ववत्। तेन क्षरमरहसीं इति। तथा—

एतन्न्यासत्रयं प्रोक्तं साधकाभीष्टसिद्धिदम् । यस्य प्रसादमासाद्य भैरव: शीघ्रसिद्धिद: ।।५०।।

१. आकूत बीज—'नमरलमरक्षरशरहसीं' आकूत बीज है।

२. काल बीज—'करलसरमरीं' काल बीज है।

३. विद्या बीज—'क्षरसरहसीं' विद्या बीज है।

इन तीन न्यासों को साधकों का अभीष्ट-प्रदायक कहा गया है। इसके प्रभाव से भैरव शीघ्र सिद्धि प्रदान करने वाले होते हैं।

शृङ्खलान्यास:

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि शृङ्खलान्यासमुत्तमम् । यस्य प्रसादाच्च शिवे वटुक: सिद्धिदो भवेत् ।।५१।।

मस्तके दक्षनेत्रे च वामनेत्रे तथैव च । दक्षकर्णे वामकर्णे कपोले दक्षिणे तथा ।।५२।।

वामे कपोले दक्षे च गण्डके वामके पुन: । चिबुकेऽथ गले स्कन्धे दक्षिणे वामके तथा ।।५३।।

स्तने दक्षे च वामे च हृदये दक्षकुक्षिके । वामकुक्षौ च नाभौ च दक्षजङ्घे च वामके ।।५४।।

लिङ्गे मेढ्रे दक्षिणे च वामे च वरवर्णिनि । मूलाधारे दक्षगुल्फे वामगुल्फे तथैव च ।।५५।।

दक्षपादे च वामे च दक्षपादाङ्गुलीषु च । वामपादाङ्गुलीष्वेवं ब्रह्मरन्ध्रे तथैव च ।।५६।।

मूलाधारे पुनश्चैव पुनर्वै ब्रह्मरन्ध्रके । महापराख्यं बीजं च विन्यसेत् साधकोत्तम: ।।५७।।

मेढ्रशब्दो वृषणवाची दक्षवामनिर्देशाल्लिङ्गस्योक्तत्वाच्चेति।

शृंखला न्यास—हे देवि! सुनो, अब मैं उत्तम शृंखलान्यास को कहता हूँ जिसके प्रभाव से वटुक सिद्धि प्रदान करने वाले होते हैं। महापरा नामक बीज का न्यास मस्तक, दाँयाँ नेत्र, बाँयाँ नेत्र, दाँयाँ कान, बाँयाँ कान, दाँयाँ गाल, बाँयाँ गाल, दाँयाँ गण्ड, बाँयाँ गण्ड, चिबुक, गला, दाँया-बाँयाँ कन्धा, दक्ष-वाम स्तन, हृदय, दक्ष, कुक्षि, वाम कुक्षि, नाभि, दक्ष-वाम जङ्घों, लिङ्ग, दक्ष-वाम अण्डकोष, मूलाधार, दक्ष-वाम गुल्फ, दाँयाँ-बाँयाँ पैर, दक्ष पादाङ्गुलियों, वाम पादाङ्गुलियाँ, ब्रह्मरन्ध्र, मूलाधार एवं फिर ब्रह्मरन्ध्र में करना चाहिये।

महापराख्यबीजम्

चन्द्रसूर्यौ पुनस्तौ च मही ब्रह्मा मही प्रिये। त्रिमूर्तिरस्थि वह्न्यम्बुवह्न्यम्बुधरणीजलम् ॥५८॥
षष्ठस्वरस्त्रिमूर्तीन्दुनादभूषितमस्तकम्। महापराख्यबीजं ते कथितं सुरवन्दिते ॥५९॥
न्यासेनानेन सुश्रोणि साक्षाच्छिवसमो भवेत्।

चन्द्रसूर्यौ सहौ, पुनस्तौ चन्द्रसूर्यौ सहावेवेत्यर्थः, मही ल, ब्रह्मा क, मही ल, त्रिमूर्तिः ई, अस्थि श, वह्निः र, अम्बु व, वह्निः र, अम्बु व, धरणी ल, जलं व, षष्ठस्वरः ऊ, त्रिमूर्तिः ई, इन्दुनादौ पूर्ववत्। तेन सहसहलकलईशरवरवलवऊईं इति।

महापरा बीज—महापरा नामक बीज है—सहसहलकलईशरवरवलवऊईं।

मातृकान्यासः

तथा—

वटुकस्याथ वक्ष्यामि मातृकान्यासमुत्तमम्। कृतेन येन वटुकः साधकस्य करे भवेत् ॥६०॥
श्रीबीजैः पञ्चभिर्यत्र मातृकामण्डलं भवेत्। प्रोक्तमादौ च झान्ते च तान्ते फान्ते तथान्तके॥६१॥
वटुकस्य परं पूज्यं मातृकान्यासमुत्तमम्। विज्ञाय साधयेत्प्राज्ञः स सद्यः शिवतां व्रजेत् ॥६२॥
विनेमं मातृकान्यासं योऽन्येन न्यासमाचरेत्। वटुकस्तस्य कुपितः सद्यः शापं प्रयच्छति ॥६३॥
तस्मान्न्यासः प्रकर्तव्यः साधकेन विपश्चिता। सर्वेषु मातृस्थानेषु वपुष्पावित्र्यहेतवे ॥६४॥
मातृकान्यासमेवं हि त्यक्त्वा योऽन्यत्समाचरेत्। वर्षकोटिप्रयत्नेन स सिद्धिं नैव विन्दति ॥६५॥
ॐकारमादौ संयोज्य सर्वं पूर्ववदाचरेत्। अयमन्तर्मातृकाख्यो न्यासः स्यात् सर्वसिद्धिदः ॥६६॥
झकारमादिमं कृत्वा न्यासोऽयं वरवर्णिनि। नाम्ना बहिर्मातृकाख्यो न्यासचूडामणिर्भवेत् ॥६७॥
ध्यानानि पूर्ववद्देवि कथितानि महामते।

मातृकान्यास—अब मैं वटुकभैरव के उत्तम मातृका न्यास को कहता हूँ, जिसके करने से वटुक साधक के हाथ में होते हैं। श्रीबीज के पाँच मातृकामण्डल हैं—१. कं खं गं घं ङं चं छं जं झं, २. ञं तं, ३. थं, ४. दं धं नं पं फ, ५. यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं। परम पूज्य वटुक के इस उत्तम मातृका न्यास को जानकर जो साधना करता है, उसे शीघ्र शिवत्व प्राप्त होता है। इस न्यास के विना जो अन्य न्यास करता है, उससे वटुक कुपित होकर शाप देते हैं। इसलिये साधक को यह न्यास शरीर के मातृकास्थानों में करना चाहिये। इससे शरीर की पवित्रता होती है। इस मातृका न्यास को छोड़कर जो दूसरा न्यास करता है, उसे सौ करोड़ वर्षों में भी सिद्धि नहीं मिलती। सभी मातृकाओं के पहले ॐकार लगाकर पूर्ववत् न्यास करने से यह अन्तर्मातृका न्यास सर्व सिद्धिप्रदायक होता है। मातृकाओं के पहले झकार लगाकर किया जाने वाला बहिर्मातृका न्यास न्यासों का चूड़ामणि है। इनका ध्यानादि पूर्ववत् होता है।

महासरस्वतीबीजम्

अथान्यं न्यासमाख्यास्ये शृणुष्व वरवर्णिनि ॥६८॥
सरस्वतीमातृकाख्यं सद्यः सिद्धिप्रदायकम्। न्यसेन्महामते बीजं मातृकास्थानकेषु च ॥६९॥
महासरस्वतीदेव्याः सद्यः सिद्धिप्रदायकम्। क्रोधीशाधः पिनाकीशो दाहकेशभुजङ्गमौ ॥७०॥

भृग्वीशनकुलीशौ च भुजङ्गनकुलीशकौ। संवर्तबकरेवत्यस्त्रिमूर्तीन्दुविभूषिताः ॥७१॥
महासरस्वतीबीजं कथितं देवि दुर्लभम्।

क्रोधीशः क, पिनाकीशो ल, दाहकेशो ड, भुजङ्गेशः र, भृग्वीशः स, नकुलीशो ह, भुजङ्गेशो र, नकुलीशो ह, संवर्तः क्ष, बकः श, रेवती र, त्रिमूर्तिः ई, इन्दुर्बिन्दुस्तेन कलडरसहरहक्षशरीं इति। तथा—

इति न्यासाः समाख्याता वटुकाराधने शिवे। सद्यः सिद्धिकरा देवि भाग्यलभ्या न संशयः ॥७२॥
न्यूनन्यासस्य कर्ता यः सद्यो हानिमवाप्नुयात्। एतस्मादधिकान्न्यासात् सिद्धः स्याज्जन्मजन्मनि ॥७३॥ इति।

अब दूसरे प्रकार के न्यास को कहता हूँ। सरस्वती मातृका न्यास तुरन्त सिद्धिदायक होता है। सरस्वती बीज ऐं का न्यास मातृका स्थानों में करे। इससे सरस्वती देवी शीघ्र सिद्धि देती हैं। सरस्वती महाबीज है—कलडरसहरहक्षशरीं।

वटुक की आराधना में इन सभी न्यासों को सिद्धिदायक एवं भाग्यवर्द्धक कहा गया है। कम न्यास करने से तुरन्त हानि होती है; इसलिये अधिक न्यास करना चाहिये। इससे जन्म-जन्म के लिये सिद्धि मिलती है।

ध्यानाद्यर्चा पूजाप्रयोगश्च

तथा कौलेशकोटिप्रभेदे—

एवं न्यस्ततनुर्देवि ध्यायेद्वटुकभैरवम्। शुद्धस्फटिकसङ्काशं द्विनेत्रोत्पलशोभितम् ॥१॥
कुटिलालकसंवीतचारुस्मेरमुखाम्बुजम्। नानारत्नमयाकल्पैः किङ्किणीजालनूपुरैः ॥२॥
दीप्तं शुभ्राम्बरावीतं द्विभुजं दक्षिणे करे। त्रिशिखं सव्यहस्ते च दधानं दण्डमद्भुतम् ॥३॥
वटुवेषधरं शम्भुं सात्त्विकं साधकः स्मरेत्। इति।

रुद्रयामले तु—'कपालं वामहस्ते तु सूक्ष्मं दण्डं च दक्षिणे' इत्युक्तम्। सात्त्विकं चतुर्भुजध्यानं तत्रैव—

श्वेतवर्णं चतुर्बाहुं जटामुकुटधारिणम्। त्रिशूलपाशहस्तं च दण्डहस्तकमण्डलुम् ॥१॥
त्रिनेत्रं नीलकण्ठं च मुक्ताभरणभूषितम्। एवं ध्यात्वा यजेद्देवं शैवे पीठे सुरेश्वरि ॥२॥
अष्टपत्रं महादेवि कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम्। पद्मं विलिख्य तन्मध्ये कर्णिकायां सुरेश्वरि ॥३॥
कृत्वा षट्कोणमस्यान्तस्त्रिकोणं परिकल्पयेत्। व्योमपद्मं च तन्मध्ये वसुपत्रविराजितम् ॥४॥
कर्णिकाकेसरैर्युक्तं चतुरस्रत्रयं बहिः। चतुर्द्वारसमायुक्तं तन्मध्ये वटुकं यजेत् ॥५॥
मूर्तिं मूलेन सङ्कल्प्य तस्यामावाहयेत्प्रभुम्। सद्योजातेन मन्त्रेण मूलाद्येन महेश्वरि ॥६॥
स्थापयेद्वामदेवेन मूलाद्येन च सुव्रते। सन्निधाप्याथ मूलेन केवलेनैनमीश्वरि ॥७॥
अघोरान्तेन मूलेन सन्निरोधनमाचरेत्। मूलेन संमुखीकुर्यादवगुण्ठ्याथ मूलतः ॥८॥
षडङ्गैः सकलीकृत्यामृतीकृत्य च मूलतः। परमीकरणं चैव स्वस्वमुद्राभिरुक्तवत् ॥९॥
एतत्सर्वं विधातव्यं ततो ध्यात्वा समाहितः। कृत्वाऽसुस्थापनं तस्य मुद्राः सन्दर्शयेदथ ॥१०॥
लिङ्गाद्याः पूर्वमुद्दिष्टा योनिमुद्रा च तत्र या। तां दर्शयेत् तत्पुरुषमूलाभ्यां च महेश्वरि ॥११॥
ईशानेन नमस्कुर्यान्मूलाद्येन महेश्वरि। आसनाद्यैश्च पुष्पान्तैरुपचारैस्ततोऽर्चयेत् ॥१२॥
ततो देवाज्ञया सम्यग् यजेदावृतिदेवताः। न्यासस्थानेषु देवस्य देहेऽङ्गानि समर्चयेत् ॥१३॥
देवस्य देहे देवेशि पञ्चमूर्तीर्यजेत् क्रमात्। अङ्गुलीदेहवक्त्रेषु त्रिविधन्यासमार्गतः ॥१४॥
कर्णिकायां यजेत् पश्चात् पूर्वदक्षोत्तरेषु च। पश्चिमे देवमूर्तौ च व्योमपद्मदलेष्वथ ॥१५॥
असिताङ्गं रुरुं चण्डं क्रोधमुन्मत्तभैरवम्। कपालिनं भीषणं च संहारं च समर्चयेत् ॥१६॥
षट्कोणेषु षडङ्गानि यजेद् देवि यथाविधि। ततोऽष्टदलपद्मान्तः षट्कोणाद्बहिरद्रिजे ॥१७॥
पूर्वादीशानपर्यन्तं वक्ष्यमाणान् समर्चयेत्। डाकिनीपुत्रकान् देवि राकिणीपुत्रकानपि ॥१८॥

लाकिनीपुत्रकान् पश्चात् काकिनीपुत्रकानथ। शाकिनीपुत्रकान् भूयो हाकिनीपुत्रकांस्तथा ॥१९॥
मालिनीपुत्रकान् देवि देवीपुत्रानतः परम्। उमापुत्रान् रुद्रपुत्रान् (मातृपुत्रानथेश्वरि ॥२०॥
वामभागे तु देवस्य यजेदेतान् क्रमेण वै। इन्द्रेशानदिशोर्मध्ये) ऊर्ध्वमुख्याः सुतान् यजेत् ॥२१॥
अधोमुख्याः सुतान् देवि यजेद्रक्षोजलेशयोः। अन्तराले महेशानि पुत्रवर्गांस्त्रयोदश ॥२२॥ इति।

रुद्रयामले तु रुद्रपुत्रानन्तरं—'देशग्रामाधिपांश्चैव स्थानाधिपमनुक्रमात्। मेघनादं प्रचण्डाख्यं कालदूतं तथैव च।' इत्युक्तं यथोपदेशमत्रापीति।

इत्थं संपूज्य तद्बाह्ये पद्मपत्रेषु पूजयेत्। ब्रह्माणीपुत्रकं पूर्वे माहेशीपुत्रमीश्वरे ॥२३॥
वैष्णवीपुत्रकं सौम्ये कौमारीपुत्रमानिले। इन्द्राणीपुत्रकं देवि पश्चिमे पूजयेत् ततः ॥२४॥
देवेशि नैर्ऋते पश्चान्महालक्ष्मीसुतं यजेत्। वाराहीपुत्रकं देवि दक्षिणे वह्निकोणके ॥२५॥
चामुण्डापुत्रमभ्यर्चेल्लोकेशवटुकान् उमे। अष्टपत्राद्बहिर्देवि चतुरस्रान्तरे पुनः ॥२६॥
अष्टदिक्षु यजेदेतान् हेरुकं त्रिपुरान्तकम्। वेतालमग्निजिह्वं च कालान्तकमतः परम् ॥२७॥
करालमेकपादं च भीमरूपं महेश्वरि। अभ्यर्च्येन्द्रेशयोर्मध्ये यजेदचलमद्रिजे ॥२८॥
हाटकेशं महेशानि पाशिराक्षसयोस्तथा। चतुरस्रादिरेखायां दिग्विदिक्षु सुरेश्वरि ॥२९॥
अन्तरालेषु चाभ्यर्चेच्छ्रीकण्ठादीन् सुरेश्वरि। ततो द्वितीयरेखायां क्रोधीशादीन् महेश्वरि ॥३०॥
आषाढ्यन्तान् समभ्यर्च्य तृतीयायां समर्चयेत्। दण्डीश्वरादिभृग्वन्तान् नकुलीशादिकाञ्छिवे ॥३१॥
देवस्य वामभागे तु पूजयेत् परमेश्वरि। दिव्यन्तरिक्षभूमिष्ठान् योगीशाञ्छक्तिसंयुतान् ॥३२॥
योगिनीश्च समभ्यर्चेदीशानादिषु सुन्दरि। कोणेषु देवदेवेशि दिगीशानायुधैः सह ॥३३॥
चतुरस्राद्बहिर्देवि पूजयेदुक्तवर्त्मना। इति संपूजयेद् देवं वटुकं भक्तितत्परः ॥३४॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां पतिर्भवति मानवः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा बिन्दुविसर्गमातृकान्यासानन्तरं झकारादिजकारान्तान् वर्णान् वामकराङ्गुल्यादितन्मणिबन्धान्तेषु स्थानेषु विन्यस्य, कलामातृकादिश्रीबीजादि-मातृकान्यासानन्तरं पुनश्च 'श्रीअंनमः' इत्यनन्तरं, आंनमः इत्यादि क्षंनमः इत्यन्तं केवलाक्षराणि शुद्धमातृकावदेव विन्यस्य, पुनर्झकारादौ श्रीबीजं पुनस्थकारादौ पुनर्बकारादौ पुनः झकारादौ श्रींनमः इति विन्यसेत्। ततः कलडरसहरहक्षश्रीं अंनमः इत्यादिमातृकां विन्यस्य, ततः कामबीजादिमातृकान्यासान्ते ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि बृहदा-रण्यकऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीवटुकाय भैरवाय देवतायै नमः। गुह्ये ह्रींबीजाय नमः। पादयोः ह्रींशक्तये नमः। नाभौ आंकीलकाय नमः। इति विन्यस्य मम चतुर्विधपुरुषार्थसिद्धये विनियोगः, इति कृताञ्जलिर्वदेत्। ततः अङ्गुष्ठयोः ह्लोंवों ईशानाय नमः। तर्जन्योः ह्लेंवें तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः ह्लुंवुं अघोराय नमः। अनामिकयोः ह्लिंविं वामदेवाय नमः। कनिष्ठयो ह्लंवं सद्योजाताय नमः। ततः शिरसि मुखे हृदये गुह्ये पादयोश्चैता एव मूर्तीर्विन्यस्य, पुनः शिरसि ह्लोंवों ईशानायोर्ध्ववक्त्राय नमः। मुखे ह्लेंवें तत्पुरुषाय पूर्ववक्त्राय नमः। दक्षकर्णे ह्लुंवुं अघोराय दक्षिणवक्त्राय नमः। वामकर्णे ह्लिंविं वामदेवायोत्तरवक्त्राय नमः। चूडाधः ह्लंवं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः। इति विन्यस्य, ह्रांवां हृदयाय नमः। ह्रींवीं शिरसे स्वाहा। ह्रूंवूं शिखायै वषट्। ह्रैंवैं कवचाय हुं। ह्रौंवौं नेत्राभ्यां वौषट्। ह्ःवः अस्त्राय फट्, इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य, हृदयादिषु च विन्यस्यास्त्रमन्त्रेण तालत्रयं छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं च कृत्वा, पुनः 'हसहौं' इति प्रेतबीजेन षडङ्गन्यासं कृत्वा, शिरसि ह्स्क्ष्मीं नमः, एवं बाहुलिङ्गनाभिहस्ताङ्गुलीषु पादाङ्गुलीषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततो ब्रह्मरन्ध्रे झ्रौं नमः। एवं मुखनेत्रद्वयग्रीवाना-साकपोलद्वयचिबुकब्रह्मरन्ध्रेषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततः पादयोः मलहों नमः, एवं हस्तद्वयनेत्रद्वयश्रोत्रद्वयकुक्षिद्वयलिङ्गेषु

चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततः चिबुके श्रूं नमः। एवं पादद्वयगलपादद्वयहृदयपादद्वयनाभिपादद्वयेषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततो मुखे प्रूं नमः, एवं हृदयनाभिहृदयपादद्वयहृदयदक्षकुक्षिहृदयवामकुक्षिहृदयदक्षपादतलहृदयवामपादतलहृदय-दक्षनेत्रहृदयवामनेत्रहृदयदक्षनासाहृदयवामनासाहृदयदक्षकर्णहृदयवामकर्णहृदयेषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततो गलघण्टिकायां घ्रूँ नमः, एवं नाभिघण्टिकाहृदयपादद्वयहृदयकटिमस्तकमस्तककटिस्तनद्वयगुल्फद्वयगुल्फद्वयस्तनद्वयेषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततो मस्तके खयरूँ नमः, एवं पादद्वयग्रीवामस्तकनाभिगलहृदयजङ्घाद्वयनेत्रद्वयकर्णद्वयबाहुद्वयस्तनद्वयेषु चेदमेव बीजं न्यसेदिति। ततो हृदये ॐनमः, एवं पादद्वयहस्तद्वयकर्णद्वयनासाद्वयेषु चेदमेव न्यसेदिति। ततो मुखे भ्रलसहीं नमः। एवं नेत्रद्वयकर्णद्वयकपोलद्वयगण्डद्वयकण्ठस्तनद्वयहृदयपादद्वयचिबुकमस्तकभुजद्वयस्कन्ध-द्वयदन्तपंक्तिद्वयब्रह्मरन्ध्रमूलाधारभ्रूमध्येषु विन्यसेत्। ततः शिरसि नमरलमरक्षरशरहसीं नमः, एवं गण्डद्वये मुखे चेदमेव बीजं विन्यस्य, ततः नेत्रयोः करलसरमरीं नमः, एवं कर्णद्वयनाभिलिङ्गगुदेषु चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततः कपोलयोः क्षरसरहसीं नमः। एवं ब्रह्मरन्ध्रे दन्तपंक्त्योश्चेदमेव बीजं न्यसेत्। ततो मस्तके सहसहलकलईशरवरवलवऊईं नमः, एवं दक्षनेत्रवामनेत्रदक्षकर्णवामकर्णकपोलद्वयगण्डद्वयचिबुकगलस्कन्धद्वयस्तनद्वयहृदयकुक्षिद्वयनाभिजङ्घाद्वय-लिङ्गमेढ्रद्वयमूलाधारगुल्फद्वयपादद्वयदक्षपादाङ्गुलीवामपादाङ्गुलीब्रह्मरन्ध्रमूलाधारमूलाधारब्रह्म-रन्ध्रेषु न्यसेत्। ततः कलडरसहरहक्षशरीं नमः इति महासरस्वतीबीजं मातृकास्थानेषु न्यस्येत्। इत्येवं न्यासान् कृत्वा, ततो ध्यानादिमूर्तिकल्पनान्ते मूलं सद्योजाताय नमः, इति प्रागुक्तविधिनावाह्य मूलमुच्चार्य, वामदेवाय नमः इति प्राग्वत् संस्थाप्य, मूलेन सन्निधाप्य, मूलं अघोराय नमः इति प्राग्वत् सन्निरुध्य, संमुखीकरणादिप्राणप्रतिष्ठान्ते लिङ्गमुद्रानन्तरं मूलं तत्पुरुषाय नमः इति योनिमुद्रां प्रदर्श्य, त्रिशूलाद्यास्तु मुद्रा यथापूर्वमेव प्रदर्श्य, मूलं ईशानाय नमः इति नमस्कारमुद्रया प्रणम्यासनादिपुष्पान्तानुपचारानुपचर्य, देवस्य देहे षडङ्गन्यासस्थानेषु ह्रांवां हृदयाय नमः, ह्रींवीं शिरसे नमः, इत्यादि नमोऽन्तान्येव षडङ्गानि संपूज्य, देवस्य देहे मूर्तिन्यासस्थानेषु पञ्चदशस्वपि न्यासोक्तप्रकारेणैव त्रिरावृत्त्या पञ्चमूर्तीः संपूज्य, ततो व्योमपद्मकर्णिकायां पूर्वदक्षिणोत्तरपश्चिमेषु ईशानादिचतुर्मूर्तीः संपूज्य पञ्चमीं देवस्य मूर्तौ पूजयेत्। तत उत्तरतोऽष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन—ॐ अं असिताङ्गभैरवाय नमः। इं रुरुभैरवाय नमः। उं चण्डभैरवाय नमः। ॠं क्रोधभैरवाय नमः। ॡं उन्मत्तभैरवाय नमः। एं कपालिभैरवाय नमः। ओं भीषणभैरवाय नमः। अं संहारभैरवाय नमः इति संपूज्य, षट्कोणेषु स्ववामाग्रमारभ्याग्नेयेशाननिर्ऋतिवायुकोणेषु हृदयाद्यङ्गचतुष्टयं देवाग्रकोणे नेत्रं तदादिचतुर्दिक्षु चास्त्रमिति षडङ्गानि प्राग्वत् संपूज्य, अष्टदलपद्माभ्यन्तरे षट्कोणाद्बहिर्देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येनाष्टदिक्षु—ॐडाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। राकिणीपुत्रेभ्यो नमः। लाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। काकिनीपुत्रेभ्यो नमः। शाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। हाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। मालिनीपुत्रेभ्यो नमः। देवीपुत्रेभ्यो नमः। इत्यष्टदिक्षु संपूज्य, देवस्य वामभागे—उमापुत्रेभ्यो नमः। रुद्रपुत्रेभ्यो नमः। मातृपुत्रेभ्यो नमः। इति संपूज्य, इन्द्रेशानयोर्मध्ये ऊर्ध्वमुखीपुत्रेभ्यो नमः। निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये अधोमुखीपुत्रेभ्यो नमः। इत्यूर्ध्वाधोबुद्ध्या संपूज्य, बहिरष्टदलेषु देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन—ॐ ब्रह्माणीपुत्रवटुकाय नमः। एवं माहेशीपुत्र०। वैष्णवीपुत्र०। कौमारीपुत्र०। इन्द्राणीपुत्र०। महालक्ष्मीपुत्र०। वाराहीपुत्र०। चामुण्डापुत्र० इति संपूज्य, अष्टपत्राद्बहिश्चतुरस्राभ्यन्तरे देवाग्रमारभ्य प्रादक्षिण्येन—हेरुकाय नमः। त्रिपुरान्तकाय नमः। वेतालाय नमः। अग्निजिह्वाय नमः। कालान्तकाय नमः। करालाय नमः। एकपादाय नमः। भीमरूपाय नमः। इत्यष्टदिक्षु संपूज्य, (इन्द्रेशानयोर्मध्ये अचलाय नमः। निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये हाटकेशाय नमः। इति संपूज्य) तद्बहिश्चतुरस्रत्रये अन्तश्चतुरस्रे देवाग्रादिप्रादक्षिण्येन दिक्षु श्रीकण्ठानन्तसूक्ष्मत्रिमूर्तीः, ईशानाग्न्यादिकोणेषु—अमरेशार्घीशभावभूतितिथीशान्, दिक्कोणयोरन्तरालेषु देवस्य दक्षिणाग्रादिप्रादक्षिण्येनाष्टसु दिक्षु स्थाणुहरझिण्ठीशभौति-कसद्यानुग्रहाक्रूरमहासेनेशान् पूजयेत्। द्वितीयरेखायामपि तथैव दिग्विदिक्ष्वन्तरालेषु—क्रोधीशाद्याषाढीशान्तानभ्यर्च्य, तृतीयरेखायामपि तथैव दण्डीशादिभृग्वीशान्तान् संपूज्य, नकुलीशशिवेशसंवर्तेशान् देवस्य वामभागे संपूज्य, तद्बहिर्देवस्य वामाग्रकोणमारभ्य प्रादक्षिण्येन सशक्तिकेभ्यो दिव्ययोगिभ्यो नमः। एवं अन्तरिक्षयोगिभ्यो नमः।

भूमिष्ठयोगिभ्यो नमः। सर्वयोगिनीभ्यो नमः। इति संपूज्य, तद्बहिरिन्द्रादींस्तदायुधानपि प्रागुक्तविधिना संपूज्य, प्राग्वद् धूपदीपादि दत्त्वा शेषं समापयेदिति। तथा—

जितेन्द्रियो हविष्याशी जपेदेनं मनुं प्रिये। पञ्चविंशत्सहस्राणि पञ्चलक्षं दशांशतः ॥३५॥
हुनेत् तिलैस्त्रिमध्वक्तैस्तर्पयेत् तद्दशांशतः। अभिषिच्यात्मनो मूर्ध्नि मूलमन्त्रेण साधकः ॥३६॥
मार्जनस्य दशांशेन ब्राह्मणान् भोजयेत् प्रिये।

अयं कृतयुगजपः। कलावेतच्चतुर्गुणजपः कार्यः। 'एवमक्षरलक्षं वा तदर्धार्धार्धमेव च' इति यामलप्रोक्तत्वात्। अक्षरलक्षमेकविंशतिलक्षम्। एतत्संख्याकथनं तु कलियुगमारभ्य कृतयुगपर्यन्तपरमिति ज्ञेयं, ईश्वरस्य स्वतन्त्रेच्छत्वात् अत एव कलियुगजपप्रतिपादकेषु संग्रहग्रन्थेषु शारदातिलकादिषु वर्णलक्षमुक्तमिति।

कौलेशकोटिप्रभेद में कहा गया है कि इस प्रकार के न्यासों के बाद शुद्ध स्फटिक के समान दो नेत्रकमलों से सुशोभित, घुंघुराले केशों से शोभायमान प्रसन्न मुखकमल वाले, अनेक रत्नों से रचित आभूषणों से दीप्यमान, श्वेत वस्त्र धारण करने वाले, दो भुजाओं वाले, दाहिने हाथ में त्रिशिखा एवं बाँयें हाथ में दण्ड धारण करने वाले, वटुक वेषधारी सत्त्वगुणयुक्त शम्भुस्वरूप वटुकभैरव का ध्यान करे। रुद्रयामल में सत्त्विक ध्यान चतुर्भज रूप में कहा गया है, जो इस प्रकार है—

श्वेतवर्णं चतुर्बाहुं जटामुकुटधारिणम्। त्रिशूलपाशहस्तं च दण्डहस्तकमण्डलुम्।।
त्रिनेत्रं नीलकण्ठं च मुक्ताभरणभूषितम्।

पूजन—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करे। बिन्दु-विसर्गयुक्त मातृका न्यास के बाद 'झं' से 'जं' तक के वर्णों से वाम कराङ्गुलियों से मणिबन्ध तक न्यास करे। कला मातृका न्यास, श्रीबीजादि मातृका न्यास के बाद पुनः श्रीं अं नमः से श्रीं क्षं नमः तक केवल अक्षरों से शुद्ध मातृका के समान न्यास करे। पुनः झकारादि श्रीबीज, तब थकारादि, बकारादि, क्षकारादि में श्रीं नमः लगाकर न्यास करे। तब कलडरसहरहक्षश्रीं अं नमः से क्षं नमः तक मातृकान्यास करे। तदनन्तर कामबीजादि मातृका न्यास के बाद इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि बृहदारण्यकऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीवटुकाय भैरवाय दैवतायै नमः, गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः, नाभौ आं कीलकाय नमः। तदनन्तर धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार कर न्यास करे—अंगूठों में ह्रों वों ईशानाय नमः, तर्जनियों में हें वें तत्पुरुषाय नमः, मध्यमाओं में हुं वुं अघोराय नमः, अनामिकाओं में हिं विं वामदेवाय नमः, कनिष्ठिकाओं मे हं वं सद्योजाताय नमः। तब शिर में, मुख में, हृदय में, गुह्य में, पैरों मे इनके मूर्तियों का न्यास करे। पुनः शिर पर ह्रो वों ईशानाय ऊर्ध्ववक्त्राय नमः, मुख में हें वें तत्पुरुषाय पूर्ववक्त्राय नमः, दक्ष कर्ण में हुं वुं अघोराय दक्षिण-वक्त्राय नमः, वाम कर्ण में हिं विं वामदेवाय उत्तरवक्त्राय नमः, चूड़ा के नीचे हं वं सद्योजाताय पश्चिमवक्त्राय नमः से न्यास करे। इसके बाद हृदयादि न्यास करे—हां वां हृदयाय नमः, ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा, हूं वूं शिखायै वषट्, हैं वैं कवचाय हुं, ह्रौं वौं नेत्राभ्यां वौषट्। हः वः अस्त्राय फट्। अस्त्र मन्त्र से तीन ताली बजावे। इसके बाद प्रेतबीज 'हसहौं' से षडङ्ग न्यास करके शिर पर 'ह्स्क्ष्मीं नमः' से न्यास करे। इसी प्रकार बाहु लिङ्ग नाभि हस्ताङ्गुलियों पादाङ्गुलियों में भी इसी बीज से न्यास करे।

तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र, मुख, दोनों नेत्रों, गला, नासा कपोलद्वय, चिबुक एवं ब्रह्मरन्ध्र में 'ज्ञौं नमः' से न्यास करे। तब दोनों पैरो, दोनों हाथो, दोनों नेत्रों, दोनों कानो, दोनो कुक्षियों एवं लिङ्ग में 'मलहों' बीज से न्यास करे।

इसके बाद चिबुक में, दोनों पैरों और गले में, दोनों पैरों और हृदय में, दोनों पैरों और नाभि में, दोनों पैरों में 'श्रूं नमः' से न्यास करे। इसके बाद मुख में, हृदय-नाभि, हृदय-दोनों पैरों, हृदय-दक्ष कुक्षि, हृदय-वाम कुक्षि, हृदय-दक्ष पादतल, हृदय-वाम पाददल, हृदय-दक्ष नेत्र, हृदय-वाम नेत्र, हृदय-दक्ष नासा, हृदय-वाम नासा, हृदय-दक्ष कर्ण, हृदय-वाम कर्ण और हृदय में 'प्रूं नमः' से न्यास करे। तब गलघण्टिका, नाभि-घण्टिका, हृदय-दोनों पैर, हृदय-कमर, मस्तक-कमर, स्तनद्वय-गुल्फद्वय, गुल्फद्वय-स्तनद्वय में 'ध्रूं नमः' न्यास करे। तदनन्तर मस्तक, दोनों पैर, ग्रीवा, मस्तक, नाभि, गला, हृदय, दोनों जाँघों, दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों बाहु, दोनों स्तनों में 'खयरूं नमः' से न्यास करे। तत्पश्चात् हृदय, पादद्वय, हस्तद्वय, कर्णद्वय,

नासाद्वय में 'ॐ नम:' से न्यास करे। तदनन्तर 'भ्रलसहीं नम:' से मुख, दोनों नेत्रों, कर्णों, कपोलों, गण्डों, कण्ठ, स्तनों, हृदय, पैरों, चिबुक, मस्तक, भुजाओ, कन्धों, दन्तपंक्तियों, ब्रह्मरन्ध्र, मूलाधार, भ्रूमध्य में न्यास करे। तब 'नमरलमरक्षरशरहसीं नम:' से शिर, गण्डद्वय, मुख में न्यास करे। तब 'करलसरमरीं नम:' से नेत्रों, कानों, नाभि, लिङ्ग, गुदा में न्यास करे।

तत्पश्चात् 'क्षरसरहसीं नम:' से कपोल, ब्रह्मरन्ध्र, दन्तपंक्तियों में न्यास करे। तब 'सहसहलकलईशरवरवलवऊईं नम:' से मस्तक, नेत्रों, कर्णों, कपोलों, गण्डों, चिबुक, गला, कन्धों, स्तनों, हृदय, कुक्षियों, नाभि, जङ्घो, लिङ्ग, अण्डकोष, मूलाधार, गुल्फों, पैरों, पादाङ्गुलियों, ब्रह्मरन्ध्र, मूलाधार, मूलाधार, ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे। तब 'कलडरसहरहक्षशरीं नम:' इस महासरस्वती बीज से मातृका स्थानों में न्यास करे। इन न्यासों को करने के बाद इस प्रकार ध्यान करे—

श्वेतवर्णं चतुर्बाहुं जटामुकुटधारिणम्। त्रिशूलपाशहस्तं च दण्डहस्तकमण्डलुम्।।
त्रिनेत्रं नीलकण्ठं च मुक्ताभरणभूषितम्।

ध्यान करके मूर्ति कल्पित करे। मूल मन्त्र के साथ 'सद्योजाताय नम:' कहकर पूर्वोक्त विधि से आवाहन करे। मूल मन्त्र सहित 'वामदेवाय नम:' कहकर पूर्ववत् मूर्ति स्थापित करे। मूल मन्त्र से सन्निधापन, मूल अघोराय नम: से सन्निरोधन करे। सम्मुखीकरणादि करके प्राणप्रतिष्ठा करे। लिङ्ग मुद्रा से मूल तत्पुरुषाय नम: कहकर योनिमुद्रा दिखावे। त्रिशूलादि मुद्रा दिखावे। मूल ईशानाय नम: कहकर नमस्कार मुद्रा से प्रणाम करके आसन से पुष्पोपचार तक प्रदान कर देव का अर्चन करे।

षडङ्ग न्यास स्थानों में देव के देह में इस प्रकार पूजा करे—ह्रां वां हृदयाय नम:, ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा, ह्रूं वूं वीं शिखायै वषट्, ह्रैं वैं कवचाय हुम, ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह: व: अस्त्राय फट्। देव के देह में मूर्तिन्यास स्थानों में पन्द्रह न्यासोक्त प्रकार से तीन आवृति में पञ्च मूर्तियों की पूजा करे। तब व्योम पद्मकर्णिका में पूर्व दक्षिण उत्तर पश्चिम ईशान में चतुर्मूर्ति की पूजा करे। पाँचवीं मूर्ति की पूजा देव की मूर्ति में करे।

अष्टदल में देव के आगे से प्रादक्षिण्य क्रम से इस प्रकार पूजा करे—ॐ अं असितांगभैरवाय नम:, इं रुरुभैरवाय नम:, उं चण्डभैरवाय नम:, ऋं क्रोधभैरवाय नम:, लृं उन्मत्तभैरवाय नम:, एं कपालीभैरवाय नम:, ओं भीषणभैरवाय नम:, अ: संहारभैरवाय नम:। षट्कोण में अपने बाँयें से प्रारम्भ करके आग्नेय ईशान नैर्ऋत्य वायव्य कोणों में हृदयादि चार अंगों की, देवाग्र कोण में नेत्र की तथा चारों दिशाओं में अस्त्र की—इस प्रकार षडङ्ग पूजा पूर्ववत् करे।

अष्टपत्र कमल के भीतर षट्कोण के बाहर देवाग्र से प्रादक्षिण्य क्रम से आठों दिशाओं में इनसे पूजा करे—ॐ डाकिनीपुत्रेभ्यो नम:, राकिणीपुत्रेभ्यो नम:, लाकिनीपुत्रेभ्यो नम:, काकिनीपुत्रेभ्यो नम:, शाकिनीपुत्रेभ्यो नम:, हाकिनीपुत्रेभ्यो नम:, मालिनीपुत्रेभ्यो नम:, देवीपुत्रेभ्यो नम:। देव के वाम भाग में उमापुत्रेभ्यो नम:, रुद्रपुत्रेभ्यो नम:, मातृपुत्रेभ्यो नम:। पूर्व और ईशान मध्य में ऊर्ध्वमुखीपुत्रेभ्यो नम: से तथा नैर्ऋत्य-पश्चिम मध्य में अधोमुखीपुत्रेभ्यो नम: से पूजन करे।

इस प्रकार ऊपर-नीचे पूजन करके अष्टदल के बाहर देवता के आगे से प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजा करे—ॐ ब्रह्माणीपुत्रवटुकाय नम:, माहेशीपुत्रवटुकाय नम:, वैष्णवीपुत्रवटुकाय नम:, कौमारीपुत्रवटुकाय नम:, इन्द्राणीपुत्रवटुकाय नम:, महालक्ष्मीपुत्रवटुकाय नम:, वाराहीपुत्रवटुकाय नम:, चामुण्डापुत्रवटुकाय नम:। अष्टदल और चतुरस्र के अन्तराल में देवाग्र से प्रादक्षिण्य क्रम से पूजा करे—हेरुकाय नम:, त्रिपुरान्तकाय नम:, वेतालाय नम:, अग्निजिह्वाय नम:, कालान्तकाय नम:, करालाय नम:, एकपादाय नम:, भीमरूपाय नम:, पूर्व-ईशान मध्य में अचलाय नम: एवं नैर्ऋत्य-पश्चिम मध्य में हारकेशाय नम: से पूजन करे।

इसके बाहर तीन चतुरस्र में से अन्तश्चतुरस्र में पूर्वादि दिशाओं में इस प्रकार पूजा करे—श्रीकण्ठाय नम:, अनन्तायाय नम:, सूक्ष्माय नम:, त्रिमूर्तये नम:, ईशान से आग्नेयादि कोणों में अमरेशाय नम:, अर्घीशाय नम:, भावमूतये नम:, तिथीशाय नम: से पूजन करे। दिक्कोणों के अन्तरालों में देवाग्र से प्रादक्षिण्य क्रम से आठों दिशाओं में—स्थाणु, हर, झिण्टीश, भौतिक, सद्यानुग्रह, क्रूर, महासेन, ईशान—इन आठ से पूजा करे। द्वितीय रेखा में भी उसी प्रकार दिशा-विदिशाओं के अन्तरालों में क्रोधीश से आषाढी तक की पूजा करे। तृतीय रेखा में उसी प्रकार दण्डीश से भृग्वीश तक की पूजा करे। देव के वाम भाग

में नकुलीश, शिवेश संवर्तेश की पूजा करे। उसके बाहर देव के वामाग्र कोण से प्रदक्षिण क्रम से इस प्रकार पूजा करे— सशक्तिकेभ्यो दिव्ययोगिभ्यो नमः, सशक्तिकेभ्यः अन्तरिक्षयोगिभ्यो नमः, सशक्तिकेभ्यः भूमिष्ठयोगिभ्यो नमः, सशक्तिकेभ्यः सर्वयोगिनीभ्यो नमः। इसके बाहर इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि उनके आयुधों की पूजा करे। इसके बाद धूप-दीपादि से पूजा करके समाप्त करे। इस प्रकार की वटुकपूजा से मनुष्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का स्वामी हो जाता है।

तदनन्तर जितेन्द्रिय हविष्याशी रहकर इस मन्त्र का जप पाँच लाख पच्चीस हजार करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल से करे। हवन का दशांश तर्पण करे; तदनन्तर मूल मन्त्र से अपने मूर्धा पर उसका दशांश मार्जन अर्थात् अभिषेक करे। मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन करावे। जपसंख्या सत्ययुग के लिये कही गई है, कलियुग में इसका चौगुना अर्थात् इक्कीस लाख जप करना चाहिये। रुद्रयामल मे भी इक्कीस लाख, इसका आधा साढ़े दश लाख या इसका आधा पाँच लाख पच्चीस हजार जप का विधान कहा गया है। कलियुग के लिये जप-प्रतिप्रादक संग्रहग्रन्थों शारदातिलकादि में भी वर्णलक्ष जप कहा गया है।

वीरसाधनविधानम्

अथ वीरसाधनम्। रुद्रयामले—

देव्युवाच

भगवन् देवदेवेश रहस्यं वटुकस्य मे। ब्रूहि येन वशीकुर्यात् साधको भैरवं शिव ॥१॥

श्रीशिव उवाच

शृणु देवि परं गोप्यं कथयामि सुशोभने। रहस्यं सिद्धिदं साक्षाद्वटुकस्य महात्मनः ॥२॥
सर्वे वटुकदेवस्य साधने ये निरूपिताः। उपाया निष्फला एव विनैकं वीरसाधनम् ॥३॥
यो वीरसाधनं हित्वा उपायं चान्यमाश्रयेत्। न स सिद्धिमवाप्नोति नरो वर्षशतैरपि ॥४॥
माषान् मुद्गान् मसूरांश्च चणकानोदनं तथा। क्षीरं तथापूपमपि शष्कुलीरपि शोभनाः ॥५॥

माषादीन् स्विन्नान् सिद्धमाषानिति स्वयमभिधानात्। क्षीरं पायसं 'पायसं पात्रमारोप्ये'ति स्वयमभिधानात्। शष्कुली सुहालीति भाषया।

आदाय सूत्रं कार्पासं कन्याकर्तितमेव च। कुङ्कुमेनापि संरज्य कारयित्वाष्ट कीलकान् ॥६॥
स्तम्भार्थमेकं कीलं च गृहीत्वा सुरसुन्दरि। गच्छेच्छ्मशाननिकटे सुधीः सोत्तरसाधकः ॥७॥
पादप्रक्षालनं कृत्वा ततः स्मृत्वा स्वदेवताम्। बद्धाञ्जलिरिदं वाक्यं प्रवदेत् साधकोत्तमः ॥८॥
अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हि। ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पान्तु माम् ॥९॥
पूर्वे मां शङ्करः पातु तथाग्नेय्यां च शूलधृक्। कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋते जटिलोऽवतु ॥१०॥
पश्चिमे पार्वतीत्राता वायव्ये प्रमथाधिपः। उत्तरे मुण्डमालाढ्य ईशाने वृषभध्वजः॥११॥
ऊर्ध्वे पातु तथा शम्भुरधस्ताद्धूलिधूसरः। अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः ॥१२॥
दक्षिणे भूचरः पातु वामे च पिशिताशनः। केशान् पातु विशालाक्षो मूर्धानं मे मरुत्प्रियः ॥१३॥
मस्तकं पातु भृग्वीशो नेत्रं पातु महामनाः। कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ पात्वरिमर्दनः ॥१४॥
उत्तरोष्ठं विरूपाक्षो ह्यधरं योगिनीप्रियः। दन्तेषु दक्षविध्वंसी चिबुके नृकपालधृक् ॥१५॥
कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः। दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धे च सुन्दरः ॥१६॥
भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदावतु। वामे भुजे सार्वभौमो हृदयं पातु पाण्डुरः ॥१७॥
दक्षहस्ते पशुपतिर्वामे पातु महेश्वरः। उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा ॥१८॥
नाभौ कामप्रविध्वंसी जङ्घे पातु दयामयः। जानुनी पातु जामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा ॥१९॥
पादपृष्ठे ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः। पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः ॥२०॥

इति रक्षां समाधाय मन्त्ररक्षां ततश्चरेत्।

ॐह्रांह्रींह्रः पूर्वे। ॐह्रांह्रूंह्रौं आग्नेये। ॐह्रांश्रीं दक्षिणे। ॐलूंलूंलूं भगनग नैर्ऋते। ॐब्रूंब्रूंब्रूंसंस: पश्चिमे। ॐप्रांप्रं वायव्ये। भ्रांभ्रींभैरव उत्तरे। ॐब्रूंब्रूंलूं फट् ईशाने। ॐग्लौंप्रूं ऊर्ध्वे। ॐस्रांस्रंस: अध:।

एवं रक्षां समाधाय दिक्पालार्चनमारभेत्। ततो वाक्यं पुनर्ब्रूयात् साधक: प्रेमसंयुत: ॥२१॥

भ्रां भैरवभैरव भयंकर हर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा (वर्णा: २२) इति प्रार्थयित्वा,

एकस्मिन् भाजने कृत्वा पालाशस्य महामना:। सिद्धमाषान् व्रजेत् प्राच्यां दिशि पूजार्थमादरात् ॥२२॥
तत्र स्थित्वा तु पुटकं करे कृत्वा विचक्षण:। मन्त्रमेनं सुधी: प्रोच्य दद्यादिन्द्राय वै बलिम् ॥२३॥
ॐह्रांह्रींह्रूं समुच्चार्य भो इन्द्र सुरनायक। प्रसन्नो भव मे शीघ्रं देहि सिद्धिं सनातनीम् ॥२४॥
इमं बलिं गृह्णगृह्ण हुंफड् उच्चार्य साधक:। बलिं दद्यान्महाभागे सिद्ध्यर्थे प्राणवल्लभे ॥२५॥
ततो रंरां समुच्चार्य रुंरूंरिंरीं मम प्रिये। अग्ने गृह्ण मया दत्तं बलिं हुं फट् समुच्चरेत् ॥२६॥
मुद्गान् पात्रे समाधाय प्रदद्याद्बलिमादरात्। ततो दक्षिणदेशान्तं समागत्य विचक्षण: ॥२७॥
ॐप्रांप्रींप्रूं समुच्चार्य तथा प्रांप्रीमपि त्रिधा। प्रेतनाथपदस्यान्ते बलिं गृह्णेति चोच्चरेत् ॥२८॥
हुंफडन्तोऽयमाख्यातो यममन्त्रो वरानने। अनेन दक्षिणे देशे पात्रं मसूरपूरितम् ॥२९॥
स्थापयित्वा नमस्कृत्य निर्ऋत्याशां ततो व्रजेत्। बलिं चणकपात्रस्थं दद्यात् साधकसत्तम: ॥३०॥
ॐफ्रेंफ्रेंफ्रें समुच्चार्य ततो फ्रेंफ्रें तथैव च। खेंखेंह्रोंह्रों ततो ब्रूयात् ततो ह्रौंह्रौं समुच्चरेत् ॥३१॥
रक्षोनाथपदं ब्रूयाद् गृह्ण हुं फट्-समन्वित:। अनेन मनुना दद्याद्रक्षोनाथबलिं बुध: ॥३२॥
तत: पश्चिमदेशस्थो भूत्वा देशिकसत्तम:। जलनाथाय सुबलिं दद्यात् स्वस्यार्थसिद्धये ॥३३॥
वांवींवूंवूं समुच्चार्य ततो वरुणमुच्चरेत्। बलिमेनं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥३४॥
अनेन मन्त्रवर्येण वरुणायोदनस्य च। बलिं दद्यान्महाभाग: स्वार्थसिद्धय आदरात् ॥३५॥
वायुदेशं समासाद्य ततो वायोर्बलिं हरेत्। पायसं पात्रमारोप्य परमादरसंयुत: ॥३६॥
प्रांप्रींप्रूंप्रूं समुच्चार्य प्रैंप्रैंप्रौंप्रौं तथैव च। हुंफडन्तो मनुरयं वायो: सिद्धिप्रदायक: ॥३७॥
अनेन मनुना प्राज्ञो वायवे बलिमाहरेत्। तत उत्तरदेशे तु गत्वा साधकसत्तम: ॥३८॥
अपूपपात्रमाधाय कुबेरबलिमाहरेत्। ॐक्रींक्रूंक्रूं समुच्चार्य तत: क्रांक्रां समुच्चरेत् ॥३९॥
हुंफडन्तेन मनुना बलिं दद्याद्विचक्षण:। ऐशानीं दिशमाश्रित्य साधकप्रवरस्तत: ॥४०॥
ईशानाय बलिं दद्यात् सर्वकामार्थसिद्धये। ॐश्रींश्रूंश्रूं समुच्चार्य श्रींश्रींश्रांश्रामथोच्चरेत् ॥४१॥
हुंफडन्त: समाख्यातो मन्त्रोऽयं लोकदुर्लभ:। अनेन मनुना दद्याच्छष्कुली: पात्रसंस्थिता: ॥४२॥
बल्यर्थं सर्वकामार्थसिद्धये साधकोत्तम:। एवमष्ट बलीन् दत्त्वा सर्वकामार्थसिद्धये ॥४३॥
स्तम्भाधोभागमाश्रित्य कार्यमग्रिममाचरेत्। पुष्पाक्षतान् समाधाय ॐह्रांह्रींह्रूंह्र: उच्चरेत् ॥४४॥
स्तम्भमन्त्रोऽयमाख्यातो सर्वकामार्थसिद्धिद:। अनेन मनुना प्राज्ञ: स्तम्भं संपूज्य निर्भय: ॥४५॥
तत: पठेन्मन्त्रमयं कवचं कार्यसिद्धये। यस्य प्रसादमासाद्य साधको निर्भयो भवेत् ॥४६॥
ह्रांह्रींह्रंह्र: समुच्चार्य क्षांक्षींक्ष्रंक्ष: समुच्चरेत्। हुंहुंहुंहुं समुच्चार्य हुंहुंहुंफडथोच्चरेत् ॥४७॥
सर्वतो रक्षरक्षेति रक्षरक्षेति भैरव। ततो नाथपदं (द्वयं) प्रोच्य फडन्तोऽयं महामनु:॥४८॥
सर्वरक्षाकर: प्रोक्त: साधकाभीष्टदायक:। एवं विधाय मतिमांस्तनौ रक्षां विशालधी:॥४९॥
वीरशान्तिमथो कुर्यात् सर्वकामार्थसिद्धये। यथा सिध्यन्ति कार्याणि साधकानां महेश्वरि ॥५०॥
यावत् कुर्यान्न वीराणां शान्तिं साधकसत्तम:। तावन्न जायते सिद्धि: साधकस्य कथञ्चन ॥५१॥
श्मशानदेशे ये वीरा: शिरसाधाय शासनम्। मन:स्थितान् निकृन्तन्ति साधकानां मनोरथान् ॥५२॥

अपूजिताः पूजितास्ते सर्वकामफलप्रदाः । वीरशान्तिमथो वक्ष्ये साधकानां हिताय वै ॥५३॥
यस्याः प्रसादमासाद्य साधकः सुखमेधते । पद्ममष्टदलं कृत्वा तद्बाह्ये षोडशच्छदम् ॥५४॥
तद्बाह्येऽष्टदलं वापि भूपुरं च ततो लिखेत् । एवं मण्डलमालिख्य साधको निर्भयः स्थितः ॥५५॥
मूलमन्त्रेण नैवेद्यं भैरवाय समर्पयेत् । आद्यपद्मस्य मध्ये तु ततश्चैवाष्ट भैरवान् ॥५६॥
षोडशारे महापद्मे ततः साधकसत्तमः । संपूज्य प्रयतो दद्यान्नैवेद्यं पायसस्य च ॥५७॥
मित्राणि षोडश प्राज्ञो भैरवस्य महात्मनः । कुलीशं सुकुलीशं च जामित्रं रामठं निभम् ॥५८॥
प्रचण्डं चण्डकेशं च चण्डात्मानं च चामरम् । चारित्रं च चमत्कारं चञ्चलं चारुभूषणम् ॥५९॥
चामीकरं चारुवहं कितवं चेति षोडश । नत्यन्तनामभिः पूज्याः षोडशानन्दपूरिताः ॥६०॥
ततोऽष्टपत्रे संपूज्या ब्राह्म्याद्या मातृकास्ततः । स्वस्वदिक्षु महेन्द्रादीन् पूजयेत् साधकोत्तमः ॥६१॥
ततोऽक्षतान् समादाय विकिरंश्चक्रमण्डले । वीरशान्तिं पठेत् सम्यक् साधकः प्रीतमानसः ॥६२॥
चण्डप्रचण्डोर्ध्वकेशभीषणाभीषणाभिधः । व्योमकेशो व्योमवहो व्योमव्यापक इत्यपि ॥६३॥
(एतान् वीरान् समाहूयैह्यायाहीति समुच्चरेत् । मण्डले साधकश्रेष्ठो नैवेद्यादिभिरर्चयेत् ॥६४॥
गन्धपुष्पादिभिरेतान् पृथक् संपूज्य साधकः । एवमर्चां समाधाय साधको निर्भयः स्थितः ॥६५॥
पूर्वप्रोक्तान् सुधीः कृत्वा न्यासानत्यन्तसिद्धिदान्।) पश्चिमाभिमुखो भूत्वा मालामादाय पाणिना ॥६६॥
उच्चैस्तरां जपं कुर्यादागताय महात्मने । भैरवाय समीपे तु वामहस्तेन पायसम् ॥६७॥
सम्भोजयञ्जपं कुर्यान्निर्भयः प्रीतमानसः । तृप्तो देवो यदा ब्रूयाद्वरं वरय वाञ्छितम् ॥६८॥
प्रणम्य दण्डवद्भूमौ वाञ्छितं वरमुच्चरेत् । गृहे चागत्य प्रयतोऽप्युत्सवं च समाचरेत् ॥६९॥
अनेन मनुना देवि सिद्धेन जगतीतले । असाध्यं नास्ति लोकेषु सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥७०॥ इति।

अथास्य प्रयोगो लिख्यते—तत्र साधकेन्द्रः कृतनित्यक्रियः पालाशपत्रकृतपुटकेषु स्विन्नान् माषान् मुद्गान् मसूरांश्चणकानोदनं पायसमपूपान् शष्कुलीश्च पृथक् पृथक् कृत्वा, कन्यया कर्तितं कार्पाससूत्रं कुङ्कुमरञ्जितं क्षीरवृक्षभवानष्टौ कीलकान् स्तम्भार्थमेकं तेभ्यः स्थूलमिति नव कीलांश्च गृहीत्वोत्तरसाधकसहितः श्मशाननिकटे गत्वा, पादक्षालनानन्तरमाचम्य स्वेष्टदेवं स्मृत्वा कृताञ्जलिः 'अत्र श्मशाने याः काश्चि'दिति प्रमाणोक्त(श्लोकमन्त्रं पठित्वा, पूर्वे मां शंकरः पातु-जगत्प्रिये इत्यन्तं प्रमाणोक्तं)श्लोकैकादशकं पठित्वा, पुनः पूर्वे ओंह्रांह्रींह्रंह्रः०। आग्नेये ह्रांह्रींहूंह्रौं०। दक्षिणे ॐह्रांश्रीं०। नैर्ऋते लूंलूंलूं भगनग०। पश्चिमे ब्रूंब्रूंब्रूंसंसः०। वायव्ये प्रांप्रं०। उत्तरे भ्रांभ्रींभैरव०। ईशाने ब्रूंब्रूंलूं फट्०। ऊर्ध्वे ग्लौंभ्रूं०। अधः स्रांस्रंस्रः०। इति स्वात्मानं परितो दशदिक्षु प्रमाणोक्तमन्त्रैरात्मरक्षां कृत्वा, पूर्वाद्यष्टदिक्षु मध्यश्मशाने च कीलकाष्टकं स्तम्भं च निखाय, 'भां भैरव भैरव भयङ्कर हर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा' इति प्रार्थयित्वा, सिद्धमाषभरितं पुटकमादाय सोदकपात्रहस्तो निर्भयः पूर्वकीलकसमीपं गत्वा शुद्धे समे भूतले (ॐ लं इन्द्र साङ्ग सपरिवार इहागच्छागच्छ इत्यावाह्यैरावतारूढं वज्रहस्तं पीतवर्णं सहस्राक्षं सुरगणपरिवृतं ध्यात्वा लं इन्द्रायैतदासनं नमः इति पुष्पादिकमासनं दत्त्वा, लं इन्द्राय एष गन्धो नमः, एवं इमानि पुष्पाणि वौषट्, एष धूपो नमः, दीपो नमः इति दीपान्तैरुपचारैः संपूज्य, तत्पुरतश्चतुरस्रमण्डलं) गन्धजलेन कृत्वा, तत्र माषपुटकं निधाय दक्षहस्ते जलं गृहीत्वा वामहस्तेन तत्पात्रं स्पृशन् 'ॐह्रांह्रींह्रं भो भो इन्द्र सुरनायक मे शीघ्रं प्रसन्नो भव सिद्धिं देहि इमं माषबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफट्' इति मन्त्रेण तस्मिन् पात्रे जलं सिञ्चन् बलिमुत्सृज्य प्रणम्य, आग्नेयकीलकसमीपं गत्वा, तत्र प्राग्वन्मण्डलं कृत्वा, तत्र रं अग्ने इहागच्छ इहागच्छ इत्यावाह्य, मेषारूढं शक्तिहस्तं त्रिनेत्रं तेजोनिधिं रक्तं ध्यात्वा, रं बीजेन प्राग्वद् दीपान्तैरुपचारैः संपूज्य, तथैव मुद्गभरितं पात्रं तदग्रे प्राग्वन्निधाय तथैव जलमादाय, रंरांरुंरूंरिंरीं भो भो अग्ने तेजोनायक मे शीघ्रं प्रसन्नो भव सिद्धिं देहि इमं मुद्गबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति प्राग्वद्बलिं दत्त्वा प्रणम्य, दक्षिणकीलकसमीपं गत्वा प्राग्वत् टमिति यमबीजेन यममावाह्य, तत्र

यमं महिषारूढं दण्डहस्तं कृष्णवर्णं प्रेतगणपरिवृतं ध्यात्वा संपूज्य, तदग्रे प्राग्वन्मसूरपात्रं निधाय प्राग्वज्जलमादाय, ॐप्रांप्रींप्रूंप्रांप्रीं भो भो यम प्रेताधिप मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति प्राग्वद्बलिं दत्त्वा प्रणम्य, निर्ऋतिदिग्गतकीलकसमीपं गत्वा तत्र प्राग्वत् क्षं बीजेन निर्ऋतिमावाह्य तं प्रेतारूढं धूम्रवर्णं खड्गहस्तं रक्षोभिः परिवृतं ध्यात्वा क्षं बीजेन तं प्राग्वत्संपूज्य, तदग्रे प्राग्वच्चणकपूरितं बलिपात्रं निधाय प्राग्वज्जलमादाय, ॐफ्रें फ्रें फ्रें हूं हूं ख्रें ख्रें ह्रों ह्रों ह्रौं ह्रौं भो भो रक्षोनाथ मे शीघ्रमित्यादि इमं चणकबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति प्राग्वद्बलिं दत्त्वा प्रणम्य, पश्चिमदिग्गतकीलकसमीपं गत्वा वमिति वरुणबीजेन वरुणमावाह्य, मकरवाहनं श्वेतवर्णं पाशहस्तं यादोगणवन्दितं ध्यात्वा वं बीजेन प्राग्वत्संपूज्य, तदग्रे ओदनपूरितपात्रं प्राग्वन्निधाय जलमादाय, वांवींवूंवूं भोभो वरुण जलनाथ मे शीघ्रमित्यादि इममोदनबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति प्राग्वद्बलिमुत्सृज्य प्रणम्य, वायुकोणगतकीलकसमीपं गत्वा तत्र प्राग्वन्मण्डलं कृत्वा, तत्र यं बीजेन वायुमावाह्य मृगवाहनं कृष्णवर्णमङ्कुशहस्तं सपरिवारं प्राणादिवायुगणवेष्टितं ध्यात्वा यँ बीजेन प्राग्वत्संपूज्य, तदग्रे पायसभृतं बलिपात्रं निधाय प्राग्वज्जलमादाय, प्रांप्रींप्रूंप्रूंप्रैंप्रैंप्रौंप्रौं भोभो वायो भुवःपते मे शीघ्रमित्यादि इमं पायसबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति मन्त्रेण प्राग्वद्बलिं दत्त्वा प्रणम्य, उत्तरदिग्गतकीलकसमीपं गत्वा, तत्र प्राग्वत् कुमिति कुबेरबीजेन कुबेरमावाह्य तं नरवाहनं गदाहस्तं शुक्लवर्णं यक्षगणवेष्टितं ध्यात्वा कुं बीजेन प्राग्वत्संपूज्य, तदग्रे अपूपपूरितं पात्रं निधाय प्राग्वज्जलमादाय, ॐक्रींक्रूंक्रूंक्रांक्रां भोभो यक्षनाथ मे शीघ्रमित्यादि इममपूपबलिं गृह्ण गृह्ण हुंफडिति मन्त्रेण बलिं दत्त्वा प्रणम्य, ईशानदिग्गतकीलकसमीपं गत्वा प्राग्वत् हं बीजेन ईशानमावाह्य स्वच्छवर्णं शूलहस्तं विद्यागणवेष्टितं ईशानं ध्यात्वा हं बीजेन प्राग्वदासनादिदीपान्तैरुपचारैः संपूज्य, तदग्रे शष्कुलीपूरितं बलिपात्रं निधाय जलमादाय, ॐश्रांश्रूंश्रूंश्रींश्रींश्रांश्रां भोभो ईशान विद्याधिपते मे शीघ्रमित्यादि इमं शष्कुलीबलिं गृह्ण गृह्ण हुं फडिति मन्त्रेण बलिं प्राग्वद् दत्त्वा प्रणम्य, मध्यस्तम्भसमीपं गत्वा पुष्पाक्षतानादाय ॐह्रांह्रींह्रूंहः स्तम्भाय नमः इति स्तम्भं संपूज्य, निर्भयः सन् 'ॐह्रांह्रींह्रूंहः क्षांक्षींक्षूंक्षः ख्रांख्रींख्रूंख्रः घ्रांघ्रींघ्रूंघ्रः म्रांम्रींम्रूंम्रः प्रेंप्रेंप्रेंप्रें प्रोंप्रोंप्रोंप्रों ह्रौंह्रौंह्रौंह्रौं क्लोंक्लोंक्लोंक्लों ग्रोंग्रों ज्रोंज्रोंज्रोंज्रों हुंहुंहुंहुंहुंहुंहुं फट् सर्वतो रक्ष रक्ष रक्ष रक्ष भैरव नाथ नाथ फट्' इति स्वरक्षां कृत्वा, स्तम्भसमीपे स्वासने पूजिते पूर्वाभिमुख उपविश्य, स्वपुरतः सुसमे भूतलेऽष्टदलपद्मं कृत्वा, तद्बहिः षोडशदलं तद्बहिः पुनरष्टदलं तद्बहिश्चतुर्द्वारयुक्तं चतुरस्त्रत्रयं कृत्वा, तन्मध्ये देवमावाह्य प्राग्वत् सर्वोपचारैराराध्याङ्गानि संपूज्याष्टदलेषु प्राग्वदसिताङ्गादिभैरवनाथ फट् इति अष्टभैरवानभ्यर्च्य, तद्बहिः षोडशदलेषु—ॐकुलीशाय नमः। सुकुलीशाय नमः। जामित्राय नमः। रामठाय नमः। निभाय नमः। प्रचण्डाय नमः। चण्डकेशाय नमः। चण्डात्मने नमः। चामराय नमः। चारित्राय नमः। चमत्काराय नमः। चञ्चलाय नमः। चारुभूषणाय नमः। चामीकराय नमः। चारुवहाय नमः। कितवाय नमः। इति संपूज्य, तद्बहिरष्टदले प्राग्वद् ब्राह्म्याद्यष्टमातृः (बहिश्चतुरस्त्रे प्राग्वल्लोकेशांस्तदस्त्राणि च) संपूज्य, धूपदीपौ समर्प्य पद्ममध्ये श्रीभैरवाय नमः। अन्यदलेषु पूजितदेवताभ्यः पृथक् पृथक् पात्रेषु नैवेद्यं विधिवत् समर्प्याक्षतान् हस्ताभ्यामादाय पूजामण्डले विकिरन्, ॐचं चण्ड आयाहि आयाहि, एवं प्रचण्ड० ऊर्ध्वकेश० भीषण० अभीषण० व्योमकेश० व्योमवह० व्योमव्यापकायाहीति आहूय, पृथक् पृथक् गन्धादिभिरुपचारैः संपूज्य, पायसैः पृथक् नैवेद्यं समर्प्य, निर्भयः सन् पश्चिमाभिमुखः प्राणायामऋष्यादिन्यासपूर्वकं पूर्वोक्तानखिलान् न्यासान् कृत्वा, प्राग्वत् मालां संपूज्यादाय मूलमन्त्रस्य स्पष्टाक्षरपदोच्चारणपूर्वकमुच्चैस्तरां जपन्, वामहस्तेन पायसपात्रमादायागतं देवं भोजयन् प्रसन्नचित्तो जपं कुर्यात्। ततस्तृप्तो देवो यदा वरं वरय इति ब्रूयात् तदा दण्डवद्भूमौ प्रणम्य निजेप्सितं वरं गृहीत्वा स्वगृहं गत्वा महोत्सवं कुर्यादिति वीरसाधनविधिः।

एवं सिद्धमनुर्मन्त्री नित्यनैमित्तिके रतः। विघ्नं दुर्गां समभ्यर्च्य बलिं दत्त्वा विधानतः ॥७१॥
काम्यानि साधयेन्मन्त्री यथोक्तां सिद्धिमाप्नुयात्।

वीरसाधन—रुद्रयामल में देवी ने कहा कि हे भगवन् देवदेवेश! अब वटुक के रहस्य को कहिये, जिससे साधक वटुकभैरव को अपने वश में कर सके। श्री शिव ने कहा—हे सुन्दरि! सुनो, परम गोप्य रहस्य को कहता हूँ, जो साक्षात् वटुक

का सिद्धिदायक है। वटुकभैरव के निरूपित सभी साधन बिना वीरसाधन के निष्फल होते हैं। जो वीरसाधन छोड़कर दूसरे उपाय से साधन करता है, उसे सौ वर्षों में भी सकलता नहीं मिलती है।

पूजा प्रयोग—नित्यकृत्य के बाद साधक पलाश के पत्तल पर उबला हुआ उड़द मूंग मसूर चना भात खीर पूआ पूड़ी अलग-अलग बाँधे। कन्या द्वारा काता हुआ सूत, क्षीरवृक्ष का कुङ्कुम से रंगा हुआ आठ कील एवं एक मोटा कील स्तम्भ के लिये—इस प्रकार कुल नव कीलों के साथ सहयोगियों को लेकर श्मशान के निकट जाय। हाथ, पैर धोकर आचमन करके अपने इष्टदेवता का स्मरण करके हाथ जोड़कर इस प्रकार कहे—

अत्र श्मशाने याः काश्चिद्देवता निवसन्ति हिं। ताः प्रयच्छन्तु मे सिद्धिं प्रसन्नाः सन्तु पान्तु माम्।।
पूर्वे मां शङ्करः पातु तथाग्नेय्यां च शूलधृक्। कपाली दक्षिणे पातु नैर्ऋते जटिलोऽवतु।।
पश्चिमे पार्वतीत्राता वायव्ये प्रमथाधिपः। उत्तरे मुण्डमालाढ्य ईशाने वृषभध्वजः।।
ऊर्ध्वे पातु तथा शम्भुरधस्ताद्धूलिधूसरः। अग्रतो भैरवः पातु पृष्ठतः पातु खेचरः।।
दक्षिणे भूचरः पातु वामे च पिशिताशनः। केशान् पातु विशालाक्षो मूर्धानं मे मरुत्प्रियः।।
मस्तकं पातु भृग्वीशो नेत्रं पातु महामनाः। कपोलौ पातु वीरेशो गण्डौ पात्वरिमर्दनः।।
उत्तरोष्ठं विरूपाक्षो ह्यधरं योगिनीप्रियः। दन्तेषु दक्षविध्वंसी चिबुके नृकपालधृक्।।
कण्ठे रक्षतु मां देवो नीलकण्ठो जगद्गुरुः। दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो वामस्कन्धे च सुन्दरः।।
भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदावतु। वामे भुजे सार्वभौमो हृदयं पातु पाण्डुरः।।
दक्षहस्ते पशुपतिर्वामे पातु महेश्वरः। उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा।।
नाभौ कामप्रविध्वंसी जङ्घे पातु दयामयः। जानुनी पातु जामित्रो गुल्फौ गौरीपतिः सदा।।
पादपृष्ठे ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः। पादाधः पातु सततं व्योमकेशो जगत्प्रियः।।

उपर्युक्त ग्यारह श्लोकों के पाठ से अपनी रक्षा करके इन मन्त्रों से पूर्वादि दिशाओं से अपनी रक्षा करे—पूर्व में ॐ ह्रां ह्रीं हं हः, आग्नेय में ॐ ह्रां हूं ह्रौं। दक्षिण में ॐ ह्रां श्रीं। नैर्ऋत्य में ॐ लू लूं लूं भगनग, पश्चिम मे ॐ ब्रूं ब्रूं ब्रूं सं सः, वायव्य में ॐ म्रां म्रं। उत्तर में भ्रां भ्रीं भैरव, ईशान में ॐ ब्रूं त्रूं लूं फट्, ऊपर ॐ ग्लौं म्रूं एवं नीचे ॐ स्त्रां स्त्रं स्त्रः।

इस प्रकार अपने दशों दिशाओं में मन्त्ररक्षा करके पूर्वादि आठों दिशाओं में दिक्पालों के अर्चन-क्रम में आठ कीलों को गाड़कर श्मशान मध्य में स्तम्भ कील को गाड़े। तब प्रार्थना करे—भां भैरव भैरव भयंकर हर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा। इस प्रकार की प्रार्थना के बाद सिद्ध उड़दपूर्ण पलाशपुटक और जल हाथ में लेकर निर्भय होकर पूर्व कील के निकट जाकर शुद्ध समतल भूमि को गन्धजल से शुद्ध करे। तदनन्तर 'ॐ लं इन्द्र सांग सपरिवार इहागच्छागच्छ' से आवाहन करके ऐरावत पर सवार, वज्रधारी, पीत वर्ण, हजार आँखों वाले देवताओं से घिरे इन्द्र का ध्यान करके 'लं इन्द्राय एतदासनं नमः, कहकर पुष्पादि का आसन प्रदान करे। 'लं इन्द्राय एष गन्धो नमः, इमानि पुष्पाणि वौषट्, एष धूपो नमः, एष दीपो नमः' से क्रमशः गन्ध पुष्प, धूप, दीप से पूजा करके चतुरस्त्र मण्डल गन्धजल से बनाकर उसमें उड़द पुटक रखे। तब दाँयें हाथ में जल लेकर बाँयें हाथ से पात्र का स्पर्श करके कहे—ॐ ह्रां ह्रीं हं भो भो इन्द्र सुरनायक मे शीघ्रं प्रसन्नो भव सिद्धिं देहि इमं माषबलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्। इस मन्त्र से उस पात्र में जल गिराते हुये वलि का उत्सर्ग करके प्रणाम करे।

तदनन्तर आग्नेय कील के समीप जाकर पूर्ववत् मण्डल बनाकर अग्नि का 'रं अग्ने इहागच्छागच्छ' से आवाहन करे। तब ध्यान करे। रं बीज से पूर्ववत् दीपदान तक के उपचारों से पूजा करे। उसी प्रकार मूंगपूर्ण पात्र को उनके आगे रखे। जल लेकर 'रं रां रुं रूं रीं रिं भो भो अग्ने तेजो नायक मे शीघ्रं प्रसन्नो भव सिद्धिं देहि इमं मुद्गबलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्' मन्त्र से पूर्ववत् बलि प्रदान करके प्रणाम करे।

तदनन्तर दक्षिण कील के समीप जाकर पूर्ववत् 'टं' बीज से यम का आवाहन करते हुये महिष पर सवार, हाथ में दण्ड लिये कृष्ण वर्ण, प्रेतों से घिरे यम का ध्यान करे। उनके आगे पूर्ववत् मसूरपात्र रखकर जल लेकर 'ॐ प्रां प्रीं प्रूं प्रां

प्री भो भो यम प्रेताधिप मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्' से पूर्ववत् बलि प्रदान कर प्रणाम करे।

तत्पश्चात् नैर्ऋत्य कील के निकट जाकर पूर्ववत् 'क्षं' बीज से निर्ऋति का आवाहन करके प्रेत पर सवार, हाथों में खड्ग लिये राक्षसों से घिरे निर्ऋति का ध्यान करे। पूर्ववत् क्षं बीज से उनकी पूजा करे। उनके आगे पूर्ववत् चनापूर्ण पात्र रखकर हाथ में जल लेकर 'ॐ फ्रें फ्रें फ्रे हूं हूं खे खें ह्रों ह्रों ह्रौं ह्रौं भो भो रक्षोनाथ मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्' से बलि प्रदान कर प्रणाम करे।

तदनन्तर पश्चिम कील के पास जाकर 'वं' वरुणबीज से वरुण का आवाहन करते हुये मकरारुढ़, श्वेत वर्ण, पाशधारी, जलचरों से स्तूयमान वरुण का ध्यान करे। 'वं' बीज से उनकी पूजा करे। उनके आगे भातपूर्ण पात्र को रखे। जल लेकर 'वां वीं वूं वूं भो भो वरुण जलनाथ मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्' से बलि प्रदान कर उन्हें प्रणाम करे।

तदनन्तर वायव्य कील के पास जाकर वहाँ पूर्ववत् मण्डल बनाकर उसमें यं बीज से वायु का आवाहन तदनन्तर ध्यान करके यं बीज से उनकी पूजा करे। उनके आगे पायसपूर्ण बलिपात्र रखकर पूर्ववत् जल लेकर 'प्रां प्रीं प्रूं प्रूं प्रैं प्रैं प्रौं प्रौं भो भो वायो भुवःपते मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट् मन्त्र से बलि समर्पित कर उन्हें प्रणाम करे।

उत्तर कील के पास जाकर 'कुं' बीज से कुबेर का आवाहन करते हुये नरारूढ़, हाथ में गदा लिये, शुक्ल वर्ण, यक्षों से घिरे कुबेर का ध्यान करे। कुं बीज से पूजा करे एवं उनके आगे पूआ से भरा पात्र रखे। हाथ में जल लेकर 'ॐ क्रीं क्रूं क्रूं क्रां क्रों भो भो यक्षनाथ मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट् से बलि समर्पित कर उन्हें प्रणाम करे।

ईशान कील के निकट जाकर हं बीज से ईशान का आवाहन करके वृषारूढ़, स्वच्छ वर्ण, हाथ में शूल धारण किये, विद्यागणों से वेष्टित ईशान देव का ध्यान करे। हं बीज से पूर्ववत् आसनादि से दीप तक पूजा करे। उनके आगे पूड़ी से भरे पात्र रखकर हाथ में जल लेकर 'ॐ श्रां श्रूं श्रूं श्रीं श्रीं श्रां श्रां भो भो ईशान विद्याधिपते मे शीघ्रं प्रसन्नो भव इमं शष्कुली पूरितं बलिं गृह्ण गृह्ण हुं फट्' मन्त्र से बलि समर्पित कर उन्हें प्रणाम करे।

मध्य कील के निकट जाकर पुष्पाक्षत लेकर 'ॐ ह्रां ह्री ह्रूं हः स्तम्भाय नमः' से स्तम्भ की पूजा करे। निर्भय होकर ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं हः क्षां क्षीं क्षूं क्षः खां खीं खूं खः घ्रां घ्रीं घ्रूं घ्रः म्रां म्रीं म्रूं म्रः प्रों प्रों प्रों प्रों ह्रौं ह्रौं ह्रौ ह्रौं क्लों क्लो क्लों क्लो गों ग्रों ग्रों ग्रो ग्रों ग्रों हुं हुं हुं हुं हुं हुं हु फट् सर्वतो रक्ष रक्ष रक्ष रक्ष रक्ष भैरव नाथ नाथ फट्' से अपनी रक्षा करके स्तम्भ के निकट अपने पूजित आसन पर पूर्वाभिमुख बैठकर अपने आगे समतल भूमि पर अष्टदल पद्म बनावे। उसके बाहर षोडश दल बनावे। उसके बाहर फिर अष्टदल बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन चतुरस्र बनावे।

मण्डल के मध्य में देव का आवाहन करे। पूर्ववत् सभी उपचारों से पूजा करके अंगपूजन करे। अष्टदल में पूर्ववत् 'असिताङ्गादिभैरवनाथ फट्' से आठो भैरवों की पूजा करे। उसके बाहर षोडश दल में इन मन्त्रों से पूजा करे— ॐ कुलीशाय नमः, सुकुलीशाय नमः, जामित्राय नमः, रामठाय नमः, निभाय नमः, प्रचण्डाय नमः, चण्डकेशाय नमः, चण्डात्मने नमः, चाम-राय नमः चारित्राय नमः, चमत्काराय नमः, चंचलाय नमः, चारुभूषणाय नमः, चामीकराय नमः, चारुवहाय नमः, कितवाय नमः।

उसके बाहर अष्टदल में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। उसके बाहर चतुरस्र मे पूर्ववत् लोकेशों और उनके आयुधों की पूजा करे। धूप-दीप देकर पद्म मध्य में 'श्रीभैरवाय नमः' से पूजा करे। दूसरे दलों में पूजित देवताओं को अलग-अलग पात्रो में पायस का नैवेद्य समर्पित करे। हाथों में अक्षत लेकर पूजामण्डल पर बिखेरे। 'ॐ चं चण्ड आयाहि आयाहि' कहकर चण्ड का आवाहन करे। इसी प्रकार प्रचण्ड, ऊर्ध्वकेश, भीषण, अभीषण, व्योमकेश, व्योमवह व्योमव्यापक का भी तनत् मन्त्रों से आवाहन करके पृथक्-पृथक् गन्धादि उपचारों से पूजा करे। पायस का नैवेद्य अलग-अलग समर्पित करे। निर्भय होकर पश्चिमाभिमुख बैठे। प्राणायाम करके ऋष्यादिन्यासपूर्वक पूर्वोक्त सभी न्यासों को करे। पूर्ववत् माला की पूजा करके हाथ में लेकर मूल मन्त्र के स्पष्ट पद उच्चारणपूर्वक उच्च-स्वर से जप करे। बाँयें हाथ में पायस पात्र लेकर देव को भोजन कराये। प्रसन्नता पूर्वक जप करे। इससे तृप्त होकर यदि देव कहे कि 'वर माँगो' तब भूमि पर दण्डवत् लेटकर उन्हें प्रणाम करे; तदनन्तर और अपना अभीष्ट वर ग्रहण करे अपने घर जाकर महोत्सव करे। इस मन्त्र के सिद्ध होने पर संसार में कुछ भी असाध्य

नहीं रहता। इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर साधक नित्य नैमित्तिक कर्म करे। गणेश एवं दुर्गा को विधिवत् बलि प्रदान कर काम्य कर्म का साधन करे तो सिद्धि मिलती है।

काम्यसाधनम्

अन्नं शालिसमुद्भूतं मांसं पक्वं सशर्करम् ।।७२।।

लाजाचूर्णगुडापूपमाक्षिकेक्षुरसान्वितम् । घृतप्लुतं सर्वमेव एकीकृत्य महेश्वरि ।।७३।।
कृत्वा ग्रासं समाराध्य वटुकेशं महेश्वरि । प्रागुक्तेन विधानेन रक्तचन्दनसंयुतैः ।।७४।।
रक्तपुष्पाक्षतैर्देवि धूपैर्दीपैर्मनोहरैः । तस्याग्रे मण्डलं कृत्वा चतुरस्रं सुरेश्वरि ।।७५।।
त्रिकोणगर्भितं तत्र पात्रे हेममये शुभे । राजते वाथ कांस्ये वा निधाय कवलं शुभम् ।।७६।।
अर्चयित्वाथ तत्पिण्डं गन्धाद्यैर्मूलमन्त्रितैः। बलिद्रव्याय इत्युक्त्वा नम इत्यर्चयेच्च तत् ।।७७।।
ततो जलं समादाय चुलुकेन महेश्वरि । मूलमन्त्रं समुच्चार्य संबोध्य वटुकं प्रिये ।।७८।।
इमं बलिं गृह्णयुग्मं स्वाहान्तं समुदीर्य च । जलं समर्पयेत् तत्र चिन्तयेद्वटुकं प्रिये ।।७९।।
स्वहस्ते बलिमादाय भुञ्जानं वरदं प्रभुम् । राजसोऽयं बलिर्देवि कथितः सर्वसिद्धिदः ।।८०।।
सात्त्विको राजसश्चेति बलिः स्याद्द्विविधः प्रिये । राजसः कथितो देवि सात्त्विकं शृणु वल्लभे ।।८१।।
पूर्वोक्तैः सकलैर्द्रव्यैर्मांसहीनैर्महेश्वरि । मुद्गसूपसमायुक्तैः पायसेन समन्वितैः ।।८२।।
मधुरत्रयसंयुक्तैः प्राग्वद् दद्याद्विचक्षणः । ब्राह्मणो नियतः शुद्धः सात्त्विकं बलिमाहरेत् ।।८३।।

शालि चावल का भात-पका हुआ मांस, शक्कर, लावाचूर्ण, गुड़, पूआ, मधु, ईखरस में घी मिलाकर ग्रासपिण्ड बनाकर वटुकेश का आराधन करे। पूर्वोक्त विधान से लाल चन्दनयुक्त लाल फूल अक्षत धूप दीप से पूजा करे। देव के आगे चतुरस्र में त्रिकोण बनाकर उस मण्डल में सोना-चाँदी या काँसे का पात्र रखे। उसमें उपरोक्त ग्रासपिण्डों को रखे। मूल मन्त्र से गन्धादि से पूजा करे। 'बलिद्रव्याय नमः' से पूजा करे। तब चुल्लू में जल लेकर मूल मन्त्र बोलकर 'वटुक इमं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' कहकर जल समर्पित करे तब चिन्तन करे कि वटुक बलि को ग्रहण कर रहे हैं। इस राजस बलि को सर्वसिद्धिप्रद कहा गया है। सात्त्विक और राजसिक के रूप में बलि दो प्रकार की होती है। सात्त्विक बलि में मांस को छोड़कर पूर्वोक्त सभी द्रव्यों के साथ मूंज सूप के साथ पायस को मधुरत्रय से संयुक्त करके पूर्ववत् बलि प्रदान करे। यह बलि नियत शुद्ध सात्त्विक ब्राह्मण प्रदान करे।

राजसतामसध्यानवर्णनम्

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातं प्रागेव तव सुव्रते । इदानीं राजसं ध्यानं शृणु वक्ष्ये महेश्वरि ।।८४।।
उद्यत्सूर्यसहस्राभं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम् । रक्ताङ्गरागमारक्तमाल्याम्बरविभूषितम् ।।८५।।
स्मेराननं नीलकण्ठं नानाभरणभूषितम् । दक्षिणोर्ध्वकरे शूलं तदधो वरमद्रिजे ।।८६।।
वामोर्ध्वहस्ते देवेशि कपालं तदधोऽभयम् । दधानं संस्मरेद् देवं स्मर्तॄणामभयप्रदम् ।।८७।।
काम्यकर्मसु देवेशि ध्यायेदेवं प्रभुं सदा । इति।

रुद्रयामले तु—'दक्षे त्रिशूलमभयं कपालं वामके वरम्' इत्युक्तम्। यथारुचि ध्येयः।

क्रूरकर्मसु देवेशि तामसं ध्यानमुच्यते । अञ्जनाचलसङ्काशं मुण्डमालाविभूषितम् ।।८८।।
चन्द्रखण्डलसत्पिङ्गकेशभारं दिगम्बरम् । त्रिनेत्रं दक्षिणैर्हस्तैर्डमरुं च सृणिं तथा ।।८९।।
खड्गशूले च देवेशि दधानमपरैः करैः । अभयं नागपाशं च घण्टां च नृकपालकम् ।।९०।।
ऊर्ध्वादिक्रमतो देवि भीमदंष्ट्रं भयानकम् । सर्वाभरणसंदीप्तं मणिनूपुरमण्डितम् ।।९१।।
किङ्किणीजालसहितं ध्यायेद् वटुकभैरवम् । इति।

रुद्रयामले तु—'दक्षिणे चाभयं वामे वरं' इति तामसे विशेष:। अन्यत् तुल्यम्।

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युनिवारणम्। आयुरारोग्यजननमपवर्गफलप्रदम् ॥९२॥
राजसं धर्मकामार्थसिद्धिदं तामसं प्रिये। शत्रुक्षयकरं भूतकृत्यापस्माररोगनुत् ॥९३॥
एवं ध्यानं समाख्यातं साधकाभीष्टसिद्धिदम्।

सात्त्विक ध्यान पूर्व में कह दिया गया है। काम्य कर्मों में राजस ध्यान करना चाहिये; जो इस प्रकार है—

उद्यत्सूर्यसहस्राभं त्रिनेत्रं चन्द्रशेखरम्। रक्ताङ्गरागमारक्तमाल्याम्बरविभूषितम्।।
स्मेराननं नीलकण्ठं नानाभरणभूषितम्। दक्षिणोर्ध्वकरे शूलं तदधो वरमद्रिजे।।
वामोर्ध्वहस्ते देवेशि कपालं तदधोऽभयम्। दधानं संस्मरेद् देवं स्मर्तॄणामभयप्रदम्।।

क्रूर कर्मों में तामस ध्यान करना चाहिये, जो इस प्रकार है—

अञ्जनाचलसङ्काशं मुण्डमालाविभूषितम्। चन्द्रखण्डलसत्पिङ्गकेशभारं दिगम्बरम्।।
त्रिनेत्रं दक्षिणैर्हस्तैर्डमरुं च सृणिं तथा। खड्गशूले च देवेशि दधानमपरैः करैः।।
अभयं नागपाशं च घण्टां च नृकपालकम्। ऊर्ध्वादिक्रमतो देवि भीमदंष्ट्रं भयानकम्।।
सर्वाभरणसंदीप्तं मणिनूपुरमण्डितम्। किङ्किणीजालसहितं ध्यायेद् वटुकभैरवम्।।

सात्त्विक ध्यान को अपमृत्यु-निवारक एवं आयु-आरोग्य-सन्तति-अपवर्गप्रदायक कहा गया है। राजस ध्यान से धर्म, काम, अर्थ प्राप्त होते हैं। तामस ध्यान से शत्रुओं का क्षय होने के साथ-साथ भूत-कृत्या-अपस्मार का विनाश होता है। इस प्रकार इन त्रिविध ध्यानों को साधकों का अभीष्ट देने वाला कहा गया है।

काम्यप्रयोगान्तरसाधनम्

काम्यकर्मारम्भदिने तत्समाप्तिदिने तत: ॥९४॥
बलिर्देयो महादेवि तत्तत्कर्मफलाप्तये। जितेन्द्रिय: प्रजुहुयादाज्येनेष्टफलं भवेत् ॥९५॥
इक्षुखण्डैर्हुनेद् देवि वशयेदखिलं जगत्। कैरवैः कुमुदैर्होमात् पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥९६॥
तिलाज्यतण्डुलैर्हुत्वा धनं धान्यं लभेद् बहु। पुष्पैः श्रीतरुसंभूतैर्हुत्वा प्राप्नोति तां श्रियम् ॥९७॥
त्रिस्वादुयुक्तलवणैर्होम: स्त्रीजनवश्यकृत्। होमो वेतससंभूतसमिद्भिर्वृष्टिदायक: ॥९८॥
अन्नहोमाद् धान्यधनसंपत्तिर्जायतेऽचिरात्। दिनत्रयं च मधुना होमात् संवशयेज्जगत् ॥९९॥
रोगोक्तौषधहोमेन रोगा नश्यन्ति तत्क्षणात्। कृत्यापस्मारभूतादिभवे व्याघ्राजिने शिवे ॥१००॥
उपविश्य तिलैर्देवि जुहुयादयुतं शुचि:। कृत्यादय: पलायन्ते नेक्षन्ते तां दिशं भयात् ॥१०१॥
कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत् स्यात्तच्चतुर्दशी। तिलैस्तण्डुलसंमिश्रैर्मधुरत्रयलोलितै: ॥१०२॥
त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जुहुयात् संस्कृतेऽनले। वटुकेश्वरमभ्यर्च्य भक्ष्यभोज्यफलान्वितम् ॥१०३॥
नित्यं निवेद्य नैवेद्यं मध्यरात्रे बलिं हरेत्। त्रिसहस्रं प्रतिदिनं जपित्वा प्रयतो वशी ॥१०४॥
समाप्तिदिवसे रात्रावजं हत्वा बलिं हरेत्। तत: कारयिता राजा तोषयेत् साधकं धनै: ॥१०५॥
प्रयोगदिवसे नित्यं भक्ष्यभोज्यै: सदक्षिणै:। विप्रान् सप्त महादेवि तोषयेद् वाञ्छिताप्तये ॥१०६॥
समाप्तिदिवसे विंशत्सप्त[illegible]प्त समाहित:। भोजयेद् वस्त्रवित्ताद्यैस्तोषयेज्जगदीश्वरि ॥१०७॥
विधिनानेन सन्तुष्टो वटुकेश: प्रयच्छति। तेजो बलं यश: पुत्रान् कीर्तिं लक्ष्मीमरोगताम् ॥१०८॥
नश्यन्ति शत्रवस्तस्य वर्धन्ते मित्रबान्धवा:। अवग्रहो न जायेत राष्ट्रे तस्य महीपते: ॥१०९॥
केवलैर्लवणैर्हुत्वा स्तम्भनं कुरुते ध्रुवम्। (अनेनैव प्रयोगेन निगडान्मुच्यते नर: ॥११०॥
पलं वचाया देवेशि चूर्णं कृत्वातिसूक्ष्मकम्। मन्त्रयेन्मनुनानेन देवि साग्रं सहस्रकम् ॥१११॥)

विभजेदूनपञ्चाशद्भागेन परमेश्वरि। दिनशो भागमेकैकं भक्षयेद् गोघृतान्वितम् ॥११२॥
अन्तर्वत्नी सुतं सूते मेधारोग्यबलान्वितम्। दीर्घायुष्यं च वन्ध्यापि किं पुनः कन्यकाप्रसूः ॥११३॥
प्रयोगस्य तथाद्यन्ते वटुकाय बलिं हरेत्। इति।

रुद्रयामले तु—

वन्ध्याचिकित्सां कुर्वाणो बालार्काभं समर्चयेत्। हरिद्रार्धपलं चैकं वचाचूर्णं तु तत्समम् ॥१॥
पेषयित्वा तु गोमूत्रे गोलकं घृतसंयुतम्। पद्मपत्रे विनि:क्षिप्य स्थापयेद् देवसन्निधौ ॥२॥
प्रणिपत्य नमस्कृत्य जपेदुच्चैः सहस्रकम्। देवादेशप्रकारेण प्राशयेत्तु महौषधम् ॥३॥
श्रीमन्तमायुष्मन्तं च बलवन्तं सुदर्शनम्। विद्यावन्तं पुत्रवन्तं सद्यः पुत्रमवाप्नुयात् ॥४॥
इत्युक्तम्।

काम्य कर्म के प्रारम्भ दिवस और उसकी समाप्ति के दिन कर्मफल की प्राप्ति के लिये बलि देनी चाहिये। जितेन्द्रिय होकर गोघृत से हवन करने पर इष्ट फल प्राप्त होता है। ईखखण्डों के हवन से सारा संसार वश में होता है। कुमुद एवं कैरव के हवन से पुत्रलाभ होता है। बेल के फूलों से हवन करने पर श्री की प्राप्ति होती हैं। तिल, चावल, गोघृत के हवन से धन-धान्य का लाभ होता है। मधुरत्रययुक्त नमक से हवन करने पर स्त्रियाँ वश में होती हैं। वेंत की समिधाओं से हवन करने पर वर्षा होती है। अन्न के हवन से अल्प काल में ही धन-धान्य का लाभ होता है। तीन दिनों तक मधु से हवन करने पर सम्पूर्ण संसार वश मे होता है। रोग में कथित औषध के हवन से रोगो का नाश होता है। कृत्या अपस्मार भूतादि की पीड़ा होने पर बाघम्बर पर बैठकर दश हजार हवन तिल से करे। इससे कृत्यादि भाग जाते हैं और उसकी ओर देखते भी नहीं कृष्णाष्टमी से चतुर्दशी तक मधुरत्रय से लोलित तिल-चावल से प्रतिदिन तीन हजार हवन संस्कृत अग्नि में करके वटुकेश्वर की पूजा करके भक्ष्य-भोज्य-फल निवेदित कर आधी रात में बलि प्रदान करे, प्रतिदिन तीन हजार जप करे और समाप्ति के दिन रात मे बकरे को मारकर बलि प्रदान करे। तदनन्तर कर्ता राजा साधक को धन देकर सन्तुष्ट करे। वांछितार्थ-प्राप्ति के लिये प्रयोग काल में प्रतिदिन सात ब्राह्मणों को भक्ष्य-भोज्य खिलाकर दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करे। अनुष्ठान-समाप्ति के दिन ७२० ब्राह्मणों को भोजन कराकर धन-वस्त्र देकर सन्तुष्ट करे। इस विधान से वटुकेश प्रसन्न होकर तेज, बल, यश, पुत्र, कीर्ति, लक्ष्मी एवं आरोग्य प्रदान करते हैं। राजा के शत्रुओं का नाश करते हैं एवं मित्रों को बढ़ाते हैं उस राजा के राज्य में कोई उपद्रव नहीं होता। केवल नमक से हवन करने पर स्तम्भन होता है। इसी प्रयोग से निगडबन्धन से मुक्ति मिलती है। पचास ग्राम वच का महीन चूर्ण बनाकर उसे एक हजार जप से अभिमन्त्रित करके उसका उनचास भाग करे। एक-एक भाग प्रतिदिन गोघृत मिलाकर उनचास दिनों तक खाय तो उसे मेधा, आरोग्य, बल से युक्त दीर्घायु पुत्र वन्ध्या स्त्री को भी होता है तो केवल कन्या जन्म देने वाली के बारे में क्या कहा जाय। इस प्रयोग के अन्त में वटुक को बलि प्रदान करनी चाहिये।

रुद्रयामल में कहा गया है कि वन्ध्या की चिकित्सा में बाला वटुक की पूजा करे। २५ ग्राम वच, २५ ग्राम हल्दी चूर्ण को गोमूत्र में पीसकर घी मिलाकर गोलक बनाकर पद्मपत्र पर रखकर देव के निकट रखे। देव को प्रणाम करके उच्च स्वर में एक हजार जप करे। देव के आदेशानुसार इस महौषध को खिलावे तो वन्ध्या को श्रीमान्, आयुष्मान, बलवान्, सुन्दर, विद्वान् एवं पुत्रवान् पुत्र प्राप्त होता है।

तथा कौलेशकोटिप्रभेदे—

साधयेद्विधिवद्भस्म मन्त्रेणानेन सुव्रते। उशीरं चन्दनं देवि कुष्ठं कर्पूरकुङ्कुमे ॥१॥
सितार्कमूलं वाराहीं श्रीलतां परमेश्वरि। त्वचश्च क्षीरवृक्षाणां बिल्वमूलं च शोषयेत् ॥२॥
सूक्ष्मचूर्णमिदं कृत्वा गोमयेन तु मेलयेत्। अन्तरिक्षे गृहीतेन कृत्वा पिण्डानि पार्वति ॥३॥
शोषयित्वातपेनाथ विधिवत् संस्कृतेऽनले। मूलमन्त्रेण दग्ध्वाथ भस्म संगृह्य तत्पुनः ॥४॥
शुद्धपात्रे विनि:क्षिप्य शोधयित्वा यथाविधि। मालतीकेतकीपुष्पैर्वासितं संस्पृशञ्छिवे ॥५॥
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं तत्र संपूज्य भैरवम्। भस्माधारे विनि:क्षिप्य संस्थाप्य दिनशः शिवे ॥६॥

त्रिपुण्ड्रं तेन कुर्वीत वेदोक्तविधिना द्विजः। शूद्राद्यैर्मूलमन्त्रेण कर्तव्यं परमेश्वरि ॥७॥
मूलेन साधकैः सर्वैः कर्तव्यं भस्मधारणम्। य एवं कुरुते नित्यं विधिवद्भस्मधारणम् ॥८॥
तस्य रोगाः प्रणश्यन्ति कृत्याद्रोहमहाग्रहाः। रिपुचौरमृगादिभ्यो भयं तस्य न जायते ॥९॥
वर्द्धन्ते संपदः सर्वाः पूज्यते सकलैर्जनैः। राजानो वशमायान्ति सामात्याः सपरिच्छदाः ॥१०॥
वचाचूर्णं पलार्धं च तन्मानघृतसंयुतम्। पद्मपत्रे विनिःक्षिप्य त्रिशतं प्रजपेद्बुधः ॥११॥
प्राशयेन्नियतो भूत्वा पुनर्लक्षत्रयं जपेत्। तस्यैवं कुर्वतः प्रज्ञा निःसीमा भवति ध्रुवम् ॥१२॥
गद्यपद्यमयी वाणी श्रुतस्याप्यवधारणम्। भवेत्तस्य महादेवि भैरवस्य प्रसादतः ॥१३॥

अत्र वचाचूर्णभक्षणं तु यावद्भिर्दिनैस्त्रिलक्षजपो भवति तावतो भागान् कृत्वा प्रत्यहमेकमेकं भागं प्राशयेदिति सांप्रदायिकाः। अस्मिन् प्रयोगे विशेषमाह रुद्रयामले—

शुक्लपक्षे द्वितीयायां शुक्रवारे समाहितः। पूर्ववत् पूजयेद् देवं सिद्धान्नं च निवेदयेत् ॥१॥

सिद्धान्नं सिद्धौदनः। तत्तु हरिद्रागणेशप्रकरणे वक्ष्यते।

पलार्धं च वचाचूर्णं तन्मानघृतसंयुतम्। पद्मपत्रे विनिःक्षिप्य त्रिसहस्रं जपेद्बुधः ॥२॥

त्रिसहस्रजपो विशेषः। अन्यत् सर्वं समानम्। रुद्रयामले तु—

**विवादक्षेत्रविषये चतुर्थ्यङ्गारवारके। पूर्ववद् देवमाराध्य नैवेद्यं चैव पूर्ववत् ॥१॥
जपमानः स्वयं मन्त्रं नमस्कृत्य च बुद्धिमान्। विवादक्षेत्रमध्ये तु देवं ध्यात्वा च तत्क्षणात् ॥२॥
अभिमन्त्र्य मृदं प्राश्य सन्ध्योपास्य स्वयं प्रभुम्। सप्ताहे त्रिषु कालेषु तत्क्षेत्रं चैव सिद्ध्यति ॥३॥**

कौलेशकोटिप्रभेद में कहा गया है कि इस मन्त्र से भस्म को विधिवत् अभिमन्त्रित करे। उशीर, चन्दन, कूट, कपूर, कुङ्कुम, श्वेतार्क मूल, वाराही, श्रीलता, क्षीरवृक्ष का छाल, बेल की जड़ को सुखाकर महीन चूर्ण बनावे। गाय के गोबर को भूमि पर गिरने से पहले हाथ मे थामकर उसमें इस चूर्ण को मिलाकर पिण्ड बना ले। इसे सुखाकर विधिवत् संस्कृत अग्नि में मूल मन्त्र से जलावे। ठंढ़ा होने पर इस भस्म को ग्रहण करके शुद्ध पात्र में रखे। यथाविधि शोधन करके मालती-केतकी के फूलों के साथ रखकर इसे सुवासित करे। उसको स्पर्श करके दश हजार मन्त्र जप से उसे मन्त्रित करके वहीं पर भैरव की पूजा करे। तदनन्तर भस्म को किसी पात्र में रख ले। प्रतिदिन वेदोक्त विधि से उस त्रिपुण्ड्र लगावे। शूद्र मूल मन्त्र से त्रिपुण्ड्र लगावे। मूल मन्त्र से सभी को भस्म धारण करना चाहिये। जो नित्य इस प्रकार भस्म धारण करता है, उसके रोगों का नाश होता है। उसे कृत्याद्रोह, महाग्रह, शत्रु, चोर, मृगादि का भय नहीं होता। उसकी सम्पदा बढ़ती है। सभी लोग उसका आदर करते हैं। अमात्यो परिषदों के साथ राजा वश में होते हैं। पच्चीस ग्राम वचचूर्ण को पच्चीस ग्राम घी में मिलाकर कमल के पत्ते पर रखकर तीन सौ मन्त्र जप करे। सावधान होकर उसे खा जाय। इसके बाद तीन लाख मन्त्र जप करे। ऐसा करने से उसकी बुद्धि असीम हो जाती है। भैरव की कृपा से उसके मुख से गद्य-पद्यमयी वाणी निकलने लगती है और वह जो भी सुनता है, उसे याद हो जाता है।

रुद्रयामल में कहा गया है कि इस प्रयोग में शुक्ल पक्ष द्वितीया शुक्रवार को समाहित चित्त होकर पूर्ववत् देव की पूजा करे और भात का नैवेद्य अर्पण करे। तदनन्तर २५ ग्राम वचा चूर्ण में २५ ग्राम घी मिलाकर कमल के पत्ते में लपेटकर तीन हजार मन्त्र-जप करे। तदनन्तर शेष विधि पूर्ववत् सम्पन्न करे।

रुद्रयामल में ही कहा गया है कि क्षेत्रसम्बन्धी विवाद में चतुर्थी तिथि मंगलवार को पूर्ववत् देव की पूजा करके पूर्ववत् ही नैवेद्य अर्पण करे। तदनन्तर विवादित क्षेत्र के मध्य में स्थित देवेश का ध्यान करके प्रणाम करे और मन्त्र-जप करके उस खेत की मिट्टी को मन्त्रित करके थोड़ा खाकर सन्ध्योपासना करे। ऐसा एक सप्ताह तक तीनों सन्ध्याओं में करे तो वह क्षेत्र साधक को मिल जाता है।

मृत्युञ्जयजपविधिः

मृत्युञ्जयविधिं वक्ष्ये यथावच्छृणु सुन्दरि। उत्तरायणकालेषु दक्षिणायनमेव च ॥४॥
कालज्ञानमिदं ज्ञात्वा तत्त्वज्ञानी जपेत्क्रमात्। कृष्णाष्टम्यां चतुर्थ्यां चाप्यङ्गारकदिने ततः ॥५॥
सात्त्विकं बालरूपं च द्विभुजं चिन्तयन् बुधः। अर्जयित्वा यथान्यायं सिद्धान्नं च निवेदयेत् ॥६॥
यद्रूपं कथितं पूर्वमादिमार्चनमध्यगम्। तुषारकणिकाभासं ध्यात्वा देवं समाहितः॥७॥
भूचरीमुद्रया युक्तं खेचरीबहुमेलकम्। ध्यानयोगेन मन्त्रं च मनसापि जपेद्बुधः ॥८॥
इत्येवं च जपेल्लक्षं तदा मृत्युञ्जयो भवेत्। मृत्युभङ्गाभिकाङ्क्षी चेत्सात्त्विकं श्वेतरूपकम् ॥९॥
हृदये स्वासनं ध्यात्वा तन्मध्ये देवमासितम्। न तस्य कालनिष्क्रान्तिर्मूर्तिमण्डलमाप्नुयात् ॥१०॥
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां भूमिपुत्रस्य वासरे। अभ्यर्च्य विधिवद् देवं तस्याग्रे स्थापयेद्बुधः ॥११॥
रोचनां हेमजे पात्रे संपूज्य विधिनाथ ताम्। गन्धपुष्पादिना स्पृष्ट्वा तां जपेदयुतत्रयम् ॥१२॥
तद्गर्भवर्तिं प्रज्वाल्य कपिलाघृतसेचिताम्। सौवर्णे नृकपाले वा पात्रे संगृह्य चाञ्जनम् ॥१३॥
संपूज्य च पुनर्जप्त्वा तत्पात्रं मन्त्रसंग्रहम्। ध्यात्वा देवं दृशोरेतदाचरेदञ्जनं बुधः ॥१४॥
वश्या भवन्ति ते सर्वे यान्यान् पश्यति साधकः।

मृत्युञ्जय जप विधि—हे सुन्दरि! सुनो, अब मैं मृत्युञ्जय जप की विधि कहता हूँ। उत्तरायण और दक्षिणायन काल को जान करके तदनुसार तत्त्वज्ञानी साधक को क्रमशः जप करना चाहिये कृष्णाष्टमी या चतुर्थी मंगलवार में सात्त्विक बालरूप द्विभुज वटुक का ध्यान करे। विधिपूर्वक अर्चन करके सिद्धान्न निवेदन करे। पूर्व में अर्चन के आदि एवं मध्य में देव के जिस रूप का ध्यान करना कहा गया है उस हिमकणों की आभा वाले रूप का ध्यान करे। भूचरी मुद्रायुक्त खेचरीमेलन ध्यानयोग से मन्त्र का मानसिक जप एक लाख करे तो वह मृत्युञ्जयी हो जाता है। मृत्यु को भंग करने की इच्छा से श्वेत सात्त्विक रूप देवता का ध्यान कर अपने हृदय में आसनासीन करे तो चालीस दिनों में वह मृत्यु को जीत लेता है। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि मंगलवार को देव का विधिवत् अर्चन करके उसी के आगे सोने के पात्र में गोरोचन रखकर उसमें गन्ध-पुष्पादि से पूजा करे। उसे स्पर्श करके तीस हजार मन्त्र जप करे उसकी बत्ती बनाकर कपिला गाय के घी से दीपक जलाकर सोने के पात्र में या नरकपाल में अंजन पार कर एकत्रित करे। पुनः पूजा करके उस पात्र को स्पर्श करके जप करे। देव का ध्यान करके उस अंजन को आँखों में लगावे तो साधक जिसे देखता है, वही उसके वश में हो जाता है।

अभिषेकविधानम्

अथाभिषेकं कुर्वीत राज्ञो विजयकाङ्क्षिणः ॥१५॥

पूर्वोक्तमण्डपे देवि वितानध्वजशोभिते। सर्वतोभद्रमालिख्य वेदिकायां सुरेश्वरि ॥१६॥
अष्टद्रोणमितैस्तस्य कर्णिकां शालिभिः शुभैः। आपूर्य तण्डुलैश्चापि चतुर्द्रोणमितैः प्रिये ॥१७॥
शालीनामुपरि न्यस्य कूर्चाक्षतसमन्वितम्। कुम्भं हेमादिरचितं नवरत्नसमन्वितम् ॥१८॥
संस्थाप्य विधिवद्देवि शुद्धैस्तोयैश्च पूरयेत्। तस्मिन् क्षीरद्रुमोत्थानि पल्ल्वानि विनिःक्षिपेत् ॥१९॥
कर्पूरं चन्दनं देवि कक्कोलमगरुं पुनः। उशीरं कुङ्कुमं बिल्वं दूर्वां लक्ष्मीं सहामपि ॥२०॥
चंपकं मल्लिकां जातिमुत्पलं दाडिमं तथा। गोमेदं च विनिःक्षिप्य पट्टवस्त्रद्वयेन च ॥२१॥
संवेष्ट्य तस्मिन्नावाह्य वटुकं देवि पूजयेत्। राजसं ध्यानरूपं तं ध्यात्वा सर्वोपचारकैः ॥२२॥
प्रथमाष्टदलस्थेषु कुम्भेष्वष्टसु पार्वति। भैरवानसिताङ्गादीन् संपूज्य तदनन्तरम् ॥२३॥
त्रयोदशसु कुम्भेषु बाह्यस्थेषु महेश्वरि। त्रयोदश गणान् पश्चात्तद्बाह्ये दशसु क्रमात् ॥२४॥
लोकेशवटुकान् देवि कुम्भेषु परिपूजयेत्। चतुरस्रत्रयस्थेषु द्व्यष्टद्व्यष्टसु पार्वति ॥२५॥
कुम्भेषु देवि प्रागुक्तान् श्रीकण्ठादीन् यजेत्क्रमात्। प्रागुक्तक्रमयोगेन गन्धाद्यैः सुमनोहरैः ॥२६॥

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं घटान् स्पृष्ट्वा सुरेश्वरि । पृथक् सहस्रं जुहुयात् पायसैः सर्पिषा तिलैः ॥२७॥
स्पृशन् कुम्भान् प्रतिदिनं रात्रौ तस्मै बलिं हरेत् । राजसोक्तविधानेन मांसत्रयसमन्वितम् ॥२८॥
मेषकुक्कुटमीनानां मांसत्रयमुदाहृतम् । सुदिने शुभलग्ने च स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥२९॥
वेदवेदाङ्गविद्भिश्च विप्रैर्मङ्गलवादिभिः । नदत्सु पञ्चवाद्येषु नमस्कृत्य च भैरवम् ॥३०॥
भूपालं चाथवा विप्रं शुद्धदेहं जितेन्द्रियम् । आस्तिकं सत्यसन्धं च अभिषिञ्चेत् प्रसन्नधीः ॥३१॥
अभिषेक्तारमसकृद् भूयसीं दक्षिणां प्रिये । दद्यात् प्रसीदति यथा साधकस्तावदर्पयेत् ॥३२॥
अभिषिक्तो नरपतिः शतक्रतुरिवापरः । शत्रूञ्जयति सङ्ग्रामे बलाढ्यान् स्तूयते जनैः ॥३३॥
अभिषिक्तस्तु देवेशि प्रतिमासं महीश्वरः । षण्मासावधि शास्त्येव चतुःसागरमेखलाम् ॥३४॥
उर्वीं युद्धेषु महती शक्तिः स्यात् पूर्वतोऽधिका । शत्रुसैन्यविनाशाय राजा दद्याद्बलिं प्रिये ॥३५॥

विजय के इच्छुक राजा का इस प्रकार अभिषेक करे—वितान ध्वज शोभित पूर्वोक्त मण्डप में वेदी पर सर्वतोभद्र मण्डल बनावे। उसकी कर्णिका में चौंसठ किलो शालि चावल और बत्तीस किलो चावल भरे। उस पर स्वर्ण कुम्भ स्थापित करे। कुम्भ को कुश, अक्षत, नवरत्न डालकर विधिवत् शुद्ध जल से पूर्ण करे। उसमें क्षीरद्रुम के पल्लवों को रखे। उसमें कपूर, चन्दन, कक्कोल, अगर, खश, कुङ्कुम, बेलपत्र, दूब, द्रव्य, चम्पा, मल्लिका, जाति, उत्पल, अनार, गोमेद डालकर दो वस्त्र लपेटे। उसमें वटुक का आवाहन कर उनका राजस ध्यान से करके सभी उपचारों से उनकी पूजा करे। पहले अष्टदलों में स्थापित कुम्भों में असिताङ्गादि आठ भैरवों की पूजा करे। उसके बाहर तेरह कुम्भों में तेरह गणों की पूजा करे। उसके बाहर दश-दश कुम्भों में लोकेश वटुकों की पूजा करे। चतुरस्रत्रय में सोलह-सोलह श्रीकण्ठादि की पूजा गन्धादि उपचारों से करे। कुम्भों को स्पर्श करके दश हजार मन्त्र जप एवं एक हजार हवन पायस तथा गोघृत तिल से करे। प्रत्येक रात मे कुम्भों को स्पर्श करके भेड़-मुर्गा एवं मछली के मांस से युक्त बलि राजस विधान से प्रदान करे।

शुभ दिन शुभ लग्न में स्वतिवाचनपूर्वक वेद-वेदांगवित् विप्रों से मंगलवाचन कराते हुए पञ्च वाद्यों को बजवाते हुए भैरव को प्रणाम करे। तब शुद्ध देह जितेन्द्रिय आस्तिक सत्यवादी विप्र अथवा राजा का अभिषेक करे। अभिषेक करने वाले को भरपूर दक्षिणा प्रदान करे। जैसे वे प्रसन्न हों, वैसा ही उन्हें दान दे। इस प्रकार से अभिषक्त राजा दूसरे इन्द्र के समान युद्ध में शत्रुओं को जीतकर बलाढ्य होता है और जनप्रशंसा का भाजन होता है। अभिषिक्त राजा प्रत्येक माह में छः महीनों तक बलि प्रदान करे। इससे चारो समुद्र से घिरी भूमि का वह शासक होता है एवं शत्रुसेना के विनाश के लिये पहले से अधिक शक्तिशाली हो जाता है।

राजसबलिविधानम्

पूर्वोक्तं राजसं देवि बलिं निष्पाद्य मन्त्रवित् । संपूज्य पूर्ववद् देवं मध्यरात्रे महेश्वरि ॥३६॥
अन्यूनाङ्गमजं देवि सर्वलक्षणसंयुतम् । आनीय मूलमन्त्रेण स्नपयित्वा शुभैर्जलैः ॥३७॥
गन्धमाल्यैरलङ्कृत्य देवस्याग्रे निधाप्य तम् । मूलमन्त्रेण संप्रोक्ष्य संरक्ष्यास्त्रेण तं प्रिये ॥३८॥
कवचेनावगुण्ठ्याथ मुद्रया धेनुसंज्ञया । अमृतीकृत्य सर्वान्ते देवतारूपिणे बलि- ॥३९॥
रूपाय पशवे उक्त्वा नम इत्यर्चयेत् त्रिधा । गन्धाद्यैस्तं ततो देवि कर्णे तस्य तु दक्षिणे ॥४०॥
पशुपाशाय इत्युक्त्वा विद्महे तदनन्तरम् । विप्रकर्णाय देवेशि धीमहीति ततः परम् ॥४१॥
तन्नो जीवः समुच्चार्य वदेद्देवि प्रचोदयात् । इत्येतां पशुगायत्रीं त्रिर्जपित्वा महेश्वरि ॥४२॥
निधाय पुरतः खड्गं ॐह्रींकालीति च द्विधा । वज्रेश्वरि च लोहान्ते दण्डायै नम इत्यथ ॥४३॥
खड्गं त्रिः पूजयेद्देवि मुष्टौ तस्य ततोऽर्चयेत् । वागीश्वरीं च ब्रह्माणं लक्ष्मीनारायणौ ततः ॥४४॥
मध्येऽग्रदेशे देवेशि उमामहेश्वरौ यजेत् । इत्यर्चितं समादाय खड्गं हस्ते महेश्वरि ॥४५॥
ततस्तं मन्त्रयेन्मन्त्री मन्त्रेणानेन सुव्रते । खड्गायासुरनाशाय देवकार्यार्थतत्पर ॥४६॥

पशुश्छेद्यस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमोऽस्तु ते। तत उच्चार्य विधिवत् तिथ्युल्लेखावसानकम् ॥४७॥
गोत्रं नाम च सङ्कीर्त्य कामनां समुदीर्य च। श्रीभैरव इमं छागबलिं तुभ्यमहं वदेत् ॥४८॥
प्रददे तु समुच्चार्य कुशपुष्पाक्षतान्वितम्। जलं पशोस्तु निक्षिप्य शिरसि श्रीशिवे नमः ॥४९॥
यज्ञार्थे पशवः सृष्टा यज्ञार्थे पशुघातनम्। अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥५०॥
इति संबोधयेत्तस्य शिरः स्पृष्ट्वाऽथ तं पशुम्। अस्त्रमन्त्रं समुच्चार्य च्छिन्धियुग्मं ततो वदेत् ॥५१॥
स्वाहेत्युच्चार्य तं खड्गं तस्य स्कन्धे नियोज्य च। स्वात्मानं भैरवं ध्यायन्नित्येकेन महेश्वरि ॥५२॥
प्रहारेण समुच्छेद्य बलिमन्त्रमिमं पठेत्। शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने दिने ॥५३॥
भक्षय स्वगणैः सार्धं सारमेयसमन्वितः। शत्रुनामाक्षरैर्मन्त्रं विदर्भ्य मनुवित्तमः ॥५४॥
सैन्यं शत्रोर्बलित्वेन कल्पयित्वा महेश्वरि। पशुना सह तत्सैन्यं सम्यक् तस्मै निवेदयेत् ॥५५॥
अनेन बलिदानेन सन्तुष्टो भैरवः स्वयम्। शत्रुसैन्यं विभज्याथ स्वगणेभ्यः प्रयच्छति ॥५६॥
क्रुद्धः सन्नाशयेच्छीघ्रं नात्र कार्या विचारणा। इति।

पूर्वोक्त राजस बलि देने के बाद साधक पूर्ववत् मध्य रात्रि में देव की पूजा करे। सभी अंगों एवं सभी लक्षणों से युक्त बलिपशु लाकर शुद्ध जल से मूल मन्त्र कहते हुए उसे नहलाकर गन्ध माला से अलंकृत करके देवता के आगे खड़ा करे। मूल मन्त्र से उसका प्रोक्षण करे, अस्त्रमन्त्र से रक्षण करे, कवच से अवगुण्ठन करे एवं धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करे। इसके बाद 'देवतारूपिणे बलिरूपाय पशवे नमः' मन्त्र से तीन बार गन्धादि से अर्चन करे। तब उसके दाहिने कान में पशुगायत्री—'पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नो जीवः प्रचोदयात्' को तीन बार कहे। तब अपने आगे खड्ग रखकर 'ॐ ह्रीं कालि कालि वज्रेश्वरि लोहदण्डायै नमः' मन्त्र से तीन बार पूजा करे। तब उसके मूठ की पूजा 'वागीश्वर्यै ब्रह्मणे नमः' से, मध्य में 'लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः' से एवं अग्रभाग में उमामहेश्वराभ्यां नमः' से करे। इस अर्चित खड्ग को दाहिने हाथ में लेकर इस मन्त्र से अभिमन्त्रित करे—खड्गायासुरनाशाय देवकार्यार्थतत्पर। पशुश्छेद्यस्त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमेस्तु ते'। तब विधिवत् तिथि गोत्र, नाम एवं कामना का उल्लेख करते हुये इस प्रकार कहे—श्रीभैरव इमं छागबलिं तुभ्यमहं प्रददे। कुश-पुष्प-अक्षत मिले जल को उसपर छिड़ककर 'श्रीशिवे नमः' यज्ञार्थे पशवः सृष्टा यज्ञार्थे पशुघातनम्। अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः' कहकर पशु का शिर स्पर्श करे। अस्त्र मन्त्र कहकर 'छिन्धि छिन्धि स्वाहा' कहकर खड्ग को गर्दन पर रखे। अपने को भैरव मानकर एक ही प्रहार से उसका शिर काट दे। इसके बाद यह बलि मन्त्र पढ़े—शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने दिने। भक्षय स्वगणैः सार्धं सारमेयसमन्वितः। शत्रु के नामाक्षरों से मन्त्र को विदर्भित करके शत्रुसेना को बलि मानकर पशु के साथ उसकी सेना को भी देव को निवेदित करे। इस बलिदान से सन्तुष्ट भैरव स्वयं अपने गणों के साथ शत्रुसेना को नष्ट करने के लिये जाते हैं और क्रुद्ध होकर शीघ्र उसका नाश कर देते हैं।

गजाश्वादिरक्षाप्रयोगः

अथ गजाश्वादिरक्षाप्रयोगः। तत्र सारसंग्रहे—

गजानां चतुरङ्गानां विशेषाच्छान्तये ततः। तच्छालासु पुरा प्रोक्तं कुण्डं कृत्वा यथाविधि ॥१॥
जुहुयात् पायसाद्यैश्च तिलैस्त्र्ययुतमुक्तवत्। तदा विप्रान् भक्ष्यभोज्यैस्तोषयेच्च सदक्षिणैः ॥२॥
पूर्वोक्तेन प्रकारेण कलशं स्थापयेत् ततः। तत्र गन्धादिभिः सम्यग् वटुकेशं समर्चयेत् ॥३॥
अभिषिञ्चेज्जलैस्तैस्तान् गजानश्वांश्च मन्त्रवित्। वर्धन्ते प्रत्यहं चैते गजाश्चापि तुरङ्गमाः ॥४॥
तेषां च समरे शक्तिर्महती जायते ततः। गजाश्वानामामयाश्च भवन्ति द्विषतां सदा ॥५॥
अस्मादन्या महारक्षा नास्ति भूमण्डलेऽखिले।

हाथी-घोड़ों की रक्षा—सारसंग्रह में कहा गया है कि चतुरंगिनी सेना के हाथियों एवं घोड़ों की शान्तिविशेष के लिये हाथीसार में यथाविधि कुण्ड बनाकर उसमें पायस-तिल से तीन अयुत अर्थात् तीस हजार हवन पूर्ववत् करे। तब ब्राह्मणों

को भक्ष्य भोज्य खिलाकर दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करे। पूर्वोक्त प्रकार से कलश स्थापित करके वटुकेश का सम्यक् अर्चन गन्धादि उपचारों से करे। उस कलश के जल से हाथी, घोड़ा का अभिसेचन करे तो हाथी-घोड़ों की वृद्धि प्रतिदिन होती है। इससे युद्ध में बड़ी शक्ति मिलती है एवं शत्रु के हाथी-घोड़े रोगग्रस्त हो जाते हैं। इससे बढ़कर हाथियों-घोड़ों की रक्षा के लिये संसार में दूसरा विधान नहीं है।

वटुकयन्त्ररचना

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि वटुकस्य सुरार्चिते ॥६॥

आलिख्याष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत्। श्रींह्रींक्लींक्ष्रौं इति ततः पत्रेषु सुरसुन्दरि ॥७॥
वटुकायेत्यक्षराणि द्विरावृत्त्या लिखेत् प्रिये। बहिः षोडशपत्राढ्यं पद्मं कृत्वा सुशोभनम् ॥८॥
तत्पत्रेषु लिखेद् देवि (शिष्टवर्णांस्तु षोडश। मन्त्रस्य तद्बहिश्चापि पद्मं षोडशपत्रकम् ॥९॥
तत्पत्रेषु लिखेद् देवि) स्वरान् षोडश सुव्रते। द्वात्रिंशत्पत्रसंयुक्तं पद्मं कृत्वाथ तद्बहिः ॥१०॥
कादिसान्ताँल्लिखेत् तस्य पत्रेषु परमेश्वरि। वेष्टयेच्चतुरस्रेण यन्त्रमेतद्वरानने ॥११॥
जयदं सुखदं वश्यं दुःखदारिद्र्यनाशनम्। श्रीप्रदं दुरितव्याधिदुष्टग्रहनिकृन्तनम् ॥१२॥
भूतापस्मारकृत्यादिभये रक्षाकरं परम्। अस्यात् परतरा रक्षा नास्ति नास्ति न संशयः ॥१३॥ इति।

अस्यार्थः—तत्राष्टदलपद्मं कृत्वा तत्कर्णिकायां श्रींह्रींक्लींक्ष्रौं इति बीजचतुष्टयं ससाध्यं विलिख्य तत्पत्रेषु वटुकायवटुकायेत्यष्टौ वर्णान् प्रतिपत्रमेकैकशो विलिख्य, तद्बहिः षोडशदलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु वटुकेत्यादि षोडश-वर्णानेकैकशो विलिख्य, पुनस्तद्बहिः षोडशदलकमलं कृत्वा तद्दलेषु षोडशस्वरान् सबिन्दूनालिख्य, तद्बहिर्द्वात्रिंशद्दलपद्मं कृत्वा तद्दलेषु ककारादिसकारान्तान् मातृकावर्णान् सबिन्दूनालिख्य तद्बहिश्चतुरस्रं कुर्यात्। एतद्यन्त्रमुक्तफलदं भवति। अत्र साध्यादिलेखनं तु संपदे श्रीबीजान्तं, वश्याय कामबीजान्तं, निग्रहादिषु नृसिंहबीजान्तं, शान्त्यादौ भुवनेश्वरीबीजान्तं विलिखेदिति संप्रदायः।

वटुक यन्त्र—अष्टदल कमल बनाकर उसकी कर्णिका में साध्य के साथ श्री ह्रीं क्लीं क्ष्रौं लिखे। आठ पत्रों में 'वटुकाय वटुकाय' के आठ अक्षरों को एक-एक करके लिखे। इसके बाहर षोडशदल कमल बनाकर मन्त्र के शेष सोलह वर्णों—'आपदुद्धरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं' को एक-एक करके लिखे। इसके बाहर दूसरा षोडश दल कमल बनाकर उसके सोलह दलों में सानुस्वार सोलह स्वरों अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः को एक-एक करके लिखे। उसके बाहर बत्तीस दल कमल बनाकर प्रत्येक दल में 'क' से 'स' तक के एक-एक वर्ण को अनुस्वार लगाकर लिखे। इसके बाहर चतुरस्र बनाकर वेष्टित करे। यह यन्त्र जयद, सुखद, वश्यकर और दुःख-दरिद्र्य का नाशक होता है। साथ ही श्रीप्रदायक एवं दुरित व्याधि तथा दुष्ट ग्रह का निवारक होता है। भूत, मृगी रोग, कृत्यादि के भय उपस्थित होने पर इससे रक्षा होती है। इससे बढ़कर दूसरा कोई रक्षाविधान नहीं है। यहाँ पर साध्य आदि लेखन में सम्पदा के लिये श्रीं बीजान्त, वश्य के लिये क्लीं बीजान्त, निग्रहादि में नृसिंह बीज 'क्ष्रौं' बीजान्त, शान्ति आदि में ह्रीं बीजान्त लिखे। मन्त्र लिखिना चाहिये।

वटुकमन्त्रान्तरविधिः पूजाप्रयोगश्च

कौलेशकोटिप्रभेदे (अपरोऽयमष्टाक्षरः)—

व्योमबीजं समुद्धृत्य वह्निमायासमन्वितम्। बिन्दुनादसमायुक्तं प्रथमं बीजमुद्धृतम् ॥१॥
गौरीचतुर्थमुद्धृत्य भीषिणीप्रथमं पुनः। मालिनीपञ्चमं विद्धि मोहिनीप्रथमं ततः ॥२॥
मालिनीद्वितीयोपेतं वायुबीजं ततः परम्। पूर्वबीजेन संयुक्तो नमोन्तोऽष्टाक्षरो भवेत् ॥३॥

व्योमबीजं हकारः, वह्निः रेफः, माया ईकारः, बिन्दुनादौ अनुस्वारार्धचन्द्रौ, एतेन भुवनेश्वरीबीजमुद्धृतम्। गौरीचतुर्थं वकारः। भीषिणीप्रथमं टकारः, मालिनीपञ्चमं उकारः। पुनः शब्देन तयोर्योगः सूचितस्तेन टु इति। मोहिनी-प्रथमं ककारः, मालिनीद्वितीयमाकारस्तद्युक्तस्तेन का इति। वायुबीजं यकारः। पूर्वबीजं भुवनेशीबीजम्। नमः स्वरूपम्।

आपदुद्धारणो मन्त्र उत्तमः परिकीर्तितः । सर्वसिद्धिकरः साक्षाच्छिवेन परिकीर्तितः ॥४॥
ऋषिस्तु बृहदारण्यश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् । देवता वटुकः प्रोक्तः साक्षात् परशिवः प्रिये ॥५॥
षडङ्गं संप्रवक्ष्यामि वटुकस्य सुरेश्वरि । ह्रांह्रींहूंहैं समुद्धृत्य ह्रौंहश्चैव षडक्षरः ॥६॥
वटुशब्दं समुच्चार्य वर्माम्बरपदं वदेत् । हृदयायपदं पश्चाद् हृदयं परिकीर्तितम् ॥७॥
वटुप्रमथनं पश्चाच्छिरसे च समन्वितम् । शिखायै वटुसंयुक्तं कवचं वटुकाय च ॥८॥
नेत्रं वटुकसंयुक्तं वटुशब्दं ततःपरम् । दण्डोऽथ पाणये पश्चादस्त्रमन्त्रं समुद्धरेत् ॥९॥
नमः स्वाहा वषट् हुं वौषट् फडन्तं नियोजयेत् ।

अथ षडङ्गन्यासप्रकारः—ह्रांवटुवर्माम्बर हृदयाय नमः। ह्रींवटुप्रमथन शिरसे स्वाहा। हूंवटु शिखायै वषट्। हैंवटुकाय कवचाय हुं। ह्रौंवटुक नेत्राभ्यां वौषट्। हः वटुदण्डपाणये अस्त्राय फट् इति। अत्रापि प्राग्वदङ्गुलीदेहवक्त्रेषु पञ्चमूर्तयो न्यस्तव्याः। ध्यानं च पूर्वोक्तमेव।

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः । जुहुयात् तद्दशांशेन तिलैस्त्रिमधुसंयुतैः ॥१०॥
एकविंशत्यक्षरोक्तविधिना देवमर्चयेत् । तत्रोक्तकाम्यकर्माणि मन्त्रेणानेन साधयेत् ॥११॥

अत्र पूर्वोक्तैकविंशाक्षरो मन्त्र एव प्रणवादिर्द्वाविंशत्यक्षरो रुद्रयामलोक्तः। तत्र देवीप्रणव इति मायाबीजस्य नाम, तत्र षडङ्गमन्त्रेषु प्रणवादित्वं पूर्वतो विशेषः। अन्यत्सर्वं तत्रोक्तमेव। मन्त्रान्तरं तु तत्रैव—

अनन्तो बिन्दुमानाद्यं नकुलीशो भुजङ्गयुक् । त्रिमूर्तिः श्रीमुखीयुक्तः क्रोधी रेफेन्दुसद्ययुक् ॥१॥
चतुर्थं नृहरेर्बीजं वटुकाय पदं ततः । वटुकाय पुनर्ब्रूयादापदुद्धारणाय च ॥२॥
कुरुद्वयं समुच्चार्य वटुकाय पुनर्वदेत् । द्वितीयं बीजमुच्चार्य वटुकायाग्निवल्लभा ॥३॥
समुद्धृतो महामन्त्रश्चतुस्त्रिंशद्भिरक्षरैः ।

अनन्त आ, बिन्दुरनुस्वारस्तेन आं। नकुलीशो हकारः, भुजङ्गो रेफः, त्रिमूर्तिरीकारः, श्रीमुखी बिन्दुस्तेन ह्रीं। क्रोधी ककारः, इन्दुरनुस्वारः, सद्य ओ, एतैरङ्कुशबीजमुद्धृतम्। नृहरेर्बीजं पूर्वोक्तं क्ष्रौं इति। अन्यानि पदानि स्वरूपाणि। तेषु द्वितीयतृतीयपदयोर्विसन्धिः चतुस्त्रिंशद्भिरक्षरैरित्युक्तेः। द्वितीयं बीजं भुवनेश्वरीबीजं, अग्निवल्लभा स्वाहाकारः। स्पष्टं तु—आंह्रींक्रोंक्ष्रौं वटुकाय वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरुकुरु वटुकाय ह्रींवटुकाय स्वाहा (वर्णाः ३४)। तथा—

ऋषिर्ब्रह्मा समुद्दिष्टोऽनुष्टुप् छन्द उदाहृतम् । अतिपूर्वं देवतास्य भैरवः परिकीर्तितः ॥४॥
वेदाष्टमुनिसंख्यार्णैर्वसुबाणविलोचनैः । मन्त्रार्णान् विन्यसेन्मन्त्री जातियुक्तैः षडङ्गकम् ॥५॥

वेदाः ४ मुनयः ७ वसवः ८ बाणाः ५ विलोचनं २। जातयः प्रागेवोक्ताः।

शिखायां ब्रह्मरन्ध्रे च पञ्च(मूर्ध्नि)वक्त्रे च नेत्रयोः । कर्णयोर्घ्राणयोर्गण्डयुगे चोष्ठयुगे तथा ॥६॥
दन्तपंक्त्योश्च चिबुके गले बाहुयुगे तथा । सन्ध्यग्रेषु च हृदये स्तनयोरुदरे तथा ॥७॥
नाभौ पृष्ठे स्फिचोः कट्योर्गुह्ये पायौ च पादयोः । सन्ध्यग्रेषु च मन्त्रार्णान् विन्यसेत् साधकोत्तमः ॥८॥
शिरो ललाटे भ्रूमध्ये नेत्रनासामुखेषु च । गले हृदि च नाभौ च गुह्ये चोरुयुगे तथा ॥९॥
जानुनोः पादयोश्चैव पदानि च मनोर्न्यसेत् । प्रागुक्तविधिना देवि ध्यात्वा देवमनन्यधीः ॥१०॥
शैवे पीठे यजेद् देवं प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना । इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्रातःकृत्यादियोगपीठन्यासान्ते मूलेन प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे अत्यनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदये श्रीवटुकभैरवदेवतायै नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, आंह्रींक्रोंक्ष्रौं हृदयाय नमः। वटुकाय वटुकाय शिरसे स्वाहा। आपदुद्धारणाय शिखायै वषट्।

कुरु कुरु वटुकाय कवचाय हुम्। ह्रींवटुकाय नेत्राभ्यां वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। इति करषडङ्गन्यासं कृत्वा, शिखायां आंनमः। ब्रह्मरन्ध्रे ह्रीं नमः। शिरसि क्रों नमः। मुखे क्ष्रौं नमः। दक्षनेत्रे वं नमः। वामे टुंनमः। दक्षकर्णे कांनमः। वामे यंनमः। दक्षनसि वंनमः। वामे टुंनमः। दक्षगण्डे कांनमः। वामे यंनमः। ऊर्ध्वोष्ठे आंनमः। अधरोष्ठे पंनमः। ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ दुंनमः। अधोदन्तपंक्तौ द्धांनमः। चिबुके रंनमः। गले णांनमः। दक्षबाहौ यंनमः। वामे कुंनमः। सन्ध्यग्रेषु रुंनमः। हृदये कुंनमः। दक्षस्तने रुंनमः। वामे वंनमः। उदरे टुंनमः। नाभौ कांनमः। पृष्ठे यंनमः। दक्षस्फिचि ह्रींनमः। वामे वंनमः। दक्षकट्यां टुंनमः। वामे कांनमः। गुह्ये यंनमः। पायौ स्वांनमः। पादयोः हांनमः। इति विन्यस्य, शिरसि आंनमः। ललाटे ह्रींनमः। भ्रूमध्ये क्रोंनमः। नेत्रयोः क्ष्रौंनमः। नासायां वटुकायनमः। मुखे वटुकाय नमः। गले आपदुद्धारणाय नमः। हृदि कुरु नमः। नाभौ कुरु नमः। गुह्ये वटुकाय नमः। ऊर्ध्वोः ह्रींनमः। जानुनोः वटुकाय नमः। पादयो स्वाहा नमः। इत्यक्षरन्यासः। अथ पदन्यासः। शिरसि आंनमः। ललाटे ह्रीं नमः। भ्रूमध्ये क्रों नमः। नेत्रयोः क्ष्रौं नमः। नासायां वटुकाय नमः। मुखे वटुकाय नमः। कण्ठे आपदुद्धारणाय नमः। हृदि कुरु नमः। नाभौ कुरु नमः। गुह्ये वटुकाय नमः। ऊर्वोः ह्रीं नमः। जानुनोः वटुकाय नमः। पादयोः स्वाहा नमः। इति विन्यस्य ध्यानादिकं सर्वं प्राग्वत् कुर्यात्। तथा—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः। जुहुयात् तद्दशांशेन तिलैस्त्रिस्वादुसंयुतैः ॥११॥
तर्पणादि ततः कृत्वा गुरुं सन्तोष्य यत्नतः। सिद्धमन्त्रः प्रकुर्वीत काम्यकर्माणि साधकः ॥१२॥
पूर्वोक्तानि महादेवि सिध्यन्त्येव न संशयः। इति।

अन्य अष्टाक्षर मन्त्र—कौलेशकोटिप्रभेद के अनुसार अन्य अष्टाक्षर वटुक मन्त्र है—ह्रीं वटुकाय ह्रीं नमः। आपदाओं से उद्धार के लिये यह विख्यात उत्तम मन्त्र है। साक्षात् शिव ने इसे सर्वसिद्धिकारक कहा है। इसके ऋषि बृहदारण्य, छन्द अनुष्टुप् एवं देवता वटुक कहे गये हैं। इसका ऋष्यादि इस प्रकार किया जाता है—न्यास शिरसि बृहदारण्यकाय ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये साक्षात् परशिवाय देवतायै नमः। तदनन्तर अभीष्ट-सिद्धि के लिये विनियोग करके षडङ्ग न्यास इस प्रकार किया जाता है—ह्रां वटुवर्माम्बर हृदयाय नमः, ह्रीं वटुप्रमथन शिरसे स्वाहा, ह्रूं वटु शिखायै वषट्, ह्रैं वटुकाय कवचाय हुं, ह्रौं वटुक नेत्राभ्यां वौषट्, ह्रः वटु दण्डपाणये अस्त्राय फट्। यहाँ भी पूर्ववत् अंगुली देह मुख में पाँच मूर्तियों का न्यास करना चाहिये। तदनन्तर पूर्ववत् ध्यान करके दीक्षित साधक जितेन्द्रिय रहकर आठ लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल से करे। इक्कीस अक्षरों वाले मन्त्र के समान देव का अर्चन करे एवं उसी के समान काम्य कर्मों को इस मन्त्र से भी अतिरिक्त साधन करे।

इसके पूर्वोक्त एकविंशाक्षर मन्त्र के पहले 'ॐ' लगाने से वही मन्त्र बाईस अक्षरों का हो जाता है। ऐसा रुद्रयामल में कहा गया है। षडङ्ग मन्त्र में देवीप्रणव 'ह्रीं' के पहले 'ॐ' लगाना चाहिये।

मन्त्रान्तर—कौलेशकोटिप्रभेद के अनुसार एक अन्य चौंतीस अक्षरों का मन्त्र है—आं ह्रीं क्रों क्ष्रौं वटुकाय वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं वटुकाय स्वाहा। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्द अत्यनुष्टुप् एवं देवता भैरव कहे गये हैं।

पूजा प्रयोग—प्रातःकृत्यादि से योगपीठ न्यास तक करने के बाद मूल मन्त्र से तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे अत्यनुष्टुप् छन्दसे नमः, हृदये श्रीवटुकभैरवदेवतायै नमः। तदनन्तर अपने समस्त अभीष्टों की सिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—आं ह्रीं क्रों क्ष्रौं हृदयाय नमः, वटुकाय वटुकाय शिरसे स्वाहा, आपदुद्धारणाय शिखायै वषट्, कुरु कुरु वटुकाय कवचाय हुं, ह्रीं वटुकाय नेत्राभ्यां वौषट्, स्वाहा अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। इसके बाद मन्त्रवर्ण इस प्रकार न्यास करे। शिखा में आं नमः, ब्रह्मरन्ध्र में ह्रीं नमः, शिर में क्रों नमः, मुख में क्ष्रौं नमः, दक्षनेत्र में वं नमः, वामनेत्र में टुं नमः, दक्षकर्ण में कां नमः, वाम कर्ण में यं नमः, दक्ष नासाछिद्र में वं नमः, वाम में टुं नमः, दक्ष गण्ड में कां नमः, वाम में यं नमः, ऊपरी ओठ में आं नमः, निचले ओठ में पं नमः, ऊपरी दन्तपंक्ति में दुं नमः, निचली दन्तपंक्ति में द्धां नमः, चिबुक में रं नमः, गला में णां नमः, दाँयें बाहु में यं नमः, बाँयें में कुं

नमः, सन्धि में रुं नमः, हृदय में कु नमः, दक्ष स्तन में रुं नमः, बाँयें स्तन में वं नमः, उदर में टुं नमः, नाभि में कां नमः, पीठ में यं नमः, दक्ष स्फिक में ह्रीं नमः, वाम में वं नमः, दक्षकटि में टुं नमः, वाम में कां नमः, गुह्य में यं नमः, पायु में स्वां नमः, पैरों में हां नमः। इसके बाद इस प्रकार का न्यास करे—शिर पर आं नमः, ललाट में ह्रीं नमः, भ्रूमध्य में क्रों नमः, नेत्रों में क्ष्रौं नमः, नासा में वटुकाय नमः, मुख में वटुकाय नमः, गले में आपदुद्धरणाय नमः, हृदय में कुरु नमः, नाभि में कुरु नमः, गुह्य में वटुकाय नमः, ऊरुओं में ह्रीं नमः, जानुओं में वटुकाय नमः, पैरों में स्वाहा नमः।

तदनन्तर मन्त्रपद न्यास इस प्रकार करे—शिर पर आं नमः, ललाट में ह्रीं नमः, भ्रूमध्य में क्रों नमः, नेत्रों में क्ष्रौं नमः, नासा में वटुकाय नमः, मुख में वटुकाय नमः, कण्ठ में आपदुद्धारणाय नमः, हृदय में कुरु नमः, नाभि में कुरु नमः, गुह्य में वटुकाय नमः, ऊरुओं में ह्रीं नमः, जानुओं में वटुकाय नमः, पैरों में स्वाहा नमः। इसके बाद पूर्ववत् ध्यानादि करके शैव पीठ पर पूर्वोक्त विधि से पूजन करे।

तदनन्तर हविष्यभोजी साधक जितेन्द्रिय रहकर एक लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल से करे। तर्पणादि करके यत्न से गुरु को सन्तुष्ट करे। इस सिद्ध मन्त्र से साधक पूर्वोक्त काम्य कर्म करे। इससे पूर्वोक्त समस्त काम्य कर्म निःसन्देह रूप से सिद्ध होते हैं।

सप्रयोगः चण्डेश्वरमन्त्रविधिः

तथा चण्डेश्वरस्य मन्त्रः—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मन्त्रं चण्डेश्वरस्य ते। सर्वाभीष्टकरं देवि सर्वसिद्धिकरं प्रिये ॥१॥
अर्घीशं तु समुच्चार्य मीनेशं तु जलस्थितम्। अग्निमूर्धानमस्त्रान्तं त्र्यक्षरोऽयं मनुर्मतः॥२॥

अर्घीश ऊ। मीनेशो ध, जलस्थितं वकारोपरिस्थितं, अग्निमूर्धानं रेफशिरस्कं तेन र्ध्व इति सिद्धं, अस्त्रं फट्। स्पष्टं—ऊर्ध्वफट् इति। तथा—

ऋषिस्त्रिकोऽनुष्टुप् छन्दश्चण्डेश्वरोऽस्य देवता। आद्यं बीजं शक्तिरन्त्यमिष्टार्थे विनियुज्यते॥३॥
दीप्तफट् हृदयं प्रोक्तं ज्वालाफट् शिर ईरितम्। ज्वालिन्यस्त्रं शिखा देवि नटास्त्रं च तनुच्छदम्॥४॥
हनफट् नेत्रमुदितं सर्वज्वालिनि फट् परम्। एभिर्मन्त्रैः षडङ्गानि जातियुक्तानि कल्पयेत्॥५॥
चण्डेश्वरं रक्तवर्णं त्रिनेत्रं रक्तवाससम्। स्फटिकाक्षस्रजं शूलं दक्षिणे चाधऊर्ध्वयोः॥६॥
करयोर्वामयोश्चापि टङ्कं चैव कमण्डलुम्। दधतं चन्द्रशकलविलसच्छेखरं स्मरेत्॥७॥
इति ध्यात्वा यजेत् पीठे शैवे चण्डेश्वरं प्रिये। चण्डचण्डाय संप्रोच्य विद्महे तदनन्तरम्॥८॥
चण्डेश्वराय इत्युक्त्वा धीमहीति ततो वदेत्। ततश्चण्डः प्रशब्दान्ते चोदयादिति चोच्चरेत्॥९॥
चण्डस्यैषा समाख्याता गायत्री चानया च तम्। आवाह्य पूजयेद्देवि प्राग्वत् सर्वोपचारकैः॥१०॥
आद्यक्षरं बिन्दुयुतं ङेन्तं चण्डेश्वरं च हृत्। अनेन च समभ्यर्च्य यजेदङ्गानि पूर्ववत्॥११॥
दलेषु मातरः पूज्या वीथ्योर्लोकेशहेतयः। इति।

अथ प्रयोगः—तत्र प्राग्वद्योगपीठन्यासान्ते प्राणानायम्य, शिरसि त्रिकऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः। हृदि श्रीचण्डेश्वराय देवतायै नमः। गुह्ये ऊंबीजाय नमः। पादयोः फट्शक्तये नमः। इति विन्यस्य मम सर्वाभीष्टसिद्धये विनियोगः इति कृताञ्जलिरुक्त्वा, दीप्तफट् हृदयाय नमः। ज्वालाफट् शिरसे स्वाहा। ज्वालिनिफट् शिखायै वषट्। नटफट् कवचाय हुम्। हनफट् नेत्राय वौषट्। सर्वज्वालिनिफट् अस्त्रायफट्। इति षडङ्गमन्त्रानङ्गुष्ठादितलान्तं करयोर्विन्यस्य हृदयादिषडङ्गेष्वपि विन्यस्य, ध्यानादिपीठपूजान्ते चमिति बीजेन मूर्तिं परिकल्प्य, चण्डचण्डाय विद्महे चण्डेश्वराय धीमहि तन्नश्चण्डः प्रचोदयात्। इत्यनयावाह्य सर्वोपचारैः चंचण्डेश्वराय नमः इति मन्त्रेण संपूज्य पूर्ववदङ्गानि संपूज्य, अष्टदलेषु ब्राह्म्यादिमातॄर्वीथ्योर्लोकेशांस्तदस्त्राणि च पूजयेदिति। तथा—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं जुहुयात् तद्दशांशतः। सतिलैस्तण्डुलैर्वापि त्रिमध्वक्तैर्यथाविधि ॥१२॥
राजवृक्षसमिद्भिर्वा तर्पणादि ततश्चरेत्। प्राग्वत् सिद्धे मनौ मन्त्री प्रयोगानाचरेच्छिवे ॥१३॥

चण्डेश्वर मन्त्र—समस्त अभीष्टों को प्रदान करने वाला एवं समस्त सिद्धियों को देने वाला चण्डेश्वर का त्र्यक्षर मन्त्र है—ऊर्ध्व फट्। इसके ऋषि त्रिक, छन्द, अनुष्टप्, देवता चण्डेश्वर बीज ऊं एवं शक्ति फट् है।

पूजा प्रयोग—पूर्ववत् योगपीठ न्यास तक करने के बाद तीन प्राणायाम करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि त्रिकऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप् छन्दसे नमः, हदि श्रीचण्डेश्वराय देवतायै नमः, गुह्ये ऊं बीजाय नमः, पादयोः फट् शक्तये नमः। तदनन्तर समस्त अभीष्टसिद्धि के लिये विनियोग करके इस प्रकार षडङ्ग न्यास करे—दीप्त फट् हृदयाय नमः, ज्वाला फट् शिरसे स्वाहा, ज्वालिनि फट् शिखायै वषट्, नट फट् कवचाय हुम्, हन फट् नेत्राय वौषट्, सर्वज्वालिनि फट् अस्त्राय फट्। इन्हीं मन्त्रों से करन्यास करे, पुनः हृदयादि षडङ्गों में न्यास करे। तत्पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—

चण्डेश्वरं रक्तवर्णं त्रिनेत्रं रक्तवाससम्। स्फटिकाक्षस्रजं शूलं दक्षिणे चाधऊर्ध्वयोः।।
करयोर्वामयोश्चापि टङ्कं चैव कमण्डलुम्। दधतं चन्द्रशकलविलसच्छेखरं स्मरेत्।।

उपर्युक्त इस प्रकार ध्यान के बाद शैव पीठ पर पीठपूजा करे। 'चं' बीज से मूर्ति कल्पित करके चण्डगायत्री—'चण्डचण्डाय विद्महे चण्डेश्वराय धीमहि तन्नश्चण्डः प्रचोदयात्' से आवाहन करे। 'चण्डेश्वराय नमः' मन्त्र से सभी उपचारों से पूजा करे। अंगपूजन करे। अष्टदल में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे। चतुरस्र की वीथियों में इन्द्रादि लोकेशों और उनके वज्रादि आयुधों की पूजा करे। तदनन्तर तीन लाख मन्त्र-जप करे। दशांश हवन त्रिमधुराक्त तिल चावल से करे अथवा अमलतास की समिधाओं से करे। तब तर्पणादि करे। इस प्रकार से सिद्ध मन्त्र से पूर्ववत् प्रयोग करे।

काम्यविधानम्

शालिपिष्टमयीं कृत्वा पुत्तलीं प्राणसंयुताम्। देवि काष्ठेधिते वह्नौ सम्यक् त्रिमधुराप्लुतम् ॥१४॥
दक्षिणाङ्गुष्ठमारभ्य पुंसि च्छित्वा पृथक् शतम्। जुहुयाद् वामपादादि योषितश्चापि संहुनेत् ॥१५॥
एवं होमो द्विजातीनां वश्यकृन्नात्र संशयः। यो मर्त्योऽनुदिनं पुष्पैर्हुनेदष्टोत्तरं शतम् ॥१६॥
स यादृग्भिर्दिनैः कैश्चित् तद्वर्णं वसनं लभेत्। प्रत्यहं मनुनानेन देवि यस्तर्पयेच्छिवम् ॥१७॥
चतुर्मासं तस्य लक्ष्मीर्भवत्येव न संशयः। साध्यवृक्षत्वचा लोणैः सम्यक् पिष्टैश्च कारयेत् ॥१८॥
तां तु संस्थापितप्राणां प्रतिमां संस्पृशञ्जपेत्। पूजितां च हुनेद्रात्रौ वशमानयते ध्रुवम् ॥१९॥
नरो नारी सदा वश्या भवेदेव न संशयः। इति।

शालिपिष्ट से मूर्ति बनाकर प्राणप्रतिष्ठा करे। उसे सौ टुकड़ों में विभक्त करके पुरुषमूर्ति के दाहिने पैर के अंगूठे से प्रारम्भ करके हवन करे एवं स्त्रीमूर्ति के बाँयें पादांगुष्ठ से आरम्भ करके हवन करे। हवन के पहले मूर्तिखण्डों को त्रिमधुराक्त करे। इस हवन से द्विज (ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य) वश में होते हैं। जो मनुष्य प्रतिदिन एक सौ आठ हवन फूलों से करता है, वह सौ दिनों में रंग-बिरंगे वस्त्र प्राप्त करता है। इस मन्त्र से प्रतिदिन जो शिव का तर्पण चार महीनों तक करता है, उसे लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। साध्य वृक्षों की छाल और नमक को पीस्कर पिष्ट बनावे। उस पिष्ट से मूर्ति बनाकर स्थापित करके प्राणप्रतिष्ठा करे। उसे स्पर्श करके जप करे एवं रात में पूजा करके हवन करे तो साध्य वश में हो जाता है। इससे नर-नारी दोनों वश में हो जाते हैं।

चण्डेश्वरस्तोत्रम्

अथ स्तोत्रम्—

वपुष्प्रादुर्भावादनुमितमिदं जन्मनि पुरा पुरारे न क्वापि क्षणमपि भवन्तं प्रणतवान्।
नमन् मुक्तः संप्रत्यहमतनुरग्रेऽप्यनतिमान् इतीश क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि ॥१॥

श्रीशम्भो भगवन् त्रिनेत्र जगतां बन्धोऽन्धकध्वंसन प्रालेयांशुकलावतंस मदनद्वेषिन् मृडानीपते।
व्योमव्यापिवपुर्महेश यमिनामाद्य त्रिलोकीतनो भास्वद्विग्रह दुर्ग्रहार्तिशमन त्वं पाहि नः सर्वदा ॥२॥
रे मूढास्तमपास्य देवमखिलस्वर्लोकिचूडामणिश्रेणीपल्लविताङ्घ्रिपीठमपरः कः स्यादुपास्यः प्रभुः।
तुष्टो यः प्रणतामरप्रणयिनीमिष्टां ददाति श्रियं यश्चोन्मत्तपलाशकाशकुसुमैरभ्यर्चितस्तुष्यति ॥३॥
रे मूढाः किमयं वृथैव तपसा कायः परिक्लिश्यते यज्ञैर्वा बहुदक्षिणैः किमपरे रिक्ताः क्रियन्ते गृहाः।
भक्तिश्चेदवरोधिनी भगवति त्र्यक्षे तदानीमसावुन्निद्राम्बुरुहातपत्रसुभगा लक्ष्मीः पुरो धावति ॥४॥
किं चिन्तामणिचिन्तनैः किमपरैः कल्पद्रुमान्वेषणैः किं वा वाञ्छितदानमात्रफलया धेन्वा रहो ध्यातया।
अक्षीणैर्निधिभिश्च तैः किमथवा कल्पान्तरस्थायिभिर्वाञ्छातीतफलप्रदे भगवति त्र्यक्षे कुरुष्वानतिम् ॥५॥
त्र्यक्ष त्वां सकृदेव यः प्रणमति क्षोणीभृतस्तं नमन्त्याजन्म स्फुरदङ्घ्रिपीठविलुठत्कोटीरकोटिच्छटाः।
यस्त्वामर्चति सोऽर्च्यते सुकृतिभिर्यः स्तौति स स्तूयते यस्त्वां ध्यायति तं स्मरार्तिविधुरा ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥६॥
त्वद्रूपैकनिरूपणप्रणयिता शम्भो दृशोस्त्वद्गुणग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि।
त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मा नाथ मे शाम्यताम् ॥७॥
प्रज्ञोन्मेषपटो प्रपञ्चय वचो बौद्ध! त्वमप्यद्भुतं चार्वाक! स्वविकल्पजात्वजटिलाः स्वैरं गिरः स्फारय।
रे मीमांसक! जैन! सांख्य! भवतां यत् संमतं ब्रूत तत् स्वातन्त्र्यान्मम रोचते नहि नहि त्र्यक्षादृतेऽन्यः प्रभुः ॥८॥
भाग्यैः कन्दलितं सुखैः कुसुमितं दत्तं फलं वाञ्छितैः कष्टैरस्तमितं शुचा विचलितं नष्टं तदैवारिभिः।
संपद्धाम्नि निसर्गतोऽपि विपदामुन्माथिनि श्रेयसामावासे निहितं यदैव गिरिजाकान्तप्रणामे मनः ॥९॥
दुःखानि क्षपयत्यघानि दलयत्युन्मूलयत्यापदो हन्त्याधीन्विरुणद्धि साधुनिखिलव्यापाररोधा रुजः।
मथ्नांति प्रतिपन्थिनः शमयति क्षुद्रानसावञ्जसा किं तद्यन्न करोति चन्द्रकलिकाचूड त्वदङ्घ्रिस्मृतिः ॥१०॥
....। भक्त्या योऽङ्कुरितः प्रतिक्षणमथो............।
............फलत्यविरतं वाञ्छातिरिक्तं फलैः। ....॥११॥

हंहो मानस किं न यस्य सुमते किञ्चिद्रहस्यं ब्रवी-
म्यस्त्वत्यन्तमृदुः प्रकीर्णविभवः श्रीशैलजावल्लभः।
त्वं गत्वा विपिने प्रतार्य्य कुसुमैरर्कस्य दर्भस्य वा
गृह्णीमः सुरमौलिलालितपदां त्रैलोक्यराज्यश्रियम् ॥१२॥
नन्दिन् भृङ्गिरिटे गणाधिप महाकालाग्निरुद्र प्रभो
यूयं सन्निहिताः सदैव वदतो धर्म्यं वचः श्रूयताम्।
यद्यस्माकमनल्पपूत्कृतकृतां देवो जगद्व्यापको
नो ध्यायत्सु कृपां करोति तदहो किं नः प्रभुः स्मर्यते ॥१३॥
आयुर्नश्यति पश्यतां प्रतिदिनं याति क्षयं यौवनं
प्रत्यायान्ति गताः पुनर्न दिवसाः कालो जगद्भक्षकः।
लक्ष्मीस्तोयतरङ्गभङ्गिचपला विद्युच्चलं जीवितं
तस्मान्मां शरणागतं शरणद त्वं रक्ष रक्षाधुना ॥१४॥

इति श्रीमहामहोपाध्यायाचार्यभगवत्पूज्यपादाश्रीगोविन्दचार्यशिष्य-श्रीभगवच्छङ्कराचार्यशिष्य-श्रीविष्णुशर्माचार्यशिष्य-श्रीप्रगल्भाचार्यशिष्य-श्रीविद्यारण्ययतिविरचिते श्रीविद्यार्णवाख्ये तन्त्रे त्रिंशः श्वासः॥३०॥

●

हे पुरारि! इस शरीर की प्राप्ति के पश्चात् आज तक एवं पूर्व जन्म में भी कभी भी क्षणमात्र के लिये भी आपको प्रणाम

नहीं किया और इस समय भी आपको नमन करते ही मैं मुक्त होकर शरीररहित हो गया, फलस्वरूप आगे भी नमन करने में असमर्थ हो गया; अत: हे भगवन्! मेरे इन दोनों अपराधों को आप क्षमा करें। तीन नेत्रों वाले, संसार के बन्धन एवं अन्धकासुर का नाश करने वाले, चन्द्रमा की कलाओं को अपने मस्तक पर धारण करने वाले, कामदेव के शत्रु, मृडानी के स्वामी, आकाश में व्याप्त शरीर वाले, महेश, परम योगी, तीनों लोकरूपी शरीर वाले हे भगवन् शम्भो! आप दीप्यमान विग्रह हैं, दुष्ट ग्रहों की पीड़ा का शमन करने वाले हैं; अत: आप सर्वदा मेरी रक्षा करें।

रे मूर्ख! समस्त देवताओं से सुशोभित स्वर्गलोक के चूडामणिस्वरूप उस देव के पादपीठ की अर्चना छोड़कर तुम किसकी उपासना करोगे? जो सन्तुष्ट होने पर देवताओं की प्रियतमा लक्ष्मी को सदा प्रदान करते हैं एवं पलाश-काश-पुष्प से पूजित होकर भी सन्तुष्ट रहते हैं। क्यों व्यर्थ ही तपस्या से शरीर को कष्ट दे रहे हो अथवा यज्ञ, प्रचुर दक्षिणा आदि अन्य कार्यों में व्यर्थ ही धन को व्यय कर अपने घर को खाली कर रहे हो? यदि सतत भक्ति हो तो अधखिले कमलपत्रों पर विराजमान लक्ष्मी सदा आगे-आगे दौड़ती है। चिन्तामणि का चिन्तन, कल्पद्रुम की खोज, कामधेनु का ध्यान, अविनाशी निधियों की लालसा करने से क्या लाभ है, इन सबका परित्याग कर सभी कल्पों में वर्तमान रहने वाले तीन नेत्रों वाले भगवान् चण्डेश्वर का तीनों काल में नमन करने से सबकुछ प्राप्त हो जाता है। हे त्रिनयन! आपको जो एक बार भी प्रणाम कर लेता है, वह जन्मपर्यन्त भगवान् के पादपीठों में नमन कर लेता है। जो आपका अर्चन करता है, वह समस्त सुकृतियों का अर्चन कर लेता है। जो आपकी स्तुति कर लेता है, वह समस्त सुकृतियों की स्तुति कर लेता है। जो आपका ध्यान कर लेता है, वह काम के वियोग से व्यथित समस्त कामिनियों का ध्यान कर लेता है। हे नाथ! एकमात्र आपके ही रूप का सदा निर्माण करने वाले, आपके ही गुणों का गान करने वाले, चित्त में सदा आपका ही स्मरण करने वाले, हाथों से आपके ही पादपद्मों का अर्चन करने वाले, वाणी से आपका ही कीर्तन करने वाले मुझसे आपकी उपासना में कभी व्यवधान न हो; अत: हे भगवन्! मुझे शक्ति प्रदान करें। बुद्धि के संकोच एवं विस्तार में चतुर बौद्ध, अपने बहुविध विकलप वाली ईर्ष्यायुक्त वाणी वाले अद्भुत चार्वाक, मीमांसक, सांख्य, जैन—इन सबों को जो उचित लगे, वह कहें, लेकिन मुझे तो त्रिनेत्र के अतिरिक्त कोई अन्य प्रभु के रूप में स्वीकार नहीं है। भाग्य से कन्दलित, सुख से कुसुमित, वाञ्छित फल प्रदान करने वाले, कष्टों से मुक्ति देने वाले, शोक से विचलित करने वाले शत्रुओं को नष्ट करने वाले, सम्पत्ति के आकर, विपत्तियों को पूर्णत: समाप्त करने वाले, कल्याण के आवास-स्वरूप उमापति के प्रणाम में ही मेरा मन पूर्ण रूप से लगा रहे। हे महेश्वर! आपके चरणों का स्मरण करने से दु:खों की समाप्ति होती है, पापों का शमन होता है, आपत्तियों का उन्मूलन होता है, आधियों का विनाश होता है, समस्त सत्कर्म-व्यापार को रोकने वाले रोगों का आगमन नहीं होता, विरोधियों का पराभव होता है, क्षुद्रों का शमन होता है। हे चन्द्रचूड़! एक बार भी आपका स्मरण करने से क्या प्राप्त नहीं होता? अर्थात् सब कुछ प्राप्त होता है। आपकी भक्ति के परि-णामस्वरूप जो बीज प्रतिक्षण अंकुरित होता है, वह आशा से अधिक बराबर फलवान होता है। रे मन! तुम्हें एक अत्यन्त रहस्य की बात बताता हूँ। भले ही तुम्हारे पास अलौकिक सम्पत्तियाँ हों, फिर भी तुम वन में जाकर शैलजावल्लभ अर्थात् भगवान् शम्भु के देववन्दित चरणों का अर्कपुष्पों अथवा कुशों से अर्चन करो; इससे तुम्हें त्रैलोक्य के लक्ष्मी की प्राप्ति होगी। उन भगवान् महेश्वर के निकट नन्दी, भृङ्गीरिटि, गणाधिप, महाकाल, अग्निरुद्र आदि सभी बराबर धर्म से परिपूर्ण बातें करते हैं, उनका श्रवण करो। यदि हमने थोड़ा भी पुण्य किया है और जगत् में व्यापक उस ईश्वर का ध्यान किया है तो वे मुझ पर कृपा करेंगे ही। देखो, आयु का प्रतिदिन नाश हो रहा है एवं यौवन का बराबर क्षय हो रहा है; बीते हुये दिन लौटकर वापस नहीं आने वाले हैं, क्योंकि काल अर्थात् समय संसार का भक्षक है। समुद्र में उठने वाली तरंगों के सदृश ही लक्ष्मी अत्यन्त चपल है एवं जीवन बिजली के समान चलायमान है; इसलिये हे शरणागतों को शरण प्रदान करने वाले! इस समय मेरी आप ही रक्षा करो।

इस प्रकार श्रीविद्यारण्ययतिविरचित श्रीविद्यार्णव तन्त्र की कपिलदेव नारायण-कृत भाषा-भाष्य में त्रिंश श्वास पूर्ण हुआ

●

पुस्तक परिचय

'श्रीविद्या' शब्द श्रीत्रिपुरसुन्दरी के मन्त्र एवं उसके अधिष्ठात्री देवता—इन दोनों का बोधक है। सामान्यतया 'श्री' शब्द 'लक्ष्मी' अर्थ में प्रसिद्ध है; परन्तु हारितायन संहिता, ब्रह्माण्डपुराण-उत्तरखण्ड आदि पुराणेतिहासों में वर्णित आख्यायिकाओं के अनुसार 'श्री' शब्द का मुख्य अर्थ 'महात्रिपुरसुन्दरी' ही है। श्री महालक्ष्मी ने महात्रिपुरसुन्दरी की चिरकाल-पर्यन्त आराधना कर जो अनेक वरदान प्राप्त किये हैं, उनमें एक वरदान 'श्री' की आख्या से लोक में ख्याति प्राप्त करने का भी है। अस्तु; 'श्री' शब्द का 'महालक्ष्मी' अर्थ तो गौण ही है; मुख्य अर्थ है—'श्री' अर्थात महात्रिपुरसुन्दरी की प्रतिपादिका विद्या—मन्त्र = 'श्रीविद्या'। वाच्य एवं वाचक का अभेद मानकर इस मन्त्र की अधिष्ठात्री देवता भी 'श्रीविद्या' ही सिद्ध होती है। इस श्रीविद्या के उपासकों को लौकिक फल तो प्राप्त होते ही है; आत्मज्ञानी को प्राप्त होने वाला शोकोत्तीर्णतारूप फल भी श्रीविद्यापासकों को निश्चित रूप से प्राप्त होता है; साथ ही यही फल ब्रह्मविद्या से भी प्राप्त होता है; अतः फलैक्य होने के कारण श्रीविद्या ही ब्रह्मविद्या है—यह निर्विवाद सत्य प्रतिष्ठापित होता है।

'श्रीविद्या' का साङ्गोपाङ्ग विवेचन करने वाला सर्वप्रामाणिक महनीय ग्रन्थ 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' न केवल श्री विद्या; अपितु दश महाविद्याओं के विशद् विवेचन के साथ-साथ शैव, शाक्त, गाणपत्य, वैष्णव, सौर आदि सभी मन्त्रों एवं उनके तत्तद् यन्त्रों से पाठक को साक्षात्कार कराने वाला एक बृहत्काय ग्रन्थ है। स्वामी विद्यारण्य यति द्वारा छत्तीस श्वासों में गुम्फित यह ग्रन्थरत्न पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध रूप दो खण्डों में समुपलब्ध है। अंग-उपांगसहित श्रीविद्या के सविधि विवेचन के साथ-साथ अन्य देवी-देवताओं के भी मन्त्र-यन्त्रों का समग्र रूप मे विवेचन, उनके उपसना की विधि एवं उपासना के फलस्वरूप प्राप्त होने वाले फलों को भी स्पष्टतया अभिव्यक्त करना इस ग्रन्थ की सर्वातिशायी विशेषता है। अन्य ग्रन्थों में जहाँ किसी भी उपास्य देवता के एक, दो, चार अथवा कतिपय प्रमुख मन्त्र-यन्त्रों का ही विवेचन उपलब्ध होता है; वही इस ग्रन्थ में विवेच्य समस्त देवी-देवताओं के प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध सभी मन्त्र-यन्त्रों को उनकी विधियों सहित स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है; फलस्वरूप सम्बद्ध देवता के किसी भी मन्त्र-यन्त्र अथवा उसकी विधि को जानने के लिये साधक को किसी अन्य ग्रन्थ का अवलम्ब ग्रहण करने की लेशमात्र भी आवश्यकता नहीं रह जाती। संक्षेप में कहा जा सकता है कि श्रीविद्यारण्ययति-प्रणीत 'श्रीविद्यार्णवतन्त्रम्' एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है, जो साधक के समस्त कामनाओं की पूर्ति करने में सर्वतोभवेन समर्थ है।

अस्तु; यह ग्रन्थ अद्यावधि अपने मूल स्वरूप में ही, बिना किसी भाषा-टीका के उपलब्ध था, जिससे जिज्ञासु साधकों को आराधना में पग-पग पर दुरूह कठिनाइयों का अनुभव होता था एवं ग्रन्थ के ताप्तर्य से अवगत ने हो पाने के कारण वे बार-बार विशयग्रस्त हो जाते थे। इसी को हृदयङ्गम कर तन्त्रग्रन्थों के ख्यातिनाम भाषा-भाष्यकार श्री कपिलदेव नारायण ने इस विशालकाय ग्रन्थ को भाषा टीका से अलंकृत कर सर्वनहृद्य बनाने का साहसिक प्रयास किया है। सर्वजनसुलभ इस हिन्दी भाष्य द्वारा श्री नारायण ने कृटाक्षर में निबद्ध मन्त्र-यन्त्रों को भी स्पष्ट करके साधकों का महनीय उपकार किया है।

पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध के विभाजन से दो भागों में विभक्त यह विशालकाय ग्रन्थ भाषा-भाष्य से अलंकृत होने के फलस्वरूप और भी बृहद् कलेवर को प्राप्त हो गयाः फलस्वरूप जिज्ञासुओं के सौकर्य को दृष्टिगत कर इसे पाँच भागों (पूर्वार्द्ध—दो भाग एवं उत्तरार्द्ध—तीन भाग) में प्रकाशित किया जा रहा है। वृहत्तन्त्रसार, देवीरहस्य आदि मूल ग्रन्थों को सर्वजनसंवेद्य भाषा भाष्य से विभूषित कर सर्वजन सुलभ बनाने वाले विद्धान् भाष्यकार श्री कपिलदेवनारायण द्वारा प्रयोगपरक भाषा भाष्य से अलंकृत यह ग्रन्थ जिज्ञासुओं की समस्त जिज्ञासाओं का शमन करने में सर्वविध समर्थ होगा—इसमें विचिकित्सा के लिये लेशमात्र भी स्थान नही है।

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी